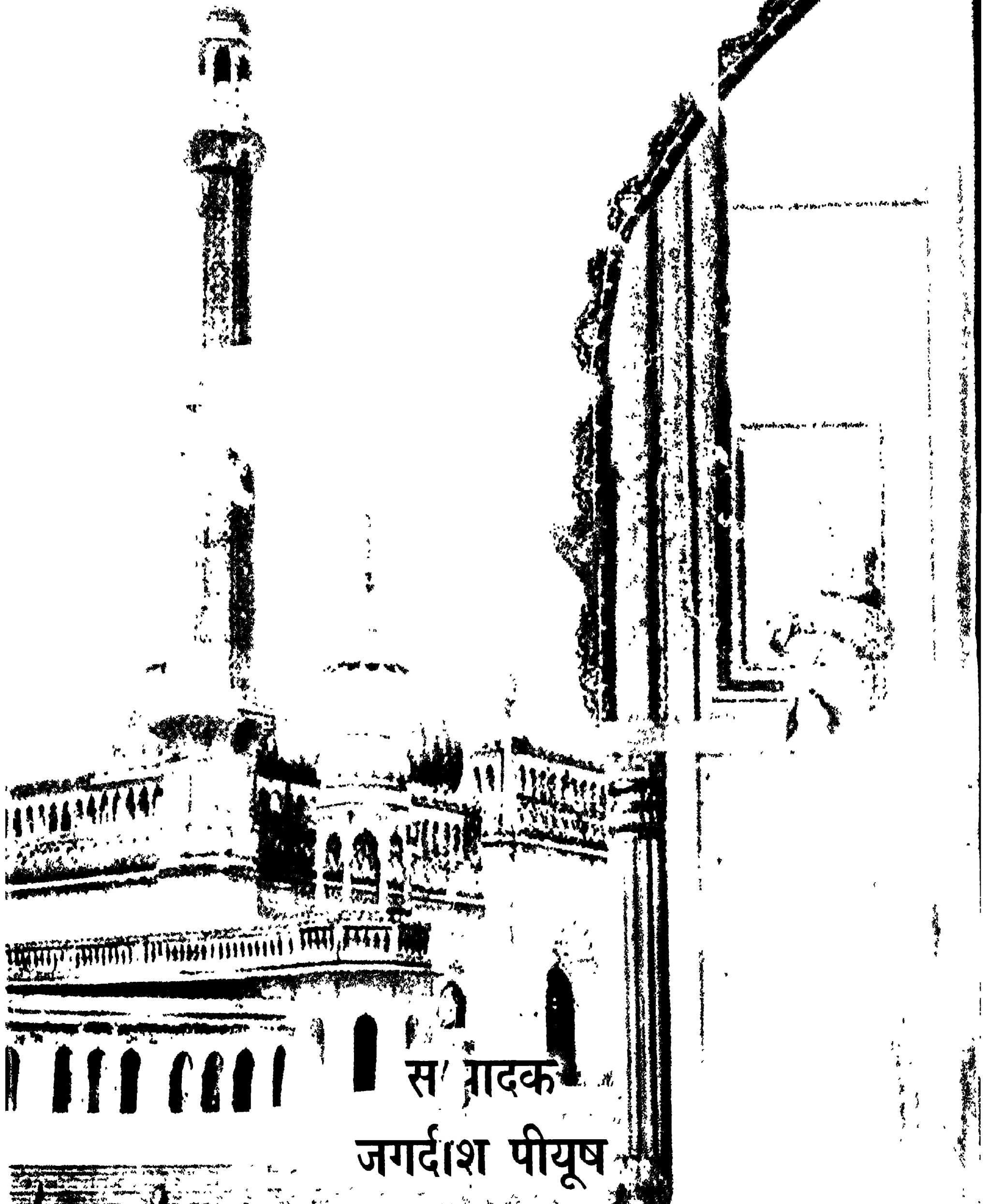
अवधी ग्रन्थावली

खण्ड - चार



सम्पादक

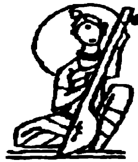
जगदीश पीयूष

अवधी ग्रन्थावली

खण्ड-4

(आधुनिक साहित्य-खण्ड)

सम्पादक
जगदीश पीयूष



वाणी प्रकाशन

अवधी ग्रन्थावली

भाग-4

(आधुनिक साहित्य-खण्ड)

●

डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप'

अध्यक्ष : सम्पादक मण्डल

●

डॉ. रामनरेश

संयोजक : संपादक मण्डल

●

सम्पादक मण्डल

- डॉ. कैलाश देवी सिंह
- डॉ. सत्यधर शुक्ल
- प्रो. रमेश दीक्षित
- डॉ. श्यामसुन्दर दीक्षित
- डॉ. सरोज शुक्ल
- डॉ. ज्ञानवती दीक्षित
- डॉ. जनार्दन पाण्डेय
- डॉ. नलिनकान्त उपमन्यु
- नागेन्द्र अनुज
- महर्षि पाण्डेय

सम्पादक

जगदीश पीयूष

सम्पादकीय

अवधी साहित्य/संस्कृति की विलुप्त होती जा रही अकूत सम्पदा बटोर लेने की ललक मेरे मन में सन् 1970 से है इसकी घोषणा हमने 1973 में प्रकाशित 'नीराजना' कविता संग्रह में की थी, जिसकी भूमिका हिन्दी कविता के हिमालय पं. सुमित्रानन्दन पन्त ने लिखी थी, इसी वर्ष हमने लोक साहित्य के उद्धारक पं. रामनरेश त्रिपाठी पर एक पुस्तक 'रामनरेश त्रिपाठी : एक युग एक व्यक्ति' सम्पादित की जिसमें लोक साहित्य के कार्य पर विस्तार से जानकारी मिली। लोकमेधा के वरिष्ठ कथाकार श्री मार्कण्डेय, अवधी अध्येता श्री श्रीकृष्ण दास जी व डॉ. मत्स्येन्द्र शुक्ल आदि की प्रेरणा से मैंने 1976 में लोकायतन शोध पत्रिका का सम्पादन/प्रकाशन किया, जिसके दो अंक प्रकाशित हुए और लोक साहित्य के हस्ताक्षर लेखक/पत्रकार पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, राजस्थान के डॉ. महेन्द्र भानावत आदि ने मुझे अवधी पर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया।

लोक साहित्य के मनीषियों की प्रेरणा से मैंने 1976 में **'अवधी अकादमी'** संस्था का गठन किया और 1978 में अवधी के प्राण कवि सन्त मलिक मुहम्मद जायसी की मजार पर अमेठी में एक आयोजन किया, जिसमें रामकथा के वरिष्ठ पत्रकार लेखक श्री लल्लन प्रसाद व्यास का हमें बहुत ही सहयोग मिला। डॉ. भगवती प्रसाद सिंह, डॉ. रमाशंकर तिवारी, डॉ. जगदीश गुप्त, कथाकार शैलेश मटियानी, डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र की अधिवेशन स्थल की स्मृतियां आज भी ताजा लगती हैं। वरिष्ठ साहित्यकार श्री मार्कण्डेय, श्री रवीन्द्र कालिया, सुश्री ममता कालिया, सहित सौ से अधिक लेखकों/ कवियों, समीक्षकों ने महाकवि की मजार पर पहुंच कर अवधी भाषा के मूल्यांकन और संरक्षण पर तीन दिन तक विमर्श किया। श्री लल्लनप्रसाद व्यास के साथ मैं तत्कालीन कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री वी.डी.जत्ती, प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई, बाबू जगजीवन राम आदि राजनेताओं से भी मिला। बाबू जगजीवन राम ने हमें खूब प्रोत्साहित किया और अधिवेशन का उद्‌घाटन करने का निमंत्रण सहर्ष स्वीकार किया, उनका करकारी कार्यक्रम घोषित भी हो गया, परन्तु तत्कालीन अमेठी के सांसद के विरोध के कारण उन्हें कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। यह भी बड़ी बात हुयी कि तब अधिवेशन का उद्‌घाटन अवधी के लिये सक्रिय जनपद सीतापुर के नैमिषारण्य तीर्थ के महामण्डलेश्वर स्वामी नारदानन्द जी महाराज ने किया और कहा कि जायसी सन्त थे, वे चाहे हिन्दू हों या मुसलमान। सन्तों की जाति धर्म सिर्फ सन्त होना ही है। इस अवधी महाकुम्भ में मारीशस के श्री सुरेश रामवरण ने भी भाग लिया था। इसी अवसर पर प्रकाशित **अवधी स्मारिका** जिसे बाद में **अवधी साहित्य : सर्वेक्षण और समीक्षा** नाम से जारी किया गया। सम्भवतः पहली बार विश्वविद्यालयों में अवधी अध्ययन की ओर विद्वानों का ध्यान खींचा। लखनऊ तथा अवध विश्वविद्यालय में यह पुस्तक सन्दर्भ ग्रन्थ के रूप में स्वीकृत की गई।

अवधी अकादमी का दूसरा अधिवेशन बहराइच में हुआ जिसमें आधुनिक अवधी के श्रेष्ठ कवियों पं. वंशीधर शुक्ल, गुरुप्रसाद सिंह मृगेश, डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र मधुप, पारस भ्रमर, जुमई खां आजाद, आद्या प्रसाद उन्मत्त, रूपनारायण त्रिपाठी आदि को सम्मानित किया गया। अवधी कवि सम्मेलन और श्रावस्ती

में विचार गोष्ठी हुयी, जिसमें अनेक प्रस्ताव पारित किये गये। मात्र दो वर्षों की उत्सवधर्मिता ने अवधी प्रेमियों को सोते से जगाया, उसके बाद तो अवधी साहित्य को आगे लाने में अनेक विद्वान सक्रिय हुए। प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने तो सर्वाधिक ठोस कार्य किया और लखनऊ विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में अवधी को जोड़ा, डॉ. रामशंकर त्रिपाठी, डॉ. राधिका प्रसाद त्रिपाठी, डॉ. जनार्दन उपाध्याय आदि के प्रयत्न से अवध विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में अवधी को स्थान मिला, कानपुर विश्वविद्यालय में भी अवधी आयी। अनेकों शोध कार्य हुए।

आज अवधी अध्ययन के लिए सर्वाधिक आधारभूत कार्य डॉ. बाबूराम सक्सेना का शोध ग्रन्थ **अवधी का विकास** है, सक्सेना जी ने जमीनी स्तर अवधी के विकास क्रम को रेखांकित किया। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी का शोध ग्रन्थ प्रारम्भिक अवधी पर है। त्रिपाठी जी ने काफी प्राचीन अवधी पाण्डुलिपियों पुस्तकों को खोज निकाला। बाबा पुरुषोत्तम दास के जैमिनी अश्व मेघ भाषा पर सर्वप्रथम उन्होंने ही लिखा। अवधी लोकगीतों पर डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय का पहले से सामने था। डॉ. त्रिलोकीनाथ दीक्षित, डॉ. त्रिलोकीनाथ सिंह डॉ. शंकरलाल यादव काफी अरसे से अवधी के लिए कार्य कर रहे थे।

इसी बीच अवधी से सम्बन्धित कई संस्थाएं और कई लोग आगे आये, लखनऊ में अवधी अध्ययन केन्द्र के बहाने प्रकाशित **'बिरवा'** पत्रिका ने आधुनिक अवधी साहित्य पर कई अंक निकाले, फैजाबाद में राजबहादुर द्विवेदी ने नये प्रकाशनों/सम्मेलनों द्वारा एक दशक तक अवधी का डंका पीटा, सीतापुर में डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र मधुप ने अकेले ही कई ग्रन्थों का सम्पादन किया। लखीमपुर में महाकवि पं. वशीधर शुक्ल के सुपुत्र डॉ. सत्यधर शुक्ल प्रति वर्ष सम्मेलन आयोजित करने लगे, एक अच्छा सम्मेलन सुल्तानपुर में डॉ. जयसिंह व्यथित ने कराया, उ.प्र. हिन्दी संस्थान ने जायसी मेला की तर्ज पर जायस में संगोष्ठी करायी और अवधी अकादमी के साथ सुलतानपुर में जायसी पंचशती का आयोजन हुआ। कादीपुर में डॉ. आद्याप्रसाद सिंह प्रदीप ने कई अवधी प्रेमी साहित्यकार पैदा किये और हैदरगढ़ में डॉ. रामबहादुर मिश्र की अनवरत सक्रियता से अवधी कार्यकर्ता एक मंच पर जुटने लगे, उनकी **'अवध ज्योति'** एक मशाल की तरह निरन्तर जल रही है। उन्होंने अवधी त्रिधारा का सम्पादन करके आज की अवधी की नयी त्रयी स्थापित की और गीत गजल तथा विभिन्न विधाओं पर कार्य शुरू किये। श्री सुरेन्द्रनाथ अवस्थी की प्रेरणा से **'यह माटी अवधरानी है'** नामक ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ। अवधी अकादमी ने कभी जायसी, कभी अमेठी, कभी सुल्तानपुर में परिचर्चायें कीं, परन्तु एक बड़ा कार्य हुआ बोली-बानी पत्रिका का प्रकाशन। बोली-बानी ने अवधी पर 12 अंक निकाले जिसमें आधुनिक अवधी के लगभग दो सो कवियों की रचनाएं सामने आयीं, जौनपुर प्रतापगढ़, फैजाबाद की अवधी पर विशेष अंक आये। लोकगीतों, लोक कथाओं पर अंक निकाले और **अवधी ग्रन्थावली** की भूमिका बनी तथा बड़े पैमाने पर अवधी कार्यकर्ता एक मंच पर आये।

हम साफ तौर पर बताना चाहते हैं कि न तो हम लोक विशेषज्ञ हैं, न ही किसी विश्वविद्यालय के प्रोफेसर, न शोध छात्र और न ही पं. रामनरेश त्रिपाठी जैसे धुन के पक्के लोकसम्पदा के गुनगायक। लोक साहित्य के अनेक विद्वानों ने अपनी बोलियों के लिए बड़ा कार्य किया है, श्री विजय दान देथा इसके उदाहरण हैं। डॉ. श्याम परमार, देवेन्द्र सत्यार्थी, झवेरी जी, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, पं. बनारसीदास चतुर्वेदी आदि ने भिन्न भिन्न क्षेत्रों में बड़े कार्य किये, परन्तु अवधी में इसके शोध छात्रों ने ही ज्यादा कार्य किया। डॉ. बाबूराम सक्सेना, डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, डॉ. महेश प्रताप अवस्थी, डॉ. इन्दु प्रकाश पाण्डेय, डॉ. विद्याबिन्दु सिंह को अपने मानक शोध कार्य के कारण अधिक ख्याति मिली। प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने चुन-चुन कर ऐसे विषय स्वीकृत किये कि अवधी के हर अंग पर कुछ कार्य हो जाय, परन्तु मैं इन सब की पंक्ति में बैठने की भी योग्यता नहीं रखता। हां इन सज्जनों ने हमें प्रोत्साहित किया, अपने द्वारा खोजी गई कहानियों, लोकगीतों, कहावतों, लोकोक्तियों को न केवल

निस्पृह भाव से प्रकाशित करने को दिया बल्कि 'और लै जाव' की रट लगाये रहे। प्रो. दीक्षित, डॉ. विद्या बिन्दु सिंह, महेश प्रताप अवस्थी, आद्या प्रसाद प्रदीप और भाई रामबहादुर मिश्र ने ऐसा कई बार किया, तभी तो लगभग चार हजार पृष्ठों का अवधी का यह विपुल वैभव आपके सामने है। हम तो अवधी साहित्य माँगते-मँगाते रहे। किसी पत्रिका/अखबार में छपा देखा, झट से सहेज लिया, पुस्तकों में संग्रहीत देखा तो लेखक, सम्पादक से पूछ लिया। इसीलिये अवधी ग्रन्थावली के प्रकाशन का श्रेय उन्हीं मनीषियों को है जो हमें प्रोत्साहन और सहयोग दे रहे हैं। हमने कभी भी किसी सरकार या संस्था से एक पैसा अनुदान नहीं माँगा, ताकि अवधी का वैरागी स्वभाव दीनता न अनुभव करे, जबकि इस सामग्री को कम्प्यूटर में कैद करने में ही काफी खर्च आया, लेकिन सन्तों/सूफी सन्तों की कृपा से अचानक इस ग्रन्थावली को प्रकाशित करने का **'वाणी प्रकाशन'** ने प्रस्ताव किया तो मन को बहुत ही सुख मिला।

अवधी ग्रन्थावली खण्ड-4

अवधी ग्रन्थावली का खण्ड-4 अवधी की सम कालीन कविताओं का विशाल संग्रह है। इसमें वरिष्ठ रचनाकारों, प्रवितियों, परम्पराओं पर अनेक आलेख संग्रहीत हैं। आधुनिक अवधी साहित्य के विद्वान डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र इस खण्ड के सम्पादक मण्डल के अध्यक्ष हैं जिनके अनेक ग्रन्थ पहले से ही आधुनिक अवधी साहित्य की सेवा कर रहे हैं।

डॉ. राम बहादुर मिश्र के संयोजक में सम्पादित यह खण्ड अवधी की निरन्तर गतिशीलता और उसकी सक्रिय ऊर्जा का परिचायक है। इसमें अवधी का जनपद वार सर्वेक्षण भी दिया जा रहा है। इस खण्ड के सहभागियों के लिए हम अपना विनम्र आभार व्यक्त करते हैं।

—जगदीश पीयूष

अनुक्रम

जनपदीय अवधी साहित्य

प्रमुख अवधी कवि और कविताएँ

अवधी ग़ज़लें

भूमिका

जगदीश पीयूष

आधुनिक अवधी के विकासक्रम को अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से हम चार भागों में विभक्त कर सकते हैं :

1. प्रथम उत्थान (सन् 1865 से 1900 ई. तक)
2. द्वितीय उत्थान (सन् 1900 से 1935 ई. तक)
3. तृतीय उत्थान (सन् 1935 से 1960 ई. तक)
4. चतुर्थ उत्थान (सन् 1960 से अद्यावधि)

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने अवधी के आधुनिककाल की प्रवृत्तियों को दो खण्डों में विभाजित किया है—स्वातंत्र्यपूर्व तथा स्वातन्त्र्योत्तर। स्वातंत्र्यपूर्व यह साहित्य उपेक्षित था। अवध व उसके आस-पास के क्षेत्रों में अवधी साहित्य के विकास की लहर 19वीं शती से प्रारम्भ हुई, खड़ी बोली हिन्दी से लगभग 50 वर्ष बाद।

1. प्रथम उत्थान :

आधुनिक अवधी साहित्य के क्षेत्र में प्रथम उत्थान का श्रीगणेश भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा उनके मण्डल की लेखनी से मानना चाहिए। भारतेन्दु जी ने अवधी में कुछ लिखने का सूत्रपात किया, परन्तु अवधी की प्राण-प्रतिष्ठा करने का श्रेय पं. प्रतापनारायण मिश्र को ही जाता है, क्योंकि परवर्ती कवियों पर मिश्र जी का ही अधिक प्रभाव परिलक्षित होता है। आजादी की लड़ाई के बीच अवधी कविता को विशेष सम्बल प्रदान करने वालों में हरपाल सिंह का नाम अग्रगण्य है। उन्होंने अवधी में कविता करने के लिए कवियों तथा लेखकों का आह्वान किया था। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तक उनसे काफी प्रभावित हुए थे। द्विवेदी जी ने 'फल्लू अल्हैत' नाम से काफी कुछ लिखा था। हिन्दी कविता में जिस समय छायावाद, प्रगतिवाद के गीत गाये जा रहे थे, उस सन्धिकाल में जनचेतना को परस्पर समन्वित करके अवधी के सुविख्यात कवि बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस' जी ने अवधी की बागडोर संभाली थी। उनके साथ ही अवधी भाषा का जन-जन में सम्पूर्ण देश में प्रचार-प्रसार कर वृहत्तर कार्य वंशीधर शुक्ल ने किया। अवधी के प्रथम उत्थान काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी, शिवनाथ शर्मा उपाध्याय, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', हरिपाल सिंह, महावीर प्रसाद द्विवेदी, ब्रजभूषण त्रिपाठी, ललनेश, गणेशप्रसाद गणाधिप, गदाधर सिंह, गणेशप्रसाद, गदाधर शुक्ल, मनोहरलाल मिश्र, आदि का विशेष योगदान है।

भारतेन्दु जी एक प्रतिभाशाली कवि होने के साथ साथ एक महान युगद्रष्टा भी थे। उन्होंने अपनी काव्य-भाषा को मुख्य रूप से ब्रजभाषा रखते हुए भी अपनी सामयिक रचनाओं के लिए जनभाषा की सादगी का ही सहारा लिया था। उन्होंने ठेठ अवधी में जनगीतों में--होली, चैता, कजरी, भजन, लावनी,

आदि की शैली के द्वारा अपने सामयिक काव्य की रचना की। भारतेन्दु मण्डल के कवियों में पं. प्रताप नारायण मिश्र का नाम अग्रगण्य है। मिश्र जी को अपनी मातृभाषा बैसवाड़ी अवधी से प्रगाढ़ प्रेम था। पारस्परिक वार्तालाप के अतिरिक्त, पत्रोत्तरों, सभा, गोष्ठियों तथा व्याख्यानों तक में वे उसका प्रयोग करते थे। बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' भी भारतेन्दु मण्डल के प्रमुख साहित्यकार तथा मित्र थे। वे मूलतः ब्रजभाषा के कवि थे, परन्तु समय के प्रवाह और युग के प्रभाव स्वरूप वे लगभग भारतेन्दु जी की सभी परम्पराओं के अनुगामी थे। उन्होंने लोकभाषा अवधी में अनेक छन्दों होली और कजली आदि लोकगीतों की रचना की थी। उन्होंने अनेक ग्रन्थ भी लिखे, जिनमें 'कजली कादम्बिनी' भी है। उनके लोकगीत सामाजिक व्यंग्यों से परिपूर्ण हैं। 'प्रेमघन' जी ने अनमेल विवाह, बालविवाह, देश-दशा आदि पर बहुत कुछ कहा है। अवधी रचनाओं में भारत की दीन-दशा का चित्रण मनोरंजक शैली में किया है।

भारतेन्दु मण्डल के महत्वपूर्ण कवियों में शिवसम्पत्ति शर्मा का नाम भी उल्लेखनीय है। ये आजमगढ़ (उदिगांव) के निवासी थे, पिता का नाम रघुवीर शर्मा था। इनका 'पचरा प्रकाश' पूर्वी-अवधी लोकगीतों का संग्रह प्रशंसनीय है। आजमगढ़ के ही रामचरित उपाध्याय भी भारतेन्दु मण्डल के प्रसिद्ध कवि थे। भारतेन्दु का प्रभाव इनकी भी कविताओं पर दर्शनीय है। इन्होंने कजली, होली, चैती आदि के लोकगीत लिखे हैं तथा बरवै और चौपाई की रचना की है।

2. द्वितीय उत्थान (द्विवेदी तथा छायावादी युग)

अवधी की राष्ट्रीय चेतना तथा स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा की दृष्टि से द्वितीय उत्थान काल (1900-1935) विशेष महत्वपूर्ण है। यह काल मुक्तक काव्य के परिमाण तथा उसकी विशेषताओं की दृष्टि से पूर्णतः असामान्य है। इस युग की मुक्तक कविता में व्यापकता तथा शैली में विविधता परिलक्षित होती है। सामाजिक तथा राजनीतिक विषयों के साथ कवियों का ध्यान प्रकृति की विलक्षणताओं पर भी गया है। इस युग की मुक्तक कविता में दोहा, बरवै, आल्हा, पद, कवित्त तथा लोकगीतों की परम्परागत शैली के अतिरिक्त नये मात्रिक एवं मुक्तक छन्दों के भी प्रयोग किये गये हैं। इतना ही नहीं स्वच्छन्दतावादी युग का मुक्त छन्द भी अवधी के मुक्तक काव्य में प्रयुक्त होने लगा, तथा अन्त्यानुप्रास हीन भिन्न तुकान्त रचनायें भी लिखी जाने लगीं। रचनाओं की भाषा शुद्ध ठेठ अवधी तथा अनगढ़ और ऊबड़-खाबड़ अपने वास्तविक स्वरूप में की जाने लगी। इस उत्थान काल में काव्य-भाषा अवधी का खुल कर विकास हुआ तथा संगीतात्मकता की ओर भी तत्कालीन कवियों का ध्यान आकर्षित हुआ।

3. तृतीय उत्थान (1935-1960) : 'वृहद कवित्रयी' युग

अवधी कविता-धारा के विकास के तृतीय उत्थान को वृहद् कवित्रयी (वंशीधर शुक्ल, पढ़ीस, रमई काका) युग के नाम से भी अभिहित किया जाता है। सम्भवतः इसे अवधी कविता का उत्कर्ष काल या स्वर्णकाल कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। सन् 1935 से 1960 ई. के आस-पास तक उक्त त्रयी कवियों का प्रभाव अक्षुण्ण दिखाई पड़ता है, क्योंकि इन्हीं कवियों की भावधारा और शैली का प्रभाव सम्पूर्ण अवधि तक छाया रहा और ये कवि ही अवधी कविता के आदर्श और उन्नायक बने रहे। ये तीनों महारथी पूर्ण जनकवि और जनवादी रचनाकार की श्रेणी में परिगणित किये जाते हैं। उनकी भावधारा ही जनवादी नहीं है, प्रत्युत उनकी भाषा पूर्णतया जनभाषा और शैली भी पूरी तरह जनकाव्य शैली (लोक काव्य शैली) है। पढ़ीस कृत 'चकल्लस' पर यद्यपि छायावादी भावधारा और उसकी काव्य शैली का कुछ प्रभाव है, जिसका कारण उसका छायावादी रचना काल और छायावादी कवि निराला से उनकी मित्रता है। परन्तु चकल्लस में जनवादी रचनाओं का भी अभाव नहीं है। रमई काका पर उत्तर छायावादी रचनाकाल का किंचित प्रभाव

है, जो नगण्य है। वंशीधर शुक्ल तो सदैव छायावाद की खिल्ली ही उड़ाते रहे। वे पूर्ण जनवादी (प्रगतिवादी) रचनाकार थे। अतः अवधी के मुक्तक-काव्य में इस युग को (1935-60) कवित्रयी का जनवादी युग ही कहना समीचीन प्रतीत होता है। वस्तुतः आज भी जनवादी भावधारा समाप्त नहीं हुई है और न उस समय तक समाप्त होने की आशा है, जब तक जर्जर मानवता कराहती रहेगी। प्रगतिवादी जनकाव्य आज भी उत्कृष्ट रूप में लिखे जा रहे हैं और आगे भी लिखे जाते रहेंगे। गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश', पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र, लक्ष्मण प्रसाद मित्र, चतुर्भुज शर्मा, जदुचंद आदि इस उत्थान के प्रमुख कवि थे।

4. चतुर्थ उत्थान (सन् 1960 से अद्यावधि)
नवगीत, नई कविता तथा समकालीन अवधी कविता

हिन्दी साहित्य में प्रयोगवाद का शुभारम्भ 'अज्ञेय' द्वारा प्रकाशित तार-सप्तक की रचनाओं से 1943 ई. के आसपास माना जाता है। तत्कालीन कवियों और साहित्यकारों के मन में जो अनास्था और कुण्ठा का भाव भर गया था, उसी के परिणामस्वरूप उनकी वाणी भी विद्रोह और नैराश्य से संयुक्त हो गई। कविता का स्वर बदला, भाषा-शैली भी बदली। कविवर अज्ञेय के नेतृत्व में जो काव्य-रचना प्रारम्भ हुई थी, उसे ही प्रयोगवाद की संज्ञा से अभिहित किया गया। यही प्रयोगवाद 1954 ई. के आस-पास नई कविता तथा नवगीत कहा जाने लगा। डा. जगदीश गुप्त, लक्ष्मीकांत वर्मा, तथा रामस्वरूप चतुर्वेदी आदि इस कविता धारा के प्रमुख कवि हुए।

हिन्दी काव्य-धारा के क्षेत्र में नई कविता अथवा नवगीत का जो आन्दोलन प्रारम्भ हुआ, उससे हिन्दी की बोलियां भी प्रभावित हुए बिना न रह सकीं। परिणामतः सन् 1960 के आस-पास नवगीतों, नई कविता, गजलों तथा समकालीन कविता आदि का प्रभाव अवधी कविता पर भी दृष्टिगत हुआ और अवधी में भी नई कविता या नवगीत का सृजन बहुतायत से होने लगा। अवधी कवियों ने नवगीत, नई कविता, गजल या समकालीन कविता के माध्यम से अपनी भावाभिव्यक्तियों का सृजन प्रारम्भ किया। इसी समय कतिपय कवियों द्वारा नवगीत शैली के माध्यम से प्राचीन लोकगीतों की परम्परा से हट कर नये ढंग से लोक शैली में लोकगीतों का भी सृजन आरम्भ हुआ, जो साहित्य प्रेमियों को बहुत चित्ताकर्षक और प्रिय लगा। पिछले दिनों डॉ. रामबहादुर मिश्र के संपादन में अवधी त्रिधारा नामक नवगीतों का संकलन आया है, जिसमें जगदीश पीयूष, डॉ. सुशील सिद्धार्थ व भारतेन्दु मिश्र को केन्द्र में रखते हुए दो दर्जन अवधी कवियों की चुनिन्दा रचनाएं प्रकाशित हैं। अवधी साहित्य की इस नये युग की रचनाओं को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है : (अ) लोकगीत शैली की नवीन रचनायें, (ब) नवगीत, नई कविता, गजल और समकालीन कविता।

(अ) लोकगीत शैली की नवीन रचनाएँ

अवधी की छन्दबद्ध लम्बी-लम्बी वर्णनात्मक रचनाओं का स्वर फीका पड़ जाने के कारण अवधी नवगीतकारों ने नवीन लोकगीत शैली में अपनी काव्य सर्जनाएँ आरम्भ कीं। मंचों के माध्यम से ये रचनाएँ जनजीवन अथवा श्रोताओं को बहुत अच्छी लगीं। फलतः नई लोकगीत शैली का खुलकर प्रयोग होने लगा। नई लोकगीत शैली में काव्य रचना करने वाले कवियों में मुख्य रूप से पारस भ्रमर, लवकुश दीक्षित, बृजेन्द्र खरे, हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल', रामबहादुर सिंह भदौरिया, ओंकारनाथ उपाध्याय, देवकीनंदन श्रीवास्तवआद्याप्रसाद उन्मत्त, बेकल उत्साही, जियाराम शुक्ल विकल, जुमई खाँ आजाद, दूधनाथ शर्मा 'श्रीश', हरिभक्त सिंह पंवार, फारूक सरल, पवन, सतीश आर्य तथा डॉ. विद्याविन्दु सिंह हैं। पारस भ्रमर की रचनाएँ इस शैली में विशेष महत्वपूर्ण हैं, उनमें ग्राम जीवन की सोंधी सुगन्ध और मिठास बेजोड़ है।

एक चित्र दर्शनीय है–

बंसऊ बाँसुरी बजावैं, अमऊ बौरि-बौरि आवैं।
जियरा डोलि डोलि जाय।

इसी संदर्भ में लवकुश दीक्षित का 'अँजुरी के मोती' जो सन् 1966 ई. में प्रकाशित हुआ था, विशेष उल्लेखनीय है। इसमें लगभग 30 रचनाएँ संग्रहीत हैं। डॉ. विद्याविन्दु सिंह की रचनाएँ भी इस क्षेत्र में मील का पत्थर सिद्ध हुई हैं। उनके द्वारा रचित ये लोकगीत नारी हृदय की व्यथा-कथा तो कहते ही हैं, जनजीवन के हृदय को भी झकझोर कर रख देते हैं। उनमें भाषा की मिठास और उसका प्रवाह देखते ही बनता है–

मोरे महला की ऊँची अंटरिया,
अब नाहीं कागा बोलै,
कागा न बोलै न बाँचैं सगुनवा,
उहै अमरैया, उहै घम छहियाँ।

आचार्य विश्वनाथ पाठक अवधी के एक आचार्य कवि हैं। 'सर्वमंगला' खंड काव्य अवधी की प्रबन्ध कविता का शृंगार है। 'घर के व्यथा' उनका एक अप्रकाशित खंड काव्य है।

(ब) अवधी की नई कविता, नवगीत तथा समकालीन कविता

अवधी की इस नव्य कविता-धारा का शुभारम्भ सन् 1960 के आसपास से माना जाता है। इस धारा के प्रमुख रचनाकारों में आद्याप्रसाद 'उन्मत्त', त्रिलोचन शास्त्री, डॉ. अरुण त्रिवेदी, सच्चिदानन्द तिवारी, कृष्णमुरारी 'विकल', डॉ. ओमप्रकाश दुबे, लक्ष्मीप्रसाद 'प्रकाश', श्याम तिवारी, पंवार जी, बृजेन्द्र मिश्र, रामबहादुर मिश्र 'अवधेन्दु' आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सन् 1954 ई. में डॉ.जगदीश गुप्त ने एक वार्षिक पत्र निकालना प्रारम्भ किया, जिसमें इन नये कवियों की रचनाओं का समावेश किया गया। डॉ. जगदीश गुप्त के सहायकों में लक्ष्मीकान्त वर्मा, बालकृष्ण राव, रामस्वरूप चतुर्वेदी तथा कैलाश वाजपेयी आदि का नाम प्रमुख है। इन लोगों ने अपनी कविताओं को नई कविता कहना अधिक उपयुक्त समझा।

उक्त नव्य कविताधारा में भाषा, शैली एवं भावों को पूर्णतः नवीनता प्रदान की गई है। इस नयी कविता और समकालीन कविता का रचनाकार चतुर्दिक संकटों से घिरा, आघातों से आहत तथा व्यक्तित्व से बिखरा और टूटा हुआ है। उसने अपने भोगे हुए यथार्थ को ही अपनी कविताओं में स्थान दिया। मानव जीवन के आदर्श अब उसके लिए मर गये हैं। जीवन की अश्लीलता, राजनीतिक संकीर्णता, सामाजिक कटुता को अभिव्यक्ति प्रदान करने में वह तनिक भी संकोच का अनुभव नहीं करता है। वह अपने को असुरक्षित पा रहा है, उसका अस्तित्व जटिलताओं से ग्रस्त होता जा रहा है। उसने पढ़ीस, निराला, प्रेमचन्द तथा धूमिल जैसे कालजयी कवियों को भी बेमौत मरते देखा है। बेकारी का भूत उसमें संत्रास का हेतु बनता जा रहा है। राजनीतिक विसंगतियों और सामाजिक विडम्बनाएँ उउसे मर जाने को बाध्य कर रही हैं। वह निराशा के गर्त में डूबा जा रहा है। अवधी के समकालीन तथा नई कविता के कवि इन्हीं जनवादी समस्याओं से जूझने की होड़ लगाये बैठे हैं। कविवर 'उन्मत्त' जी की एक रचना दर्शनीय है -

डकुआ लुटेरुवा क राज तनी देखा।
झपटै कबुतरी प बाज तनी देखा।
x x x
नकली समाजवाद, खोखली अजादी,
पपवा प परदा महतिमा क खादी।
x x x

देहिया उघारि के करावैं नाच नंगा,
हड़वा बहाइ के मचावैं हुड़दंगा;
नवा नवा सपन सुनावै भिनसारे,
देसवा क लूटि के बनावैं भिखमंगा।

त्रिलोचन शास्त्री की 'अंखुआ' शीर्षक कविता भी इन्हीं सामाजिक विसंगतियों को उकेरने में व्यस्त है-

क हो पाँचू
कबले तू पेटहा भ
एनके ओनके खटव्य।
सुक्ख सुक्ख जेस जुरे
भखि लेय परि रहिव्य।
x x x
खाले से ऊँचे पहुँचाइ दिहेन।

नई और समकालीन कविता में मानव को महत्व प्रदान करते हुए दलित और शोषित को उठाने की मांग प्रारम्भ हो गयी है। डॉ. अरुण त्रिवेदी की एक रचना में 'लघु मानव' को हीरो बनाया गया है। अवधी की यह बिम्ब योजना दर्शनीय है-

गांव के घूरे खड़ा बब्बुर बिरउना,
अस कहत है आम ते।
सरस अमराई का लागेउ
गहबरि छांह तुम दीन्हेउ।
x x x
बबूर कै अगिली पीढ़ी सुनौ अब
आम ह्वइ जाई।
आम का बेटा सुनौ अब आमु न होई।

उक्त समकालीन नवगीतकारों के अतिरिक्त अवनीन्द्र मिश्र 'विनोद', मनकापुर, गोण्डा निवासी का अवधी काव्य संकलन 'मनहर' अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है। श्यामजी पाण्डेय 'करुणेश', सनेथू फैजाबाद मंच के कवि हैं। ये अवधी में सवैया और घनाक्षरी में सिद्धहस्त हैं। डॉ. मुहम्मद अखलाक, बागकाजी, लखनऊ के निवासी हैं। इनका जन्म 5 जुलाई, 1966 को हुआ था, उनका दोहा लोक, बरवै लोक तथा ईद केर चंदा (कहानी संग्रह) रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इसी कड़ी में फारूक सरल, जमौरा, सीतापुर भी अवधी के सफल गीतकार तथा मंच के कवि हैं। ये अपनी लोकगीत शैली में गहरी पैठ रखते हैं। दहेज-प्रथा पर आपने करारी चोट की है। बकरा बिकाऊ है कसाई चाहिए, बिरना न आये कोई मजबूरी होइहैं, लगी न मजूरी होइहै, चुपाइ रहौ ललुवा म्वार, लै देहौं चिरैय्या, उड़ि गई चिरैय्या पिंजरवा ते, गांव की गुहार, फूहर का विवाह, देवारी सजना आदि प्रख्यात रचनाएँ हैं जो जनजीवन को आह्लादित कर देने में पूर्ण सक्षम हैं। शेषपाल सिंह 'शेष' का जन्म 20 दिसम्बर, 1958 को कसना (शिवगढ़) रायबरेली के कृषक परिवार में हुआ था। वे यथार्थ धरातल के प्रातिभ रचनाकार हैं। वे एक कुशल लोकगीतकार तथा नवगीतकार हैं। बसंत सुहात नहीं, वृक्ष की जवानी, देशपति, भारत माँ का बेड़ा, दुमदार दोहे, कुर्सी मिली रहै, आदि प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। मरसंडा सीतापुर के भगवतीप्रसाद अग्निहोत्री की कविताएं भी पर्याप्त प्रभावी हैं। यहीं के युवा रचनाकार अनुराग आग्नेय ने पर्यावरण और देशप्रेम को नये ढंग से अपने गीतों में समेटा है।

कमलेश मौर्य 'मृदु' 20 नवम्बर, 1955 को रामाभारी, सीतापुर में उत्पन्न हुए थे। ये अदालत में सफल अधिवक्ता तथा मंच पर सफल कवि हैं। इनकी रचनाएँ मनोरंजक तथा चमत्कृति पूर्ण होती हैं। चकबन्दी, अंबियन केरि वहार, बाढ़ राहत, दसवां हिस्सा, हमार देसवा आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं। सोम दीक्षित, दिखौना, सीतापुर, सन् 1951 में जन्मे, सफल आशुकवि हैं। सावन और शंकर प्रसिद्ध अवधी रचना है। संतोष कुमार मिश्र 'चक्रवाक', बरगवाँ सीतापुर में 1954 में उत्पन्न हुए थे। ये हास्य रस के सफल कवि हैं, इनके गीतों की मिठास मंत्रमुग्ध करने वाली है। 'वेलबाटम' इनकी प्रसिद्ध हास्यरस पूर्ण रचना है।

लखनऊ विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग में प्रवक्ता डॉ. योगेन्द्रप्रताप सिंह नये-नये प्रयोगों में सिद्धहस्त नई कविता शैली के रचनाकार हैं। पत्र-पत्रिकाओं में आप निरन्तर कुछ न कुछ लिखते रहते हैं। सतीश आर्य का जन्म 3 अक्टूबर, 1955 को भिटौरा, गोण्डा में हुआ था। ये अवधी के प्रयोगवादी उत्कृष्ट नवगीतकार तथा मंचसिद्ध कवि हैं। 'महुवा चुवै सारी रात' इनका प्रसिद्ध नवगीत है। लक्ष्मीप्रसाद 'प्रकाश' का जन्म तमनपुर सेहगा, रायबरेली में हुआ था। ये अवधी के अच्छे कवि तथा रचनाकार हैं। आपकी रचनाओं में एक अभिनव भाषा शैली का दर्शन होता है। आप नई कविता के सफल रचनाकार हैं। आपकी अवधी रचनाएं 'ममाखी' में संकलित हैं। वेदप्रकाश द्विवेदी का जन्म 1 जनवरी 1950 को सेठवा फैजाबाद में हुआ था। आप साहित्य महारथी पं. सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश' के सुपुत्र हैं। ब्रजभाषा, खड़ीबोली तथा अवधी पर आपका समान अधिकार है। इसी कड़ी में बृजेन्द्र कुमार मिश्र की (रामनगर, बाराबंकी, 1950 ई.) नवकाव्य सर्जना अविस्मरणीय है। आप नवीन कविता शैली के अनुपमेय कवि हैं। स्व. रामकृष्ण श्रीवास्तव 'संतोष' (7 जून, 1948 ई., ओरंगाबाद, खीरी) की कविता शैली भी अप्रतिम थी। 'बाबू कै विथा' इनका अवधी काव्य संकलन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आप प्रायः अध्यात्मपरक और जीवन संघर्ष की रचनाएं लिखा करते थे।

उमेशदत्त श्रीवास्तव 'सुमन' (21 जनवरी, 1945 ई., परसपट्टी, कादीपुर, सुलतानपुर) आधुनिक अवधी के सशक्त रचनाकार हैं। बिटिया की पाती (खण्डकाव्य), गउँवा हमार, कवितावली, स्तुतिमाला, भिखारी (खण्डकाव्य), सुमनमाला, मुक्तावली तथा श्रद्धासुमन आपकी मार्मिक एवं संवेदनशील काव्य कृतियां हैं। डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र (जन्म सन् 1942, बन्नावां, रायबरेली) कवि तथा समीक्षक दोनों हैं। ये अवधी के बरवैकार तथा दोहाकार हैं। अवधी साहित्य सेवा के लिए आपका समर्पण स्तुत्य है। वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव (जन्म सन् 1940, बिसवां, सीतापुर) पेशे से अध्यापक तथा अवधी के सफल गीतकार हैं। गंगा मैया, वर्षा गीत, तिरंगा झण्डा, जागहु ओ धरती के लाल आदि रचनायें विशेष उल्लेखनीय हैं। आप मंच के भी अच्छे कवि हैं।

डॉ. उमाशंकर शुक्ल 'शितिकंठ' (1 जुलाई, 1943, गुलाबपुर, सीतापुर) अवधी के अच्छे रचनाकार हैं। आपका अवधी प्रबन्धकाव्य 'सीतायन' प्रकाशनाधीन है। आनन्दप्रकाश अवस्थी 'आनंद' उर्फ नन्हें भैया बैसवाड़ी अवधी के कुशल रचनाकार हैं। हियरा हंसै हमार, पैकरमा, नींद अउतै नाहीं, देवी पंचाष्टक, देवी अहोरवा, मन्दिरनामा आदि प्रमुख अवधी काव्यकृतियां हैं। आप देशप्रेम तथा ग्राम्य जीवन चित्रण के कुशल चित्रकार हैं। बांकेलाल मिश्र अवधी की रचनाओं में सिद्धहस्त हैं। साकेत विरहिणी, उर्मिला, त्रिवेणी आदि प्रकाशित ग्रन्थ हैं।

मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज' (1 नवम्बर, 1949, बौरा जगदीशपुर, सुलतानपुर) अवधी के प्रतिभाशाली कवि हैं। मलिक मुहम्मद जायसी पुरस्कार से नामित आप मंच के सफल कवि हैं। सरबन (महाकाव्य), ध्रुव (खण्डकाव्य) तथा मनोज-मंजरी प्रकाशित गीतों का संकलन है। भानुप्रताप त्रिपाठी 'मराल' एक अच्छे अधिवक्ता तथा कुशल कवि हैं। उन्होंने अपनी कविताओं में ग्राम्य जीवन का यथार्थ अंकन किया है। उनकी अवधी की प्रमुख काव्य कृतियां--अगुआ बियाह के भये भाय, सपनों का भारत, अवधी पियार बाटै,

भिखारी का बेटा, तथा भरत खण्डकाव्य इत्यादि हैं।

अवधी को समकालीनता और आधुनिकता से जोड़ने का विशेष कार्य करने वालों में जगदीश पीयूष, रामबहादुर मिश्र और सुशील सिद्धार्थ का कृतित्व अत्यन्त उल्लेखनीय है। उनकी रचनाएं आधुनिकता और परम्परा का समेकित अवधी कविता पुस्तक है, जिस पर उत्तर प्रदेश हिंदी रामबहादुर मिश्र एक लिक्षण अनुसन्धान कर्ता होने के साथ सहृदय कवि भी हैं। उनकी अवधी कविताओं में संपूर्ण समाज की समीक्षा प्राप्त होती है। सुशील सिद्धार्थ के दो अवधी कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं–(1) बागन बातन कहै चिरैया, (2) एक। इन दोनों पुस्तकों पर उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का जायसी नामित पुरस्कार उन्हें मिल चुका है। जदगीश पीयूष की पुस्तक 'अवधी के क्षेत्र में सक्रिय होने वाले सुशील सिद्धार्थ अवधी को व्यापक सरोकार से जोड़ने वाले रचनाकार हैं। वे जनपक्षधर अवधी कवि हैं। उनके गीत की ये पंक्तियां धरती और किसान के रिश्ते की सुन्दर व्याख्या करती हैं–

'या धरती उनकी नाम
जौन तौलति रुपयन मा धरी।
या धरती उनकी आप
बसै जिनकी सांसन मा धरती ॥
मुसकान मा जिनकी हँसै
घ्लै जिनके अँसुवन मा धरती।
मा धरती उनकी आप
बसै जिनकी साँसन मा धरती ॥

इसी प्रसंग में एक तथ्य विशेषतः उल्लेखनीय है। 2007 में अवधी अकादमी (सृजन पी. गौरीतंज, सुलतानपुर) द्वारा प्रकाशित 'अवधी त्रिधारा' संग्रह आधुनिक अवधी की विकास यात्रा में एक नया मोड़ माना गया। कुछ मनीषियों के अनुसार इससे अवधी का अंतःकरण और व्यापक हुआ। डॉ. रामबहादुर मिश्र की विस्तृत भूमिका में आधुनिक अवधी की संवेदना और संरचना का जो विश्लेषण है वह इस भाषा की समृद्धि का आख्यान है। इस संग्रह के द्वारा यह सिद्ध हुआ कि हिन्दी की 'मुख्य-धारा' और 'लोकधारा' के बीच एकरचनात्मक संवाद है। संग्रह के कवियों में विशेषतः दो कवियों–जगदीश पीयूष और सुशील सिद्धार्थ ने हिंदी साहित्य के वृहत्तर विमर्शों में हस्तक्षेप किया है। पीयूष एक ग्रामीण हृदय की व्यथा कि मार्मिकता से व्यंजित करते हैं–

'बड़ा बड़ा नाव बा।
सड़कै लाग गांव बा ॥
रस्ता कोर्टे ठांव ठांव पै बिलार माई जी।
होये केत्ती देर बाद भिनसार माई जी ॥

भदारी पासी और बाबासहेब अम्बेडकर पर कई महत्वपूर्ण कविताएं लिखने वाले सुशील सिद्धार्थ बाज़ारवाद पर टिप्पणी करते हैं।

'साधे, अब ना जाब बजारै।
रुपयो क दानव घूमि घूमि कै ल्वागन का ललकारै ॥
ख्यात हजम कै बनैं बिल्डिगैं रुपयन की जैकारै।
पूंजीपति सुरबग्घी ख्यालै को जीतै को हारै।'

वस्तुतः रामबहादुर मिश्र द्वारा सुसम्पादित इस संग्रह ने एक युग परिवर्तन सा कर दिया है।

चतुर्थ उत्थान समकालीन अवधी कविता तथा अवधी की नई कविता और नवगीतकारों की संख्या अभी और भी है, परन्तु सभी का विवरण प्रस्तुत करना सम्भव नहीं है। आवश्यकता है, इस पर अलग से शोधकार्य सम्पन्न किया जाय और सम्पूर्ण अवध के कवियों का जिलावार सर्वेक्षण करके सर्वांग अंकन किया जाय। इसके लिए अवधी साहित्य सेवी संस्थाओं को अग्रसर होना होगा, जिससे अवधी की विपुल साहित्य सर्जना को प्रकाश में लाया जा सके, उन्हें कराल काल के गाल में जाने से बचाया जा सके।

विशेष : अवधी के आधुनिक साहित्य पर ग्रन्थावली में विस्तार से चर्चा है। डॉ. मधुप, प्रो. दीक्षित, डॉ. कैलाशदेवी सिंह, डॉ. उपमन्यु, डॉ. जनार्दन पाण्डेय आदि ने समकालीन साहित्य पर काफी कुछ लिखा है, जिसे दुहराना हमें ठीक नहीं लगता।

अवधी का प्रगतिवादी काव्य

डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप'

आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने एक स्थान पर अपना वैचारिक ऊहापोह इस रूप में प्रस्तुत किया है। आज हिन्दी में श्रेष्ठ साहित्य के सृजन के कौन से क्षेत्र है! निश्चय ही समाजवादी विचारों के क्षेत्र क्यों? क्योंकि उन्हीं क्षेत्रों ने इस समय नवीन प्रतिभा को आकर्षित कर रखा है। सन 1918 ई. में रूस के अन्तर्गत जारशाही की समाप्ति हुई और समाजवादी समाज की रचना के कार्य का श्रीगणेश हुआ। सन 1930-35 तक समस्त विश्व रूस की इस क्रान्ति से प्रभावित हुआ। भारत भी इससे अप्रभावित न रह सका। मार्क्सवादी या समाजवादी भावना से प्रभावित साहित्य को प्रगतिशील या प्रगतिवादी साहित्य की संज्ञा से अभिहित किया गया। वस्तुतः मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद एवं वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त पर निर्भर विचारधारा कहा जाता है, अतएव साहित्य में साम्यवाद या मार्क्सवाद के बौद्धिक निरूपण को प्रगतिशील साहित्य की संज्ञा दी गई है प्रगतिवाद साहित्य को जन-क्रान्ति का आधार बनाता है। वह शोषित समाज को शोषण के विरुद्ध ललकारता है तथा उसे वर्ग-विहीन समाज की रचना के लिए प्रेरित करता है। प्रगतिवाद पूंजीवाद और सामन्तवादिता का शत्रु है। वह दलितों का समर्थक और कुलीनता का पोषक है। प्रगतिवाद प्राचीन मान्यताओं का मूलोच्छेदक तथा नवीनता का पोषक है। प्रगतिवादी साहित्य अधिकतर यथार्थवादी होता है। उसकी जीर्ण-शीर्ण झोपड़ी में आदर्शवाद के लिए स्थान कम ही होता है। प्रगतिवादी साहित्य प्रायः लोकभाषा और लोकजीवन में प्रयुक्त होने वाले छन्दों को लेकर चलता है। प्रगतिवाद का प्रधान लक्ष्य साहित्य और जीवन की अभिन्नता है। डा. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के शब्दों में, "प्रगतिवाद को कला-कला की दृष्टि से स्वीकार्य नहीं। कला स्वान्तः सुखाय नही, जन-हिताय चाहिये।"

हिन्दी में प्रगतिपादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियां प्रायः इस प्रकार हैं- आर्थिक स्वतंत्रता का आह्वान, अन्तर्राष्ट्रीयता के प्रसार की भावना, प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन की पुकार, मानवतावाद, साम्यवाद का प्रचार, शोषण का विरोध सामयिक समस्याओं के प्रति जागरूकता, बौद्धिकता और व्यंग का प्राचुर्य।

निराला, पंत और भगवती चरण वर्मा आदि हिन्दी के प्रारम्भिक प्रगतिवादी कवि थे। हिन्दी के आधुनिक प्रगतिवादी कवियों में शिवमंगल सिंह 'सुमन', दिनकर, अंचल, नरेन्द्र शर्मा, नागार्जुन, रामविलास शर्मा आदि के नाम प्रसिद्ध हैं।

नीचे अवधी के आधुनिक काव्य में प्रगतिवादी चिंतन का कुछ परिचय संक्षेप में दिया जा रहा है। 15 अगस्त 1947 को पराधीनता के चंगुल से हमारा देश मुक्त हुआ। हमें राजनीतिक स्वराज्य प्राप्त हुआ परन्तु आर्थिक स्वतन्त्रता का सूर्य अब भी हमसें दूर है। अतएव हमारा प्रगितिवादी कवि वर्तमान स्थिति से पूर्णतया असंतुष्ट है। उसकी दृष्टि में धनी और निर्धन के मध्य की खाई और अधिक चौड़ी हुई है।

सब कहैं मुलुक आजाद भवा, भारत का मिलिगै आजादी,
मुलु तोरी मुरझुल्ली ठठरी पर लदि गै और गरू लादी।

आजाद भये हैं संखपती, उयि तोरि करेजी काढ़ि सकै।
आजाद भये सोंठी साहू, त्यांदन के मेदुका बाढ़ि सकै।

- युक्तिभद्र 'पुतान'

उपर्युक्त पक्तिंयों में दीन-हीन, जर्जर कृषक के प्रति पूरी-पूरी सहानुभूति तथा पूंजीवाद के विरुद्ध विद्रोह की भावना स्पष्ट अभिव्यंजित है। यही नहीं, इन कवियों की विचारधारा मूलतः क्रान्ति के धरातल पर प्रतिष्ठित दृष्टिगोचर हो रही है। शासन व्यवस्था से असंतुष्ट कवि किसान को क्रान्ति के लिए ललकार रहा है।

रे छोड़ भला अब तो खटिया,
दे फूँक फूस की यह टटिया।

प्रगतिवादी कवि प्राचीन रूढ़िवादी और पूंजीवादी समाज को मिटाकर एक अभिनव समाज की स्थापना करना चाहता है, जिसमें न कोई शोषण हो, और न शोषित। वह समाज के निर्माता को शोषकों से सावधान करता रहता है-

चेतु रे माली फुलबगिया के।
बड़ी जुगुति ते साफु किहे तुयि, झंखरझांर कटीले।
दै-दै रकतु पान रोपे रे सुन्दर बिरिछ छबीले।
रहि ना जाये गुलाब के धोखे, काँटा झरबेरिया के।।
नासि गयी हैं फसलि रूपहली, लै निर्दन्द कुदार।
खोदि-खोदि भुइँ समथरि करु और बढ़िया ढूंढ बेसार।
नये फसलि के नसे फूल खिलि महकावै संसार,
टूटि डार ते गथि बने जो देउतन के हिय हार।

- युक्तिभद्र 'पुतान'

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने अन्योक्ति के माध्यम से अपने क्रान्तिकारी विचारों की अभिव्यक्ति की है। वह शोषण के प्रतीकों कों समाप्त करना चाहता है तथा नये और उत्तम बीज से नये समाज की रचना करना चाहता है जो संसार को सुख समृद्धि से सम्पन्न कर दे।

आज का प्रगतिवादी साहित्यकार गांधीवाद की अहिंसा में विश्वास नहीं करता, प्रत्युत वह हिंसात्मक क्रान्ति का समर्थक ज्ञात होता है। अतएव वह दूसरों के श्रम पर निर्भर सामंतों को बरबस समाप्त करना चाहता है। उसका अडिग विश्वास है कि श्रमिक ही समाज का स्वामी है। वह शोषक और शोषित का भेद मिटाकर समानता की भूमि पर संसार की प्रतिष्ठा चाहता है-

अब लै बाँक, साफ करु मेरुआ, सूधा करि दे बांस,
मुक्त खोर बेकार न पनपै, रहे जुलुम ना त्रास।
आगे बढ़ै किसान मेहनती, जो कमाय सो खाय,
कोई चुसावै, चूसि न पावै, कोई न मरै मोटाय।
सबरे पात बराबरि करुई कल्प-बिर्छ बिरवा के।
जागु रे सैनिक स्वतंत्रता के।।

- बंशीधर शुक्ल

स्पष्ट है कि कवि का यह सैनिक राजनीतिक स्वतंत्रता-संग्राम का सेनानी नहीं प्रत्युत् वह वर्ग-संघर्ष का सिपाही है जो हिंसात्मक क्रान्ति के द्वारा शोषण के धरातल को ध्वस्त कर समानता का साम्राज्य स्थापित करने के लिए जगाया जा रहा है।

कवि का विश्वास है कि संसार से राजतंत्र भाग रहा है-

'राजतंत्र दुनिया तें भागा।' - बंशीधर शुक्ल

तथा युग के बन्धन ढीले हो रहे हैं। युग आर्थिक स्वच्छन्दता की ओर अग्रसर हो रहा है और साम्यवाद के चरण बढ़ते चले आ रहे हैं-

बांधु तोरि बहि चला जमाना, साम्यवाद घर डीकै। - बंशीधर शुक्ल

अतएव उसे पूर्ण विश्वास है कि अब शासन शोषित वर्ग के हाथ में जाने वाला है। वह कृषक से दृढ़ता के साथ कह रहा है-

तोरिय धरती, तोरइ बादल, तुई हुइहै रखवार,
राजा प्रजा नाउना रहिहैं, तुई हुइहै सरकार।
चेतु रे धरती के भुइहार। - बंशीधर शुक्ल

प्रगतिवादी हृदय-परिर्वतन के दर्शन में विश्वास नहीं करता क्योंकि साम्यवादी विचारधारा के अनुसार शोषक वर्ग सहज ही अपने धन का समान वितरण करने के लिए, कभी सन्नद्ध नहीं हो सकता। सीधी उगलियों से घी कभी नहीं निकलता। अतएव वह आचार्य विनोवा भावे के "भूदान आन्दोलन" की खिल्ली उड़ाता है-

भीख मांगि मिलती कतहुं जर, जमीन अरु नारि,
भारत माँ मचती ककस महभारत कै रारि।
महभारत कै रारि, कटे जहं भ्रात सहोदर,
जूझे अर्जुन, कर्ण, द्रोण, कृप, भीष्म, वृकोदर।
'शूल' गांठि मा बांधि लेव या पुरिखन कै सीख,
टेढ़े ह्वै सब कुछ मिली, सीधे मिले न भीख।

- सूर्य प्रकाश त्रिपाठी 'शूल'

मार्क्सवाद की जन्मभूमि तथा क्रीड़ा-भूमि होने के कारण रूस के प्रति प्रगतिवादी साहित्यकारों की अपरिसीम श्रद्धा है। उनकी दृष्टि में 'स्टालिन' तथा 'लाल निशान' शोषित मानवता की मनवता की मुक्ति के प्रतीक है। हमारे एक कवि के द्वारा स्टालिन को दी गयी श्रद्धांजलि देखिए, जिसमें उसे कलियुग के राम की पदवी से विभूषित किया गया है-

सतयुग थकिं सोये रहे, त्रेता करि विश्राम,
स्तालिन जनमें धरनि पर, बनि कलियुग के राम।
बनि कलियुग के राम, स्वर्ण की लंक जलाई।
मारा रावण-जार मुक्ति, मानवता ने पाई।
युग-युग के सोए जगे, अब मजदूर किसान,
'शूल' बेग ते बढ़ि रहे लै के लाल-निशान।।

- सूर्य प्रकाश त्रिपाठी 'शूल'

प्रगतिवादी साहित्य में सबसे प्रधान स्वर शोषण के विरोध का है। एक कवि की दृष्टि में निर्धनों के रक्त का शोषण करके ही धनिक लाल दिखलाई पड रहे हैं। शोषक के प्रति शोषित की उलाहना सुनिए-

मिलि होइहै पीठी-पेटु एकु, होती है ढकर-ढकर आंतै।
नान्हें ते हम पाला प्वासा, अब मारति हौ हमरेई लातैं।।

तुम्हरे कारण जिउ होम कीन, देही मां रहिगै सूखि खाल।
हमरी देहीं का रकतु आय, तुम्हरी देहीं मां लाल-लाल।।

- कृपाशंकर मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

निर्धन, श्रमिक और कृषक के अस्थि-पंजर पर ही संसार के नव-निर्माण टिके रहते हैं। अपनी साधना से उनके डिगते ही भयंकर परिणाम हो सकते हैं। एक कृषक की निम्नलिखित चुनौती में कितना सत्य है-

हम करित जग का अन्न-वानु ई ख्यात छोड़ि जो बइठि रही।
लछिमीपति आसनु छोड़ि चली, फिरि लछिमी कै गति कौनि कही।।
जो हम न सही यह धूप-ताप, तौ मिलै न सुखु छाही जग का।
जो हम न सुखाई रकतु अपन, तौ मिटे हरापनु पग-पग का।।

- चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका'

एक गरीब की होली में आर्थिक वैषम्य का चित्र देखिए। वस्तुतः पर्वों और त्योहारों की स्वार्थकता भी उन्हीं के लिए है, जिनके पास धन है। निर्धन को तो मुंह की मांगी मौत नहीं मिलती, कितनी बिडम्बना है। निर्धनता का कितना मार्मिक चित्रण है-

हमैं यह होरिउ झुरसावै।
गांव नगर सब होरी खेलैं, रंग अबीर उड़ाय।
हमरी आंतै जरै भूख ते, तलपै अंधरी माय।।
बात कोइ पुछवेइ न आवै। हमैं यह...
सुनेन रातिमाँ जरिगै होरी, जरिकै गई बुझाय।
हमरे जिउ की बुझी न होरी, जरि-जरि जारति जाय।।
नैन जल कबलै जुड़वायें, मौत सुधि लेइउ न आवै। हमैं यह...

- बंशीधर शुक्ल

प्रगतिवादी काव्य में व्यंग की प्रवृत्ति भी महत्वपूर्ण है, जिसमें कवियों के हृदय का क्षोभ व्यंजित हुआ है। ये व्यंग प्रायः दैनिक समस्याओं को लेकर किये गये हैं। 'वोट की चोट' शीर्षक रचना में रोटी, शिक्षा तथा मतदान विषयक तथ्यों के सम्बन्ध में वर्तमान शासन के प्रति सुदर्शन चक्र के व्यंग देखिए-

तुम इतनी रोटी परसायौ, हम सुनतै-सुनत अघाय गयेन।
तुम एतनी विद्या बरसायो, हम पढ़तै-पढ़त अघाय गयेन।
तुम अपने मन मां समझे हौ, हम अबकिउ परचा छाड़ि धाब।
तुम पर्‌यो गंवारन के पल्ले, हम टोपिउ तलक उतारि ल्याब।।

सामयिक समस्याओं के प्रति जागरूकता भी प्रगतिवादी कवियों की एक विशेषता है। हमारे कवि कंट्रोल, मंहगाई, राशनिंग, अकाल, निर्वाचन, महामारी, चोरबाजारी आदि के प्रति निरन्तर अपनी खीझ और छोभ व्यक्त करने में सफल हुए हैं। एक कवि की कंट्रोल शीर्षक रचना की कुछ व्यंगपूर्ण पंक्तियां देखिए -

जय-जय-जय कन्ट्रोल गुसांई।
रौरी-कृपा लटत लाइट नित, ब्लैक मोटात सवाई।
चोर साहु बनिं रमहिं हाट मँह, साहु चोर बनि जाई।
जन जाकें करकस-कुबास से नाक लेत सिकुड़ाई।
सो माटी का तेल आज अमिरित से बढ़ि जाई।।

- भगवती प्रसाद मिश्र 'नन्दन'

प्रगतिवादी कवि एक उत्कट आशावादी व्यक्ति होता है। आज उसे पूरा विश्वास है कि युग पलट रहा है, जिसमें निश्चय ही निर्धनों की जीत तथा पूंजीपतियों की हार होगी।

बजी शहनाई 'सरस' पुनीत, गरीबन केरी हुइहै जीत।
न पइहैं अब पूंजीपति पार, मामला होइगा बंटाधार।।

- जगमोहन कपूर 'सरस'

प्रगतिवादी साहित्यकार आज सामान्य से सामान्य सामयिक विषयों की पृष्ठभूमि पर अपनी रचनाओं के भव्य चित्र निर्मित करते जा रहे हैं। प्रश्न यह है कि उनका यह कृतित्व कहां तक उपादेय, शाश्वत और स्थाई है तथा शाश्वत और स्थाई साहित्य के समक्ष उनके इस सामयिक साहित्य का कहां तक महत्व है? इस प्रश्न का उत्तर तथा सामयिक साहित्य का मूल्य श्री लक्ष्मी नारायण 'सुधांसु' के शब्दों में इस प्रकार सन्निहित है। रूढ़िग्रस्तता या सामाजिक अवयव प्रथा को दूर करने के लिए सामयिक साहित्य का उपयोग किया जा सकता है-

जीवन में प्रतिक्षण क्रान्ति होती रहती है। किन्तु उस का अभीष्ट-साधन सामयिक साहित्य के द्वारा ही समुचित है, उसके लिए स्थायी साहित्य को व्यर्थ घसीट कर उसकी मर्यादा नष्ट करने की आवश्यकता नहीं। जहां तक उसके स्थायित्व का प्रश्न है, इस सम्बन्ध में डा. केसरी नारायण शुक्ल का मत समीचीन ज्ञात होता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि क्रांतिवाद की अधिकांश रचनाएं लुप्त हो जायेंगी और जल्द ही लुप्त हो जायगी। इसमें जो रचनाएं बचेंगी वे अपनी सच्चाई और उत्कृष्ट भावनाओं के बल पर बचेंगी।

सीतापुर के अवधी कवियों में बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस' सच्चे प्रगतिवादी रचनाकार थे। यही नहीं प्रगतिवादी आन्दोलन की लहर उन्होंने बहुत पहले ही भांप ली थी और वे सन् 1930 ई. की 'चकल्लस' में हो गया। इस संदर्भ में उनकी रचना 'उइ का जानिबि हम को आहिन' उल्लेखनीय है-

दुनिया का अन्नु देवैया हम, सुख-सम्पत्ति के भरवैया हम।
भूखें नंगें, अधमरे परे, रकतन के आंसू रोई रहे।
हमका द्याखति अंटा चढ़िगे, उइका जानिबि हम को आहिन।।

स्पष्ट है कि पूंजीपति उन श्रमिकों का मूल्यांकन नहीं कर पा रहे हैं जिनके कंधों पर ही उनका ठाठ-बाठ टिका है। कवि कहता कि यदि श्रमिक अपना कार्य छोड देगा तो संसार की गाड़ी जहां की तहां खड़ी रह जायेगी-

आंखी सिलगुटिया चूनि जाई,
जो भोगई छोड़िनि अपनि चालु।

पढ़ीस जी ने शोषक पूंजीपतियों तथा शोषित श्रमिकों-कृषकों का वैषम्य बड़ी बारीकी और बड़ी प्रभावशाली भाषा में व्यक्त किया है। कवि स्पष्टतया दो वर्गों का संकेत करता है। वह कहता है कि वे उच्च्य वर्ग के हैं और हमारा वर्ग उनसे अलग है। हम और वे एक यर्ग के नहीं है। इस वर्ग संघर्ष का स्पष्ट संकेत करने वाली कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं -

उयि अउर आयिं हम अउर आन,
सोचति समुझति एतने दिन बीते,
तहूं न कहूं खुली आंखी,
काकनि यह बात गांठि बांधउ,
उयि अउर आयिं हम अउर आन।
उयि लाटि कमउदर के बच्चा, की संख्यातिग के परपोता।

उयि दया करैं तब दानु देयि, उयि भीख निकारैं हुकुम करैं।
सब चोर-चोर मौस्याइति भाई, एक-एक पर ग्यारह है।।
तोंदन मां गड़ुवा हाथी अस, उयि अउर आयिं हम अउर आन।

पढ़ीस जी के सुपुत्रों में युक्तिभद्र दीक्षित 'पुतान' तथा लवकुश दोनों ही अच्छे कवि हैं और दोनों प्रगतिशील रचनाएं लिखते हैं। पीछे युक्तिभद्र की रचनाओं का उल्लेख हो चुका है। लवकुश जी की रचना 'दुखिया बिकै बिन दाम' उनकी प्रगतिवादी भावना की द्योतक है-

लछिमी के पति झूमै लई रुपया के पलना,
बिन दवा दम तूरैं बुधुवा के ललना,
ठाढ़े-ठाढ़े लुटई रमइया तोरी नगरी,
सुखु लहैं ठगहा गुलाम,
दुखिया बिकै बिन दाम।।

सीतापुर के कवियों में श्याम सुन्दर मिश्र मधुप भी प्रगतिवादी रचनाकार कवि हैं। खड़ी बोली में कुछ हवा बदल जाती है। उनकी पूरी काव्य पुस्तक ही उनकी प्रगतिवादी रचनाओं का उदाहरण है। उनकी अवधी-काव्य पुस्तक घास के म्वाट और म्वाट होई शीर्षक रचना की कुछ पंक्तियां प्रस्तुत हैं-

तुम तउ बरसउ, सागर-महासागर पर
जिनका बड़ी बोहि, धरइ का ठेकाना नांहि
जिनका राति दिनु, स्वांता उबलि-उबलि
झरना झरि-झरि, भरि रहे, यहइ अन्याउ बड़
दूबर दुबराइ रहा, म्वाट और म्वाट होइ।
तनि बरसउ वहि पार, जहां नन्हुवा किसानन की
क्वांरी अरमानन का, दुर्भिच्छ क्यार रावनु
मुंह मां दबाये फिरइ

सीतापुर के प्रगतिशील रचनाकारों में अवधी के यशस्वी कवि चतुर्भुज शर्मा का नाम भी महत्वपूर्ण है, जिन्होंने समकालीन किसान की गरीबी देखी और भोगी है। सन 1937 ई. में उत्तर प्रदेश में पहले पहले कांग्रेस की सरकार बनी और किसानों को मौरूसी अधिकार दिये गये जिससे उनकों कुछ राहत मिली परन्तु उसके पूर्व उत्तर प्रदेश के कृषकों की जो दशा थी, वह भारतवर्ष के आर्थिक इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है, जिसे साहित्यकारो में प्रेमचन्द ने बहुत कुछ समझा है और जिसका कुछ आभास उन्होंने अपने साहित्य में यत्र-तत्र दिया है। कविवर शर्मा जी के एक किसान की दशा देखिए-

फूटि तकदीर मिली, कबहुं न पावा सुख,
का करी उपाय भगवान जब बावा भा।
हाइ रे गोसैंया भरि पेट तचि-तचि आवा भा।
मांस का न नाउँ हाय, ठठरी भवा है तनु।
मारे तकलीफन शरीर सूखि झावां भा।
कैसे तो छियन्नी भगतैवा हाइ राम कड़ौ।
अब की खरीफ मां न धानु भा न सावां भा।।

सीतापुर के हिन्दी साहित्यकारों में कुछ ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने प्रगतिशील साहित्य में अच्छा कार्य किया है। बाबू मदन गोपाल महेन्द्र व्यवसाय से एडवोकेट हैं परन्तु अच्छे प्रगतिवादी कवि हैं। उनके पिता बाबू कन्हैया लाल महेन्द्र, एडवोकेट कांग्रेस के बड़े नेता थे जो स्वतन्त्रता आन्दोलन में अनेक बार जेल

गये। मदन बाबू भी सन् 1942 के स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी हैं। उनकी रचना प्रगतिवादी साहित्य में मील का पत्थर है। उनकी एक सुप्रसिद्ध रचना है-

छलिया ने आग लगाई जो, उसका बुझाना आसान नहीं।
द्वारिकाधीश को दीन बन्धु, कहना मुझको स्वीकार नहीं।

मदन बाबू ने दर्जनों प्रगतिशील रचनाएं लिखी हैं। कुछ के शीर्षक अथवा टेक इस प्रकार हैं-

कवि से, चीन की क्रान्ति, मां, निर्माण चाहिए।
लाल होने जा रही है, भूमि भारतवर्ष की।
सीधी-सादी पगडंडी पर,
चलना मुझको स्वीकार नहीं।
डगमग न हुए पग जिस पथ पर,
उस पथ से मुझको प्यार नही।
मैं था अनार्य, मैं हूं अनार्य,
मेरी अनार्यता जिन्दावाद।

इस प्रकार हिन्दी के प्रगतिवादी काव्य में उनका अपना स्थान है। उनकी प्रगतिशील रचनाएं सुनते ही बनती हैं जो एक पुस्तक भर को हैं परन्तु लाख कहने पर भी वे उनके प्रकाशन के लिए तैयार नहीं हैं। डा. रणजीत से हिन्दी जगत भली-भांती परिचित है। प्रगतिवादी साहित्यकारों में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। वे बहुत दिन बांदा महाविद्यालय में हिन्दी के रीडर रहे। अन्त में सीतापुर के आर.एम.पी. महाविद्यालय से सेवानिवृत्त होकर यहीं बस गये हैं और हिन्दी-सेवा में रत् हैं। वे अनेक ग्रन्थों के रचनाकार है। उनका पूरा लेखन प्रगतिवादी धारा से जुड़ा हुआ है। वे सीतापुर की सुजान परिषद के अध्यक्ष भी हैं।

अयोध्या प्रसाद अवस्थी ऊंचाखेरा हिन्दी के कुशल कवि हैं। उन्होंने सर्वहारा को लक्ष्य बनाकर जो रचनाएं लिखी हैं, वे प्रगतिशील साहित्य की धरोहर हैं। कामता प्रसाद वर्मा, बिसवां ने किसानों की समस्याएं और सामाजिक संघर्ष को लेकर जो रचनाएं लिखी हैं वे प्रगतिशील साहित्य के अन्तर्गत अपना विशेष मूल्य रखती हैं। सीतापुर जनपद में इनके अतिरिक्त भी बहुत से रचनाकार हैं, प्रगतिशील साहित्य में जिनका योगदान अक्षुण्ण है। इन साहित्यकारों में धीरेन्द्र विद्यार्थी, धीरेन्द्र मिश्र, उदय प्रताप, अनुराग अग्निहोत्री इत्यादि नवोदित प्रगतिशील साहित्यकारों के नाम विशेषकर उल्लेखनीय हैं।

अवधी साहित्य सन्दर्भ

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

अवध भारती समिति–यह बाराबंकी जनपद के हैदरगढ़ क्षेत्र में स्थित एक साहित्यिक संस्था है, जो अवधी भाषा के प्रचार-प्रसार का कार्य करती है। 'जोंधइया' नामक पत्रिका सन् 1990-94 के बीच 10 अंकों में प्रकाशित हुई, जिसमें लगभग 150 कवियों को प्रकाश में लाया गया, जो अप्रकाशित थे। 1994 से 'अवध-ज्योति' पत्रिका का प्रकाशन हो रहा है।

अवधी कोश–यह श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर' द्वारा संपादित अवधी शब्द-संग्रह है। इसका संपादन एवं प्रकाशन सन् 1954 के आस-पास हुआ था। इसमें लगभग चालीस हजार शब्द संकलित हैं। यह संभवतः पहला अवधी शब्द-संग्रह है।

अवधी अकादमी–यह गौरीगंज (अमेठी) में स्थापित अवधी की सेवा में 1976 से सक्रिय संस्था है।

अवधी परिषद्–यह लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में स्थापित एक संस्था है। 'अवधी' नामक पत्रिका का प्रकाशन इसी संस्था के माध्यम से अत्यन्त सफलतापूर्वक सम्पन्न होता था।

अवधी भाषा एवं साहित्य का इतिहास–यह प्रो. राजेन्द्रप्रसाद श्रीवास्तव द्वारा लिखित परिचयात्मक पुस्तक है, जिसका प्रकाशन 2 अक्टूबर सन् 1997 ई. को 'भवदीय प्रकाशन' अयोध्या से हुआ। इस पुस्तक में अवधी व्याकरण एवं ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत किया गया है। अवधी साहित्य में इसकी बड़ी ही उपादेयता सिद्ध हुई।

अवधी भाषा-साहित्य और संस्कृति–यह डॉ. राधिकाप्रसाद कृत अवधी की अन्वेषणात्मक एवं परिचयात्मक पुस्तक है, जिसमें साहित्यकारों का परिचय एवं अवधी के संदर्भ में कई लेखों का समायोजन है। इस पुस्तक का प्रकाशन 1988 ई. में 'आनंद-प्रकाशन' फैजाबाद से हुआ।

अवधी मंच–सुल्तानपुर जिले के कादीपुर क्षेत्र में स्थापित यह एक संस्था है। यह संस्था 'अखत' नामक पत्रिका दो अंकों में प्रकाशित कर चुकी है और अवधी भाषा के प्रचार-प्रसार हेतु समर्पण भाव से सेवारत है।

अवधी में संयुक्त क्रियापद–यह डॉ. ज्ञानशंकर पाण्डेय द्वारा किया गया महत्वपूर्ण शोधकार्य है, जो अभी अप्रकाशित है। इसमें अवधी का भाषावैज्ञानिक वर्गीकरण एवं विकास प्रस्तुत किया गया है।

अवधी लोक कथाएँ–डॉ. बाबूराम सक्सेना द्वारा लिखित पुस्तक 'अवधी का विकास' के परिशिष्ट-2 में वर्णित लोककथाएँ हैं- गुलगुलावाली कथा, ठकुरन की बहादुरी, अंधेरे की बेईमानी, लरिकिनि की पति सेवा, गुरू किहे के फल, बाम्हन अउ बोकरा केर कथा , सियार और सियारिन, बाबा की करामात, कचेहरी मा बयान, मुकदिमा कइ हाल, बम्हनी कइ बयान, भिखारी बाम्हन कय कथा।

अवधी लोकोक्ति/कहावत-कोश–यह डॉ. रामबहादुर मिश्र कृत संग्रह है, जिसमें 3,000 लोकोक्ति /कहावतों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। लोकोक्तियाँ अन्तर्कथात्मकता के भी साथ प्रस्तुत की गयी

हैं। यह अवधी साहित्य की विशेष उपलब्धि है।

अवधी शब्द कोश–यह सन् 1996 में हिन्दी विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित एक उपयोगी संग्रह है। इसमें लगभग आठ हजार शब्दों का संकलंन प्रस्तुत किया गया है और साथ ही उनका अर्थ, व्याकरणिक कोटि आदि से भी परिचय कराया गया है, जो अभी तक अप्रकाशित थे। इस कोश में डॉ. हरदेव बाहरी तथा श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर' द्वारा रचित कोशों के भी समस्त देशज शब्दों को संकलित किया गया है। इसका सम्पादन कार्य डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित एवं डॉ. सजीवनलाल यादव द्वारा संपन्न हुआ।

अवधी शब्द-सम्पदा–यह डॉ. हरदेव बाहरी द्वारा सम्पादित अवधी का शब्द कोश है। समीर द्वारा संपादित 'अवधी-कोश' में परिवर्तन-परिवर्द्धन करके दोगुनी शब्द-संपदा करते हुए बाहरी जी ने अपने नये संग्रह का नाम 'अवधी शब्द सम्पदा' दिया है। इस संग्रह का आधार सामान्य बोल चाल की भाषा है। इसमें लगभग 30,000 शब्द संकलित हैं। इसका प्रथम संस्करण सन् 1982 में प्रकाशित हुआ।

अवध मा होली खेलैं रघुबीरा– डॉ. रामबहादुर मिश्र द्वारा संकलित और संपादित तथा उ.प्र. शासन के संस्कृति निदेशालय द्वारा प्रकाशित इस ग्रंथ में अवधी के एक हजार फाग संकलित हैं। चार सौ पृष्ठों का यह शोध ग्रंथ लोकसाहित्य की अमूल्य थाती है।

अवधी के प्रतिनिधि मुहावरे–अवध भारती समिति हैदरगढ़ से प्रकाशित तथा डॉ. रामबहादुर मिश्र द्वारा विवेचित इस ग्रंथ में अवधी के डेढ़ हजार प्रतिनिधि मुहावरों की व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। देशज शब्द सम्पदा के कारण इसका महत्व भाषा शास्त्रियों के लिए बहुत अधिक है।

अवधी सागर–यह जानकी रसिक शरण द्वारा रचित अवधी ग्रंथ है। इसमें श्रीराम तथा सीताजी के चरित्र का सरस और मनोहरी ढंग से वर्णन हुआ है। इसका प्रणयन सं. 1760 में हुआ था।

अवधी साहित्य-संस्थान–यह संस्था अयोध्या, फैजाबाद में कार्यरत है। यहाँ से 'अवधी' पत्रिका के माध्यम से अवधी के समग्र पक्षों को विश्लेषित करने का सराहनीय कार्य हो रहा है।

आखत–यह एक अवधी पत्रिका है, जिसका प्रकाशन 'अवधी मंच' के माध्यम से हो रहा है। दो अंकों में प्रकाशित होकर इस पत्रिका ने अवधी साहित्य में काफी योगदान किया है।

आखिरी कलाम–यह मलिक मोहम्मद जायसी की महत्वपूर्ण रचना है। इसमें अवधी भाषा एवं दोहा-चौपाई, छंदों का सफल प्रयोग हुआ है।

आधुनिक अवधी काव्य में राष्ट्रीय चेतना–यह डॉ. अनीस हसन द्वारा सन् 1990 में प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध है। इस शोध कार्य में आधुनिक अवधी काव्य के माध्यम से अभव्यिक्त राष्ट्रीय चेतना का उद्‌घाटन किया गया है।

आधुनिक अवधी काव्य में लोकतत्व–यह डॉ. शीलेन्द्र मोहिनी श्रीवास्तव द्वारा सन् 1976 में प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध हे। इस शोधकार्य में अवध प्रदेश के जनजीवन में प्रचलित एवं परिव्याप्त लोकतत्वों को खोजने एवं उनकी विवेचना करने का प्रयास किया गया है।

अवधी त्रिधारा–डॉ. रामबहादुर मिश्र द्वारा सम्पादित तथा अवधी अकादमी (गौरीगंज सुलतानपुर) द्वारा प्रकाशित यह कृति अवधी के तीन प्रमुख नवगीतकारों जगदीश पीयूष, डॉ. सुशील सिद्धार्थ तथा डॉ. भारतेन्दु मिश्र के नवगीतों पर व्यापक विमर्श किया गया है।

आधुनिक अवधी के प्रमुख कवि–यह डॉ. ओमप्रकाश त्रिपाठी द्वारा प्रणीत परिचयात्मक ग्रंथ है। इसका प्रणयन सं. 2047 में हुआ। इसमें पं. प्रतापनारायण मिश्र, पढ़ीस, वंशीधर शुक्ल, रमई काका, मृगेश तथा पं. द्वारिकाप्रसाद मिश्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है।

आधुनिक अवधी संत-साहित्य–यह डॉ. रामकृष्ण जायसवाल द्वारा सन् 1993 में प्रस्तुत शोध-

प्रबन्ध है। इसमें अवधी भाषा के माध्यम से रचित संत-साहित्य का उल्लेख किया गया है।

आधुनिक काल में अवधी काव्य तथा उसके कवि–यह अवधी साहित्य का परिचायक ग्रंथ है, जिसका संपादन-लेखन डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र द्वारा सम्पन्न हुआ है। यह कृति सन् 1995 में प्रकाशित हुई है। इसमें सैकड़ों आधुनिक अवधी कवियों का परिचय दिया गया है जिनका परिचय प्रायः अप्राप्त रहा है।

आल्हखण्ड–यह वीरगाथा काल के महाकवि जगनिक द्वारा प्रणीत अवधी का सर्वप्रथम काव्य-ग्रन्थ है। इसका प्रणयन सं. 1250 में हुआ। इसमें महोबे के वीर आल्हा-ऊदल की कथा है। इस ग्रन्थ को लिपिबद्ध करने का श्रेय सर चार्ल्स इलियट को प्राप्त है। उन्होंने इसे सन् 1865 में फर्रुखाबाद जिले में लिपिबद्ध कराया था। यह श्रीरामचरितमानस के बाद अवध प्रदेश का सबसे लोकप्रिय ग्रन्थ है।

आल्हा–यह अवधी का महत्वपूर्ण छन्द है। भानु कवि कृत अश्वावतारी, मात्रिक, सवैया इनमें 16-15 मात्राएँ होती हैं अंत में जगण होता है। दूसरे संदर्भ में आल्हा 'आल्हखंड' महाकाव्य के नायक एवं महोबा के वीर लोकप्रिय वीर गाथा भी है। पावस ऋतु में सामूहिक रूप से अथवा निजीस्तर पर इसका गायन प्रायः होता दिखता है। इसके मूलरूप के सम्बन्ध में अनेक विवाद हैं। जगनिक को आल्हखण्ड का रचयिता कहा गया है, पर उस अपभ्रंश-रचना का अवधी 'आल्हा' पर प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं परिलक्षित होता। वर्तमान आल्हा की अनेक लड़ाइयों के रचयिता प्रतापनारायण मिश्र को कहा जाता है। आल्हा के अनेक संस्करण हैं, जिनमें कहीं 52 लड़ाइयां और कहीं 56 लड़ाइयां वर्णित हैं। इसे आशुगायक प्रायः गढ़ते रहते हैं। इसमें अनुणनात्मक प्रायः गढ़ते रहते हैं। इसमें अनुणनात्मक ध्वनियों का बाहुल्य है। आल्हा के गायक अल्हैतों की पाठ प्रविधि स्वयं विशिष्ट है।

इन्द्रावती–यह नूर मोहम्मद कृत अवधी प्रेमाख्यान है। इसमें कलिंग के राजकुमार राजकुँवर और आगमपुर की राजकुमारी इन्द्रावती की प्रेम-कथा वर्णित है। हर पाँच चौपाइयों के बाद दोहा का योग है। भाषा में संस्कृत और ब्रज के भी शब्द प्रयुक्त हैं।

इश्क विनोद–यह सुल्तानपुर निवासी सीताप्रसाद कृत अवधी रचना है। इसमें बरवै छंद का प्रयोग हुआ है।

ईसायण–यह एस. मार्शलीन द्वारा अवधीं भाषा में लिखा गया एक महत्वपूर्ण महाकाव्य है। इसकी मूल कथा ईसा-चरित्र है। इसको हिन्दी जगत में सर्वप्रथम मान्यता दिलाकर प्रकाश में लाने का काम श्री मायापति मिश्र ने किया। मिश्र के अनुसार 'मानस' और पदमावत की रचना पद्धति को आधार मानकर रचित 'ईसायण' का आरम्भ 'मंगलाचरण' दोहों से होकर अंत सोरठा से हुआ है। ग्रन्थ से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर इसका प्रकाशन काल 1938 ई. है। 'मानस' की चौपाइयों की भाँति इस काव्य की चौपाइयों में भी सरसता देखने को मिलती है।

उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण–दामोदर पण्डित रचित यह ग्रन्थ अवधी माध्यम से लिखा गया संस्कृत का प्रथम व्याकरण है। इसके आधार पर डॉ. रामविलास शर्मा की स्थापना है कि अवधी संस्कृत के समानान्तर विकसित हुई है तथा यह भी कि अवधी भाषा का व्याकरण संस्कृत व्याकरण से पूर्व निर्धारित था। तात्पर्य यह कि अवधी आरम्भ मे ही एक स्वायन्त भाषा रही है। यह ग्रंथ इसका प्रमाण है।

उबहटि–नववधू के ससुराल आगमन के अवसर पर उसका स्वागत करती हुई स्त्रियों का यह अवधी लोकगीत हैं। इसमें मंगलाशा का भाव होता है।

उभय प्रबोधक रामायण–यह महात्मा बनादास द्वारा प्रणीत अवधी ग्रंथ है। इसकी कथा सात काण्डों में विभक्त है। इसमें छप्पय, सवैया, कुण्डलियाँ, घनाक्षरी आदि छंदों का प्रयोग हुआ है। इसकी रचना सं. 1931 में हुई थी।

उषा-चरित–यह सं. 1831 में कति जनकुंज द्वारा रचित अवधी काव्य ग्रंथ है। इसकी भाषा सरल, मधुर एवं संस्कृतनिष्ठ है।

उषाहरण–यह सं. 1886 में सृजित जीवनलाल नागरजी का ग्रंथ है। भाषा अवधी है, जिसमें ओज एवं प्रसाद गुण का पुट है।

कजरी–यह श्रावण मास में स्त्रियों द्वारा गेय अत्यन्त लोकप्रिय अवधी लोकगीत है। अवध की स्त्रियाँ झूले पर झूलती हुई प्रायः 'कजरी' गाती हैं। सावन के शुक्लपक्ष की तृतीया को 'कजरी तीज' व्रत होता है। अनुमानतः इसी व्रत के आधार पर इन गीतों का नामकरण कजरी हुआ होगा। 'कजरी' में किसी विशेष घटना का उल्लेख न होकर मानव-हृदय के विचारों का उल्लेख रहता है। कजरी में राधा-कृष्ण और उल्लेख रहता है। कजरी में राधा-कृष्ण और गोपियाँ ही मुख्य वर्ण्य विषय हैं। इस गीत में शृंगार रस के दोनों पक्षों के चित्र देखने को मिलते है।

कठला–ये जातकर्म अथवा जन्मोत्सव से सम्बन्धित एक अवधी लोकगीत है इसमें पुत्रैषणा का भाव होता है।

कढ़िलउना गीत–यह गीत उस समय गाया जाता है जब बच्चे जन्म दिन मनाया जाता है। अवध में जन्म दिन मनाने की विशिष्ट प्रथा है। बच्चे को प्रत्येकं जन्म दिन पर उसी वक्त, जिस समय बच्चे का जन्म हुआ था एक डलिया में बिठाकर खींचा जाता है। यह रस्म विवाह होने तक चलती रहती है।

कन्यादान–विवाहोत्सव पर गाया जानेवाला यह अवधी लोकगीत अत्यन्त कवित्वपूर्ण एवं मार्मिक है। इसका वर्ण्य विषय है- विवाह मण्डप के नीचे माता-पिता द्वारा वर को कन्यादान।

कबीर–अवध प्रदेश में होलिकोत्सव के अवसर पर स्त्री-पुरुषों द्वारा कुछ ऐसे लोकगीत गाये जाते हैं जो सभ्य समाज के लिय वर्ज्य हैं। इन्हें 'कबीर' संज्ञा देने के पीछे कई रहस्य हैं। कबीरपंथी, निरगुन-विचारक तत्व-निरूपण करते हुए जो कटूक्तियाँ कहते रहे हैं, उसके कारण प्रत्येक कटु वाणी को रामोपासक तुलसी-अनुयायी अवधवासी जन इस लोकगीत को भी कबीर कहने लग गए। इसमें "अरा रा गों" के साथ गुप्तांगों का उल्लेख किया जाता है जो उद्धरणीय नहीं है।

कबीर परचई- इसके रचयिता अनंतदास जी हैं। इनका समय सं. 1600 के आसपास माना जाता है। 'कबीर परचई' की छः हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध हैं। इसमें कबीर के जीवन की प्रमुख घटनाओं का वर्णन किया गया है। समस्त ग्रंथ दोहा-चौपाई में लिखा गया है।

कलुआ बैल–यह चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' कृत अवधी उपन्यास है।

कहरवा–जिन गीतों का प्रयोग कहार लोग करते हैं, वे 'कहरवा' कहलाते हैं। यह अवधी का जातीय लोकगीत है। कहरवा हुडुक और मंजीरे की तान पर गाए जाते हैं। कहरवा का मुख्य विषय नारी का सौन्दर्य वर्णन है। इनमें नारी की विभिन्न दशाओं का भी वर्णन मिलता है। जायसीकृत कहरानामा या 'कहरावाईसी' इसका श्रेष्ठ उदाहरण है।

कहरानामा–यह जायसी की महत्वपूर्ण अवधी रचना है। इसमें डोली को उठानेवाले कहारों से सम्बद्ध कथा है।

काजरु- विवाह और उपनयन के अवसर पर सौन्दर्य प्रसाधन करते अथवा काजल लगाते हुए यह अवधी गीत स्त्रियों द्वारा गाया जाता है। इसमें पारस्परिक सम्बन्धों का प्रगाढ़ परिचय प्राप्त होता है।

काजी का नौकर–यह अवधी सम्राट पं. वंशीधर शुक्ल कृत अवधी कहानी है, जिसका सृजन सन् 1955 में हुआ था इसका प्रकाशन दैनिक 'स्वतंत्र भारत' में हो चुका है।

कामलता की कथा–यह कवि जान द्वारा रचित अनेक प्रेमाख्यानों मे से एक है। भाषा लोक प्रचलित अवधी है । यह चौपाई और दोहा छंद में रचित है। इसमें पाँच चौपाई के बाद एक दोहे का

क्रम है। कथा संगठन में कोई नवीन बात नहीं है।

किसान कटौंझनि–यह स्व. अवधेश त्रिपाठी की एक अवधी रचना है, जिसमें किसानों के यथार्थ जीवन पर प्रकाश डाला गया है।

कीर्तन–यह एक स्तुतिपरक अवधी गीत है, जिसमें पंचदेवोपासना और विनय भावना दृष्टिगत होती है। उदाहारण - 'महारानी वरदानी जै जै विंध्याचल रानी।'

कीर्तिलता–यह विद्यापति की कृति है, जो मिथिलानरेश गणेश्वर के पुत्र कीर्ति सिंह की प्रशस्ति में लिखी गई है। कीर्तिलता का रचनाकाल 1402 ई. के लगभग है। इसमें विद्यापति ने स्वयं को आश्रयदाता का 'खेलन कवि' कहा है। आलोचकों के मतानुसार 'खेलन कवि' विद्यापति की उपाधि है, जो सरस कविता लिखने के कारण उन्हें मिली है, किंतु इनका तात्पर्य है बाल सखा से। इस ग्रंथ में महाराज कीर्ति सिंह का राज्याभिषेक, युद्धारोहण, विजय आदि वर्णित है। साथ ही तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण हुआ है। इस काव्य का रूप ऐतिहासिक चरित-काव्य का है। ऐतिहासिक घटनाओं का यथातंथ्य अंकन ही कवि का उद्देश्य रहा है। कल्पना और अतिरंजना का इसमें कम से कम सहारा लिया गया है। भाषा एवं साहित्य की दृष्टि से विशिष्ट इस रचना में पद्य के साथ गद्य का भी प्रयोग मिलता है। देशी भाषा अपभ्रंश (अवहट्ट) मु कीर्तिलता की रचना की गई है। इसमें एक ओर संस्कृत का मिश्रण है तो दूसरी ओर लौकिक भाषाओं का। कीर्तिलता में अवधी के प्रारम्भिक रूप के दर्शन मिलते है।

कृष्णायन–यह सुप्रसिद्ध पत्रकार एवं राजनीतिक नेता के रूप में ख्यातिप्राप्त पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र की एक कालजयी कृति है। इसकी रचना सन् 1942 में स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान जेल में की गई थी । यह एक सफल महाकाव्य है। इसकी भाषा अवधी है। जैसाकि नाम से ही स्पष्ट है, 'कृष्णायन' में श्रीकृष्ण का जीवन-वृत्त है। कृष्ण इस महाकाव्य के नायक हैं। इस महाकाव्य के कथानक का आधार विशेष रूप से महाभारत, श्रीमद्भागवत और सूरसागर है इसकी सम्पूर्ण कथावस्तु निम्नांकित सात काण्डों में विभाजित है- 1- अवतरण काण्ड, 2- मथुरा काण्ड, 3- द्वारका काण्ड, 4- पूजा काण्ड, 5- गीता काण्ड, 6- जय काण्ड तथा 7- आरोहण काण्ड। कृष्णायनकार परम्परावादी कवि हैं, इसीलिए इसमें प्राचीनता और आधुनिकता का अद्भुत समन्वय स्थापित हुआ है। संस्कृत वाङ्मय में कृष्ण अवतार का जो हेतु है, उसी का समर्थन इस काव्य में हुआ है। युगीन स्वर की सबलता इसमें द्रष्टव्य है। गाँधीवादी विचारधारा का पल्लवन भी कृष्णायन में हुआ है इसके अनुसार कृष्ण का अवतार अत्याचार सहने में असमर्थ भारत माता की पुकार पर हुआ है। इस प्रकार कृष्णायन में सुविचारित भाव-योजना है। यह वीर रस प्रधान कृति है, किन्तु अन्य रसों का भी सुन्दर निर्वाह हुआ है। शृंगार अपने मर्यादित रूप में चित्रित हुआ है रचना में प्रकृति के मनोरम दृश्यों का अंकन हुआ है। 'कृष्णायन' की भाषा तुलसी के रामचरितमानस की भाषा है। मानस की भाँति की कृष्णायन की भाषा संस्कृतनिष्ठ साहित्यिक अवधी है। कृष्णायन की भाषा में तत्सम रूप अधिक है। इस कृति में दोहा, चौपाई तथा सोरठा छन्दों का प्रयोग हुआ है। 'अलंकारों, लोकोक्तियों, मुहावरों का भी स्वाभाविक प्रयोग हुआ है।

कौव्वाली–यह मुख्यतः ईरान से आयी कला है। अवध प्रदेश में कौव्वाली को प्रचारित करने का श्रेय अमीर खुसरो को है। कौव्वाली की मधुरता ही आकर्षण को बहुत प्रश्रय मिला है। यहाँ की जनता कौव्वाली सुनना बहुत पसंद करती है। कौव्वाली में 'ृंगार, करुणा, वीर आदि रसों का समावेश अधिक मिलता है।

खिसकढ़ी–यह श्री सूर्यप्रसाद त्रिवेदी 'काका बैसवारी' की हास्य-व्यंग्य प्रधान रचना है। इसमें 'काका बैसवारी' की 44 रचनायें संकलित हैं। इसकी कवितायें पाठक को हँसाती एवं विस्मित करती

हैं। साथ ही हृदय पर सीधे प्रहार करती है।

गड़बड़ रामायण–यह सन् 1942 में रचित श्री कुटलेश जी की अवधी रचना है, जो दोहा चौपाई छंदों में लिखी गयी है। इनकी चौपाइयों में एक चरण श्रीरामचरितमानस का है तो दूसरा चरण उनके द्वारा सृजित किया गया है। इसमें सामाजिक बुराइयों को उद्‌घाटित किया गया है।

गड़रिया और मूसा पैगम्बर–यह पं. प्रताप नारायण मिश्र द्वारा रचित लघु कथा है। भाषा अवधी है। इसमें दोहा-चौपाई शैली का प्रयोग है। एक गड़रिया, मूसा आकाशवाणी के मध्य इसमें संवाद कराया गया है।

गारी–अवध क्षेत्र में विवाह एवं अन्य शुभ अवसरों पर स्त्रियों द्वारा गारी गाने की प्राचीन-प्रचलित परम्परा रही है। इन उत्सवों में जब भोजन का समय होता है, उसी समय गारी गायी जाती है। गारियाँ प्राचीन शैली में राम-विवाह का माध्यम बनाकर गायी जाती है। कालांतर में इन गीतों में विकृति आ गयी और ओछे शब्दों का प्रयोग होने लगा। भोजन के समय गारी गाने का एक वैज्ञानिक सिद्धांत भी है। गारी सुनने से चित्त को प्रसन्नता होती है, जिससे भोजन आसानी से पच जाता है। आधुनिक गारी में राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक सभी समस्याओं को प्रश्रय मिला है।

गिरीश रामायण–यह राजस्थानी कवि गिरीश कृत प्रबंध रचना है। इसमें अवधी के साथ-साथ खड़ी बोली का भी प्रयोग परिलक्षित होता है।

गुरुभक्ति-प्रकाश–यह चरनदास जी के शिष्य रामरूप जी द्वारा प्रणीत संतपराम्परा का अवधी काव्यग्रंथ है।

गुलछर्रा–यह रमई काका की 'फुहार' की भाँति ही हास्य व्यंग्य प्रधान अवधी काव्य कृति है। इसका प्रकाशन सन् 1977 मुं हुआ है। इस उल्लेखनीय काव्य कृति के कई प्रकाशन अद्यावधि प्रकाशित हो चुके हैं। इसमें कवि की 36 रचनायें संकलित हैं। विषयगत वैविध्य और शिल्पगत वैशिष्ट्य इसका प्रमुख प्रदेय है। 'गुलछर्रा' एक फुलझरी के समान है, जिसके हास्य और व्यंग्य से आलम्बन तिलमिला नहीं उठता, वरन् उसके मधुर हास्य-व्यंग्य से प्रभावित होकर आकृष्ट होता है। इस काव्य कृति की भाषा बानी का सहज सौन्दर्य है। अवधी के लोक प्रचलित छन्दों का इसमें प्रयोग हुआ है।

गो-गज-चिकित्सा–यह महेश्वरबृख सिंह कृत अवधी रचना है। इसमें महाभारत के नकुल द्वारा वर्णित गो-गज-चिकित्सा का वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

ग्यारहाँ–यह भगवानदास कृत अवधी रचना है।

घट रामायण- यह हाथरस निवासी संत तुलसीदास की अवधी रचना है। इसमें निगुर्णोपासना से सम्बद्ध रामकथा का वर्णन है।

घानु–यह विवाह के लगभग एक सप्ताह पूर्व होने वाला संस्कार है। इसमें गेहूँ, चावल आदि खाद्य-सामग्री को साफ सुथरा करने हेतु कार्य का शुभारम्भ किया जाता है। स्त्रियों द्वारा इस संस्कार में गीत विशेष रूप से गाये जाते हैं। इस गीत के साथ वाद्ययंत्र नहीं बजता ।

चकल्लस–यह बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस' जी की श्रेष्ठ अवधी काव्य कृति है। इसमें तुकान्त, अतुकान्त लगभग 37 कविताओं का संग्रह है, जिसका प्रकाशन सन् 1933 में हुआ है। यह काव्य कृति अनेक दृष्टियों से महिमामण्डित है। इस संग्रह में अवध के जनजीवन की मर्मच्छवियाँ अंकित हैं। कविताओं में जनवादी चेतना का प्रखर स्वर है, साथ ही अनुभूति की प्रगाढ़ता और सूक्ष्म पर्यवेक्षण की शक्ति भी। विषय-वस्तु, भाव वैविध्य, नवीन छन्द योजना तथा युगीन काव्य प्रवृत्तियों की प्रतिनिधि कृति है- चकल्लस। इनकी रचना का मूल उद्‌देश्य अवधी भाषा को प्रश्रय देकर ग्राम्य संस्कृति को उजागर करना था। इस संकलन की कविताओं में सामाजिक कुरीतियों, पाखण्ड, पाश्चात्य संस्कृति, सामंती जीवन,

आधुनिक फैशन, जाति-पांति आदि का विरोध मुखरित हुआ है। इनकी कविताओं की भाषा ठेठ अवधी है। इनमें तद्भव शब्दों का ही बाहुल्य है। बोलचाल की भाषा का सहज सौन्दर्य इसमें समाहित हैं।

चमरौधा–यह कृपाशंकर मिश्र ''निर्द्वन्द्व' द्वारा प्रकाशित काव्य-कृति है। इसमें विभिन्न विषयों से संबंधित अवधी कविताएँ हैं। इसकी भाषा बैसवारी अवधी है, जिसमें ठेठ देशज शब्दों की गूढ़ार्थ व्यंजना दिखाई देती है। उल्लेखनीय कविताएं हैं- सिपाही की चिट्ठी, किसानी आदि।

चर्यागीत–यह मूलतः बौद्ध साहित्य का अंग है। इसमें दिनचर्या का प्रतिफलन होता रहा है। बुद्धचर्या इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। 'चर्यागीतों' में सिद्धों की मनःस्थिति का प्रतीकात्मक निदर्शन किया गया है। इनमें शृंगार, वीभत्स और उत्साह की मार्मिक व्यंजना की गई है। प्राप्त प्रमाणों के अनुसार चर्यागीतों में जनभाषा अवधी के बहुत प्रयोग हुए हैं, शायद इसलिए कि दोनों एक ही मूल से संबद्ध हैं।

चहलारी-नरेश–अवधी साहित्य की अमर विभूति गुरूप्रसाद सिंह 'मृगेश' जी द्वारा रचित यह आंचलिक इतिहास से ओत-प्रोत एक महाकाव्य है। इसमें राजा बलभद्र सिंह को नायक बनाकर प्रथम भारतीय स्ववंत्रता संग्राम की गौरव गाथा वर्णित है।

चहली–अवध प्रदेश में होलिकोत्सव के अवसर पर सवाद्य वृन्दगान के रूप में गाया जाने वाला यह लोकगीत विशेष चहलपहल पूर्ण होने के कारण चहली कहलाता है। इसमें विविध पौराणिक आख्यान उपलब्ध होते है।

चाँद भला सब तारन ते–यह गंगाप्रसाद मिश्र कृत अवधी कहानी है, जो 'पाक्षिक उत्तर प्रदेश' में प्रकाशित हो चुकी है।

चाकी-कौंड़ी–चाकी-कौंड़ी विवाहपूर्व का एक कृत अवधी आयोजन है। यह खाद्यान्न की तैयारी का सूचक है। इस अवसर पर 'कौंड़ी' पूजन करती हुई स्त्रियाँ इस अवधी लोकगीत का गायन करती है।

चान्दायन–यह मुल्ला दाऊद द्वारा रचित प्रथम प्रेमपरक काव्य है। इसमें लोरिक और चन्दा के प्रेम का वर्णन किया गया है। सम्पूर्ण कृति में दोहा, चौपाई छन्दों का प्रयोग मिलता है। चांदायन की भाषा ठेठ अवधी है। इसमें बैसवारी अवधी और कुछ-कुछ पूर्वी अवधी का प्रयोग दिखाई पड़ता है। इसकी रचना 1379 ई. में की गई है। सम्प्रति चांदायन के तीन पाठान्तर तथा सम्पादन प्राप्य हैं, जिनमें डॉ. परमेश्वरी लाल और जयपुर निवासी रावत के प्रकाशन उल्लेखनीय हैं। प्रथम सूफी काव्य और अवधी की सर्वप्राचीन कृति के नाते चांदायन का ऐतिहासकि महत्व है। इसके बहुविध शोधपरक अध्ययन हो चुके हैं, जिससे इस महाकाव्य की गुणगरिमा सर्व स्वीकार्य है।

चित्रावली–यह उसमान कवि द्वारा रचित एक सूफी प्रेमाख्यान है। इस कृति का रचनाकाल हिजरी 1022 है। इस कृति की भाषा अवधी है। यह सुजान और चित्रावली की प्रणय गाथा है। कथा सुखान्त है। इस ग्रंथ का पता सन् 1904 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा में लगा। इसका प्रकाशन सभा की ओर से सन् 1912 में हो गया है। ग्रंथ दोहा-चौपाई छंदों में लिखा है।

चैती–अवध का यह एक ऋतुगीत है, जो फसल-महोत्सव के रूप में गाया जाता है। इसे उल्लास सूचक, प्रकृतिपरक गीत कहा जा सकता है। यथा- काहे लागी सैयां भयो जोगिया हो रामा सोवत रह्यों सइयाँ संग सेजवा। सेजवा ले सैयां गए चेरिया हो रामा।

छई दरेती–यह विवाह के पूर्व की एक रस्म है, जो छः दिन पूर्व सम्पन्न होती है। इस दिन छपुला (टूसू) की डाल पूजी जाती है और इसी दिन से लड़की/लडके के उबटन लगाना शुरू किया जाता है। इसमें भी जो गीत गाया जाता है, वह छई दरेती गीत कहलाता है। इस गीत के साथ वाद्ययंत्र नहीं बजते है।

छठी–पुत्र-जन्म के छठवें दिन 'छठी' नामक उत्सव मनाया जाता है। छठी का उत्सव अत्यधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। इस दिन सभी कुटुम्बजनों को भोजन कराने की परम्परा है।

छत्तीसगढ़ी–डॉ. श्यामसुन्दर दास जी ने इसे अवधी के अन्तर्गत आने वाली एक मुख्य बोली कहा है। यह मुख्यतया छत्तीसगढ़ के आस-पास बोली जाती है, जो वास्तव में अवधी का ही दूसरा नाम है।

छिटनी–यह वर्षगाँठ मनाने का एक विशेष रूप है। जब किसी स्त्री के बच्चे जीवित नहीं रहते तो शिशु के जन्म लेते ही उसकी छिटनी की जाती है। इसमें किसी टोकरी में वस्त्र बिछाकर उस पर नाल सहित नवजात शिशु को लिटाकर सुहागिन स्त्रियां द्वारा पाँच-सात बार इधर उधर घसीटा जाता है, जिसे घिर्रउना या कढ़िलउना भी कहा जाता है। यह शिशु के जन्म से लेकर विवाह तक प्रतिवर्ष वर्षगाँठ के रूप में इसी पद्धति से मनाया जाता है।

छेदनु–यह अवधी का वात्सल्य प्रधान लोकगीत है, जो स्त्रियों द्वारा बालक के कर्णबेध संस्कार के अवसर पर गाया जाता है। इन गीतों में वाद्य यंत्रों का प्रयोग नहीं होता।

दहाड़ –सन् 1964 ई. में रचित यह श्री उमाप्रसाद बाजपेयी 'सुजान' जी की अवधी रचनाओं का संकलन है।

नखत-1, नखत-2 (संपादक डॉ. रामबहादुर मिश्र, डॉ. गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द' प्रकाशक अवधी भारती समिति हैदरगढ़-बाराबंकी। नखत-1 में ग्यारह नखत-2 में नौ अवधी कवियों की रचनायें विस्तारपूर्वक प्रकाशित हुई हैं। तारसप्तक की भांति ही नखत के अन्य संस्करणों के प्रकाशिन की योजना है।

बनौधा बीर 'बीरा'–यह रायबरेली निवासी डॉ. चक्रपाणि पाण्डेय का अवधी प्रबन्ध-काव्य है। इस काव्य ग्रंथ में 1857 के अमर शहीद बैसवारा निवासी बीरा की उत्सर्ग कथा है। इसकी भाषा विशुद्ध बैसवारी अवधी है। इस कृति में चित्रोपमता का गुण विद्यमान है। अनुप्रास की छटा तो द्रष्टव्य है ही, उपमा-उत्प्रेक्षा जैसं अलंकारों की मृसणता भी इसमें है।

भीखी–यज्ञोपवीत के अवसर पर बटुक को मातृ-भिक्षा देते समय अवधी लोकगीत सामूहिक रूप से प्रस्तुत किया जाता है।

महराबाइसी–यह मलिक मोहम्मद जायसी की एक महत्वपूर्ण रचना है। इसकी भाषा अवधी है। इसे 'कहरानामा' भी कहा जाता है।

ये माटी अवधरानी है–डॉ. रामबहादुर मिश्र एवं डॉ. सुशील सिद्धार्थ द्वारा सम्पादित यह शोध ग्रंथ अवधी भाषा, साहित्य और संस्कृति के विविध पक्षों पर केन्द्रित मीमांसा परक ग्रंथ है। शोधार्थियों के लिए यह अत्यन्त उपयोगी संदर्भ ग्रंथ है।

विदा–वर पक्ष को विवाह हेतु भेजती हुई स्त्रियाँ इस अवधी लोकगीत में अपनी शुभकामनाएँ प्रकट करती हैं। इससे प्राचीन विवाहों अपहरणों युद्धों जटिलताओं का पूर्वाभास होता है।

वीर अर्जुन– यह परमानंद जड़िया द्वारा प्रणीत अवधी महाकाव्य के विश्रुत वीर, भगवान श्रीकृष्ण के सखा एवं भक्त अर्जुन है, जो धर्मभीरू धीरोदात्त उत्पृष्ट गुणों से सम्पन्न है। इसमें दोहा, सोरठा, चौपाई छप्पय, वीर हरिगीतिका, चवपैया आदि छंदों का सफल प्रयोग हुआ है। इसमें अन्य रसों के अतिरिक्त वीर रस का वर्णन अत्यंत प्रभावशाली बन पड़ा है।

श्री दुर्गाविजय–यह हरिपाल सिंह कृत अवधी ग्रंथ है। इसका प्रकाशन सन् 1898 में नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ द्वारा सम्पन्न हुआ था। इस ग्रंथ में दो खण्ड हैं। प्रथम खंड में देवी द्वारा महिषासुर-वध का वर्णन है तथा दूसरे में रक्तबीज एवं शुम्भ-निशुम्भ की पौराणिक साहित्यिक अवधी है।

श्रीसीतापुर शृंगाररस–यह अयोध्या के महंत महावीरदास 'जनमहाराज' द्वारा प्रणीत रचना है। इसका सृजन सन् 1915 में हुआ था।

सावन–यह अवधी का एक ऋतु गीत है, जिसे वर्षाऋतु में झूला झूलती हुई स्त्रियाँ सामूहिक रूप से गाती हैं, साथ ही ऋतु वर्णन भी।

आधुनिक अवधी साहित्यकार

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

अच्छेलाल शुक्ल 'रसिक'–रसिक जी ने अवधी साहित्य के अभिवर्द्धन हेतु कन्हैया-चरित्र, द्रोपदी-पुकार आदि के साथ ही ढेर सारी रचनाओं का सृजन किया है। शेष विवरण अनुपलब्ध है।

अजदत्त–ये द्विवेदी युग के अल्पख्यात अवधी रचनाकार हैं। काव्यधारा को प्रवहमान रखने में इनका बहुत बड़ा योगदान रहा है।

अजमल सुल्तानपुरी–ये सुल्तानपुर के निवासी एवं अल्पख्यात अवधी कवि हैं।

डॉ. अजय प्रसून : अनागत काव्य आंदोलन के प्रवर्तक डॉ. प्रसून जी का पूरा नाम डॉ. अजय कुमार द्विवेदी है। इनका जन्म लखनऊ में 18 जनवरी सन् 1954 को हुआ था। ये लखनऊ में ही सम्प्रति सरकारी सेवा कर रहे हैं। वर्तमान पता है-77, सरोज निकेतन हेल्थ स्क्वायर, लखनऊ-3। इनका कविजीवन बाल साहित्यकार के रूप में प्रारम्भ हुआ। गाओ गीत सुनाओ गीत, युग के आँसू, बाँसुरी के भीतरी तह में आदि इनकी दर्जनों कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। जिसमें शहरी एवं ग्राम्य जीवन पर प्रकाश डाला गया है।

अज्ञात–यह नाम है अथवा विशेषण, स्पष्ट नहीं। 'विनोद' के अनुसार 'कामरूप' नामक अवधी काव्यकृति अज्ञात कवि की लिखी हुई है।

अनंतदास साधु–इन्होंने सं. 1645 के लगभग कुछ कविताएँ लिखी थीं। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं- नामदेव आदि की परची संग्रह, पीपा जी के परची, समन सेउजी की परची आदि आठ अवधी ग्रन्थ।

अनन्य–इनका जन्मकाल सं. 1710 है। इनकी प्राप्त कृति 'सिंदोरा' का रचना-काल सं. 1735 (लगभग) कहा गया है। यह कृति अवधी की श्रेष्ठ काव्यकृति मानी गई है। शेष विवरण अन्वेषणाधीन है।

डॉ. अनुजप्रताप सिंह–ये संप्रति आर.आर. महाविद्यालय, अमेठी, सुल्तानपुर में सेवारत हैं। इन्होंने अवधी साहित्य में प्रचुर मात्रा में सर्जना की है।

अनुरागी –ये हरदोई के निवासी हैं। इनकी काव्यकृति 'मीनाबाजार' (खण्डकाव्य) अवधी काव्य में गण्यमान है।

अनूप शर्मा–ये लखनऊ के निवासी एवं अवधी कविताएँ करने में सिद्धहस्त कवि हैं। इनकी कविताएँ प्रायः पत्र-पत्रिकाओं में छपा करती हैं।

अनूप श्रीवास्तव–लखनऊ नगर के निवासी श्रीवास्तव जी अपनी कविताओं के लिए बहुत मशहूर हैं। इन्होंने अवधी को अपनी काव्य भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की है।

अब्दुर्रशीद खाँ 'रशीद'–रायबरेली निवासी रशीद जी उच्चस्तर के साहित्यसेवी रहे हैं। इनकी साहित्य-सर्जना अधिकांश अवधी भाषा में प्रस्फुटित है। इनका जन्म एवं मृत्यु वर्ष क्रमशः 1900 एवं 1980 है।

अब्दुल कुद्दूस गुंगोही (शेख)–इनका जन्म रुदौली (बाराबंकी) में सं. 1513 वि. में हुआ था। कालांतर में गंगोह (सहारनपुर) में बस गए, जिसके कारण इनके नाम के पीछे गंगोही शब्द लगने लगा। इनकी मृत्यु सं. 1594 वि. में हुई। इनका उपनाम 'अलखदास' भी मिलता है। इन्होने 'चांदायन' का फारसी अनुवाद किया था। इनके पिता का नाम इस्माइल था।

अमरजीत–ये जहाँगीरगंज, फैजाबाद के निवासी एवं अवधी साहित्यकार है।

डॉ. अमरनाथ बाजपेयी–ये लखनऊ नगर के प्रवासी हैं। ''विरहिन बसन्तु' दोहा-चौपाई छंदों में विरचित इनकी महत्त्वपूर्ण रचना है।

अमर बहादुर सिंह 'अमरेश'- ये पूरे रूप, अमावाँ, जिला रायबरेली के निवासी एवं सुविख्यात अवधी-कवि रहे हैं। इनका जन्म 1929 तथा अवसान सन् 1978 में हुआ।

अमीर अली वारसी–ये कबीरपंथी संत रहे हैं। इनका जन्म सन् 1890 में ग्राम गंगाचौली, जनपद बाराबंकी में हुआ था। इन्होंने अवधी-साहित्य में अविस्मरणीय योगदान किया है। इनका अवधी ग्रंथ है- 'ज्ञान संग्रह' जो दो खण्डों में प्रकाशित हुआ है प्रथम सन् 1934 में तथा दूसरा सन् 1944 में।

अमीर ख़ुसरो–मध्य एशिया की लाचन जाति के तुर्क सैफुद्दीन के पुत्र अमीर खुसरो का जन्म सन् 1254 ई. (652 हि) में एटा (उ.प्र.) के पटियाली नामक कस्बे में हुआ था। इनकी माँ बलवन के युद्ध मंत्री इमादुतुल मुल्क की लड़की, एक भारतीय मुसलमान महिला थीं। इनकी प्रतिभा बाल्यावस्था से ही काव्योन्मुख थी। इनमें उच्च कल्पनाशीलता के साथ-साथ सामाजिक जीवन के उपयुक्त कूटनीतिक व्यवहार-कुशलता की क्षमता मौजूद थी। खुसरों ने अपना सम्पूर्ण जीवन राज्याश्रय में बिताया। इन्होंने गुलाम, खिलज़ी और तुगलक तीन अफगान राजवंशों तथा 11 सुल्तानों का उत्थान-पतन देखा। जलालुद्दीन खिलज़ी ने खुसरो को अमीर की उपाधि प्रदान की थी। ये मुख्यरूप से फारसी के कवि थे किन्तु इन्होने हिन्दी को भी अपनी प्रतिभा समर्पित कर हिन्दी-साहित्य में प्रमुख स्थान प्राप्त किया। इनकी हिन्दी रचनाओं में मुरकी, पहेली आदि रूपों में जो काव्य-सृजन हुआ उसमें मुख्यतः अवधी के दर्शन होते है। अपने गुरू शेख निजामुद्दीन की मृत्यु को ये सहन नहीं कर सके। अन्ततः 6 माह बाद सन् 1325 ई. में इन्होंने अपनी इहलीला समाप्त कर दी।

अम्बिका प्रसाद–द्विवेदी युग में अवधी काव्यधारा को जीवनदान देने वालों में इनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इनका साहित्य अभी अप्रकाशित है।

अयोध्या- ये रायबरेली के निवासी हैं। इन्होंने अवधी भाषा में फाग सृजित किये हैं।

अयोध्या प्रसाद बाजपेयी 'औध'–पं. अयोध्या प्रसाद बाजपेयी 'औध कवि' ग्राम सातनपुरवा, जिला रायबरेली के निवासी थे। इनका काव्य-काल संवत् 1860 से 1942 तक रहा। डा. धीरेन्द्र वर्मा ने अपने सम्पादित ग्रन्थ हिन्दी साहित्य-कोश भाग 2, पृ. 20 में औध कवि के ग्रन्थों का उल्लेख इस प्रकार किया है- अवध शिकार, रागरत्नावली, साहित्य सुधासागर, राम कवितावली, छन्दानन्द, शंकरशतक ब्रज ब्रज्यो चित्र काव्य, तथा रास सर्वस्व।

अरविन्द कुमार द्विवेदी–द्विवेदी जी का अधिक विवरण तो उपलब्ध नहीं है, फिर भी इतना निश्चित है कि 'आंधी-पानी' जैसी अनेक कृतियाँ सृजित की हैं जिनका अवधी में काफी सम्मान हुआ है।

डा. अरुण कुमार त्रिवेदी- डा. त्रिवेदी का जन्म 24 जून 1940 ई. को उन्नाव जनपद के रावतपुर ग्राम में हुआ था। ये अवधी के सुविख्यात कवि एवं साहित्यकार चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' के सुपुत्र हैं। त्रिवेदी जी सीतापुर के आर.एम.पी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय में हिन्दी के वरिष्ठ प्राध्यापक हैं। 'युद्ध मुद्रा' नाम से नई कविताओं का संकलन इनका प्रकाशित है। इन्होंने अवधी में 'नई कविता' और अच्छे गीतों की रचना की है। आस, जिन्दगी, क्रांति और गाँव इनकी अवधी की रचनायें हैं। इनकी अवधी

बैसवारी से प्रभावित है।

अली मुराद- *अली मुराद की गणना हिन्दी के अवधी सूफी कवियों में की जाती है। इनकी प्राप्य काव्यकृति है- 'कथा कुँवरावत' इनके जीवन वृत्त विषयक तथ्य उपलब्ध नहीं है। आत्मोल्लेख के नाम* पर कवि ने अपने ग्रन्थ के मध्य में अपना नाम लिखा है तथा अपने गुरू के सम्बन्ध में कुछ कहा है। कवि ने अपने गुरू का नाम फखरूद्दीन दिया है, जो हज़रत निजामुद्दीन औलिया के पुत्र तथा उनकी शिष्य परम्परा में आते हैं। इनकी कृति 'कथा कुँवरावत' के आद्यंत अध्ययन से ज्ञात होता है कि कवि लोकजीवन का पारखी था तथा बहुज्ञ भी। नक्षत्र तिथि तथा ज्योतिष आदि का कवि को अच्छा ज्ञान था। 'कथा कुँवरावत' पूर्णतः काल्पनिक है। अपनी इस कृति के माध्यम से कवि सूफी सिद्धान्तों की विवेचना में पूर्ण प्रयत्नशील रहा है। यही कारण है कि साधना पद्धति तथा परम्परा की दृष्टि से कवि पूर्णतः सूफी है।शरीयत के नियमों की विस्तृत विवेचना तथा गुरु महिमा, ब्रह्म स्वरूप, जीव परमात्मा के सम्बन्ध में उसने अपने विचार व्यक्त किये हैं। कवि की दृष्टि में जीवन का साध्य है-प्रेम। कवि की काव्य-भाषा अवधी है, जिसमें लोक-भाषा का सौन्दर्य परिलक्षित होता है।

अवधेश अवस्थी 'सुमन'—अवधी काव्य-जगत के सर्वथा चर्चित व्यक्तित्व सुमन जी का जन्म सन् 1930 ई. में सीतापुर जिले के दासापुर नामक ग्राम में हुआ था। इनको काव्य का गुण वंशानुगत प्राप्त हुआ था। इनके पितामह सुप्रसिद्ध महाकवि 'द्विज बलदेव' थे जिन्हें भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने सम्मानित किया था। सुमन जी ने अवधी और खड़ी दोनों बोलियों में काव्य रचना की थी। इनकी अवधी की सुप्रसिद्ध रचनायें इस प्रकार हैं- 'दहेज' सामाजिक समस्या प्रधान। 'काका की फुलबगिया' तथा 'हिमालय की गरिमा' आदि।इनके काव्य में व्यक्त राष्ट्रीयता की भावना स्तुत्य है। इनकी अवधी में बैसवारी बोली का प्रभाव परिलक्षित होता है। सन् 1992 में कवि का निधन हो गया।

अवधेश त्रिपाठी- कविवर अवधेश त्रिपाठी का नाम अवधी की आधुनिक कविता के प्रारम्भिक उन्नायकों में गणनीय है। इनका जन्म सन् 1890 ई. में ग्राम उनरावाँ जिला लखनऊ में हुआ था। राष्ट्रीय भावधारा के कवि अवधेश 'सेनही मण्डल' के अच्छे कवियों में थे। उनकी वेशभूषा आचार-विचार में स्वदेशी की भावना प्रबल थी। खादी का कुर्ता, धोती, टोपी यही इनकी पोशाक थी। कवि ने अंग्रेजी शासनकाल के भोगे हुए यथार्थ को अपनी कविताओं में चित्रांकित किया। अवधेश जी की अवधी वस्तुतः बैसवारी है। इनकी अवधी रचनायें हैं- 'आजादी का वालिंटियर', 'जमींदार से किसान की चिरौरी', 'कालिज का खर्चा', 'मज़दूर अहिन', 'आजादी क्यार गान', 'अंगरेजहा जवान', 'हम मिलिकै देसु सुधार ल्याब', 'मी सबके ताबेदार अहिन', हम हन किसान', 'कवि केर तथा 1781 के मध्य का है। इसकी भाषा अवधी है। कथा का आधार महाभारत से ग्रहण किया गया है।

अजय सिंह वर्मा 'अजय' —जन्म 29 दिसम्बर 1961, ग्राम भेटौरा लखनऊ, सिद्धौर बाराबंकी। काव्य गुरु-पिता रामसमुझ वर्मा। अवधी और खड़ी बोली दोनों में समान गति है। कोयली बिरयान चिल्लाव अवधी नवगीतों का संग्रह। कविता का क्लोन खड़ी बोली में तथा शिव शतक। अवधी के उत्थान के लिए निरन्तर प्रयासरत, शूर्पणखा खण्डकाव्य। सम्प्रति पता, शंकर मेडिकल स्टोर, सिद्धौर रोड, जैतपुर, बाराबंकी।

अहमक शाह- ईसा की 19वीं शतीं में जनमें शाह साँईदाता सम्प्रदाय से सम्बद्ध संत एवं अवधी साहित्यकार रहे हैं। इन्होंने अपनी 'पद विचार' नामक गद्य कृति अवधी भाषा के माध्यम से प्रस्तुत है।

आतमदीन—इनका अवधी-साहित्य के परिवर्द्धन में पर्याप्त योगदान रहा है। इन्होंने अपनी लोक कथाओं तथा लोकोक्तियों के माध्यम से अपने जीवन के अनुभवों को पद्यबद्ध किया है। साहित्य में अति सामान्य जीवन को इन्होंने अपना विषय क्षेत्र बनाया है।

आदित्यप्रसाद अवस्थी 'दिनेश दादा'–सीतापुर जनपद के दौली नामक गाँव के निवासी अवस्थी जी अपनी अवधी रचनाओं के लिए प्रख्यात हैं। इनका जन्म 24 जुलाई सन् 1937 को हुआ था। हास्य-व्यंग्य इनके लेखन का मुख्य क्षेत्र है। महमूद फूका, खटमल चालीसा, मूँछा डकैत आदि तमाम इनकी अवधी रचनाएँ हैं।

आदित्य वर्मा–वर्मा जी का जन्म गोण्डा जनपद सम-सामयिक विषयों को अपनी लेखनी के माध्यम से चित्रांकित करने का उपक्रम किया। 'भरत' इनका प्रसिद्ध अवधी खण्डकाव्य है।

आद्याप्रसाद 'उन्मत्त'– प्रतापगढ़ में जन्मे 'उन्मत्त' जी ने अवधी भाषा को उत्कृष्ट साहित्य प्रदान किया है। उन्मत्त जी खड़ी बोली में भी साधिकार लिखते हैं। ये मंच के भी सफल कवि हैं। व्यवसाय से उन्मत्त जी अधिवक्ता, किंतु मूलतः एक साहित्यकार और पत्रकार हैं। 'फौजी की पाती', 'रेलगाड़ी' सुप्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इन रचनओं में गाँवों के जीवन का चित्रांकन है। हाल ही में इनका निधन हो गया।

आद्याप्रसाद शुक्ल- शुक्ल जी का आधुनिक अवधी कविता में उल्लेखनीय स्थान है। इन्होंने पुस्तकाकार कम, किंतु स्पष्ट रूप से अनेक अवधी कविताओं की रचना है।

आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप'- ये पूर्वी अवधी के जाने माने कवि हैं। इनका जन्म 2 अगस्त 1945 ई. को सुल्तानपुर जिले के ग्राम रानेपुर दलिया गोलपुर में हुआ था। इनके पिता का नाम दुर्गाप्रसाद सिंह है। सम्प्रति जिलापरिषद् के विद्यालय में अध्यापक है। 'पूर्वी अवधी के कवियों' पर इन्होंने पी-एच.डी. स्तर का शोधकार्य भी किया है। इनकी अवधी की रचनायें हैं- 'अवध बानी' (मुक्तक संकलन) इसे उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ से पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। 'सुलोचना' खण्डकाव्य। 'प्रदीप' जी ने अवधी में सुन्दर गद्य भी लिखा है। पूरबी अवधी लोक गीतों की समीक्षा पूरबी अवधी के गद्य में ही करते हैं। इन्होंने लगभग एक दर्जन ग्रन्थों की रचना की है जिनमें कुछ प्रकाशित भी हो चुके हैं राष्ट्रीय ऐक्य पर कवि के उद्गार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। अवधी काव्य सृजन के प्रति समर्पित प्रदीप जी से हिन्दी जगत को बड़ी सम्भावनायें हैं।

आधुनिक बैताल- आधुनिक रहीम के सदृश इनका अवधी-काव्य भी बड़ा सरस और मनोरंजक है।

आधुनिक रहीम–ये अवधी में हास्य-विनोद और व्यंग्य के प्रमुख लेखक हैं। हिन्दी के पाठकों का इनके काव्य से बड़ा निकटस्थ परिचय है। इनका कोई काव्यग्रंथ अभी प्रकाशित नहीं हो पाया है फिर ये स्फुटकाव्य लेखन में लब्धप्रतिष्ठ रचनाकार है।

आधुनिक सूरदास–भक्तिकालीन महाकवि सूरदास ने ब्रजभाषा में अपने अमरकाव्य की रचना की है, किंतु इन्होंने अवधी में काव्यरचना कर अपनी भावनाओं को समाज के बीच सम्प्रेषित किया है।

आनंदी दीन- ये आधुनिक काल के प्रतिनिधि अवधी-कवि हैं। शेष विवरण अनुपलब्ध है।

आनन्द प्रकाश अवस्थी उर्फ 'नन्हें भइया'- बैसवारी अवधी के श्रेष्ठ रचनाकार आनन्द प्रकाश अवस्थी 'आनन्द' रायबरेली जिले के ग्राम चिलौली (इन्हौना) में सन् 1939 ई. में जन्मे थे। अभी ये राजकीय दीक्षा विद्यालय शिवगढ़ 'रायबरेली' में प्रशिक्षक पद पर कार्य कर रहे हैं। इनकी अवधी की प्रमुख काव्य-कृतियाँ इस प्रकार हैं:- 'हियरा हँसें हमार', 'पैकरमा', 'नींद अउते नहीं, 'देवी-पंचाष्टक', 'देवी अहोखा', 'जस -चालीस' तथा 'मन्दिरनामा' आदि। आनन्द जी की रचनायें सरस है। उसमें ग्राम्य जीवन की संस्कृति रची-बसी है राष्ट्रीय भावना इनकी कविता का मुखरित स्वर है। इनकी कविता में सहजता है, आडम्बर शून्यता है। इनकी कविता में सहजता है, स्तवन-भाव व्यक्त किया गया है। आधुनिक अवधी के विकास में कवि आनन्द से बड़ी सम्भावनायें हैं।

आलम- जनश्रुतियों के आधार पर कहा जाता है कि आलम सनाढ्य ब्राह्मण थे और जौनपुर निवासी थे। बाद में शेख रंगरेजिन के कारण मुसलमान हो गये थे। आलम का काव्य काल सं. 1640 से सं.

1680 के मध्य का है। आलम की प्रामाणिक चार रचनाएँ हैः- 1-माधवानल कामकंदला 2- सुदामा चरित 3- स्याम सनेही 4- आलमकेलि। 'माधवानल कामकंदला' नामक रचना का निर्माण परिष्कृत अवधी में प्रबन्ध रूप में किया गया है। यह प्रेमपरक काव्य है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी-साहित्य का इतिहास (पृ. 193) में आलम नाम के दो कवियों का उल्लेख किया है-यह अकबर कालीन 'माधवानल-कामकंदला' के प्रणेता और दूसरे 'आलम केलि" के प्रणेता। परन्तु कुछ विद्वानों एवं सुधी आलोचकों ने दोनों को एक ही माना है।

इन्दरचंद तिवारी 'बौड़म लखनवी'- तिवारी जी का जन्म बराबंकी जनपद के याकूतगंज नामक ग्राम में 30 मई सन् 1933 को हुआ, किन्तु इनका लालन-पालन लखनऊ में हुआ। लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। अनेक विभागों में सेवा करते हुए इन्होने काव्य सृजन भी शुरू किया। प्रारम्भ में अवधी भाषा को माध्यम बनाया। बाद में खड़ी बोली अपना ली। इनकी कृतियाँ हैं- हीरक कण (लघु कथा में), जय बांग्ला (उपन्यास), बाल-साहित्य में इनकी कृतियाँ हैं- जब वे मौत से मिलने चले (शहीदों की कहानियाँ), बौड़म बसंत (हास्य नाटक लिखे, जैसे-भूखा भेड़िया, मंगरे मामा, स्वांग हरि के जन जमजग दीप जले आदि। ये लखनऊ-दूरदर्शन से प्रसारित भी हो चुके हैं। इनका हास्य-व्यंग्य लेखकों में सम्मानित स्थान है।

इन्द्रदत्त--ये द्विवेदीयुगीन अवधी काव्य-धारा के रचनाकार हैं।

इन्द्रगोपाल सिंह 'इन्द्र' : ख्याति प्राप्त अवधी कवि रघुनाथ सिंह चौहान के पुत्र इन्द्रजी का जन्म सं. 1982 वि. में भवानीपुर ग्राम में हुआ था। साहित्यानुराग इन्हें विरासत में मिला। शिक्षा न के बराबर ही रही। इन्होंने भक्त प्रह्लाद नामक पुस्तक की रचना की है। इसके अतिरिक्त अनेक स्फुट रचनाएँ हैं। छंद, गीत, पद आदि भी लिखे हैं। इनकी अवधी सामान्य जन-भाषा है।

ईश्वरदास--ईश्वरदास नामक कवि, राम-काव्य के सर्जक रहे हैं। जायसी ओर तुलसी (जिन्होंने अवधी को विश्व साहित्य में प्रतिष्ठा दिलाई) के आविर्भाव से पहले ये 15 वीं शती के मध्य में हुये थे, उपलब्ध साहित्य के आधार पर इन्हें अवधी का प्रथम उल्लेखनीय कवि माना जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनकी रचना 'स्वर्गारोहिणी कथा' को अवधी की प्रथम रचना माना है इनकी अन्य रचनायें हैंः- भरत-विलाप, राम-जन्म, अंगद-पैज। ये तीनों रचनायें राम-कथा पर आधारित है। इनकी रचना अवधी भाषा में हुई है। इन्होंने अपनीं कृतियों-रामजन्म व अंगद-पैज में आख्यान शैली का प्रयोग किया है। आचार्य पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के शब्दों में- 'ईश्वरदास की सभी प्राप्त रचनायें इस बात का स्पष्ट संकेत करती हैं कि वे कथा शैली के सिद्धहस्त रचनाकार थे। आख्यान तत्त्व इनकी कृतियों में सहजता से मिलता है। इस तरह तुलसी और जायसी जैसे विश्वविश्रुत कवियों ने कथा आख्यायिका शैली का जो भव्य रूप अवधी भाषा की दृढ़ पीठिका पर खड़ा किया, उसका आरम्भ प्रारम्भिक अवधी में और विशेषकर ईश्वर दास की रचनाओं में हुआ है। ईश्वर दास द्वारा प्रणीत 'सत्यवती कथा' का उल्लेख भी मिलता है। मसनवी शैली में रचित यह कृति हिन्दी-प्रेमाख्यान परम्परा से ओत-प्रोत है इसमें भारत की सती-साध्वी नारियों का चरित्र निरूपित किया गया है। भाषा अवधी है, पर सूफियों जैसी जन-भाषा नहीं। इसका रचना-काल सन् 1501 ई. है।

ईश्वरी प्रसाद--भारतेन्दुयुगीन अवधी कवियों में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनका निवास-स्थान बैसवारा क्षेत्र है।

उमादत्त सारस्वत 'दत्त'- सीतापुर जनपद ही नहीं, अपने कृतित्व से सम्पूर्ण हिन्दी-जगत में चर्चित बदोसराँय (बाराबंकी) के मूल निवासी पं. रामदास सारस्वत के यहाँ सं. 1962 वि. में बिसवाँ (सीतापुर) में जनमें, हास्य एवं व्यंग्य के पुट कवि, कहानीकार एवं नाटककार पं. उमादत्त सारस्वत 'दत्त' सनेही

मण्डल के प्रौढ़ कवि रहे हैं। इनकी रचनाओं में शृंगार की स्थूलता का अभाव है। भाषा में प्रांजलता तथा व्याकरण-सम्मत शुद्धता है, जो द्विवेदी युग की प्रमुख देन है। 'दत्त' जी आत्मविज्ञापन से दूर एकान्त साहित्य-सेवी हैं। इन्होंने 'मस्तराम का चिट्ठा', 'मस्तराम का सोंटा', मैया केंचुलबदल (सभी व्यंग्य रचनाएँ), भाई-बहन (कहानी-संग्रह), मिलन (सामाजिक-नाटक), लेखलतिका (निबन्ध-संग्रह) आदि गद्य रचनाओं के अतिरिक्त छः काव्य-ग्रन्थ लिखे हैं। वे हैं 'किरण', 'किसलय', 'कोयल', 'प्रवासी पति' (महाकाव्य), 'मन्दोदरी' (खण्डकाव्य) तथा मस्तराम की कुंडलियाँ (हास्यरसपूर्ण कुंडलियाँ का संग्रह)। इनमें से प्रथम तीन गद्य रचनाएँ तथा 'किरण' (काव्य-संग्रह) प्रकाशित है। 'मस्तराम की कुंडलियाँ' में दत्त जी की हास्यरस पूर्ण कुंडलियां संकलित हैं। विशुद्ध अवधी भाषा में लिखी इन कुंडलियों में सामाजिक कुरीतियों के प्रति तीव्र आक्रोश है। कवि का यह आक्रोश व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यंजित हुआ है। 'जुगुल जोड़ी' शीर्षक रचना में जहाँ उनमें विवाह पर करारा व्यंग्य है, वहीं 'चुनाव चर्चा' तथा 'ओट की भीख' आदि रचनाओं में राजनीतिक विद्रूपताओं पर तीखा प्रहार है। इस प्रकार रिशवती आँखें, 'घूसवन्दना' 'खद्दर महिमा, 'सुधारक यू समौ' आदि रचनाएँ भी किसी न किसी सामाजिक कुरीति पर प्रकाश डालती हैं।

उमाप्रसाद बाजपेयी 'सुजान'– अरथाना, जिला सीतापुर में सन् 1902 ई. में जन्में कविवर सुजान जी खड़ी बोली और अवधी के अच्छे कवि थे। इनका जीवन एक अध्यापक के रूप में व्यतीत हुआ था। कार्य-स्थल सीतापुर रहा। सुजान जी के ग्रन्थों में - चूकनाथ कृष्ण कीर्तन, नैमिषारण्य, दुर्गावती चरित्र, कुसुमांजलि आदि उल्लेखनीय हैं। 'दहाड़' इनकी अवधी रचनाओं का संकलन है। 'परमार्थ प्रवेश' इनकी एक आध्यात्मिक कृति है। इस कवि पर बैसवारी अवधी का प्रभाव है। इनकी भाषा में बिम्ब प्रस्तुत करने की क्षमता है। उपमान भी लोकजीवन से जुड़े हुए हैं। कवि का देहावसान सन् 1988 ई. में हो गया था।

उमाशंकर मिश्र 'उमेश'- उमेश जी का जन्म 30 अप्रैल सन् 1931 ई. को रायबरेली जनपद के तौधकपुर ग्राम में पं. रामकृष्ण मिश्र के पुत्ररूप में हुआ। इन्होंने एम.ए. हिन्दी तक शिक्षा ग्रहण की। तत्पश्चात् डाक-तार विभाग में लम्बे समय तक कार्य किया, किंतु सम्प्रति काव्य-सृजन में अपने समय का सदुपयोग कर रहे हैं। इनकी काव्य-कृतियाँ हैं- 'काँच के वृक्ष' (काव्य-संग्रह), मुखौटे सलीब युद्ध (काव्य संग्रह), आग भी अनुराग भी (गीत-संग्रह), नये-पुराने फूल (गजल-संग्रह) मिश्र जी की अवधी रचनाएं अत्यन्त सशक्त हैं। सम्प्रति मिश्र जी 554/203 छोटा बरहा, आलमबाग, लखनऊ में रह रहे हैं।

डॉ. उमाशंकर शुक्ल 'शितिकंठ'–इनका जन्म 1 जुलाई सन् 1943 को सीतापुर जनपद के गुलाबराय गाँव में हुआ था। पं. प्यारे लाल वैद्य इनके पिता हैं। ये शाहजहाँपुर एवं खीरी के क्रमशः जी. एफ. डिग्री कालेज एवं केन ग्रोवर डिग्री कालेज में हिन्दी प्रवक्ता रहे। सम्प्रति लखनऊ शहर के जयनारायण डिग्री कालेज में हिन्दी के वरिष्ठ प्राध्यापक हैं। खड़ी बोली के साथ-साथ इन्होंने अवधी में भी काव्य सृजन किया है। बरवै इनका प्रिय छंद है।

उमेशदत्त श्रीवास्तव 'सुमन'– सुमन जी का जन्म 21 जनवरी 1945 ई. को सुल्तानपुर जनपद के ग्राम परसपट्टी कादीपुर में हुआ था। इनके पिता का नाम कृष्णमुरारी लाल श्रीवास्तव है। स्नातक स्तर तक शिक्षा ग्रहण करने के बाद अध्ययन-अध्यापन में लग गये। बिटिया की पाती (खण्डकाव्य), गउँवा हमार, कवितावली, स्तुतिमाला, भिखारी (खण्डकाव्य), सुमनमाला, मुक्तावली, श्रद्धासुमन आदि इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। इनकी अवधी उद्भावनाओं में जन-जन की संवेदना अभिव्यक्त हुई है। रचनाओं में देश-प्रेम एवं सामाजिक समस्याओं को भी उजागर किया गया है।

उस्मान–प्रसिद्ध सूफी कवि उस्मान का रचना-काल सं. 1670 सुविदित है। इन्होंने 'चित्रावली' नामक प्रेम कहानी दोहा-चौपाईयों में लिखी है। यह रचना जायसी के अनुकरण के आधार पर लिखी गई है। इसकी भाषा प्राचीन अवधी है। उस्मान बादशाह जहाँगीर के समसामयिक थे, क्योंकि कवि ने

चित्रावली में जहाँगीर की न्यायप्रियता और उनके घण्टे का उल्लेख किया है। हिन्दी के सूफी कवियों में जायसी के बाद उस्मान का नाम उल्लेखनीय है। चित्रावली में पग-पग पर काव्य-प्रतिभा तथा वाग्वैदग्ध्य का परिचय मिलता है। इनकी रचना में पौराणिकता का पुट है। कृति के नायक को भगवान् शिव का अंश माना गया है।

श्रीमती ऊर्मिला मिश्र—आधुनिक अवधी काव्यधारा एक कीर्तिमान श्रीमती ऊर्मिला मिश्र हरगाँव, जिला सीतापुर की निवासिनी थी। इनका जन्म सन् 1929 को हुआ था। झब्बू लाल मिश्र इनके पिता तथा श्रीमती चन्द्रावती मिश्र इनकी माता थीं। अपने जीवनकाल में ये कांग्रेस की एक सक्रिय कार्यकर्ता रही हैं और कई वर्षों तक महिला कांग्रेस की अध्यक्ष भी रहीं। खड़ी बोली और अवधी दोनों में ही इन्होंने सुमधुर गीतों की रचना की थी। राष्ट्रीय भावनाओं का समादर इनकी कविताओं में प्राप्य है। इनकी चर्चित रचनायें है- इन्दिरा गांधी, दहेज, बेटी, नेहरू चाचा, बापू आदि। कविता में मृसण्ता है, प्रवाह है और है सरसता। श्रीमती मिश्र जी का देहावसान सन् 1992 में हो गया।

ओंकार नाथ—ओंकारनाथ जी पूर्वी अवधी भाषा के अधिकृत कवि माने गये हैं। 'शृंगार सुमन' इनकी कविताओं का लोकप्रिय संग्रह है कवि ने अपनी कृति में पूर्वी अवधी भाषा और पूरबी गीतों का समाहार किया है।

ओमप्रकाश त्रिपाठी 'प्रकाश'- महोली, सीतापुर के निवासी प्रकाश जी का जन्म सन् 1933 में हुआ। ये एक अच्छे साहित्यकार हैं। इन्होंने अपना साहित्य सृजन अधिकांश अवधी भाषा के माध्यम से किया है। इन्होंने अपनी रचनाओं में समाज को नई दिशा देने एवं उसे सन्मार्ग पर पहुंचाने की संकल्पना की है। हमार देशवा, गाँव पंचाइति, होली मा आदि इनकी अवधी की मुक्तक रचनाएं हैं। ये कृषक इण्टर कालेज, महोली में हिन्दी अध्यापक भी रहे।

डॉ. ओमप्रकाश त्रिवेदी—इनका जन्म 15 अगस्त सन् 1934 को ग्राम ठाकुरपुर, ब्लाक त्रिवेदीगंज, जनपद बाराबंकी के पं. श्री शुकदेव प्रसाद त्रिवेदी के यहाँ हुआ था। शिक्षोपरांत इन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय एवं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अस्थायी प्रवक्ता के रूप में अध्यापन करते हुए सन् 1971 में लखनऊ के के.के.वी. कालेज में स्थायी प्रवक्ता हो गये। अभी हाल में हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय से रीडर पद से सेवानिवृत्त हुए हैं। इन्होंने अवधी साहित्य पर शोध कार्य किये-कराये हैं- 'अवधी भाषा के प्रमुख कवि' उनकी है। सम्प्रति ओम् निवास 114, मवइया, लखनऊ में स्थायी रूप से रह रहे हैं।

ओमप्रकाश मिश्र—कुम्हरावाँ, लखनऊ में जन्मे मिश्र जी एक उच्चकोटि के साहित्यकार हैं। इन्होंने अवधी की विशेष सेवा की है। इनकी 'विकासायन' नामक कृति साहित्य की एक विशिष्ट उपलब्धि है।

कन्हैया बख्श- ये भारतेन्दु युग के अवधी साहित्यकार हैं।

कमल किशोर शुक्ल—ये दौलतपुर, रायबरेली के निवासी एक अवधी कवि हैं।

कमला चौधरी —ये जनपद मेरठ की रहने वाली व्यंग्यकार कवयित्री हैं। इन्होंने अपना अवधी प्रेम 'आपन मान जात है हाँसी' आदि रचनाओं के माध्यम से प्रकट किया है।

कमलेश मौर्य 'मृदु'—मृदु जी का जन्म सन् 1950 के आसपास सीतापुर जनपद के रामाभारी ग्राम में हुआ था, शत्रुहनलाल मौर्य इनके पिता थे। ये मंच के सफल कवि रहे हैं। मौर्यजी युवापीढ़ी के सशक्त हस्ताक्षर के रूप में प्रसिद्ध हैं। 'चकबन्दी', 'अंबियन केरि बहार', 'बाढ़ राहत', 'दासवाँ हिस्सा', 'हमार देसवा', आदि इनकी अवधी की प्रमुख रचनाएँ हैं।

कान्ह जी- ये अवधी भाषा के अल्पख्यात कवि रहे हैं।

कामता प्रसाद- ये आधुनिक काल की बैसवारी अवधी के कवि हैं।

कार्तिकेय–अयोध्यावासी संत कार्तिकेय जी अवधी के अच्छे साहित्यकार थे। इन्होंने सन् 1956 ई. में 'वेदान्त-रहस्य' नामक अवधी ग्रंथ लिखा, जिसमें वेदान्त के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन अवधी की दोहा-चौपाई शैली में हुआ है। अध्यात्म मार्ग के साधकों के लिए यह कृति 'साधन-तंत्र' के रूप में सिद्ध तथा प्रसिद्ध हुई है।

कालिका प्रसाद 'लामा'- लामाजी का जन्म रायबरेली जिले के सेमरौता नामक रूप में सं. 1932 में हुआ था। इनके तीन ग्रंथ प्रसिद्ध हैं, जिनमें से 'बारहमासा लामा' अवधी की अमूल्य निधि है। लामा जी की असामयिक मृत्यु सं. 1974 में हो गई थी।

कालीचरण बाजपेयी- बैसवारा क्षेत्र के विगहपुर के निवासी वाजपेयी जी आधुनिककाल के श्रेष्ठ अवधी कवि हैं।

कालीदीन- ये बैसवारी अवधी के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। इनका कर्म स्थान रहा है- बैसवारा क्षेत्र। रचना काल है- भारतेन्दु युग।

काशीप्रसाद द्विवेदी–इनका जन्म सन् 1956 में बन्नावाँ रायबरेली में हुआ था। इन्होंने फुटकर अवधी काव्य-सृजन किया है।

कासिमशाह- कासिमशाह का स्थान अवधी साहित्य के इतिहास में महत्त्वपूर्ण है। ये बाराबंकी जनपद के दरियाबाद नामक स्थान के निवासी थे। इनके पिता का नाम इमानुल्लाह था। इनकी अवधी काव्य कृति 'हंस जवाहिर' का रचना-काल कवि द्वारा हि. सन् 1149 वर्णित है। मिश्र बन्धुओं ने हंस जवाहर का रचनाकाल सं. 1900 माना है मुहम्मद शाह का शासन काल सन् 1776-1805 है। कवि ने अपने ग्रन्थ का रचना काल हि. सन् 1149 अर्थात् सन् 1793 बताया है। अतएव कासिमशाह का समय मुहम्मदशाह का शासनकाल ही निश्चित होता है।

किनारा राम- ये संत परम्परा के अवधी कवि हैं। इनका जन्म सं. 1984 में हुआ था। इन्होंने तुलसीदास की पद्धति पर अवधी भाषा में विवेकसार, रामगीता, गीतावली, रामरसाल आदि ग्रंथों की रचना की।

किरण मिश्र- ये अयोध्या की निवासिनी हैं। इन्होंने 'अँखुआ' नामक अवधी रचना की है।

श्रीमती किशोरी तिवारी 'बौड़मी'- लखनऊ के कवि सम्मेलनों में 'बौड़म' जी के साथ उनकी धर्मपत्नी बौड़मी जी भी अपने हास्य-व्यंग्य के कारण मशहूर रही हैं। इनका जन्म बाराबंकी में सन् 1936 में हुआ, किंतु इनकी शिक्षा-दीक्षा लखनऊ में हुई। सम्प्रति पति-पत्नी 135, नौबस्ता, लखनऊ के स्थायी निवासी बन गये हैं। बौड़म जी के प्रभाव से इन्होंने भी अवधी लोकगीतों से अपना काव्य लेखन प्रारम्भ किया। इनके लगभग 50 लोकगीत हैं- जिनमें से कुछ आकाशवाणी लखनऊ से प्रसारित भी हो चुके हैं।

डॉ. कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह– कुँवर साहब का जन्म सीतापुर जनपद के दसिया ग्राम में सन् 1910 में हुआ था। ये अवधी के यशस्वी साहित्यकार हैं। अवधी के प्रति इनका लगाव निरन्तर बना रहा जो अवधी रचनाओं के मध्य व्यक्त होता रहा है। युवराजदत्त कालेज, लखीमपुर में हिन्दी के प्राध्यापक पद पर कार्य करते हुए इन्हें अवधी जनचेतना के कवि पढ़ीस का सान्निध्य मिला। फलतः यदा-कदा ये अवधी में काव्य रचना भी करने गलें कुँवर साहब ने साहित्य की कभी विधाओं का प्रयोग किया है। इन्होंने लगभग एक दर्जन काव्यग्रंथ लिखे है। बड़ौदा, जोधपुर तथा मगध विश्वविद्यालय में हिन्दी विभागाध्यक्ष पद पर रहने के पश्चात् सेवानिवृत्त होकर तथा आजीवन साहित्य सेवा करके कुँवर साहब 1997 में दिवंगत हो गए।

कुँवर बहादुरलाल श्रीवास्तव 'शेष'– शेष जी का जन्म नौबस्ता, जिला प्रतापगढ़ 1910 ई. में

हुआ। इनका बाल्यकाल सुखसुविधापूर्वक बीता। इन्होंने एच.टी.सी. ट्रेनिंग प्राप्त करके वर्षों तक अध्यापनकार्य किया। इनकी रचनाओं में सामाजिक चिंता-धारा वेगपूर्वक प्रवाहित होती रही है। नेतावर्ग की कपटलीला, पुलिस प्रशासन के अत्याचार और सामाजिक शोषण-पीड़न इनके लेखन के मूल लक्ष्य रहे हैं। इन्होंने तीन काव्य-संग्रह प्रस्तुत किए हैं- 1- गाँव की गोहार 2- अमर बापू 3- अवध खण्ड। इन्होंने हरिजन समस्या और छुआछूत पर विशेष व्यथा व्यक्त की है। इनका कवित्व समाजवादी दर्शन से पर्याप्त प्रेरित दिखाता है। 'मालिक-मजूर' कविता में इसका श्रेष्ठ नमूना दर्शनीय है। शेष जी ने अध्यापकों की दयनीय दशा की करूण-कथा भी कही है। इनकी रचनाओं में क्रान्तिकारी भाव भी मुखरित हुआ है। कवि को न सुधार की आशा है और न नियोजन पर विश्वास। 'हमरे गाँव' शीर्षक रचना में उन्होंने गाँव की पीड़ा व्यक्त की है। पूर्वी अवधी के प्रयोगों से ओत-प्रोत इनमें निर्भीकता एवं स्पष्टवादिता भी देखने को मिलती है।

कुतबन शेख- इन्होंने सं. 1558 में अवधी भाषा में 'मृगावती' की रचना दोहा-चौपाई में की। कुतबन शेख सूफी मत के अनुयायी कवि थे। प्रेमाख्यानक परम्परा में उनका स्थान महत् है। कवि ने कृति का रचनाकाल हि. सन् 909 बताया है, जिसके अनुसार वि.सं. 1560 होता है, जिसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, मिश्र बन्धु आदि विद्वानों ने सही माना है। इस कृति में मृगावती नामक राजकुमारी को नायिका के रूप में प्रतिष्ठित कर कवि ने प्रेम-पक्वता की स्थापना की है।

श्री कुटिलेश- ये उन्नाव जनपद के टेढ़ा ग्राम के निवासी अवधी कवि रहे हैं। इन्होंने 'गड़बड़ रामायण' नामक अवधी रचना समाज को समर्पित कर सामाजिक बुराइयों को उद्घाटित करने की कोशिश की है।

कृपा निवास--ये रामकाव्य परंपरा से सम्बद्ध अवधी कवि हैं। इनका समय सं. 1843 और निवास स्थान अयोध्या रहा है। इन्होंने राधाकृष्ण की लीलाओं से सम्बद्ध एक ग्रंथ सृजित किया है। इनके अन्य ग्रंथ हैं- भावना पचीसी, समय प्रबन्ध, माधुरी प्रकाश, जानकी सहस्रनाम, लगन पचीसी आदि। ये सभी गंथ रामचरित से सम्बद्ध हैं।

कृपाशंकर मिश्र 'निर्द्वन्द्व'-- अवधी रचनाकारों में निर्द्वन्द्व जी का उल्लेखनीय स्थान है। इनका जन्म 'ऊँचगाँव-सानी' जिला उन्नाव में हुआ था। इन्होंने हिन्दी में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। वर्षो तक अध्यापन कार्य करके सम्प्रति स्वतंत्र लेखन में रत हैं। इनकी दो कृतियां 'बमचक' और 'चमरौधा' उल्लेखनीय हैं। इनकी कविताओं में जनवादी चिंतन का स्वर है। कवि ने ग्राम्य अंचल और संस्कृति के सजीव चित्र अपने गीतों में उतारे हैं। हास्य व्यंग्य के क्षेत्र में भी कवि ने अपनी सुरूचि का परिचय दिया है। साथ ही राष्ट्रीय , सामाजिक समस्याओं की ओर यथाप्रसंग दृष्टि डाली है। ये बैसवारी अवधी के कवि हैं। इन्होंने गेय छन्दों के अतिरिक्त मुक्त छन्दों का प्रयोग भी अपनी कविता में किया है और शिल्पगत नये प्रयोगों द्वारा अवधी कविताओं को समृद्ध किया है।

डॉ. कृष्णकुमार श्रीवास्तव--प्रतिभा के धनी श्रीवास्तव जी लखीमपुर, खीरी के निवासी है। ये अपनी अवधी रचनाओं के लिए विख्यात हैं।

डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र- मिश्र जी खड़ी बोली के सशक्त कवि है, साथ ही अवधी में भी अच्छी कविता करते हैं। ये सन् 1947 में ग्राम बन्नीराय निकट 'बिसवाँ' जिला सीतापुर में जन्मे थे। ये एक कुशल चिकित्सक हैं। समाज-सेवा तथा साहित्य-सेवा इनके स्वाभाविक गुण हैं, जिसका ये पूर्णतया पालन कर रहे हैं। मुख्यतः ये खड़ी बोली के कवि हैं। 'साकेत-शौर्य' इनका प्रख्यात काव्य-ग्रंथ है।

कृष्णशंकर शुक्ल- ये रायबरेली जनपद के निवासी रहे हैं। इन्होंने 'बेनीमाधव बावनी' नामक रचना सृजित की है, जिसमें पर्याप्त अवधी पुट है।

केदार तिवारी–तिवारी जी बैसवारा क्षेत्र के ग्राम तकिया पाटन जिला उन्नाव में 1900 ई. में जन्में थे। इनका बैसवारी अवधी में, लगभग 200 पृष्ठों का एक अप्रकाशित प्रबन्धकाव्य 'अस्त्र रहित रण भंग' है। यह ग्रन्थ राष्ट्रीय आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है, जिसमें सन् 1905 से लेकर 1947 ई. तक के स्वतंत्रता संग्राम का रोचक वर्णन है। इसका गणना हिन्दी के राष्ट्रीय काव्यों में की जा सकती है। इनकी अवधी परिमार्जित है। इन्होंने परम्परागत दोहा-चौपाई को अपनाया है। 1950 ई. में तिवारी जी का देहावसान हो गया।

केदारनाथ त्रिवेदी 'नवीन'– नवीन जी का जन्म सीतापुर जनपद के 'कौरैया' नामक ग्राम में सन् 1895 ई. में हुआ था। इनका प्रारम्भिक जीवन सुखद एवं आनन्दपूर्ण था। राजकीय सेवा से कार्य-मुक्त होकर अन्ततः ये लखीमपुर नगर के स्थायी निवासी हो गये। विविध स्थानों पर नौकरी करने के कारण इन्हें सामाजिक जीवन का गम्भीर अनुभव प्राप्त हुआ। अपनी काव्य माधुरी के कारण कई बार नवीन जी पुरस्कृत भी किये गए हैं। तदुपरांत अवधी भाषा और साहित्य-सृजन में द्रुतगति से अग्रसर हुए। आकाशवाणी से इनका गहरा सम्पर्क रहा है। इनकी अधिकांश रचनाओं का प्रसारण यहीं (आकाशवाणी) से हुआ। ऐसी रचनाओं में - हल, किसान, दीवाली, महंगाई, बुढ़ापा आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। कुलीन, किसानी, नवीन रामायण और बौछार इनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं। इनका अधिकांश साहित्य अभी अप्रकाशित है। इनमें 'काली कमली वाला' उत्तर का अंकद पैज, नैमिषारण्य आदि महत्त्वपूर्ण हैं। सामाजिक, धार्मिक, शृंगारमूलक भाव इनके काव्य में अधिक मुखर हुए हैं। इनके इस प्रवाह में राजनीति या सम्प्रदायगत भावों की खोज कठिन है। इन्होंने सामाजिक सुधार हेतु शिक्षा पर अधिक बल दिया है। इन्होंने अनेक समस्याओं को जन्म देने का सम्पूर्ण दायित्व सरकारी मशीनरी प्रयोग पर डाला है। नवीन जी रस एवं कल्पनाप्रधान कविता की अपेक्षा यथार्थवादी रचना पर अधिक बल देते हैं। इनकी भाषा स्वच्छ एवं मार्जित है। भाषा में पर्याप्त लालित्य है। अवधी का परिमार्जित प्रयोग इनकी कविता की प्रमुख विशेषता है। उपमा और अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग प्रसंगानुकूल हुआ है। गीत इनकी प्रिय शैली है। अवधी जनकाव्य में इनका साहित्य अपनी मूलभूत विशेषताओं के कारण सदा अमर रहेगा।

केदारनाथ मिश्र 'चंचल'- 'चंचल' जी अवधी के कवि हैं। इनका जन्म 'दलीपपुर' जिला प्रतापगढ़ में सन् 1919 ई. में हुआ था। प्रतिकूल एवं जटिल परिस्थितियों के कारण ये उचित शिक्षा न प्राप्त कर सके, और अध्यापन कार्य करने लगे। बहुत दिनों तक ये अविभाजित भारत के लाहौर नगर में रहे, तत्पश्चात् प्रतापगढ़ आ गए। ये वस्तुतः व्यंग्य-विनोद के कवि हैं। 'रसोई-घाटी' इनका प्रसिद्ध संकलन है, जो अद्यावधि अप्रकाशित है। 'महंगी' शीर्षक कविता में इनकी व्यंग्य विधा मुखर हुई है। इन्होंने स्वाभाविक कथन के साथ अमीरों, हाकिमों पर कठोर व्यंग्य किया है। कवि चंचल की अवधी भाषा में पूर्वीपन है। लोकोक्तियों का प्रयोग इनकी भाषा की सशक्तता का प्रमाण है। इनकी भाषा जनभाषा है, किंतु पूर्ण सुगठित है।

केशवचन्द्र वर्मा–युग के मूल स्वर को पहचानकर कविता लिखने वालों में वर्मा जी का प्रमुख स्थान है। कविता यदि जीवन की व्याख्या है तो इस दृष्टि से वर्मा जी की कवितायें खरी हैं। इनमें जीवन की गहरी व्याख्या है। वर्मा जी रचनाओं में युगीन समस्याओं को स्वर मिला है। इनकी कृतियों में सामाजिक, राजनीतिक चेतना का यथातथ्य मूल्यांकन हुआ है। हास्य व्यंग्यपरक रचनाओं में वर्मा जी नवीन रूप धारण क़र उपस्थित हुए हैं। मनोरंजन और विनोद के क्षेत्र में ये अपने समवर्ती कवियों से बहुत आगे हैं। इनकी अवधी भाषा में शुद्ध एवं सुबोध प्रयोगों के दर्शन होते हैं। स्वच्छन्द निर्झर-सी इनकी भाषा कभी द्रुत कभी मन्थर गति से बहती है। इसके प्रवाह में गम्भीरता और आकर्षण है। ललित शब्द योजना तथा अलंकार जनित माधुर्य से मन आनन्दित हो जाता है।

खगिनिया- ये घाघ, भड्डरी आदि की श्रेणी में परिगणित की जाने वाली एक महत्त्वपूर्ण लोकपंडिता

रही हैं। इन्होंने अवधी साहित्य में अपने पर्याप्त अनुभवों को पद्यबद्ध करके उसमें महती भूमिका अदा की है। लोक कहावतें इनका प्रतिपाद्य विषय रही है।

खुशाल- ये भारतेन्दु युग के ख्यातिप्राप्त अवधी कवि हैं। बैसवाड़ी क्षेत्र इनका निवास स्थान रहा है।

ख्वाजा अहमद–ये बाबूगंज (प्रतापगढ़) के निवासी थे। इनके पिता का नाम लाल मोहम्मद था। इनका अवधी काव्य है- नूरजहाँ। यह एक प्रेमपरक कृति है। इसकी रचना सं. 1962 में की गई है। 'नूरजहाँ' प्रेमाख्यानक काव्यों की भाँति अवधीयुक्त है। इसमें दोहा-चौपाई छंद का प्रयोग है।

गंगादयाल- ये बैसवारा क्षेत्र के निवासी एवं भारतेन्दु युगीन अवधी-साहित्यकार हैं।

गंगादयाल द्विवेदी- निगसर (बैसवारा क्षेत्र) के निवासी द्विवेदीजी भारतेन्दुयुगीन अवधी-साहित्यकार हैं।

गंगाधर ब्यास–ये 'सत्योपाख्यान भाषा' को अवधी भाषा में अनूदित करने वाले एक साहित्यकार रहे हैं। इनका जीवनकाल सन् 1842 से 1915 ई. तक रहा है।

गंगा प्रसाद–ये अवधी काव्यधारा को अक्षुण्ण बनाये रखने वाले साहित्यकारों में से एक हैं। द्विवेदी युग इनका आविर्भाव काल था।

गंगाप्रसाद मिश्र- ये अवधी गद्य लेखक विशेषकर लघु नाट्य एवं एकांकियों में कुशल कलाकार हैं। इनके नाटक सामाजिक समस्याओं पर आधारित हैं। इनकी अवधी रचनाएँ हैं- नेवासा, नानक, धरती का धन, सौदागर, पाहुन, ससुराल की सैर आदि।

गंगासागर शुक्ल- ये अवधी भाषा के एक अल्पख्यात कवि रहे हैं। इनका जन्म सन् 1943 में रायबरेली में हुआ था।

गजराज सिंह यादव 'अमर'- अमर जी का जन्म सन् 1930 ई. में खीरी जनपद के चन्दनापुर गांव में हुआ था। इनके पिता जी का नाम ठाकुरप्रसाद यादव था। शिक्षा ग्रहण करने के बाद ये श्री हनुमत् रामेशवर दयाल इण्टर कालेज, बिसवाँ में अंग्रेजी के अध्यापक हो गये। 'कल्पना-कुसुम' इनका खड़ी बोली का काव्य-संग्रह है। 'अमर कीरति' इनकी अवधी रचनाओं का संकलन है। ये अवधी में सवैया और घनाक्षरी बड़ी कुशलता से लिखते हैं।

डॉ. गणेशदत्त 'सारस्वत'–इनका जन्म सीतापुर जनपद के बिसवाँ नगर में 10 सितम्बर 1936 ई. को हुआ था। इनके पिता का नाम पं. उमादत्त सारस्वत है। ये खड़ी बोली के साथ-साथ अवधी में भी रचनाएँ करते हैं। इनके द्वारा लिखित एवं संपादित दर्जनों ग्रंथ हैं। ये आर.एम.पी. स्नाताकोत्तर महाविद्यालय, सीतापुर में हिन्दी विभागाध्यक्ष के पद को भी संशोभित कर चुके है।

मुंशी गणेशप्रसाद कायस्थ–इनका उल्लेख 'मिश्र बन्धु विनोद' (द्वितीय भाग) में मिलता है। इनकी अवधी रचनाएँ हैं- 'राधाकृष्ण दिनचर्या' और 'ब्रजवना-यात्रा'।

गणेशप्रसाद गणाधिप–इनका जन्म सन् 1901 में ग्राम भुइला, जनपद सीतापुर में हुआ था। ये मूलतः ब्रज और खड़ी बोली के कवि थे। फिर भी इन्होंने अवधी में कभी-कभी रचनाएँ की हैं। जैसे- 'काहेक यार बकावत हौ हमका, हमहू छलछंद पढ़े हन।'

गयाचरण- ये द्विवेदी युग की अवधी काव्य धारा से सम्बद्ध महत्त्वपूर्ण कवि है। इनका साहित्य अप्राप्य है।

पं. गयाप्रसाद तिवारी 'मानस'–तिवारी जी का जन्म 8 जनवरी सन् 1921 ई. को कानपुर निवासी पं. सदाशिव तिवारी एवं श्रीमती शिवदुलारी दम्पत्ति के घर हुआ। सम्प्रति 372, राजेन्द्र नगर, लखनऊ के निवासी बन गये हैं। शिक्षाग्रहण करने के बाद उ.प्र. सचिवालय में कार्यरत हो गये। 31 जनवरी 1979 को उपसचिव के पद से सेवानिवृत्त हुए। इन्होंने खड़ी बोली, ब्रजभाषा के साथ-साथ अवधी भाषा में भी काव्य-सृजन किया। इनकी रचनाएँ हैं- मानव विनयावती, ब्रज विहार, मानस काव्य तरंगिणी, मनुआ मगन मगन है चोला, दोहा, गीत भी इन्होंने लिखे हैं। ये 'काव्यश्री' उपाधि से सम्मानित भी किये गये हैं।

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'–सनेही जी का जन्म 1883 ई. में हड़हा (उन्नाव) नामक ग्राम में हुआ। इन्होंने कानपुर को केन्द्र बनाकर कई वर्षो तक मंचीय काव्य का संचालन किया। सनेही जी अपने युग के आचार्य कवि रहे हैं, साथ ही गुरूवत् पूज्य भी। अपने जीवन काल में इन्होने अनेक अखिल भारतीय विराट कवि सम्मेलनों का संयोजन एवं संचालन किया। दीर्घ अवधि तक ये 'सुकवि' नामक मासिक पत्रिका के संपादक भी रहे। इस युग को इतिहासकारों ने सनेही युग की संज्ञा दी है। सनेही जी ने 'त्रिशूल' उपनाम से ओजगुण-पूर्ण राष्ट्रीयता प्रधान रचनाएँ की हैं। इनकी प्रकाशित कृतियों में प्रेमपचीसी, कुसुमांजलि, कृषक क्रन्दन, मानस तरंग, करूण भारती, संजीवनी (काव्य-संग्रह) आदि उल्लेखनीय हैं। अवधी काव्य के क्षेत्र में सनेही जी का स्फुट रचनाएँ महत्त्वपूर्ण हैं।

गिरधारी लाल 'पुंडरीक'- इनका जन्म बाराबंकी जनपद के रघुनाथ गंज में सन् 1951 में हुआ। इन्होंने अवधी कविताओं के माध्यम से गाँव का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करने की कोशिश की है। ये सम्प्रति अध्यापनरत हैं।

गिरिजादयाल 'गिरीश'- गिरीश जी लखनऊ जनपद के निवासी रहे है। इनकी रचनाओं में किसानों के जीवन का सुन्दर वर्णन देखने को मिलता है। सुख-सुविधा विहीन होने पर भी कृषक अपने जीवन से उदासीन नहीं होता। कर्म पर उसे असीम विश्वास है। गिरीश जी के गीत, विषय-वस्तु तथा वर्णन-कौशल की दृष्टि से पर्याप्त उत्कृष्ट हैं। इनकी भाषा सजीव एवं ललित है।

गिरिजाशंकर मिश्र 'गिरिजेश'–इनका जन्म सं. 1889 में ग्राम 'बन्नावाँ' जनपद रायबरेली में हुआ था। अवधी गीत, गीता ज्ञान, वेदान्त ज्ञान दर्शन और व्याधि विज्ञान गिरिजेश की अप्रकाशित कृतियाँ हैं। मुसराधार इनकी की विश्रुत अवधी रचना है। इसमें ठेठ देशज शब्दों का प्रयोग है और जनभाषा की सहजता है।

गिरिधर कविराय–इनका जन्म शिवसिंह सेंगर ने सं. 1770 वि. माना है। विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं है। इनकी कतिपय कुण्डलियों में गिरिधर कविराय राम के साथ 'साँई' वाली कुण्डलियाँ इनकी धर्मपत्नी की लिखी हुई हैं। किशोरी लाल गुप्त ने अथक श्रम से 'गिरिधर-ग्रंथावली' का संपादन तथा प्रकाशन किया है। डॉ. ब्रजकिशोर मिश्र ने इन्हें अवध के प्रमुख कवियों में स्थान दिया है तथा इनकी भाषा को अवधी बताया है।

गिरिधारी–सातनपुर निवासी ये अवधी कवि हैं। इनका समय भारतेन्दु युग है। इनका अवधी साहित्य प्रकाशित नहीं हो पाया है।

गुणाकर त्रिपाठी–कांथा निवासी त्रिपाठी जी अवधी रचनाकार हैं। इनका रचनाकाल भारतेन्दु युग रहा है।

गुरुचरन लाल 'गुदड़ी के लाल'- आधुनिक अवधी रचनाकारों में 'गुदड़ी के लाल' का व्यंग्य क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान है। 8 जनवरी 1938 ई. को मलिकमऊ चौबरा, जिला रायबरेली में इनका जन्म हुआ था। उत्तर रेलवे में ये शाप अधीक्षक के पद पर कार्यरत हैं। साहित्यानुरागी कवि गुरूचरन लाल जी कविता के साथ-साथ नाटक और निबन्ध भी लिखते हैं। सन् 1978 ई. में प्रकाशित इनकी अवधी काव्य कृति झलबदरा और 1999 ई. में प्रकाशित 'छुट्टा हरहा' विद्वानों के बीच यथेष्ट प्रशंसा प्राप्त कर चुकी हैं। इनकी रचनाओं में सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय भावना तथा लोकसंस्कृति के स्वर मुखाग्र हुये हैं। सामप्रदायिक सद्भावना, ऐक्य और अखण्डता पर लिखी गई इनकी अनेकानेक रचनायें प्रेरणादायी हैं, जिनकी भाषा बैसवारी अवधी है।

गुरूदीन सिंह 'दीन'–ये जैसा अपने उपनाम से प्रतीत होते हैं वैसा ही इनके साहित्य सृजन के साथ हुआ। पाण्डुलिपियाँ धीरे-धीरे दीमक एवं चूहों का आहार बन गयी। इन्होंने अवधी साहित्य में प्रचुर

मात्रा मे योगदान किया।

गुरूप्रसाद- आधुनिक काल के द्विवेदी युग के अल्पख्यात अवधी कवियों में से ये महत्त्वपूर्ण साहित्यकार हैं।

गुरूप्रसाद सिंह 'मृगेश'- स्व. मृगेश जी का जन्म बुढ़वल, बाराबंकी में 12 जनवरी 1910 ई. में हुआ। आधुनिक अवधी काव्य और गद्य के क्षेत्र में मृगेश जी का उल्लेखनीय स्थान है। इन्होंने ब्रज, खड़ी बोली और अवधी तानों में साहित्य सृजन किया है, जिनमें अधिकांश अप्रकाशित हैं। जैसे- गाँव के गीत, लहचारी, चहलारी नरेश आदि। बरवै व्यंजना, और पारिजात इनकी प्रकाशित अवधी कृतियां हैं। नाट्य विधा को मृगेश जी ने सुरुचिपूर्वक अपनाया है। इसके अतिरिक्त कुछ संस्मरण तथा आलोचनात्मक निबन्ध भी लिखे है। अवधी के अतिरिक्त इन्होंने माधव मंगल दयादण्ड सुगीत मृगांक, मृगेश महाभारत आदि अनेक काव्यकृतियों का सृजन किया है। इन पर कई आलोचनात्मक निबन्ध और एक शोधप्रबन्ध भी द्रष्टव्य है। इनको जनपदीय पुरस्कार द्वारा सम्मानित भी किया गया है, जो इनकी प्रतिष्ठा का प्रतीक है। इन्होंने अपनी कृतियों में अवध अंचल के लोक-जीवन को यथाशक्ति प्रतिबिम्बित किया है। अवधी प्रबन्ध रचना करने वाले ये प्रथम आधुनिक कवि हैं। कविवर मृगेश जी ने अपने महाकाव्यों में अवध के प्रकृति परिवेश को अर्थात् नदी, नाले, बन, बाग, तड़ाग, खेत, खलिहान, ऋतु, वनस्पति, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, इन सबको स्वर दिया है। इनका मुक्तक काव्य विविधता से परिपूर्ण है। इन्होंने अनेक छन्दों और विषयों में रचनायें की हैं। बरवै छन्द के ये सफल प्रयोक्ता हैं। इन्होंने अनेक प्रकार के लोकगीत रचे है। धार्मिक चिंतन इनमें सर्वाधिक परिलक्षित हुआ है। मृगेश जी मानवतावादी अध्यात्म परायण आस्तिक कवि हैं। इनमें साम्प्रदायिकता की प्रतिक्रिया है। वस्तुतः मृगेश जी ग्रामीण व्यवस्था और कृषि संस्कृति के कवि हैं। सामाजिक कुरीतियों, वर्ग संघर्ष तथा किसानों-मजदूरों की व्यथा-कथा को इन्होंने पूरी सम्वेदना के साथ उभारा है। स्त्रियों की दुर्दशा, पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण, महंगाई, बेकारी, अराजकता, जातिवाद, नेतागीरी, क्षेत्रीयता आदि समस्याओं को भी इन्होंने सतर्कतापूर्वक उभारा है। इनकी रचनाओं में प्रचुर मात्रा में ऋतु वर्णन विद्यमान है। लोक और शास्त्र के बीच समन्वय स्थापित करना इनकी सबसे बड़ी विशेषता है। फलतः आधुनिक अवधी के चतुष्टय में ये गण्यमान हैं। इनमें यथेष्ट कलात्मक सौष्ठव भी है और वैचारिक समृद्धि भी। इन्हौंने द्विवेदी युग से लेकर समसामयिक जीवन की विभिन्न भावसरणियों और कलात्मक अभिरुचियों का सन्निवेश करके नूतन-पुरातन का सफल सामंजस्य किया है।

गोपालकृष्ण निगम 'विरोधी'– इनका जन्म लखनऊ के मोहल्ला फतेहगंज नाला में सन् 1916 ई. में हुआ था। इनके पिता स्व. सूरजबली निगम अमीनाबाद हाईस्कूल (अब इण्टरमीडिएट) में अध्यापक थे। 21-22 वर्ष की अल्पावस्था में पिता जी के देहावसान से इनकी माता ने इनको ले जाकर इनके ननिहाल (बहराइच) में पालन पोषण किया। अनेक महापुरुषों एवं विद्वानों के सीधे सम्पर्क में आकर इनमें हिन्दी प्रेम ही नहीं बल्कि काव्य प्रतिभा जी जाग्रत हुई। कई कालेजों में अपनी शिक्षा पूरी करके ये अध्ययन कार्य से जुड़े। 1974 ई. में राजकीय रचनात्मक प्रशिक्षण महाविद्यालय, लखनऊ से अवकाश ग्रहण किया। सम्प्रति ई-2144, राजाजी पुरम, लखनऊ में निवास करते हैं। 'रामाचार्या' इनका अवधी खण्डकाव्य हैं इनका अधिकांश काव्य स्तुतिपरक है। विभिन्न देवी-देवताओं के सम्बन्ध में पचासों रचनाएँ इन्होंने लिखी हैं। लहचारी, चैती आदि लोकगीतों पर भी इनकी लेखनी चली है।

गोपालचन्द्र मिश्र–इनका जन्म संवत् 1690 के आसपास माना जाता हैं। इनके पिता का नाम गंगाराम था। ये छत्तीसगढ़ी की पुरानी राजधानी रतनपुर के राजा राजसिंह के दरबार में रहते थे। राजा ने इनको अपना दीवान बनाया था। इन्होंने सं. 1746 में राजाज्ञानुसार 'खूब तमाशा' नामक रचना का प्रणयन किया था। इसके अतिरिक्त जैमिनी अश्वमेध, सुदामा चरित, भक्ति चिंतामणि, रामप्रताप एवं छंद विलास आदि कवि की रचनाएँ मिलती हैं। इनकी कविताओं का अवधी साहित्य में विशिष्ट स्थान है।

गोस्वामी तुलसीदास–विश्वकवि गोस्वामी तुलसीदास का जन्म सं. 1589 में अवध क्षेत्र में हुआ था। इनका जीवनवृत्त भले ही विवादास्पद हो, किंतु गौरव नहीं। गोस्वामीजी ने 'ग्राम्यगिरा' अवधी में अपनी कल्पकृति 'रामचरित मानस' की रचना करके इस विभाषा को विश्वस्तरीय भाषा की महत्ता प्रदान की ओर उसे देववाणी की प्रतिस्पर्धा में प्रतिष्ठित करके जिस अभूतपूर्व गुण-गरिमा से अभिमण्डित किया, वह विस्मयकारक है। अवधी में गोस्वामी जी ने तीन रूपों का प्रयोग किया है- 1- पूर्वी अवधी, जिसमें 'बरवै रामायण' और 'रामलला नहछू' की रचना की गई है, 2- पश्चिमी अवधी, जिसमें जानकी मंगल और पार्वती मंगल की रचना की गई है, तथा 3- बैसवारी अवधी, जिसमें रामचरितमानस का प्रणयन किया गया है। इन कृतियों का विवरण यथास्थान द्रष्टव्य है। महत्व की दृष्टि से तुलसी का कर्तृत्व सर्वविदित है, अतएव यहाँ सूत्र रूप में ही प्रस्तुत्य है।

गोसाईंदास : इनका जन्म संवत 1727 फाल्गुन अमावस्या को ग्राम चेतिया, जनपद-बस्ती में हुआ। बचपन में पिता की मृत्यु हो गयी। माता सुमित्रा देवी के साथ ग्राम-सरैयां बाराबंकी में रहे। कालान्तर में कमोलीधाम को अपना साधना स्थल बनाया। ये आजीवन ब्रह्मचारी थे। इनका प्रकाशित ग्रन्थ दोहावली साहेब गोसाईदास है। जो अवधी भाषा में है जिसके सम्पादक विनय दास हैं। 'शब्दवाणी' दूसरा ग्रंथ है। इसमें भजन है। ककहशनामा अप्रकाशित ग्रन्थ है। इनके गुरू साहेब गजजीवन दास थे। यह सतनाम पंथ के थे।

गौतम ऋषि– गौतम ऋषि का जीवन परिचय अप्राप्त है, किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि इन्होंने अवधी को गद्य कृति प्रदान कर उसकी गद्यात्मक धरोहर में पर्याप्त अभिवर्द्धन किया है। इनकी रचना है- 'सगुनावती'।

डॉ. गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द'–अरविन्द जी का जन्म 28 अगस्त 1940 ई. को ग्राम जरौली, हैदरगढ़ जनपद बाराबंकी में हुआ था। इनके पिता का नाम रामखेलावन पाण्डेय है। पी-एच.डी. तक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात ये अध्यापन -कार्य में लग गये। साकेत महाविद्यालय फैजाबाद के शिक्षा विभाग में प्राध्यापक पद को ये सुशोभित कर रहे हैं। तुलसीदास, स्वर और रेखाएँ, भवानी भीख, अभिनन्दन ग्रंथ इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। सम्प्रति ये अवधी संस्थान, अयोध्या के महामंत्री है तथा सामाजिक सस्थाओं एवं देश प्रेम की भावनाओं से युक्त अवधी रचनाएँ कर रहे है।

घाघ- इनका जन्म सन् 1696 ई. में हुआ था। 'घाघ' ने लोकजीवन पर आधारित काव्य की रचना की है। इनकी रचनाएँ 'कहावतों' का रूप ले चुकी हैं। आचार्य शुक्ल, रसाल जी तथा हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि प्रायः सभी इतिहासकारों ने इन्हें हिन्दी का लोककवि माना है। रामनरेश त्रिपाठी ने इन्हें अकबर का समकालीन माना है। आज सम्पूर्ण उत्तर भारत में मौसम तथा इनके खेती-पाती विषयक कहावतें लोकप्रिय हैं। स्थान के अनुसार इनकी भाषा में बदलाव होता रहा है। देहात के अनपढ़ किसानों के लिए ये छन्द सूत्र का कार्य करते हैं। ये छन्द वर्षा, बुवाई, जोताई, गोड़ाई, दँवाई, भोजन तथा स्वास्थ्य आदि के सम्बन्ध में रचे गए हैं। असमी तथा उड़िया में भी 'डाक' नाम के कवि हुए हैं, जिनकी रचनाएँ 'घाघ' की रचनाओं से साम्य रखती हैं। बिहार, राजस्थान में भी 'डाक' के नाम से प्रसिद्ध हैं। तुलनात्मक आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है, तीनों स्थानों के 'डाक' एक ही हैं। यह तथ्य अभी परीक्षणीय है। इनके छन्दों की पुरानी प्रतिलिपि नहीं मिलती है। लोगों से सुन-सुन करके इनका संग्रह किया गया है।

घानु- यह विवाह के लगभग एक सप्ताह पूर्व होने वाला संस्कार है। इसमें गेहूँ, चावल आदि खाद्य-सामग्री को साफ सुथरा करने हेतु कार्य का शुभारम्भ किया जाता है। स्त्रियों द्वारा इस संस्कार में गीत विशेष रूप से गाये जाते हैं। इस गीत के साथ वाद्ययंत्र नहीं बजता ।

घूरूप्रसाद किसान–इनका जन्म ग्राम कुसुंभी, जिला उन्नाव में चैत्र पूर्णिमा सं. 1987 वि. में हुआ।

विषम परिस्थितियों में रहकर सामान्य शिक्षा ही प्राप्त कर सके। जीविकोपार्जन का साधन इन्होंने कृषि कर्म को बनाया, साथ ही लोकगीत शैली में अवधी कविताएँ लिखनी शुरू कर दीं। 'बरसाति' एवं फकनहा मेला' इनकी प्रसिद्ध कविताएँ हैं। इनकी कविताओं में अवधी, विशेषतः बैसवारी संस्कृति मुखरित हुई है। ग्राम्य जीवन की दुर्दशा पर भी कवि-दृष्टि गई है। साथ ही राष्ट्रीय नियोजन एवं नगरी करण के बढ़ते प्रभाव से ग्राम्य विघटन पर भी प्रकाश डाला गया है।

चंद्रशेखर मिश्र 'चण्डूल'–चण्डूल जी आधुनिक अवधी काव्य की हास्य-व्यंग्य परम्परा में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इनका परिचयात्मक विवरण अप्राप्त है।

डॉ. चक्रपाणि पाण्डेय- इनका जन्म सन् 1933 में रायबरेली जनपद के भीरा गोविन्दपुरन में हुआ था। ये उ.प्र. के राजकीय शिक्षा विभाग में एक अध्यापक हैं। इस समय प्राचार्य के पद पर सेवारत हैं। इन्होंने खड़ी बोली में भी रचनायें हैं- बैसवंश भूषण, बैसवारा विभूति, राव रामबख्श उमराव चन्द्रिका, भावानी दास आदि। 'बनौधा बीर 'बीरा' इनका एक प्रबन्ध काव्य है। ये प्रायः वीर रस पूर्ण रचनायें लिखते हैं। बैसवारी में लिखी इनकी घनाक्षरिया, जो वीररस-पूर्ण हैं, बड़ी महत्वपूर्ण हैं। वस्तुतः बैसवारी लोकजीवन की गहन अनुभूति प्राप्त है डॉ. पाण्डेय को। इनकी रचना में शब्द-गुण्मयता (ओज) सरसता तथा प्रवाह है। कुछेक रचनाओं में ब्रजावधी की झलक मिलती है।

चतुर्भुज शर्मा–इनका जन्म सन् 1910 ई. में बीहट वीरम के निकट ग्राम राजपुर खुर्द जिला सीतापुर में हुआ था। गजोधर दीक्षित इनके पिता थे। इण्टरमीडिएट की परीक्षा विभाग में सुपरवाइजर के पद पर नौकरी कर ली। हिन्दी, अंगेजी, संस्कृत के साथ उर्दू और फारसी के भी ज्ञाता हैं चतुर्भुज शर्मा। इनकी अवधी रचनायें हैं- बजरंग -बावानी, नारद मोह, किसान की अरदास, धनुष भंग, कुत्ता-भेड़हा की लड़ाई, बाल रामायण, ख्याल-प्याल, नहर का मुकदमा, सरदार पटेल, महात्मा गांधी का निधन, स्वतंत्रता दिवस, पोक्कन पाण्डे, गोधूली, यहिया खाँ, मधई काका की चौपारि, मेघनाथ वध, इत्यादि। इनकी समस्त अवधी सेवाओं पर उ.प्र. हिन्दी संस्थान ने इन्हें जायसी (नामित) पुरस्कार से सम्मानित किया है। भाषा में बैसवारी अवधी की स्पष्ट झलक मिलती है।

चन्द्रभान सिंह–इनका जन्म सन् 1874 में ग्राम बरउवँ, जनपद रायबरेली में हुआ था। ये होली-चहली, छंद के लिए प्रसिद्ध हैं। इनके लोकगीत रामकृष्ण कथा पर आधृत हैं भाषा ठेइ अवधी है। 'कृष्ण सुदामा' नामक इनका लोकगीत संग्रह है, जो अभी अप्रकाशित है।

चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका'–आधुनिक अवधी कविता में श्री चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' का शीर्षस्थ स्थान है। महाकवि तुलसीदास के बाद ये अवधी के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि हैं। इनका हास्य-व्यंग्य-विनोद अति विशिष्ट हैं। काका के काव्यसंग्रह हैं- 'भिनसार' 'बौछार', 'फुहार', 'गुलछर्रा', नेताजी एवं हरपाती तरवारि आदि । इनका काव्य, भाव और शिल्प दोनों दृष्टियों से वैविध्यपूर्ण है। इनकी रचनाओं में बैसवारा-जनजीवन की अनेक मर्मच्छवियाँ प्रोद्भासित हुई हैं। प्रकृति-परिवेश का एक-एक रूप-रंग उनका दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष है- अवध की लोक संस्कृति का दिग्दर्शन। 'काका' मूलतः ग्रामीण-व्यवस्था एवं कृषि संस्कृति के कवि हैं। अवध ग्रामांचल में व्याप्त गरीबी, भुखमरी, पर्दा-प्रथा, मुकदमेबाजी आदि समस्याओं एवं कुप्रथाओं का समाधान इनकी रचना का विषय रहा है। कृषि कर्म एवं ग्रामोद्योग का इन्होंने पुरजोर समर्थन किया है। इन्होंने अवधी लोकसंस्कृति का बड़ी बारीकी से वर्णन किया है। इनकी कविताओं का काव्य-सौष्ठव विशिष्ट है। इन्होंने जनजीवन में प्रचलित लोकोक्तियों, मुहावरों और ठेठ आंचलिक लहजों (बोली-बानी) का प्रयोग करके अपनी विलक्षण व्यंजनातिशयता का निर्वाह किया है। 'रमई काका' की कविता जितनी भावबहुला है, उतनी शिल्प विवधा भी। इन्होंने छोटी-बड़ी मुक्त कविताओं के अतिरिक्त, गीत, घनाक्षरी, दोहा, सोरठा, कुण्डलियाँ , पद, विरहा, आल्हा आदि छन्दों तथा

विभिन्न काव्यरूपों का सफल प्रयोग किया है। भले ही इनकी भाषा में कहीं-कहीं खड़ी बोली तथा भोजपुरी का अवधी रूपांतरण दिखाई देता हो, यों उसमें बैसवारी अवधी का सफल विनियोग हुआ है। 'काका' ने लोकरूचि के अनुकूल हास्यरस में अधिक लिखा है, पर शृंगार, करूण और वीर रसों में भी इनकी यथेष्ट गति रही है। राष्ट्रीय विभूतियों गाँधी, नेहरू आदि के प्रति इन्होंने अनेक वन्दना गीत लिखे हैं। राजनीतिक समस्याओं पर भी 'काका' ने पर्याप्त चिंतन किया है। पाकिस्तानी, चीनी आक्रमण के दौरान इन्होंने 'आल्हा' शैली में अनेक प्रेरणादायक गीत लिखे। अवधी गद्य में 'काका' की महती भूमिका रही है। 'रतौंधी' 'बहिरे बोधन बाबा' नाम हास्य एकांकी (ध्वनि रूपक) संकलन द्वारा इन्होंने अवधी नाटक के क्षेत्र में पहल की है। वस्तुतः ये आधुनिक अवधी के कीर्तिस्तम्भ हैं।

श्रीमती चन्द्रवती मिश्र (मीराबाई)–20वीं शताब्दीं में उत्पन्न ये राम की अनन्य उपासिका थीं। इनकी एक मात्र काव्य कृति- 'आनन्द रस भजन रामायण' है। ये ग्राम मवई खानपुर जिला उन्नाव (बैसवारा-जनपद) की निवासी थीं। इनका जीवन प्रारम्भ से ही संघर्षशील रहा। बाल्यकाल (8 वर्ष की आयु) में ये मातृ सुख से वंचित हो गई। बालिका चन्द्रवती को पिता द्वारा वैष्णवी संस्कार तथा अक्षर ज्ञान प्राप्त हुआ। चन्द्रवती का वैवाहिक जीवन सुखी न रहा 18 वर्ष की आयु में वैधव्य से अभिशप्त चन्द्रवती ने अपना समग्र जीवन राम के चरणों में अर्पित कर दिया। अन्वेष्य तथ्यों के अभाव में इनके जीवन वृत्त पर स्पष्ट प्रकाश नहीं डाला जा सकता। कवयित्री चन्द्रवती मिश्र को पर्याप्त पौराणिक ज्ञान था। ये हिन्दी और संस्कृत जानती थीं। इनकी 'आनन्द रस भजन रामायण' प्रकाशित रचना है, परन्तु प्राप्त प्रति के अत्यन्त जर्ज होने के कारण प्रकाशन तिथि तथा प्रकाशक का स्पष्ट पता दे सकना कठिन है। आधुनिक अवधी के विकास में 'आनन्द रस भजन रामायण' और इसके रचयिता का महत्व नकारा नहीं जा सकता।

चन्द्रशेखन 'चण्डूल'– चण्डूल जी लखनऊ जनपद के बंथरा क्षेत्र के निवासी हैं। साहित्य क्षेत्र में उतरने के लिए इन्होंने अवधी को अपनी मूल भाषा के रूप में स्वीकार किया है।

चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि'– इनका जन्म बन्नावाँ, रायबरेली में 1908 में हुआ था। इन्होंने अश्लील लोकगीतों के विरोध में लोगगीतों का एक संग्रह 'होली का हुलम्बा' सृजित किया। इस संग्रह ही भाषा अवधी है। इनकी मृत्यु सन् 1982 में हुई।

चन्द्रशेखर बाजपेयी- इनका जन्म पौष शुक्ल पक्ष दशमी संवत् 1855 का असनी के निकट मुअ़ज्जमाबाद जिला फतेहपुर में हुआ था। इनके पिता नाम मनीराम बाजपेयी था। इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं- रसिक विनोद, हम्मीर हठ, विवेक विलास, हरिभक्ति विलास, नख-शिख, गुरू पुंचशिका, वृन्दावना शतक, माधवी वसंत आदि। हम्मीर हठ (वीर-काव्य) इनकी सर्वाधिक लोकप्रिक रचना है। सं. 1932 में इनका निधन हो गया। ये संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। इनकी अनेक अवधी कविताएं हैं। ये अपनी कविताओं में 'शेखर' उपनाम का प्रयोग करते थे। इन्हें पटियाला, कश्मीर, जोधपुर आदि रियासतों में आश्रय प्राप्त था। अवधी के विकास में इनका योगदान उल्लेखनीय है।

चन्द्रशेखर सिंह 'चन्द्र'- लखनऊ जनपद के ग्राम भवानीपुर पो. इन्दौरा बाग निवासी श्री रघुनाथ सिंह चौहान के सुपुत्र चन्द्र का जन्म 16 अगस्त सन् 1931 को हुआ। इन्होंने अवधी के साथ-साथ खड़ी बोली में भी रचनाएँ की हैं। इनके काव्यसंग्रह हैं- छंदमाला भाग 1, छंदमाला भाग-2, गीतमंजरी, लंका-संग्राम। इनकी स्फुट रचनाएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती है।

चन्द्रिका प्रसाद बाजपेयी 'कौतुक'–इनका जन्म सं. 1964 में जिला रायबरेली के ग्राम बेहटा कला के 'बाजपेयी खेरा' में हुआ था। इनके पिताजी का नाम निजानन्द बाजपेयी था। रायबरेली में श्री रामावतार शुक्ल द्वारा स्थापित 'चातुर मंडल' के ये प्रकाशमान नक्षत्र थे। इसके अतिरिक्त रायबरेली के स्वतंत्रता

संग्राम तथा राष्ट्रीय कविता के क्षेत्र में कौतुक जी की भूमिका महत्वपूर्ण है। समस्यापूर्ति के कवि सम्मेलनों में ये कई बार पुरस्कृत हो चुके है। इन्होंने अनेक प्रकार की कवितायें की हैं। सामाजिक-सामयिक विकृतियों पर इनकी लेखनी साधिकार चली है। इनकी रचनाओं के संकलन एवं संग्रह की आवश्यकता है। इनका निधन सं. 2039 में हो गया।

चरनदास—ये कृष्ण परम्परा से सम्बद्ध कवि हैं। ब्रजमण्डल के निवासी होने के बावजूद इन्होंने अवधी भाषा में सं. 1760 में 'ब्रजचरित' ग्रंथ लिखकर अवधी को जो सम्मान प्रदान किया है, प्रशंसनीय है।

चरनदास (संत) - इनका जन्म सं. 1760 में राजपूताना के मेवाण प्रदेश के डेहरा ग्राम में मुरलीधर के घर में हुआ था। पिताजी की मृत्यु के बाद ये 9-10 वर्ष की अवस्था में अपने मातामह के साथ दिल्ली चले आये। इनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं- 'ज्ञान स्वरोदय', 'अष्टांग योग', 'पंचोपनिषदसार', 'भक्ति-पदार्थ', 'अमर लोक', 'अखण्ड धाम', 'सन्देह-सागर', 'भक्ति-सागर', आदि। इनके प्रामाणिक 21 ग्रन्थ हैं। इन्होंने अधिकांश ग्रंथ और साखियाँ अवधी भाषा में रची हैं। कहा जाता है कि इनके 52 शिष्य थे, जिन्होंने चरनदास जी द्वारा प्रवर्तित चरनदासी सम्प्रदाय 52 शाखाएं स्थापित कीं।

चारूचंद्र द्विवेदी—ये रायबरेली के निवासी एवं अवधी भाषा के ख्यातिप्राप्त कवि हैं।

चिरंजीव—ये डलमऊ, रायबरेली के निवासी एवं भारतेन्दुयुगीन अवधी कवियों में से एक हैं।

छत्रपति सिंह—ये आधुनिक काल के भारतेन्दुयुगीन अवधी कवि हैं। इन्होंने पर्याप्त साहित्य सृजन किया है। बैसवारा इनकी कर्मभूमि रही है।

छबिराज मिश्र—ये शहाबुद्दीनपुर, फैजाबाद के निवासी हैं। इन्होने अवधी भाषा में प्रचुर काव्य-सृजन किया है।

छैलबिहारी बाजपेयी 'बाण'- इनका जन्म 14 फरवरी 1929 ई. को जिला हरदोई के बाण नामक गाँव में शिवदत्त बाजपेयी के यहाँ हुआ था। विशुद्ध अवधी क्षेत्र के होने के बावजूद बाजपेयी जी ने अवधी साहित्य की काफी सेवा की है। इन्होने 'सहकारी खेती का स्वांग' नामक अवधी कृति का सृजन किया है, जो 1959 ई. में प्रकाशित हुई। स्वरेश, स्वराज्य, भारत माता, हमारे बलिदानी वीर, प्रपंच आदि इनकी मुख्य अवधी कृतियाँ हैं।

छोटकुन—निवास स्थान- भरतपुर, फैजाबाद अवधी रचना-चौताल चिंतामणि (फग-संग्रह)।

जंभनाथ—इनका जन्म नागौर (जोधपुर) राजस्थान के पीपासर नामक गाँव में सं. 1508 में हुआ था। इनके पिता का नाम लोहित परमार और माता का नाम हाँसी देवी था। इनकी कई स्फुट अवधी रचनाएं मिलती हैं। इनकी मृत्यु सं. 1580 मे लगभग हो गई थी।

जगत सिंह- ये गोण्डा नामक ग्राम के रहने वाले थे, जो सरयू के उत्तर तट पर स्थित था। इनके पिता नाम दिग्विजय सिंह था। ये विसेन क्षत्रिय थे। इनकी दो रचनाएँ हैं- साहित्य सुधानिधि और चित्र मीमांसा। ये रीतिबद्ध कवि थे। इन दोनों प्रतियों का लिपिकाल सं. 1907 है। इनकी कविता में अवधी का प्राचुर्य है।

जगदम्बाप्रसाद मिश्र 'हितैषी'- हितैषी जी कानपुर के निवासी थे। इनका जन्म सन् 1895 में एवं मृत्यु सन् 1958 में हुई थी। इन्होंने कवित्त, सवैया, छंदों का अधिक प्रयोग किया है। इनके काव्य में बैसवारी भाषा एवं संस्कृति की झलक मिलती है। इनकी अवधी रचनाएँ हैं- मकाई की खेती, बैसवारायन आदि।

जगदीश पीयूष—जन्म, ग्राम कसारा, 6 अगस्त 1950 में। जगदीश पीयूष ने अवधी साहित्य के संरक्षण का बड़ा आधारभूत कार्य किया है। 'अंधेरे के हाथ बटेर' इनकी प्रमुख काव्यकृति है। ये 'बोली-बानी' अवधी भाषी पत्रिका के यशस्वी सम्पादक हैं। वर्तमान पता है अवधी अकादमी, गौरीगंज,

सुलतानपुर, उ.प्र.।

जगदीश अवस्थी–ग्राम कोटरा(अमेठी) में सीतापुर के निवासी अवस्थी जी अवधी के एक निष्ठावान् साहित्यकार हैं, जिन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से अवधी भाषा की सेवा करने का संकल्प लिया है।

जगदीश नारायण तिवारी 'लोकेश'- लोकेश जी राजकीय पॉलीटेक्निक, फैजाबाद में कार्यरत हैं। इन्होंने तमाम साहित्य सर्जना के साथ-साथ अवधी भाषा के प्रति भी अपनी श्रद्धा प्रकट की है, जिसका उदाहरण 'तुलसी-स्तवन' नामक काव्यखण्ड से दिया जा सकता है। इस कविता में तुलसी की गौरव गाथा वर्णित है।

जगदीश प्रसाद मिश्र- शोरागंज, रायबरेली निवासी मिश्र जी अवधी भाषा के अल्पख्यात कवि है।

जगदीश श्रीवास्तव- फैजाबाद निवासी श्रीवास्तव जी अवधी साहित्यकार हैं।

जगदीश सिंह 'नीरद'- नीरद जी का जन्म 1 जनवरी सन् 1952 ई. को ग्राम कुबरी, जनपद बराबंकी में हुआ था। इनके पिता काप नाप हौसिला सिंह है। हिन्दी से एम.ए. तक शिक्षा ग्रहण करने के बाद अध्यापन कर्म से सम्बद्ध हो गये। नीरद जी अवध भारती समिति के कोषाध्यक्ष एवं 'जोंधइया' पत्रिका के उपसंपादक रह चुके हैं। इनकी कृतियाँ हैं- छठा पाण्डव, बदलता परिवेश, सती की शक्ति, खून की छींटें।

जगन्नाथ –ये आधुनिक काल की बैसवारी अवधी से सम्बद्ध साहित्यकार हैं।

जगन्नाथ अवस्थी–ये सुमेरपुर (बैसवारा क्षेत्र) के निवासी थे। इनका अवधी काव्य अप्रकाशित हे। ये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समकालीन थे।

जगमोहन कपूर 'सरस'- सन् 1938 में जनमें सीतापुर नगर के निवासी सरस जी अवधी साहित्यकार हैं। इनकी अवधी सेवा अत्यन्त उच्चकोटि की रही है। सरस जी अनेक उच्च पदों पर रह चुके हैं। इनकी अवधी रचनाएँ हैं- 'छब्बीस जनवरी', हे बापू तुमको राम-राम, पन्द्रह अगस्त, लाम पर, और हमार भारत। इन्होंने खड़ी बोली में भी काफी महत्वपूर्ण सृजन किया है।

संत जगजीवन दास–इनका जन्म संवत 1727 वि. को ग्राम-सरदहा, बाराबंकी में हुआ। इनके पिता का नाम गंगाराम तथा माता का नाम कमला देवी था। ये चन्देल वंशी क्षत्रिय थे। इन्होंने 'सतनात पन्थ का प्रवर्तन किया। इन्होंने अवधी भाषा में लगभग 18 ग्रंथों का सृजन किया। जिनमें प्रबन्ध काव्य अधनिवास दोहावली, मनपूरणा, आदि ग्रंथ प्रकाशित हैं। शेष ग्रंथ अप्रकाशित हैं इनके गुरू का नाम विश्वेसरपुरी था। यह गोंडा के गयसड़ी ग्राम के निवासी थे। संतजगजीवन दास की साधना स्थली श्री कोटवाधाम है। इनका निर्वाण संवत 1817 विक्रम को हुआ। इन्होंने कुल 87 शिष्य बनाये थे।

जनार्दन प्रसाद 'मधुकर'–लखनऊ जनपद के निवासी मधुकर जी अवधी के ख्यातिप्राप्त साहित्यकार हैं। इन्होंने अपनी साहित्य सर्जना से समाज को नयी दिशा देने का भरसक प्रयास किया है।

जयगोविंद–ये द्विवेदी युग के अवधी साहित्यकारों में से एक हैं। इन्होंने पर्याप्त अवधी काव्य सृजित किया है।

जयदेव शर्मा 'कमल'- 'तुम हथियार गढ़ौ' नामक इन्होंने प्रेरणापरक अवधी रचना की है।

डॉ. जयवीर सिंह –इनका जन्म 1 जनवरी सन् 1965 को ग्राम लोहार खेड़ा, जनपद सीतापुर में हुआ था। इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय से एम.ए., पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इन्होंने आधुनिक अवधी कवियों पर समीक्षात्मक लेखन कार्य करते हुए स्फुट रचनाएँ भी सृजित की हैं।

डॉ. जलाल अहमद 'तनबीर'–ये बाराबंकी जनपद के जैसुखपुर-मवई के निवासी है। इन्होंने अनेक अवधी लोकगीत लिखकर अवधी भाषा के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित की है।

जानकवि–इनका पूरा नाम न्यामत खाँ है, 'जान' उपनाम है। इनके पिता का नाम अलफ खाँ था।

इनके ग्रंथों की संख्या 56 है। वस्तुतः जानकवि प्रेमगाथा परंपरा के कवि है। पर इनका 'कायम रासो; वीर काव्य परंपरा में गण्यमान है। 'कायम रासो' जानकवि के खानदान का ऐतिहासिक इतिवृत्त भी प्रस्तुत करता है।

जानकी चरण- इनका समय सं. 1877 स्वीकार किया गया है। इन्होंने अवधी भाषा में पर्याप्त सृजन किया है। इनके अवधी गंथ हैं-प्रेम प्रधान, सियाराम-रस मंजरी।

जानकी चरणदास–ये रामकाव्य परंपरा से जुड़े शीर्षस्थ महाकवियों में से एक हैं। साहित्यिक अवधी को अपनी भाषा स्वीकृत करते हुए इन्होंने एक महाकाव्य का भी सृजन किया।

जानकी प्रसाद- ये बैसवारा क्षेत्र के निवासी एवं भारतेन्दु युग के अवधी रचनाकार रहे है।

जानकी प्रसाद रसिक बिहारी –बिहारी जी बुन्देलखण्ड के निवासी थे। इन्होंने 'राम रसायन' नामक प्रबन्धकाव्य की रचना की। इनकी अवधी में तद्भव व तत्सम दोनों शब्दों का मेल है।

जानकी रसिक शरण–इनका आविर्भाव सं. 1760 में हुआ था। इन्होने 'अवधी सागर' नामक ग्रन्थ सृजित कर अवधी के प्रति अपना अनुराग प्रकट किया है।

जाहिल 'सुल्तानपुरी'–ये सुल्तानपुर निवासी एवं चर्चित अवधी साहित्यकार हैं।

डॉ. जितेन्द्रनाथ पाण्डेय–पाण्डेय जी का जन्म 1 फरवरी सन् 1941 ई को ग्राम बहुता पोस्ट-लाही, जिला-बाराबंकी में पं. स्व. श्री संतप्रसाद पाण्डेय के घर हुआ था। 1976 में ये जयनारायण इण्टर कालेज, लखनऊ में प्रवक्ता पद पर नियुक्त किये गये। सन् 1967 में डी.ए.वी. डिग्री कालेज, लखनऊ में प्रवक्ता बने। सन् 1990 में लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में रीडर पद पर आसीन हुए। इनकी अवधी सेवा है- 'आधुनिक काव्यप्रामाणिक व्याख्या और आलोचना' तथा अवधी, अवधमणि आदि पत्रिकाओं में अवधी पर महत्वपूर्ण लेख, स्फुट अवधी कविताएँ। सम्प्रति 254/55 हरिभवन बनिया मोहाल, सदर बाजार, लखनऊ के निवासी हैं।

जियाराम शुक्ल 'विकल'–विकल जी का जन्म फैजाबाद जनपद के अकबरपुर क्षेत्र में सन् 1931 में हुआ था। इन्होंने अवधी साहित्य के परिवर्द्धन में सराहनीय कार्य किया है। पूरबी अवधी में अनेक लोकगीत, राष्ट्रगीत इनके द्वारा लिखे गये। 1980 से 85 के मध्य कांग्रेस पार्टी से विधायक भी रहे।

जी.एन. व्याकुल- ये रायबरेली जिला के तिलोई विकास खण्ड के निवासी हैं। 'जोंधइया और मन' इनकी सशक्त अवधी रचना है।

जीवनलाल नागर–ये 19वीं शताब्दी के कवि हैं। इन्होंने अवधी साहित्य के अभिवर्द्धन में काफी योगदान किया है। 'उषा हरण' इनकी अवधी रचना है, जिसका प्रणयन-काल सं. 1886 है।

जुमई खाँ 'आज़ाद'–इनका जन्म गोबरी, प्रतापगढ़ में हुआ था। इन्होंने अवधी भाषा में पर्याप्त साहित्य सर्जना की है। 'आज़ाद' की लगभग 17 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आर्यभारत, केवट और गंगावतरण आदि रचनाओं में इनका भारतीय संस्कृति के प्रति समर्पण और आस्थाभाव सहज रूप में परिलक्षित होता है। 27 जुलाई 1994 में इनको साहित्य-सेवा के लिए सम्मानित किया गया। जुमई जी का अवधीगीत संग्रह 'धरती के गीत' उल्लेखनीय है, जिसमें कथरी, कौन मनई, दुखिया मजूर, रोटी, भारत के जवनवा, दुखिया किसान आदि कविताएँ संगृहीत है।

ज्ञानप्रकाश 'ज्ञान'–रायबरेली निवासी ज्ञान जी एक उत्साही अवधी साहित्यकार हैं।

ज्वाला प्रसाद–ये द्विवेदी युगीन अवधी के समर्पित कवि है।

ज्वालाराय–ये भारतेन्दु युगीन अवधी कवियों में से एक हैं। इनका जन्म स्थान बैसवारा क्षेत्र है।

टोडरप्रसाद शुक्ल 'प्रसाद गेंजरहा'- इनका जन्म 22 अक्टूबर सन् 1953 ई. को खीरी जनपद के सिंगाही कलां गाँव में हुआ था। लल्लूप्रसाद शुक्ल इनके पिता थे। बी.ए. तक शिक्षा ग्रहण करने के बाद एक बेसिक विद्यालय में अध्यापक हो गये। इनके प्रेरक पं. वंशीधर शुक्ल जी रहे। इन्होंने 'नवसृजन

साहित्यकार परिषद्' का गठन किया, जिसके माध्यम से काव्य ज्योति जलाने का कार्य किया जा रहा है। 'गँउआ हमार', अवधी रचनाओं का संकलन है। 'माटी के गीत', 'वीर भारत', 'फहराई तिरंगा बादर मा' इनकी अन्य अवधी रचनाएँ हैं।

ठाकुरदीन 'माली'- रायबरेली निवासी माली जी ने अवधी भाषा में एक फाग-संग्रह सृजित किया है।

ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी 'मथुर'–ये जनपद फैजाबाद के निवासी अवधी के अल्पख्यात कवि हैं।

ढीवाजी (संत)–ये दादू दयाल के शिष्य थे जो आजीवन उनकी सेवा में अनुरक्त रहे। इनकी 'साखियों' में अवधी की कई रचनाएँ संकलित है। इनकी भाषा में सधुक्कड़ी प्रयोगों के बावजूद अवधी का स्वर स्पष्ट परिलक्षित होता है।

ताहिर- इनका जीवन परिचय अधिक स्पष्ट नहीं है, फिर भी इनका निवास स्थान शायद आगरा है। कोकसार, गुणसागर नाम की दो कृतियाँ संज्ञान में आई हैं, जिनका रचनाकाल सं. 1678 है।

तुरन्तनाथ दीक्षित– बाण, हरदोई के निवासी दीक्षित जी एक उच्चकोटि के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने मुग्तक काव्य का सृजन अधिक किया है। 'वन की झाँकी' इनकी श्रेष्ठ रचना है।

तुलसीराम वैश्य 'नाग'- ये लखनऊ के मशहूर अवधी कवि हैं। इन्होने नीतिपरक दोहों का सृजन किया।

तेजनारायण सिंह 'तेज'–अनागत कविता आंदोलन से सम्बद्ध नवोदित रचनाकार श्री तेज का जन्म नौबस्ता कलाँ अमराई गाँव, लखनऊ में 4 फरवरी सन् 1947 को हुआ। 'पुरवी तुमरे मन की' इनका प्रकाशित अवधी गीत-संग्रह है जिसका प्रकाशन भी हो चुका है। अनेक पत्र पत्रिकाओं में भी इनके लेख, कहानियाँ, कविंताएँ गीत एवं अगीत प्रकाशित होते रहते हैं।

तोरन देवी 'लली'–'लली जी ने खड़ी बोली ओर अवधी दोनों में काव्य रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। अवधी इनकी मातृभाषा रही है। ये लखनऊ की रहने वाली थीं। परिमार्जित भाषा उनकी 'हम स्वतंत्र' कविता की मुख्य विशेषता है। जनजीवन के भावों को चित्रित करने में इनकी रचना बहुत सक्षम रही है।

त्रिभुवन दास–ये स्वामी नारदानंद (नैमिषारण्य) के शिष्य थे। इनके द्वारा रचित कृति 'श्रीराम दर्शन' की पाण्डुलिपि डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप' को शिवदत्त मिश्र अशोक नगर, कानपुर से प्राप्त हुई है। इसमें पूरी रामकथा का विशद वर्णन है। यह अवधी के दोहा-चौपाई छंदों में प्रणीत है।

त्रिभुवननाथ शर्मा 'मधु'–मधु जी का जन्म 6 दिसम्बर 1932 ई. को ग्राम नगर चौरावां (इटौंजा) जनपद लखनऊ में हुआ था। इन्होंने खड़ी बोली और अवधी दोनों में लिखा हैं। अवधी में इन्होने गद्य भी लिखा है। मृगेश जी के साहित्य को प्रकाश में लाने का श्रेय मधु को है। ये संपादक और प्रकाशक के रूप में भी सक्रिय हैं। इनकी कर्मस्थली बाराबंकी रही है और अपना सारा लेखन यहीं रहकर किया।

डॉ. त्रिभुवननाथ शुक्ल- शुक्ल जी अवधी साहित्य के प्रति विशेष स्नेह रखते हैं। इन्होने अवधी में ढेर सारी कविताओं के साथ-साथ अन्य सृजन भी किया। सम्प्रति ये जबलपुर विश्वविद्यालय में विभागाध्यक्ष पद पर कार्यरत हैं।

त्रिभुवनप्रसाद त्रिपाठी 'शांत'- ये भक्त कवि हैं। इनका जन्म 1900 में परानपांडे का पुरवा, तिलोई , रायबरेली में हुआ था। 'प्रश्नोत्तर' और 'विज्ञान नौका' इनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। इनका भक्ति प्रधान काव्य अवधी में रचित है। 1970 में इनकी मृत्यु हो गयी।

डॉ. त्रिलोकी नारायण दीक्षित - मौरावाँ, जनपद उन्नाव के निवासी दीक्षितजी लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग से डी.लिट. तक शिक्षा ग्रहण की। इन्होंने अवधी साहित्य स्वरूप पर इतिहास ग्रंथ प्रणीत कर अवधी के स्वरूप निर्धारण ऐतिहासिक कार्य किया है। इकस ग्रंथ में अवधी साहित्यकारों का प्रथम बार परिचय दिया गया है।

त्रिलोचन शास्त्री- शास्त्री जी का जन्म 1919 ई. में चिराना पट्टी (सुल्तानपुर) में हुआ। इन्होंने काशी में उर्दू, अंग्रेजी, बंगला, गुजराती , मराठी , तमिल, बर्मी आदि भाषाओं का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया। 'हंस' पत्रिका के सम्पादक के रूप में इन्हें ख्याति प्राप्त हुई। कालान्तर में शास्त्री जी ने ज्ञानमण्डल-शब्दकोश, उर्दू-कोश तथा 'चित्ररेखा' मासिक का सम्पादन किया। 1942 के राष्ट्रीय आन्दोलन में शास्त्री जी ने सक्रिय भूमिका निभाई, फलतः इन्हें दीर्घावधि तक कारावास की यातना भुगतनी पड़ी। त्रिलोचन जी दिल्ली तथा सागर विश्वविद्यालय से संबद्ध रहे हैं और स्वतंत्र साहित्य-सृजन में संलग्न भी। त्रिलोचन जी की प्रकाशित अवधी काव्य कृति है- अमोला। इसमें बरवै छंदों में पूर्वांचल की ग्रामीण व्यवस्था के जीवंत दृश्य हैं। त्रिलोचन जी जनवादी कवि हैं अतएव जनभाषा अवधी में इन्होंने पुष्कल काव्य प्रणयन किया है। हाल ही में इनका निधन हो गया है।

थान कवि–ये रायबरेली के निवासी थे। इनका पूरा नाम थानराय है। इनके पिता का नाम निहालराय था। थान कवि ने बैसवारा के रईस दलेलसिंह के नाम पर 'दलेल प्रकाश' नामक रीतिग्रंथ का प्रणयन संवत् 1848 में किया। काव्योचित विविधता तथा क्रमबद्धता के अभाव में रचे गये इस ग्रंथ के सम्बंध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है- 'यदि 'दलेल प्रकाश' को भानुमती का पिटारा न बनाया गया होता तो कवि-ख्याति विशद होती।' -(हिन्दी साहित्य का इतिहास)

दंगल जी –ये बस्ती के निवासी अवधी कवि हैं।

दयानंद जड़िया 'अबोध'–अबोध जी श्री परमानंद जड़िया 'परमानन्द' के अनुज हैं। ये सम्प्रति डाक विज्ञाग में उप डाकपाल के पद पर कार्यरत हैं तथा अपने पिता के नाम पर 'श्री वैद्यनाथ धाम' 551क/416, आजाद नगर, आलमबाग, लखनऊ-5 में निवास कर रहे हैं। विगत दस वर्षो के अन्तराल में 'मधुलिका प्रकाशन', लखनऊ के माध्यम से इनके कई ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। अवधी में इन्होंने स्फुट काव्य रचनाएँ लिखी हैं।

दयानंद सिंह 'मृदुल'–फैजाबाद निवासी मृदुल जी अवधी साहित्य के एक उदीयमान रचनाकार हैं।

दयाबाई–ये सहजोबाईकी समकालीन संत कवयित्री हैं। इनके सृजन में अवधी भाषा क्री बहुलता है।

डॉ. दयाराम पाठक–फैजाबाद के निवासी पाठक जी अवधी भाषा के श्रेष्ठ कवि हैं।

दयाल- ये आधुनिक काल के अवधी रचनांकार हैं, परन्तु इनका साहित्य प्रकाशित नहीं हो सका है। इनका क्षेत्र बैसवाड़ा है।

दयाशंकर दीक्षित 'देहाती'–ये कानपुर के निवासी रहे हैं। इन्होंने अवधी भाषा के माध्यम से अनेकानेक कविताएं समाज को समर्पित की हैं। इनकी 'ई चारिउ नित ही पछितात' नामक कविता और साथ ही व्यंग्यपरक दोहे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

दयाशंकर शुक्ल 'देहाती'–देहाती जी जनसामान्य से जुड़े हुए कवि हैं। इन्होंने अपनी अवधी कविताओं के माध्यम से सामाजिक बुराइयों एवं समस्याओं को बड़े साहस के साथ उजागर करते हुए उनका विरोध किया है।

दरिया साहब–इनका जन्म सन् 1634 ई. में हुआ था और मृत्यु 1780 ई. में। दरिया अपने को कबीर का अवतार मानते थे। इन्होने लगभग 27 रचनाओं का प्रणयन किया है। इनकी अधिकतर कृतियाँ अवधी भाषा में लिखी है। दरिया साहब ने अवधी का अधिक प्रयोग तुलसीदारा के आधार पर किया है। दरिया साहब की कवित्व शक्ति सामान्य सन्त कवियों की तुलना में कहीं बेहतर है। इन्होंने 40 प्रकार के छन्दों का प्रयोग अपने काव्य में किया है।

दहाड़ –सन् 1964 ई. में रचित यह श्री उमाप्रसाद बाजपेयी 'सुजान' जी की अवधी रचनाओं का संकलन है।

दिनेश दादा–ये महमूदाबाद, सीतापुर के निवासी अवधी साहित्यकार हैं। इनकी कविताएँ बड़ी ही

गम्भीर हैं। इनमें समाज की बुराइयों का मर्मोद्घाटन है एवं उनसे मुक्त होने का स्वर भी है।

दिनेश मिश्र–अयोध्या के निवासी मिश्र जी अवधी जगत के अल्पख्यात साहित्यकार हैं।

दिवाकर प्रसाद अग्निहोत्री 'दिवाकर'–इनका जन्म 2 फरवरी 1927 ई. को सीतापुर जनपद की बिसवॉ तहसील के पकरिया नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता पं. लक्ष्मीनारायण अग्निहोत्री संस्कृत एवं ज्योतिष के अधिकारी विद्वान थे। दिवाकर जी दैनिक पत्र 'नवजीवन' के संपादकीय विभाग में कार्यरत रहे। खड़ी कार्यक्षेत्र एवं निवास स्थान लखनऊ रहा। खड़ी बोली के कवि होने के साथ-साथ इन्होंने 'हम तिनुका हन' नामक एक अवधी काव्य सृजित किया, जिसका प्रकाशन सन् 1958 में हुआ। 1984 ई. में इनका निधन हो गया।

दुखहरन दास–ये गाजीपुर (उ.प्र.) के निवासी तथा संत मलूकदास के शिष्य थे। इन्होंने 'पुहुपावती' नामक प्रेमाख्यान काव्य का प्रणयन संवत् 1726 में किया। इनकी काव्य भाषा अवधी है अतः अवधी के विकास में कवि दुखहरन दास तथा इनकी कृति पुहुपावती गणनीय है।

दुर्गादास- ये जगजीवन दास के सत्यनामी सम्प्रदाय के एक सिद्ध संत थे। इनका जन्म एक कुर्मी क्षत्रिय कृषक परिवार में सन् 1871 ई. में हुआ था, जो ग्राम मोहम्मदपुर अमेठी (मोहनलाल गंज), लखनऊ में स्थित था। इनके गुरू का नाम गुरूदत्त दास था। 'अमृतवाणी' इनके मुखारबिन्द से निकले हुए वचनों का संग्रह है, जिसका प्रकाशन सन् 1982 में लखनऊ से हुआ। 'दुर्गाड्ठा' एवं 'बोधदेव' नामक रचनाएँ भी उनके नाम से मिलती हैं। इनका शरीरान्त 15 जून 1959 को हुआ।

दुलारे–ये रायबरेली जनपद के निवासी हैं। इन्होने अवधी भाषा में 'अवध मा राना भयो मरदाना' नामक रचना प्रस्तुत की।

दूज दास–ये दादू दयाल के शिष्य थे। इनका जीवन काल सं. 1640 से सं. 1680 के मध्य रहा, ऐसा अनमान किया जाता है। इन्होंने 'ग्रंथ चौपाई', 'बावनी ग्रंथ', पन्द्रह तिथि, उपदेश चौपाई, चित्रावली आदि ग्रन्थों का प्रणयन किया है। इन्होने अधिकांश अवधी भाषा का प्रयोग किया है।

दूधनाथ शर्मा 'श्रीश'–इनका जन्म 15 सितम्बर 1920 ई. को मेहरवाँ गाँव, जिला जौनपुर में हुआ था। इधर ये कानपुर के निवासी हैं। श्रीश जी मंच के सफल गीतकार निवासी हैं। इनके गीत जहाँ एक ओर विरह वेदना से आपूर्ण हैं तो दूसरी ओर समूची ग्राम्य संस्कृति अपने समग्र अवयवों के साथ इनके गीतों में सिमट आई है। कहीं कवि लोक-चेतना को झकझोरता हुआ दृष्टिगत होता है तो कहीं गाँव की मनोहरी प्रकृति में रमता हुआ। 'फूलपाती' श्रीश जी का एक प्रसिद्ध अवधी काव्य संग्रह है, जिसमें देश का गौरव गान है।

संत दुलारे दास–इनका जन्म संवत 1952 तथा देहावसान संवत 2064 विक्रमी है। इनका जन्म ग्राम कमोली बाराबंकी में हुआ। इनके पिता का नाम श्रीकृष्ण दास था। इन्होंने दोहा-चौपाई छन्दों में सतनाम सम्प्रदाय के प्रवर्तक संत जगजीवन दास का प्रामाणिक चरित्र जगजीवन चरित लिखा। जो अवधी भाषा में है। इसमें सतनाम पंच की वृहत चर्चा है। यह ग्रंथ प्रकाशित है।

दूधनाथ शुक्ल 'करुण'- करुण जी अपने समय के प्रख्यात अवधीसाहित्यकार थे। इन्होने अपना साहित्य मंचों तथा पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

डॉ. देवकीनन्दन श्रीवास्तव 'नन्दन'- नन्दन जी का जन्म 1 फरवरी सन् 1928 ई. को प्रतापगढ़ जनपद के नारायणपुर ग्राम में हुआ था। इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी में पी-एच.डी. की उपाधि ग्रहण की। कुछ समय तक ये प्राध्यापक रहे। तत्पश्चात शान्ति निकेतन (विश्वभारती) चले गये। संप्रति सेवा निवृत्त हैं। इन्होंने अवधी, ब्रज एवं खड़ी बोली में समान रूप से लिखा है। 'बरवै-सतसई' उनका अवधी काव्य है, जिसमें लोक जीवन का वैविध्य द्रष्टव्य है।

देवतादास–इनका जन्म राजातारा, जिला प्रतापगढ़ सन् 1934 ई. मुं हुआ। स्कूली शिक्षा से वंचित होकर भी इन्होने स्वाध्याय के बल पर पर्याप्त ज्ञानार्जन किया। देवतादास को कविता की प्रेरणा बाल्यकाल में ही मिली थी। ये पूर्वी अवधी के कवि हैं। इनका विशेष योगदान 'बिरहा क्षेत्र' में है। अनेक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्यायें इनके बिरहा गीतों में मुखरित हुई हैं। वस्तुतः देवतादास जी बिरहा के दंगल में अपराजेय रहे हैं। इनके अनेक शिष्य इस शैली के विकास में तत्पर हैं। कवि देवतादास ने अपने विरह-गीतों में आध्यात्मिक विरह को भी अभिव्यक्त किया है।

देवतादीन–इन्होंने अवधी भाषा में कज़री आदि तमाम (कविताएं) सृजित कर अवधी के प्रति स्नेह व्यक्त किया है। इनका जीवन-वृत्तान्त अप्राप्य है।

देव प्रकाश द्विवेदी 'देव'- फैजाबाद के निवासी देव जी अवधी भाषा के सक्रिय सेवक हैं।

देवानन्द साहब–इनका जन्म सन् 1900 ई. के आस-पास लखनऊ जनपद के गोसाईगंज क्षेत्र में हुआ था। ये संत परम्परा के धनी थे। इन्होने अवधी भाषा में पदों की रचना की है, जो सुगठित एवं परिष्कृत है।

देवीप्रसाद पाण्डेय– ये ग्राम अदिलपुर, पो. हैबरिया, जिला-बहराइच के निवासी हैं तथा पड़ोस में ही प्राइमरी पाठशाला में सहायक अध्यापक के पद पर कार्यरत हैं। इन्होंने अवधी भाषा में पर्याप्त काव्य सृजन किया है।

देवीप्रसाद शुक्ल 'प्रणयेश'- ये नारियल बाजार कानपुर के निवासी हैं। इनकी कविताएँ गंभीर विषयों से सम्बद्ध हैं। इनकी 'मनुष्यता' नामक कविता अति विशिष्ट है।

देवीरत्न अवस्थी 'करील'- इनका जन्म रायबरेली के बरदर नामक स्थान में सं.1966 (आश्विन6) को हुआ था। देवार्चन, लोकरीत, सर्वोदय 'मधुपर्क' आदि इनकी रचनाएं हैं। स्फुट रूप से करील जी ने अवधी में भी काव्य-प्रणयन किया है।

देवीशंकर द्विवेदी 'बराती'- इनका जन्म उत्तर प्रदेश के जिला उन्नाव के ग्राम 'कटोरी कला' में हुआ। इन्होने उन्नाव और आगरा में शिक्षा अर्जित की। आगरा विश्वविद्यालय से इन्होंने एम.ए., पी-एच. डी. की उपाधि अर्जित करके सागर, कुरूक्षेत्र, उज्जैन में अध्यापन कार्य किया । इनका शोध विशेषतः बैसवारी अवधी के भाषा वैज्ञानिक पक्ष पर किया गया कार्य 'बैसवाड़ी शब्द सामर्थ्य' महत्वपूर्ण है। अवधी कविता के क्षेत्र में 'बराती' जी का उल्लेखनीय स्थान है। अब तक इनके दो ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं- 1. बबुरी के कांटे, 2. बण्टाधारा। कवि ने सामाजिक कुरीतियो से सम्बद्ध अनेक रचनायें प्रस्तुत की हैं- 'या परसाल की बात हवै' में चेचक सम्बन्धी अन्धविश्वासों को मार्मिक दिग्दर्शन कराया गया है। 'बराती' जी की भाषा प्रवाहमयी, आनुप्रासिक, पुष्ट, प्रौढ़ बैसवारी अवधी है।

द्वारकाप्रसाद मिश्र–मिश्र जी आधुनिक अवधी काव्यमाला के सुमेरु हैं। इनका जन्म सन् 1901 में हुआ। बी.ए., एल.एल.बी. की शिक्षा प्राप्त करके मिश्र जी ने साहित्यिक राजनीतिक और सामाजिक सभी क्षेत्रों में समान रूप से उच्च ख्याति प्राप्त की। आधुनिक युग के चाणक्य तथा कृष्ण-कथा के सूरदास, मिश्र जी की प्रतिभा से हिन्दी पाठक सुपरिचित हैं। ये राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन में अनेक बार जेल गए। मिश्र जी मध्य प्रदेश में लगभग पाँच वर्ष तक गृह-मंत्री, फिर मुख्यमंत्री और अनेक प्रकार के महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित कर चुके हैं। जबलपुर से प्रकाशित 'श्री शारदा' तथा 'लोकमत' आदि पत्रों के संपादक भी रह चुके हैं। 'सारथी' नामक साप्ताहिक का संपादन इन्हीं के कुशल हाथों से हुआ। सेठ गोविन्ददास के सम्पर्क में इन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में प्रवेश किया। प्राचीन संस्कारों और धार्मिक आदर्शो के प्रति निष्ठावान मिश्र जी ने 'कृष्णायन' नामक महाकाव्य की रचना की। 'हिन्दुओं का स्वातंत्र्य प्रेम' नामक दूसरा प्रकाशित ग्रंथ मिश्र जी के प्रखर चिन्तन का प्रमाण है। समाजगत तथा साहित्यिक प्रभाव के कारण इनकी भाषा अत्यन्त परिष्कृत एवं सुष्ठु है।

द्वारिकाप्रसाद 'प्रेमी'- इनका जन्म रायबरेली के मचितपुर क्षेत्र में सन् 1930 में हुआ था। इन्होंने ज्वलंत सामाजिक समस्याओं को अपनी अवधी कविता का विषय बनाया है।

द्वारिकाप्रसाद यादव 'यदुचन्द'- जन्म तिथि 1906 ई., निधन तिथि 1983 ई.। लखनऊ जनपद के सिसेंडी ग्राम के निवासी यदुचंद जी अवधी में हास्य व्यंग्य के सफल रचनाकार हैं। यदुचन्द जी जिला परिषद् लखनऊ और बाद में नगर पालिका लखनऊ में अध्यापक रहे। ये मंचीय संस्कृति से दूर एक मौन साधक थे। स्वभाव से विनोदी थे। इनके व्यंग्य बड़े तीखे होते थे। 'बलम बिदेसिया', 'कांग्रेसी' आदि रचनायें इसकी उदाहरण हैं। समाज की विकृतियों पर इन्होंने बड़े तीव्र व्यंग्य किये हैं। इनकी अवधी बैसवारी प्रधान है, जिसमें लोकभाषा का अनगढ़ सौन्दर्य है। भाषा और शिल्प दोनों पर समान अधिकार है। इनकी रचनायें विशेषतः माधुरी , सुकवि, सुकवि विनोद, आदि में प्रकाशित होती रही है।

धरनीदास–ये छपरा जिला (बिहार) के माँझी गांव में सम्वत् 1713 में जनमे एक सन्त कवि हैं। पिता का नाम परशुराम दास था। 'सत्य प्रकाश' एवं 'प्रेम प्रकाश' इनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। इनकी रचनाओं में अवधी का साहित्यिक रूप उपलब्ध होता है। इनकी भाषा पर ब्रज और अन्य जगह इनका जन्म सं. 1632 एवं रचनाएँ 'प्रेमपरगास', 'शब्द प्रकाश', 'रत्नावली' मिली हैं।

धर्मदास –ये बांधवगढ़ निवासी थे एवं कबीरदास के प्रधान शिष्यों में से एक थे। कहा जाता है कि संवत् 1575 में कबीर के गोलोकवासी होने पर ये ही गद्दी के उत्तराधिकारी बने थे। कबीर वाणी को 'बीजक' में संकलित करने का श्रेय इन्हीं को है। इनकी रचनाएँ 'धनी धरमदास की बानी' नाम से संकलित है। इन पर कबीरदास जी का प्रभाव है। किंतु इन्होने खण्डन-मण्डन से विशेष प्रयोजन न रखकर प्रेम तत्व को ही लेकर अपनी वाणी का प्रसार किया। इनकी भाषा सरल सुस्पष्ट एवं अवधी से युक्त है। इनका जन्म सं. 1500 में तथा मृत्यु सं. 1600 में हुई थी। इनकी रचनाएं हैं- द्वादश पंथ, निर्भय ज्ञान, कबीर ज्ञानी।

धीरदास- ये बैसवाड़ा क्षेत्र के निवासी एक भारतेन्दुयुगीन अवधी कवि रहे है।

नंदकिशोर शाकिर –शाकिर जी का जन्म 22 अगस्त 1920 ई. को सीतापुर जनपद के महमूदाबाद कस्बे में हुआ था। ये एक क्रांतिकारी के रूप में कांग्रेस पार्टी से सम्बद्ध थे और पूर्व प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री जी के सन्निकट थे। 'बड़कवा मुच्याटा' आल्हा छंद में इनकी सुप्रसिद्ध रचना है। सबकार बंद, बाजार बंद, भयउ रचनाएं है। 24 जून 1931 ई. को इनका असामयिक निधन हो गया।

ननकऊ अवस्थी–ये रानी कटरा, लखनऊ के निवासी एवं आधुनिक अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने 'कृतिवास रामायण' का सन् 1959 में बंगला भाषा से अवधी में अनुवाद सम्पन्न किया था।

नरपति व्यास–ये 19वीं शताब्दीं के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने सं. 1862 में 'नल दमयंती की कथा' नामक प्रेमाख्यान का प्रणयन किया।

नरहरि रामदासी–नरहरि जी समर्थ संप्रदाय के संत थे। ये विक्रम सं. 1707 से 1757 तक वर्तमान थे। इन्होंने अवधी में स्फुट रचनाएँ की हैं।

नसीर–इनका जन्म जमानिया (गाजीपुर जनपद) नामक ग्राम में हुआ था। 'नसीर' ने उर्दू के कवि फिगार की कृति 'इश्क़ नामा' को आधार बनाकर 'युसुफ जुलेखा' नामक काव्य की रचना की। इस कृति का रचना काल सं. 1974 है। इसकी भाषा पूर्वी अवधी है।

नसीरुद्दीन सिद्दीकी–रामनगर, रीवाँ निवासी सिद्दीकी जी अवधी साहित्यसेवी हैं। इन्होने अवधी साहित्य की गरिमा बढ़ाने में पूरी निष्ठा अभिव्यक्त की है।

नाभादास–'भक्तमाल' के रचयिता भक्त नाभादास का अवधी भाषा में रचित 'रामचरित्र के पद' नामक ग्रंथ मिलता है। शेष विवरण अप्राप्य है।

नित्यनाथ–इनका जीवन वृत्तांत अप्राप्य है। इन्होंने 'उड्डील' (जंत्र-मंत्र) नामक ग्रंथ का प्रणयन

किया है, जिसमें अवधी भाषा का प्रयोग प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

निर्झर–निर्झर जी प्रतापगढ़ के निवासी हैं। इन्होंने अवधी साहित्य को जो अपनी सेवा अर्पित की है वह स्वयं में अवधी प्रेम का प्रतीक है।

निसार (शेख)– इनका जन्म 17वीं शती में हुआ था। ये शेखपुर नामक ग्राम के निवासी थे। इनके पिता का नाम गुलाम मोहम्मद था। इन्होंने सम्वत् 1790 में 350 युसुफ जुलेखा नामक काव्य का प्रणयन किया। युसुफ जुलेखा के अतिरिक्त मेहरनिगार, रस मनोज, दीवान आदि इनके ग्रंथ उल्लेखनीय हैं।

नीलम बालकृष्ण– रायबरेली के निवासी अवधी साहित्य के रचनाकार हैं।

नूर मोहम्मद–इनका जन्म सं. 1770 के लगभग और मृत्यु लगभग 1830 में हुई । ये जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि हैं। इनकी प्रेमाख्यानक काव्य कृति है- इन्द्रावती, नलदमन, अनुराग-बाँसुरी। ये कृतियाँ अवधी भाषा में सृजित हैं। इस प्रकार सन् 1157 हि. और 1178 हिजरी सन् के मध्य कवि ने 'नल-दमन' की रचना की होगी। अतएव नूर मोहम्मद का रचना काल 1107 और 1193 हिजरी सन् के मध्य ठहरता है। अनुराग बाँसुरी के सम्पादक डॉ. चन्द्रबली पाण्डेय के अनुसार इनका निवास स्थान सबरहद शाहगंज तहसील में स्थित है, किन्तु यहाँ इसके पूर्व किसी नसीरूद्दीन का स्थान होने की सूचना नहीं है। श्री चन्द्रबली पाण्डेय की एक और मान्यता है कि कवि अपने अंतिम दिनों में फूलपुर, आजमगढ़ में रहने लगे थें यहीं इनकी ससुराल थी। ये कट्टर मुसलमान तथा शिया सम्प्रदाय से सम्बद्ध थे। इन्होंने अपनी रचना में इसके पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत किये हैं।

पंचम–ये रायबरेली जनपद में स्थित डलमऊ क्षेत्र के निवासी रहे है। भारतेन्दुयुगीन अवधी कवियों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

पतितदास- ये बैसवारा क्षेत्र के गिरधरपुर के निवासी थे। इन्होंने अवधी गद्य में दो ग्रंथ- वैद्यक कल्प, सर्वग्रंथोक्ति लिखा था, जो आयुर्वेद विषयक ग्रंथ सिद्ध हुए।

पन्नगेश जी –ये अयोध्या के निवासी एवं सुविख्यात अवधी रचनाकार हैं।

परमात्मादीन–ये बैसवारा क्षेत्र के 19वीं शताब्दीं के अवधी रचनाकार हैं।

परमानंद जड़िया–जड़िया जी का जन्म सं. 1983 में 51, खत्रीटोला मशकगंजैं, लखनऊ में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री बैजनाथ जड़िया था। ये खड़ी बोली (गद्य-पद्य), ब्रजभाषा (काव्य), अंग्रेजी (काव्य) के साथ संस्कृत के भी अच्छे जानकार हैं।इन्होंने चार महाकाव्य प्रणीत किये हैं। ये मूलतः परम्परावादी एवं भक्त कवि हैं। इनकी रचनाएं हैं- प्रेम प्रदीप (बालकाव्य), मारूतिमहिमा (हनुमान भक्ति काव्य), राम रसायन (राम काव्य), अनतर्ध्वनि एवं दर्पण। 'न्यूज इन वर्स' (अग्रेजी कविताओं का संकलन)। 'वीर अर्जुन' नामक अवधी महाकाव्य का प्रणयन करके जड़िया जी ने अवधी साहित्य क्षेत्र में धाक जमा दी है।

पलटू साहब- इनका समय अनुमानतः सं. 1827 के लगभग है और जन्म स्थान फैजाबाद जिले का नागपुर अलालपुर नामक ग्राम है। इनके गुरू का नाम गोविंद साहब था, जो भीखा के शिष्य थे। इन्होंने अवधी में पदों, साखियों की रचना की है।

पवन सुल्तानपुरी–सुल्तानपुर निवासी पवन जी एक उच्चकोटि के अवधी साहित्यकार हैं।

पहलवानदास–ये रायबरेली जनपद के भीखीपुर क्षेत्र के संत परम्परा के कवि हैं। इनका जन्म सं. 1776 में हुआ था। इन्होंने अवधी भाषा में 'उपखान विवेक' नामक ग्रंथ का प्रणयन किया है।

पारसनाथ भ्रमर–इनका जन्म सन् 1930 ई. में मोहल्ला ब्रह्मपुरी नगर बहराइच में हुआ था। सन् 1950 के आसपास से भ्रमर जी कवि सम्मेलनों में दिखाई पड़ने लगे थे। आगे चल कर मंचीय कवि के रूप में वे लोकप्रिय हुए। अवधी में अत्यन्त सुन्दर लोकगीत लिखने के साथ-साथ खड़ी बोली में भी

गीत और गज़ल लिखे हैं। सन् 1980 में ये विरक्त (संन्यासी) हो गए। स्वामी के रूप में नया नाम स्वामी 'नादान्ताद्वैतघन' हो गया। इनकी काव्यधारा में परिवर्तन आया और ये भजन लिखने लगे जो बड़े हृदयस्पर्शी हैं। भ्रमर जी की अवधी की रचनायें हैं-अरहर के ख्यातन मा आय गईं फलियाँ। 'आयेउ ने फगुनवा बहुरि मोरे अँगना, काह कही कुछ कहत न आवै, साहब, कउन मोर यह बन्दा, राम-दोहाई, मनुवा रोजु करै मनमानी, देखउ देखन जोग तमासा, अइसन ब्याह न देखन माई, इत्यादि 'सुरतिमई' नाम से इनका अवधी काव्य-संकलन प्रकाशित है।

डॉ. पुत्तूलाल शुक्ल 'चन्द्राकर'- सीतापुर जनपद के पैंदापुर नामक गाँव में जन्में चन्द्राकर जी अवधी के एक समर्पित साहित्यकार हैं। इनका 'मचानू' नामक मुक्तककाव्य अति विशिष्ट है। संप्रति ये लखनऊ में निवास कर रहे है।

पुरूषोत्तम–पुरूषोत्तम जी मुसाफिर खाना सुल्तानपुर के पास दादर नगर के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम क्षेमानंद था। ये जाति के ब्राह्मण थे। इन्होंने अवधी भाषा में 'धर्मास्वमेध' नामक कृति का प्रणयन सं. 1558 (चैत्र शुक्ल प्रतिपदा) में किया था।

पुरेन्द्रपाल सिंह- पुवायाँ, शाहजहाँपुर निवासी सिंह साहब अवधी कवि हैं। इनकी रचनाएँ बड़ी ही उत्कृष्ट एवं प्रासंगिक हैं।

पुष्पेन्दु जैन- इनका जन्म लखनऊ शहर के यहियागंज मुहल्ले में सन् 1914 ई. में एक मध्यवर्गीय जैन परिवार में हुआ था। ये आर्थिक तंगी के कारण अधिक शिक्षा नहीं प्राप्त कर सके, फिर भी स्वाध्याय एवं परिश्रम के बूते हाईस्कूल पास कर अध्यापन कार्य करने लगे। छोटे-मोटे व्यवसायों को इन्होंने चलाते हुए अपना लेखन कार्य शुरू किया। 'बसंत बहार' इनकी कविताओं का संकलन है, जो प्रकाशित हो चुका है। इसमें 80 गीत, छंद एवं गज़लें संकलित हैं। इनकी अवधी रचना 'घास' अति श्रेष्ठ है। अल्पावस्था में ही 28 मई 1963 को इनका देहावसान हो गया।

पुहकर–ये 17वीं शताब्दी के हिन्दी प्रेमाख्यानकार हैं। अपने आख्यानों में इन्होंने पश्चिमी अवधी को माध्यम भाषा बनाया है। 'रसरतन' इनका हिन्दी प्रेमख्यान है, जिसका रचनाकाल सं. 1675 है।

प्रताप नारायण मिश्र–मिश्र जी का जन्म बैजेगाँव, जिला उन्नाव में सन् 1853 में हुआ था। कालांतर में ये कानपुर आ गए, जहाँ इनकी शिक्षा दीक्षा हुई। मिश्र जी स्वभावतः मनमौजी थे इसलिए व्यवस्थित रूप से ये अध्ययन या जीवनयापन में नहीं प्रवृत्त हुए। इन्हें संस्कृत, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी और बंगला का पर्याप्त ज्ञान था। लावनी के ये शौकीन थे, साथ ही ख्याल के भी। इन्होंने पारसी थियेटर के विरोध में अपना रंगमंच खड़ा किया। मिश्र जी ने 'ब्राह्मण' नामक पत्र का वर्षो तक सम्पादन किया और कविता, निबंध, नाटक तथा कई स्फुट कृतियां प्रस्तुत कीं। ब्रजभाषा की समस्यापूर्ति में ये बड़े पटु थे। अपनी सामयिक राजनीतिक परिस्थितियों से सम्बद्ध होने के कारण इन्होंने अवधी को भी अपना माध्यम बनाया । मिश्र जी की अवधी कविता का उत्कृष्ट रूप है इनके द्वारा रचित लोकाख्यान आल्हा। 29 वर्ष की अल्पायु में मिश्र जी का देहावसान हो गया।

प्रभुदयाल वैद्य- वैद्य जी हरदोई जनपद के मझिला क्षेत्र के निवासी एवं प्रसिद्ध अवधी साहित्यकार रहे हैं।

प्रभुनाथ शास्त्री –प्रभु जी ने पर्याप्त साहित्य सर्जना की है। उस सृजन में अवधी साहित्य को भी पर्याप्त स्थान मिला है अतः अवधी साहित्य-सेवा में इनका स्थान महत्त्वपूर्ण है।

प्रयागदत्त–द्विवेदी युगीन अवधी काव्यधारा को जीवनदान देने वाले कवियों में इनका विशेष योगदान है।

प्राणचन्द चौहान–प्राणचन्द ने सन् 1610 ई. में अवधी भाषा में 'रामायण महानाटक' नामक ग्रंथ

की रचना की। 'रामायण महानाटक' तुलसीदास के महाकाव्य 'रामचरितमानस' वाली दोहा-चौपाई शैली में लिखा गया है।

प्राणदास–प्राणदास दादूदयाल के शिष्य थे, जो गृहस्थाश्रम में निरन्तर साधनारत रहे। इनका देहावसान सं. 1688 में हो गया था। इनकी कई अवधी साखियाँ मिलती है।

प्राणनाथ- प्राणनाथ बैसवाड़ा के ब्राह्मण थे। ये सुमेरपुर, उन्नाव के निवासी थे। इनकी उपस्थिति 1858 वि. में थी। इनकी कृतियाँ हैं- 'चक्रव्यूह', 'बभ्रुवाहन', 'जीवननाथ कला', 'चक्रव्यूह' का प्रणयन-काल सं. 1850 और बभ्रुवाहन का सं. 1868 रहा है। ये अपनी कविताओं में अपना उपनाम 'जनकवि' लिखते थे।

प्रियादास–व्यवहार पाद नामक ग्रंथ इनके द्वारा प्रणीत है, जिसमें अवधी का गद्य रूप प्रयुक्त हुआ है। इनकी अवधी ठेठ देशज तथा बोलचाल की भाषा है।

प्रेमनारायण दीक्षित–इनका जन्म उन्नाव जिले के मौरावाँ ग्राम में हुआ था। इन्होंने एम.ए., एल.एल.बी. तक शिक्षा ग्रहण की। अवधी साहित्य के प्रति निष्ठा रखते हुए बैसवाड़ा के अवधी कवियों का वृत्तांत नामक ग्रंथ के सृजन का कार्य शुरू किया, किन्तु सन् 1945 में असामयिक निधन होने से यह कार्य अधूरा रह गया था, जिसे बाद में पूरा किया गया।

प्रेमप्रकाश वर्मा–इनका जन्म सन् 1930 में बिहार में हुआ था। इनका पूर्वनाम प्रो0 फूलन प्रसाद वर्मा था। इन्होंने रामचरितमानस के आधार पर 1969 ई. में आयोजित गांधी शताब्दी समारोह के अवसर पर 'गांधीचरितमानस' नामक अवधी काव्य का सृजन किया है, जिसे विद्वानों ने महाकाव्य की संज्ञा से विभूषित किया है।

प्रेमलता जी- ये आधुनिक युग की भक्ति परम्परा से सम्बद्ध अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने अवधी भाषा के माध्यम से रामभक्ति शाखा के रसिकोपासना के सिद्धांतों पर आधारित 'वृहत उपासना रहस्य' नामक ग्रंथ प्रणीत किया था। इनका जीवन काल सन् 1811 से 1940 ई. तक रहा।

फकीरदास- इनका जन्म बहराइच जनपद के नरोत्तमपुर ग्राम सं. 1827 वि. की अषाढ़ शुक्ल पक्ष पंचमी को हुआ था। आज भी उस ग्राम में स्थित गद्दी इसका प्रमाण है। उक्त तिथि पर यहाँ इनका जन्मोत्सव मनाया जाता है। पिता के स्वर्गवासी होने के पश्चात् ग्राम में रहने लगे, किन्तु वहाँ की परिस्थिति अनुकूल न होने के कारण पुनः अपने गाँव लौट गए। इनके पुत्र एवं शिष्य का नाम क्रमशः जानकीदास एवं सुरजीदास था। इनकी रचनाएँ हैं- 'आनंदवर्धिनी', 'ज्ञान की गारी', 'होरी ज्ञान की', 'ज्ञान का बारहमासा', बीजा ग्रंथ। इनमें से एकमात्र 'ज्ञानवर्धिनी' रचना ही उपलब्ध है, जिसका रयनाकाल सं. 1884 वि. है। इनकी रचनाओं में अवधी भाषा का ही प्रयोग हुआ है। इनका निर्वाणकाल सं.1908 वि. है।

फारूक हुसैन 'सरल'–सीतापुर निवासी सरल जी अवधी के प्रतिनिधि कवि है।

फूलचन्द्र मिश्र 'चंद्र'- दौलतपुर, रायबरेली निवासी मिश्र जी अल्पख्यात अवधी कवि है।

बंशीधर शुक्ल- शुक्ल जी आधुनिक अवधी के सम्राट कहे जाते है। यद्यपि इन्होंने ब्रज और खड़ी बोली में भी कवितायें की हैं, किंतु इनके कवि रूप की पूर्ण और मुखर अभिव्यक्ति 'अवधी' में ही हुई है। इनका जन्म सन् 1904 ई. में लखीमपुर खीरी जनपद के मन्योरा ग्राम में हुआ था। इनके पूर्वज बीघापुर (उन्नाव) के निवासी थे। कालान्तर में ये लखीमपुर खीरी में बस गये। इनके पिता पं. छेदीलाल शुक्ल एक प्रसिद्ध अल्हैत थे। इन्होंने उर्दू और संस्कृत दोनों का अध्ययन किया। इनका पारिवारिक जीवन निरन्तर अभावग्रस्त रहा। शुक्ल जी क्रान्तिकारी स्वभाव के व्यक्ति थे। इन्होने अपनी जन्मभूमि की रक्षा एवं सेवा का संकल्प लिया और 1921 ई. में राजनीति में सक्रिय हो गये। इस बीच शुक्ल जी कई दलों व संगठनों से जुड़े तथा विधायक भी बने। मस्त प्रकृति वाले शुक्ल जी ने आकाशवाणी के अन्तर्गत 'देहाती

प्रोग्राम' का संचालन भी किया। शुक्ल जी मूलतः ग्राम्य जीवन के कवि थे। अवध के लोकजीवन और संस्कृति से वे पूर्णतया परिचित थे। यहाँ की (अवध) की सांस्कृतिक चेतना से अभिभूत होकर कवि ने अपनी क्षेत्रीय जनभाषा में ही काव्यरचना कर अवधी की श्रीवृद्धि की है। इनकी प्रारम्भिक कवितायें हैं-खूनी परचा, दिल्ली खडयन्त्र केस, किसान की अर्जी आदि। इन्होंने कारावास की अवधि में अनेक काव्य रचनाएँ जेल की दीवारों पर कोयले से लिखीं। पुस्तक के रूप मे शुक्ल जी की सर्वप्रथम रचना 'आल्हा सुमिरिनी' थी, जो 50 छंदों की हैं। इसके बाद 'कृषक विलाप', 'बेटी बेचन', 'युगल चण्डालिका', ' मेलाघुमिनी', 'कुकुडूकूँ', राष्ट्रीय गान आदि काव्य कृतियाँ प्रकाशित हुई। आकाशवाणी सेवा के दौरान इन्होंने कई रचनायें की। स्वतंत्रता-संग्राम, दहेज, मजदूर, कश्मीर आल्हा, दिल्ली-दरबार, तृप्यन्ताम, श्री कृष्ण चरित्र जैसे रेडियों शब्दों का एक अवधी भाषा शब्दकोश तथा एक अवधी लोकोक्तियों का संग्रह तैयार किया था। इनकी कविताओं में प्रकृति के मनोरम, किंतु स्वाभाविक दृश्य ग्रामीणों की विपन्नता, दुरवस्था, लोक-जीवन, संस्कृति, लोक-विश्वास, ग्रामीणों की जीवन-शैली साकार हुई है। इन रचनाओं में कवि का प्रकृति-प्रेम, राष्ट्र-प्रेम, तथा भक्ति-भाव भी मुखाग्र हुआ है। समाज में व्याप्त कुसंस्कार, भ्रष्टाचार, पाश्चात्य संस्कृति का अन्धानुकरण आदि का कवि ने कट्टर विरोध करते हुए अपनी समाज सुधार भावना तथा भारतीय संस्कृति के प्रति अपना आस्था व्यक्त की है। सामन्ती व्यवस्था के विरोधी शुक्ल जी ने सामन्तों, जमींदारों, अफसरों, नेताओं आदि द्वारा किये गये शोषण के विरूद्ध आजीवन धर्मयुद्ध किया है। जागरण की भावना से प्रेरित हो कवि ने अपनी कविताओं में साम्यवादी प्रतिष्ठा का आहवन किया है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश के कर्णधारों में किस प्रकार दायित्व बोध लुप्त हो गया है, इससे कवि मर्माहत हो उठा है। इसमें देशज शब्दों का बाहुल्य है। इनकी भाषा लोकोक्तियों, मुहावरों से सम्पन्न है। वर्ण-विन्यास सुगठित है। कवि ने निःसंकोच यत्र-तत्र अरबी, फारसी तथा अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग किया है।

बचनेश त्रिपाठी–संडीला, हरदोई निवासी त्रिपाठी जी अवधी के ख्याति प्राप्त साहित्यकार हैं।

बच्चू लाल- ये बैसवारा क्षेत्र निवासी 19वीं शती के उत्तरार्द्ध के अवधी साहित्यकार है।

बदरी प्रपन्न 'त्रिदंडी स्वामी'–इनका जन्म 1890 में सूट्ठा, रायबरेली में हुआ था। ये राधाभाव प्रधान भक्त कवि थे। 'विरहविनय पचीसी', 'भजन-संग्रह', और 'संक्षिप्त रामायण', इनकी अप्रकाशित अवधी काव्य कृतियां हैं। 1950 में इनकी मृत्यु हो गयी।

बद्रीप्रसाद धुरिया–इनका जन्म मझौली जिला प्रतापगढ़ मुं एक साधारण कृषक परिवार में हुआ था। धुरिया जी की रूचि श्रृंगार में अधिक जाग्रत हुई है। इन्होंने कजली लोकगीतों के माध्यम से रामकृष्ण की कथा सविस्तार कही है। इनकी भाषा सरल और निराडम्बर है। ये पूर्वाचल के लोकप्रिय कवि हैं।

बद्रीप्रसाद 'पाल'–पाल जी की हास्य और व्यंग्यकार के रूप में प्रसिद्धि है। इनकी शैली व्यापक दृष्टिकोण की परिचायक है। 'बाबू साहब का ऐश्वर्य' नाक इनकी रचना बहुत सराही गयी है।

बनादास–इनका जन्म जनपद गोण्डा के अन्तर्गत अशोकपुर नामक ग्राम में सन् 1821 ई. में हुआ था। इनके पिता का नाम गुरूदत्त सिंह था। घर की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण इन्होंने भिनगा राज्य में नौकरी कर ली। तत्पश्चात् इकलौते पुत्र की मृत्यु हो गई। पुत्रशोक के कारण इन्होंने नौकरी छोड़ संन्यास धारण कर लिया और अयोध्या में रहने लगे। अयोध्या में ही सन् 1892 ई. में इनका देहावसान हो गया। इनके द्वारा रचित 64 ग्रंथ मिलते हैं, जिनमें दो ग्रंथ– 'उभय प्रबोधक रामायण' और 'विस्मरण सम्हार' डॉ. भगवती सिंह के सम्पादकत्व में छप चुके हैं। इनकी भाषा अवधी है, यद्यपि बीच-बीच में ब्रज के प्रयोग भी दिख जाते हैं। बनादास की अवधी कविता बड़ी प्रेरणादायिनी एवं अनुभूतिप्रवण है। ये अवधी के संत-काव्य के शीर्षस्थ कवि कहे जा सकते हैं।

बनारसी दास–इनका जन्म सं. 1646 में हुआ। पिता का नाम खरग सेन जैन और रचनाकाल सं. 1668 था। इन्होंने अपनी कृति में अवधी भाषा का प्रयोग किया है, जो संस्कृतनिष्ठ शब्दावली से भी युक्त है।

बलई मिसिर- अवधी साहित्य को समृद्ध करने में लोक-पण्डितों का प्रशंसनीय योगदान रहा है। उनमें से मिसिर जी एक हैं। इन्होंने अपने जीवन के अनुभवों को पद्यबद्ध करते हुए जनसामान्य को नीतिपरक साहित्य प्रदान किया है। इनकी गणना घाघ, भड्डरी कवियों की श्रेणी में होती है।

बलदू दास- यह जनपद बाराबंकी के संत थे। 'राम कुंडलिया' नामक अपनी रचना में इन्होंने प्रमुखतः अवधी का प्रयोग किया है।

बलदेव प्रसाद–वर्तमान अवधी के लोक गीतकारों में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। इनका 'निरवाही' गीत विशिष्ट है।

बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस'- 'पढ़ीस' जी का जन्म सीतापुर जिले की सिधौली तहसील में अम्बरपुर गांव में अष्टमी, शुक्ल पक्ष भाद्र पद सं. 1955 वि. को हुआ था। इनके पिता श्री कृष्णकुमार दीक्षित जन्म से खीरी जिले के कलुआ नकारा नामक गांव के निवासी थे, किंतु अम्बरपुर गांव के परिवार की कन्या यशोदा देवी से विवाह होने पर ये अपनी ससुराल में ही बस गये। पढ़ीस जी को अवधी, ब्रज के साथ-साथ बंगला, उर्दू, अंग्रेजी आदि का अच्छा ज्ञान था। इन्होंने आकाशवाणी, लखनऊ के 'पंचायत घर' कार्यक्रम को काफी समय तक संचालित कर उसकी गरिमा में अभिवृद्धि की। इन्होंने 'चकल्लस' नामक काव्य-संग्रह समाज को समर्पित करके एक विशिष्ट दिशा निर्देश किया है, साथ ही साथ मनोरंजन भी। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावना अति उत्कृष्ट रूप में परिलक्षित होती है। कविताओं में व्यंग्य, विनोद का पुट है और सामाजिक विसंगतियों का विरोध भी। इसमें भाव-वैविध्य के दर्शन होते हैं। इनकी भाषा ठेठ अवधी है, अतः जनसामान्य को हृदय ग्राह्य है। सहज अभिव्यक्ति उसका मुख्य बिन्दु है। ये अनेक पदों पर रहे है। संगीत सम्मेलनों में कई बार स्वर्ण पदक से सुशोभित किये गये। छुआछूत जैसी सामाजिक कुरीतियों का इन्होंने डटकर मुकाबला किया, खासकर अछूतों के लिए पाठशाला खोली। उच्च कुलीन होने के बावजूद हल जोतकर ब्राह्मण वर्ग में परिव्याप्त अंधविश्वास को तोड़ने का भरसक प्रयास किया। हल जोतते समय घातक चोट लग जाने के कारण इस मूर्धन्य अवधी कवि का 27 जून सन् 1942 को देहावसान हो गया।

बलभद्र सिंह पँवार- अवधी कवि पँवार जी बहराइच जनपद के बेहड़ा के निवासी हैं। इन्होंने अवधी साहित्य की बड़ी सेवा की है।

बली मोहम्मद माल–जन्म-मृत्यु 1819-1975, रत्तामऊ, रायबरेली।

बाँकेलाल मिश्र 'लाल'- इनका जन्म सन् 1939 ई. में आश्विन शुक्ल सप्तमी को पेड़रिया कोंड़र ग्राम, जिला सीतापुर में हुआ था। जगन्नाथ मिश्र इनके पिता हैं। कविवर 'लाल' ने एम.ए. (हिन्दी) तक की उच्च शिक्षा साथ ही साथ आयुर्वेद की शिक्षा भी प्राप्त की। सम्प्रति ये सीतापुर के जिलापरिषदीय विद्यालय में अध्यापक हैं। खड़ी-बोली, ब्रज तथा अवधी भाषा पर इनका समान अधिकार है; इन्होंने तीनों भाषाओं में काव्य रचना की है। इनकी प्रकाशित रचनायें (ग्रन्थ) हैं- 'साकेत-विरहिणी', 'उर्मिला' और 'त्रिवेणी'। इनकी अनेक अवधी रचनायें अभी अप्रकाशित ही हैं। इनकी रचनाओं में एक स्पष्ट दिशाबोध है। सामाजिक विसंगतियाँ, तथापि देशानुराग इनकी कविताओं का मूल भाव है। कवि को देश का गौरवपूर्ण अतीत प्रभावित करता रहा है। कवि लाल की सुप्रसिद्ध अवधी रचनायें हैं- 'आर्यावर्त' और 'बापू के प्रति'।

बादेराय–ये रायबरेली जनपद के डलमऊ क्षेत्र के निवासी थे। इनका रचनाकाल था–भारतेन्दु युग। अवधी भाषा में इन्होंने बहुत लिखा है।

बाबूराम शुक्ल 'मंजु'- मंजु जी का जन्म 27 जुलाई 1920 ई. को सीतापुर जिले की मिश्रिख तहसील के मुसव्वरपुर ग्राम में हुआ था। पिता का नाम गजोधर प्रसाद शुक्ल था। इन्होंने 'श्रीमद्भागवत गीता' और 'मेघदूत' के अनुवाद 'मंजु ग्रामीण गीता' तथा मेघदूत के रूप में अवधी की अभिनव भाषाशैली में प्रस्तुत किया है। कुणाल, भोजराज और अनुसुइया चरित्र इनकी अवधी की लम्बी-लम्बी रचनाएँ हैं। संप्रति अध्यापन सेवा निवृत्ति प्राप्त कर ये साहित्यसेवा में साधनारत हैं।

बालिदत्त शर्मा–शर्मा जी ने अवधी साहित्य सृजन में सराहनीय कार्य किया है। मंचों पर इनका काव्य पाठ अति सराहनीय होता था। इनके लेख पत्र-पत्रिकाओं में छपा करते थे। किंतु प्रकाशनाभाव में इनका पूरा साहित्य प्रकाश में नहीं आया है। फिर भी ये गण्य तो हैं हीं।

बिन्दु जी- बिन्दु जी अयोध्या नगर के निवासी एवं भाषा के प्रति समर्पित साहित्यकार हैं।

बीरेलाल–ये सीतापुर जनपद के निवासी एवं अवधी भाषा के अल्पख्यात साहित्यकार रहे हैं।

बुद्धिभद्र दीक्षित 'मतई काका'- इनका घरेलू नाम बचऊ था। प्रारम्भ में ये 'उच्चन' के नाम से कविताएँ लिखते थे। बाद में आकाशवाणी केन्द्र, लखनऊ के 'पंचायतघर' के अन्तर्गत कार्यक्रम देते हुए 'मतई काका' के नाम से प्रसिद्ध हुए। ये पढ़ीस जी के पुत्र थे। इनका जन्म सीतापुर जनपद के ग्राम अमबरपुर में 25 नवम्बर सन् 1922 ई. को हुआ। अवधी में लिखे गीत बड़े ही सुन्दर हैं। इनका अधिकांश काव्य अप्राप्य है और जो कुछ भी है। वह आकाशवाणी की लाइब्रेरी की निधि रूप में सुरक्षित है।

बेकल उत्साही–बेकल उत्साही के नाम से ख्यात होने वाले कवि का जन्म उत्तरप्रदेश के गोण्डा जनपद की उतरौला तहसील में गोण्ड-उतरौला राजमार्ग पर स्थित गौर रमवापुर नामक ग्राम में लोदी वंश के एक जमींदार घराने में 1 जून 1928 ई. को हुआ था। किंतु कागजात में बेकल साहब का जन्मतिथि 18 जुलाई 1928 ई. अंकित है। परिवार के लोगों ने इनका नाम शफी खाँ लोदी रखा था, पर इस विशिष्ट प्रतिभा सम्पन्न पुरुष ने अपनी शायरी एवं कवित्व शक्ति के कारण 'बेकल' के रूप में ही अपने को उजागर किया। शिक्षा एवं साहित्य-साधना का अंकुर लेकर जनमे शफी खाँ ने जहाँ एक ओर स्वाध्याय से घर पर अरबी-फारसी पढ़ी, वहीं हिन्दी में विशेष योग्यता एवं विशारद की परीक्षायें भी पास कीं। सन् 1951 में इन्होंने गन्ना विकास विभाग में नौकरी की। किन्तु एक वर्ष भी नहीं पूरा हुआ कि उसे छोड़ना पड़ा। 1952 ई. में होने वाले भारत के आम चुनाव में कांग्रेस पार्टी के कार्यालय मंत्री के रूप में कार्य करते हुए इन्होंने अपने राजनीतिक जीवन की शुरुआत की। सन् 1956-57 में इन्होंने पाकिस्तान, नेपाल तथा बंगलादेश की यात्रा करते हुए भारतीय साहित्य के प्रचार-प्रसार का कार्य सम्पादित किया है। इन्होंने 1976 ई. में आयोजित मारीशस के विश्व हिन्दी सम्मेलन में भी भारत का प्रतिनिधित्व किया था। इन्होंने अवधी भाषा में अनेक लोकगीतों की सर्जना की, जिसमें गाँव की शोभा, ऋतुओं की बहुरंगी छटाएं छिटकी हुई हैं। ये शुरू से ही किसानों के गायक एवं उद्बोधक रहे। उत्साही जी की निम्नलिखित हिन्दी रचनाएँ है- 1-बेकल रसिया, 2-विजय बिगुल, 3- बरौनी चुवै लाग, 4- महकै बगिया लहकै खेत।

बेताल–शिवसिंह सरोज के अनुसार इनका जन्म सन् 1677 तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनका जन्म सन् 1872 और 1892 के मध्य माना है। इनकी रचनाएँ फुटकर रूप में मिलती हैं। भाषा में ठेठ अवधी का प्रयोग हुआ है।

बेनी प्रवीन- इनका वास्तविक नाम बेनीदीन बाजपेयी था। अपने एक ग्रंथ में इन्होंने इस नाक का प्रयोग किया है। ये टिकइतराय के समकालीन थे और महाराज दयाकृष्ण गाजिउद्दीन के अर्थमंत्री के पुत्र महराज बालकृष्ण तथा नवल कृष्ण 'ललन' के आश्रित थे। इन्होंने बेनीदीन नाम से ही काव्य रचना प्रारम्भ की, किंतु बेनी भट्ट (टिकइतराय प्रकाश के रचयिता) 'बेनी प्रवीन' नाम से कविता करने लगे। कतिपय विद्वानों का कथन है कि बेनी बंदीजन (भड़ौवा वाले) के वाद-विवाद में इनकी विद्वता सिद्ध

हुई और ये 'बेनी प्रवीन' नाम से विख्यात हुये। बेनी प्रवीन ने 'नवरस तरंग' ग्रंथ की रचना की। इस काव्य की भाषा ब्रजावधी है। वर्ण्य विषय की दृष्टि से बेनी प्रवीन ने अपने ग्रंथ 'नवरस तरंग' में आश्रयदाताओं की प्रशस्ति, नायक-नायिका भेद, प्रकृति-चित्रण आदि किया है। बेनी प्रवीन के काव्य में नवों रस का समावेश है। शृंगार का अत्यधिक वर्णन हुआ है, परंतु शृंगारेतर वीर, हास्य, वीभत्स, शांत आदि रसों का भी अभाव नहीं है। कवि की रस योजना में गहरी भावुकता के दर्शन होते हैं। कवि ने अपनी सूक्ष्म कल्पनाशक्ति से रूप तथा दृश्य के बड़े मोहक प्रवीन की भाषा ब्रज होते हुये भी अवधी की व्यापकता स्वयं सिद्ध है। कवि का शब्द चयन और संस्कार उसकी प्रतिभा के परिचायक हैं। कृति में तद्भव और तत्सम शब्दों का सम्मिश्रण है।

बेनीमाधव–बैसवाड़ा निवास माधव जी अवधी के अल्पख्यात कवि हैं। ये आधुनिक काल के भारतेन्दुयुगीन कवियों में से एक हैं।

पं. बेनीमाधव पाण्डेय 'व्यास'- ये ख्यातिप्राप्त साहित्यकार हैं। इन्होंने जीवन भर अवधी साहित्य की सेवा की जिसका विवरण तो अवश्य प्राप्त नहीं है, किंतु इतना अवश्य है कि इन्होंने अनेक बार मंचो पर काव्य-पाठ किया। पत्रिकाओं में भी प्रतिष्ठित हुए।

बैजनाथ–ये द्विवेदीयुगीन अवधी साहित्यकार हैं। साहित्य अप्राप्य है।

बैजनाथ प्रसाद 'बैजू'- सतगढ़, रीवाँ के निवासी बैजू जी अवधी कवि हैं। इन्होंने अपने गीतों आदि के माध्यम से अवधी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान किया है।

बैजनाथप्रसाद शुक्ल 'भव्य'- इनका जन्म 11 जुलाई सन् 1918 ई. को ग्राम कोणरिया (दियरा) तहसील कादीपुर जनपद सुल्तापुर में हुआ था। इनके पिता का नाम स्वामी ओमानंद है। भव्य जी 30 नवम्बर सन् 1975 को मुख्य लेखाधिकारी क पद से सेवाविवृत्त हुए हैं। इनकी कई कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इन्होंने खड़ी बोली, ब्रजमिश्रित अवधी को भी काव्य सृजन का माध्यम बनाया है।

बैजनाथ यादव- इनका जन्म 1920 ई. के लगभग बाराबंकी के 'दुबहटा' नामक ग्राम में हुआ। प्राथमिक शिक्षा अर्जित करने के बाद खेती करने लगे। इनकी रचनाओं में धार्मिक तत्वों की प्रधानता है। 'हनुमान भजन' और 'रामभजन माला' संग्रह इस बात के प्रमाण हैं। पूरबी और कहरवा छन्द का प्रयोग कवि ने बड़ी सजगता के साथ किया है। धार्मिक प्रवृत्ति की प्रधानता होने के कारण भजन भी लिखे हैं। कवि ने ठेठ अवधी का प्रयोग किया है। कहीं-कहीं कविता में खड़ी बोली की टूटी पंक्तियों का भी आभास मिलता है।

संत कवि बैजनाथ कुर्मी : इनका जन्म संवत 1890 को ग्राम मानकपुर तुहेवा, बाराबंकी में हुआ। इनके पिता का नाम हीरानन्द तथा माता का नाम भगवती देवी था। इनके गुरू का नाम फकीरे राम था। यह भगवानदास के उपासक थे। इन्होंने तुलसीदास के समस्त ग्रन्थों की सर्वप्रथम काव्यमय की। इनके मौलिक 6 ग्रंथ हैं कुल 24 ग्रन्थ हैं। अधिकांश प्रकाशित हैं। सीताराम संयोग पदावली 2 सीताराम पावस विलास 3 षडऋतु वर्णन आदि ग्रन्थों में अवधी भाषा का अच्छा प्रयोग दिखायी देता है। यह रसिक सम्प्रदाय से जुड़े थे। इनका निधन सन् 1954 में हुआ।

बोधा–बोधा (बुद्धिसेन) का काव्य-प्रणयन विक्रम की 18वीं शताब्दी के अन्तिम चरण से लेकर 19वीं शती के प्रथम चरण तक का है ये राजापुर, जिला बांदा के निवासी थे और बचपन से ही जन्मभूमि छोड़कर पन्ना में रहने लगे थे। पन्ना के राज दरबार में इनके सम्बंधी रहते थे। इन्हीं के आश्रय से पन्ना महाराज के सम्पर्क में आए। इनकी दो अवधी रचनाएँ प्राप्त होती हैं- 1- 'विरहवारीश' या 'माधवसनल कामकंदला', 2- 'इश्कनामा', या 'विरही सुभान-दंपति विलास'।

बोधे दास–ये बाराबंकी जनपद के कोटवा धाम के निवासी संत जगजीवन दास के पौत्र गिरिवरदास

जी के शिष्य हैं। इन्होंने सं. 1848 वि. में अपने गुरू के संरक्षण में अवधी भाषा में 'भक्त विनोद' नामक प्रबन्ध-काव्य का प्रणयन किया है। इसमें दोहा-चौपाई छंदों का प्रयोग हुआ है।

ब्रजकान्त बाजपेयी 'ब्रजेश'- ब्रजेश जी का जन्म 1 अगस्त सन् 1956 को सीतापुर जनपद के ब्रह्मावली ग्राम में हुआ था। रामआसरे बाजपेयी इनके पिताजी थे। गृहकार्य के साथ-साथ इन्होंने अपना सृजन कार्य किया है। 'रामदूत' 'रावण-मन्दोदरी संवाद', 'सील्हापुर का मेला' इनकी अवधी रचनाएँ है।

ब्रज किशोर निगम 'आजाद'–आजाद रीवाँ के निवासी हैं। इन्होंने अवधी की बड़ी सेवा की है। इनकी कविताओं में स्वच्छंदता के स्वर अधिक मुखर हुए है।

ब्रजकिशोर पाण्डेय 'ब्रजनन्दन'- इनका जन्म आषाढ़ बदी एकादशी संवत् 1949 वि. को, ग्राम भनवामऊ, जिला रायबरेली में हुआ था, और निधन 1 जनवरी सन् 1981 में हुआ था। इनके पूर्वज गोगाँसों, रायबरेली नामक गाँव के निवासी थे। इसलिए इन्हें गोगाँसों के पाण्डेय कहा जाता है। इनके पिता का नाम रामाधीन पाण्डेय था। भनवामऊ गाँव राणा बेनी माधव ने इनके पूर्वजों को दान में दिया था। विद्यालयीय शिक्षा अधिक न मिलने के बावजूद इन्होंने स्वाध्याय के बल पर हिन्दी, उर्दू भाषा की विशेष योग्यता प्राप्त की। आरम्भ में इन्होंने 'कोर्ट आफ वार्ड' में नौकरी की, तदुपरांत सन् 1916 में काशी नरेश के यहाँ अहलमद के पद पर नौकरी की किंतु, परवशता इन्हें स्वीकार नहीं हुई। ब्रजनन्दन जी ने तीन विवाह किए। इनकी पहली पत्नी जिला बाराबंकी के 'बड़ैल' नामक ग्राम की थीं। अतः इन्होंने अधिकांश समय बाराबंकी में बिताया था। परन्तु इनके प्रकृति परिवेश में बैसवारीपन स्पष्ट था। ये स्वभाव से बड़े भावुक थ। इनका देश के वरिष्ठ राजनेताओं, साहित्यकारों से घनिष्ठ परिचय रहा है, जैसे- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (देश के प्रथम राष्ट्रपति), जवाहर लाल नेहरू आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, आदि। साहित्यिक संस्थाओं ने इन्हें समय-समय पर अनेक उपाधियाँ देकर सम्मानित किया। यथा- 'काव्य-भूषण', 'कविः मनीषी' साहित्य परिषद औरैया से तथा बनारस वेदांत परिषद से 'कविरत्न' की उपाधि मिली। इनकी प्रसिद्ध काव्य कृतियाँ हैं- 1- दुखिया किसान, 2- महिपाल वचित्रय, 3-ब्रिटिश असहयोग, 4- वैवाहिक विनय। इसके अतिरिक्त ब्रज मंजरी, प्रदोष पूजा, ऊधौ-उपचार प्रमुख हैं। अनेक स्फुट कवित्त भी इन्होंने लिखे हैं। इनकी भाषा मूलतः ब्रज है, परन्तु खड़ी बोली और अवधी में भी रचनायें की हैं। इनकी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना के स्वर, सामाजिक संस्कार-बोध तथा भक्ति और श्रृंगारिक भावना का अद्भुत सामंजस्य है। इनकी भावाभिव्यंजना तथा वर्णन चातुर्य बड़ा प्रभावपूर्ण है। भाषा भावानुवर्तिनी है। प्रवाहमयी लययुक्त इनके पदों को पढ़कर कभी-कभी घनानन्द के पदों (सवैयों) की स्मृति हो जाती है।

ब्रजनंदन सहाय–ये आरा जिला (बिहार) निवासी आधुनिक अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने सन् 1900 में 'सत्यभामा मंगल' नामक ग्रंथ का सृजन किया था, जिसकी भाषा अवधी का मिश्रित रूप है।

ब्रजभूषण त्रिपाठी–इनका जन्म सन् 1895 ई. ग्राम दरियापुर, जिला सीतापुर में हुआ था। वंशीधर शुक्ल इन्हें अपना मूल गुरू मानते थे। इनकी 'सती पियरिया' लगभग 150 पंक्तियों की एक लम्बी अवधी रचना है, जो 1929 ई. में माधुरी पत्रिका में प्रकाशित हुई थी स्वान चिरई भारत, एक जनौरा, अल्हड़ परासी आदि इनकी अवधी की प्रसिद्ध रचनाएँ है। इनका निधन सन् 1934 में अल्पावस्था में ही हो गया था।

ब्रजलाल भट्ट 'ब्रजेश'- ये रामनगर (बाराबंकी) के निवासी हैं। इन्होंने 'घूस' शीर्षक से अवधी भाषा में एक लम्बी कविता लिखकर समाज में चारो तरफ व्याप्तज भ्रष्टाचार का उल्लेख किया है। इनकी अवधी ठेठ शब्दावली से युक्त है तथा उसमें सहजता का बोध भी होता है।

ब्रजवासीदास–ये कृष्ण काव्य-परम्परा के कवि एवं संत हैं। ब्रज क्षेत्र होने के बावजूद अवधी भाषा को इन्होंने सम्मान प्रदान किया है। सं. 1827 में 'ब्रज विलास' नामक अवधी ग्रंथ का प्रणयन करके

इन्होने यह सम्मान प्रदर्शित किया है।

ब्रजेन्द्र खरे- इनका जन्म सन् 1937 ई. में लखनऊ नगर में हुआ था। इनके अवधी गीतों का कवि सम्मेलनों में बड़ा आदर रहा है। इनके कुछेक अवधी गीतों के शीर्षक इस प्रकार है- गरम दुपहरिया, चन्दन बिरवा, बसन्ती बयार, उड़ति अबीर-गुलाल, जमाना बदलि गवा, जेठ के दिन, देवर भये सुकुमार, देसवा पै विपति परी, आदि। ब्रजेन्द्र खरे के ये सरस लोक गीत बड़े प्रभावी बन पड़े हैं। ये मंच के भी एक सफल कवि हैं। सम्प्रति ये परिवहन विभाग में हिन्दी अधिकारी हैं।

ब्रजेशकुमार पाण्डेय 'इन्दु'- इन्दु जी का परिचयात्मक विवरण उपलब्ध नहीं है, किन्तु इन्होंने अवधी साहित्य के अभिवर्द्धन में पर्याप्त कार्य किया है। इन्होंने व्यंग्य चिन्तन, व्यंग्य व्यथा के साथ ही आँखों पर 100 छंदों का मनोहरी चित्रण भी प्रस्तुत किया है।

ब्रह्मदत्त 'ब्रह्मांड'- इनका जन्म सन् 1942 में बाराबंकी जनपद के रामसनेहीघाट पर राजपुर गाँव में हुआ था। हास्य एवं व्यंग्य इनके उल्लेखनीय हैं। फैजाबाद से प्रकाशित जनमोर्चा दैनिक के स्तम्भ 'हाव-भाव' में इन्होंने अनवरत पाँच वर्षों तक लिखा। सम्प्रति स्वास्थ्य विभाग में सेवारत हैं। 'बापू' कविता में इनका अवधी अनुराग स्पष्टतः मुखरित हुआ है।

ब्रह्मा सिंह– इनका जन्म लखनऊ जनपद के बन्थरा क्षेत्र के निकट दादूपुर गाँव के ठाकुर गणेश सिंह के यहाँ सं. 1977 वि. में हुआ था। कारणवश अधिक शिक्षा न ग्रहण कर सके। इनकी रचनाएँ सनेही जी द्वारा संपादित 'सुकवि' पत्रिका में खूब छपीं। इन्होंने प्रायः मुक्तक रचनाएँ की हैं, जिनमें दोहा, छप्पय, घनाक्षरी,रोला प्रमुख हैं। अवधी भाषा इनको सर्वप्रिय रही। इनकी रचनाओं में नेतागिरी एवं स्वजातीय कवियों की स्वार्थपरता, भारतीय कृषक के शोषण का सजीव चित्रण मिलता है।

भँवर सिंह 'भँवरेश'- इनका जन्म सं. 1979 में हुआ था। ये ग्वालियर से आकर ग्राम चिलौला, डलमऊ, जिला रायबरेली में स्थायी रूप से बस गए है। 'किसान कै गोहारि' इनकी सशक्त अवधी रचना है।

भगवतीप्रसाद अवस्थी 'लोप'- लोपजी का जन्म मवइया कलाँ, बाराबंकी में 1931 ई. में हुआ। कई दशकों से इनकी काव्य-साधना अविरल प्रवहमान है। अवधी में अनेक समसामयिक विषयों पर इनकी शताधिक रचनाएँ हैं। साथ ही दहेज आदि अनेक कविताएं भी लिखी हैं। सम्प्रति प्रधानाचार्य रूप में सेवारत हैं।

पं. भगवती प्रसाद त्रिवेदी 'करुणेश'- त्रिवेदी जी का जन्म लखनऊ जनपद की तहसील मोहनलालगंज के ग्राम गढ़ी असली में सन् 1905 ई. में हुआ था। इनकी 12 वर्ष की अल्पावस्था में ही इनके पिता पं. तेजकृष्ण त्रिपाठी का निधन हो गया। शिक्षा ग्रहण करने के बाद ये सन् 1939 ई. में कान्यकुब्ज वोकेशनल (बप्पा श्रीनारायण) कालेज, लखनऊ में काष्ठकला के अध्यापक हो गये। इन्होंने अवधी के अतिरिक्त ब्रज, उर्दू एवं खड़ी बोली में भी काव्यसृजन किया है।इनकी रचनाएँ हैं- 'मुच्छोपमा', जल्दी चुरौ दाल महरानी', पद्य प्रवाह (सन् 1928), अधर बल्लभा (सन् 1942), चीन की चुनौती (सन् 1962), राष्ट्रीय ऐक्य का स्वर संगम (सन् 1984)। इसके अतिरिक्त इनकी अप्रकाशित दर्जनों कृतियाँ हैं।

भगवती प्रसाद मिश्र 'नन्दन'- मगहर, बस्ती के निवासी नन्दन जी अवधी साहित्यकार है। सुनहरा स्वप्न नामक इनकी अवधी रचना है।

भगवानबख्श सिंह– इनका जन्म सं. 1943 में रायबरेली जिले के पूरे जंगली देवी (अलीपुर) नामक स्थान पर हुआ था। इन्होंने अपनी रचनाओं में अवधी का पर्याप्त प्रयोग किया है। विशेष विवरण सुलभ नहीं है।

भगवानबख्श सिंह 'संत'- ये सत्यनामी सम्प्रदाय के संत थे। इनका जन्म सन् 1880 ई. में जनपद रायबरेली के अलीपुर ग्राम में हुआ था। अवधी साहित्य में इनके द्वारा किया गया योगदान चिरस्मरणीय है। इनके अवधी ग्रंथ हैं- 'सत्यानाम दीपिका' और 'सत्यानंद प्रकाश'।

भगवान हित--इन्होंने सं. 1728 में 'अमृत धारा' नामक विशद अवधी ग्रंथ का सृजन किया था। विशेष विवरण अप्राप्य है।

भवन कवि--ये बैसवाड़ा क्षेत्र में स्थित बेंती के निवासी अवधी साहित्यकार हैं।

भवानीप्रसाद खरे- खरे जी झाँसी के निवासी एवं 'भागवतपुराण भाषा' को अवधी मे अनूदित करने वाले अवधी प्रेमी साहित्यकार हैं।

भवानी प्रसाद पाठक 'भावन'--ये मौरावाँ, उन्नाव के निवासी थे। इन्होंने भारतेन्दु युगीन अवधी साहित्यकारों में अति महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया था।

भवानी 'भिक्षु'- ये तौलिहवा नेपाल के निवासी थे। इनके 'संगठित नेपाल और शाहवंश' कृति का प्रकाशन सन् 1963 ई. में हुआ। यह एक वीर रस प्रधान रचना है। इसमें वीर छंद (आल्हा) एवं ठेठ अवधी भाषा का प्रयोग हुआ है।

पं. भवानी भीख त्रिपाठी 'दिव्य'- इनका जन्म 1895 में मालीपुर फैजाबाद में हुआ था। ये मूलतः ब्रजभाषा और खड़ी बोली के कवि है। किन्तु अवधवासी होने के नाते इन्होंने अवधी में भी काव्यसृजन किया है। इनकी अवधी रचनाएँ हैं- 'अवधी की विशेषताएँ', 'तुलसी चउरा', 'सरयू', तथा 'अवधी'।

भवानी शंकर-- ये 19वीं शताब्दी के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने सं. 1871 में 'बैताल पचीसी' का सृजन अवधी भाषा में किया था।

भागवतप्रसाद मिश्र 'बागीश'- 1 जुलाई 1928 ई. को सिन्धन कलाँ जिला बांदा में जनमें 'बागीश' जी ने कानपुर को अपना कार्य क्षेत्र बनाया यहीं अब किदवई नगर में सपरिवार रहते है। ये हिन्दी, संस्कृत, ज्योतिष शास्त्र आदि के अच्छे विद्वान हैं। मंच के एक सफल कवि हैं। इनकी अवधी काव्य की प्रकाशित कृतियाँ हैं- ठोकर, गउने का सपन, चिड़ीमार, काँव-काँव, पत्नी चालीसा। ये व्यंग्य-विनोद के कवि है। इनकी पुस्तक 'ठोकर' अधिक लोकप्रिय हुई है, जिसके दो संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। इन्होंने हास्य के साथ ही गम्भीर राष्ट्रप्रेम की रचनायें भी की हैं। भाषा में बैसवारी अवधी का सौन्दर्य सुरक्षित है।

भागीरथी--इनका जन्म फैजाबाद जिले में हुआ था। इन्होंने मुख्यतः फाग गीतों का सृजन किया है। गीतों का क्षेत्र अधिकांश राम-कृष्ण कथा का रहा है। यत्र-तत्र गणेश आदि। इष्ट देवों की वन्दना हुई है। 'चौताल चिंताहरण', (फाग-संग्रह) चार भागों में गोरखपुर से प्रकाशित हो चुका है।

भानुदत्त त्रिपाठी 'मधुरेश'- उन्नाव जनपद के गुलरिहा ग्राम में सन् 1948 में इनका जन्म हुआ था। इन्होंने एम.ए., एल.टी. शास्त्री, और साहित्याचार्य तक की उच्च शिक्षा प्राप्त की है। सम्प्रति ये बी. एन. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय अकबरपुर, फैजाबाद में अध्यापक हैं। इनका प्रकाशित अवधी प्रबन्ध काव्य है- 'भारत-व्यथा'। यह हिन्दी के राष्ट्रीय साहित्य की विशिष्ट निधि है। इसमें मात्र भारत की व्यथा-कथा का इतिवृत्त ही नहीं है प्रत्युत् उच्च काव्य गुणों से आपूर्ण है। इस काव्य ग्रंथ की भाषा बैसवारी अवधी है। दर्जनों मुक्तक रचनायें भी मधुरेश जी ने अवधी में की हैं। मधुरेश जी के 'भाव-प्रसून' और 'लीला माधुरी' खड़ी बोली के प्रकाशित काव्य ग्रंथ हैं। इनकी कविता में सम्मूर्तन की क्षमता है। विदेशी वस्तुओं के बहि कार तथा स्वदेशी के प्रचार में गाँधीवादी भावना का समाहार कवि ने किया है। चरखा और खादी उसके दृष्टि पथ की पाथेय है।

भानुप्रसाद त्रिपाठी 'मराल'- प्रतापगण निवासी मराल जी अवधी भाषा के समर्पित साहित्यकार हैं।

भानुप्रसाद पाण्डेय 'भानु'- फैजाबाद निवासी पाण्डेय जी अवधी साहित्य को अनेक रचनाएँ अर्पित की हैं।

भानु मिश्र–मिश्र जी का जीवनवृत्त अप्राप्त है। इन्होंने 'रस विनोद' (अवधी गद्य-पद्य)नामक ग्रंथ का प्रणयन कर अवधी साहित्य में अपना स्थान सुरक्षित कर लिया है।

भारतेन्दु मिश्र- मिश्र जी का जन्म 5 नवम्बर 1959 को लखनऊ में हुआ है। अपने छोटे-छोटे गीतों द्वारा अवधी नवगीत के प्रवर्त्तन में भारतेन्दु ने उत्कृष्ट सहयोग किया है। 'परजवटि' नामक पुस्तक इनके अवधी गीतों का संकलन है। इनकी कविताओं में युग-बोध है। कवि गाँव के परिवर्तित रूप से अवगत है। इनकी रचनाओं में जहाँ ग्राम्य प्रेम है वहीं प्राचीनता का मोह नहीं है। मिश्र जी वस्तुतः सामाजिक आडम्बरों के प्रति विध्वंस की भावना रखते हैं, और उसकी अभिव्यक्ति जीवन्त बिम्बों, प्रतीकों और उपमानों के माध्यम से करते हैं। भाषा साफ सुथरी ठेठ अवधी का रूप प्रस्तुत करती है।

भिखारी दास–ये ट्योंगा ग्राम के, जो प्रतापगढ़ से लगभग डेढ़ किलोमीटर दूर है निवासी थे और राजा हिन्दूपति के आश्रित दूर निवासी थे और राजा हिन्दूपति के आश्रित कवि थे। दास जी का स्थिति काल 17वीं शताब्दी माना जाता है। इन्होंने 'काव्य निर्णय' तथा 'श्रृंगार निर्णय' नामक दो श्रेष्ठ लक्षण ग्रंथों की रचना हिन्दूपति के नाम पर की है। इनकी काव्य भाषा ब्रज होते हुए भी अवधी से प्रभावित थी। अतएव अवधी साहित्य में इनका विशिष्ट स्थान है।

भीखा- भीखा साहब का पूरा नाम भीखानंद चौबे था। इनका जन्म आजमगढ़ जिले के खानपुर बोहना नामक ग्राम में हुआ था। इन्होंने अवधी भाषा के माध्यम से अनेक कविताएँ लिखी हैं।

भीमसिंह बैस 'भीम'- इनका जन्म सं. 1770 वि. में उन्नाव जनपद के डोंडिया खेरा ग्राम में हुआ था। ये प्रारम्भ में गृहस्थ थे तदुपरांत वैराग्य उत्पन्न होने पर उपासना हेतु ये सपत्नीक अयोध्या चले गये। चेतदास आदि इनके दर्जनों शिष्य प्रसिद्ध हुए। अमरावली, अनुराग सागर, भक्ति विनोद, सृष्टिसागर आदि दर्जनों इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। इन्होंने अपने ग्रंथों में अवधी, ब्रज, खड़ी बोली तीनों का खूब प्रयोग किया है। सं. 1850 में रायबरेली जनपद के उज्जैनी ग्राम में इनका देहावसान हो गया।

भूपति–शिंवसिंह सरोज के अनुसार भूपति राजा का नाम गुरूदत्त सिंह है भूपति इनका उपनाम है। ये 'अमेठी' (जिला सुल्तानपुर) के राजा थे। इन पर लक्ष्मी और सरस्वती की कृपा थी सॅाथ ही ये तलवार के धनी थे। इनका रचना काल सं. 1791 माना जाता है। इनकी तीन प्रसिद्ध रचनायें हैं- सतसई, रस रत्नाकर तथा कंठाभूषण। इनमें केवल सतसई ही प्राप्त है। शेष दो अप्राप्य तथा अप्रकाशित है। इन्होंने छंदोबद्ध रचनायें की है। कवित्त, सवैया, दोहा आदि छंदों में। इनकी भाषा ब्रजावधी है। भाषा सरस, प्रवाहमयी है। तद्‌भव और तत्सम शब्दों का योग है।

भैरवदत्त शुक्ल- शुक्ल जी का जन्म जनपद खीरी में 1932 ई. में हुआ थ। ये वंशीधर शुक्ल जी के शिष्य हैं। खड़ी बोली के साथ-साथ इन्होंने अवधी को भी स्थान दिया है। ग्राम्य जीवन इनकी रचनाओं का मूल केन्द्र है। अवधी गद्य-पद्य दोनों ही लेकर चल रहे हैं शुक्ल जी। संप्रति अध्यापन में कार्यरत हैं।

मंझन- मंझन जी का समय सं. 1575 या 1597 से पूर्व का है। 'मधुमालती' इनकी अतिप्रसिद्ध अवधी रचना है। ये हिन्दी के सूफी कवि थे। इनका पूरा नाम गुफ्तार मियाँ मंझन है। अपनी रचना मधुमालती में मंझन ने आध्यात्मिक तत्वों का समावेश स्थान-स्थान पर किया है। साधारणतः सूफी कवियों ने अपनी कहानी को दुखांत बनाया है, पर मंझन ने इसके विपरीत अपनी कहानी का अन्त नायक-नायिका के सुखद मिलन पर किया है। मंझन जी की काव्य भाषा अवधी है। दोहा-चौपाई छंदों का प्रयोग है।

मथुरादास–ये मलूकदास के शिष्य हैं। इनका समय 1640 वि. माना जाता है। इन्होंने मलूकदास के जीवन-चरित्र से सम्बद्ध 'परिचयी' नामक ग्रन्थ की रचना अवधी भाषा के माध्यम से की। इसके

अतिरिक्त कई अवधी ग्रंथों की रचना भी इन्होंने की।

मथुराप्रसाद सिंह 'जटायु'- जटायु जी ने अवधी साहित्य की पर्याप्त सेवा की है, जिससे इन्हें अवधी क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। शेष विवरण अनुपलब्ध है।

मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज'- मनोज जी का जीवन परिचय उपलबध नहीं है, परन्तु इन्होंने अवधी साहित्य की जो सेवा की है, वह श्लाघ्य है। इन्होंने गीत, काव्य, खण्ड काव्य आदि के साथ निबन्ध और कहानियाँ भी अवधी साहित्य को प्रदान किया है। साहित्य सर्जना के साथ-साथ लोकगीतों का संकलन भी इन्होंने किया है।

मदनेश महापात्र–मदनेश जी का वास्तविक नाम गयाप्रसाद है। इकना जन्म सं. 1881 में असनी में हुआ था, इनके पिता का नाम दौलतराम था। इनके प्राप्त चार ग्रन्थ हैं-(1) सजन प्रकाश (2) फतेह भूषण (3) नायिका भेद (4) रसराज तिलक।

मधुर फैजाबादी–जन्म स्थान- फैजाबाद, अवधी रचना- 'देश की माटी'।

मधुसूदन दास- ये इटावा निवासी माथुर चौबे थे और रामानुज सम्प्रदाय के वैष्णव थे। इनकी एक मात्र अवधी रचना 'रामश्वमेध' उपलब्ध है।

मनीराम अवस्थी 'मनेश'–ये भारतेन्दु युग के प्रसिद्ध अवधी कवि हैं। इनका निवास स्थान- बड़ा स्थान अयोध्या है।

मनीराम अवस्थी 'मनेश'- इनका जन्म जरौडा, बाराबंकी में हुआ। इनको मृगेश का पर्याप्त सान्निध्य प्राप्त हुआ। इनकी रचनाओं में अवधी लोकगीतों का सफल चित्रण हुआ है। सम्प्रति बंथरा, उन्नाव में 'चन्द्रशेखर आजाद शिक्षालय' की स्थापना करके वहीं पर सेवारत हैं।

पं. मनीराम द्विवेदी 'नवीन'- 'नवीन' जी का अवधी (बैसवारी) साहित्य में उत्कृष्ट स्थान है। ये द्विवेदी युग के कवि हैं। इनका जन्म जनपद उन्नाव (बैसवारा) के नैकामऊ ग्राम में पौष बदी सप्तमी वि. सं. 1962 को हुआ था। नैकामऊ ग्राम निराला एवं महावीर प्रसाद द्विवेदी के गाँवों से क्रमशः 10 व 13 किमी. के अन्तराल पर उपस्थित है। 'नवीन जी में काव्य प्रतिभा नैसर्गिक थी। ये जन्मजात कवि थे। इनकी काव्य प्रतिभा से प्रभावित होकर कवि सम्राट आचार्य गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' जी इन्हें कविवर लिखते रहे। साथ ही इनकी रचनाओं को 'सुकवि' में छापते रहे। नवीन जी काव्य का प्रारम्भ समस्यापूर्ति से किया। कलकत्ता में इन्होंने 'बैसवारा सेवक संघ ' की संस्थापना की। नवीन जी ने खड़ी बोली ब्रज तथा ब्रजावधी, बैसवारी में कवितायें लिखी हैं। इनकी भाषा में भावसम्प्रेषण की अभूतपूर्व क्षमता है। इनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं- नवीन चिनगारी, नवीन कीर्तन प्रथम, नवीन समाज विप्लव, नवीन भ्रष्टाचार, नवीन फाग-संग्रह, नवीन कीर्तन पीयूष, नवीन कीर्तन कुंज, नवीन भक्ति सरोवर, नवीन रणभेरी, नवीन शिव विनय। इनकी कृतियों में युगीन स्वर को स्वर मिला है। काव्य में राष्ट्रीयता का पुष्ट है। सामाजिक विकृतियों पर निर्भीकतापूर्वक जीहाद किया है।

मनोहर लाल मिश्र–ये 'रसिक मित्र' के प्रकाशक और संपादक थे। इनका रचनाकाल सन् 1908 ई. के आस-पास का है। इनकी अवधी कविताएँ 'सास बहू की नोक-झोंक' अति सुंदर हैं। इनका काव्य सृजन खड़ीबोली में भी मिलता है।

मन्ना लाल 'अपढ़'- अपढ़ जी लखनऊ के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने सन् 1948 में 'शिक्षा काव्य पंचदशी' नामक कृति का सृजन किया है।

मयाराज जयसिंह जूदेव–इनका रचनाकाल सं. 1873 वि. के लगभग प्रतीत होता है। इन्होंने भक्तिपरक ग्रंथों को अवधी में पद्यबद्ध किया है। जैसे- 'नृसिंह-कथा', 'पृथुकथा', 'हरिचरित्रामृत' आदि।

मलिक मोहम्मद जायसी–ये मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य की प्रेमाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने जायसी का जन्म-काल हिजरी सन् 900 माना है। विद्वानों के मतानुसार इनकी जन्म-तिथि सं. 1575 निश्चित हुई है। जायसी का निवास-स्थान रायबरेली जिले का जायस ग्राम है। इनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं- पदमावत, आखिरी कलाम और अखरावट। जनश्रुतियों तथा अनुयायियों के अनुसार इन्होंने अन्य अनेक रचनायें भी की हैं, यथा- सखरावत, चम्पावत, मटकावत, इतरावत, नैनावत, मेखरावट नामा, जपसी, धनावत, सोरठ, मसलानामा आदि । इनमें 'पदमावत' अवधी का विशेष महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जायसी की भाषा अवधी है। इसमें ठेठ देशज शब्दों का प्रयोग हुआ है। लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग से इनकी भाषा में एक विशिष्ट सामर्थ्य है। इसमें बिम्ब प्रस्तुत करने की पूर्ण क्षमता है। जायसी ने अवधी के प्रचलित दोहा-चौपाई छंदों का ही प्रयोग अपनी रचना में किया है।

मलूकदास–इनका जन्म (वैशाख कृष्ण 5), सं. 1631 को कड़ा (जनपद इलाहाबाद) में हुआ था। इनके पिता का नाम सुन्दरदास खत्री था। इनका देहावसान सं. 1739 को हुआ था। इनकी प्रामाणिक 12 रचनाएँ मिलती हैं। 'ज्ञानबोध' इनका प्रमुख ग्रंथ है। इनकी कृतियाँ भक्तवच्छावली, बारहखड़ी, विभय विभूति सुखसागर ध्रुव चरित्र, ज्ञान परोछि मुख्यतः अवधी काव्य हैं।

महरानी- ये द्विवेदी युग की अवधी अल्पख्यात कवयित्री रही हैं। इन्होंने अवधी काव्यधारा को अक्षुण्ण बनाये रखने का बहुत योगदान किया है।

महानंद बाजपेयी- ये डलमऊ, रायबरेली के निवासी एवं भारतेन्दु युगीन अवधी कवि हैं। इनका अवधी साहित्य अभी अप्रकाशित है। इन्होंने अवधी भाषा में 'शिवपुराण का अनुवाद' किया है।

महानंद शाह–रायबरेली निवासी शाह अवधी भाषा के अल्पख्यात कवि हैं।

महावरीप्रसाद द्विवेदी 'कल्लू अल्हैत'- इनका जन्म 15 मई 1864 ई. को ग्राम दौतलपुर, जिला रायबेरली में हुआ था। अध्ययन के पश्चात् इन्होंने रेलवे की नौकरी की, कारणवश त्याग पत्र देना पड़ा। फिर साहित्य-सेवा का व्रत ले लिया, जिसमें आजीवन लगे रहे। सन् 1903 से 1920 तक 'सरस्वती' पत्रिका का सम्पादन करते हुए लगभग 81 ग्रंथों की रचना की। गद्य-पद्य सभी में द्विवेदी जी की कुछ स्फुट कवितायें स्मरणीय है। इन्होंने 'कल्लू अल्हैत' के नाम से 'सरगौ नरक ठिकानौं नाहीं' आल्हा लिखा, जो बैसवारी अवधी की श्रेष्ठ रचना है।

महावीर प्रसाद 'राकेश'- इनका जन्म कार्तिक सुदी एकादशी सन् 1935 ई. को बिलग्राम, जिला हरदोई में हुआ था। ये एक अध्यापक थे। इनका काव्य सृजन संसार खड़ी बोली और अवधी दोनों में था। भूदानी नेता, महात्मा गाँधी, जवाहर लाल, गंगा और नगर विशेषतः इनकी उल्लेखनीय रचनायें हैं। सन् 1970 ई. में राकेश जी का असामयिक निधन हो गया।

महावीर यादव–इनका जन्म सन् 1939 ई. में ग्राम विक्रमपुर जिला प्रतापगढ़ में हुआ था। आर्थिक कठिनाइयों के कारण यादव जी को विद्यालयीय शिक्षा न मिल सकी। आजकल घर पर ही रहकर कृषि कार्य करते हैं। गीतों में 'बिरहा' इनको अत्यधिक प्रिय है। इनके देशप्रेम से ओत-प्रोत बिरहा गीत विशेषतः उल्लेखनीय हैं। घूस, महंगाई आदि सामाजिक समस्यायें इनकी कविता का विषय बनी हैं। इनकी अवधी कविताओं में यत्र-तत्र भोजपुरी बोली के शब्द भी देखने को मिलते है।

महन्त महावीर राय 'जनमहाराज'- ये जानकीघाट, अयोध्या के महंत एवं अवधी साहित्य प्रेमी हैं। इन्होंने 'श्री सीतापुर श्रृंगार रस' नामक अवधी रचना प्रस्तुत की है।

महेन्द्रकुमार बाजपेयी शास्त्री 'सरल'- सरल जी का जन्म 22 अक्टूबर सन् 1946 ई. को सीतापुर जनपद के शंकरपुर (रेउसा) गाँव में हुआ था। ब्रजमोहन लाल बाजपेयी इनके पिता थे। ये कवि होने के साथ-साथ नाटककार, रेखाचित्रकार और कहानीकार भी थे।इन्होंने खड़ी बोली में काफी रचनाएँ की थीं। किन्तु अवधी को भी पर्याप्त स्थान देते हुए सवैया, घनाक्षरी आदि छंदों के माध्यम से महत्वपूर्ण अवधी

काव्य-सृजन किया। 1992 के आस-पास एक दुर्घटना में इनका देहावसान हो गया।

महेन्द्रकुमार वर्मा 'नयन'- नयन जी रायबरेली जनपद के शिवली क्षेत्र के रहने वाले हैं। इनकी अवधी कविता 'दहेज' बड़ी ही प्रासंगिक एवं उत्कृष्ट है।

डॉ. महेशप्रताप नारायण अवस्थी 'महेश'- इनका जन्म 5 जनवरी सन् 1933 ई. को रायबरेली जिले के चिलौली ग्राम में हुआ था। इन्होंने हिन्दी और संस्कृत में एम.ए. किया, और हिन्दी में पी-एच. डी. उपाधि ग्रहण करके उच्च शिक्षा प्राप्त किया। महेश जी राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय रायबरेली में संस्कृत के प्रवक्ता रहे हैं। इस समय ये दारागंज इलाहाबाद में स्थायी निवासी हैं और अवधी साहित्य सेवा के लिए पूर्णतः समर्पित हैं। इनका गीत-संग्रह अवधी लोक गीत हजारा का प्रकाशन सन् 1985 में हुआ है। इनके अवधी काव्य ग्रंथ हैं- 'महेश सतसई' और 'जनरामायण'। इनकी स्फुट अवधी रचनायें 'आम की बगिया' में संकलित हैं, जो अभी अप्रकाशित है। मार्च 2008 में इनका निधन हुआ।

माधव–ये बैसवारी क्षेत्र के भारतेन्दु युगीन अवधी कवि हैं।

माधव प्रसाद–ये द्विवेदी युग के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने अपनी सृजन प्रतिभा अवधी साहित्य को समर्पित की।

माधुरी दास–इनका कविता काल सं. 1687 है भाषा अवधी है। विशेष विवरण अप्राप्त है।

माधोदास- माधोदास के बारे में विवरण अन्धकार के गर्त में ढका हुआ है। इनकी अवधी कहावतें जनमानस में खूब प्रचलित हैं। माधोदास का उल्लेख श्री राम नरेश त्रिपाठी ने अपनी पुस्तक 'ग्राम-साहित्य (भाग 3), में किया है.

मानदास–ये रामकाव्य परंपरा से जुड़े हुए प्रसिद्ध साहित्यकार रहे हैं। इन्होंने अपना काव्य साहित्यिक अवधी में रूपायित किया है।

मिहीलाल 'मिलिन्द'- मिलिन्द जी भारतेन्दु युगीन अवधी कवि थें डलमऊ में इनका निवास स्थान था। इनका अवधी साहित्य अप्रकाशित है।

मीर जलील–इनका पूरा नाम मीर अब्दुल जलील था। ये अरबी, फारसी, संस्कृत, हिन्दी के साथ-साथ संगीतशास्त्र के भी ज्ञाता थे। इनका समय सं. 1662 से 1726 ई. तक था। इन्होंने हिन्दी रचनायें 'जलील' उपनाम से की है। इनकी अवधी रचनाओं में अवधी तथा ब्रजावधी का सौन्दर्य देखा जा सकता है। इनके गुरू पं. हरवंश मिश्र बिलग्रामी थे। इनकी अवधी रचनायें हैं- प्रेम-कथा, शिख-नख आदि। प्रेम कथा चौपाइयों में रचित है और शिख-नख बरवै छंद में।

कुँवर मुकुंद सिंह–कुँवर साहब कोटा के निवासी थे। इन्होंने सं. 1768 में 'नल चरित' नामक अवधी ग्रंथ का सृजन कर अवधी साहित्य के प्रति अपना अनुराग प्रदत्त किया है।

मुनीशदत्त शर्मा 'मुनीश'- इनका विस्तृत विवरण तो प्राप्त नहीं है, किन्तु इनका अवधी काव्य-सृजन अपने में महत्वपूर्ण है। साहित्य अधिकतर अप्रकाशित है।

मुल्ला दाऊद –इतर स्त्रोत तथा अन्तः साक्ष्य के आधार पर मुल्ला दाऊद उ.प्र. के रायबरेली जिले के 'डलमऊ' नामक ग्राम के निवासी थे। अवध गजेटियर्स तथा रायबरेली गजे. में मुल्ला दाऊद के डलमऊ निवासी होने के उल्लेख हुआ है। इनके अनुसार डलमऊ के मुल्ला दाऊद नामक कवि ने हिजरी 779 में भाषा में 'चन्दैनी' नामक ग्रंथ का सम्पादन किया। कवि का रचना काल हिजरी 781 है। तथा शाहे वक्त के रूप में कवि ने फिरोजशाह तुगलक का वर्णन किया है। डा. माताप्रसाद गुप्त के अनुसार दाऊद की जन्म तिथि 1400 विक्रमी के आस-पास तथा मृत्यु-तिथि 1475 वि. के आस-पास है। अन्तःसाक्ष्य के आधार पर मुल्ला दाऊद का जीवन काल 14वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। दाऊद ने फिरोजशाह तुगलक का शासनकाल तथा जूनशाह का मंत्रित्व काल स्वयं देखा था और अपनी कृति का प्रणयन

जूनाशाह के सम्मान में किया था। इनके गुरू जैनुद्दीन थे। मुल्ला दाऊद ने अपनी अवधी कृति चांदायन की रचना दोहा-चौपाई छन्दों में किया है। दाऊद की भाषा साहित्यकार परिष्कार से दूर जाना भाषा है। अवध के केन्द्र बैसवारा की लोक संस्कृति, लोक जीवन के विविध आयाम इनकी रचना में जीवन्त हुए है।

मूनू कवि–ये अवधी भाषा के प्रसिद्ध कवि रहे हैं। इनका निवास स्थान बैसवारा क्षेत्र का असोकर क्षेत्र है। इकना आविर्भाव-काल भारतेन्दु युग रहा है।

मोहनदास–ये कृष्णकाव्य परम्परा के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने 'भागवत दशम स्कंध' नामक अवधी ग्रंथ का सृजन किया है।

मोहनदास दफ्तरी–ये संत दादूदयाल के शिष्य थे। 'ब्रह्मलीला' नामक इनका ग्रंथ है, जो प्रकाशित हो चुका है। भाषा अवधी है। चौपाई छंद का प्रयोग है।

डॉ. मोहममद अख़लाक- इनका जन्म 5 जुलाई सन् 1966 ई. को लखनऊ के काजीबाग मुहल्ले में हुआ था। इनके पिता श्री (जनाब) मो. इकबाल उद्दीन रेलवे के अवकाश प्राप्त कर्तव्यनिष्ठ कर्मचारी हैं। अख़लाक जी यों तो खड़ी बोली, अवधी और उर्दू तीनों में लेखन कार्य रहे हैं, परन्तु अवधी साहित्यकार के रूप में इनका विशेष स्थान है, क्योंकि जहाँ एक ओर इन्होंने दोहा, बरवै जैसे परम्परागत छंदों की रचना की वहीं दूसरी ओर अवधी के मृतप्राय कथा-साहित्य में नवजीवन का संचार किया है। इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं- दोहालोक, बरवै लोक, सोरठालहरी, 'ईद केर चंदा' (अवधी गद्य में कहानी-संग्रह) आदि।

युगलानन्यशरण- इन्होंने बचनावली (अवधी गद्य) नामक रचना का सृजन किया है। शेष विवरण अप्राप्त है।

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह–इनका जन्म 3 मार्च सन् 1967 को ग्राम सिसौना, पोस्ट सैफपुर, जनपद बाराबंकी में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री शंकरबख़्श सिंह है। लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय लेकर एम.ए., पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त करने के बाद ये वहीं सन् 1993 में प्रवक्ता पद पर नियुक्त हो गये। आलोचनात्मक कार्य करने के .साथ-साथ इन्होंने अवधी साहित्य के प्रति भी अपनी सेवा अर्पित की है। 'बिरवा', 'जोधइया', 'अवध-अवधी विविध आयाम' आदि अवधी पत्रिकाओं में इनकी कविताएँ प्रायः प्रकाशित होती रही हैं। 'गुहार', 'हम और तुम', 'साहेब के गुलाम', आदि लगभग 25 कविताएँ सृजित की हैं, जिसमें कुछ अप्रकाशित भी हैं।

योगेश्वराचार्य–ये सरभंग सम्प्रदाय के संत थे। इनका जन्म ग्राम रूपौलिया जनपद चम्पारन (बिहार) में सन् 1884 में हुआ था। सन् 1946 में इन्होंने साकेत को अपना निवास स्थान बनाया। गृहस्थी-परित्याग के पश्चात वैराग्यावस्था में इन्होंने अवधी भाषा में अनेक रचनाएँ प्रस्तुत हैं।

आचार्य रघुनन्दनप्रसाद शर्मा–इनका जन्म रायबरेली जनपद के ग्राम मोहनपुर मजरा छोटी खेड़ा, पो. भोजपुर, तहसील लालगंज में सन् 1877 ई.में हुआ था। इनके पिता श्री मथुराप्रसाद तिवारी भारतीय सेना में सूबेदार मेजर के पद पर थे। शर्मा जी की प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा गाँव के सरकारी प्राइमरी पाठशाला में कक्षा 8 तक हुई। ये विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे, जिससे अल्पवय में ही इन्होंने हिन्दी उर्दू का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। कलकत्ता प्रवास के कारण राष्ट्रीयता इनमें कूट कूट कर भर गई थी। अतः खद्दर की धोती, कुर्ता,अंगौछा, मृगचर्म के जूते पहनने लगे। स्वाध्यायी वृत्ति के रघुनन्दन जी ने घर पर ही वेदशास्त्र का गहन अध्ययन किया और उसके प्रकाण्ड विद्वान् बन गये। ये कुछ सनय सुरगुजा स्टेट में फारेस्ट आफीसर पद पर रहे। तदुपरांत वहीं के स्टेट कौंसिल के सदस्य भी रहे। स्वभाववश शर्मा जी अधिक समय तक कहीं नहीं ठहरते थें बारह वर्षो तक ये गाँव में रहे और निम्नलिखित ग्रंथों का प्रणयन किया- 1- वैदिक सम्पत्ति 2- अक्षर विज्ञान, 3- गायत्री मंत्र-महिमा, 4- गायत्री सम्पदा, 5-कान्य कुब्ज का इतिहास, 6-मिटीरिया डिमाइना आदि । महावीर प्रसाद द्विवेदी की सिफारशि पर बम्बई के सेंठ

रंगनाथ जी ने इनकी कृतियों का प्रकाशन करवाया। इन्होंने भारतीय ज्ञान-विज्ञान साहित्य, संस्कृति की ज्योति विदेशों में यथा-फिजी मलेशिया, अफ्रीका आदि में प्रज्वलित की तथा भारतीयों में भी जागृति पैदा की। कानपुर के निवासी अपने परम मित्र श्री सत्यदेव पाण्डेय वैद्य के पास प्रयाग नारायण मंदिर में रहते हुए सन् 1932 में 54 वर्ष की आयु में अचानक भगवान को प्रिय हो गये।

रघुनाथदास– इन्होंने विश्राम मानस (नाटक प्रतीकात्मक)ग्रंथ का प्रणयन किया था, जिसकी भाषा अवधी है। शेष विवरण अप्राप्त है।

रघुनाथदास 'रामसनेही'–बाबा रघुनाथदास अयोध्या में रामानुज सम्प्रदाय के गद्दीधर महात्मा हरीराम जी के शिष्य थे। इन्होंने सं. 1911 वि. में 'विश्रामसागर' नामक स्थान ग्रंथ का प्रणयन किया था। 'विश्राम सागर' तुलसीदास की दोहा-चौपाई शैली पर लिखा गया ग्रंथ है।

रघुनाथ सिंह चौहान–इनका जन्म सन् 1910 में ग्राम भवानीपुर, पोस्ट-इन्दौराबाग निकट बख्शी का तालाब जनपद लखनऊ के एक कृषक परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री भगवानदीन सिंह है। पारंपरिक भक्त कवि के रूप में इनका विपुल साहित्य है। निखिल हिन्दी परिषद लखनऊ ने सन् 1984 में छंदकार दिवस पर इनको यथोचित सम्मानित किया था। इनकी अवधी कृतियाँ हैं- गणेशचरित (महाकाव्य), चौबीसा, पचीसा, चालीसा, साठिका आदि लगभग 33 ग्रंथ। इनका एक मात्र श्री चन्द्रिका देवी चालीसा प्रकाशित हो सका है। इसके अतिरिक्त इन्होंने कीर्तन-भजन भी लिखे हैं।

रघुराज सिंह –ये बैसवाड़ा क्षेत्र के भारतेन्दु युगीन अवधी कवि है।

महाराज रघुराज सिंह –रामभक्त अवधी महाकवियों की श्रेणी से जुड़े हुए ये शीर्षस्थ महाकवि हैं। इन्होंने भी अपने काव्य सृजन का माध्यम 'राम' को ही स्वीकार किया। भाषा के रूप में साहित्यिक अवधी का प्रयोग किया।

रघुवंश– ये द्विवेदी युग की अवधी काव्यधारा से जुड़े हुए रचनाकार हैं। अवधी साहित्य में इन्होंने काफी योगदान किया है।

रत्नकुँवरि बीवी–ये कृष्ण-भक्त कवयित्री एवं राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद की दादी थीं। इनका पूरा जीवन भगवद्भक्ति में बीता। सं. 1857 वि. में इन्होंने 'प्रकरत्न' नामक प्रबन्ध-काव्य की रचना दोहा-चौपाई छंद में की थी, जिसकी भाषा ब्रज मिश्रित अवधी है। इस कृति में भक्ति भावना से सराबोर कृष्ण-चरित्र का निरूपण हुआ है।

रमाकांत श्रीवास्तव–श्रीवास्तव जी उन्नाव जनपद के निवासी हैं। ग्रामीण जीवन और प्राकृतिक सौन्दर्य का इनके हृदय पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। इनकी भाषा में अवधी का शुद्ध रूप विद्यमान है। भाषा में ठेठ ग्रामीण शब्दावली का प्रयोग है साथ ही कुछ नयापन भी।

रमेशचंद 'सुकंठ'- 1 जनवरी सन् 1920 को जन्में सुकंठ जी भटौली बेहंदरि, जनपद हरदोई के निवासी एवं प्रसिद्ध अवधी साहित्यकार हैं। इनके पिता का नाम गजोधर प्रसाद है। इन्होंने चकबंदी गीत, बटोही गीत नामक रचनाएँ अवधी भाषा में सृजित की है।

रमेशचन्द्र श्रीवास्तव- इटियाथोक, गोण्डा में जन्में श्रीवास्तव जी अवधी के भक्त कवि हैं। इन्होंने अपनी श्रद्धा अवधी भाषा के प्रति अनन्य भाव से अभिव्यक्त की हैं।

रमेश रंजन मिश्र–व्यक्तित्व एवं कृतित्व के धनी मिश्र जी लखनऊ क्षेत्र के निवासी हैं। इन्होंने अपने साहित्य सृजन में अवधी को विशेष स्थान देकर उसकी गरिमा को बढ़ाया है।

आचार्य रमेश शास्त्री– इनका जन्म 15 अगस्त सन् 1921 ई. को बाराबंकी जनपद के 'खोल' नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम पं. जगन्नाथ प्रसाद पाण्डे है। 7 वर्ष की अल्पावस्था में पिताजी का देहावसान हो गया। अतः इनका पालन-पोषण नानी द्वारा लखनऊ में हुआ। शिक्षा पूरी होने के बाद केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ लखनऊ में अध्यापन कार्य में लग गये। अवधी के अतिरिक्त इन्होंने

खड़ी बोली एवं ब्रज भाषा को भी अपनाया। अवधी में इनकी एकमात्र काव्यकृति 'बिरवा' है, जिसमें राजनैतिक, सामाजिक तथा भक्तिपरक रचनाओं का बाहुल्य है। शास्त्री जी ने समीक्षापरक अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया। अनुवाद द्वारा भी काव्य सृजन को आगे बढ़ाया।

रवीन्द्रकुमार श्रीवास्तव–इनका जीवन परिचय तो उपलब्ध नहीं है, किंतु 'सुख अंगार झरहुँ' नामक अवधी रचना प्रस्तुत कर इन्होंने अपना अवधी अनुराग प्रकट कर दिया है।

रवीन्द्र प्रकाश 'भ्रमर'- रचना- 'सीमा हेरि रही' है। परिचयात्मक विवरण अनुपलब्ध है।

आशुकवि 'रशीदजी'- इनका पूरा नाम श्री अब्दुर्रशीद खाँ 'रशीद' 'आधुनिक रसखान' है। पिता का नाम स्व. श्री अब्दुल हमीद खाँ है। इनका निवास स्थान सैयद राजन मुहल्ला (किला बाजार) रायबरेली है तथा पूर्वजों का निवास काबुल स्थित काकरजई पर्वत रहा है। ये सन् 1920 से 1960 तक जिला परिषद के अंतर्गत प्राइमरी पाठशाला के अध्यापक रहे। सन् 60 में सेवामुक्त हुए। इनकी रचनाएँ स्फुट रूप में मिलती हैं। रशीद जी रसखान की श्रेणी के भक्तकवि हैं। इनके काव्य का मुख्य रस भक्ति रहा है। ये श्रीकृष्ण के सख्य भाव के उपासक हैं।

रसिकेश जी- रचना 'गाँधी चालीसा' शैली दोहा-चौपाई। विशेष विवरण अप्राप्त।

रहीम–"बरवै नायिका भेद" नामक अवधी काव्य के रचयिता अब्दुर्रहीम खाँ खानखाना अकबर के नवरत्नों में विख्यात हैं। ये तुलसी के समकालीन थे। इनका जन्म सन् 1556 ई. में हुआ था। अकबर ने इन्हें पाटन की जागीर प्रदान की थी, फिर इन्हें गुजरात की सूबेदारी भी। 'खानखाना', पंचहज़ारी , वकील आदि उपाधियाँ इनके वैभव और गौरव की साक्षी हैं। 'बरवै नायिका भेद' अवधी में नायिका भेद का सर्वोत्तम ग्रंथ है। इसमें विभिन्न नायिकाओं के उदाहरण हैं। रहीम ने बरवै छंदों में गोपी-विरह का वर्णन भी किया है, जो स्वतंत्र रूप से विचारणीय है।

रहीम (शेख)- शेख रहीम अरवल नगर के निवासी थे। इनके पिता का नाम यार मोहम्मद था। सं. 1915 में इन्होंने 'भाषा-प्रेमरस' नामक अवधी काव्य का सृजन किया।

रागेश मिश्र–इनकी जन्मस्थली एवं जन्म-तिथि विवादस्पद है। यह विवाद पहले 'स्वतंत्र भारत' दैनिक पत्र के माध्यम से प्रकट हुआ। इस विवाद से हटकर स्वयं मिश्र जी का कहना है कि उन्होंने अपनी माता से सुना है कि मंगलवार फाल्गुन 8 संवत 1991 वि. उनकी जन्म तिथि है और रामनगर, आलमबाग (कानपुर रोड), लखनऊ के एक मकान की छोटी सी खपरैल की छाया थी- जन्म स्थली। किन्तु इस तथ्य को प्रमाणित करने वाली जन्म कुंडली आत तक नहीं बन पायी। मिश्र जी की काव्य प्रतिभा विभिन्न शैलियों एवं विभिन्न बोलियों के माध्यम से प्रस्फुटित हुई है। इनकी रचनाओं में लगभग 500 कविताएँ शताधिक लघु कथाएँ, 200 निबंध और 50 साक्षात्कार शामिल हैं।

डॉ. राघवबिहारी सिंह 'काव्य केहरी'- ये ग्राम बरावाँ, तहसील-हैदरगढ़, जिला-बाराबंकी के निवासी हैं। निबंध-अवँढ़्यारा, अपनी बोली मा बात करौ, फर्चई, का यहु हुमसे हिन्दुस्तानु, बोली न ब्वालौ ठीक नहीं, तुम हमार अल्ला मिया न आहिउ, देख काल चला जग जाई, धरम के भरम, जब तक स्वाँसा तक तक आसा 'काव्य-कानन' इसमें अनेक अवधी कविताएँ हैं। सम्पादित कृति-'अवधी के ममाजवादी कवि पं. ब्रजलाल भट्ट 'ब्रजेश'। आदि हैं। केहरी जी ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज में परिव्याप्त दुनियादारी, भौतिकता, भ्रष्टाचार, अकर्मण्यता आदि प्रवृत्तियों का समर्थन किया है। इन्होंने अपनी भाषा में लुप्तप्राय देशज शब्दों का प्रयोग करते हुए जनसामान्य की भाषा को महत्ता प्रदान की है।

राजकिशोर मिश्र–जन्म सन् 1953, खेड़ा अटौरा, रायबरेली (निवास स्थान)।

राजनारायन सिंह चन्देल–इनका जन्म कोटिया, फतेहपुर में हुआ था। इन्होंने अवधीभाषा में 'तैरनिहार शुभानिये जू' आदि कविताएँ लिखकर अपना अवधी प्रेम प्रदर्शित किया है।

राजबली यादव–यादव जी का जन्म सन् 1911 में ग्राम अरई, जलालपुर जनपद फैजाबाद में हुआ था।शैक्षिक स्तर सामान्य है, किंतु ये प्रतिभाशाली रचनाकार हैं। ये स्वतंत्रता संग्राम के एक वीर सैनिक रहे हैं। अपनी प्रेरक उद्बोधक रचनाओं के माध्यम से इन्होंने जन-चेतना का बिगुल बजाने का कार्य किया है। यादव जी अवधी में 'आल्हा' लिखने में बड़े कुशल हैं। 'भारत की लूट' में आल्हा शैली में प्रस्तुत करने अंग्रेजीं के काले कारनामों को उजागर किया गया है। 'मोरे पिछवरवा जमीदार भइया मीत लहरी के लहरा भीजै दे' इनकी अवधी भाषा की प्रख्यात रचना है। इनके कई नाटक तथा गीत संकलन भी हैं।

राजाराम बाजपेयी 'कुमुद'- रामकोट, सीतापुर के निवासी कुमुद जी अवधी के प्रति समर्पित साहित्यकार हैं। इन्होंने 'कलियुग का चक्कर' नामक कृति के साथ-साथ ढेर सारा सृजन अवधी साहित्य को अर्पित किया है।

प्रो. राजेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव–ये सिविल लाइन्स, बहराइच (उ.प्र.) के निवासी हैं। इन्होंने 'अवधी भाषा एवं साहित्य का इतिहास' नामक शोधपरक पुस्तक अवधी साहित्य को समर्पित कर अवधी भाषा के इतिहास लेखन को आगे बढ़ाया है। इस पुस्तक का प्रकाशन 2 अक्टूबर सन् 1993 ई. को हुआ। ये सम्प्रति किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय बहराइच के हिन्दी-विभागाध्यक्ष है।

डॉ. राधा पाण्डेय–फैजाबाद की प्रसिद्ध कवयित्री हैं।

राधा बल्लभ–वर्तमान अवधी के लोकगीत लेखकों में इनका स्थान महत्वपूर्ण है।

राधेश्याम तिवारी- इनका जन्म प्रतापगढ़ जनपद के पूरे वीरबल नामक ग्राम में 1940 ई. के लगभग हुआ था। पिताजी माताबदल तिवारी स्वच्छंद प्रकृति के व्यक्ति हैं। अतः उनकी उन्मुकता का इनपर भी प्रभाव पड़ा है। हिन्दी में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ये गाँव के पास एक विद्यालय में अध्यापन कार्य कर रहे हैं। सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक समस्याओं से सम्बद्ध विषयों को अपनी कविता में विशेष स्थान दे रहे हैं।

राधेश्याम पाण्डेय–इन्होंने राष्ट्रीय सोहर लिखकर अवधी भाषा के प्रति अपना अनुराग प्रकट किया है।

प्रो. राम अकबाल त्रिपाठी 'अंजान'- ये फैजाबाद निवासी अंजान जी अवधी भाषा के स्थान प्राप्त कवि हैं।

राम अचराज तिवारी–बस्ती जनपद में जनमें तिवारी जी प्रतिभा के धनी कलाकार हैं। इन्होंने अपनी अनेक रचनाओं में अवधी को महत्व प्रदान किया है।

रामआधार लाल- इनका जन्म 1924 ई. में प्रतापगढ़ जनपद के 'कुटिलिया' नामक ग्राम में हुआ। साहित्यरत्न की उपाधि प्राप्त करने के उपरांत ये आजकल इण्टर कालेज लक्ष्मणपुर में अध्यापन कार्य कर रहे हैं। इन्होंने अधिकांशतः ग्रामीण समस्याओं और सामाजिक विषयों पर अवधी में कविताएँ लिखी हैं।

रामउजागर दुबे–दुबे जी का जन्म 13 जुलाई सन् 1908 को गानेपुर, जनपद फैजाबाद में हुआ था। इनकी अवधी कृतियाँ करमू प्रधान धरमू सरपंच, पुरखों की थाती (नाटक) प्रकाशित हो चुकी हैं।

राजर्षि दास–ये रायबरेली के निवासी दास जी अवधी भाषा में अपनी भावनाएँ अभिव्यक्त कर अत्यंत प्रतिष्ठा प्राप्त की है।

रामकिशन मौर्य- प्रतापगढ़ के चिलबिला गाँव के निवासी मौर्य जी अवधी साहित्य क्षेत्र के जाने माने कवि हैं।

पं. रामकुमार मिश्र 'घोंघा'- मिश्र जी का जन्म सन् 1935 ई. में लखनऊ जनपद के गोसाईगंज कस्बे में हुआ था। सिद्धेश्वर साहित्य संस्थान गोसाईगंज के ये संस्थापक एवं संरक्षक हैं। इस संस्था के

माध्यम से मिश्र जी आस-पास के कई जनपदों के उदीयमान कवियों को कवि-कर्म के प्रति प्रेरित कर रहे हैं। राष्ट्रीय भावधारा की कविताओं (खड़ी बोली) के लेखन में अपनी विशिष्ट पहचान रखते हुए भी हास्य एवं व्यंग्य (अवधी) के क्षेत्र में श्री मिश्र जी ने विशेष ख्याति प्राप्त की है। ये रामपाल त्रिवेदी इंटर कालेज में अंग्रेजी विषय के प्रवक्ता पद पर कार्यरत होने के बावजूद हिन्दी कविता के प्रति विशेष अनुराग रखते है। मिश्र जी अनेक सामजिक संस्थाओं के प्राण एवं प्रेरणास्रोत हैं। इन्होंने गीत, छंद, मुक्तक, लोकगीत, गज़ल जैसी सभी साहित्यिक विधाओं में सफल काव्य संरचना की है। इन्होंने रामलीला, नाटक, एकांकी आदि का भी सफल लेखन किया है। कविकर्म के साथ-साथ ये एक अच्छे अभिनेता एवं कुशल नाट्य निर्देशक भी रहे हैं।

डॉ. रामकुमार सिंह–महरामऊ जनपद उन्नाव के निवासी डॉ. सिंह अवधी के प्रति अटूट श्रद्धा रखते हैं। इन्होंने अपने गीतों एवं कविताओं में अवधी भाषा को सर्वाधिक स्थान दिया है।

रामकृष्ण दीक्षित 'फक्कड़'- इनका जन्म सन् 1936 में दोस्तपुर अमावाँ, रायबरेली में हुआ था। इन्होंने अपने अवधी गीतों मे लोकजीवन की समस्याओं और बिद्रूपताओं को उजागर किया है। सन् 1983 में इनका असामयिक निधन हो गया।

रामकृष्ण संतोष–इनका जन्म 7 जून 1948 को औरंगाबाद-खीरी लखीमपुर में हुआ है। 'बिरवा' अवधी पत्रिका के तृतीयांक में इनकी प्रथम अवधी रचना छपी, जिसका पर्याप्त स्वागत हुआ। इनकी कविताओं में आत्मालोचन, आत्मविश्लेषण एवं विवेचन की प्रवृत्ति प्रधान रहती है। आत्मवेदना तो मूल बिन्दु ही है। इनकी कविता की यह विशिष्टता रही है कि उसमें कहीं अतिरंजना का पुट नहीं आने पाया है। इनकी अवधी कविताओं में लोकभाषा का सहज स्वाभाविक प्रयोग तथाभाव-सम्प्रेषण की अपूर्व क्षमता है। कवि की अवधी पश्चिमी अवधी अथवा बैसवारी अवधी का आभास कराती है। कहावतों के प्रयोग से भाषा में लाक्षणिक शक्ति विद्यमान है।

रामगुलाब द्विवेदी- सं. 1896 मे जन्में द्विवेदी जी रामकाव्य परम्परा से सम्बद्ध अवधी काव्यकार रहे हैं। इनकी अवधी कृतियाँ हैं- बरवा, और राम गीतावली।

रामगुलाम वैश्य–वर्तमान अवधी कवियों में इनका नाम उल्लेख्य है। 'जो प्रभु हम पटवारी होइत' आदि कविताओं के माध्यम से इन्होंने भ्रष्टाचार की ओर ध्यान आकर्षित किया है।

रामगोपाल पाण्डेय 'शरद'- ये फैजाबाद जिले के निवासी एवं अवधी भाषा के प्रति समर्पित साहित्यकार हैं।

रामचरणदास 'करुणासिन्धु'- इनका जन्म सं. 1760 में जनपद प्रतापगढ़ के एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। ये भगवान राम के उपासक थे। मानस की सर्वप्रथम टीका इन्होंने ही की। इन्होंने 24 ग्रंथों की रचना की है। इनका देहावसान माघ शुक्ल 9, सं. 1888 को हो गया। मानस की टीका अवधी गद्य की रचना है।

रामचरित उपाध्याय- इनका जन्म सन् 1872 मे जनपद गाजीपुर में हुआ था। अवधी, ब्रज और खड़ी बोलीपर इनका समान अधिकार था। बरवै छंद में 'बरवा चौसई' नामक अवधी कृति बहुत प्रसिद्ध हुई। सन् 1938 में इनकी मृत्यु हो गयी।

डॉ. रामचरित्र सिंह- ये संप्रति प्रतापगढ़ जिले के पी.वी.पी.जी. कालेज में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद पर सेवारत हैं। विस्तृत विवरण प्राप्त नहीं है, फिर भी इतना अवश्य प्रमाण है कि इन्होंने अवधी साहित्य की सेवा की और करने में तत्पर हैं।

डॉ. राम जवाहर द्विवेदी –इनका जन्म बस्ती जनपद की हरैंया तहसील के नगरा गंजा गाँव में 13 दिसम्बर 1941 ई. को हुआ था। पिता का नाम पं. रामराज दुबे है। द्विवेदी जी ने अवधी साहित्य की

सेवा पूरे मनोयोग के साथ की है, जिससे सृजन क्षेत्र में पर्याप्त श्रीवृद्धि दृष्टिगत हुई है। ये अवधी के अनूठे सवैयाकार हैं। 'पंचामृत' इनका अवधी काव्यग्रंथ है। 'लिफाफा', 'झरोखा' इनकी प्रमुख पुस्तकें हैं।

रामजी दास–अवधी के वर्तमान लोकगीत सर्जकों में इनका स्थान उल्लेख्य है। इनके गीतों में आध्यात्मिकता का प्रभाव अधिक परिलक्षित हुआ है।

रामजी शरण–ये कृष्णकाव्य परम्परा के महाकवि हैं। इन्होंने 'कृष्णायन' महाकाव्य का सृजन अवधी भाषा में करके उल्लेखनीय कार्य किया है।

रामदत्त तिवारी 'कुलीन'- इनका जन्म सन् 1907 ई. में ग्राम रौसिंगपुर (निकट मिश्रिख तीर्थ) जिला सीतापुर में हुआ था। इनकी शिक्षा हाईस्कूल तक रही। ये गन्ना विभाग में सुपरवाइजर हो गये। इनकी अवधी की प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं- कुलीनता का नंगा नाच, नारद मोह, काग भुसुण्डि-गरूड़ संवाद, दुर्गादर्शन, गंगा गौरव, अंगद-रावण-संवाद, लंका-दहन, गन्ना गाथा, गुदगुदी बंगलादेश की लड़ाई आदि। इनकी अवधी रचनायें 'सुकवि' में निरन्तर प्रकाशित होती रही हैं। इनकी भाषा में लोकजीवन और लोकभाषा की सरलता है। हिन्दी सभा, सीतापुर इन्हे सम्मानित भी कर चुकी है। भाषा ठेठ अवधी है।

राम्दुलारे 'विद्याकर'- इनका जन्म रायबरेली में सन् 1951 में हुआ था। वर्तमान में ये अवधी भाषा के प्रति समर्पित भाव से कवि-कर्म में रत हैं।

रामनयन सिंह काका'- इनका स्थान अवधी साहित्य में अति प्रशंसनीय है। इन्होंने 'मंगरू कै अखबार सावन कै फुहार', के साथ-साथ लगभग एक दर्जन लोकगीतों की पुस्तकें अवधी लोक-साहित्य की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए सृजित की हैं। 'अवध अध्यात्म रामायन' शीर्षक से महाकाव्य की सर्जना भी की है। फलस्वरूप सन् 1982 एवं 1987 में 'जायसी सम्मान' से सम्मानित किये गये।

रामनरेश त्रिपाठी–त्रिपाठी जी का जन्म 1889 ई. में और निधन 1962 ई. में हुआ। अपने खड़ी बोली प्रबन्धों-पथिक, स्वप्न मिलन आदि के लिए तो त्रिपाठी जी को अपरिमित यश मिला ही है, अवधी लोक साहित्य के सर्वेक्षण कार्य में इनकी पहल प्रशंसनीय है। इन्होंने आठ खण्डों में प्रकाशित 'कविता कौमुदी' के भाग 4 में लोकगीतों का दुर्लभ संग्रह प्रकाशित किया है। इसके अतिरिक्त सोहर 'घाघ और भड्डरी' जैसी कृतियों का प्रकाशन अवधी साहित्य-सेवा की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

रामनरेश मिश्र 'कात्यायन'- खीरी जनपद के गोला गोकर्णनाथ के निवासी कात्यायन जी एक भावुक रचनाकार हैं। इनकी रचनाओं में संवेदना अधिक अभिव्यक्त हुई है। इनकी प्रिय भाषा अवधी है।

पं. रामनाथ 'ज्योतिषी'- इनका जन्म रायबरेली जनपद के भैरमपुर गाँव में सन् 1874 में हुआ था इन्होंने अपने ग्रंथ 'राम तिलकोत्सव' की दसवीं कला (अध्याय) में अवधी के बरवै छंद का प्रयोग किया है। इनका देहावसान सन् 1943 में हुआ।

रामनाथ शर्मा- जन्मस्थान- सिधौली, सीतापुर। रचना-'भारत माँ दुनिया ते न्यारी।'

पं. रामनाथ शर्मा ज्योतिषी- इनका समय 1953 ई. है। ये चंदनिड़ा ग्राम तहसील डलमऊ, जिला रायबरेली के निवासी थे। इनके पिता का नाम प्रयागदत्त शर्मा था। इनकी वंशभूषा साधुओं की सी थी। ये संगीताचार्य, व्याकरणाचार्य तथा सर्वाधिक ज्येतिषी के रूप में लोकप्रिय एवं चर्चित थे। ये चित्रकला के भी अच्छे ज्ञाता थे, राधाकृष्ण के अनन्य भक्त थे और राधाभाव के माधुर्योपासक कवि एवं संगीतज्ञ भी। उन्हीं से सम्बद्ध कवित्त रचते थे और राधा कृष्ण का आकर्षक मोहक चित्र तैयार करते थे। ये खड़ी बोली तथा ब्रज भाषा में साहित्य रचते थे। कवितायें छंदोबद्ध होती थीं। इनकी मुख्य रचनायें हैं- 1-लालित्य-पद कुसुमाकर, 2- राधिका विरहानल,3- उषाविलास,, 4- श्री कृण्णतत्व निरूपण निकुंज, 5- स्वराज्य कुंज, 6- प्रेमामृत तरंगिणी, 7-श्री राधा प्रमाण कुसुमांजलि।

रामनारायण त्रिपाठी–त्रिपाठी जी का जन्म सन् 1897 में ग्राम भेलावाँ चतुरैया, जिला सीतापुर में हुआ था। इनके पिता का नाम भूधर लाल त्रिपाठी था। त्रिपाठी जी में देश के प्रति अनुराग था। ये कांग्रेसी

कार्यकर्ता और स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। अपने जीवन काल में ये कई बार राष्ट्रीय आन्दोलनों के संदर्भ में जेल गये तथा अनेक यातनायें भी सहीं। इनका जीवन एक कृषक का था। इन्होंने अपनी अवधी कविताओं में अपने युग-बोध का मार्मिक परिचय दिया है। पराधीन देश की दुरावस्था ही इनके लेखनी का उपजीव्य बना। इनकी अवधी रचनायें इस प्रकार हैं- किसान संदेश - 1933 ई. में प्रकाशित, दादनि और हरगंगा, जवानी, बुढ़ापा आदर्श भारत, गजेन्द्र मोक्ष, त्रिपुर दहन, द्रोपदी दुकूल, तथा जरासंध-वध आदि। इनकी रचनाओं में बैसवारी अवधी का रूप परिलक्षित होता है।

रामनारायण त्रिपाठी 'मित्र'- मित्र जी सीतापुर जनपद के चतुरैया भिलावाँ के निवासी एवं महत्वपूर्ण अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने अपना अवधी प्रेम 1939 ई. में प्रकाशित 'किसान संदेश' के माध्यम से प्रकट किया है। 'हर गंगा' 'दादनि' इनकी विशिष्ट अवधी रचनाएँ हैं।

रामनारायण सिंह–इनका निवास स्थान था फैजाबाद एवं अवधी फाग (काव्य-सृजन)।

रामप्रकाश त्रिपाठी–संदना, सीतापुर के निवासी त्रिपाठी जी उच्च स्तर के अवधी कवि हैं। इन्होंने सन् 1952 में 'पंचायत का प्रपंच' नामक कृति का सृजन किया।

रामप्रकाश यादव 'निर्झर'- निर्झर जी का जन्म सन् 1948 में रायबरेली जनपद के ग्राम पूरे कालिका (सेमरपहा) में हुआ था। ये एम.ए., बी.एड. की शिक्षा प्राप्त कर अध्यापन कार्य में लग गए। इनकी रचनायें देश-प्रेम से पूरित हैं, इनमें आधुनिक विकास का स्वर है। इन्होंने अपनी कवितायें लोकगीत शैली पर लिखा हैं। अवधी में बैसवारी का पुट है।

पं. रामप्रसाद पाण्डेय 'द्विजदीन'- ये सुल्तानपुर जिले के निवासी एवं अवधी साहित्यकार रहे हैं। इन्होंने राम-कथा का आधार बनाकर 'राग रामायण' नामक अवधी कृति का सृजन किया है।

रामप्रसाद यादव- ये फतेहपुर के निवासी एवं अवधी भाषा के सर्जक साहित्यकार हैं।

रामबल्लभ शरण–ये 19वीं शताब्दी के रसिक सम्प्रदाय के उत्कृष्ट रामभक्त हैं। इनका जन्म सन् 1858 में मृत्यु 1932 में हुई थी। 'युगलविहार पदावली' इनका अवधी काव्य-संग्रह है।

डॉ. रामबहादुर मिश्र 'अवधेन्दु'- अवधेन्दु जी का जन्म 12 सितम्बर 1955 ई. को ग्राम-जमुवारी शुकुल बाजार, जनपद सुलतानपुर में हुआ था। इनके पिता का नाम राम सुमिरन मिश्र है। लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी में पी-एच.डी. की उपाधि 1982 ई. में प्राप्त कर हैदरगढ़, बाराबंकी में अध्यापन कार्य से जुड़ गये। बाराबंकी में रहते हुए वहीं से त्रैमासिक पत्रिका अवध भारती 'जोधइया' का सम्पादन कार्य किया। संप्रति अवध भारती समिति, हैदरगढ़ से ही 'अवध-ज्योति' पत्रिका का संपादन कर रहे है। इनकी अवधी कृतियाँ हैं- अवधी की लोककथाएँ, अवधी के मुहावरे फाग ग्रंथावली, अवध की संस्कृति तथा एक रहे राजा अवधी निबन्धों का संग्रह पर जायसी नामित पुरस्कार से सम्मानित। डॉ. राम बहादुर मिश्र ने अवधी फाग साहित्य पर पी.एच.डी. प्राप्त की। अवध मा होली खेलैं रघुबीरा, नखत-1, नखत-2, अवधी लोकोक्तियाँ, अवधी के प्रतिनिधि मुहावरे ये माटी अवध रानी है, अवधी लोकधारा जैसे मूल्यवान ग्रंथों के माध्य से अवधी साहितय विशेष रूप से लोक साहित्य का भंडार भरा है।

रामबहादुर सिंह 'भदौरिया'- ये मूलतः खड़ी बोली के कवि हैं। अवधी मातृभाषा होने के कारण इन्होंने अवधी के प्रति भी आस्था एवं मोह का प्रदर्शन किया है। इनका लोकगीत-'जिया मा धधकई होरी' बहुश्रुत है।

राम मनोहर –ये द्विवेदी युग के अवधी साहित्यकार हैं, जिन्होंने अवधी काव्यधारा को अक्षुण्ण बनाये रखने में सराहनीय कार्य किया।

रामरक्षा त्रिपाठी निर्भीक- ये फैजाबाद के निवासी एवं अल्पख्यात कवि हैं।

रामलखन सिंह –ये प्रतापगढ़ जनपद के 'लखीमपुर' नामक ग्राम के निवासी हैं। एम.ए. की परीक्षा

उत्तीर्ण कर सम्प्रति अध्यापन कार्य कर रहे हैं। अवधी गीतों के अतिरिक्त खड़ी बोली में भी इन्होंने गीत लिखे हैं। कृषक-जीवन को आधार मानकर इन्होंने गीत अधिक लिखे हैं।

रामशंकर शर्मा 'प्राचीन'- रचना-'खादी चुनरिया' के माध्यम से ये अपना राष्ट्रानुराग अभिव्यक्त करने वाले कवि है।

रामशरण सिंह— ये प्रतापगढ़ जनपद के खटवारा नामक गाँव के निवासी हैं। मिडिल स्कूल तक शिक्षा प्राप्त कर निकटवर्ती प्राथमिक विद्यालय, डोमीपुर में कुछ समय तक अध्यापन कार्य किया। कुछ समय उपरान्त ये रीवाँ चले आए और वहीं राजकीय माडल़ बेसिक स्कूल में अध्यापक हो गए। बाद में एम.ए. भी कर लिया। साहित्य और कला के प्रति इनकी अभिरूचि बाल्यकाल से ही थी और इसका बहुत कुछ श्रेय इनके पिताजी को है, जिन्हें सूर, कबीर तथा तुलसी के सैकड़ो पद कंठस्थ हैं। 'गाँव की धरती' इनकी प्रकाशित रचना है। इस संग्रह के अधिकांश गीत गाँव के किसान तथा वहाँ की प्रकृति का अनमोल चित्र अंकित हुआ है। शरण जी मानवतावादी कवि है। इन्होंने प्रेम और सौहार्दमूलक भावना के विकास से ही समाज और विश्व का कल्याण संभव कहा है। इनकी काव्य भाषा पूर्वी अवधी है। इनकी भाषा पर तुलसी की भाषा का व्यापक प्रभाव पड़ा है।

रामसागर शुक्ल 'सागर'- सागर जी सीतापुर जनपद के अशोकपुर बनियामऊ के निवासी हैं। 'होरी' नामक रचना इन्होंने अवधी भाषा में कई खण्डों में प्रस्तुत की है, जो अत्यन्त उच्चकोटि की है।

राम सुंदर –बस्ती जनपद के राघूपुर कस्बा के निवासी ये अवधी रचनाकार सेवी हैं। ये अवधी साहित्य सृजन मं उत्साहपूर्वक संलग्न हैं।

रामस्वरूप— 18वीं शताब्दी में जन्में रामस्वरूप जी संत चरनदास जी के शिष्य थे। इन्होंने 'गुरूभक्ति प्रकाश' नामक अवधी ग्रंथ का प्रणयन किया, जिसमें इन्होंने गुरू चरनदास जी के चरित्र का उल्लेख किया है।

रामस्वरूप मिश्र 'विशारद'- ये रायबरेली जिले के रहने वाले थे। पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र के समान ये भी राजनीति में रूचि लेते रहे हैं। 'कृष्णायन' और 'सुविचार सतसई' में समाज नीति की बाते हैं तो दूसरे ग्रंथ कृष्णायन में भक्ति की प्रधानता है। इनकी शैली सरल एवं प्रभावपूर्ण है।

रामानुज मिश्र –इनका जन्म सन् 1827 में जिला सुल्तानपुर के महरानी पश्चिमी गाँव में हुआ था। मिश्र जी ने 'भाउ तरंग' नामक अवधी कृति प्रदान करके अवधी के प्रति अपनी आस्था प्रकट की है। इन्होंने तमाम अन्य कविताएँ भी सृजित की है। इनकी भाषा पूरबी अवधी है।

रामाश्रय गुप्त–रचना-मांझी हूवै जाऔ तैयार आदि अवधी कविताओं के रचयिता गुप्त जी अल्पख्यात साहित्यकार हैं।

रामेश्वर प्रसाद मिश्र–सतना में कार्यक्षेत्र होने के बावजूद मिश्र जी अवधी भाषा एवं अवधी संस्कृति के बड़े हिमायती हैं। इन्होंने अपने काव्य सृजन में अवधी को अपनी काव्य भाषा स्वीकार किया है।

रामेश्वर श्रीवास्तव 'बाबूलाल'- इनका जन्म सन् 1910 में रायबरेली जनपद में हुआ। इनके काव्य में राष्ट्रीय चेतना मुखरित हुई है। 'रायबरेली का इतिहास' (सन् 1949) इनका प्रसिद्ध अवधी काव्य है, जिसमें आल्हा शैली को अपनाया गया है।

रूद्रदत्त त्रिपाठी- त्रिपाठी जी का निवास स्थान सुल्तापुर जनपद के मुसाफिरखाना में है। इनकी 'गोपियों का विरहा' नामक अवधी कविता उल्लेखनीय है।

रूद्रेन्द्रनाथ- ये बहराइच जिला के निवासी हैं। इनकी प्रतिभा साहित्य सृजन के रूप में प्रकट होती रही है।

रूप नारायण त्रिपाठी— जौनपुर निवासी त्रिपाठी ने भोजपुरी के साथ अवधी साहित्य की जो सेवा

की है, वह अति महत्वपूर्ण है।

रेवाराम सिंह– इनकी रचना 'कांग्रेस का आल्हा' है, जिसके माध्यम से इन्होंने राजनीतिक वातावरण को प्रदर्शित किया है।

लक्षदास–ये अवधी कृष्ण-काव्य परम्परा के अत्यंत प्रसिद्ध कवि थे और तुलसी के समकालीन थे। इन्होंने 'कृष्ण-रस-सागर', 'भागव पुराण-सार', 'दोहावली', आदि कई ग्रंथों का प्रणयन किया है। इनमें से 'कृष्णचरित्र' का विशेष प्रकाशन हुआ है।

बाबा लक्ष्मणदास बैरागी–बैरागी जी हरदोई जनपद (उ.प्र.) के निवासी थे। इनका जन्म स्थान बता पाना कठिन है। यह निश्चित है कि इनका अधिकांश समय बाँसा ग्राम में व्यतीत हुआ था। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम सन् 1857 के समय ये विद्यमान थे। अनुमानतः इनका जन्म ई. सन् 1800 तथा मृत्यु 1864 ई. में हुई थी। अवधी भाषा में इन्होंने 'पंचकों' की रचना की है।

लक्ष्मण प्रसाद 'मित्र'– मित्र जी का जन्म सन् 1906 में 'हिंडौरा' (सीतापुर) में वैश्य कुल में हुआ था। इन्होंने अवधी में आल्हा, बारहमासा, भजन माला आदि की रचना की। पढ़ीस जी के संपर्क में आने पर इन्होने अवधी रचनाएँ लिखनी आरंभ कीं। प्रमुख कृतियों में बुड़भस, सोमवारी, प्रेमलीला, सराध की श्रद्धांजलि, सिलहारिनी, बहू की सीख, घूस का जन्म, मड़ए की धूम, तशरीफ, दो खेतों की कहानी काव्य रचनाएँ हैं। इनके सिवा 'वाणशय्या' नामक नाटक भी लिखा है। मिश्र जी की लेखनी सामाजिक समस्याओं तथा कुरीतियों के चित्रण एवं उनके समाधान हेतु सक्रिय रही है।

लक्ष्मण शरण- इन्होंने रामलीला बिहार (लीलानाटक) नामक अवधी रचना का सृजन सं. 1850 में किया था। शेष विवरण अप्राप्य है।

लक्ष्मीनारायण यादव 'बन्दा'- बन्दा जी का जन्म जनवरी सन् 1930 ई. को लखनऊ में हुआ था। इनके पिता स्व. गयादीन आर्म पुलिस विभाग में कार्यरत थे, जिनका मूल निवास बाराबंकी जिले की हैदरगढ़ तहसील का मैनपुरवा नामक ग्राम है। बंदा जी ने पं. गोमती प्रसाद पांडेय को अपना काव्य गुरू माना है। ये संगीत एवं काव्य प्रतिभा के जितने धनी हैं उतने ही सदाचरण और स्वाभिमान के। इन्होंनं अवधी के अतिरिक्त खड़ी बोली के छंदविद्या में अनेक छंद लिखे हैं। गीत-गजल में भी इनकी लेखनी चली है। इन्होंने अवधी भाषा में अनेक श्रेष्ठ कविताएं लिखी हैं।

लक्ष्मीप्रसाद 'प्रकाश'- ये जनपद रायबरेली के तकनपुर सेहगो गाँव में सन् 1953 में जन्में थे। वसन्त लाल पिता तथा श्रीमती मोहन देवी इनकी माता हैं। संस्कृत विषय से ये एम.ए. हैं तथा इस समय रायबरेली के स्वास्थ विभाग में कार्यरत हैं। अवधी की अनेक रचनायें विविध पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। 'मामाखी' नाम से एक अवधी काव्यसंकलन इन्होंने तैयार किया है, जो अभी अप्रकाशित है। अवधी की विभिन्न संस्थाओं से प्रकाश जी सन्नद्ध हैं। राष्ट्रीय भावधारा, कोरी स्वार्थपरता, भ्रातृत्व का नष्ट होना, अलगाववाद की भावना आदि की मार्मिक अभिव्यक्ति इन्होंने अपनी रचनाओं में की है।

डॉ लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'- निशंक जी का जन्म कार्तिक कृष्ण पक्ष की चतुर्थी सन् 1918 ई. को हरदोई जिले के ग्राम भगवन्तनगर में हुआ था। इनका जीवन एक अध्यापक और कवि का रहा है। 'सनेही जी' के पत्र 'सुकवि' के बन्द हो जाने पर इन्होंने 'सुकवि विनोद का सम्पादन कर पारम्परिक हिन्दी कविता की भरसक रक्षा की है। जयनारायण डिग्री कालेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष के पद से सेवा निवृत्त होकर अद्यतन साहित्य-सृजन में निशंक जी लगे हुए हैं। 'पुरवाई' इनकी अवधी कविताओं का संकलन है। 'भारत-माता', 'बाबू हमार', 'जाड़ु', 'हेमन्त', 'बसन्त', 'ग्रीष्म', 'अलाव', 'परभातृ', 'किसान', 'पंचायत राज', 'बैल', 'असल नकली का भेदु', 'चुनाव', 'नेता', 'सुधार', आदि निशंक जी की विशेष उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। ये सवैया छंद पर विशेष अधिकार प्राप्त कवि हैं। इनकी भाषा में ग्राम्य अवधी का सहज सौन्दर्य दिखता है।

ललकदास–सन् 171 ई. में आविर्भूत ये लखनऊ निवासी रामानन्दी सम्प्रदाय के गद्दीधारी वैष्णव संत थे। ये भगवान राम की उपासना शृंगार भाव से करते थे। ललकदास विचरण करने वाले महात्मा थे। इनके दो ग्रन्थों का पता चला है। (1) सत्योपख्यान (1768ई.) एवं (2) भाषा कोशल खण्ड (1793 ई.) इनका प्रतिपाद्य विषय राम की विलास क्रीड़ाओं का वर्णन है। अधिकांश तुलसीदास की दोहा-चौपाई शैली में इन्होंने काव्य सृजन किया है।

ललिता प्रसाद- ये द्विवेदी युग के अवधीकवि हैं। अपने युग में इन्होंने इस काव्यधारा को सतत प्रवहमान बनाये रखने में अपना भरपूर योगदान किया है।

लवकुश दीक्षित–ये बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस' जी के पुत्र हैं। इनका जन्म सन् 1933 में ग्राम अम्बरपुर जनपद सीतापुर में हुआ था। लवकुश जी के चारों भाई अवधी काव्य की सेवा में संलग्न हैं। मच के सफल कवि लवकुश विशेषतः अवधी में गीत और लोकगीत लिखतें हैं। इनका अवधी गीतों का संकलन 'अंजुरी के मोती' सन् 1966 में प्रकाशित हो चुका है। हिन्दी संस्थान लखनऊ से इन्हें सम्मानित भी किया जा चुका है। इनके लोकप्रिय गीत हैं-उजेरिया भुइँ उतरी, च्यातौ किसान, बिरनवा बांधौ रखिया, नदिया, गंगा मैया आदि। इनके काव्य में कहीं प्रकृति का सौन्दर्य है तो कहीं शृंगार के चित्ताकर्षक दृश्य। इनकी लेखनी ने किसानों के दैन्य भाव का चित्र खींचा है। किसानों में जागृति के स्वर भरे हैं। राष्ट्रीय भावना, स्वावलम्बन एवं जोश का स्वर भी।

लामा अवधेश 'सुमन'- बलदेव नगर, सीतापुर में जन्में सुमन जी अवधी के ख्याति प्राप्त साहित्यकार हैं। जैसा नाम है वैसी ही इनके सृजन में अनुभूति है। इनकी रचनाओं में सहज भाव एवं उदारता चरम सीमा तक पहुँची है।

लाल कवि–इनके जीवन का इतिहास लुप्त प्राय है। ये बरेली के निवासी थे। इनकी एक अवधी कृति 'अवध विलास' उपलब्ध होती है। इसका प्रणयन सं. 1700 में हुआ था।

लालचदास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार ये राबरेली के रहने वाले हलवाई थे। इन्होंने संवत् 1585 में हरिचरित और संवत् 1587 में 'भागवत दशम स्कन्ध भाषा में नाम की पुस्तक अवधी मिश्रित भाषा' में लिखी। (हिन्दी साहित्य का इतिहास- पृ. 191) इनकी रचना होहा चौपाई में की गई है। ये वैष्णवी वृत्ति के थे। इनका नाम कहीं-कहीं लालनदास उद्धृत हुआ है। लालचदास की कृति हरिचरित्र के अध्ययन से ज्ञात होता है कि ये इस कृति के रचनाकाल में ही दिवंगत हो गये थे। तदुपरांत हस्तिनापुर निवासी आसानन्द रायबरेली में रहने लगे थे, जहाँ उन्होंने लालचदास से पूरी रचना सुनी थी। अतः उन्होंने रचना का शेष भाग पूरा किया।

लालबहादुर सिंह भदौरिया- इनका जन्म सन् 1910 में हरदोई जिले में हुआ था। ये अवधी में स्फुट रचनायें लिखते हैं। समाज-सेवा और देश-प्रेम इनके व्यक्तित्व का गुण है। व्यवसाय के रूप में ये एक प्रेस चलाते रहे। ये सदैव कांग्रेसी कार्यकर्त्ता रहे हैं। सन् 1949 में सृजित इनकी कृति 'किसान-राज्य' उल्लेख है।

लाल बुझक्कड़–लाल बुझक्कड़ जनपद फर्रूखाबाद के रत्न थे। ये अपनी बुद्धि के चमत्कार दिखाया करते थे। अवधी भाषा में इन्होंने ढेर सारी पहेलियाँ समाज को अर्पित की है।

लिखीस जी–'पढ़ीस जी' की टक्कर पर यह नाम रखा गया है। लिखीस जी भी व्यंग्यपूर्ण हास्य की रचना करने में विशेष कुशल हैं। हिन्दी काव्य प्रेमी इनके व्यंग्यात्मक साहित्य से विशेष परिचित हैं। इनकी शैली में प्रवाह और प्रभावित करने की सुन्दर शक्ति है। ये पढ़ीस जी और रमई काका शैली पर लिखते हैं। अवधी भाषा को ही अपना भाषा-क्षेत्र बनाया है।

वंशीधर शुक्ल- आधुनिक काल में जन्में वंशीधर जी भारतेन्दु युग के प्रतिनिधि अवधी कवि हैं।

बैसवाड़ा इनका निवास -स्थल है।

वंशीधर शैदा–शैदा जी मोहनलालगंज, रायबरेली में जन्मे ये उच्चकोटि के अवधी साहित्यकार हैं। इनकी अवधी रचनाएँ समाज को विशिष्ट उपलब्धि साबित हुई है।

वंशीधर शैदा (कलयुगी)–ये एक अवधी प्रेमी साहित्यकार रहे है। इन्होंने 'वाल्मीकि रामायण' का अनुवाद अवधी भाषा में सन् 1941 से 1949 के बीच सम्पन्न किया था।

वागीश शास्त्री- पैरोडी लेखक (अवधी भाषा)।

वारसी–वारसी जी बेड़हौरा, सीतापुर के निवासी अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने सन् 1944 में 'ज्ञानसागर' नामक कृति सृजित कर अपना अवधी प्रेम अभिव्यक्त किया है।

वासुदेव सिंह चौहान- इनका जन्म 16 जनवरी सन् 1928 ई. को ग्राम उम्मेद खेड़ा (बंथरा के निकट) लखनऊ में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री हरदेव सिंह है। सन् 1986 में राजकीय सेवा से अवकाश प्राप्त कर काव्य सृजन में ये प्रवृत्त हैं। इनका खड़ी बोली, ब्रज एवं अवधी तीनों पर समान अधिकार है। इन्होंने असंख्य कविताएँ लिखी हैं। 'हुलसी के तुलसी' (सन 1961) इनकी सशक्त अवधी कविता है।

विंध्येश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव- ये बिसवाँ , सीतापुर के निवासी हैं। इनकी कई कविताएँ बहुत प्रसिद्ध हुई हैं। अपनी काव्य भाषा के रूप में इन्होंने अवधी को स्वीकार किया है। इन्होंने 'भला भाइ' नामक भड़ौवा सृजित किया है, जो अवधी की हास्य व्यंग्यात्मक विधा के रूप में प्रख्यात हुई है।

विक्रमाजीत सिंह– इनका जन्म ग्राम राजापुर जिला प्रतापगढ़ में सन् 1909 में हुआ था। पारिवारिक असुविधाओं के कारण ये विधिवत् स्कूलों में शिक्षा नहीं प्राप्त कर सके। कविता की प्रेरणा इन्हें शम्भुनाथ नामक किसी कवि से मिली। उसे अभ्यास द्वारा परिष्कृत करते हुए इन्होंने अवधी कविता में अपना एक स्थान सुरक्षित कर लिया। इनकी कविता में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी समस्याओं का स्वर मिला है। फिर भी श्रृंगार अपेक्षाकृत अधिक मुखर है। कजली में कजलियाँ लिखी हैं, जिनमें अनेक पौराणिक प्रसंग और जनजीवन के तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं।

विजयकुमार पाण्डेय- ये सीतापुर जनपद के विख्यात ग्राम 'गंधौली' के निवासी हैं। इनका जन्म 15 जुलाई 1939 को हुआ था। ग्राम गंधौली सुप्रसिद्ध समालोचक पं. कृष्ण बिहारी मिश्र की भी जन्मस्थली और कर्मस्थली रही है। इनकी शिक्षा-दीक्षा मात्र इण्टरमीडिट तक ही रही है। समाज में इनका स्थान एक पत्रकार, साहित्यकार और समाज सेवक के रूप में है। ये विशेषतः अवधी में ही लिखते हैं। इनकी रचनायें इस प्रकार हैं -'बेड़ी गई टूटि गुलामी की', 'हमरे जी जंजाल', 'हमार मेहरी', 'देहरी', 'हमार गाऊँ' आदि।

विदा–वर पक्ष को विवाह हेतु भेजती हुई स्त्रियाँ इस अवधी लोकगीत में अपनी शुभकामनाएँ प्रकट करती हैं। इससे प्राचीन विवाहों अपहरणों युद्धों जटिलताओं का पूर्वाभास होता है।

विद्याधर महाजन –इनकी जन्मतिथि सन् 1900 तथा निधनतिथि सन् 1923 ई. है। महाजन जी होशियार पुर, पंजाब के निवासी थे। इन्होंने 'श्री गांधीचरित मानस' नामक महाकाव्य की रचना रामचरित मानस की भाषा शैली पर की है। इस ग्रंथ में महात्मा गाँधी के पावन चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। इस ग्रंथ का प्रकाशन महाकवि के मरणोपरांत सन् 1955 में हुआ । इन्होंने राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत अनेक कविताएँ भी अवधी में लिखी हैं।

विद्यापति– 'कीर्तिलता' विद्यापति जी की वह कृति है, जिसमें अवधी के प्रारम्भिक रूप का दर्शन होता है। अतः विद्यापति भी अवधी के आधार स्तम्भों के रूप में भी परिगणित किए जाते हैं।

डॉ. विद्याबिन्दु सिंह– इनका जन्म 2 जुलाई सन् 1947 को ग्राम बनगाँव बिहवा, जिला फैजाबाद

में हुआ था। श्री देवनारायण सिंह इनके पिता तथा श्री कृष्णप्रताप सिंह पति हैं। अवधी लोक साहित्य पर इन्होंने शोध कार्य किया है। इनकी प्रसिद्ध अवधी रचनायें हैं-गंगा मइया, आवै दे फगुनवा, आज का गाँव, तिरिया फुलवा बरन मन, सवनवाँ घुँघटा तोहार गोरिया, फागुनी बयारि, गाँउ की पीर, कटिया बदरा, पलसवा, मजूर, बादर बीर इत्यादि। सम्प्रति ये उ.प्र. हिन्दी संस्थान लखनऊ की उपनिदेशिका हैं।

विद्यार्थी महावीरप्रसाद वर्मा–इनका अवधी काव्यकारों में महत्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने अवधी छंद 'बरवै' लेखन में विशेष ख्याति अर्जित की है। 'सच्ची सलाह' नामक इनकी बरवै रचना है।

विमल पाण्डेय–लखनऊ निवासी पाण्डेय जी अवधी के ख्याति प्राप्त साहित्यकार हैं। 'उगिलै बरफ अंगार' इनकी विशिष्ट रचना है, जो सन् 1963 रचना है।

विश्वनाथ–ये भारतेन्दु युग के बैसवारी अवधी कवि हैं।

विश्वनाथ पाठक–इनका जन्म 24 जुलाई सन् 1931 में फैजाबाद जिले के ग्राम पाठक पल्ली (तकिया कानूनगो) में हुआ था। इनके पिता का नाम रामप्रताप पाठक था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम उर्दू था। हाईस्कूल पास करने के पश्चात् संस्कृत के प्रति इनकी विशेष अभिरूचि जगी। तत्पश्चात् इन्होंने संस्कृत में एम.ए. एवं साहित्याचार्य की उपाधियाँ प्राप्त की। हिन्दी, संस्कृत प्राकृत, पालि और अपभ्रंश साहित्य के साथ-साथ बंगला, गुजराती, अंग्रेजी और उर्दू भाषाओं में भी ज्ञान प्राप्त किया। इनकी रचनायें हैं- 1- सर्वमंगला महाकाव्य (अवधी भाषा), 2- घर कै कथा अवधी प्रबन्ध काव्य (अप्रकाशित)। इन्हें अवधी संस्थान अयोध्या सम्मानित कर चुका है। सम्प्रति पाठक जी त्रिलोक नाथ इन्टर कालेज टाण्डा के संस्कृत प्रवक्ता पद सेवा निवृत्त होकर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राच्य भाषा साहित्य सेवा में संलग्न हैं।

डॉ. विश्वनाथ याज्ञिक–गुजरात राज्य के मेहसाणा जनपद के सिद्धपुर ग्राम के मूल निवासी याज्ञिक जी गुजराती ग्राम के मूल निवासी याज्ञिक जी गुजराती ब्राह्मण हैं। इनका जन्म 16 मार्च सन् 1924 ई को उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद नगर में हुआ था। इनके प्रपितामह गुजरात से आकर मथुरा में बस गये। पितामह जयपुर में रहे, किंतु इनके पिता पं. गोरखनाथ याज्ञिक लखनऊ में सेवारत हुए और यहीं के निवासी हो गये। सम्प्रति ये 69, आर्यनगर लखनऊ में रहते हैं। इन्होंने राम काव्य परम्परा को अक्षुण्ण बना रखा है। इन्होंने दोहा, पद, गीत, गजल, शैली में लगभग 3000 छंदों की रचना की है। इनका अधिकांश काव्य खड़ी बोली में लिखा गया है। प्रमुख कृतियाँ हैं-राम सुमना जलि, रामकाव्य, कल्पद्रुम, रामगीतांजलि, राम दोहावलि आदि।

विश्वनाथ सिंह (रीवाँ नरेश)–इनका जन्म सन् 1789 में और निधन 1854 हुआ था। ये श्रृंगारी रामभक्त शाखा कवि हैं। इनके द्वारा रचित 46 ग्रंथों का उल्लेख मिलता है, जिनमें 'आनंद रघुनंदन' का ऐतिहासिक महत्व है। इनकी कुछ रचनाएँ अवधी में हुई है, जिनमें रमैनी, कहरा आदि प्रमुख हैं। इनमें उपदेशात्मकता अधिक है। इन कृतियों में विश्वनाथ जी ने निर्गुण मत का प्रमाण पुरस्सर खंडन किया है।

विश्वनाथ सिंह 'विकल गोंडवी'- विकल जी का जन्म 8 फरवरी सन् 1924 ई. को ग्राम खजुरी मवई, जनपद गोण्डा में हुआ था। इनके पिता का नाम दिग्विजय सिंह था। पूर्वोत्तर रेलवे की सेवा निवृत्ति के बाद ये लखनऊ के स्थानीय निवासी बन गये। आजीवन खड़ी बोली एवं अवधी दोनों मुं काव्य सृजन करते रहे। 'रतना-तुलसी', 'धरती के धिया', 'गंगा मैया' आदि अवधी के प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। हिन्दी में गजलें लिखने में भी इन्हें सफलता मिली। उ.प्र. हिन्दी संस्थान ने इन्हें मलिक मोहम्मद जायसी (नामित) पुरस्कार से सम्मानित किया।

विसराम–इनका जन्म प्रतापगढ़ जनपद के पण्डित का पुरवा नामक ग्राम में 1925 ई. के लगभग हुआ था। विरहा इनका प्रिय छंद है। सामान्य रूप से इनके पिता गीतों में तीन प्रकार की भावनाएँ दिखती

हैं- 1- प्रमुख सामाजिक घटनाओं का स्वरूप, 2- आर्थिक स्थिति का विवेचन, 3- पारिवारिक भावधारा का परिशीलन। इन्होंने गीतों को अवधी भाषा में अधिक लिखा है।

वीरेन्द्रकुमार श्रीवास्तव–श्रीवास्तव जी मूलतः सीतापुर जनपद के निवासी हैं। सन् 1940 ई. इनकी जन्मतिथि है। एम.ए., एल.टी. तथा विद्या वाचस्पति तक की शिक्षा प्राप्त कर दयानन्द विद्या मन्दिर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, सीतापुर में अध्यापक हैं। इनका काव्य कर्म कौशल खड़ी बोली और अवधी दोनों में ही है। इनकी गणना अच्छे गीतकारों में है 'गंगा मइया', 'वर्षा गीत', 'तिरंगा झंड', जागहु ओ धरती के लाल' आदि इनकी उल्लेखनीय अवधी रचनायें हैं।

वृन्दा प्रसाद 'जैगम'- ये कनउजी क्षेत्र से जुड़े होने के बावजूद अवधी भाषा के प्रति अनन्य निष्ठा रखने वाले साहित्यकार हैं। इन्होंने अवधी में बहुत सारी रचनाएँ की हैं।

वेदप्रकाश सिंह 'प्रकाश'- सैकड़ों की संख्या में कहानी, लेख, कविता आदि साहित्यिक विधाओं के प्रतियोगी पुरस्कारों से सम्मानित प्रकाश जी अवधी छंद और व्यंग्य पर साधिकार लिखते हैं। ये सम्प्रति 'सर्वोदिता' त्रैमासिक पत्रिका के सम्पादन कार्य में समर्पित हैं।

शंभूसिंह–ये रायबरेली जनपद के निवासी एवं अल्पख्यात अवधी कवि हैं।

शत्रोहनलाल अवस्थी 'लवलेश'- 'लवलेश' जी का जन्म भाद्रपद कृष्ण सप्तमी सन् 1921 ई. को जिला सीतापुर की सिघौली तहसील के ऊँचाखेरा ग्राम में हुआ था। अवधबिहारी लाल अवस्थी इनके पिता थे। ये स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के रूप में जीवन भर देश एवं समाज सेवा में लगे रहे। ये गाँधीवादी विचारधारा के पोषक और कांग्रेसी कार्यकर्ता थे। ये अवधी के कुशल कवि थे। इनकी कवितायें सामाजिक तथा राजनीतिक विचार धारा से उदभूत है।

शम्भुनाथ मिश्र–ये बैसवाड़ा क्षेत्र के खजूर गाँव के निवासी एवं भारतेन्दु युगीन अवधी कवि है।

शम्भुनाथ द्विवेदी 'बन्धु'–इनकी रचना है- 'झौवा भरि लरिका का करिहौ।' अन्य विवरण अनुपलब्ध है।

शारदा कुमारी–इनका जन्म हरदोई नगर में सन् 1930 में हुआ था। इनका विवाह नैमिषारण्य तीर्थस्थल क्षेत्र में हुआ था। एक बीमारी में एक नेत्र की ज्योति भी चली गयी थी। कवयित्री होने के साथ-साथ प्रवचन देने का कार्य भी करती थीं। फलस्वरूप यज्ञादि समाराहों, सम्मेलनों में भाग लिया करती थीं। ये अवधी में प्रायः भक्ति सम्बन्धी रचनाएँ लिखती थीं। 1985 ई. में इनका निधन हो गया था।

शारदा प्रसाद 'भुशुण्डि'- 'पढ़ीस' जी की परंपरा को बढ़ाने वाले कवियों में शारदा प्रसाद जी का नाम उल्लेखनीय है। शासन, दुराचार और बाह्याचारों के ये बड़े कटु आलोचक है। 'असेम्बली में चख-चख' औरन 'अब लखनऊ न छ्वाड़ा जाई' इनकी प्रसिद्ध कविताएँ हैं। 'हम तब्बों चना कहावा है' हम अब्बौ चना कहाइति है'- नामक कविता में कवि ने अवध के प्रचलित मुहावरों और रीति-रिवाजों का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया है। इनके काव्य में शोषित वर्ग की विद्रोही भावना व्यक्त हुई है। इनका जन्म वैशाख संवत् 1967 में प्रयाग जिले के कैमें गाँव में हुआ था।

बाबा शालिकराम–ये उन्नाव जनपद के ग्राम-निवैया के अद्वैतवादी पंथ के संन्यासी थे। अवधी साहित्य में इन्होंने बहुत महत्वपूर्ण योगदान किया है। इनकी अवधी रचनाएँ हैं-शालिगराम गीता (सन् 1917 ई.), आत्मविलास (1902 ई.), शतपंच विलास (सन् 1891 ई.) हनुमान दर्श (सन् 1975 ई.)

शालिगराम शर्मा 'स्वावलम्बी'- ये उपड़ौरा, इलाहाबाद के निवासी हैं। इन्होंने सन् 1954 में 'बढ़उ का अफसोस' नामक अवधी कृति समाज को देकर अपना अवधी प्रेम दिखाने का सफल प्रयास किया है।

शाहनाज अली 'सलोनी'- 'प्रेम-चिनगारी' के रचयिता शाह नजफ अली सलोनी सूफी प्रेमाख्यानक

कवि हैं। ये सलोन, जिला रायबरेली के निवासी थे और इनके पिता का नाम शाह करीम अली था। इनका स्थितिकाल वि. सं. 1890 के लगभग माना जाता है। कवि सलोनी के आश्रयदाता रीवाँ नरेश महाराज विश्वनाथ सिंह थे। ऐसी जनश्रुति है कि शाह नजफ अली अन्धे थे। परन्तु इनके पास दिव्य दृष्टि थी। महाराज विश्वानाथ सिंह (रीवाँ नरेश) के दरबार की कई घटनायें इनके अंधत्व पर प्रकाश डालती हैं। 'प्रेमचिनगारी' के अतिरिक्त 'अखरावटी' का भी उल्लेख मिलता है, जो अनुपलब्ध है। शाह जनफ अली की मजार रीवाँ में विद्यमान हैं। इनकी कृति प्रेम-चिनगारी का रचना काल सन् 1261 है। इसकी रचना मसनवी पद्धति पर की गई है। भाषा अवधी है। उसमें दोहा-चौपाई छन्दों का प्रयोग है।

शाह 'मलिहाबादी'- इनकी जन्म तिथि सन् 1900 तथा निधन तिथि सन् 1992 है। शाह मलिहाबाद, लखनऊ के निवासी थे। उर्दू के अच्छे शायर होते हुये भी इन्होंने अवधी में रचनाएं की। इनकी अवधी रचनाओं में पश्चिमी अवधी का प्रभाव है, जहाँ के ये मूलतः निवासी थे। राष्ट्रीय भावना-साम्प्रदायिक ऐक्य आदि की भावना से भरपूर इनकी अनेक अवधी रचनायें है।

शिवदास—अवधी के अज्ञात भक्त शिवदास बाराबंकी जनपद के निवासी थे। लोधेश्वर महादेव के आराधक भक्त कवि शिवदास की एक मात्र रचना है 'नासिकेत पुराण', जो स्वतंत्र नहीं है वरन् पद्मपुराणान्तर्गत नासिकेत उपाख्यान का भाषा में पद्य बद्ध अनुवाद है। इन्होंने और भी रचनायें की हैं किन्तु वे अभी ज्ञात नहीं हो सकी। नासिकेत उपाख्यान को दोहा-चौपाई छंद में सरल अवधी भाषा में सन् 1752 में प्रस्तुत किया था। विवरण के आधार पर भक्त शिवदास शैलब परगना अन्तर्गत अमीर ग्राम के मूल निवासी थे। शिवदास गूदरपुर के शुक्ल ब्राह्मण थे। ये अमीर गाँव से लोधेश्वर महादेव चले आये, और वहीं रहकर संवत् 1809 में नासिकेत पुराण को भाषा बद्ध किया।

शिवदुलारे त्रिपाठी 'नूतन'- त्रिपाठी जी का जन्म उन्नाव जनपद के मौरावाँ नामक स्थान पर हुआ था। ग्रामीण जनजीवन से निकट सम्पर्क होने के कारण इनकी रचनाओं में धरती का यथार्थ दृष्टिगत होती है। भारतीय समाज में अर्थ समस्या के साथ ही उदर-भरण की समस्या भी प्रधान है। कवि ने इन समस्त पहलुओं का यथार्थ मूल्यांन किया है। त्रिपाठी जी यथार्थवादी कवि हैं। समाज का मूल्यांकन करते समय कवि ने प्रत्येक पहलुओं को छूने का प्रयत्न किया है। इनकी अवधी भाषा सरल प्रवाहपूर्ण एवं विचारों को व्यक्त करने में पूर्णरूपेण सफल है।

शिवप्रसाद मिश्र 'मयंक'- ये रायबरेली के निवासी एवं भाषा के अल्पख्यात कवि हैं।

शिवप्रसाद सिंह—ये फैजाबाद के 'खूखूतारा' नामक गाँव के निवासी थे। लोक गीतकारों में ये बहुत विख्यात हैं। इन्होंने फगुआ, कहरवा, सोहर गारी, तथा अन्य प्रकार की अनेक रचनायें की हैं। सभी रचनायें प्रकाशित हैं।

डॉ. शिवबालक शुक्ल—हरदोई जनपद में स्थित शांता ग्राम में जन्में शुक्ल जी बचपन से ही अवधी कविताओं में रुचि रखते थे। फलस्वरूप इन्होंने अपनी काव्य प्रतिभा इसी भाषा के रूप में समाज को अर्पित की।

शिवभूषण त्रिपाठी—ये लखनऊ शहर के निवासी हैं। जीवन परिचय अप्राप्त है। ये विशेषतः खड़ी बोली में साहित्य सृजन करते है, वह अत्यंत प्रशंसनीय है। इन्होंने अवधी भाषा में 'शिव पंचामृत' नामक ग्रंथ की रचना की है, जिसमें 500 दोहों का संकलन है।

शिवमोहन 'भोला' बैसवारी—सन् 1937 में जन्में भोला जी रामपुर के निवासी एवं अवधी साहित्यकार है।

शिवरत्न मिश्र –ये आधुनिक काल के ख्यातिप्राप्त अवधी रचनाकार है।

शिवरत्न शुक्ल 'सिरस'- इनका जन्म बछरावाँ तहसील महराजगंज, जनपद रायबरेली में सं. 1936

में हुआ था। श्री बचान आचारी इनके पिता थे। इन्होंने रेलवे विभाग में स्टेशन मास्टर के पद पर सेवा करते हुए साहित्य सेवा भी की। ये धार्मिक वृत्ति एवं आस्तिक प्रकृति के व्यक्ति थे। ये हिन्दी, उर्दू, संस्कृत और अंग्रेजी के अच्छे ज्ञाता थे। रचना संसार इस प्रकार है-भरत भक्त (महाकाव्य), श्री राम तिलकोत्सव (महाकाव्य), सिरस नीति सतसई, परिहास प्रमोद (अवधी व ब्रज का मिश्रित प्रयोग), आर्य सनातनी संवाद श्री रामायण भाष्य। (किष्किन्धा काण्ड), प्रभु चरित्र, श्री रामावतर, शिवरत्न संग्रह, प्रथा प्रार्थना स्वदेशार्थ अभ्यर्थना, भिक्षा देहि, शिवाजी (महाकाव्य) उद्धव ब्रजांगना, शांत रसालंकार, विनीत विजय, राम रोचिष, परशुराम सिरस सरोज, गीत गान, अन्योक्ति आनन्द, जयसिंह और शिवा। (पत्र व्यवहार), स्वामी विवेकानंद लेखानुवाद, शेडषाष्टक विशेष उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त 'बैसवारी बोली और उसका व्याकरण 'भाषा-विज्ञान' के क्षेत्र में सिरज जी की महत्वपूर्ण पुस्तक है। इन्होंने रामचरित मानस का महाभाष्य भी किया है, जो अभी तक अप्रकाशित है। इनका निधन 2039 में हुआ था।

पं. शिवराम मिश्र 'मस्तराम'- मस्तराम जी का जन्म रायबरेली जनपद के नकफुलहा गाँव में सन् 1903 में हुआ था। इनकी कविताएँ अधिकतर हास्य-व्यंग्य से ओत-प्रोत हैं। इनकी भक्ति प्रधान रचनाओं में अवधी का सशक्त रूप परिलक्षित होता है। सन् 1949 में इनका असामयिक निधन हो गया।

शिवलाल दुबे–दुबे जी डौडियाखेरा के निवासी भारतेन्दु युग के प्रसिद्ध अवधी साहित्यकार रहे हैं।

शिवलोचन–ये बनारस के निवासी एवं अल्पख्यात अवधी रचनाकार हैं।

शिव सम्पत्ति–इनका जन्म सन् 1883 ग्राम उदिगाँव जनपद आजमगढ़ में हुआ था। ये पं. रामनरेश त्रिपाठी के गुरू थे। इन्होंने अवधी के साथ-साथ ब्रजभाषा में भी रचनाएँ की हैं। इन्होंने नीतिपरक दोहों का सृजन किया, जिनका संकलन 'शिवसम्पत्ति नीतिशतक' एवं नीति चंद्रिका में हुआ है।

शिवसिंह 'सरोज'- जनपद बाराबंकी में जन्मे सरोज जी अधिकांशतः लखनऊ में रहते हैं। ये अवधी के उदीयमान कवि हैं। इनकी 'पुरवाई' शीर्षक कविता में अवधी का बड़ा सुन्दर प्रयोग हुआ है।

शिवसिंह सेंगर–सेंगर साहब कांथा के निवासी हैं, जो बैसवाड़ा क्षेत्र में स्थित है। इन्होंने अवधी भाषा के माध्यम से भी काफी सृजन किया है। इनका अवधी साहित्य अभी प्रकाशित नहीं हो पाया है।

शिवस्रूप अग्निहोत्री- खसौरा, हरदोई के निवासी अग्नीहोत्री जी उच्चकोटि के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में जनसामान्य की भाषा प्रयुक्त की है।

शीतला सिंह गहरवार–ये बिहार प्रदेश के गया क्षेत्र के निवासी एवं अवधी प्रेमी साहित्यकार रहे हैं। इन्होंने श्रीरामचरितमानस की तर्ज पर 'श्रीरामचरितायन' नामक अवधी प्रबन्ध-काव्य का सृजन किया है।

शुकदेव–ये भारतेन्दुयुगीन अवधी कवि हैं। इनका निवास-स्थान डौडिया खेरा है। इन्होंने जो कुछ काव्य-सृजन किया है, वह अप्रकाशित है।

शेख नबी–ये जायसी के परवर्ती सूफी कवियों की कोटि में आते हैं। 'ज्ञानदीप' इनकी एक मात्र प्रेमाख्यानक रचना है। कवि के जीवन-वृत्त सम्बन्धी कुछ तथ्य अन्तर्साक्ष्य रूप में इनकी कृति 'ज्ञानदीप' में मिलते हैं, जिसके अनुसार इनका स्थिति-काल सम्राट जहाँगीर का शासन-काल ज्ञात होता है और हिजरी सन् 1026 तदनुसार ई. सन् 1619 ग्रंथ का प्रणयन -काल निश्चित होता है। हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानों के नामकरण की परम्परा नायिका प्रधान होने की है। यथा- चंदायन, मृगावती, पदमावत, मधुमालती किन्तु शेख नबी की रचना का नाम नायक प्रधान है। एक रचना के प्रणयन में कवि का उद्देश्य मात्र आनन्द का सृजन करना था। दोहा, चौपाई छंदों में रचित ज्ञानदीप की भाषा बोलचाल की अवधी है।

शेख निसार–ये जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि हैं। इनकी रचनाएँ हैं- मेहनिगार, रसमनोज, दीवान, अहसन जौहर, स्त्रोदी, नस्त्र नामक फारसी गद्य ग्रंथ नसाब एक संग्रह और यूसुफ जुलेखा जो

हिन्दी, फारसी, तुर्की, संस्कृत तथा अरबी भाषाओं में लिखे गये हैं। स्वयं कवि द्वारा उल्लिखित निवास-स्थल शेखपुर की स्थिति विद्वानों की दृष्टि में विवादस्पद है। कतिपय विद्वनों ने इसे (शेखपुर) महराज गंज तहसील जिला रायबरेली में माना है। कुछ इसे फैजाबाद जिले के मंगलसी नामक छोटे से परगना में एक छोटा गाँव बताया है। इतना तो स्पष्ट हे कि शेख निसार अवध के ही निवासी थें इन्होंने यूसुफ जुलेखा का प्रणयन सं. 1847 में 57 वर्ष की अवस्था में किया था। अतएव कवि का जन्म सं. 1789 और 1790 के बीच ही हुआ होगा। शेख निसार विद्वान और आसु कवि थे। ये हिन्दी, संस्कृत, अरबी, फारसी आदि भाषाओं के ज्ञाता थे तथा इन्हें संगीत शास्त्र आदि का भी ज्ञान था। यूसुफ जुलेखा में भाषा बोलचाल की अवधी है तथा दोहा, चौपाई कवित्त, सोरठा तथा सवैया छंदों का प्रयोग है।

शेषपाल सिंह 'शेष'- शेष जी का जन्म 20 दिसम्बर सन् 1958 ई. को ग्राम कसना (शिवगढ़) जिला रायबरेली में एक कृषक परिवार में हुआ था। गुरूदयाल सिंह इनके पिताजी का नाम है। जोंधइया, बिरवा, आखत आदि अवधी पत्रिकाओं में इनकी रचनाएँ निरन्तर प्रकाशित होती रही हैं। बसंत सुहात नहीं, वृक्ष की जवानी, देश-पति, सरकार, दुमछल्ले, भारत माँ का बेड़ा किसानों से, दुमदार दोहे, कुर्सी मिली रहे आदि इनकी अवधी की सुप्रसिद्ध रचनाएँ हैं। लोकगीत भी उच्चकोटि के हैं।

डॉ. श्यामकिशोर मिश्र 'श्रमजीवी'- इनका जन्म सन् 1917 में सीतापुर जनपद के गंधौली ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम कृष्णबिहारी मिश्र था। ये होमियोपैथिक चिकित्सक हें साथ ही साथ समाज सेवी भी। सन् 1953-54 में ये नगर पालिका के अध्यक्ष तथा 1969 से 77 ई. तक उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदम्य रहे हैं। सम्प्रति अनेक संस्थाओं से जुड़े हुए है। इन की रचनायें है- 'हमारा देश', महात्मा महाप्रयाण, हजरतगंज, लोहिया के प्रति, पूज्य चरण निराला, आज फिर जीवन द्विधा जागी, हिमालय के शिखर पर,आचार्य नरेन्द्र देव, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, महात्मा गाँधी, जवाहर लाल नेहरू ताऊ दशक आदि। इन्होंने अपनी रचनाओं में अवधी, ब्रज एवं खड़ी बोली आदि का प्रयोग किया है। छंदोबद्ध रचनाओं में कुण्डलियाँ छप्पय सवैया इनके प्रिय छंद रहे हैं।

श्यामजी पाण्डेय 'करुणेश'- ये उच्चकोटि के अवधी साहित्यकार हैं। इन्होंने 'एकता एवं अखण्डता' नामक रचना प्रस्तुत की है।

डॉ. श्याम तिवारी- डॉ. तिवारी का जन्म 10 नवम्बर, 1928 ई. को स्थान चुआडांगा (बांग्लादेश) में हुआ था। संयोगवश तिवारी जी अवधी भाषी क्षेत्र (जनपद बस्ती) से सम्बद्ध हो गये, जिससे अवधी भाषा की सेवा करने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हुआ। सन् 1950 से पूर्व ही इन्होंने अवधी में सृजन कार्य प्रारम्भ कर दिया था। फलस्वरूप सन् 1956 में अति महत्वपूर्ण अवधी में काव्य संकलन 'दूबि-अच्छत' काशी से प्रकाशित हुआ। कवि को ग्राम्य जीवन की गहरी अनुभूति है। कृषक-जीवन का अंकन तो कवि का भोगा हुआ जैसा प्रतीत होता है।

श्यामनारायण अग्रवाल 'विटप'- विटप जी का जन्म सन् 1939 में बाराबंकी जनपद के हैदरगढ़ कस्बे में जगतनारायण अग्रवाल के यहाँ हुआ था। ये एक अच्छे व्यवसायी हैं। व्यवसाय के साथ-साथ साहित्य सेवा में भी अभिरूचि रखते हैं। कई साहित्यिक संस्थाओं से जुड़े हुए अवधी भाषा के विशेष कवि हैं। रचनाओं में राष्ट्रीय में भावनाओं की झलक मिलती है।

श्यामनारायण 'कपूर'- कपूर जी आश्विन कृष्ण 2 सवत् 1965 (सन 1908 ई.) में ग्राम सम्भल जिला मुरादाबाद में जन्मे थे। इनके पूर्वजों को सम्बन्ध मौरावाँ (उन्नाव) से रहा था। हाईस्कूल के उपरांत इनके लेखे 'माधुरी' तथा विज्ञान की पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। 'साहित्य-निकेतन' नाम से इन्होंने पुस्तकों की दूकान खोली, प्रकाशन कार्य भी किया। उन्नाव और कानपुर कार्य क्षेत्र होने के कारण इन्होंने कई अवधी रचनाएँ कीं, जो हैं-गणेश शंकर विद्यार्थी, बजट होली, मौत, गजब होई गवा, भारत देश महान

इत्यादि। देश की गौरव-गरिमा का गान, महापुरूषों का गुणगान देश के गौरवपूर्ण अतीत का स्मरण इनकी कविता का मूल प्रतिपाद्य रहा है।

श्यामलाल शुक्ल 'चकोर'- इनका जन्म सन् 1914 में ग्राम अटहरा जिला बाराबंकी में पं0 रामरतन शुक्ल के यहाँ हुआ था। ये सनेही जी के शिष्य थे एवं सनेही मण्डल के होनहार कवि के रूप में प्रतिष्ठित हुए। 'लट्ठा पांडे का कच्चा चिट्ठा' इनकी अवधी कविताओं का संकलन है, जो अप्रकाशित रूप में इनके पुत्र श्री जगदीश चन्द्र शुक्ल 'प्रदीप' के पास सुरक्षित है। सन् 1965 में सर्पदंश से इनकी अकाल मृत्यु हो गयी।

डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप'- इनका जन्म 28 मार्च 1926 ई. को मैनासी सरैया, जिला सीतापुर में हुआ। लखनऊ विश्वविद्यालय से एम.ए., पी-एच.डी. उपाधि प्राप्त की। सम्प्रति आर.एम.पी.पी.जी. कालेज, सीतापुर में हिन्दी विभाग के रीडर एवं अध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त होकर स्वतंत्र लेखन में रत हैं। इनकी प्रकाशित काव्य-कृतियाँ हैं-गाँव का सुरपुर देउ बनाय, जागि रहे गांधी केर सपन, खेतन का देखि देखि जिउ हुलसै मोर, बवै गाँवन मा हिन्दुस्तान और आलोचनात्मक ग्रंथ इस प्रकार हैं- 1- परम्परा के परिप्रक्ष्य में आधुनिक अवधी काव्य 2- अवधी के आधुनिक प्रबन्ध काव्य 3- अवधी के आधुनिक काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ। प्रकाश्य कृतियाँ में- पानी से पत्थर (गीत), गंगा का देश, बसइ गाँवन मां हिन्दुस्तान, जागु किसान भोर भवा रे आदि मुख्य है। इनकी रचनाओं में जन विषयक तथ्य का प्राधान्य है। मधुप जी ने अवधी के आधुनिक काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों की रचना करके अवध जनपद के सांस्कृतिक स्वरूप पर सर्वथा नया प्रकाश डाला है। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावना जागरण का भाव आदि निहित है। इन्होंने अवधी के नयेपन को पूर्णतः उद्घाटित किया है।

श्यामसुन्दर लाल (गांधीदास) –ये फैजाबाद के तकिया नामक गाँव के निवासी कायस्थ थे। सन् 1940 के पूर्व की इन्होंने लोग गीतों की 'चमन' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की थी। यह पुस्तक फागुन के गीतों (फागुआ) के क्षेत्र में युगान्तरकारी रचना है। ये अनेक रागों के आवि कारक हैं। इनके ग्रंथ 'चमन' के अनके रागों में से एक राग (डेढ़ ताल) तो इतना छा गया कि चौताल की प्राचीन परंपरा ही लुप्तप्राय हो गई ।

श्यामसुन्दर शर्मा 'कलानिधि'- अलादादपुर, सीतापुर के निवासी कलानिधि जी अवधी के अच्छे कवि हैं। इन्होंने सन् 1952 में 'ललिता चालीसा' कृति सृजित की थी।

श्रीधर पाठक–इनका जन्म 10 दिसम्बर सन् 1889 में जनपद आगरा के जोन्धरी नामक गाँव में हुआ था। पाठक जी को अवधी ब्रज, खड़ी बोली, अंग्रेजी तथा संस्कृत का विशेष ज्ञान था। नौकरी करते हुए इन्हें कश्मीर एवं नैनीताल में रहने का संयोग प्राप्त हुआ, जिससे प्रकृति निरीक्षण का सुअवसर उपलब्ध हुआ था। इनकी 'देहरादून', 'मंसूर' नामक कविताएँ बड़ी उत्कृष्ट हैं, जिनमें बरवै छंद का प्रयोग हुआ है। सन् 1928 में इनका स्वर्गवास हो गया।

श्रीधर शुक्ल 'स्वतन्त्र'- 10 अक्टूबर सन् 1939 ई. को सीतापुर जनपद के अल्लीपुर बंडिया ग्राम में इनका जन्म हुआ था। जैसा कि इनके उपनाम से स्पष्ट है इनकी प्रकृति भी स्वतन्त्र हैं। स्वतंत्र जी गन्ना विभाग में कार्यरत हैं। इन्होंने ग्वड़ी बोली और अवधी दोनों में ही काव्य रचनायें की हैं। इनकी अवधी कविताओं में पूर्वीपन है साथ ही भोजपुरी शब्दों का बाहुल्य भी। लाक्षणिक प्रयोग भी है। 'नौकरशाही' 'मोरार जी देसाई' 'राजनारायण' आदि इनकी रचनायें हैं। ये एक निबंधकार भी है इनका व्यक्तित्व एक सामाजिक कार्यकर्ता और कवि का रहा है।

श्रीप्रकाश- ये बच्चू लाल महाविद्यालय, बिसवाँ सीतापुर के हिन्दी विभाग में प्रवक्ता पद पर कार्यरत हैं। इन्होंने अवधी भाषा में ढेर सारी कविताएँ लिखी है।

श्रीराम शुक्ल 'कंचना'- ये अमीनाबाद, लखनऊ के निवासी हैं। 'बसन्त ऋतु आय गयी' आदि कविताओं के माध्यम से अवधी भाषा के प्रति अपना अनुराग इन्होंने प्रकट किया है।

श्रीराम श्रीवास्वत 'कमलेश'- इनका जन्म लम्बापुर जिला प्रतापगढ़ में हुआ। आरंभिक शिक्षा प्राप्त करके ये अध्यापक नियुक्त हुए और साथ ही साहित्य क्षेत्र में भी प्रविष्ट हुए। इनकी रचनाएँ ग्रामीण व्यवस्था से जुड़ी हुई हैं। इनकी कविताओं में क्रांति का प्रखर स्वर सुनाई देता है। इनकी भाषा पूर्वी अवधी है। इनके प्रयोग परिमार्जित और परिनिष्ठ है।

श्रीराम सिंह 'शील'- जन्मस्थल- रामनगर, बाराबंकी, रचना-'बाजी रानभेरिया'।

श्रीसीतापुर शृंगाररस–यह अयोध्या के महंत महावीरदास 'जनमहाराज' द्वारा प्रणीत रचना है। इसका सृजन सन् 1915 में हुआ था।

संकटाप्रसाद सिंह 'देव'- इनका विस्तृत विवरण तो अनुपलब्ध है, किंतु इतना अवश्य विवरण प्राप्त हुआ है कि इन्होंने अवधी में 'शिवचरितामृतम नामक कृति सृजित की है।

संगम लाल–ये उन्नाव जनपद के टेढ़ा बिहग गाँव के निवासी थे। इनका रचनाकाल सं. 1861 से 1864 तक माना गया है। सीतामऊ के राजा राजसिंह इनके आश्रयदाता थे। इन्होंने स्फुट रचनाएँ की हैं, जिनमें अवधी रचनाओं की संख्या सर्वाधिक है।

संजय सिंह- इनका विवरण तो अनुपलब्ध हैं, किन्तु इन्होंने जो अवधी साहित्य सेवा की है उसमें 'फरवार से बखर तक' एक है। यह उनका अवधी उपन्यास है। ये सुल्तानपुर के निवासी हैं।

संवंश शुक्ल- विहगपुर निवासी शुक्ल जी भारतेन्दु युग के अवधी कवि हैं। इनका अवधी साहित्य अप्रकाशित है।

सच्चिदानंद तिवारी 'शलभ'- इनका जन्म 22 जुलाइ सन् 1951 में सीतापुर जनपद के मदारीपुर, देवसिंह (अटरिया) में हुआ । इनके पिताजी का नाम श्री सुन्दर लाल तिवारी है। इनका साहित्यिक क्षेत्र में बड़ा योगदान है। इवधी साहित्य सेवा इनकी अर्तिविशिष्ट है। इन्होंने जोधइया, बिरवा, आखत, अवध-ज्योति आदि पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। शलभ जी ने 'तड़िता' नामक अवधी काव्यधारा का प्रवर्तन किया है, जो सर्वथा नवीन एवं ग्राह्य है। इनका यह काव्यान्दोनल विद्वानों के बीच काफी प्रेरक एवं प्रशंसनीय सिद्ध हुआ है। सम्प्रति शलभ जी 536/158 क, मदेहगंज, डाकघर-निराला नगर, लखनऊ-20 में रह रहे हैं।

सतीश आर्य- गोण्डा निवासी आर्य जी अवधी साहित्य के अल्पख्यात साहित्यकार हैं।

सत्यधर शुक्ल- शुक्ल जी का जन्म 16 जनवरी, 1936 ई. को खीरी लखीमपुर जनपद के मन्योरा गाँव में हुआ था। ये अवधी सम्राट पं. वंशीधर शुक्ल जी के सुपुत्र हैं। ये 'ध्रुव' महाकाव्य का सृजन कर अत्यन्त प्रसिद्धि को प्राप्त हुए हैं। इनकी अन्य अवधी रचनाएँ हैं- बसंत का बियाहु (खण्डकाव्य), अरधान आदि शुक्ल जी खड़ी बोली में काव्य सृजन किया है जैसे 'आर्यावर्त' काव्य-संग्रह।

सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश'- जन्मस्थान-सेठवा, जनपद फैजाबाद, इन्होंने अवधी भाषा में फुटकर साहित्य सर्जना की है। इनका कंठ बड़ा मोहक है। कविताओं में बेधक वेदना प्राप्त होती है।

सत्यनारायण मिश्र- इनका जन्म कसहर, प्रतापगढ़ 1936 में हुआ था। इनकी अवधी कविताओं में किसानों की समस्या, राष्ट्रीय भावनाओं का चित्रांकन बड़ा ही सटीक हुआ है।

सत्यनारायण मिश्र–इनका जन्म हिलोर, रायबरेली में 1942 में हुआ था। 'सायकिल चालीसा', 'पटवारीनामा', इनकी हास्यरस प्रधान कृतियाँ हैं, जो अवधी में रचित हैं।

सदाशिव अवस्थी–अवस्थी ग्राम बम्हौरा जिला सीतापुर के निवासी है। इनका जन्म 26 अगस्त 1920 ई. को हुआ था। इनके पिता बैजनाथ अवस्थी थे। सदाशिव जी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी हैं। अब

सेवामुक्त होकर साहित्य साधना करते हैं। इन्होंने खड़ी बोली और अवधी दोनों में ही रचनायें की है। अवधी की इनकी पहली पुस्तक 'किसान हितैषी' सन् 1940 में प्रकाशित हुई। रचनाओं में प्रेरणा शक्ति है। इनकी अवधी कविताओं में राष्ट्रीय-भावना मुखाग्र हुई है। इनकी अवधी बैसवारी से प्रभावित है।

सन्तोष कुमार मिश्र 'चक्रवाक'- इनका जन्म सन् 1954 ई में सीतापुर जनपद के बरगावाँ ग्राम में हुआ था। पं. कृष्णपाल मिश्र इनके पिताजी थे। इन्होने लगभग सम्पूर्ण शिक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। संस्कृत भाषा और ज्योतिष का अच्छा ज्ञान था। 'विरहा पक्ष', 'सबनवाँ, 'परिया भरैबे', 'मनई हतेउ कि देउता' इनकी प्रसिद्ध अवधी रचनाएँ हैं।

सबलस्याम–ये कृष्णकाव्य परम्परा के काव्यकार हैं। इन्होंने अवधी में 'भागवत दशम स्कंध', की रचना करके अपनी अवधी निष्ठ अभिव्यक्त की है।

सरजूराम पंडित–सरजूराम अवध निवासी ब्राह्मण थे। इनकी एकमात्र रचना 'जैमिनि पुराण' मिलती है। इसका रचना-काल सन् 1748 ई. है। महाभारत के अश्वमेध पर्व के आधार पर इसकी रचना की गई है। इसकी भाषा परिष्कृत और प्रवाहपूर्ण है। रचना गम्भीर तथा उच्च कोटि की है।

सर्वेश रामायण–यह सुल्तानपुर निवासी कवि विश्वप्रेम सर्वे कृत अवधी रचना है, जिसमें पद-विन्यास सर्वेश कृति शब्दावली उच्चकोटि की है।

सहजराम–मिश्र बन्धु विनोद के अनुसार ये सुल्तापुर जिले के 'बधुआ ग्राम के निवासी थे। शिवसिंह सरोज के अनुसार इनका जन्मकाल सं. 1905 है। 'रघुवंश दीप' और 'प्रहलाद चरित' इनके अवधी काव्य ग्रन्थ हैं। कवि का रचना काल सं. 1930 वि माना जाता है। इनके दोनों ग्रंथ दोहा-चौपाई छंदों तथा अवधी भाषा में लिखे हैं। रचना शैली तुलसीदास कृत 'मानस' से साम्य रखती है। आधुनिक अवधी साहित्य में सहजराम का स्थान गण्यमान है।

सहजोबाई–17वीं-8वीं शताब्दी में जनमें सन्त कवियों में से ये एक हैं। इन्होंने जो साहित्य सर्जना की, उसमें ब्रज एवं भोजपुरी शब्दावली का भी पर्याप्त प्रयोग हुआ है।

साँईदास–इनका जन्म सं. 1525 की माघ कृण्ण 13, गुरूवार को बछोकी नामक स्थान पर हुआ था। इनके पिता का नाम 'मल्लिराय' था। इनकी काव्यकृति 'रतनज्ञानि' से इनकी काव्य कला का परिचय मिलता है। साँईदास का विशेष प्रामाणिक विवरंण प्राप्त नहीं है इनके काव्य में अवधी भाषा का प्रयोग मिलता है।

साधन–इनकी रचना 'मैनासत' का उल्लेख मात्र इतिहास ग्रन्थों में किया गया है। शेष विवरण अप्राप्त है। वस्तुतः इसका रचनाकाल 11वीं शती के पूर्व का साधन की आस्था गोरखपंथ पर है किन्तु साम्प्रदायिक बाह्य चिन्हों का अभाव है। इस कृति में योग और भोग का सुन्दर समन्वय हुआ है। इनकी भाषा में अवधी बीज रूप में अंकुरित होने लगी थी।

सालिग्राम 'अनुरागी'- धनौली, जिला हरदोई के निवासी अनुरागी जी एक समर्पित अवधी साहित्यकार हैं। 'तमगा' नामक अवधी कृति इनका मुक्तक काव्य है।

साहेब वरदानदास–ये रायबरेली के निवासी एवं अवधी के सन्त कवि है।

सियाराम मिश्र–इनका जन्म सन् 1942 ई. में ग्राम घर धनिया, जिला खीरी में में हुआ था। शिक्षा प्राप्ति के बाद ये पब्लिक इन्टर कालेज गोला गोकर्ण नाथ जिला खीरी में हिन्दी प्रवक्ता हो गए और आज तक इसी पद पर वहीं कार्यरत हैं। खड़ीबोली और अवधी दोनों में ही सुरुचिपूर्ण कविताथें करते हैं। हिरोशिमा, आंगन की नागफनी, स्टालिनवाद, पंचवटी से कर्बला, हुतात्मा जटायु , अमर शहीद हुसैन तथा महासमर आदि इनकी प्रमुख उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। 'महासमर' उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत काव्य-ग्रंथ है। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावनाओं का प्राबल्य है। इनकी अवधी भाषा सरल एवं

प्रवाहमयी है। लोकभाषा का सौंदर्य भी विद्यमान है।

डॉ. सियाराम : ये अवधी के सशक्त रचनाकार हैं और औरैय्या डिग्री कालेज में रीडर हैं।

सियाशरण मधुकरिया 'प्रेमअली'- इनका जन्म बिहार प्रदेश के सूपी गाँव में सन् 1862 में हुआ था। ये रसिक सम्प्रदाय (मधुर उपासना शाखा) के रामभक्त कवि थे। 1887 ई. में गृहस्थ आश्रम छोड़कर प्रेमअली जी अयोध्या आ गये और यहीं स्थायी रूप से बस गये। इन्होंने अवधी भाषा में पदों की जो रचना की है, वह अनुपम है। सन् 1945 में इनका स्र्ववास हो गया।

सीताप्रसाद–ये सुल्तानपुर (अमेठी) के निवासी एवं रसिकोपासक रामभक्त हैं। इनका जीवनकाल सन् 1844-1925 ई. के बीच वर्णित हैं। इन्होंने 'इश्क विनोद' नामक अवधी रचना बरवै छंद के माध्यम से प्रस्तुत कर अपनी अवधी-निष्ठा प्रस्तुत की है।

सीताराम त्रिवेदी–इनका जन्म सन् 1924 ई. में जनपद हरदोई के पलिया नामक भीव में हुआ थाप। ये अयोध्यासिंह इण्टर कालेज, हरदोई में हिन्दी प्रवक्ता थे। इन्होंने बरवै छंद के माध्यम से राम कथा का निरूपण किया है। 'बरवै शतक' इनकी अप्रकाशित कृति है।

सीताराम दास–ये जनकपुर के निवासी थे। इन्होंने सन् 1900 ई. के लगभग 'जनकपुर-माहात्म्य' नामक एक अवधी ग्रंथ की रचना की। यह कृति 'वृहद् विष्णुपुराण' के आधार पर दोहा-चौपाई शैली में सृजित है।

सीताराम शरण 'रूपकला'- इनका जन्म सन् 1840 में हुआ था। ये रसिक सम्प्रदाय के रामभक्त कवि थे। इन्होंने लगभग 17 ग्रंथ सृजित किये हैं, जिनमें 'भक्ति सुधा बिन्दु स्वाद तिलक' सर्वाधिक प्रसिद्ध अवधी ग्रंथ है। इनका देहावसान 1932 ई. में हो गया था।

सुखराम- ये बैसवारी अवधी के आधुनिक युगीन कवि हैं।

महामहोपाध्याय पं. सुधाकर द्विवेदी- ये भारतेन्दु जी के समकालीन और उनके मित्र थे। इनके पिता जनपद मिर्जापुर में कार्यरत थें वहीं पर इनका सन् 1860 ई. में जन्म हुआ था। इनकी काव्य भाषा मूल रूप से अवधी है। इन्होंने अपनी रचनाओं में उक्ति वैचित्र्य का अधिक निरूपण किया है। सन् 1914 में इनकी मृत्यु हो गयी।

सुन्दर कवि–असनी (बैसवारा क्षेत्र) निवासी ये अवधी कवि रहे हैं। भारतेन्दु युगीन अवधी कवियों में इनका महत्वपूर्ण स्थान है।

सुमित्रा कुमारी सिन्हा 'बतासा बुआ'- ये विशेष रूप से तो खड़ीबोली की कवयित्री हैं, किन्तु इन्होंने अवधी साहित्य में भी अनेक कविताएँ समर्पित की हैं। अवधी में बैसवाड़ी प्रयोग है, खड़ीबोली का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। इनकी अवधी रचनाएँ हैं-बतासा बुआ की झलक, गाँव की मंथरा।

सुमेर सिंह भदौरिया–भदौरिया जी हरदोई जनपद के निवासी हैं। विशुद्ध अवधी क्षेत्र न होने के बावजूद इन्होंने 'पंच रामायण' नामक अवधी कृति समाज को अर्पित कर अपना अवधी प्रेम प्रदर्शित किया है।

सुरेन्द्र कुमार दीक्षित - इनका जन्म अक्टूबर सन् 1927 में बम्भौरा, जनपद सीतापुर में हुआ था। ये अवधी कवि हैं। 'पूस की रात्रि' शीर्षक से इनकी कविता उल्लेख है।

सुरेश अवस्थी–आकाशवाणी और दूरदर्शन के सुपरिचित अवधी कवि अवस्थी जी का जन्म सन् 1938 में बाराबंकी जनपद के रामनगर में हुआ। इनकी अवधी कविताएँ माटी की गंध, लोकस्वर, तुलसी आदि बड़ी ही उत्कृष्ट हैं। सम्प्रति अध्यापन कार्य मे अनुरक्त हैं।

सुरेशचन्द्र शुक्ल 'सुरेश'- लखनऊ की मोतीझील कॉलोनी ऐशबाग रोड लखनऊ में जन्मे श्री सुरेश जी शिक्षा प्राप्ति के बाद रेलवे कार्यशाला में कार्यरत हो गये। कक्षा 9 से ही काव्य रचना इन्होंने प्रारम्भ कर दिया था। इनकी प्रथम रचना 2 अक्टूबर सन् 1972 ई. को 'हे बापू तुम धन्य हो' शीर्षक से हिन्दी दैनिक पत्र 'स्वतंत्र भारत' में प्रकाशित हुई थी। सुरेश जी 26 जनवरी सन् 1980 को नार्वे गए और

ओसलो विश्वविद्यालय में नार्वीजियन भाषा से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। नार्वे में ही इन्होंने 'वेदना' नामक काव्य संग्रह प्रकाशित कराया। प्रसाद की कृति आँसू के आधार पर इनकी 'रजनी' नामक कृति वहीं से प्रकाशित हुई। मातृभाषा अवधी होने के कारण ढेर सारी कविताएँ अवधी में इन्होंने लिखी हैं। इनकी रचनाएँ विभिन्न विधाओं में गीत, कहानी, लेख समय-समय पर 'कादम्बिनी' 'नवनीत' एवं 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में प्रकाशित हुई हैं।

डॉ. सुशीलकुमार पाण्डेय 'साहित्येन्दु'- ये सम्प्रति महाविद्यालय कादीपुर, सुल्तानपुर में संस्कृत विभाग में रीडर पद पर कार्यरत हैं। इन्होंने अवधी भाषा में तमाम रचनाएँ सृजित की हैं, जिससे अवधी साहित्य में इनका स्थान सुरक्षित हो गया है।

डॉ. सुशील सिद्धार्थ–ये पुरनिया रेलवे क्रासिंग, लखनऊ के निवासी हैं। इन्होंने हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त कर अवधी साहित्य को अपनी सेवा बड़ी मनोयोग से अर्पित की है। इन्होंने 'बिरवा' पत्रिका का संपादन कार्य करते हुए 'अँधियार पाखु' शीर्षक से अवधी उपन्यास प्रणीत किया, जिसमें उच्च्य शिक्षा से सम्बद्ध अनेक अनाचार उद्घाटित करने का प्रयास है। डॉ. चन्द्रशेखर अग्निहोत्री इनके पिता हैं, जो लखनऊ के डी.ए.वी. डिग्री कालेज में हिन्दी विभागध्यक्ष पद पर कार्यरत हैं।

सूरजप्रसाद द्विवेदी 'सूरज' 'काका बैसवारी'- इनका जन्म सन् 1935 ई में ग्राम अकबरा बाद जिला उन्नाव में हुआ था। काका बैसवारी की अवधी कविताओं में ग्राम्य और नगर के सामाजिक जीवन का यथातथ्य चित्रण है। इन्होंने देश की युगीन परिस्थितियों पर सच्चाई के साथ विचार किया है। हास्य और व्यंग्य के माध्यम से जन चेतना को झकझोरा है। इनकी प्रसिद्ध काव्य कृतियाँ हैं-सत्यनारायण की कथा, तुम तौ पिया परदेस सिधारे, सँकरे मा जिया हमार, बैसवारा समर, मतवाला मोहन, समय की पुकार खिसकढ़ी आदि। गाँव का जीवन ही काका की कविताओं का वर्ण्य विषय है। इनकी अवधी कविताओं में बैसवारी अवधी तथा यहीं का लोकांचल रूपायित हुआ है। बोलचाल की भाषा का सौन्दर्य होते हुये भी साहित्यिक तत्सम् शब्दों का अभाव नहीं है। विषयानुरूप-भावानुरूप भाषा में मृसणता, सुष्ठुता और प्रवाह है।

सूरदास–ये लखनऊ निवासी गोबर्धनदास के पुत्र थे। इन्होंने सन् 1714 में 'नलदमन' नामक अवधी ग्रन्थ का सृजन किया।

सूर्यप्रकाश त्रिपाठी 'शूल'- कानपुर निवासी शूल जी एक अच्छे अवधी रचनाकार हैं। इनकी कुंडलियाँ अति विशिष्ट हैं।

सूर्यप्रसाद 'निशिहर'- ये उन्नाव जनपद में स्थित बसन्त खेड़ा विहार के निवासी है। इन्होंने अवधी भाषा एवं साहित्य लगाव प्रकट किया है। अछूतोद्धार, हिलि मिलि रहौ आदि इनकी अवधी रचनाएँ हैं।

सेवा राम–ये 19वीं शताब्दी के अवधी कवि हैं। इन्होंने सं. 1853 से पूर्व 'नल-दमयंती-चरित' नामक अवधी ग्रंथ का सृजन किया था।

सैयद राजन–रायबरेली निवासी राजन एक अच्छे अवधी साहित्यकार है। इनकी रचनाएँ समाज को गति-मति प्रदान करने में सहायक हैं।

सोनेलाल द्विवेदी 'ललनेश'- द्विवेदी जी मौरावाँ जिला उन्नाव के निवासी थे। ये बैसवाड़ी अवधी के कुशल रचनाकार थे। समस्यापूर्ति आदि इनकी कविताओं के विषय रहे हैं। 30-32 वर्ष की अल्पायु में इनका असामयिक निधन हो गया।

सोम दीक्षित– 1 जुलाई 1949 ई. को सीतापुर जनपद के ग्राम रिखौना में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम सुन्दरलाल दीक्षित है। हिन्दी में एम.ए. करने के उपरांत समाज सेवा को इन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। ये हिन्दी सभा सीतापुर के अध्यक्ष भी रह चुके है। छन्दोबद्ध रचनाएँ सोम दीक्षित

की अधिक प्रिय है। ये अच्छे छन्दकार-सवैयाकार हैं। इनकी अवधी में बैसवारी का भी पुट मिलता है।

स्वराज्य बहादुर सुमन 'सुल्तानपुरी'- इनका विवरण अप्राप्त है, किन्तु इन्होंने निःसन्देह अवधी साहित्य की बहुत सेवा की है।

स्वामी अग्रदास– ये तुलसीदास के समकालीन 'भक्तमाल' के लेखक नाभादास के गुरू थे। इनका आविर्भाव काल सं. 1632 माना गया है। इनके दो अवधी ग्रंथ- 'कुण्डलिया रामायण', 'ध्यान मंजरी' उल्लेख्य है।

डॉ. हनुमानदास 'चकोर'- चकोर जी का जन्म सन् 1933 में हरदोई नगर के एक वैश्य कुल में हुआ था। कानुपर देहात जनपद के पुखरायाँ डिग्री कालेज में प्राध्यापक भी रहे। अवधी में दोहा तथा बरवै लिखने में बड़े कुशल थे, जो मृत्यु के समय 'गाँधी सतसई' लिख रहे थे, जो अधूरी रह गई 1960 ई. में अल्पायु में इनका निधन हो गया।

हनुमानशरण 'मधुर अलि'- ये रसिक सम्प्रदाय के रामभक्त कवि रहे हैं। इन्होंने अवधी भाषा में 'रामदोहावाली' नामक रचना सृजित कर अपना साहित्यिक योगदान प्रकट किया है। इस रचना का सृजन सन् 1887 में हुआ था।

डॉ. हरदेव बाहरी–बाहरी जी दरभंगा कालोनी, इलाहाबाद के निवासी हैं। इन्होंने अवधी साहित्य के सम्मान में काफी योगदान किया है। श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर' के 'अवधी कोश' को आगे बढ़ाते हुए इन्होंने 'अवधी शब्द संपदा' नामक संकलन का सम्पादन कर अवधी साहित्य को समृद्ध करने की कोशिश की है। सम्प्रति काफी कार्य कर भी रहे हैं।

हरि कवि–इनका मूलनाम हरिचरणदास त्रिपाठी था। इनका जन्म सम्वत् 1766 सारन (बिहार) जिले के चैनपुर ग्राम में हुआ था। इन्होंने 'बिहारी सतसई' पर टीका लिखी थी। इसके अतिरिक्त इनका एक स्फुट छंद-संग्रह भी मिलता है। इनकी रचनाओं में विशुद्ध अवधी का प्रयोग हुआ है।

डॉ. हरिकृष्ण अवस्थी–4 सितम्बर 1917 को हरदोई जनपद में जन्में डॉ. अवस्थी अपने परिवेश के प्रति बाल्यकाल से ही जागरूक थे। इनका व्यक्तित्व बहुआयामी है ये साहित्य, राजनीति, शिक्षा, प्रशासन सभी से जुड़े रहे। सन् 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन में डा. अवस्थी ने बढ़ बढ़ कर भाग लिया, जिससे इन्हें कठोर कारावास का दण्ड मिला। उच्च शिक्षा प्राप्त कर 1946 में, हिन्दी विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रवक्ता पद पर इन्होंने कार्य प्रारम्भ किया और 1976 में यहीं विभागाध्यक्ष हो गए। 1978 में सेवानिवृत्त हुये। सन् 1955 से 1996 तक ये पूर्वी अध्यापक निर्वाचन क्षेत्र और लखनऊ स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से विधान परिषद् के सदस्य रहे हैं। इस अवधि में विभिन्न संस्थाओं में सक्रिय रहे तथा अनेकानेक उपाधियों-सम्मानों से अलंकृत हुये। अवधी के प्रति किये गये महत्वपूर्ण कार्यो में इनकी सेवायें उल्लेखनीय हैं। पं. वंशीधर शुक्ल का पाठ्यक्रम में प्रवेश इनके अवधी-प्रेम का अपूर्व उदाहरण है। इनके निर्देशन में शोधकार्य की पहल हुई। इन्हीं की प्रेरणा से लखनऊ विश्वविद्यालय में अवधी परिषद् की स्थापना हुई थी।

हरितालिका प्रसाद–ये द्विवेदी युगीन अवधी कवि हैं। विशेष रचना दे सकने में भले ही प्रसाद जी सफल नहीं हो पाये, किन्तु अपने समय में अवधी काव्यधारा को जीवित रखने में अवश्य सफल रहे।

हरिदत्त सिंह- ये अलऊपुर, फैजाबाद के निवासी एवं अवधी कवि है।

हरिदास–हरिदास का पूर्वनाम हरिसिंह था। ये डीडवाणा (राजस्थान) के निवासी थे। कहा जाता है कि ये गोरखनाथ जी के शिष्य थे। हरिदास का जीवन-वृतांत प्रमाणिक एवं पुष्ट नहीं है। यों तो इनका स्थितिकाल आदिकाल से सम्बद्ध है। इनकी रचनाओं में पर्याप्त अवधी प्रयुक्त हुई है।

हरिनाथ शर्मा–शर्मा जी सीतापुर के बदैयाँ क्षेत्र के निवासी हैं। इन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में अवधी

भाषा को अपना केन्द्र बिन्दु बनाया है। अतः इनका अवधी प्रेम सराहनीय है।

हरिपाल सिंह–सुहिलामऊ, तहसील संडीला जनपद हरदोई निवासी सिंह साहब आधुनिक अवधी साहित्यकार थे। साथ-साथ ब्रज एवं खड़ीबोली का भी प्रयोग किया। इनका जन्म 1979 को हुआ था एवं मृत्यु 1932 ई. को। इन्होंने श्री दुर्गाविजय नामक अवधी ग्रंथ का प्रणयन किया है। जिसका प्रकाशन नवल किशोर प्रेस, लखनऊ से सन् 1898 में हुआ। इनकी अन्य रचनाएँ हैं- विद्या के लाभ, राजा पुरुरवा और उर्वशी की कथा, सोम्बरी का मेला, ललितादेवी का मेला आदि लगभग एक दर्जन रचनाएँ हैं।

हरिप्रसाद- ये भारतेन्दु युगीन अवधी साहित्यकार हैं।

हरिप्रसाद मिश्र–फैजाबाद निवासी मिश्र जी एक अल्पख्यात अवधी कवि है।

हरिबख्श सिंह 'हृदयेश'- इनका जन्म-1952 में एवं जन्म स्थान पूरे धानूमुदाई का बाग, रायबरेली। इन्होंने प्रचुर मात्रा में अवधी काव्य का सृजन किया है।

हरिभक्त सिंह पँवार– पँवार जी का जन्म 1 मई सन् 1943 ई. को ग्राम अटोडर रानीबाग में हुआ था। ठेठ अवधी में रचित इनके काव्य में ग्रामीण अंचल का सौन्दर्य, धरती का सोंधापन एवं नैसर्गिक वातावरण का प्रतिबिम्ब हुआ है। खेत-खलिहान, किसान, गाँव-गिराँव, फूल-फल आदि इनके लोकगीतों के विषय हैं।

हरिराय–प्राप्त प्रमाणों के अनुसार इनकी रचना है- 'जानकी रामचरित नाटक (अवधी)। इनका रचनाकाल - सं. 1850 कहा गया है। उल्लिखित कृति और अन्यान्य विवरण अभी गर्भस्थ है।

डॉ. हरिशंकर मिश्र- इनका जन्म 20 फरवरी सन् 1950 को ग्राम ऊनौ पो. सरसवाँ, जनपद इलाहाबाद के पं. श्री राजनारायण मिश्र जी के यहाँ हुआ था। डॉ. मिश्र हिन्दी विभाग में प्राध्यापक हैं। इन्होंने अवधी पर बहुत-सा कार्य किया है, जैसे- श्रीमद्भागवत और तुसली साहित्य का तुलानात्मक अध्ययन (प्रका.), अवधी गद्य लेखन तथा समीक्षा, मध्ययुगीन एवं आधुनिक कविता समीक्षा।

हरिशंकर शर्मा–पैरोडी हास्य लेखक (अवधी) भाषा में।

हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल'- इनका जन्म सन् 1932 में जनपद फैजाबाद के पहितीपुर कवलापुर ग्राम में हुआ। ये बहुत संवेदनशील अवधी रचनाकार हैं। इनकी रचनाओं में स्वर का जादू निवास करता है। इनकी रचनाओं में सामाजिक विसंगतियाँ, कारुणिक प्रसंग, ग्राम्य जीवन की मधुर ललित तथा करुणा कलित सम्पुष्ट हुआ है।

हाफिज महमूद खाँ- अपरहटी, रीवाँ के निवासी खाँ साहब अवधी भाषा के अनन्य भक्त हैं। इन्होंने अवधी को केन्द्र बिन्दु बनाकर अपनी रचनाधर्मिता प्रस्तुत की है।

हुसैन अली–ये सूफी कवि थे। इन्होंने सन् 1738 में 'पुहुपावती' नामक रचना को प्रणयन किया। इसी रचना में इनके उपनाम सदानंद का उल्लेख मिलता है। इनके काव्य गुरू केशवलाल थे। इनकी भाषा ब्रज मिश्रित अवधी है। यों अवधी का विनियोग अपेक्षाकृत अधिक है।

हेमचन्द्र–इनका जन्म सं. 1145 वि. में हुआ था तथा इनकी मृत्यु सं. 1229 वि. में। हेमचन्द्र की रचनाएँ- प्राकृत पैंगलम् प्रबंध चिंतामणि, प्रबंध कोश, पुरातन प्रबंध संग्रह तथा ब्याकरण है, जिनमें अवधी भाषा के बीज देखे जा सकते है।

आधुनिक अवधी कविता में गाँव

डॉ. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी

भारत की आत्मा गाँवों में निवास करती है। अतः भारतीय जीवन का व्यापक यथार्थ गाँवों में बिखरा पड़ा है। अवधी के आधुनिक कवियों ने अवध के ग्राम्य जीवन को अपनी रचनाओं के माध्यम से उजागर किया है। यद्यपि गाँव के विपरीत शहर के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन की विकृतियों का चित्रण भी इन कवियों को अभीष्ट रहा है, किन्तु उनकी कविता की केन्द्रीय संवेदना ग्राम- जीवन के विविध संदर्भों से जुड़ी हैं। बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस', वंशीधर शुक्ल, चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका', गुरुभक्त सिंह 'मृगेश', केदारनाथ त्रिवेदी 'नवीन', रामशरण सिंह, कृपाशंकर मिश्र, लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक', हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल' प्रभृति कवियों की कविता के संस्कार में गाँव की माटी का सोंधापन और कड़वाहट दोनों है। गॉव में जन्म लेने के नाते इन कवियों का ग्राम्य जीवन की और झुकाव स्वाभाविक भी है। इन्होंने ग्राम-जीवन को बहुत निकट से देखा ही नहीं, अपितु जिया भी है। इसलिए इनकी कविता कृषक-जीवन के बहिरंग और अन्तरंग को सफाई से प्रस्तुत कर सकी है। उन्होंने नारी- जीवन, गाँव में घुसती राजनीति, आर्थिक एवं शैक्षणिक पिछड़ापन, पंचायत-व्यवस्था, चकबन्दी, मुकदमेबाजी, मँहगाई, दहेज और पर्दा प्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियों के विभिन्न रूपों तथा अनेकविध समस्याओं को गहरी रेखाओं में अंकित किया है। आधुनिक अवधी कविता में एक ओर आजादी के लिए छटपटाते भारत के गाँवों के चित्र मिलते हैं और दूसरी ओर आजादी की रोशनी में नये ढंग से उगते हुए गाँव अपने विकास के लिए आशान्वित दिखाई पड़ते हैं। सामंतीय व्यवस्था के खिलाफ आक्रोश प्रायः सभी कवियों की अनुभूति का अंग है। अस्तु, आधुनिक कवियों की सांसों में गाँव की धड़कन है, किसानों की कथा-व्यथा है और जनहित के लिए संघर्ष का आह्वान भी है।

सहज ग्राम्य जीवन और प्रकृति

ग्राम्य प्रकृति और गाँव के जीवन का, मानव को स्वभाव-सौन्दर्य का जितना सजीव और मार्मिक वर्णन अवधी कवियों ने किया, उतना अन्यत्र कम देखने को मिलता है। इस दृष्टि से 'घसियारिन', 'सुनुहली श्यामा', 'मनई', 'लरिका', 'म्यहारू' (पढ़ीस), 'राम मड़ैया' (वंशीधर शुक्ल), गाँव के गीत' (मृगेश), 'गाँव की धरती' (रामशरण सिंह), 'किसानी' (कृपाशंकर मिश्र) आदि उच्च कोटि की रचनाएँ हैं। 'घसियारिन' कविता में घास निराती हुई नवयुवती का एक चित्र ध्यान देने योग्य है :

कस धूरि-धुरेटे बार स्वनहुले चंद बदन पर
उड़ि-उड़ि पुरवाई झ्वाँका बादरु अस मडरायि रहे
का चंदा मामा फेरि सँप्वलवा अयिसी वयिसी
छुवा-छुअउवरि खेलि रहे अठिलाय रहे म्यल्हरायि रहे
घसियारिन घास निरायि रहीं

गाँव के लोगों का जीवन प्रकृत एवं सहज है। रूखा-सूखा, साग-पात खाकर भी उनमें बड़ी मस्ती है। हाय-हाय की जिन्दगी जीना उन्हें नहीं आता है। गाँव में गोरस का अपार भण्डार है। गाँव के इस सुख को पाने के लिए शहर वाले तरसते हैं। निम्नांकित पंक्तियों में इस सत्य को उजागर किया गया है–

साग अगसा का खेत म खाइ,
भूँजि के भुट्टा कबहुँ चबाइ।
कहूँ कोऊ गन्ना चूसति जाइ,
सहरुवा सुनि-सुनि कै हौंस्याइ।।
जहाँ रस-गोरस का भण्डार।
बहुत है हमका गाँव पियार।।

- केदारनाथ त्रिवेदी 'नवीन'

गाँव के लोगों की स्वस्थ मानसिकता, मर्यादा, प्रेम-भाव को रेखांकित करते हुए 'निशंक' जी ने लिखा है:

एक दूसरे का करै लिहाजु, बड़ेन का छोटे किहै सनमान।
हिये मा न तनिकौ दुरभाव।

अवधी कवियों ने फैशनपरस्त आधुनिक नारी पर व्यंग्य किया है, किन्तु गाँव की नारी के प्रति उनकी सहानुभूति है। ग्रामीण स्त्रियों के सौन्दर्य, उनके सरल मधुर स्वभाव, अकृत्रिम जीवन से वह प्रभावित है। घर के भीतर ही उनकी सुबह से शाम हो जाती है। उनकी जिन्दगी में सुखद क्षण बहुत कम आते हैं। इन कवियों ने नारी-स्वतंत्रता का स्वर फूँका है। पर्दा-प्रथा जैसी कुरीतियों पर प्रहार किया है। फटे-पुराने वस्त्रों में लिपटी ग्रामीण नारी के सौन्दर्य पर कवि मुग्ध है:

मड़ैयन मा लछिमी का बास।
बुझावै पसु पच्छिन की प्यांस।।
रूप चिथरन् मा बँधा अपार।
बहुत है हमका गाँव पियार।।

- नवीन

ग्रामीण जीवन के चित्रकार अवधी कवियों ने गाँव की प्रकृति, वहाँ के कण-कण में बिखरे सौन्दर्य तथा प्रकृति-व्यापार पर रीझकर उसे अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। निम्नांकित पंक्तियों में कवि ने सायंकालीन वातावरण का बड़ा सजीव बिम्ब खींचा है :

पच्छिम से सोन परी उतरी,
सौंपति धरती का सोनदान।
सावन कै जल हलमय पिरथी,
झलमल झलमल तलिया चमकी।।
नदियन, नारा, घर, खेत, बाग,
छवि सुरभि उड़ी धरती गमकी।
तलियन के सोन कगारन पै,
पंछिन के गोल गोल उतरैं।।

- रामशरण मिश्र

बसंत-वर्णन करते हुए अवधी कवि केवल बौरते आम तथा कूकती कोयल की पुकार में ही नहीं

भटकता, वह देश की माटी से अमर कहानी लिखता है :

जब आवै बसन्त रहै आम बौराने,
कूकै रे कोयलिया फिरै मस्तान।
x x x
खेत मा किसान जो गिरावै पसिनवाँ
सोनवाँ के दनवाँ से भरै खरिहनवाँ
धरती सिंगार करै जइसे महरानी
देसवा के माटी लिखै अमर कहानी।।

- हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल'

गर्मी के प्रचंड ताप से टूक-टूक फटती धरती, झुलसती प्रकृति, दुबली नदी, सूखे ताल-तलैया और विहवल जीव-जन्तुओं की स्थिति के सम्मिलित चित्र से गर्मी का वातावरण साकार हो उठा है :

लूक लागे धरती के छाती टूक टूक होइगे,
जीव-जन्तु बिरवा झुरसि बिलगाइ गै।
जीवन ते जीन तपि दूबरि भई है नदी,
ताल औ तलैया सबै छिनमां सुखाई।।

- लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'

वर्षा ऋतु में यही मुरझायी प्रकृति हरी-भरी हो जाती है। ताल-तलैया वर्षा जल से भर जाते हैं। धरती अपने अंचल के असीम सौन्दर्य को देखकर मुग्ध हो उठती है। निम्नांकित चित्र देखिए :

ताल तड़ाग हुलसि उबराने,
माटी महकी खेत की।
पके आम जमुनी भदरानी,
अउर लजानी केतकी।
हरी चुनरिया ओढ़ि जगावइ,
धरती अपन सुहाग की,
छलकइ रस की गागरी।।

- युक्तिभद्र दीक्षित

गाँव में रहने वाले पशु-पक्षियों के कार्य-व्यापार का अंकन भी अवधी कवियों ने किया है। इस दृष्टि से वंशीधर शुक्ल की कविता से एक उदाहरण प्रस्तुत करना अप्रासंगिक न होगा :

जहाँ गाइन का घंटा ठनकै, भैंसिन का हुँकारा
घोड़वा हींसै बघवा डहुँकै गदहा देय नगारा।
कूकुर उल्लू बने पहरुवा निहुकि निहुकि जगावै
पीपर बरम, नीम पर भुइयाँ जिन्द परेत पुजावैं।।

इस प्रकार अवधी काव्य में ग्रामीण जीवन की सहजता, निर्मलता के साथ ही रंग-बिरंगी प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य का प्रचुर वर्णन मिलता है।

ग्राम्य जीवन का दर्द

कृषक भारतीय समाज का महत्वपूर्ण अंग है। किन्तु, यह विडम्बना है कि उसकी मेहनत, ईमानदारी और सीधेपन का नाजायज फायदा सदियों से सामंत, जमींदार और उच्चवर्ग के लोगों ने उठाया और साथ ही

उसे खूब सताया भी। कड़कड़ाती ठण्डक, वर्षा और जलती दोपहरी में खेतों में काम करना ही उनकी नियति है। किन्तु, हाड़तोड़ मेहनत और संघर्ष के बदले उसे अधपेट खाकर रातें गुजारनी पड़ी हैं। स्वभावतः वह नियतिवादी हो गया है। वह यह सोचने के लिए विवश है कि विधाता ने उसके नसीब में किसानी ही लिखी है। गाँव की जिन्दगी के इस यथार्थ को अवधी कवियों ने खूब पहचाना है :

राति दिन जब खूनु जारी,
तब बनै बेली सोहारी
खाय दुनिया मौज से—
हम सो रही भूखे परानी
है कठिन सबते किसानी
घामु बरखा सीतु झेली
खाति दुनिया घर की भेली
मुलु बिधातैं तौ लिखेसि
तकदीर हमरी सूख पानी
है कठिन सबते किसानी।।

- कृपाशंकर मिश्र 'निर्द्वन्द्व'

किसानों की सारी जिन्दगी संघर्ष करते हुए चुक जाती है। धरती की सेवा में उसे खून और पसीना एक कर देना पड़ता है। उसे क्या-क्या नहीं झेलना पड़ता है। उसकी दयनीय स्थिति का चित्रण रमई काका की आँखों में बरबस उतर आया है :

हमरे तरवन कै खाल धंसी, और रकतु पसीन एक कीन।
धरती मइया की सेवा मां, हम तपसिन का अस भेसु कीन।।
है सहित ताप बड़ बूंदै घात, प्रचंड लूक कटकट सरदी।
खाधन खाधन मां रमति रोज, चन्दन अस धरती की गरदी।।

किसानों के आर्थिक शोषण के प्रश्न को कवियों ने बार-बार उठाया है। खलिहान में अनाज आते ही गाँव का बनिया, महाजन और सूदखोर अपना-अपना हिस्सा बँटा लेता है। किसान के पास वर्ष भर खाने के लिए अन्न नहीं बचता। इस पीड़ा का अनुभव करते हुए रामशरण सिंह ने खेतिहर की मुक्ति के संदर्भ में आवाज उठाई है :

ई लूटि दानवी कबइ मिटी,
कब खेतिहर आपन श्रम पाई।
अपने बूते के दाना पर,
आपन अधिकार समझि पाई।।

'किसान की दुनिया' शीर्षक कविता में वंशीधर शुक्ल ने भी कृषकों के शोषण की वास्तविकता को उद्घाटित किया है :

जमींदार कुतवा अस नोंचै देह की बोटी-बोटी,
नौकर, प्यादा और करिन्दा ताके रहैं लँगोटी।
पटवारी खुरचाल चलावै, बेदखली इस्तीफा,
रोजइ कुड़की औ जुरमाना छिन छिन नवा लतीफा।
थाना-चौकी पुलिस-कचेहरी इसपट्टर औ पासी,
सब अपनी ससुरारि बनाये अफसर औ चपरासी।।

किसानों को अपने श्रम की मजदूरी में अपमान, शोषण, उत्पीड़न ही मिला है। जमींदारी-व्यवस्था में उनकी स्थिति दयनीय थी। वंशीधर शुक्ल ने 'राजा की कोठी' शीर्षक कविता में सामन्तवादी व्यवस्था का पर्दाफाश किया है। निम्नांकित पंक्तियों में ग्राम्य जीवन का उक्त यथार्थ कवि की विद्रोह-भावना का संस्पर्श पाकर निखर उठा है :

ईंट किसानन के हाड़न की, लगा खून का गारा,
पाथरु अस जियरा किसान का चमक आँख का तारा।
लगी देस भक्तन की चरबी, चिकनाई जुलमन की।
घंटा उनके अन्याइन का, कथा होइ पापन की।।
जहाँ बसै ऊ जम का भइया, खाइ खून की रोटी।
वहै बनी बूचड़खाना असि महाराज की कोठी।।

गरीबी से हारकर गाँव का व्यक्ति नौकरी के लिए शहरों की ओर भागता है। शहर की आपाधापी में गाँव की याद उसे कसकती रहती है। शहर में भी उसकी आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं होता। बारह घंटे काम की मजदूरी में बीस आना लेकर उसे संतोष करना पड़ता है। कभी पाँच मिनट विलम्ब से पहुँचने पर उससे भी वंचित हो जाना पड़ता है :

बारह घण्टा करी मजूरी तब पाई बीसइ आना।
पाँच मिनट के चूकि गये से मना है अन्दर आना।।

मुकदमेबाजी गाँव की आर्थिक-व्यवस्था के लिए कोढ़ में खाज के समान है। जरा सी कोई बात हुई नहीं कि किसान फौजदारी पर उतर आते हैं। बात थाना-पुलिस, कानून-कचहरी तक बढ़ जाती है। परिणामतः उनकी आर्थिक स्थिति और भी चिन्तनीय हो जाती है। पढ़ीस, रमई काका, कमलेश आदि कवियों ने मुकदमेबाजी में टूट गये किसान की आर्थिक स्थिति का मार्मिक निर्णय किया है। श्रीराम श्रीवास्तव 'कमलेश' की निम्नलिखित पंक्तियाँ ध्यातव्य है :

अब गये अदालत मां रंगई कै,
रंग सबै बदरंग होत।
भूखन मरतै लरिका बाला,
ना पटत पोत छुटि जात जोत।
सब गहना गीठी गहन होत,
बिकि जाय कठोलिया और तवा।।

पंचायती राज व्यवस्था ने गाँवों को राजनीति में लपेट लिया है। फलतः वहाँ के लोगों में पारस्परिक सद्भाव की भावना क्षीण होती गयी और कलह का वातावरण निर्मित हुआ। झूठे आश्वासनों पर चुनाव जीतकर सभापतिगण तरह-तरह से गाँव वालों को परेशान करते हैं। एक चित्र दृष्टव्य है :

काल्हि संझवा से होइ परधनवां पिया
लूटै जमनवाँ पिया ना।
पहिले द्वार द्वार पर धावै
जैसे ओट न आप आवै
लै हवो के जोताई एवरिहनवाँ पिया
लूटै जमनवाँ पिया ना।।

- ओंकारनाथ उपाध्याय

भोली-भाली ग्रामीण जनता को बहला-फुसलाकर चुनाव जीत लेने वाले नेतागण जब लखनऊ और दिल्ली पहुँच जाते हैं, तब उन्हें गाँव की सुधि भूल जाती है। गाँव के एक किसान की एतत्सम्बन्धी व्यथा का एक चित्र द्रष्टव्य है :

हमरिउ सबका कुछ सुना करा,
अपनिन जिन हमका समझावा।
हमहूँ सब अब नागरिक भये,
अब जिन गँवार कहि गोहरावा।।
हमरे गाँव जो आवा तो
हमरिउ कछु हाल चाल पावा।।

- कुँवर बहादुर लाल 'शेष'

इधर मँहगाई ने कृषकों की स्थिति और अधिक दयनीय बना दी है। थोड़ी सी कमाई में दस प्राणियों के लिए भोजन की व्यवस्था कर पाना बड़ा कठिन है। कवि कहता है :

छोट मोट सब चीज महंगा बा पास न नाहीं पाई।
दस प्रानी कइ खान-पान हम कौनी भाँति चलाई।
भइया थोड़ी सी कमाई मा ठिकाना नाहीं बा।।

- ओंकारनाथ उपाध्याय

भारत के अधिकांश गाँवों में सिंचाई के पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं। वहाँ की खेती वर्षा पर निर्भर करती है। वर्षा न होने पर किसान का श्रम, समय और धन नष्ट हो जाता है। अवर्षण के कारण अकाल की भयावह स्थिति आ जाती है। सूखे के संकट का एक चित्र ध्यान देने योग्य है :

अब की तौ खेता का खूबै जोताया।
अच्छा समय पाय बिजवा मँगावा।।
लेकिन बरसा न पानी· किसन—
बजरी और जुन्हरी तो जामैं न पायेसि
समय अस लाग मूँग उरद नसायेसि
धानेउ क फसल नसानी किसन।।

- श्रीनारायण मिश्र

अवधी कवियों ने घर के भीतर झाँककर पारिवारिक रिश्तों का भी निरीक्षण किया है। 'सास पतोहू के झगर' शीर्षक गीत में बिसराम जी ने शिथिल एवं पतनोन्मुख कुटुम्ब व्यवस्था की ओर संकेत किया है:

बातन बातन भै बतबढ़उल
भइ झोंटी कै धरी धरा।
सास कै ऊपर चढ़ि बइठै
औ मुँहे पै मारै दुइ चबरा।।

आज के गाँव दहेज-प्रथा के अभिशाप से मुक्त नहीं हैं। साधारण हैसियत वाले परिवार के लड़के ने यदि बी.ए., एम.ए. पास कर लिया तो दहेज में अच्छी रकम वसूल करने का अधिकार मान लिया जाता है। लड़के वालों ने दहेज को अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा से जोड़ लिया है। इस विषम स्थिति में फँसे लड़की के बाप के दर्द को समझने वाला भला कौन है? अवधी कवियों ने दहेज-प्रथा को असामाजिक माना है। गाँव के एक पाण्डेय जी ने अपनी कन्या का विवाह मिश्र जी के लड़के के साथ तय किया

है। शर्त है कि दहेज में सूपभर रुपया लूँगा, क्योंकि हम ऊँचे कुल के कन्नौजिया ब्राह्मण हैं। मुँहमागा रुपया न मिलने पर मिश्र जी अप्रसन्न हो जाते हैं और कन्या की विदाई कराये बिना बारात लेकर लौट जाते हैं :

पर मिसिर न मानेनि याक बात
पाण्डे का डाटेनि कइउ बार।
बिना बिदा कराये घरे भागि,
मन रटत रहे ढाई हजार।
ढाई हजार; ढाई हजार।।

- रमई काका

गाँव के डीह, गांठ, काली आदि देवी-देवताओं के प्रति गाँव वालों की आस्था तथा भूत-प्रेत, टोना-टोटका में उनके विश्वास का भी चित्रण अवधी काव्य में है। इस प्रकार अवधी कवियों ने ग्रामीण जीवन के दर्द को विभिन्न कोणों से व्याख्यायित किया है। यहाँ तो कुछ झलकियाँ ही प्रस्तुत कर सकना संभव है।

अवधी के अनेक कवियों ने आदर्श गाँव का स्वप्न सँजोया है। स्वतंत्रता मिलने के बाद हमारे गाँव की स्थिति में अपेक्षित सुधार हुआ है। विज्ञान के कारण गाँव के विकास की संभावनाओं के द्वार खुल गये। जीवन के सभी क्षेत्रों में विकास की किरणें पहुँचने लगी हैं। प्रत्येक गाँव में शिक्षण संस्थाएँ और अस्पताल खुल गये हैं। पहले गाँव के बच्चों को शिक्षा प्राप्ति हेतु अपने गाँव से दो-चार मील दूर जाना पड़ता था, किन्तु आज हर गाँव में मदरसा खुल गया है। शिक्षा के महत्व को रेखांकित करते हुए कवि ने किसानों को उद्‌बोधित किया है :

अपने लरिकन का पढ़ावा हो किसनवा भइया ना।
जब तक दूर न होय अविद्या काम न बनिहै भाई।
सत्यासत्य का ज्ञान न होई सारा काम नसाई।
यह अविद्या का भगावा हो किसनवा भइया ना।।
पढ़ि-पढ़ि के उन्नति करिहैं होइहैं दूर बेकरिया।
सुख कइ बढ़ी प्रकाश देस मा दुख कइ कटी अँधेरिया।
स्वर्ग देसवा का बनावा हो किसनवा भइया ना।।

आज गाँवों में ताल्लुकेदारी और जमींदारी-व्यवस्था का अन्त हो गया है। खेतिहर शोषण से मुक्त है। अपनी जीवन स्थिति के सुधार हेतु वह सरकार से अपेक्षा करने लगा है। उसे पूर्ण विश्वास है कि उसके अच्छे दिन लौटेंगे :

अब होइ जाई हमरौ सुधार।
हमरे लरिका होइहैं निहाल रोटी पर नैनू धरि खइहैं।
हमरिउ मरजाद साखि जागिहैं अब हमरेउ नीके दिन फिरिहैं।।
तालुकदारी के अँधियारी माँ हमरी ज्याति हेरान रहे।
परबस पंछी जस पिंजरा मां खेतिहर का जिउ पियरान रहे।।
अब मुक्ति मिली पावा उजार, अब होइ जाई हमरौ सुधार।।

- लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'

जमींदारी उन्मूलन के बाद किसानों को जमीन का स्वामित्व मिल गया। सरकार ने कृषि-विकास

के लिए कृषि संसाधनों की व्यवस्था की है। किसानों का विश्वास है :

अब नई मसीनैं मँगवैहैं,
खेतन मां टैक्टर चलवैहैं।
क्यारिन मा मोती बनि बोइहैं,
बनि जइहैं सब पक्के मकान।।

दुनिया को अन्न देने वाला, सुख सम्पति से भरने वाला किसान स्वयं भूखा, नंगा रहकर रक्त के आँसू बहा रहा था, किन्तु बदलते हुए परिवेश में उसे अपने स्वत्व का बोध हो गया है :

हम कछु आहिन उयि जानयिं तउ,
उहु नातु पुरातनु मानयिं तउ।
उयि रहिंहयि तउ हमहू रहिबयि,
हमते उन्हुन की लाज रही।
घरु जरि कयि बंटाधारु भवा,
तब का जानिनि हम को आहिन।।

पढ़ीस की उपर्युक्त कविता के परिप्रेक्ष्य में प्रख्यात कथाकार श्री अमृतलाल नागर ने लिखा है— ''पढ़ीस की यह ललकार फूँस में दबी चिनगारी जैसी ही प्रचंड थी। पढ़ीस की कविता गाँवों के गूँगे किसानों की बोली थी। धरती की सहनशीलता और स्वाभिमान के साथ धरती का लाल बोलता था।''

कवि की दृष्टि में देश की स्वतंत्रता तभी सार्थक है, जब नगर के समान गाँव भी विकसित होकर जगमगाने लगेंगे :

नगर समान जगमग गाँव होइहैं जब,
तबही स्वतंत्रता ई साँची जानि परिहै। - निशंक

निष्कर्षतः अवधी साहित्य ने आम-आदमी के दर्द, आशा-आकांक्षा को वाणी दी हैं। अवध क्षेत्र में सामान्यतः आम आदमी, गाँव, खेत-खलिहान से सम्बन्ध रखने वाला किसान है। अवधी कवियों ने कृषक जीवन के यथार्थ को पूरी सहानुभूति के साथ अंकित किया है। उनकी कविताएँ गाँव की सुगंध से ओत-प्रोत हैं। उनमें गाँव के श्याम पक्ष भी यत्र-तत्र देखने को मिलते हैं। निस्संदेह अवधी का आधुनिक काव्य कृषक-जीवन का काव्य है।

अवधी की नयी त्रयी

प्रो. कैलाश देवी सिंह

बरसों पहले डॉ. सुशील सिद्धार्थ के साथ 'अवधी अध्ययन केन्द्र' की स्थापना करते हुए यह नहीं लगा था कि सचमुच एक ऐतिहासिक क्षण आकार ले रहा है। अवधी अध्ययन केन्द्र से 'बिरवा' त्रैमासिक पत्रिका ने प्रकाशित होकर एक रचनात्मक क्रांति सी कर दी। यहां स्मरण करना चाहूंगी कि अनुज सिद्धार्थ ने उस समय मुझसे कहा था कि हमें जगदीश पीयूष से प्रेरणा लेनी चाहिए। बाद में पीयूष जी के कृतित्व से भी परिचित हुई। बिरवा में पहली बार भारतेन्दु मिश्र की अवधी कविताएं छपी थीं। यही कारण है कि जगदीश पीयूष, सुशील सिद्धार्थ और भारतेन्दु मिश्र की नयी त्रयी के रूप में 'अवधी त्रिधारा' के कवि और पुस्तक मेरे लिए विशेष महत्वपूर्ण है। यह त्रयी अवधी की रचनाशीलता में एक नूतन अध्याय रचने जा रही है। लखनऊ विश्वविद्यालय में अवधी का अध्यापन करते हुए मैंने जाना है कि 'निजभाषा' या 'लोकभाषा' में एक अपूर्व शक्ति होती है। मुझे पूरा भरोसा है कि किसी भी विश्वविद्यालय में जब समकालीन अवधी कविता को स्थान दिया जाएगा तब 'अवधी-त्रिधारा' की कवित्रयी उसमें प्रतिष्ठित होगी। ये तीनों कवि अवधी अनुरागी हैं। सहृदय रचनाकार होने के साथ ये विलक्षण बौद्धिक भी हैं। अवधी को ऐसे ही हृदयशील-बुद्धिमान व्यक्तित्व नेतृत्व प्रदान कर सकते हैं।

जगदीश पीयूष के पास अनुभवों का भंडार है। वे जनजीवन का निरंतर अध्ययन करते रहते हैं। उनकी रचनाएं अपनी नैसर्गिकता में अद्भुत हैं। वे लिखते हैं :-

'हलाकान बा किसान, ना बिकाय गोहूं धान
भवा जियरा हमार तौ ठठेर माई जी।
लागा अंधरे के हथवा बटेर माई जी।।'

प्रचलित मुहावरों का प्रयोग करने में पीयूष का कोई सानी नहीं। परिवेश की विसंगतियां उन्हें रचने के लिए प्रेरित करती हैं। वे जानते हैं कि विसंगतियों के पीछे नकारात्मकता का प्रच्छन्न भूगोल क्या है। पीयूष ने परम्परा का सांकेतिक विश्लेषण करते हुए वर्तमान का मूल्यांकन किया है। वे राजनीति की अंतर्धाराओं व अंतर्कथाओं के प्रत्यक्ष दृष्टा हैं। सब समझते हैं और राभझरोखे बैठकर जग का मुजरा लेते रहते हैं। तभी तो लिख पाए-

'कुर्ता खादी का चौचक, ताकैं गांधी जी भौचक
होइगे घरे घरे नेतवे दलाल माई जी।
करैं धीरे धीरे हमका हलाल माई जी।।'

राजनीति और समाज के परिवर्तनों पर पीयूष जी की पैनी नजर है। वे चिबिल्ली दिल्ली के कारनामे जानते हैं। दिल्ली को यह लोकविशेषण पीयूष ही दे सकते हैं। कभी दिनकर ने दिल्ली पर एक प्रसिद्ध कविता रची थी- 'वैभव की दीवानी दिल्ली'। पीयूष ने दिल्ली के दिल में छिपी हलचल को पूरी क्षमता से प्रकट किया है। वे कहते हैं:

'हियां न केवकै केव सुनवैया, अपुनै मा है ता ता थैया।।
देखा जनता की छाती पै, सोझै धरी बबुर कै सिल्ली।
बाटै बड़ी चिबिल्ली दिल्ली।।'

पीयूष उस जीवन रस की पहचान भी करते हैं, जिसके चलते जाने कितनी मुसीबतों को झेलता हुआ भी मनुष्य जिजीविषा से भरा रहता है। हंसी ठिठोली, शृंगार, छेड़छाड़ और माधुर्य से भरे उनके गीत अवधी में नया आयाम उद्घाटित करते हैं। इस संग्रह में उपस्थित रचनाओं को पढ़कर पीयूष के कवि कौशल पर भरोसा होता है। वे सर्वतोभावेन अवधी को समर्पित व्यक्तित्व हैं। 'अंधरे के हाथ बटेर' संग्रह को जो ख्याति मिली है, वह विदित है। इस कृति पर उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने उन्हें 'जायसी नामित पुरस्कार' से अलंकृत किया है।

डॉ. सुशील सिद्धार्थ मेरे प्रिय, आत्मीय और अनन्य हैं। वे मेरे छोटे भाई हैं। मैं उनके रचना संसार को देखकर आत्मिक सुख अनुभव करती रहती हूं। जैसे उनको मिल रही प्रशंसा वस्तुतः मुझे ही मिल रही हो। इतना कह सकती हूं कि जिस आस्था और भक्ति के साथ वे अवधी की बहुआयामी सेवा में लगे हैं, इसका उदाहरण बहुत कम मिलेगा। अवधी अध्ययन केन्द्र के संस्थापक और महामंत्री के रूप में सुशील सिद्धार्थ ने अभूतपूर्व कार्य किया है। नयी नयी योजनाएं बनाने में वे परम प्रवीण हैं। साधनों के चलते कुछ पूरी होती हैं, कुछ नहीं। जो पूरी होती हैं, वह तो महत्वपूर्ण हैं ही, सुशील की अधूरी अथवा अपूर्ण सक्रियताएं भी बहुतों की पूर्णताओं से अधिक मूल्यवान हैं। हमने साथ मिलकर इस संस्था का संचालन किया है और किसी न किसी रूप में आज भी यह संस्था अपना योगदान दे रही है। 'बिरवा' का नाम तो अवधी के साहित्येतिहास में अमर हो चुका है। इसके सामान्य अंकों और विशेषांकों में सुशील ने जिस कल्पनाशीलता का परिचय दिया है, उसकी मैं प्रशंसक रही हूं।

सुशील सिद्धार्थ की दो अवधी कविता पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं- 1. बागन बागन कहै चिरैया, 2. एका। दोनों को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने जायसी नामित पुरस्कार से सम्मानित किया है। इन पुस्तकों में जो कविताएं हैं वे आधुनिकता और प्रगति- शीलता का शंखनाद करती हैं। एक सतर्क, प्रतिबद्ध और प्रखर अवधी कवि के रूप में उन्होंने अपनी पहचान निर्मित कर ली है। मैं अवधी या लोकभाषा के आलोचकों का आवाहन करती हूं कि वे सुशील सिद्धार्थ की अवधी कविताओं का विश्लेषण करें। उन्हें ज्ञात होगा कि अवधी कविता ने सिद्धार्थ के रूप में एक समृद्ध सिद्धि प्राप्त की है। अपने छात्र जीवन में सुशील सिद्धार्थ ने एक अवधी उपन्यास 'अंधियार पाखु' की रचना की थी। एक दर्जन शोध प्रबंधों और पुस्तकों में इसका उल्लेख विस्तार से किया जा चुका है। यह उपन्यास अवधी कथा साहित्य के प्रतिमान बनाता है। एक युवा मन की द्वन्द्वात्मकता से ओतप्रोत इस उपन्यास में जीवन मूल्यों के जाने कितने संघर्ष समाहित हैं।

डॉ. भारतेन्दु मिश्र संस्कृत के विद्वान हैं, हिन्दी नवगीत के प्रखर हस्ताक्षर हैं और अवधी के सेवक हैं। अवधी में उन्होंने सुशील सिद्धार्थ की प्रेरणा से लिखना प्रारंभ किया। इनके नवगीतों ने जल्द ही सबको अपनी ओर आकृष्ट किया। भारतेन्दु गांवों की बदलती परिपाटी पर टिप्पणी करते हैं-

'जुग बदलि गवा है कक्कू, सब अपनै रागु अलापैं
कामे काजे मा अब तौ. मेहरी मरदन संग नाचैं
परिगै है भांग कुआं मा, सब झूमैं दै गरबांही।'

नये बदलावों-प्रभावों के बीच परम्पराओं के तनाव को भारतेन्दु ने भलीभांति चित्रित किया है। उन्होंने अवधी में बहुत अच्छी गजलें लिखी हैं, दोहाकार तो वे अद्भुत हैं ही। 'कस परजवटि बिसारी' भारतेन्दु की अवधी पुस्तक है, जिसमें कविताओं के साथ-साथ गद्य भी शामिल है। उनके ललित निबंध बेहद मर्मपूर्ण हैं।

मुझे विश्वास है अवधी की नयी त्रयी से से अवधी कविता में नया युग प्रारंभ होगा।

प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

अवधी-कविता : पढ़ीस से पीयूष तक

डॉ. नलिनकान्त उपमन्यु

(क)

अवधी-कविता सदा से ही महाप्राण रही है। उसकी प्रकृति ओजस्वी और प्रवृत्ति सात्विक है। लोक से उसका रागिक जुड़ाव रहा है। सीधा-सपाट जानने एवं करने वाला यह विशद-विस्तृत अवधी-क्षेत्र तासीर में ओज-तेजवाला है। इसे परतंत्रता से चिढ़ और गुलामी से बैर है। अन्याय, अत्याचार, साम्प्रदायिकता आदि का यह परम विरोधी है। इसका क्रोध-विरोध भी तामसिक न होकर लोकहितैषी है। इसके काव्य-नायक दीनदुःखियों, मजदूर-किसानों, भलेमानुस-सद्‌गुणियों के तरफदार और मित्र रहे हैं। इस क्षेत्र के लोगों में चूँकि कोई बड़ी चाह नहीं है, अतः ज्यादा परवाह भी नहीं है।

इस-ऐसे महाप्राण क्षेत्र को प्रतिष्ठित करने वाली अवधी-कविता पिछले करीब हजार वर्षों से सामान्यतः दो प्रमुख धाराओं में प्रवाहित होती रही है- एक तो धर्माश्रयी और दूसरी लोकाश्रयी। राज्याश्रयी काव्यधारा अवधी में नहीं चली। उसकी धूम ब्रजी और मैथिली में ही रही। अवधी कभी दरबार की मुँहताज नहीं बनी। राम-रामानुज-प्रेरित अवध-अवधी क्षेत्र की मानसिकता लॉस-रास, रंग-राग, भोग-विलास, रति-रभस, नायक-नायिका, अलंकरण-मंडन, सजाव-सिंगार, बनाव-दिखाव में कभी रमी नहीं। ब्रज के रास-विलास की नकल पर कुछ लोगों ने साम्प्रदायिक वितान-तले 'रसिक-परम्परा' चलाने की भरपूर कोशिश की, लेकिन उन्हें व्यापक लोकमान्यता कभी नहीं मिली।

जिसे लोकाश्रयी-काव्य कहा गया है, वस्तुतः वही आधुनिक अवधी-काव्य है और उसका उद्‌गम सामान्यतः भारतेन्दु के उदय के साथ माना जाता है। आधुनिक चेतना का अभ्युदय खड़ीबोली हिन्दी के समान ही, अवधी-कविता में भी उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध से होता है और, यह चेतना भारतेन्दु-युग, द्विवेदी-युग, छायावाद-युग, प्रगतिवाद-युग, स्वातन्त्र्योत्तर-युग से लेकर अद्यतन वर्तमान तक उत्तरोत्तर आलोकित होती गयी है। इस विस्तृत कालावधि में अवधी-काव्य में मोटे तौर पर सामासिक रूप से निम्नलिखित चार प्रमुख प्रवृत्तियाँ सतत गतिमान है :

(1) **राष्ट्रीय-चेतना एवं देशभक्तिपरक प्रवृत्ति :** अवधी-काव्य में आधुनिक दृष्टि से राष्ट्रीय चेनता एवं देशभक्ति का प्रथम स्वर उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध में सुनायी देता है, जब अंग्रेजी दासता के विरुद्ध जनमानस में प्रतिक्रिया उभर रही थी और पराधीनता के वातावरण के प्रति बेचैनी और आक्रोश पनपने लगा था। देश की दुर्दशा पर सहृदय-जागरूक जनों का ध्यान गम्भीरतापूर्वक केन्द्रित हो रहा था। ऐसे में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र हिन्दी-साहित्य में राष्ट्रीय चेतना के वैतालिक बने। उन्होंने अवधी-भोजपुरी-मिश्रित खड़ीबोली में अनेक भावमयी राष्ट्रीय चेतनापरक कविताएँ लिखकर राष्ट्र की व्यथा-कथा का संदेश जन-जन तक पहुँचाया। भारतेन्दु के भक्त और मित्र प्रतापनारायण मिश्र ने अवधी में अनेक रचनाएँ प्रस्तुत करके भारतवासियों की दुर्दशा का प्रभावशाली चित्र खींचा। इनके अतिरिक्त उनके समकालीन

कवियों की अवधी-कविता में भी पराधीनता-जन्य ग्लानि और राष्ट्रीय एकता की बड़ी मार्मिक झलक मिलती है।

किन्तु, सही अर्थों में राष्ट्रीय चेतना की अवधी-कविताओं की परम्परा 'पढ़ीस', वंशीधर शुक्ल, द्वारकाप्रसाद मिश्र, मृगेश, रमई काका आदि स्वनामधन्य कवियों से प्रारम्भ होती है, जिनके साथ आगे चलकर चतुर्भुज शर्मा, विश्वनाथ पाठक, 'सरल', 'उन्मत्त', 'आजाद' आदि अवधी के अनेक तेजस्वी हस्ताक्षर जुड़ गये। यह प्रवृत्ति आज भी वैसी ही प्राणमयी चेतना से परिपूर्ण चलती चल रही है। इन कविताओं में राष्ट्रीय चेतना का अद्‌भुत-अनोखा आलोक दिखायी देता है। क्रान्तिद्रष्टा कवि वंशीधर शुक्ल की 'उठ जाग मुसाफिर भोर भई', 'सर बाँधे कफनवा सहीदों की टोली निकली', 'आ पगले गदर मचायें', 'मोरे चरखे कै टूटै न तार' आदि कविताएँ; राष्ट्रीय चेतना के अकुण्ठ नायक 'मृगेश' जी का वीररसात्मक महाकाव्य 'चहलारी-नरेश' (स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व की रचनाएँ) तथा चीनी-आक्रमण के समय अवधी में रचित 'रणचण्डी', 'सर्वमंगला' (विश्वनाथ पाठक द्वारा विरचित) आदि काव्यग्रन्थ इस अनोखे आलोक के प्रमाण हैं। इस क्रम में कविवर आद्याप्रसाद 'उन्मत्त' की अवधी-रचना 'पाती' अनुपम-आद्वितीय है। इस तरह अवध-क्षेत्र और अवधी-कविता दोनों ही शुरु से स्वातंत्र्य-चेतना और राष्ट्रीय गौरव-भावना से ओतप्रोत रहे हैं। सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम की स्मृति से बिंधा यह गीत तो रायबरेली के अवधी-कवि शिवदुलारे के साथ-साथ जन-जन के कण्ठ से गूँज रहा था :

'अवध मा राना भयौ मरदाना, अवध मा !
पहिल लड़ाई भयी बक्सर माँ, सेमरी के मैदाना,
पहिले मिले तिलोई के राजा, दूजे सुदरसन काना,
तीजे भेंट भई खत्रिन सों, नाना जी घबराना,
तुम तौ जाय मिल्यौ गोरन से, हमको हैं भगवाना,
हाथ में भाला बगल करारा, घोड़ चले मस्ताना,
कहैं दुलारे सुन मेरे प्यारे, राना किया पयाना।'

(2) **सामाजिक-आर्थिक-मानवीय चेतनापरक प्रवृत्ति :** अवधी-कविता सदैव समानोन्मुख एवं प्रगतिशील रही है। अवधी-कवियों का सामाजिक सरोकार कभी भी कमजोर अथवा अचेत नहीं रहा। उसकी सामाजिक एवं मानवीय चेतना सामन्तवाद, पूंजीवाद, जाति-वर्ण-भेद, जड़ता एवं रूढ़िवाद, व्यक्तिवादी सोच एवं नानाविध सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध सदैव तनकर खड़ी रही है। इस तरह अवधी-कविता में मानतवावादी-प्रगतिवादी चेतना को शुरू से ही अधिमानता मिलती रही है।

भारतेन्दु जी ने जिस भारतीय नवजागरण का तूर्यनाद किया था, वह निरन्तर प्रखरतर ही होता गया है। उनके अनन्य अनुयायी पं. प्रतापनारायण मिश्र और चौधरी बद्रीनारायण 'प्रेमघन' ने भी लोक, समाज और राष्ट्र के प्रति वैसी ही प्रतिबद्धता दिखायी, जैसी भारतेन्दु जी को अभीष्ट थी। द्विवेदीयुगीन डॉ. हरिपाल सिंह और ब्रजभूषण त्रिपाठी 'ब्रजेश' तथा छायावाद-युगीन 'पढ़ीस' ने उस समाजोत्कर्षिका साहित्यक मशाल को सतत् ज्योतिमान् बनाये रखा। भारतीय संस्कृति में पूर्णरूपेण रचे-बसे 'पढ़ीस' जी सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक विचारणा की दृष्टि से प्रगतिचेता समाजवादी थे। 'पढ़ीस' जी के लिए बस वहीं मनुष्य 'सुन्दर मनुष्य' है, जिसे मानवीय मूल्यों में अकम्प आस्था है। 'अवधी-सम्राट' कह जाने वाले वंशीधार शुक्ल तो सामाजिक जड़ताओं, राजनीतिक-आर्थिक परतंत्रता एवं शोषण के खिलाफ सदा अग्निज्वाल रहे। उनकी कविता समाजवाद का शंखनाद है। सामन्ती व्यवस्था, पूँजीवादी शोषण, नेताशाही के भ्रष्टाचार और अफसरशाही की लूट को उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से खुली चुनौती दी। शुक्ल जी का अनुसरण करते हुए 'समाजवाद' नामक प्रबन्ध-काव्य के रचयिता पं. ब्रजलाल भट्ट ने अपनी

कविता में सच्ची मानवतावादी चेतना का उन्मेष किया है। इसी क्रम में 'उन्मत्त', 'आजाद', 'सरल', महेश अवस्थी, 'नन्हें भइया' आदि-इत्यादि अनेकानेक अवधी-कवि सच्ची सामाजिक जागरूकता के साथ जन-जन की व्यथा-कथा अपनी मर्मस्पर्शिनी वाणी में प्रस्तुत करते आ रहे हैं। इनकी कविताओं में देश की यथातथ्य पीड़ा के स्वर स्पष्ट सुने जा सकते हैं।

(3) **ग्राम-जीवन या कि कृषक-जीवनपरक प्रवृत्ति** : भारतवर्ष गाँवों का देश है। 'भारतमाता ग्रामवासिनी' है। अवधी-कविता की आत्मा भी गाँवों में निवसती है। अतः उसके काव्य को 'किसान-काव्य' की अमिधा उचित ही मिलती है। आधुनिक काल में सभी समर्थ अवधी-कवि पूरम्पूर ग्राम-चैतस् रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनकी कविता के विभाव कोटि-कोटि मामूली किसान और मजदूर ही बने जो अपनी सारी श्रमशीलता और कर्मशीलता के बावजूद चिर दीन-दुःखी दरिद्र ही बने रहे हैं।

अवधी-कविता उत्तर-भारतीय ग्रामीणों की अगाध कारुणिक महागाथा है। कहने के लिए किसान भारतीय समाज का अति महत्वपूर्ण अंग है। किन्तु, वह महत्वपूर्ण अंग कितना दबाया-सताया-उपेक्षित है, इसकी कोई सीमा न थी और न है। सामन्ती, पूँजीवादी, अमानुषिक व्यवस्था ने उसे कभी आदमी की श्रेणी में आने ही नहीं दिया, तब से लेकर अब तक उसकी असहाय जिन्दगी दूसरों के बरजोर हाथों में गिरवीं पड़ी है। हाड़तोड़ मेहनत, पेटतोड़ खाना, फटा-पुराना पहिनना और असमाप्त अन्तदहन ही उसकी नियति है। जैसे 'पीपर जामइ जेकरे ऊपर जाइ। वोकर बाढ़-वियास ऐंचि के खाइ।', वैसे ही सामन्त और पूँजीशाह कोटि-कोटि सामान्य-जनों का समसत श्रमफल तथा जीवनरस खाते-सोखते रहते हैं। इसीलिए किसान की व्यथित अन्तरात्मा और उसके चिर अभावग्रस्त जीवन में पैठकर अवधी-कवि जो कविता प्रस्तुत करता है, वस्तुतः वह मामूली गीतगानमयी शब्दयोजना न होकर भारतीय किसान की सच्ची मर्मकथा है।

किसानों का यह कालातीत शोषण आधुनिक अवधी-कवि को बहुत सालता है। वह किसानों का सर्वतोभद्र आत्मबंधु है। इसलिए उसके यहाँ किसान-मजदूर के शोषण-उत्पीड़न के प्रति आक्रोशमयी स्वर की प्रमुखता सहज-स्वाभाविक है।

अवधी-कवि ग्राम-जीवन के प्रति सहज रागाकर्षण की अनुभूति करता है। गाँव में उत्पन्न, गाँव में पले-बढ़े, गाँव की मार्मिक संवेदना से जुड़े अधिकतर अवधी-कवियों की अन्तरात्मा में गाँव की यथातथ्य छवि गड़ी हुई हैं। गाँव का एक-एक उत्पादन, एक-एक स्थान उसे अपनी ओर खींच-खींच लेता है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि "आधुनिक अवधी-कविता मूलतः अवध के किसानों की जिन्दगी और उसकी अस्मिता की तलाश की कविता है; गाँव की भाषा में गाँव की व्यधा-कथा है। उसे उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर बीसवीं शती के उत्तरार्ध तक के अवध के गाँवों के विकास-क्रम का प्रामाणिक दस्तावेज कहना समीचीन होगा। अवधी-कवियों के संस्कार में गाँव की माटी का टाटक सोंधापन और मीठी कड़ुआहट, दोनों एक साथ देखे जा सकते हैं। गाँव में जन्म लेने के नाते इन कवियों ने ग्राम-जीवन को बहुत निकट से देखा ही नहीं, जिया भी है। इसलिए उनकी कविता कृषक-जीवन के अन्तरंग और बहिरंग को बेहद सच्चाई और सफाई के साथ प्रस्तुत कर सकी है। कैसी जिन्दगी जीते हैं गाँव के लोग, कैसा है उनका खान-पान, आचार-व्यवहार, स्वभाव-संस्कार, जीवनादर्श और रहन-सहन, उनकी मानसिक बनावट कैसी है, उनकी आशाएँ-आकांक्षाएँ क्या-क्या है, उनके धार्मिक विश्वास और रीति-रिवाज क्या हैं, कौन-कौन सी उनकी सामाजिक समस्याएँ हैं, आर्थिक दशा कैक्सी है, कैसी किसानी के बल पर भरे-पूरे परिवार का गुजर-बसर होता है, जमींदारों और महाजनों के शोषण-अत्याचार को झेलने में चुर्क गयी अपनी सारी जिन्दगी के दर्द और कष्टमय जीवन में भी आस्था-उल्लास को सँजोये हुए कैसे वे परिश्रमशील बने रहते हैं, गाँव में घुसती राजनीति, दहेज, रूढ़ियाँ, लड़ाई-झगड़ा, मुकदमेबाजी आदि - जैसे अनेकानेक दूषण

तथा गाँव-देश से जुड़ी तमामोतमाम बातें और समस्याएँ पूरे परिवेश और तफसील के साथ उतर आयी हैं अवधी-कविता के विशाल फलक पर। अवधी-कवियों ने कृषक-जीवन के यथार्थ को अपनी सच्ची हार्दिकता के साथ अंकित किया है - उज्जवल पक्ष को उकेरने में अगर उदारता दर्शायी है तो श्याम पक्ष को प्रकट करने में भी वे पश्चात्-पद नहीं रहे हैं।

निस्संदेह, अवधी का आधुनिक काव्य कृषक-जीवन का महदाख्यान है।

(4) **प्रकृति-परिवेशपरक प्रवृत्ति** : गंगा-गोमती-सई-सरयू के जल से सरसित इस अवध-क्षेत्र में गाँव के साथ नाना रूप-रंग-रत्त-गंधमयी प्रकृति सहज सम्पृक्त है। भाँति-भाँति के पेड़-पालव, फल-फूल, लता-वितान, ताल-तलैया-नदी-नाले, पशु-पक्षी, घास-फूस, फसल-हरेरी, खेत-खलिहान, हवा-पानी, सूर्य-चन्द्रमा, तारा-तरई, धरती-आकाश, गाँव को आत्मीय भाव से सदा प्रफुल्लित रखते हैं। तरह-तरह के पर्व-तीज-त्योहार, लोक-व्यवहार, संस्कृति (परम्परा) - संस्कार आदि उसे सांस्कृतिक चेतना से सम्पन्न बनाये रखते हैं। इन्हीं सारे कारणों से गरीबी-फटेहाली में भी वह उल्लसित-सप्राण बना रहता है।

हिन्दी की छायावादी कविता अपनी प्रकृतिपरकता के लिए प्रख्यात है। अवधी-कविता में भी प्रकृति के प्राणों का प्रस्पन्द कम नहीं है। पद्मावत, रामचरितमानस, कृष्णायन, सर्वमंगला, अवध-विलास आदि अवधी के मानक प्रबन्ध-काव्यों में प्रकृति-वर्णन सामान्यतः परम्परा एवं कवि-समय के अनुरूप उद्दीपन या अलंकारविधान के रूप में ही अधिक दृष्टिगत होता है, किन्तु आधुनिक अवधी-काव्य में प्रकृति अधिकतर स्वच्छन्द और आलम्बन-रूप में ही अंकित हुई है। उद्दीपन-रूप में अगर आयी भी है तो मात्र रतिभाव के उद्दीपन-रूप में ही नहीं, घर-गिरिस्ती, दीन-दुनिया, व्यक्ति-समाज सब के साथ मर्मभावना से युक्त होकर चित्रमय रूप में आयी है।

आधुनिक काल के आविर्भाव के साथ जिस प्रकार जीवन-जगत्, व्यक्ति-समाज, कला-कविता आदि के प्रति नयी चेतना का उन्मेष हुआ, उसी प्रकार प्रकृति के प्रति भी कवियों की दृष्टि एवं सोच में नये आलोक का प्रस्फुटन हुआ। अभिव्यंजना की सहज ऋजुता और भाषायी प्रयोग की ग्रामज टट्कार्ड के नाते आधुनिक अवधी-कवियों के नित-नये प्रकृति-चित्र अपनी जीवन्तता और मनोहरता ने अद्भुत-अनूठे हैं।

आधुनिक अवधी-कविता के पुरोधा कवियों -- पढ़ीस, वंशीधर शुक्ल, रमई काका, मृगेश, विश्वनाथ पाठक, आद्याप्रसाद मिश्र 'उन्मत्त' आदि के प्रकृति-वर्णन में वह ताज़गी है जो अवध की धनी अमराइयों में पपीहे और कोयल की सुमधुर बोली में होती है। प्रकृति-सौन्दर्य के चतुर-चितेरे इन कवियों की कविताओं में अवध-अंचल की प्रकृति अपूर्व प्रकर्ष के साथ प्रतिच्छवित हुई है। गाँव-जेंवार, प्रकृति-परिवेश, सब-कुछ उनका थहाया हुआ है। ग्राम-परिवेशी प्रकृति उनके शब्द-शब्द में समाहित है। प्रकृति का एक-एक उपादान उनकी कविताओं में जीवन्तता के साथ विद्यमान है। प्रकृति-वर्णन करते हुए प्रायः अद्भुत-अनूठी उत्प्रेक्षाएँ-कल्पनाएँ एवं उद्भावनाएँ की हैं। इन कवियों को भोर-भिनउखा, सन्धया-गोधूलि, सूर्योदय-चन्द्रोदय, वर्षा-बादर-बूँदी-बौछार-फुहार, खेती-पाती, धान-गेहूँ, मटर-चना, जोंधरी-बजरी, खीरा-कॉंकरि, सियार-लोमड़ी, हवा-बयारि, घास-फूस, बैल-बधिया-गाय-भैंस आदि-इत्यादि प्राकृतिक उपादान अधिक प्रिय है।

आधुनिक अवधी-कवियों ने ग्राम-प्रकृति को आलम्बन, उद्धीपन, अलंकरण, मानवीकृत आदि विविध रूपों में प्रस्तुत करके उसे विलक्षण सुन्दरता प्रदान कर दीहै। सुविख्यात नामधारी ही नहीं, अल्पख्यात एवं कम नामवर कवियों की रचनाएँ भी अनूठी सौन्दर्य-चेतना एवं भाव-सम्पदा से भरी हुई हैं।

उपर्युक्त इन चार प्रवृत्तियों के अतिरिक्त हास्य-व्यंग्यमयी ढेर-ढेर कतिवाएँ भी अवधी-काव्य में समाहित हैं। इस प्रवृत्ति किंवा पद्धति के माध्यम से राष्ट्रीय, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, पारिवारिक, मानवीय आदि नानाविध समस्याओं एवं प्रश्नों पर प्रकाश डाला गया है। इस विधा की कविताएँ मामूली

जन से लेकर विदग्ध-सहृदय तक को भावित-प्रभावित करती हैं। इन व्यंग्य-उपहास- विडम्बना-कटाक्षपरक रचनाओं में जाति-पाँति, छुआछूत, दहेज, घूसखोरी, भ्रष्टाचार, पाखण्ड, आडम्बर, पर्दाप्रथा, अनमेल विवाह, नेतागिरी, फैशनपरस्ती, मुकदमेबाजी, संस्कृति-विमुखता आदि-आदि नानाविध स्थितियों-प्रश्नों-समस्याओं को बेहद चुटीली भाषा में उजागर किया गया है। यह भी सही है कि ढेर-सारी हास्य-कविताएँ निहायत फूहड़ हैं।

अवधी-कविता के विशाल भंडार में उस लोककाव्य की मात्रा भी कम नहीं है, जो सहज परम्परा से प्राप्त चिरपरिचित लोकधुनों पर कतिपय अनुभूति-ऋद्ध और कल्पनाशील पढ़े-बेपढ़े लोककवियों द्वारा लोकानुवर्ती काव्य के रूप में रचित है। (*डॉ. रामशंकर त्रिपाठी-सम्पादक : अवध-अवधी विविध आयाम, पृ. 405-429*)

इस प्रकार हम देखते हैं कि अवधी-भाषा अपनी शैशवावस्था से ही नैतिक और श्रेष्ठ आध्यात्मिक, मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति करती रही है और मूल्यनिष्ठा उसकी प्रकृति का अंग बनकर बहुविध-रूपों में अभिव्यक्त होती आ रही है।

(ख)

आधुनिक युग में सम्पूर्ण देश के साथ अवध व अवधी के क्षेत्र के सांस्कृतिक जीवन में भी परिवर्तन आया। जनता ने भी अपने अस्तित्व को पहचाना। अपनी माटी की आवश्यकता एवं सोंधी गन्ध हवा के झोंके के साथ जन-जन के मन को बाँधने लगी। आधुनिक अवधी की काव्य-परम्परा भारतेन्दु जी से शुरु होती है। अस्तु-

''आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने गाँव की अवधी-भाषा में काव्य-रचना पर जोर दिया था। उनसे प्रेरित होकर 'प्रेमघन' का भी इधर झुकाव हुआ। बाबा बनादास ने 'उभय-प्रबोधक-रामायण' लिखकर अवधी को अच्छा प्रबन्धकाव्य दिया। उनके साथ ही कानपुर के प्रतापनारायण मिश्र, लखनऊ के बलदभ्रद मिश्र, प्रयाग के 'परसन' और 'नवम ब्रह्मपुराण' के रचयिता लुरखुर ने अवधी में अनेक रचनाएँ लिखीं। अयोध्या के भक्तकवि बाबा रघुनाथ दास रामसनेही ने 'विश्रामसागर' और जानकी प्रसाद 'रसिकबिहारी' ने 'राम-रसायन' लिखा।''

फैजाबाद के आचार्य विश्वनाथ पाठक, द्विज छोटकुन, द्विज भागीरथी, द्विज जगन्नाथ, श्यामसुन्दर 'गान्धीदास', शिवप्रसाद सिंह, दयाराम तिवारी 'पुष्प', रामराज उपाध्याय, पं. भवीनीभीख त्रिपाठी 'दिव्य', रामगोपाल पाण्डेय 'शारद', रामरक्षा त्रिपाठी 'निर्भीक', केशवचन्द्र वर्मा, जियाराम शुक्ल 'विकल साकती', अम्बिका प्रसाद त्रिपाठी 'मतवाला', ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी 'मधु', हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल', ओमप्रकाश हेमकार, रामसुमेर सिंह 'निशंक', रामप्रताप पाण्डेय 'पंकज', रामसहाय मिश्र 'कोमलशास्त्री', श्यामाप्रसाद 'प्रदीप', प्रकाश द्विवेदी, हरिप्रसाद मिश्र, दयानन्द सिंह 'मृदुल', गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द', विद्याबिन्दु सिंह, राधा पाण्डेय आदि; **सुलतानपुर के** पं. रामनरेश त्रिपाठी, 'कविकिंकर' रामगुलाम, राजर्षि रणंजय सिंह, पं. ऋषिराम मिश्र, ओंकारनारायण मिश्र 'प्रगव', जगदीश 'पीयूष', असविन्द द्विवेदी, रामअकबाल त्रिपाठी, 'अनजान', श्री आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप', त्रिलोचन शास्त्री, विजयपाल पाण्डेय आदि; **प्रतापगढ़ के** पं. आद्याप्रसाद मिश्र 'उन्मत्त', जुमई खाँ, 'आजाद', राधेश्याम पाण्डेय 'दीन', 'निर्झर प्रतापगढ़ी', विशालमूर्ति मिश्र 'विशाल', छविश्याम जी, ओंकारनाथ उपाध्याय, रघुवीर सिंह 'पवन', चन्द्रेशबहादुर सिंह 'पागल', 'अनीस देहाती', फैय्याज 'परवाना', राजमूर्ति सिंह 'सौरभ', सुनील प्रभाकर आदि; **गोण्डा के** विश्वनाथ सिंह 'विकल गोण्डवी', बेकल उत्साही, सतीश आर्य, मोहम्मद इस्माइल 'आजाद' आदि; **बहराइच के** रक्षाराम त्रिपाठी 'रक्ष;, राजितराम मिश्र, माधवराम अवस्थी, मेवाराम पाण्डेय 'भवेश', पारसनाथ

मिश्र 'भ्रमर', रामसुमिरन वाजपेयी, हरिभक्त सिंह 'पँवार', सत्यप्रकाश सिंह 'प्रकाश' आदि; **बाराबंकी के** गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश', पं. महेशदत्त शुक्ल, पं. श्यामनाथ 'द्विजश्याम', शिवसिंह 'सरोज', त्रिभुवननाथ शर्मा 'मधु', पुरुषोत्तमशरण 'पुरुषेश', सुन्दरलाल 'अमरेश', ब्रजलाल भट्ट 'ब्रजेश', जगदीश सिंह 'नीरद', रामबहादुर मिर 'अवधेन्दु', राघवबिहारी सिंह आदि; **रायबरेली के** लोकगीतकार दुलारे, पं. रामनाथ 'ज्योतिषी', ठाकुर चन्द्रभान सिंह, कालकाप्रसाद 'लामा', शिवरत्न शुकल 'सिरस', अवधबिहारी त्रिपाठी, त्रिभुवनप्रसाद त्रिपाठी 'शानत', रामस्वरूप विशारद, चन्द्रिकाप्रसाद वाजपेयी 'कौतुक', रमाकान्त श्रीवास्तव, डॉ. देवकीनन्दन श्रीवास्तव, गिरिजाशंकर मिश्र 'गिरिजेश', महेशप्रतापनारायण अवस्थी, डॉ. चक्रपाणि पाण्डेय, सूर्यवतन सिंह राठौर, शारदाप्रसाद शुक्ल 'शारदेश', काशीप्रसाद द्विवेदी, गुरुचरन लाल 'गुदड़ी के लाल', डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र, राजकिशोर मिश्र, रमेश रंजन आदि; **लखनऊ के** द्वारकाप्रसाद 'यदुचन्द', शारदाप्रसाद वर्मा भुसुण्डि', रामचन्द्र मिश्र 'विनीत', रघुनाथ सिंह चौहान, श्री चन्द्रशेखर सिंह 'चन्द्र', गणेशप्रसाद सक्सेना 'भिक्षुक', रामकिशोर 'घोंघा', डॉ. शितिकंठ, ब्रजेन्द्र खरे, रामेश्वर द्विवेदी 'सनकी', रामेश्वर द्विवेदी 'प्रलयंकर', योगेन्द्रप्रताप सिंह, डण्डा लखनवी आदि, **उन्नाव के** पं. प्रताप नारायण मिश्र, पं. चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका', द्वारकाप्रसाद मिश्र, सुमित्राकुमारी सिन्हा, वागीश शास्त्री, डॉ. देवीशंकर द्विवेदी, डॉ. कृपाशंकर मिश्र 'निर्द्वन्द्व', काका बैसवारी, धर्मदत्त द्विवेदी आदि; **सीतापुर के** पं. बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस', ब्रजभूषण त्रिपाठी 'ब्रजेश', उमाप्रसाद वाजपेयी 'सुजान', पं. उमादत्त सारस्वत 'दत्त', डॉ. गणेशदत्त सारस्वत, रामनारायण त्रिपाठी 'मित्र', लक्ष्मणप्रसाद 'मिश्र', रामदत्त तिवारी 'कुलीन', डॉ. विन्ध्येश्वरीप्रसाद श्रीवास्तव, पं. चतुर्भुज शर्मा, पं. श्यामसुन्दर शर्मा 'कलानिधि', डॉ. पुत्तूलाल शुक्ल 'चन्द्राकर', युक्तिभद्र दीक्षित 'पुतान', श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप', गजराज सिंह यादव, लवकुश दीक्षित, बाँकेलाल मिश्र 'लाल', महेन्द्रकुमार शास्त्री 'सरल', कमलेश मौर्य 'मृदु' आदि; और **लखीमपुर खीरी के** पं. वंशीधर 'शुक्ल', जगदीश अवस्थी, सत्यधर शुक्ल आदि सर्जक-रचनाकारों ने अवधी-काव्य-परम्परा को समृद्ध करने में प्रशंसनीय योगदान किया है। इनमें भी पं. प्रतापनारायण मिश्र, 'रमईकाका', पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र, पं. बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस', श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप', पं. वंशीधर 'शुक्ल', गुरुप्रसाद सिंह मृगेश, पं. रामनरेश त्रिपाठी, त्रिलोचन शास्त्री, 'विकल गोण्डवी', आद्याप्रसाद मिश्र 'उन्मत्त', जुमई खाँ 'आजाद', बेकल उत्साही, महेशप्रतापनारायण अवस्थी, आचार्य विश्वनाथ पाठक, केशवचन्द्र वर्मा, भ्रमर आदि ऐसे कवि है जो अवधी के प्रथम पांक्तेय कवियों में अग्रणी एवं अविस्मरणीय हैं। उक्त सभी रचनाकारों का परिचय दे पाना यहाँ संभव नहीं है। कुछ अति महत्वपूर्ण अवधी-साधकों की काव्य साधना के प्रति संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है :

पं. प्रतापनारायण मिश्र : हिन्दी के सुप्रसिद्ध निबन्धकार एवं कवि पं. प्रतापनारायण मिश्र का जन्म बैसवाड़ा-क्षेत्र के उन्नाव जनपद के बैजेगाँव में हुआ था। मिश्र जी आधुनिकल काल के अवधी के प्रथम सशक्त कवि हैं। यद्यपि उनके समकालीन भारतेन्दु जी तथा पं. बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' ने भी अवधी में देश-प्रेम-सम्बन्धी दो-एक रचनाएँ प्रस्तुत की हैं, किन्तु अवधी-भाषी न होने के कारण उनकी रचनाओं में अवधी का सहज स्वरूप दृष्टिगत नहीं होता तथा भोजपुरी का प्रभाव झलकता है। मिश्र जी की अवधी की रचनाएँ उक्त कवियों की अपेक्षा मात्रा में ही अधिक नहीं है वरन् अवधी की छन्दयोजना एवं सांस्कृतिक परिवेश से भी युक्त हैं। मिश्र जी की अवधी की रचनाएँ उनके काव्य-संग्रह 'प्रतापलहरी' में संगृहीत हैं। मिश्र जी ने अपनी अवधी की रचनाओं में समसामयिक विषयों का समावेश करके उसे आधुनिकता प्रदान की है। अवधी में हास्य-व्यंग्य तथा सामयिक विषयों के चित्रण का शुभारम्भ करने के कारण मिश्र जी आधुनिक अवधी-कविता के युग-प्रवर्तक माने जा सकते हैं।

पं. बलभद्रपसाद दीक्षित 'पढ़ीस' : पढ़ीस' जी आधुनिक अवधी के प्रथम तेजोमय कवि हैं।

'पढ़ीस' जी का जन्म सीतापुर जिले के अम्बरपुर गाँव में सन् 1898 में एक किसान-परिवार में हुआ था। भारतीय ग्रामीण जीवन की मनोरम झाँकी प्रस्तुत करने में समर्थ 'पढ़ीस' जी व्यंग्य और हास्य के सिद्ध कवि हैं। आधुनिक अवधी के मूर्धन्य कवि पढ़ीस जी के साहित्य-सृजन का फलक बड़ा है। उन्होंने खड़ी बोली, ब्रज तथा अनेक विभाषाओं में काव्य की सृष्टि की है। 'चकल्लस' उनकी एकमात्र उपलब्ध अवधी-काव्यकृति है। इसमें 37 अवधी-रचनाएँ संकलित हैं। इसकी भूमिका महाप्राण निराला ने लिखी थी और यह कुँवर दिवाकरप्रसाद को समर्पित है।'

सन् 1933 में प्रकाशित 'चकल्लस' आधुनिक अवधी की अनूठी कृति है। 'चकल्लस' की 'द्वासरि दुनिया', 'सूखि डार', 'डोंगिया', 'महतारी', 'स्वनहुली स्यामा', 'बिटउनी' तथा 'परछाहीं' रचनाओं में छायावाद-युग की स्पष्ट छाप परिलक्षित होती है। 'निराला' जी के अनुसार "देहाती भाषा में होने पर भी जहाँ तक काव्य का संबंध है, 'चकल्लस' अनेक गुणों से भूषित है।"

'पढ़ीस' जी की कविताओं में ग्रामीण चित्रण, पाखण्डवादिता, दार्शनिकता, पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव, हिन्दू-मुस्लिम एकीकरण-समस्या, स्वदेश-प्रेम, अंग्रेजी शासन की बर्बरता, व्यवस्था-विद्रोह, हास्य-व्यंग्य, प्रकृति-चित्रण आदि-इत्यादि विषयों का सम्यक् समावेश है। उदाहरण के लिए दो-एक रचनाएँ भावनीय हैं :

(1) पाश्चात्य प्रभाव में रँगे नवयुवक का अपनी ग्राम्य संस्कृति विस्मरण का एक चित्र :

'बजरा का बिरवा तुम भूल्यउ,
का आइ कर्‌याला तुम पूँछ्यउ,
छगरी का भेड़ी कइसि कह्यउ,
जब याक बिलाइति पास किह्यउ,
अकतही अँगरखा खोलि धर्‌यउ,
कुरता अउ धोती छाँड़ि दिह्यउ,
इहु पहिरि कलर-कटु कोटु चल्यउ,
जब याक बिलाइति पास किह्यउ।
हम चितई तुमका मुलुर-मुलुर,
मलकिनी निहारइँ भुकुर-भुकुर,
तुम मुँहि माँ सिरकुटु दाबि चल्यउ,
जब याक बिलाइति पास किह्यउ।
तुम कथा म सत्तिनरायन की,
बूटइ पहिंदे पूजा कीन्ह्यउ,
सोडा का चन्नामिर्तु किह्यउ,
जब याक बिलाइति पास किह्यउ।'

(2) प्रकृति की सजीव सत्ता और उसके मानवीकरण का रूपायन :

'बड़े ताल की दाँती के बिरवा के जिउका जिउ जागा।
देखिसि पानी की छाती पर वहेकि परछाँही पयिरयि।
अपनयि रूपु निहारि बिरउनू अपने मन ते कहयि लाग,
मयि तउ मयि, यिहु अउरु कउनु, जो म्वारयि अस महिका घूरयि?
पाला पर सिकुरयि पानी मा, सउ-सवउ दाँउँ नहान करयिं,

सुर्जन की आगी मा देंही फूँकि-फूँकि जपु ज्ञानु करयिं।
बिरऊ जस जस जोग करयिं, तस-तस सुँदरापा बाढ़ि रहा,
रस के लोभिन का उनहे तर र्याला-म्याला लागि रहा।
आखिर एकु अयिस दिन आवा दुख-सुख का बन्धनु टूटि परा,
बिरवा आपुयि रुपु ताल की छाती पर भहरायि गिरा।
तालु बापु जी, अपने लरिका का क्वाँरा मा कसि लीन्हिनि,
खोलि करेजे की क्वठरी तिहिमा तिहका पउढ़ायि दिहिनि।'

डॉ. रामविलास शर्मा का मानना है कि "जैसे धरती से फल फूल निकलते हैं, उसी प्रकार दीक्षित जी की कविताएँ जीवन के उर्बर अनुभव-क्षेत्र से निकलती हैं। हम सभी कविताओं में अवधी के किसान का हृदय-राग सुनते हैं। कवि कभी नगर-निवासियों की दावृत्तियों पर हँसता, कभी गाँव के युवक-युवतियों के सरल जीवन के गीत गाता और कभी दैविक-भौतिक विपत्तियों से आहत और पीड़ित होता है। लेकिन इनमें प्रधान स्वर हँसी का है, एक वीर हँसी का, जिसने, दुःख और विपत्तियों में मुस्कान सीखा है।"

वंशीधर शुक्ल : प्रतिभाकान्त जनकवि और आधुनिक अवधी-काव्य के प्रमुख हस्ताक्षर वंशीधर शुक्ल का जन्म सन् 1904 में वसंत पंचमी की पावन-तिथि को लखीमपुर-खीरी के मन्यौरा ग्राम में हुआ था। उक्त तिथि को जन्म लेने के कारण उन्हें 'अवधी-काव्य का निराला' भी कहा जाता है। 'अवधी-किसान के मूर्तिमान विग्रह' शुक्ल जी प्रतिभासम्पन्न कवि थे। उन्होंने सर्वप्रथम 50 छन्दों में 'आल्हा सुमिरनी' कृति का सृजन किया। इसके पश्चात् उन्होंने 'कृषक-मिलाप', 'बेटी-बेचन', 'युगल-चण्डालिका', 'मेला घुँमनी', 'कुकडू-कूँ' 'राष्ट्रीयगाान' आदि कृतियों की रचना की। नौकरी करते समय उन्होंने 'अब ग्राम सुधार करो पुतवा' और 'अब दुनिया बदल गयी' नामक रचनाएँ प्रस्तुत की। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् उनके द्वारा सृजित प्रमुख काव्यकृतियाँ हैं - (1) पंत-पुराण (2) नेहरु सावधान, (3) कमला आख्यान (4) गुप्ता-भाषण (5) कांग्रेस की कुकडूँ कूँ (6) कांग्रेस सरकार स्वाहा (7) नसबन्दी बन्द करो (8) राममड़ैया आदि।

वंशीधर शुक्ल को 'अवधी-सम्राट' और 'राष्ट्रकवि'-जैसी उपाधियों से विभूषित किया गया, किन्तु वास्तव में वे कोटि-कोटि किसानों-मजदूरों की त्रासद स्थिति को बदल डालने के लिए प्रतिबद्ध सच्चे 'जनकवि' थे। आधुनिक अवधी-साहित्य की श्रीवृद्धि में शुक्ल जी का अपूर्व योगदान है।

उनकी कविताओं में ग्राम-प्रकृति और ग्राम-सौन्दर्य का चित्रण है (जिसमें गाँवों की स्थिति, वहाँ के दैला-दहेज, किसानों की विपन्नता-निर्धनता, राजकर्मचारियों के अनाचार-अत्याचार, सामन्तवादी व्यवस्था का यथार्थ चित्रण, लोकसंस्कृति एवं उसके पर्वो-उत्सवों का वर्णन है) सामाजिक जड़ता, राजनैतिक परतंत्रता और शोषक-शोषण के विरूद्ध विद्रोह है, और समाजवाद का शंखनाद है। एक रेखांकनीय बात यह है कि उन्होंने राजनीति, स्वतंत्रता-आन्दोलन, मानवीय राग एवं संबंध, विज्ञान, क्रान्ति, श्रृंगार आदि-आदि चाहे जिस बिन्दु को अपनी कविता का विषय बनाया हो, लेकिन उनकी कविता घूमती 'गाँव' के ही इर्द-गिर्द है। 'राममड़ैया', 'किसान की अरजी', 'राजा की कोठी', 'किसान की दुनिया', 'छुआँ कस-कस होई निरवाह'-जैसी कितनी कविताएँ, सूक्ति, प्रहेलिका आदि शैलियों में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की है। उनकी भाषा में अवध-क्षेत्र की संस्कृति का उज्ज्वल रूप दिखायी देता है। उनकी कविताओं के कुछ-एक उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

(1) *'नदी किनारे सड़क न गल्ली, द्वारे भरी तलैया।*
हुवैं बनी है राम सहारे अपनी राम-मड़ैया।

जहाँ बयारि लगावै बढ़नी जुगुनू दिया दिखावैं
सुअर, सियार, चील्ह, गिलहरिया कूरा सैंति उठावैं।
चिरई-कौवा का-का कहि-कहि जागि जगाय सोवावैं
उड़-उड़, अथै-अथै कै सविता दिनु औ राति बतावैं।
जहाँ बँदरवा डाका डारैं चोरी करै बिलैया।
हुवैं बनी है राम-सहारे, अपनी राम-मड़ैया।।
करिया अच्छर भैंसि बरागरि उजड़ मूढ़ भगवान
मचा अँधेरु स्वार्थ का गाना बैरिन का सम्मान।
जहाँ नहीं व्यापी अँगरेजी जमि न सकी सुलतानी
नई सभ्यता डरि-डरि भागी घर-घर रीति पुरानी।
जहाँ किसान जगत के पालक बसैं बया के भैया।
हुवैं बसी है बिना बसाये अपनी राम-मड़ैया।।

(2) *'पटवारी खुरचाल चलवाइँ बेदखली इस्तीफा*
रोजुइ कुड़की अउ जुरमाना छिन-छिन नवा लतीफा।
थाना चौकी, पुलिस कचेहरी इसपिट्टर अउ पासी,
सब अपनी ससुरारि बनाये अफसर अउ चपरासी।
चाटि जाईं सब जिनिस खानगी लोनु तेलु गुड़धनियाँ,
लाली पगड़ी देखे लरजइ यह किसान की दुनियाँ।
सबइ किस्तिहा महाजनन की घर-घर बोलइ तूती,
गाँसि-घेरि के करजा बाँटइँ फिर फटकारइँ जूती।
रोजही अउ नउनसी उगाही, पुरुनोट अउ रुक्का,
इस्तक भेटि बेगारि उचापति रोजुइ धुक्कम-धुक्का।

(3) *'सवितन के तर-तर घूमैं मेघन की पल्टन कारी।*
चन्दा तारन पर झपटैं चादरु चटकाय कटारी।।
रातिउ-दिन होइ लड़ाई जीतै सविता कहुँ बादर।
बादर की तेग बिजुरिया सवितन का धनुहाँ धूसर।
यह जुद्ध देखि जग फूलै रौवैं झरिहान सियरऊ।
लोखरी लोगन का कोसैं बिरवन तें लड़ैं बदरऊ।।
दिन-राति लड़ाई देखति मक्का के दरहा जामा।
धानन के मौछैं निकरी खुस ह्वैगे मूसे मामा।।
ककरिन के फटे करेजा, खीरा खटकन पियराने।
जोंधरी की खीसैं निकरीं, सब फूल, फले गरदाने।।
लरिका-लरिकी खुस विचरैं चबि-चबि कै हरियर गादा।
गाई-भैंसिन मा ब्यालै ब्यालै वे बड़के दादा।।'

(4) *'बड़े सबेरे से हरु नाधइँ, जोतइँ, बवइँ, मयावइँ,*
फिरि खारा खुरुपा हँसिया लइ चारा घासइ धावइँ।
दुपहरिया मां चारि पनेथी बड़की लोटिया पानी,
कबउ चवेना, मट्ठा सरबतु, अइसेनि गइ जिन्दगानी।

पेड़ा-गट्टा मेले-ठेले बेड़ई बरा फुलउरी,
तिथु परबी अउ भये बियाहे पूरी पुवा कचउरी।
चना मिठाई बहुरी भुरकी तिलचउरी गुरुधनियाँ,
सबइ ऋतुन का यहइ कलेवा यह किसान की दुनिया।'

चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' : 'धरती के कवि' 'रमई काका' का जन्म उन्नाव जनपद के ग्राम रावतपुर में 2 फरवरी, सन् 1915 को हुआ था। 'आकाशवाणी' लखनऊ में नौकरी करते समय 'बहिरे बाबा' शीर्षक प्रहसन-कार्यक्रम से चतुर्दिक उनकी ख्याति फैली। अपने जीवन में पर्याप्त यश अर्जित करने वाले 'रमई काका' अवधी-काव्य के विशिष्ट हस्ताक्षर है। 'बौछार' और 'भिनसार' रमई काका की सुप्रसिद्ध अवधी-रचनाएँ हैं। लोकजीवन की मधुर मिठास से युक्त एवं गहरे संस्कार से जुड़ी हुई कविताओं के सर्जक 'रमई काका' अवधी के अत्यन्त लोकप्रिय कवियों में गिने जाते हैं।

'रमई काका' आधुनिक युग के अवधी-काव्य के सर्वोत्कृष्ट कवि हैं। वैसवाड़ी अवधी का सच्चा स्वरूप प्रस्तुत कर गाँव को कविता के निकट न लाकर कविता को गाँव के निकट लाने वाले सफल हस्ताक्षर का नाम है रमई काका। उनकी चुटकियाँ मर्म को छूने वाली हैं, उनके भाव वैविध्यपूर्ण हैं और उनका शिल्प अनूठा है। धरती के कवि काका जनकवि हैं, लोककवि हैं

'आधुनिक अवधी की कविता-खेती के अनूठे किसान 'रमई काका' की अन्य महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं ' 'नेता जी', 'फुहार', 'गुलछर्रा', 'हर पाती तरवारि', 'हास्य के छींटे' और 'माटी के बोल'। काका की तीन नाट्य-कृतियाँ भी प्रकाशित हैं - 'रतौंधी', 'बहिरे बोधन बाबा' और 'मि. जुगुनू'।

डॉ. अरुण त्रिवेदी के अनुसार "अवधी के आधुनिक कवियों को इस बात का श्रेय मिला है कि उन्होंने कविता में ग्राम-दृष्टि की स्थापना की है। इस दृष्टि ने हमारे साहित्य का बहुत उपकार किया है, क्योंकि इसी कारण आधुनिक ग्रामोन्मुखी साहित्य को वास्तविक दृष्टि, भाषा और परिवेश मिला है।

गाँव के प्रति काका के मोह को समझे बिना, उनकी काव्यदृष्टि को नहीं समझा जा सकता। रमई काका का काव्य अवध के गाँव से बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है। उनके काव्य के केन्द्र में गाँव है और उनके गाँव के केन्द्र में किसान है। यही कारण है कि ग्राम-संस्कृति और प्रकृति को काका काव्य के कथ्य-सन्दर्भो में अधिकांशतः संयोजित करते हैं। वस्तुतः रमई काका की काव्यगंगा का गोमुख इसी ग्राम-संस्कृति में है।"

कृषक-जीवन एवं ग्राम-संस्कृति का चित्रण रमई काका के प्रमुख काव्य-विषय हैं। 'गाँव की धरती' से काका को असीम मोह एवं लगाव है। उसे लेकर उन्होंने अनेक कविताओं की रचना की। 'गाँव है हमका बहुत पियार', 'सुखी जब होइहैं गाँव हमार', 'धरती हमारि', 'धरती तुमका टेरि रही है', 'धरती माता तुमका प्रनाम', 'दादा का खेतु' आदि कविताएँ ग्राम-जीवन एवं ग्राम-संस्कृति की अद्भुत कविताएँ हैं।

"उनकी गम्भीर रचनाओं में एक विद्रोही किसान का उदात्त स्वर है, जो समाज में अपने महत्वपूर्ण स्थान को पहचान रहा है और अधिकार पाने के लिए कटिबद्ध हो गया है। 'धरती हमारि' इस कोटि की श्रेष्ठ रचना है।" (डॉ. रामविलास शर्मा: "बौछार' की भूमिका से)

'अइसी कविता ते कौनु लाभु' तथा 'तब मिली कविता हेरानी' इस बात का प्रमाण है। वास्तव में रमई काका 'सम्वेदनमयी कविता के पक्षधर है।' उनकी कविता में ग्राम-संस्कृति के मनोहारी चित्र हैं, विद्रोही किसान का उदात्त स्वर है, पूँजीवादी और सामन्ती व्यवस्था के प्रति क्रोध है। कुल मिलाकर "हिन्दी-कविता के क्षेत्र में जिसे प्रगतिशील काव्य कहा गया है, रमई काका का काव्य उसके उदाहरणों से भरा पड़ा है।" इन विशेषताओं के साथ ही उनमें हास्य एवं व्यंग्य का पुट है और ग्राम-प्रकृति का विस्तार है।

प्राकृतिक दृश्यों से काका को विशेष प्रेम है। वे प्रकृति का दृश्यांकन बिम्बों और मानवीकरण के ाध्यम से करते है। वैसे तो काका का प्रकृति संबंधी कविताओं में वन-बाग, खेती-बारी, सुबह-शाम, ूल-पत्ती, वर्षा-बादल सबके चित्र उपस्थिति हैं किन्तु वर्षा ने कवि-मन को कुछ ज्यादा ही हुआ है। स दृष्टि से 'झीसी, फाफा, फूँदी' कविता तो अद्वितीय है। उनकी प्रकृति-संबंधी कविताओं में 'भिनसार', ाउधूरि', 'विधाता कै रचना', 'हम नील गगम के कारे घन', 'धरती तुमका टेरि रही है', 'सँझावती', 'अब ्री कब धौं साध मोरि', 'नैनीताल' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

रमई काका हास्य-व्यंग्य के कवि-रूप में अधिक प्रख्यात रहे हैं। 'फुहार', 'गुलछर्रा' तथा 'हास्य के ीटे'- उनके हास्य-व्यंग्य रचनाओं के ही संग्रह हैं हास्य-व्यंग्य प्रधान जिन कविताओं ने काका को साहित्य शेखर पर अधिष्ठित किया और उन्हें लोकप्रिय बनाया, उनमें 'बड़प्पन', 'कवि के हाल', 'अंधकार के ाज', 'नाजुक बरखा', 'सागर कै सूमता', 'नैनीताल', 'धोखा', 'पेट कै पीर', 'पेटकटा भोजु', 'मकान कै ोज', 'गर्मी का नल', 'सनीचर बना दिया', 'म्वाछैं जरि गईं याक लँग कै', 'रुपया कोई एम.एल.ए. :', 'चपपल खीसैं काढ़ि दिहिस', 'व्यंग्य-बिन्दु', 'दो जीमें', 'कचेहरी', 'बुढ़ऊ का बियाहु', 'अनोखा पर्दा', अनमोल', 'क्रिकेट का चौका' आदि कविताएँ प्रमुख और गणनीय हैं।

'काका' की रचनाओं से एकाध उदाहरण देखें :

(1) *अब तड़के का कसि कै नहाबु, हैं भूलि गयी भगतिनि चाची।*
लोटिया भरि पानी डारैं तौ, घर मां घूमैं नाची-नाची।।
ई जाड़े माँ हारी मानेनि, पानी ते पण्डित सिव किसोर।
तन पर थ्वारै पानी चुपरैं, मुलु मंत्र पढ़त हैं जोर-जोर।
बप्पा हम आजु नहइबे ना, लरिकउना माँगत माफी है।
दुइ कलसा पानी का करिबे, अब तौ चूल्लू भरि काफी है।
बहुरिया सासु का भय कइकै, बसि सी-सी-सी सिसियाय दिहिस।
कहुँ आड़े म धोती बदलि लिहिसि, पानी धरती पर नाय दिहिसि।'

(2) *'हर भीति पै किरन कै अब छाप लागि गै है।*
सुभ काज माँ ज्यौं लेपन कै थाप लागि गै है।
टुटही रहे मड़इया मउका लगाय लीन्हेसि।
नीचे उतरि किरनियाँ चउका लगाय दीन्हेसि।।
खटिया तरे लखत हैं लरिका अजब तमासा।
किरनै चुवाय दीन्हेनि हैं धूप का बतासा।।
पूरब कै लाल गइया नभ मा पन्हाय गै है।
किरन कै धार दुहि कै धरती नहाय गै है।'

(3) *'धोती और लँहगा जुगरन के, जो बचे-खुचे चिथरा-गुदरा।*
उनहिन के देसना फाटि-पोढ़ि दुइ-तीन बने कथरी-कथरा।
वाढ़ै का यहै, बिछावै का, जाड़े की यहै रजाई है।
बसु एकु अँगरखा है जेहिमा बहु थेगरी गयी लगाई है।
भद्‌दरि जाड़े की राती हम काटित है आगी बारि-बारि।
बसि इहै गिरस्ती है हमारि।'

(4) *सुनत मन बिरहा क्यार बिरोग, खत कै द्र्याल चूर होय जायँ।*
अगिनि असि आल्हा कै ललकारि, कायरो सुनै, सूर होय जायँ।

बसे घर-घर मा 'तुलसीदास', सिखावैं धरम-करम आचार।
घुसे हरिजन के घरन कबीर, चिकारन के सुर पलटूदास।
कन्हैया नैनूं ढूँढ़त फिरैं, सूर के हिरदय हरस-हुलास।
घाघ हैं ख्यातन के रखवार, गाँव है हमका बहुत पियार।।
कर्मठी ये लोहे के हाथ, तड़क्के छक-छक चलैं गँड़ास।
तपस्यै मयिहाँ बीती जात, हियाँ कै यक-यक साँस उसाँस।
अपनहे हाथ अपन तरवार, गाँ है हमका बहुत पियार।।'

पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र : हिन्दी-कृष्ण-काव्य-परम्परा के कवियों में पं. द्वारका प्रसाद मिश्र का स्थान प्रमुख है। मिश्र जी का जन्म 5 अगस्त, सन् 1901 को ग्राम पड़री, जनपद उन्नाव में हुआ था और निधन 31 मई, 1988 को। देश-भक्ति की भावना से भरपूर मिश्र जी राष्ट्रीय स्वतंत्रता-आन्दोलन में कई बार जेल गये। कारागार में ही सन् 1942 में उन्होंने अवधी-भाषा में कृष्ण के जीवन-चरित पर आधारित 'कृष्णायन' महाकाव्य की रचना की। इस कृति का प्रथम बार प्रकाशन 1947 में हुआ था।

'कृष्णायन' मिश्र जी की एकमात्र कृति है, जो उनके साहित्यिक अस्तित्व की आधार-शिला है। इस कृति का कथानक प्रमुखतः महाभारत के आख्यान पर आधारित है। युगानुरूप प्रासंगिकता, गम्भीर जीवन दृष्टि, उदात्त कल्पना-कौशल तथा विशिष्ट साहित्यिक वैभव की दृष्टि से 'कृष्णायन' का हिन्दी के प्रबन्ध-काव्यों में विशिष्ट स्थान है।

गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश' : 'मृगेश आधुनिक अवधी के पारिजात हैं।' 12 जनवरी, सन् 1910 ई. को जन्मे 'मृगेश' जी का जन्मस्थान बाराबंकी जनपद का रामनगर ग्राम है, जो बुढ़वल के निकट है। 'लोकचेता स्व. गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश' जनपद-साहित्य-कानन के सही अर्थों में मृगेश थे।' अवधी के अतिरिक्त 'मृगेश' जी ने ब्रजभाषा और खड़ीबोली में भी श्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। किन्तु उनके साहित्य का उत्कृष्ट अंश अवधी में है और वे मुख्यतया अवधी के ही कवि हैं, जिन्हें अवधी का महाकवि कहना अत्युक्ति न होगी।

'मृगेश' जी ने कुल मिलाकर छोटी-बड़ी लगभग 15 पुस्तकों की रचनाएँ की। उनकी बहुसंख्यक रचनाएँ 'गाँव के गीत' और 'चयन' शीर्षक कृतियों में संग्रहीत हैं। 'अवधी के भाल' 'मृगेश' की कृति 'बरवै व्यंजना में 101 बरवै छन्द हैं। उन्होंने अवधी में दो प्रबन्धकाव्यों का भी सृजन किया है, जिनके नाम हैं - 'चहलारी नरेश' और 'पारिजात'। खड़ी बोली-रचनाओं में उनकी 'दया का दण्ड', 'मृगांक', 'मृगेश का महाभारत', 'सुगीत', 'माधवमंगल' कृतियाँ प्रमुख हैं। 'मृगेश' ने अवधी के आधुनिक स्वरूप को यथेष्ट निखारा-सँवारा और उसके सामर्थ्य की प्रभूत संवर्द्धना की।

''मृगेश का काव्यफलक व्यापक है। जमींदारी युग के किसान की व्यथा-कथा, वर्षा की विध्वंशकारी बाढ़-लीला, गरीब ग्रामीणों की दवा-दारु की समस्या, बेटियों की शादी-ब्याह-गौन की चिन्ता, अपढ़ों-पिछड़ों का अंधविश्वास, प्रकृति-व्यापारों की सहज नित्यता, ईश-विधानों की प्रबलता, अध्यात्मक-चिंतन, युगीन कवियों की कविताई और महन्ती, बदलती-बदली संस्कृति की दशा, व्यावहारिक निर्वाह की शर्तें, काव्य-सृजन-शैली में बदलाव, मानवतावाद, विश्वमैत्री, सोहर-मंगल, पेड़-पौधे, नदी-उपवन, गाँव-देश, सबका यथार्थ चित्रण, मार्मिक निरूपण-अंकन कवि को इष्ट रहा। कुरीतियों, विसंगतियों, झूठ-कदाचारों तथा शोषण-उत्पीडन से, उसका संवेदनशील कवि आर्द्र और मर्माहत हो उठता है।'' (*अवधी कविता के हीरक हस्ताक्षर, पृ. 260*)

'मृगेश' जी की रचनाओं के एक-दो उदाहरण इस प्रकार हैं :

(1) *'लरिका मरैं अन्न बिना घर माँ, हमहूँ हियाँ घास बेगारि माँ छोली।*
माँदी परी घरवाली कुवार से, लाई कहाँ से दवाई की गोली।।
गौनु बिटेवा का देवै न तौ, बोलिहैं सब टोला-परोस के बोली।
सोच यहै दिन-राति रहै, अब नीकि न लागै दिवारी औ होली।।'

(2) *'सेंतिन माँ पकरि करवावैं सब देंइ न छेदाम चहै जेती करी चाकरी।*
सहना सिपाही रोजु ठाढ़ि गरियाबा करैं मन माँ मसूसा मारि सबिहौं सहा करौ।।
नंगे औ उधारि जाड़े पाले माँ दुवारे परे भूखन के मारे भइया नखत गना करी।
अत्यो पर परत पिटाव रोजु ड्योढ़ी पर हाँ करी न ना करी बताओ फिरि का करी।।'

(3) *'अब की प्रधान भय्या ! कविसम्मेलन मैंहाँ, तुमरी दया से सुख पावा मनमाना हम।*
कतन्यो कवित्तहा पुरानि पहिचाना, कत्यो, नये कलाकारन का समुझा तराना हम।।
छाया-माया-प्रगति-प्रयोग का प्रयोग दूयाखा, गीतन-प्रगीतन का त्याखा अनुमाना हम।
फैजाबाद, दरियाबाद सुनित रहै 'मृगेश', अब की पछाड़ औ उखाड़वाद जाना हम।।'

विश्वनाथ पाठक : अवध-अवधी के अलंकार, कवि-पंडित विश्वनाथ पाठक आधुनिक अवधी के अप्रतिम एवं जन्मजात कवि हैं। पाठक जी का जन्म फैजाबाद जनपद के पठखौली-पाठकपल्ली (तकिया कानूनगो) गाँव में 24 जुलाई 1931 ई. को हुआ था। उन्होंने 'सर्वमंगला', 'घर कै कथा', 'रणचण्डी; आदि प्रतिष्ठित-सम्मानित- मर्मस्पर्शिनी काव्यकृतियों की रचनाएँ की। 'सर्वमंगला' विश्वबन्धुत्व और विश्व-राष्ट्र की उदात्त भावनाओं से ओतप्रोत अभिनव अवधी-प्रबन्धकाव्य है।' इस महाकाव्य में महिषासुर के पौराणिक आख्यान को कल्पना-वैभव से मंडित कर, विश्वपरिवार और विश्वशान्ति का कवि ने जो उज्जवल संदेश दिया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। 'घर कै कथा' कवि के निजी जीवन की घटनाओं पर आधारित करुण-रस-प्रधान प्रबन्धकाव्य है। सन् 1981 में पाठक जी के जीवन में घटित एक हृदय-विदारक घटना-दीपावली के दिन उनके एकमात्र सोलह वर्षीय पुत्र की लम्बी बीमारी के बाद अचानक मृत्यु- ने इस कृति को लिखने को विवश कर दिया। अपनी उस मर्म-भेदिनी पीड़ा के स्वान्तःभावन हेतु उन्होंने 'घर कै कथा' लिखा। उन्होंने इस काव्य-कृति में गाँवों के जो सांस्कृतिक, प्राकृतिक एवं व्यावहारिक चित्र प्रस्तुत किये हैं, वे किसी अन्य काव्य में दुर्लभ हैं। सचमुच उन्होंने गँवई-गाँव के परिवेश, उसकी जीवन-पद्धति एवं संस्कृति की जीती-जागती चित्रमाला गूँथ दी है। यही कारण है कि यह 'घर कै कथा' उनके घर की ही कथा न रहकर सबके घर की घर-घर की - कथा बन गयी। परिनिष्ठित हिन्दी में लिखा वीररस-प्रधान खण्डकाव्य 'रणचण्डी' 'दुर्गासप्तशती' की कथावस्तु पर आधारित तरुण-कवि की कवित्व-शक्ति का प्रकृष्ट प्रमाण है। इसके अतिरिक्त 'प्राकृत के प्राचीन कवियों की श्रेष्ठ कविताओं का संकलन 'वज्जालग्ग' भी उनकी एक कृति है। यह संयोग-वियोग से सम्बद्ध विविध गाथाओं का क्षीरसागर है। वास्तव में काव्य-साधना आचार्य विश्वनाथ पाठक के लिए 'अनुभूति-योग' है।

पाठक जी की रचनाओं में ग्राम जीवन और उसका परिवेश, राष्ट्रीयता की भावना और देश प्रेम, प्रकृति-चित्रण, भाषा सौष्ठव आदि विशेषताएँ अपनी गरिमा के साथ विद्यमान हैं। डॉ. रामशंकर त्रिपाठी जी का यह अभिकथन नितान्त सत्य है कि ''कवि ने 'घर कै कथा' में गंवई-गाँव की, ग्राम-परिवेश की, ग्रामीण जीवन की, ग्राम-संस्कृति की जीती-जागती चित्रमाला उरेह दी है। जनम-मरन, व्याह-गौन, तेरही-बरखी, त्यौ-त्यौहार..............आदि-आदि भारतीय ग्राम-जीवन के विविध रूपों-सोपानों के तद्रूपी बिम्ब 'घर कै कथा' में बोल-बोल पड़ते हैं। प्रगतिवाद के दौर में ग्राम-प्रकृति के चित्र पन्त आदि अभिजन महाकवियों ने भी खीचे थे, किन्तु उन्हें देखकर साफ पता चलता है कि कोई नागर कवि-कलाकार महानगर से रमणीक ग्राम-परिवेश में आकर पिकनिक-मूड में शब्दों कै लैंडस्केप रच रहा है। पाठक जी

सच्चे अर्थों में लोकात्म है।। इसलिए ग्राम-प्रकृति उनकी कविता में स्वयं शब्द-छन्दन करती है। कवि दूर से देखते हुए उसे शब्द-बन्धों में बाँधने की कोशिश नहीं करता है। कवि ने अपने गाँव के सह-वासी हरिजन बिरतन्ती के छान-छप्पर वाले घर और उस घर के दरवाजे साँझ को जुड़ने वाली बैठकी का जैसा बोलता-चालता सप्राण बिम्ब विरचा है, वह ब्योरे और मर्म दोनों ही संदेशों से यथार्थ-संभवी हैं।"

उनकी रचनाओं से दो-एक उदाहरण भावनीय हैं :

(1) *'रुके पहरुआ, सूप चुपाने, जाँत थमे, भा भोर।*
चूरी खनकी मजनहरिन कै, पिछवारे की ओर।।
गोबर लै निकसी मृगनैनी, धरे भौंह पर बान।
हाथे लागि चूल्हि कै राखी, माथे लाग पिसान।'

(2) *'देखि परै न कहूँ धनुहाँ, कहूँ डोरी कै रिंचिउ अवाजि न आवै।*
धक्क से होय तुरन्त करेज माँ, वार भये पै पता चलि पावै।
कौन गुरु से विचित्र पढ़िउ अस, गोरी ! तू नैन कै बान चलावै।
घायल होय जे ते तौ जियै, जे न घायल होय ते प्रान गँवावै।'

(3) *'जहाँ सेम फइलै बेरहा पै उपजै जहाँ अरुइया*
जहाँ मनउआँ की डोरी से उड़ै दुपहरे रुइया
उही ओर बिरतन्ती कै घर घासि-फूस से छावा
परी दुआरे झिंलगा खटिया जेकर लंगड़ पावा
कवहीं के हुक्का नरियर कै जेह पै चिलम चढ़ाई
कउड़ा की राखी माँ कंडी कइकै आगि जियाई
बिन चुल्ला कै घिसी कराही चिमचा मुरचा खावा
एकठूँ फूट कठउता घर माँ एक चलनी यक तावा
फाटि रजाई एकठूँ जेकर बहिरे निकसी रूई
उहाँ उहाँ भा छेद भुइं माँ छानि जहाँ पै चूई
एक कोने माँ परा पहरुवा दुसरे कोने जाँता
जबरा के तर से दुइ मुसरी जहाँ लगावैं ताँता
छानी माँ खोंसा दुइ हँसिया लोढ़ा सिलि पै राखा
करिखा से लदि उठा भीति माँ छोट दिया कै ताखा
कुलि कुरिया करिखानि रौंह से सरि सरिगै सरकंडा
दुइ कोरव के बीच चिरैया दिहिस चोंच में अंडा
मड़ई मकरी के जाला से अंगुर-अंगुर गाँछी
जहाँ कराइन पै तर-उप्पर ह्वँकै लटकै माँछी
अँगना माँ बिन ओरदावन कै एकठूँ टूट बसेटी
सिकहर पै करिखान धरी दुई तरपराइ के मेंटी
वहीं दुआरे साँझ भये पै कुलि आवै जुटि टोला
केव निखहरि खटिया पै बइठै, केव भुइँ डारि खटोला
सुरती ठोंकै केव हाथे पै, केव भरि लेय गलुक्का
केव मुँह से बीड़ी पकरावै, केव गुड़कावै हुक्का
जब नाती से चिलम छोरिकै दम्म चढ़ावै हुक्का

जब नाती से चिलम छोरिकै दम्म चढ़ावै आजा
तब धूऑं निकरै नेकुरा से बरै लक्क से गॉंजा
बड़ी राति तक होय कबोधन खीसा रंगबिरंगा
गउँखा से मुँह सदाबिरिज कै देखीं केसस सरंगा
बधिक बोलाइसि जब मारै कै डाइनि मैंभा माई
सीत बसन्त बचे तब कइसे झीन झीन दुइ भाई
सात भाय कै बहिन अकेलिनि नन्दि पॅवारा रानी
सातौ भौजाई चलनी से केसस भरावैं पानी...'

त्रिलोचन शास्त्री : प्रगतिशील कवित्रयी के सशक्त हस्ताक्षर त्रिलोचन शास्त्री का जन्म 20 अगस्त, सन् 1917 ई. को गॉव चिराना-पट्टी (कटघरा पट्टी) जिला सुलतानपुर में हुआ था। इनके बचपन का मूल नाम वासुदेव सिंह है। उनकी कृतियॉ हैं - 'धरती', 'गुलाब और बुलबुल', 'दिगन्तम', 'ताप के ताए हुए दिन', 'शब्द', 'उस जनपद की कवि हूँ', 'अरघान', 'अनकहनी भी कुछ कहनी है', 'तुम्हें सौंपता हूँ', 'फूल नाम है एक', 'देशकाल', 'सबका अपना आकाश', 'चैती' और 'अमोला'। 'अमोला' त्रिलोचन जी की अवधी काव्यकृति हैं (सन् 1990)। इसमें करीब 2700 बरवै संगृहीत हैं। वे सच्चे अर्थो में अवधी के अलंकार हैं।

'त्रिलोचन का वम्नु [illegible] टीहुर, मुसहर, नगई महरा, फेरू कहॉर, भोरई केवट आदि के जीवन-निष्कर्षो या ज्ञानात्मक संवेदनों से भी निर्मित है। धक्का खाने वाले, पीड़ित, दुःखी, क्षुधित और रोटी के लिए परेशान लोग त्रिलोचन की कविताओं के स्थायी भाव हैं। भोले-भाले किसान, पूर्ण सर्वहारा और गॉवों के श्रमिकों का जीवन, साथ ही जीवनानुभव से प्राप्त जीवन और जगत्-संबंधी बातें उनकी संवेदना को निर्मित, विकसित और अभिव्यक्ति-श्रम बनाती हैं। - एक अर्थ में त्रिलोचन की संवेदना काफी-कुछ हिन्दुस्तान के गॉवों से निर्मित है।

स्पष्ट है कि कवि त्रिलोचन की प्रत्येक सॉस में अवध की माटी की गन्ध समाहित है। इसीलिए उनकी अवधी रचनाओं में 'अवध' क्षेत्र के गॉवों की कथाऍ-व्यथाऍ-संवेदनाऍ तथा बनारस और उसके समीप का परिवेश अपनी पूरी सचचाई के साथ उपस्थित है। 'अवधी' भाषा में सृजित उनकी कविताऍ पाठक को अपनी ही दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी से साक्षात्कार कराती है।

त्रिलोचन के अवधी-काव्य की समीक्षा करते हुए शमशेर कहते हैं कि 'त्रिलोचन का जो काव्य अवधी में बरवै छन्द में आया है, उसकी तुलना केवल क्लासिक-रचनाओं से की जा सकती है, और वह आधुनिक भी है। आधुनिक इस मायने में कि एक आधुनिक कवि लिख रहा है। उसकी भावनाएँ आधुनिक हैं, उसमें पुराण पंथीपन नहीं है।'

त्रिलोचन शास्त्री की अवधी रचनाओं के कुछ एक उदाहरण देखें :

'अपनइ आपन ताके मन अफनाइ।
आनउँ कइ देखे ढाढस होइ जाइ।।'
'चिक्कन चिक्कन लखि न निकइ गनि लेइ।
कबहुँ-कबहुँ ऊ काटे लहरि न देइ।।'
'कॉंट धँसि गये गोड़ न थाम्हइ भार।
काढ़े बिना परग होइ जाइ अपार।।'
'दया इहउ आ आम त अपुना खाइ।
कोसिली मइ्ता के लग देइ बहाइ।।'

'आनइ कइ घर घामे छावा जाइ।
एहि सोचानि सुख कइसे पावा जाइ।।'
'मनइन मा पिपराह अहैं बहु खानि।
जिनके विकसे बहुतन कइ हित हानि।।'
'पीपर जामइ दुसरे पेड़े जाइ।
ओकर बाढ़ि बियास ऐंचि के खाइ।।'
'आनइ आने अपनउ रूप भुलान।
लखेसि न पैंड़ा केस-केस फूल फुलान।।'
'जेकर तपता कबहूँ बरा धँधोर।
अब केउ चितवत नाहीं तेकरी ओर।।'

डॉ. श्यामसुन्दर 'मधुप' : अवधी-कविता के चर्चित हस्ताक्षर 'मधुप' का जन्म संवत् 1993 में सरैया-मैनासी, जनपद सीतापुर में हुआ था। लखनऊ विश्वविद्यालय से एम.ए. 'मधुप' जी ने 'अवधी के आधुनिक प्रबन्धकाव्य' पर शोधकार्य किया। 'मधुप' जी की अवधी-रचनाओं में देशप्रेम का मोहक स्वर है, स्वातन्त्र्योत्तर बहुविध विकास का भाव है, किसानों को हीनता की ग्रन्थि से मुक्त करने का प्रयत्न है। उनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं- 'गाँव का सुरपुर देउ बनाय', 'जागि रहे बापू केर सपन', 'खेतवन का देखि-देखि जिउ हुलसै मोर', 'हिन्दुस्तान की झाँकी, 'परम्परा के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक अवधी-काव्य' तथा 'अवधी के आधुनिक काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ'। 'नवभारत-निर्माण', 'गंगा का देश' और 'विकास की बयारि' भी उनकी रचनाएँ हैं। प्रकाशित कृतियों में से प्रथम तीन सम्पादित हैं।

बेकल उत्साही : बेकल साहब का जन्म गोण्डा जनपद के अन्तर्गत उतरौला तहसील के 'रमवापुर' गाँव में हुआ था। अवधी-काव्य के विभोर गायक बेकल उत्साही का पूरा नाम शफी खाँ लोदी है। बेकल उत्साही पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा रखा गया नाम है। बेकल साहब लोकधुन पर आधारित लोकगीत लिखने वाले अवधी के सिद्धहस्त-रससिद्ध कवि हैं। अब तक बेकल साहब की 'नगमोतरन्नमु', 'विगुलविजय', 'लहके बगिया मँहके खेत', 'अपनी धरती चाँद का दर्पन', 'पुरवाइयाँ', 'कोमल मुखड़े बेकल गीत' आदि कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

पारस 'भ्रमर' : पारस भ्रमर के नाम से विख्यात पारसनाथ मिश्र जी का जन्म बहराइच जनपद के ब्रह्मपुरी मोहल्ले में सन् 1934 में हुआ था। बहुआयामी व्यक्तित्व एवं विलक्षण प्रतिभा के धनी 'भ्रमर' जी 'आधुनिक अवधी के स्वप्नदर्शी रचनाकार' हैं। अवधी लोकगीतकारों में भ्रमर जी का विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है। भ्रमर जी मूलतः ग्रामीण एवं लोक-संस्कृति के सशक्त हस्ताक्षर और गीतकार हैं। वे अवधी-भाषा और साहित्य को अपनी वाग्विभूति द्वारा विशेष गौरवान्वित कर रहे हैं।

विकल गोण्डवी : अवधी-जगत के लोकप्रिय कवि 'विकल गोण्डवी' का जन्म 8 फरवरी, 1924 ई. को मनकापुर के पास ग्राम खजुरी, पोस्ट मम्बई, जिला गोण्डा में हुआ था। विकल जी ने अवधी में गजल, गीत, मुक्तक, सवैया, कवित्त, लोकगीत आदि की सफल रचना की है। उनकी अवधी-गजलें तो विशेष लोकप्रिय हुई हैं। आकाशवाणी, दूरदर्शन द्वारा वे निरन्तर श्रोताओं को रसविभोर करते रहते हैं। 'रतना-तुलसी' और 'धरती कै धिया' उनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं।

जुमई खाँ 'आजाद' : प्रतापगढ़ जनपद के 'गोबरी' गाँव के निवासी श्री जुमई खाँ आजाद का जन्म 05 अगस्त, सन् 1930 को हुआ था। इनके बचपन का नाम 'महबूल' था। 'आजाद' जी जीवनयापन हेतु कृषिकार्य पर आश्रित रहे हैं। सारस्वत-साधना इनके जीवन का प्रमुख लक्ष्य है। जुमई खाँ मूलतः अवधी के कवि हैं और सामान्य कवि नहीं, बल्कि 'अवधी के रसखान' कहे जाते हैं। 'आर्यभारत', 'हमारी

सीख', 'मालिक और मजदूर', 'गागर में सागर', 'त्याग-बलिदान', 'जीवन-संगम', 'उपहार', 'तूफान', 'जनता की ललकार', 'चिनगारी', 'नवविहान', 'पहरुआ', 'केवट' (अवधी खण्डकाव्य), 'गंगावतरण' आदि इनकी उपलब्ध-अनुपलब्ध प्रकाशित काव्यकृतियाँ है। 'कथरी', 'वसन्तगीत', 'देहजगीत', 'दुखिया मजूर', 'रोटी', 'राम-रहीम', आदि कविताएँ तथा 'पहरुआ', 'केवट' तथा 'गंगावतरण' काव्यकृतियाँ उनकी कीर्ति का आधार है। वास्तव में 'आजाद' जी अवधी लोकगीतों के सम्राट्-सर्जक हैं।

'आजाद' जी की कविताओं में 'अवध क्षेत्र का प्राकृतिक परिवेश, गाँव की गरीबी-बदहाली, उसकी लोकसंस्कृति विश्वास-रहनसहन, अमीरी के कैलास पर स्थायी निवास करने वाले लोगों के द्वारा गरीबी के पाताल में आकण्ठ डूबे लोगों के प्रति किये जाने वाले अन्याय-अत्याचार के बावजूद उनकी अदम्य जिजीविषा की संघर्षमय जीवन-स्थितियों का दिल को छूने वाला, आँखें नम कर देने वाला चित्रण-वर्णन उपस्थित है'' (डॉ. संतोषकुमार मिश्र)। अपनी राष्ट्रीय कविताओं के लिए भी ये विशेष रूप से जाने जाते हैं। 'आजाद' जी अपनी काव्यसाधना के लिए 'यशभारती पुरस्कार' (51 हजार रु. की धनराशि तथा अभिनन्दन पत्र), हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा नामित 'म. मुहम्मद जायसी पुरस्कार', मानव विकास संसाधन मंत्रालय से 'अवधी रत्न सम्मान' आदि से सम्मानित-पुरस्कृत किये जा चुके हैं। उनकी रचनाओं के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

(1) *कुछ लोग गरीबी से सिसकैं कुछ लोग हँसै खुसियाली मां।*
कुछ भालपुवा कै भोग करै कुछ चावल
बोली बोलइँ हमका अमीर तोहरी तकदिरिया खोटी रे।
हमका आजादी कहाँ मिली लरिका पावैं न रोटी रे।।

(2) *ई तड़क भड़क वैभव विलास,*
एनहीं कै गाढ़ि कमाई आ।
ई महल जौन देखत बाट्या,
एनहीं कै नींव जमाई आ।

(3) *जेइ जरै बतिया तेल बिना दियना हो,*
वइसे जरै जिनगी हमार मोरे बपई।।
तीन किलो बजड़ी तीन किलो चनवा,
जतवा से बजनी करथै गीत दनवा।
चोकरा चलनियाँ सासु जब देखैं तौ,
लेइँ कुलि पनियाँ उतार मोरे बपई।।

(4) *पंडित के घर होइ निकासन अब्दुल छोड़ै गोला।*
मुल्ला जी महलूद सुनै तो सिन्नी बाँटै भोला।
मेल-जोल जिन खत्म करावा दुआ-बन्दगी हाटी कै।
राम-रहीम तुहीं हो भइया मंदिर-मसजिद माटी कै।

आद्या प्रसाद 'उन्मत्त' : आधुनिक अवधी के महान् कवि पं. आद्या प्रसाद 'उन्मत्त' का जन्म 13 जुलाई, सन् 1935 को प्रतापगढ़ जनपद के 'मल्हूपुर' ग्राम में हुआ था। 'उन्मत्त' जी ने अवधी और खड़ी बोली में विविध भावभूमियों पर आधारित उत्कृष्ट कोटि की बहुत सारी रचनाएँ की हैं। 'माटी और महतारी' 'उन्मत्त' जी की अवधी-कविताओं का प्रकृष्ट संग्रह है। उन्होंने अवधी में गजल और दोहों की भी सर्जना की है। 'माटी और महतारी' काव्य कृति के संबंध में जगदीश पीयूष का यह कथन रेखांकनीय है कि ''माटी और महतारी' 'उन्मत्त' जी की अवधी-रचनाओं का संग्रह है, जिसमें सुप्रसिद्ध कविता 'पाती' सहित

पचासों रचनाएँ हैं। 'उन्मत्त जी की हर कविता एक प्रबन्धकाव्य होती है, इन्हें पढ़कर लगता है कि अवधी का मानक स्वरूप यही होना चाहिए। जनजीवन यानी रोजमर्रा की जिन्दगी से जुड़ी इन कविताओं में ऋतुओं, त्योहारों, सामाजिक सरोकारों, विकास एवं भ्रष्टाचार का वर्णन देखने लायक है।........."

'उन्मत्त' जी ने गाँवों के ही नहीं, शहरों के भी, पुरानी दुनिया के ही नहीं, नयी दुनिया के भी, सामाजिकों के ही नहीं, राजनीतिज्ञों के भी और व्यष्टि के ही नहीं, रामष्टि के भी कार्य-व्यापारों एवं भाव-स्थितियों को अपने काव्य का विषय बनाया है। लेकिन प्रधानता उनमें गँवई-गाँव से गृहीत मनोभावों की ही है। कवि ने अपनी रचनाओं के सहारे ग्रामीण समस्याओं, राजनीतिक गतिविधियों तथा अन्यान्य प्रकार की विसंगतियों और विषमताओं की ओर गंभीर व्यंग्य और मधुर हास्य की सृष्टि की है।"

'हिन्दी-कविता के क्षेत्र में जिसे प्रगतिशील साहित्य कहा गया है, 'उन्मत्त जी का काव्य उसके उदाहरणों से भरा पड़ा है। वे अवधी की (और खड़ी बोली हिन्दी का भी) प्रगतिशील कविता के अत्यन्त स्वाभाविक और महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं उनका काव्य सामाजिक यथार्थ का अनुसरण करते हुए दीनता, शोषण और विवशता के चित्र प्रस्तुत करता है तथा किसान की विद्रोह-भावना का वह रूप भी प्रस्तुत करता है जो इस रुग्ण सामाजिकता को नष्ट कर, एक नये समाज की रचना करना चाहता है।'

विषयवस्तु की दृष्टि से 'उन्मत्त' जी की कविताओं में कृषक-जीवन, ग्रामीणों की वास्तविक स्थिति, किसानों की निर्धनता, अधिकारियों-राजनेताओं के अत्याचार, देशदशा-देशप्रेम, प्राकृतिक सौन्दर्य, राष्ट्रीय जागरण, हास्य-व्यंग्य, सांस्कृतिक उत्सवों एवं पर्वों की स्थिति, श्रम की प्रतिष्ठा, अपनी माटी से संसक्ति एवं दहेज-समस्या, परिवार-नियोजन तथा नारी-शिक्षा – जैसे सामाजिक सरोकारों की गहरी अनुभूति विद्यमान है। उन्होंने अपनी कविताओं में अपने परिवेश के रहन-सहन, रीति-रिवाज, खेत-खलिहान, तिथि-त्यौहार, विकास-प्रकाश आदि का पूरी भावना एवं सरलता-सहजता के साथ मार्मिक चित्रण किया है।

अस्तु, 'उन्मत्त' जी के कवि को मजदूर-किसान, अधिकारी-पूँजीपति, नेता, खेती-किसानों, धर्म-कर्म, श्रम-समाज सब की चिन्ता सताती है। गाँव-जेंवार, प्रकृति-परिवेश सब-कुछ उनका थहाया हुआ है। अपनी जन्मभूमि, यहाँ की माटी और संस्कृति से उनका अटूट संबंध है। इसका गौरवगान करते वे अघाते नहीं। उनकी कविता की प्रत्येक पंक्ति किसी-न-किसी विशेषता से युक्त होती है। संक्षेप में, उनकी कविताओं में विद्यमान विशेषताओं को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत व्याख्यायित एवं विश्लेषित करते हुए आसानी से समझा जा सकता है :

'उन्मत्त' जी की अवधी-कविताओं के कुछ उदाहरण ध्यातव्य हैं :

(1) *पोली खोली, कुछ न बोली, डोलि जाई का करी,*
ओनकी जफड़ी से कस इज्जत बचाई का करी?
बूंद भै जानै न हमरी जात कै औकात जे,
वहि समुन्दर की लहर कै गीत गाई का करी?

(2) *तू आला अपसर बना आजु घरवै मूसै मा तेज अहा,*
अँगरेज चला गे देसवा से तू बना अबौ अँगरेज अहा।
सुख-चैन न पाया जुटै कभी अपनी धरती महतारी कै
एसी निरबंसै भले रही अस जनम्या पूत बेचारी कै।
तू खूब उड़ाया गुलछर्रा अब तक ओहदा के आड़े मा।
तोहरी नानी के हाँड़े मा।

दुनिया कै गटई काटि-काटि आपन भण्डार भरत बाट्या,
तू बिना सूँड़ कै हाथी अस सबकै सुख-चैन चरत बाट्या।
बस आपन मतलब गाँठै मा, केउर कै दुख-दरद न जान्या तू,
दुनिया क देतै रह्या दगा बस आपन विरद बखान्या तू।
मूड़े धै राजा बेबु गये तू धरती बँधब्या फाँड़े मा।
तोहरी नानी के हाँड़े मा।

(3) *ढेबरी की कठिन पढ़ाई मा आँखी कै जोती जात रही,*
दादा लूकी लै खात रहे, माई अँधियारे खत रही।
डेहरी से लैके ओबरी तक अब सगरो बिजुरी बरै लाग
मनई के कहै भइँस बइठी उजियारे पागुर करै लाग।
का जना-जना की आँखी ना अब दिया देखाई रामराज?
अब केस के आई रामराज?

(4) *विरथा उ बिरिछ जौन न फूलै न तौ फरै,*
विरथा उ बात जौन कि सुनतै कि जिउ जरै,
बा जनम अकारथ धरा पे राम धे जेसी,
दुनिया क दुख-दरद म न कौनौ फरक परै।

डॉ. महेशप्रताप नारायण अवस्थी : 5 जनवरी, सन् 1933 को चिलौली-इन्हौना में जन्मे डॉ. अवस्थी रायबरेली जनपद में अवधी-भाषा और साहित्य को समृद्ध करने वालों में शीर्षस्थ हैं। अवधी-लोकगीतों के संग्रह एवं संपादन में डॉ. अवस्थी सभी के लिए आदर्श हैं। 'अवधी-साहित्य-मंडल की स्थापना द्वारा महेश जी ने समस्त अवधी-प्रेमी-समाज को एक मंच पर लाने का स्तुत्य कार्य किया हैं एक ही वर्ष (1985) में अवधी-लोकगीतों के तीन संग्रह-'अवधी-लोक गीत : भाग एक', 'अवधी-लोकगीत : भाग दो' एवं 'अवधी-लोकगीत हजारा' का सम्पादन-प्रकाशन करके अवस्थी जी ने अवधी के प्रति अपनी अनन्य आस्था एवं उसके उत्कर्ष की उत्कट अभिलाषा का प्रमाण दिया है। 'जनरामायण', 'जनकृष्णायन' और 'असोकवाटिका' उके प्रकाशित अवधी-महाकाव्य हैं। 'चित्रकूट में अयोध्या' उनका अवधी खण्डकाव्य है। 'विनय पदावली', 'महेस सतसई', 'पंचागुर' तथा 'अमराई' (1989) अवस्थी जी की विविध विधाओं पर आधारित अवधी-कविताओं के स्तरीय संग्रह हैं। अवधी-समाज में फैले रामकथा पर आधारित लोकगीतों का संग्रह और सम्पादन कर अवस्थी जी ने 'लोकगीत रामायन' के रूप में एक अन्य श्लाघनीय कार्य किया है। डॉ. अवस्थी जी द्वारा सृजित अवधी-साहित्य से दो-एक काव्यांश उदाहरण के लिए प्रस्तुत हैं:

(1) *'द्वारपाल तब हरि पहँ गयऊ। माथ नवाइ कहत अस भयऊ।।*
नाथ बिप्र एक द्वारे आयउ। आपु भवन जानत हरषायउ।।
मम पूछे निज नाम बतायउ। विप्र सुदामा कहि मुसकायउ।।
नहिं तन भगा, सीस नहिं पागा। प्रभु, तब चरित कहत अनुरागा।।
अस सुनतहिं हरि उठि कइ धायउ। द्वारपाल सँ द्वारहि आयउ।।
देखि दुरदसा चीन्हेउ नाहीं। पाँड़े भा उदास मन माहीं।।
तब बोलेउ नवाइ निज माथा। नाथ उजैन रहेउ एक साथा।।
बोल सुनत तुरतहि पहिचानेउ। चरन हुएउ अतिसय दुख मानेउ।।'

(2) *'अब अर कहाँ तो बतलाई, सगरे गाँवै कै यहै हाल,*
का सुकुलन काअ चमारन की बगिअन का देखे जिउ निहाल।
रमापूर पाण्डे पुरवा कै तुमते हम का बात करी
ई गाँव हमैं बहुतै भावैं देखी बगियै सब खूब फरी।'

जगदीश 'पीयूष' : 6 अगस्त, सन् 1950 को सुलतानपुर जिले के 'कसारा' (अमेठी) नामक गाँव में जन्मे श्री जगदीश पीयूष ने न केवल अपनी अवधी-रचनाओं के माध्यम से समाज के ज्वलन्त प्रश्नों पर लेखनी चलायी है, अपितु 'अवधी साहित्य : सर्वेक्षण एवं समीक्षा', 'अवध की लोकथाएँ', 'अवधी लोककथाएँ, 'लोकसाहित्य के आयाम', 'लोकसाहित्य के सरस प्रसंग' तथा 'बोली-बानी' पत्रिका के विविध अंकों का सम्पादन-प्रकाशन करके अवधी भाषा और साहित्य का बहुविध प्रचार-प्रसार, विकास एवं कल्याण किया है। वे अवधी के सर्वांगीण विकास के लिए समर्पित व्यक्तित्व है। अवधी अकादमी की स्थापना इसका ज्वलन्त प्रमाण है।

अपना-अपना सृजन और प्रकाशन तो सभी करते हैं, जो दूसरों के सृजन और प्रतिभा को प्रकाशित करें, वह अधिक वरेण्य है। अवधी भाषा-साहित्य को उनकी यही देन उन्हें वरेण्य बनाती है : **'समकालीन अवधी कविता के हीरक हस्ताक्षरों की खोज।'** 'बोली-बानी' पत्रिका के अंक इस बात के प्रमाण हैं। उसके अंकों में ऐसे कितने ही कवि प्रकाशित हुए हैं जो समकालीन खड़ी बोली कविता के समकथा नयी कविता, नवगीत, गजल, मुक्तक, हाइकू आदि शिल्पों में सक्रिय हैं।

''जब अवधी की कोई संस्था नहीं थी, तब सन् 1975 के आस पास जगदीश पीयूष ने बहराइच में लल्लनप्रसाद व्यास-जैसे कुशल पत्रकार के सहयोग से 'अवधी अकादमी' का गठन किया था और 1978 में उन्होंने 'अवधी अकादमी' का एक अभूतपूर्व अधिवेशन किया, जिसमें अवधी के सभी छोटे-बड़े कवि एकत्र हुए थे।'' (डॉ. श्याम सुन्दर 'मधुप'). स्वयं 'पीयूष' के शब्दों में, ''हम सन् 1975 म अवधी अकादमी संस्था कै गठन कीन्ह, अउर 1978 म अवधी कै सरनाम कवि मलिक मुहम्मद जायसी की मजार पै अवधी-प्रेमियन-कवियन का जुट्टान करावा। एक पत्रिका अवधी के प्रकाशन भवा। बहराइच म भी एक सम्मेलन भवा, जौने म स्व. वंशीधर शुक्ल, 'मृगेश' जी, मधुर जी, पारस भ्रमर आदि कवियन कै सम्मान कीन गा।''

स्पष्ट है कि जगदीश 'पीयूष' न केवल अवधी के कवि-साहित्यकार है, अपितु वे अवधी भाषा एवं साहित्य के ऐसे कर्मठ एवं महान् सेवक है। जिन्होंने अवधी के विकास एवं प्रतिष्ठा के लिए नानाविध आयोजन-प्रयोजन एवं प्रयास किये हैं। डॉ. रामबहादुर मिश्र का यह अभिकथन सटीक सत्य है कि **''जगदीश पीयूश समकालीन अवधी परिदृश्य में एक 'रचनात्मक आन्दोलन' के रूप में प्रतिष्ठित है।''** ....''पीयूष जी ने अवधी-साहित्य के विविध पक्षों पर उल्लेखनीय कार्य किया है। उन्होंने काव्य, गद्य तथा अवधी की अनेकानेक विधाओं के साथ ही सर्वेक्षण एवं सम्पादन के रूप में महत्वपूर्ण सारस्वत साधना की है। अवधी-साहित्य का उनका कार्यक्षेत्र बहुत ही व्यापक है।''

''पीयूष जी जहाँ अवधी के समर्थ कवि हैं वहीं वे अधुनातन अवधी-कवियों के प्रेरणा-स्रोत हैं। उनका प्रयास रहता है कि अवधी-कविता नयी साहित्य-धारा से जुड़े। गाँव, किसान, खेती, दरिद्रता, गुलामी, परवशता आदि विषयों से ऊपर उठकर अवधी को समकालीन सोच से जोड़ना होगा। अवधी-कविता को नये शिल्प की तलाश करनी चाहिए। यह काम बखूबी पीयूष जी कर रहे हैं। उन्होंने अवधी में पचासों नवगीत लिखे हैं। अवधी में नवगीत लिखने वाले दो-चार रचनाकार ही हैं उनमें पीयूष अग्रगण्य हैं। 'अँधरे के हाथ बटेर' उनका नवगीत-संग्रह ही है।

अवधी कविता-साहित्य के लिए सबसे बड़ी विडम्बनापूर्ण स्थिति है उसके साहित्य का प्रकाश में

न आ पाना। अवधी के लिए यह एक बहुत बड़ी साहित्यिक जरूरत भी है। इसी तथ्य को दृष्टिगत कर पीयूष जी ने 'लोकायतन' और 'बोली-बानी'-जैसी अनियतकालीन पत्रिकाओं का सम्पादन-प्रकाशन किया। 'बोली-बानी' का प्रकाशित आठवाँ अंक अवधी लोक साहित्य की महत्वपूर्ण थाती है।

अवधी के अनेक समर्थ किन्तु उपेक्षित, अलक्षित एवं अप्रकाशित साहित्य तथा साहित्यकारों को प्रकाश में लाने का उन्होंने स्तुत्य कार्य किया है। बोली-बानी के चार अंक मुख्य रूप से अवधी-कविता पर ही केन्द्रित रहे, जिनमें समकालीन अवधी-रचनाकारों को विस्तारपूर्वक प्रकाशित किया गया। समकालीन प्रमुख अवधी-कवियों आचार्य विश्वनाथ पाठक, त्रिलोचन शास्त्री, आद्याप्रसाद उन्मत्त, डॉ. श्याम तिवारी, लवकुश दीक्षित, डॉ. गणेशदत्त सारस्वत, डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप', जुमई खाँ आजाद, विकल साकेती, हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल', डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक', डॉ. सुशील सिद्धार्थ, डॉ. राम बहादुर मिश्र, आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप', डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र, सत्यव्रत सिंह, गुदड़ी के लाल, सच्चिदानंद तिवारी 'शलभ', डॉ. राधा पाण्डेय, सतीश आर्य, जाहिल सुलतानपुरी, निर्झर प्रतापगढ़ी, कृष्णकांत एकलव्य, डॉ. ओंकारनाथ उपाध्याय, सागर सत्यार्थी, सद्धर्म सज्जन निगम, महेन्द्र वर्मा 'नयन', बरखा रानी, काका बैसवारी, डॉ. विद्याविन्दु सिंह, सियाराम विश्वकर्मा, डॉ. त्रिभुवननाथ शर्मा 'मधु', ब्रजेन्द्र मिश्र, सियाराम मिश्र, व्यंजना शुक्ला, डॉ. वीरेश प्रताप सिंह, राम अकबाल त्रिपाठी अनजान', ब्रह्मदेव यादव 'मधुकर', डॉ. गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द', शोभनाथ अनाड़ी, अशोक टाटम्बरी, श्याम जी पाण्डेय 'करुणेश', ताराचन्द 'तन्हा', अंजनीकुमार 'शेष', शेषपाल सिंह 'शेष', आनन्द प्रकाश अवस्थी, डॉ. अशोक अज्ञानी आदि की कविताएँ बोली-बानी' के विविध अंकों में प्रकाशित हुई हैं। कुछ विशिष्ट अवधी-कवियों जैसे आद्याप्रसाद 'उन्मत्त', स्व. असबिन्द द्विवेदी, श्रीपाल सिंह 'क्षेम' आदि को केन्द्रित करते हुए उन पर विशेषांक भी निकाले।

अवधी भाषा, साहित्य तथा संस्कृति के विविध पक्षों को उद्घाटित करने के उद्देश्य से पीयूष ने ख्यातिलब्ध विद्वानों के शोधपरक लेख और निबन्धों का सम्पादन और प्रकाशन किया। 1978 में 'अवधी सामर्थ्य और स्वरूप' संज्ञक शोध-ग्रंथ अवधी के माध्यम से अवधी के आदि साहित्य, अवधी लोक-साहित्य, अवधी के प्रमुख आधुनिक जनकवि, जायसी की अवधी, तुलसीदास और अवधी भाषा का संस्कार, अवधी लोक-संस्कृति-जैसे मूल्यवान् बिन्दुओं पर समीक्षापरक एवं शोधपरक लेख प्रकाशित किए।

अवधी भाषा और साहित्य के अतिरिक्त पीयूष जी ने अवधी लोक-साहित्य के संदर्भ में बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य किया। लोकसाहित्य का संकलन, संरक्षण, शोध और सम्पादक आज की बहुत बड़ी साहित्यिक जरूरत है। आधुनिकता की आँधी में यह साहित्य विलुप्त होता जा रहा है। यही समय है जब हम लोक साहित्य को बचाने का प्रयास कर सकते हैं अन्यथा आने वाले समय में इसका नामोनिशान नहीं बचेगा। शायद इसी खतरे को भाँपते हुए पीयूष जी ने लोकसाहित्य के प्रति अपनी सजग दृष्टि उठायी और उसे प्रकाश में लाने का बीड़ा उठाया।'' (कलम का सफर)

जहाँ तक 'पीयूष' जी के अवधी-काव्य सृजन का प्रश्न है, सन् 2002 में प्रकाशित 'पीयूष'-कृत 65 कविताओं का संग्रह 'अँधरे के हाथ बटेर' अवधी का उत्कृष्ट संग्रह है। इस संग्रह की कविताओं में 'भावों की ऊष्मा, विचारों की गरिमा और चिन्तन की तरलता है।'' इसकी कविताओं में पीयूष जी के कवि-व्यक्तित्व में विद्यमान उनके अनुभवों की समाहिति है। अपने इन अनुभवों के माध्यम से उन्होंने अवधी-कविता को एक अभिनव दिशा दी है। इसकी कविताएँ अवधी-समाज की लोकप्रकृति एवं प्रवृत्ति की सम्यक् परिचय-पहचान कराती हैं।

इस संग्रह की अधिकतर कविताएँ जनवादी काव्य प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं : इसलिए कि उनमें नवजागरण का संदेश है, शोषित-सर्वहारा के प्रति करूणा तथा शोषक के प्रति घृणा-कदर्थना

का भाव है, श्रम की महत्ता है, सामाजिक विसंगतियों के प्रति चिन्ताभाव है, राष्ट्रीयता एवं अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना है (यह राष्ट्रबोध जनबोध से जुड़ा हुआ है), आधुनिक सभ्यता के प्रति आकर्षण-विकर्षण है, मानव में आस्था और उसके प्रति संवेदनशीलता है। इसमें भारतीय गाँवों की दीनदशा, व्यथा और कथा है, पारिवारिक और सामाजिक संबंधों की रागात्मकता भी है, साथ ही उसकी अनुपस्थिति भी है; सार्थक और सटीक व्यंग्य है- तिलमिला देने की हद तक, राजनीतिक चोंचलेबाजी पर बेबाक चुटकी है, तथाकथित नेताओं पर व्यंग्य है, नारीमन की संवेदना है, यथार्थ की अभिव्यक्ति है, विद्रोह की भावमुद्रा है, मद्यपान और दहेज - जैसी सामाजिक कुरीतियों के भयावह चित्र हैं, प्रकृति-परकता एवं उसके अन्यान्य मौसमी उपादानों के अभिप्राय हैं।

संग्रह की अन्तिम दो कविताएँ-'गाँव' और 'काली माई' अपनी प्रस्तुति और भावव्यंजना में अद्वितीय है। मुक्त छन्द का अनुसरण करने वाली कविता 'गाँव' ग्रामीण स्थिति-परिस्थिति एवं व्यवस्था का जीवन्त दस्तावेज़ प्रस्तुत करती है। उसमें सम्पूर्ण ग्रामीण सभ्यता-संस्कृति का विराट् बिम्ब रूपायित है। ग्रामीण जन की धारणाएँ-मान्यताएँ, रीतिरिवाज, झाड़फूँक, साम्प्रदायिक एकता और सौहार्द, खेती-किसानी, ग्राम विकास, पारिवारिक परिवेश, धनीमानियों द्वारा गरीबों पर किया जाने वाला अमानवीय अत्याचार-अनाचार क्या-कुछ नहीं है उसमें। 'सामाजिक समरसता से जुड़ी हुई यह कविता किसी भी प्रगतिशील जनवादी कविता से अधिक स्वस्थ सबल और पुष्ट है।'

डॉ. वीरेश प्रताप सिंह के अनुसार, ''संग्रह के उत्तरार्ध में गाँव'' शीर्षक से प्रस्तुत लम्बी कविता में गाँव का वृत्त-चित्र ही अंकित कर दिया गया है। अजन्ता और एलोरा के गुहचित्रों - जैसे एक-एक चित्र, रंग और रेखाएँ, देश की ग्रामीण जीवन-शैली, स्थितियों-परिस्थितियों, उसके अतीत और भविष्य, स्तर और अस्तित्व उसकी भाव-भाषा, परम्पराएँ, मान्यताएँ, यथार्थ परिवेश, दरिद्रता, तथाकथित विकास और समृद्धि की अकथ कहानी कहते प्रतीत होते हैं। संग्रहान्त में 'काली माई' शीर्षांकित छन्दोवद्ध रचना कवि के पौराणिक आस्था-विश्वास का प्रतीक है। माँ के विभिन्न रूपों के स्तवन में कवि ने शक्ति भर एक ऐसी धारा प्रवाहित की है जो पाठकीय भाव-भूमि को गंगास्नान-सी पुण्य-पवित्र अनुभूति करा जाती है।'' (-जगदीश पीयूष - कलम का सफर : पृष्ठ 81)

कृति की अंतिम कविता 'काली माई' उनकी 'आस्था और आधुनिकता' का परिचायक है। 29 छन्दोंवाली ''काली माई कविता में कवि का समग्र रचना-कौशल भागीरथी-प्रवाह की तरह उत्ताल तरंगाघात करते हुए अग्रसर हो रहा है। कविता में तीव्र प्रवाह है, गति है, लय है, ताल है, छन्द है। अनुप्रास, रुपक, यमक तथा उपमा की छटा अविरल गति से प्रवहमान है। कहीं रौद्र, कहीं वीभत्स, कहीं हास तो कहीं करुणा का सागर लिहोरें ले रहा है।'' (इन्द्रप्रभा : दिसम्बर-फरवरी 06 : पृ. 88) कृति के निम्नलिखित उदाहरणों में उपर्युक्त विशेषताओं को प्रमाणरूप में देखा जा सकता है :

यथार्थ की अभिव्यक्ति

हर टँगा खूँटी गई अपनी सरावन,
नाधा जुआठा और शैला खींच,
रहट भूले लोग अब ट्यूबवेल से पानी भरे
x x x
लाल होइगे बड़ेर।
बोलैं बतिया करेर।।
भये अँखिया के आगे अँधियार सजना।

आये ललना त भये किलकार अँगना।
x x x
जइसे कोढ़िया मा खाज।
पी के आवे दारुवाज।।
मारै लठिया से के का गोहराई माई जी।
कहाँ लरिका खेलाई हँसी रोई माई जी।।
x x x
हलाकान बा किसान।
न बिकाय गोहूँ धान।।
भरा जियरा हमार तौ ठठेर माई जी।
लागा अँधरे के हथवा बटेर माई जी।।

गाँव में एकता-भाव

गाँव मां बाम्हन अहैं,
ठाकुर अहैं, बनिया अहैं
गाँव मां बारी अहैं, नाऊ अहैं, लोनिया अहैं,
गाँव चमकटिया अहैं लोधी अहैं।
गाँव सगरौ जाति का/एक्कै खटोला पै सोवावै
सबै काका, सबै दादा/सबकै लरिका सब खेलावै,
एक भुजइन है/चबैना सब भुजावैं।

देश की प्रगति एवं विकास

आवा कम्प्यूटर, ई-मेल।
चलै सी.एन.जी. से रेल।।
फोटै बड़ा-बड़ा बम्म हिन्दुस्तान माई जी।
करा फोन हमरे गाँव से जपान माई जी।।

नेतागिरी की स्थिति एवं नेताओं पर व्यंग्य

कुर्ता खादी का चौचक।
ताकैं गांधी जी भौचक।।
होइगे घरे-घरे नेतवै दलाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।

राजनेताओं की स्थिति

चाटैं राजनीति कै चाट।
रोजै बदलैं धोबी घाट।।
धक्का-मुक्की होइगा देसवा धमाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।।

दहेज-समस्या

खाइ छतिया प हूल।
गईं फँसिया प झूल।।
मारै जियरा दहेजवा पिसाच माई जी।
लागै हमका सहरवा कै आँच माई जी।।

अफसरशाही की स्थिति

होइगा कोतवाल का खेल।
पण्डित गये भिनौखा जेल।।
चोरवै घूमैं कइके थाने म सलाम माई जी।
चुंगुली चांई जीना गाँव म हराम माई जी।।

धर्माचार्यों पर व्यंग्य

बने बड़े-बड़े मठ।
बइठ बड़े-बड़े सठ।।
देखा धरम नदी कै धरियार माई जी।
बना बड़का महतिमा सियार माई जी।।

दिल्ली की स्थिति

हियाँ न केवकै केव सुनवैया।
अपुनै मा है ता ता थैया।।
देखा जनता की छाती पै
सोझै धरी बबुर कै सिल्ली
बाटे बड़ी चिबिल्ली दिल्ली।।

प्रेम-व्यंजना

जियरा म आवा थै घुँघुटवा उघारी।
पनवा खवाई तोर गलवा निहारी।।
पिंजरा म सुगना फँसाव मैना।
तनी जियरा कै अगिया बुताब मैना।।

प्राकृतिक-स्थिति का चित्रण

सूखे ताल व तलइया।
खेते मेड़े चरै गइया।।
सूखी छतिया क बछिया चिंचौरे मोरे राम।
नाचै खड़ी दुपहरिया लिलोरै मोरे राम।।

'नये-पुराने' के सम्पादक श्री दिनेश सिंह की दृष्टि में ''अँधरे के हाथ बटेर' की समस्त अभिव्यक्ति समकालीन मूल्यों पर आधारित है।... कविता के जिन मूल्यमानों की स्थापना की चिन्तना में मौजूदा

काव्य-साहित्य, गीत साहित्य तमाम बहसों-मुबाहिसों से जूझ रहा है, वे सारे मूल्य अपनी स्वाभाविक भाषा-लय में पीयूष के इन अवधी-गीतों में सहज ही खोजे जा सकते हैं।"

"पीयूष की काव्यभाषा विषयवस्तु के हिसाब से अपने रास्ते का चयन स्वयं करती है और नित नये चटकीले रूपों, स्वरूपों से परिचित कराती है। पीयूष आमतौर पर भाषा-स्तर पर सपाट हैं। इसलिए और बोधगम्यता उनकी कविता के निजी उपकरण हैं, जिनका उपयोग अपनी सुविधा के लिए उनके पाठक सहज ही कर सकते हैं। पीयूष जहाँ कविता की सच्चाई से हमें किसी विचार के माध्यम से रुबरु कराते हैं, वहाँ वे तिक्त हो जाते हैं। उनकी काव्यभाषा में एक उष्णता व्याप्त हो जाती है। राजनैतिक परिवेश की अभिव्यक्ति में उनके भाव वक्र हो जाते हैं। सामाजिक यथार्थ में वे खरे होकर उतरते हैं। चीजों को लोकमन से व्यक्त करने लगते हैं और भाषा सधुक्कड़ी हो जाती है। कबीर का अन्दाजेबयाँ होने लगता है और बात ही गहरे उतरने का रास्ता बनाने लगती है। वह बिम्बवादी नहीं हैं, लेकिन ग्रामीण बोध के संकेतों से लैस हैं इसलिए उनकी कविता बिम्बों से सुसज्जित-सी लगती है। पीयूष पर लोकमन हावी है, इसलिए वे अभिव्यक्ति में खरे हैं, विचारप्रधान हैं, सहज हैं, प्रेषणीय हैं, असरदार हैं। उनकी भाषा का कोई खास नामकरण नहीं किया जा सकता, क्योंकि उस पर विचार करते समय ही उनकी अनेक छवियाँ आपस में गड्डमड्ड होने लगती हैं। वे भाषा स्तर पर अभिव्यक्ति में आंचलिक भी होते हैं, सरस भी, रुक्ष भी, ठेठ भी, देशज भी, शिष्ट भी, सुसंस्कृत भी, लयात्मक भी और नीरस भी; पर हमेशा सन्देश उनकी कविता के आगे-आगे चलता है, काव्य-सिद्धान्त की भाषा की जगह वे काव्य-व्यवहार की भाषा अपनाते हैं। लोकसाहित्य के संरक्षण और संवर्धन में अथक परिश्रम करने की उनकी लत ने शायद उनकी इस काव्यभाषा का निर्माण किया है। भाषा की यह नियति उनके साहित्य को जनवादी बनाती है और आम जन तक काव्य मन के संदेश को पहुँचाने में मद्द करती है।" (दिनेश सिंह, सम्पादक : जगदीश पीयूष-कलम का सफर, पृ. 17-18)

'अँधरे के हाथ बटेर' कृति की महत्ता एवं ख्याति इसी बात से आँकी जा सकती है कि "इस कृति पर उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान' ने उन्हें 'जायसी नामित पुरस्कार' से सम्मानित किया है।

स्पष्ट है कि जगदीश पीयूष अवधी-कविता के प्रसन्न गुणगायक कवि-हस्ताक्षर हैं। उन्होंने अपने रचनाकर्म और उससे कहीं ज्यादा अपने आयोजन-धर्म के माध्यम से अवधी भाषा एवं साहित्य को समृद्धि प्रदान की है।उनकी कविताओं के साक्ष्य पर यह भी स्पष्ट है कि "अब अवधी-कविता हास्यव्यंग्य प्रधान, ग्रामीण गोत्र की ही कविता नहीं है। उसमें वैश्विक बोध, दलित चेतना, स्त्री-विमर्श, युवा आक्रोश और वैज्ञानिक बोध-जैसे चिन्तन-स्वर भी मुखरित हो रहे है।" (डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित)।

अस्तु, आधुनिक काल के बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस', वंशीधर शुक्ल, रमई काका, मृगेश, द्वारकाप्रसाद मिश्र, त्रिलोचन शास्त्री, विश्वनाथ पाठक, महेशप्रतापनारायण अवस्थी. 'मधुप', आद्याप्रसाद 'उन्मत्त', जुमई खाँ 'आजाद', जगदीश पीयूष आदि-इत्यादि ने अपनी भास्वर अवधी- काव्य-प्रतिभा एवं सृजनकर्म से हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि की है। अवधी-साहित्य एवं संस्कृति के अनेकानेक ऐसे अनन्य आराधक एवं महत्वपूर्ण आयाम अभी विद्यमान हैं, जिनके साहित्य का अध्ययन- अनुशीलन, विवेचन-विश्लेषण, हमारी अपनी परम्परा, रीतिनीति एवं मानवता की जान-पहचान के लिए परम आवश्यक है।

आज की अवधी कविता

डॉ. जनार्दन पाण्डेय

अवधी भाषा अपनी साहित्यिक संपदा एवं अवध-क्षेत्र अपनी सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रख्यात है। यह साहित्य अपने उत्कृष्ट लोकचिन्तन, सांस्कृतिक निरूपण, सामाजिक विशिटता एवं साहित्यिक गरिमा में अद्वितीय है। डॉ. ग्रियर्सन, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, डॉ. बाबूराम सक्सेना, राहुल सांकृत्यायन, डा. रामविलास शर्मा, हरदेव बाहरी, डॉ. भोलानाथ तिवारी प्रभृत विद्वानों ने प्रकृष्ट एवं विद्वत्तापूर्ण गवेषणाओं में यह सुनिश्चित-सुस्थिर किया है कि यह भाषा या तो कोसल महाजनपद की गंणभाषाओं से निकली है या अर्धमाग्धी अपभ्रंश से। अवधी भाषा का इतिहास प्रायः एक सहस्र वर्षों का है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इस भाषा के प्रयोक्ताओं में विद्यापति, रोडा, ज्योतिरीश्वर ठाकुर, दामोदर पंडित आदि परिगणित किये जाते हैं।

अवधी भाषा के आरम्भिक काल का काव्य अनेक तथ्यों के कारण विपुल परिमाण में प्राप्त नहीं है। मध्य युग में पदार्पण के साथ ही अवधी भाषा और साहित्य दोनों अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुए। रामकाव्य, संतकाव्य, प्रेमकाव्य, कृष्णकाव्य आदि धाराओं के अन्तर्गत सृजित साहित्य अद्यतन भी अपना समकक्षी नहीं रखता। हिन्दी साहित्य के सम्पूर्ण परिदृश्य पर अवधी की उपर्युक्त काव्य सम्पदा अपना स्वर्णिम स्थान रखती है। अद्यावधि उसका केन्द्रीय आकर्षण और महिमा अक्षुण्ण बनी हुई है।

रीतिकाल में रीतिकालीन साहित्यिक मानसिकता के साथ अनेक स्तरों पर अनुकूलन स्थापित न हो पाने के कारण तथा भक्त कवियों के द्वारा रचनाधर्मिता की सभी सम्भावनाओं को निःशेष कर दिये जाने के कारण काव्य-सृजन की धारा अपेक्षया मंद गति से प्रवाहित होती परिलक्षित की जा सकती है, किन्तु स्वातन्त्र्य काल में यह मन्द प्रवाह अपनी गतिशीलता में अमन्द हो उठता है। यहाँ पहुँच कर अवधी-काव्य राष्ट्रीयता, सामाजिकता, सांस्कृतिक एकता आदि अनेक महत्वपूर्ण मूल्यों को समेट कर अग्रसर होता है। इसी बिन्दु से अवधी का आधुनिक युग भी प्रारम्भ होता है। इस युग की अवधी वृहत् चतुष्टयी ने (पढ़ीस, बंशीधर शुक्ल, मृगेश, रमई काका) अपने काव्य वैभव और प्रतिभा का जो उत्कृष्ट प्रदर्शन किया वह आधुनिक अवधी के परिदृश्य पर सर्वश्रेष्ठ स्थान का अधिकारी है। इस युग की रचना प्रवृत्तियाँ व्यापक परिवेश में राष्ट्र, समाज, संस्कृति, राजनीति, धर्म आदि से जुड़ी हुई हैं। अवधी कविता का अद्यतन साहित्य परम्परा से प्राप्त प्रवृत्तियों के प्रति सचेष्ट होने के साथ-साथ समसामयिक सन्दर्भों को ग्रहीत रकता हुआ अपनी रचना भूमि विनिर्मित करता है। तब यह सुनिश्चित हो जाता है कि अब रचनाकार का दायित्व और बढ़ गया है, गुरुतर हो गया है। ग्राम्य परिवेश, प्रकृति और संस्कृति को केन्द्रीय रचना-भूमि के रूप में प्रयुक्त करने वाली अवधी भाषा अब अपने युगबोध से सीधे टकराती है और अपनी पूर्व प्रकृति एवं प्रवृत्ति को अक्षत रखते हुए नये आयामों को विकसित करती है। सम्प्रति अवधी-काव्य अपने युगबोध के विविध स्तरों तथा प्रकारों के माध्यम से विकसित करती है। सम्प्रति अवधी-काव्य अपने युगबोध के विविध स्तरों तथा प्रकारों के माध्यम से अभिव्यक्त हो रहा है। समकालीन विसंगतियों और

विकृतियों से लिपटे-सने हुए ग्राम्य-जीवन के विश्वसनीय चित्र अपनी सम्पूर्ण विद्रूपता एवं मलिनता समें अंकित किये जा रहे हैं। इसी के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, विदेशी हस्तक्षेप, विश्वशान्ति, पर्यावरण जैसे बिन्दुओं पर अपनी वैश्विक दृष्टि का परिचय दे रहा है। विश्वनाथ पाठक के शब्दों में समकालीन युगबोध इस प्रकार है -

नाँव लिहया कवने भारत के, जहाँ नायँ बा न्याव।
केसरि अउर कताउर दूनौं, बिकैं बराबर भाव।।
सासन बदलि गये का पाया, कइ कै कौआ-रोर।
तब परदेसी चोर रहे, अब यही देस कै चोर।।
दइकै खूब भरोसा भारी, दिहया देखाय लुआठ।
गलत लिख्या इतिहास देस कै, गलत पढ़ाया पाठ।।

भारतीय अर्थव्यवस्था की मूल, कृषि और किसान, भूमि और उपज दोनों से संत्रस्त हैं। निम्न पद बन्ध प्रमाण स्वरूप उद्धृत हैं -

या धरती उन की नाय, जौन तौलति रुपयन मा धरती।
या धरती उनकी आय, बसै जिनकी साँसन मा धरती।।
x x x
हला.कान बा किसान
ना बिकाय गोहूँ धान
भवा जियरा हमार तौ ठठेर माई जी।
लागा अँधरे के हथवा बटेर माई जी।।

आधुनिकता, विकास और परिवर्तन के नाम पर समाज केवल विकृति और मूल्यहीनता की ओर अग्रसर है। कवि के शब्दों में -

जुग बदलि गवा है कक्कू
सब अपनै रागु अलापै,
कामे काजे मा अब तौ
मेहरी मरदन सँग नाचैं
परिगै है भाँग कुआँ मा।
सब झूमैं दै गरबाँही।।

उत्कोच, भ्रष्टाचार, अन्याय, हिंसा, राजनीति, धर्म, आडम्बर जैसे विषयों पर भी कवियों ने चिन्तन-सृजन किया है। धर्म की विद्रूपता निम्न पदबन्ध में देखिए -

बने बड़े-बड़े मठ
बइठ बड़े-बड़े सठ
देखा धरम नदी के घरियार माई जी।
करैं टटिया के अड़वा सिकार माई जी।।

राजनीति की निकृष्टता, दुरुपयोग और व्यापकता को कवि असविन्द की अनुभूमि निम्न प्रकार से अभिव्यक्त करती है -

वारे राजनीति महरानी।
गजब चौकड़ी भाँजा देबी महिमा गाय न जाय बखानी।
बगुलन के सिर ताज बँधाइव बिचरै भगति बना रजधानी।
तू पानी का दूध बनावा दूध कइ दिहिउ पूरा पानी।
राम कृष्ण तोहरे घेरा मा फँसा परा हैं अवढ़र दानी।
तुहसे थाना आदि प्रभावित करैं दरोगा आनाकानी।
तू असबिन्द वुलिन अस व्यापिउ भिड़ा रहैं ग्यानी-अग्यानी।

ग्रामीण परिवेश से अभिभूत होकर अवधी-भाषा कवियों ने प्रचुर और मनोरम काव्य का सृजन किया है। यहाँ गाँव अपनी सम्पूर्ण तन्मयता, कुरूपता, विपन्नता, मलिनता, सुन्दरता, सरलता, मोहकता के साथ चित्रित हैं। 'सर्वमंगला' में अंकित ग्राम्य जीवन का एक गतिशील बिम्ब से युक्त चित्र देखिए -

जहाँ अंक माँ बँसवारिनि के, बसैं गाँव अउ खेरा।
सीतल छाँव करै अमराई, फरै दुवारे केरा।।
पेड़े चढ़े जहाँ पै नेनुवाँ, बेढ़े चढ़ै करइला।
छप्पर लदे जहाँ लउकिनि से, कोहँड़न से खपरइला।।
सरसइया कै साग कोंछ माँ, लिहे गेद का कनियाँ।
परदेसी कै पन्थ निहारैं, जहाँ लजाधुरि धनियाँ।।
जहाँ घुरुरघुर कछरी बोलै, धेनु-भइँसि के गारे।
दूध भरे मुँहे से लेरुवन कै, लारि चुवै भिनसारे।।
जहाँ फाँक दइकै घूघुट माँ, लखै कंत का जोरू।
जहाँ मुँहे माँ पैरा भरि के, चलै खात के गोरू।।
लटि उजराय जहाँ धनियन कै, भोरे धूरि बहारे।
समथर भुइँ पै छापि उठै, कुचरा कै चीन्ह दुआरे।।
जहाँ सजैं पोढ़न पोढ़न पै, काजर दइकै गन्ना।
आड़े कान उठाये ताकें, लीलगाह चौकन्ना।।

ग्राम्य जीवन का एक और मोहक स्वरूप भी है और सहज आकर्षण भी। 'भ्रमर' का निम्न बन्ध इसी की एक झाँकी प्रस्तुत करता है -

आई जाड़ा केरी राति, पछुवा थमि-थमि कै लहराति,
ख्यातन हँसति उजेरिया, बनिगै बरछि बयरिया,
जियरा डोलि-डोलि जाय।
सर-सर-सर-सर झोंका लागै, अइसि चलै पुरवइया,
तनहूँ डोलत मनहूँ डोलत डोलति लोग-लुगइया,
गावैं, सरिया पियरिया,
मनुवाँ, लेत लहरिया,
जियरा डोलि-डोलि जाय।
साँझ भइ अरु जमा भये सब, मुखिया अउर महतिया
सब मिलिकै यक राय मिलाइनि होन चहै यकु रसिया,
रसिया, रसिया सुनावैं

गोरिया, कँगना बजावैं
जियरा डोलि-डोलि जाय।
छुइ-छुइ जाइ करेजन छिन-छिन दखिनै केरि बयरिया,
ख्यातन जागैं राति किसनऊ, अँगना बीच पियरिया,
पुतरिन, पिया का बसावैं
गोरिया, मनु समझावैं,
जियरा डोलि-डोलि जाय।

विकासशीलता के नाम पर गाँव किसी के लिए तीर्थ हैं, किसी के लिए नरक हैं तो किसी की अनुभूति में अब पहले वाले गाँव रह ही नहीं गये। नयी रोशनी और छुटभैये नेता इनके गाँवों में प्रवेश पा चुके हैं जो ठीक नहीं हैं। कुछ पंक्तियाँ प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत हैं -

गउना होइगा नेतवन ताँई चारो धाम माई जी।
चुगुली चाँई जीना गाँव म हराम माई जी।।
x x x
बूझ मोरा का नाँउ रे।
नरक किनारे गाँउ रे।।
कुतवा झाँकरि मोरे अँगना।
भेड़हा ढूढ़ति दाँउ रे।।
x x x
सहरन ते जुड़िगा है, हमरे गाँव क्यार गलियारा।
नयी रोसनी आय रही, सब गावैं लिहे चिकारा।।
पलिहे जमीदार के चंगुल
मा सब रहैं फँसे
अब छोटभैया ढइ नेता
सब गावैम आय बसे
जाल रचैं स्वास्थ्य की खातिर
इतने विधिनौ हारा।।

केन्द्रीय सत्ता को लक्ष्य बनाते हुए राजनीतिक दृष्टि से रचा गया जगदीश पीयूष का यह गीत भी सर्वथा सामयिक हैं -

कुछ टटोला हस्तिनापुर।
आँख खोला हस्तिनापुर।
लड़ि गवा ईराक अमरीका हुवाँ पर।
तू हियाँ से कुछ तौ बोला हस्तिनापुर।।
यहि तना समझे न कवहूँ।
तोहका लोला हस्तिनापुर।।

अवधी का अद्यतन रचनाकार अपने दायित्व बोध में सजग है। अपने परिवेश, संस्कृति और समाज में व्याप्त अनेक मार्मिक तथा ज्वलंत समस्याओं पर भी उसकी सजग दृष्टि है। अलग-अलग गीतों से लिए गये तीन पद बन्ध उक्त कथन की पुष्टि के लिए पर्याप्त होंगे -

तुमरे अँचरा का महकउबै, अम्मा कोखि मा मारेउ ना।
तुमरे कुल का नाउँ बढ़उबै, बाबू कोखि म मारेउ ना।।
x x x
सोने कै दियना मा चमकै अजोधिया, सीता कै कुटिया अकेला हो।
माटी के दियना ते लवकुस ख्यालैं, बाती और जोती का खेला हो।।
x x x
बदरा ब्यालै अम्बर ते, धरती ते दूब कहै।
जियरा भीतर केतना पानी, केतनी अगिनि रहै।।

अवधी कविता का आज का साहित्य अपनी भावानुभूति के चित्रण में जितना सफल और समृद्ध है उतना ही उसका अभिव्यक्ति पक्ष भी आकर्षक और उत्कृष्ट है। इसमें रस, अलंकृति, छन्दोविधान, शब्दविधान, काव्य-भाषा आदि का कलात्मक उत्कर्ष सहज संलक्षित होता है। कुछ गीतों से चयनित पद बन्धों के माध्यम से उपर्युक्त काव्य तत्वों का मनोरम प्रकर्ष द्रष्टव्य है -

गोरी की सुरतिया से छिअकै चँदनियाँ,
अँगना मँ झरत उजेर।
मथवा चमकि रही मगन टिकुलिया,
रतियाँ मँ होत सबेर।।
हरी-हरी घँघरी औ पियरी चुँदरिया,
सरसौं रही फुलियाय।
अँगिया मँ बिहँसत गेंदवा-गुलबवा,
ओंठवा से कमल लजाय।।
हथवा मेहँदिया और उपली मेहाउर,
लिहे भोरहरिया कै रंग।
कनिया मँ किलकत सुकवा नखत जस,
दुनिया निरखि भई दंग।।
x x x
सूखि गवा है सावन दउआ
फिरि
बरखा के दिन आये हैं।
आँखिन मा सैलाब भरा है
पाहुन...
जस दुरदिन आये हैं।।
होय केतनेउ बिकट अँधेरु
जोति कै गीत जगाइब हो।
जी लड़िहैं हक कै लड़ाई
उनकी महिमा गाइब हो।

जगदीश पीयूष समकालीन अवधी परिदृश्य में एक 'रचनात्मक' आन्दोलन के रूप में प्रतिष्ठित हैं। अवधी की त्रिशक्ति (पढ़ीस, बंशीधर और रमई काका) की सक्रियताएँ क्षीण होने के साथ अवधी के सरोकार भी बदलने लगे थे। लेखन और समाज दोनों में एक वास्तविक आन्दोलन की आवश्यकता थी।

अपनी अद्भुत संगठनात्मक योग्यता के चलते जगदीश पीयूष ने राजनेता, चिन्तक, सर्जक, राजपुरुष, उद्योगपति, पत्रकार और अन्य क्षेत्र के लोगों को अवधी के हित से जोड़ दिया। यह अवधी के इतिहास में पहली बार हुआ था। यदि अतिशयोक्ति न मानी जाय तो सच्चाई यह है कि 'सरस्वती' और 'सारिका' पत्रिकाओं के माध्यम से जो युगान्तर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा कमलेश्वर ने किया था, अवधी में 'बोली-बानी' पत्रिका के द्वारा पीयूष ऐसा ही ऐतिहासिक कार्य कर रहे हैं। संगठनकर्ता, सम्पादक एवं आयोजक से इतर जगदीश पीयूष का एक अन्य व्यक्तित्व है जो उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त होता है। 'अवधी त्रिधारा' में इनके 25 नवगीत इस बात का प्रमाण हैं कि वे जीवन के किन आवश्यक संदर्भों से मुठभेड़ करते रहते हैं। राजनीतिक परिदृश्य पर इनके जैसी पैनी दृष्टि कम कवियों की मिलती है। यह उदाहरण के माध्यम से दृष्टव्य है :

कुर्ता खादी का चौचक।
ताकैं खादी जी भौचक।।
होइगे घरे घरे नेतवे दलाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।।
चाटैं राजनीति कै चाट।
रोजै बदलैं धोबी घाट।।
धक्का मुक्की होइगा देसवा धमाल माई जी।
करैं धीरे धीरे हमका हलाल माई जी।।
चारिउ ओरी मारा-मारी।
जेका देखा ठेकेदारी।।
होइगे मन्त्री जी के पूत मालामाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।।
अफसर होइगे बेईमान।
नौकर चाकर भरे गुमान।।
वोटवा होइगा हमरी जान क बवाल माई जी।
करैं धीरे धीरे हमका हलाल माई जी।।

ग्रामीण व्यवस्था से लेकर राष्ट्र व्यवस्था तक, सामाजिक संस्कृति से लेकर राष्ट्रीय संस्कृति तक कितने स्तरों पर विसंगति एवं गिरावट आई है, कवि से यह छुपा नहीं है, इसकी ओर दृष्टि डालकर न तो सुख-शान्ति की आशा ही बंधती है और न ही निश्चिंत-सन्तुष्ट हुआ जा सकता है। अग्रिम पंक्तियों में उद्धृत गीत अनेक अर्थ स्तरों पर खुलता चलता है :

बरैं अंधरूँ पड़उनू चबायँ माई जी।
पइसा आवा सरकारी।
पुला बनै कै तयारी।।
होय हेरा-फेरी जाने ना खोदाय माई जी।।
आई एमेले कै निधि।
खाइ लेई कउनी बिधि।।
गवा अपनौ निमरुआ मोटाय माई जी।।
होय अन्न कै खरीद।

घाल मेल कै रसीद।।
मिलि बाँटि-बाँटि खाँय डेकराय माई जी।।
आवे जब जब धन।
बनि जाय करधन।।
गोरी पतली कमरिया पिराय माई जी।।

जनसेवी संस्थाओं में सक्रिय होने एवं ग्रामीण जीवन व्यवस्था तथा नगरीय जीवन पद्धति से समान रूपेण परिचित होने के कारण सुशील सिद्धार्थ 'अवधी कविता' में एक कल्पान्तर लेकर उपस्थित हुए। 1997 में उनकी अवधी कविताओं का पहला संग्रह 'बागन-बागन कहै चिरैया' प्रकाशित हुआ। इस कृति को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा 'जायसी नामित पुरस्कार' से अलंकृत किया गया। इसकी भूमिका में सुशील सिद्धार्थ लिखते हैं- 'मुझे यह भी महसूस हुआ कि न जाने कि कारणों से अवधी साहित्य में सामाजिक परिवर्तन या सामाजिक संघर्ष उचित तरीके से दर्ज नहीं हो पा रहा है। .....जरूरत है अवधी भाषा की रचनात्मक प्रासंगिकता को आलोक में खड़ा करने की।' 2003 में प्रकाशित दूसरे कविता संग्रह 'एका' की भूमिका के ये वाक्य फिर इसी संकल्प को रेखांकित करते हैं, 'प्रायः अवधी अवध समेत संपूर्ण भारत में जो कुछ घट रहा है, सबकी अनुगूँज और अभिव्यक्ति अवधी में होनी चाहिए। अवधी कविता सामाजिक अव्यवस्था, राजनीतिक कदाचार, साम्प्रदायिकता, पाखण्ड, स्वतन्त्रता विमर्श, बाजारवाद, विद्रोह, प्रेम, प्रतिरोध, संबंध और नागरिक गरिमा को केन्द्र में रखते हैं। 'अवधी त्रिधारा' में सुशील सिद्धार्थ के 25 नवगीत संकलित हैं। इन्हें पढ़ते हुए निराला की यह प्रसिद्ध पंक्ति कौंध जाती है : 'नवगति नवलय ताल छंद नव'।

सुशील सिद्धार्थ के नवगीत अवधी में नवगीत के शिल्पी हैं। डॉ. सुशील सिद्धार्थ अवधी के अच्छे प्रगतिवादी रचनाकार हैं। जनवाद में उनकी पूरी आस्था है। भाषा और भावभूमि दोनों क्षेत्रों में उन्होंने जनवादी चरित्र की पहचान बनाई है। उन्होंने सामाजिक तथा राजनीतिक विसंगतियों की जो धज्जियाँ उड़ाई हैं, वे स्तुत्य हैं। पूँजीवाद पर उनके करारे व्यंग्य और धारदार तेवर देखने योग्य हैं। उनका नवयुवक कवि समझ रहा है कि अभी केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है, परन्तु आर्थिक स्वराज्य का युद्ध शेष है। अतः उसे लड़ा जाना है। 'जोति कै गीत' में वे अपना संकल्प व्यक्त करते हैं :

होय केतनेउ बिकट अँधेरु
जोति कै गीत जगाइब हो।
जी लड़िहैं हक कै लड़ाई
उनकी महिमा गाइब हो।

सुशील सिद्धार्थ के एक जनगीत के बहाने कर्मठ साथी कामरेड डॉ. बृजबिहारी कहते हैं, 'सुशील सिद्धार्थ की कविताएँ हिन्दी कविता के प्रचलित चौखटे के भीतर सीमित रहने वाली कविताएँ नहीं हैं। न तो बयान के लिहाज से, न ही अंदाजे बयाँ के लिहाज से। गाँवों के समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति से जनता कितनी उत्पीड़ित है और उत्पीड़न के खिलाफ प्रतिनाद की धारा कितनी बलवती है, जनता के गाँव के जनप्रतिनिधि का अपना सरोकार क्या है और वह किस भूमिका में खड़ा है--जनता को संबोधित प्रधान के वर्ग चरित्र को स्पष्ट करती सुशील की यह कविता गाँवों में एक बड़े सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक बदलाव का हथियार बन रही है। यहाँ डॉ. बृजबिहारी जिस कविता की ओर संकेत कर रहे हैं, उसकी कुछ पंक्तियाँ उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत हैं :

मनहेम नाचि रहे परधान।
पाँच सालु बदि फिरि मिलिगा है लूटै का बरदान।।
गाँव गवा अइसी तइसी मा ख्यालै सार कबड्डी,
यहिकी खातिनि मेहनति कै को टूरे आपनि हड्डी।
पहिलि योजना के रुपयन ते पक्का बनी मकान।।
जौनु देखाई गुर्रे डब्बे वहिकी पकरब नट्टी,
बीडीओ बनि जाई चूतिया अइसि पढ़ाउब पट्टी।
जइसी चाहब वइसी उलरब भवा साफु मैदान।।
मउज उड़इहैं आपन मनई बाकी बंडा छ्वालैं,
किनकी छातिम बार जमे जी हमरे आगे ब्वालैं।
वाटर लिस्ट ते नाउँ निकारब बनिहैं जी सैतान।।
थाना चउकी तहसीली का दुनहू हाथन साधब,
इनमा जी जी भौंकति हैं हम सबका हिस्सा बाँधब।
दारू मुर्गा रिसवति तेने होइहै जन कल्यान।।

सुशील सिद्धार्थ का 'एका' और 'जोति कै गीत' जन स्वाभिमान को पूरी ऊर्जा के साथ शब्दबद्ध करता है। नैतिकता और साहस की अनुगूँज 'औरु का' की इन पंक्तियों में सुनी जा सकती है :

पाखु अंधियारु जब राह का खाइ गा,
एकु बौंड़रु हजारन जुलुम ढाइ गा।
तब दिया जइस जिन्दा रहेन, औरु का।।

अपनी व्यापक जीवन दृष्टि, जन-प्रतिबद्धता, राजनीतिक विवेक तथा रचनात्मक क्षमता के कारण सुशील सिद्धार्थ यदि 'अवधी के नागार्जुन' के रूप में सर्वसमादृत हों, तो आश्चर्य न होगा।

भारतेन्दु मिश्र संस्कृत, हिन्दी और अवधी के उन अत्यल्प रचनाकारों में सम्मिलित हैं जो परम्परा व समकालीनता का स्वर्ण संयोग संभव करते हैं। उनके विषय में डॉ. सुशील सिद्धार्थ का कथन है, 'पढ़ीस-बंशीधर-रमई काका-मृगेश-विश्वनाथ पाठक जैसे उत्कृष्ट रचनाकारों के गोत्र में भारतेन्दु मिश्र की उपस्थिति अवधी अनुरागियों को आनंद से भर देती है। उनकी रचनाएँ उनकी दूब सरीखी अवस्था को प्रमाणित करती हैं। यह भी बताती हैं कि निरंतर अर्थ खोते शब्दों को जीवन्त करने के लिए मातृभाषा से संवाद करना होगा।' भारतेन्दु विविध विधाओं में विदग्ध अवधी रचनाकार हैं। अवधी त्रिधारा में उनके 25 गीत संकलित हैं। भारतेन्दु मिश्र जिन शैलियों में अपना वैशिष्ट्य प्रकट करते हैं, वे हैं :

1. नवगीत, 2. गज़ल, 3. दोहा, 4. मुक्तक, 5. ललाम लेख (गद्य)

अपनी गज़लों में भारतेन्दु सामाजिक विसंगतियों पर कटाक्ष करते हैं। उनकी एक गज़ल उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है :

याक चिरिया कहूँ ते आई है।
जी के हाथेम दियासलाई है।।
पैनि छुरिया कसे कमर मा है।
हाथ मा नोट है मिठाई है।।
जलि रहीं महजिदैं, कहूँ मन्दिर।
मुरदनी गाँव भरे म छाई है।।

'कस परजवटि बिसारी' कविता वंचित वर्ग की अद्‌भुत आत्मकथा है। आज भी प्रजाभाव को ढोने पर विवश स्वतन्त्र नागरिक की विडम्बना समझी जा सकती है। यह नागरिक कहता है :

आपनि लरिकाई
चारि-चारि दिन
भूँखन मा काटा है
सौ रुपया का कर्जु रहै
हमरे दादा पर
दस सालन मा
तउनु कर्जु हमहे पाटा है।

भारतेन्दु ने अवधी में 'ललित निबंध' का प्रवर्तन किया है। अवधी गद्य को समृद्ध करने की दिशा में यह ठोस कार्य है। भारतेन्दु का अवधी गद्य अत्यन्त रचनात्मक, विचारात्मक और अभिव्यंजनात्मक है। भारतेन्दु अवधी नवगीत के पुरस्कर्ता हैं। सामाजिक आडम्बर का ध्वंस उनका मूल सरोकार है। गाँव के बदलते रूप पर भारतेन्दु की गहन दृष्टि है। इन निष्कर्षों को भारतेन्दु के गीतांश में उदाहरण स्वरूप देखा जा सकता है :

सहरन ते जुड़िगा है
हमरे गाँव क्यार गलियारा।
नयी रोसनी आय रही
सब गावैं लिहे चिकारा।।
पहिले जमींदार के चंगुल
मा सब रहैं फँसे
अब छोट भैया ठग नेता
सब गाँवैय आय बसे।
जाल रचैं स्वारथ की खातिर
इनते बिधिनौ हारा।।

भारतेन्दु के नवगीत जिन बिन्दुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं वे है- पश्चिमी सभ्यता का अनुचित आतंक, गाँव की त्रासदी, कंगाली, भ्रष्टाचार, पाखण्डी व्यक्ति, किसान-मजदूर की गरीबी, ग्राम प्रधानों की जमींदारी, क्रूर नौकरशाही, हिंसक राजनीति, विलुप्त होता सुख, परम्परा के मिटते सन्दर्भ, श्रम की संस्कृति, ऋतुचक्र प्रेम, विकास की विसंगति, आत्मवेदना, मिटती आत्मीयता, प्रवास की पीड़ा, गाँव की स्मृतियाँ, वृद्धों का संकट, रुपया की तानाशाही, बेरोजगारी, दिग्भ्रमित युवा, जनसंख्या, आर्थिक विसंगतियाँ, आजादी की असलियत और सामाजिक सदाचार। इसे कवि की बिम्बविधायिनी भाषा के निम्न उदाहरण में देखा जा सकता है :

फारि फारि खाती हैं,
द्‌यांह अब बरइया।
सहरन लँग भाजि रहीं,
गाँव कै चिरइया।।
गिद्ध बड़े ब्याढब हैं,
रोजु नये करतब हैं।

पखनन लौ का न कोउ
हैं हियां हेरइया।।

अवधी साहित्य के सुविस्तृत परिदृश्य पर अद्यतन काव्य-साहित्य अपनी नूतनता, चेतनता, गतिमयता एवं सटीक युगबोध की दृष्टि से सर्वाशतः समृद्ध है। निष्कर्ष के अन्तिम बिन्दु पर पहुँचकर यह कहे बिना नहीं रहा जाता कि रचनाकारों ने ऋणात्मक पक्षों का चित्रण ही अधिक किया है जबकि वास्तव में ऐसा है नहीं। प्रायः सभी क्षेत्रों में राष्ट्र विकासशील दिखाई देता है। कवियों को इस विकास का भी रेखांकन करना चाहिए, जिससे कि पाठक अथवा श्रोता की एक तरह की सुखानुभूति हो सके। आशा की एक किरण बँध सके। अस्तु, अद्यतन युगबोध अपनी प्रकृति और चेतना में श्लाघ्य है।

अवधी कविता की अद्यतन प्रवृत्तियों को समकालीन रचनाकारों ने उसकी सम्पूर्ण वस्तु चेतना में अनुभूत करते हुए रूपायित किया है। अतीत से लेकर अद्यावधि तक सृजित अवधी साहित्य अपनी गरिमा-महिमा एवं परिमाण में अतुलनीय है। सम्प्रति अनेक मूर्धन्य मनीषी, प्रतिभावान रचनाकार, प्रखर आलोचक, कुशल सम्पादक अवधी भाषा और साहित्य को उसकी सम्पूर्णता के साथ पुनर्प्रतिष्ठित करने मे बड़ी निष्ठा, लगन, तन्मयता एवं प्राणपण से लगे हुए हैं। अवधी का सौभाग्य और भविष्य आज उन्हीं के हाथों से सुरक्षित भी है और आशान्वित भी।

प्रमुख आधुनिक अवधी कवि

बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस'

डॉ. जनार्दन पाण्डेय

पढ़ीस जी आधुनिक अवधी काव्य के सबसे पुराने और जाने-माने रचनाकार रहे हैं। जनजीवन की गहरी अनुभूति इनके काव्य में देखी जा सकती है। अवधी काव्य की जो धारा आधुनिकता की चकाचौंध में सूखने लगी थी, उसे प्रतिभाशाली कवि-लेखक पढ़ीस ने नवीन धरातल तथा नया स्तर प्रदान किया। पढ़ीस जी का जन्म सीतापुर के अम्बरपुर ग्राम में 1898 ई. को हुआ था। इनके पिता का नाम कृष्णकुमार दीक्षित और माता का नाम यशोदा था। इन्होंने हाईस्कूल की परीक्षा 1920 ई. में उत्तीर्ण कर काल्विन कालेज में पढ़ने के लिए भर्ती हुए, किन्तु 6 महीने बाद ही पढ़ाई छूट गई। पढ़ीस जी का प्रथम काव्य संग्रह 1933 ई. में प्रकाशित हुआ, जिसे उन्होंने कुँवर दिवाकर सिंह को सौंप दिया।

पढ़ीस जी क्रान्तिकारी और प्रगतिशील विचारधारा के व्यक्ति थे। उन्होंने रूढ़ियों को तोड़ने के लिए स्वयं हल चलाया। 27 जून 1942 ई. को हल की नुकीली फाल पढ़ीस जी के पैर में चुभ गयी, जिससे उन्हें 'टिटनेस' हो गया और 14 जुलाई 1942 ई. को उनका देहावसान हो गया।

पढ़ीस जी मूलतः किसान थे। ग्रामीण व्यवस्था की प्रत्येक स्थिति को वे अच्छी तरह जानते थे। यही कारण है कि उनके काव्य में जहाँ खेती को समस्या, गरीबी की समस्या तथा संघर्षमूलक जीवन-यापन की समस्या मिलती है, वहीं लेखपाल, दरोगा, महाजन के क्रूर अत्याचारो का चित्रण भी दिखाई देता है।

पढ़ीस जी का साहित्य विषय-वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से वैविध्यपूर्ण है। इनकी रचनाएँ युगीन विचारधाराओं से बोझिल, समाज सुधार, देश प्रेम, प्रकृति प्रेम, एवं अवध संस्कृति की परिचायक हैं। पढ़ीस जी भारतीय समाज के दृष्ट ही नहीं वरन् एक उन्मुक्त एवं सुदृढ़ समाज के स्रष्टा भी थे। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों को बहुत निकट से झाँक कर देखा था। इसीलिए बहुविवाह, वृद्धविवाह, जातीय मिथ्यादम्भ, भ्रष्टाचार एवं पाखण्डवाद का डटकर विरोध किया था। कवि ने अपने यह उद्‌गार 'चकल्लस' नामक काव्य संकलन में 'हम कनउजिया बाँभन आहिन' नामक शीर्षक कविता में व्यक्त किए हैं। इसमें कवि कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के थोथेपन की तीखी आलोचना करता हुआ कहता है--

मरजाद पूरि बीसिउ बिसुआ, हम कनउजिया बाँभन आहिन,
दुलहिनी तीनि, लरिका त्यारह, सब भिच्छा भवन ते पेटु भरइं,
बिटिया बइठी बत्तिस की पोती वर्ष अठारह की झलकी,
चउथेपन चउथ बिहाये के, बिहकरा बइठ घर का घेरे,
वह स्वारह की कचनारु-अइसि, हम सत्तरि के मुंह बाइ रहेन।

कवि पश्चिमी शिक्षा का विरोधी नहीं, अपितु उसके अन्धानुकरण का विरोधी है। पढ़ीस जी ने इस विडम्बना को अपनी 'छीछाल्यादरि' नामक कविता में व्यक्त किया है। पाश्चात्य संस्कृति से अभिभूत

एक भारतीय पति का ग्रामीण संस्कृति में पती अपनी पत्नी के प्रति कैसा व्यवहार होता है, इसका उदाहरण 'चकल्लस' की निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत है--

तुम घूरि घूरि हमका द्याखउ, यह छीछाल्यादरि द्याखउ तउ।
हम तुमका द्याखति धरि खाई, यह छीछाल्यादरि द्याखउ तउ।।
x x x
तुम लहँगा लखतइ लाल परउ, लम्बे लटकनि की कउनि कही।
x x x
हम सूट बूट ते जरि जाई, यह छीछाल्यादरि द्याखउ तउ।

'सोभानाली' शीर्षक कविता में परिवार की आन्तरिक समस्याओं पर कवि ने बेजोड़ व्यंग्य प्रस्तुत किया है। वर्णन में इतनी सजीवता है कि चित्रात्मकता का सहज बोध होने लगता है--

लरिकउनू आये दफ्तर से दुलहिनी अंग्रेजी बूँकि चलीं।
घर बार गिरिहती चौपट कइ, दुलहिनी अंग्रेजी बूँकि चलीं।।
पीठी पइ गठरी पोथिन की, दुइ चार रजहटर काँधे पै।
कढ़िलति कचरति घर का पहुँचे, दुलहिनी अंग्रेजी बूँकि चलीं।।
वाठन माँ लाली, मुहिमाँ पउडर, मुल देंही तौ हयि पियरि पियिरि।
ब्वालयि माँ ड्वालहीं डगर मगर, दुलहिनी अंग्रेजी बूँकि चलीं।।

कवि का मन प्रकृति सम्बन्धी रचनाओं में खूब रमा है। डॉ. रामविलास शर्मा ने इनके प्रकृति-चित्रण पर टिप्पणी करते हुए लिखा है 'प्रकृति वर्णन में वह ताजगी है जो अवध की घनी अमराइयों में पपीहे और कोयल की बोली में होती है और पिंजरे में बन्द मैना की बोली में सुलभ नहीं होती। उनकी कविताओ में वही आनन्द है जो खेत खलिहानों में घूमने वाले को खुली हवा में घूमने से प्राप्त होता है।' 'वर्न्स' की तरह पढ़ीस जी ने प्रतिदिन की घटनाओं पर कविताएँ लिखी हैं। 'चकल्लस' कविता में प्रकृति चित्रण का आकर्षक संयोजन उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है--

परमाती हँसि पलास के बन का धीरे-धीरे,
लाली-लाली अँगुरिन ते गुदगुदी छुटायि जगायि रही।
बिन पाटिन के छिपुलन पर टेसू फूल झूलयिं,
का परिलय की फउजयि हांथन पर अँगार नचायि रहीं?

कविवर पढ़ीस का मूल उद्देश्य काव्य सौन्दर्यीकरण न होकर तत्कालीन सामाजिक दुर्व्यवस्था के स्वर को मुखरित कर सुधार लाना था, फिर भी अनायास ही अनुप्रास, उपमा, पुनरुक्तिप्रकाश, रूपक, उत्प्रेक्षा, मानवीकरण, आदि अलंकारों और शृंगार, वीर, करुण आदि रसों का सुन्दर परिपाक करते हुए, सुन्दर बिम्ब विधान का निर्वाह किया है। इनके सम्पूर्ण काव्य में प्रसाद गुण की प्रधानता है, किन्तु कतिपय स्थानों पर ओजगुण की अवत.रणा भी अत्यन्त उत्कृष्ट ढंग से हुई है। यहाँ प्रसंगवश कतिपय उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं--

रूपक अलंकार : *सब नंगी देहीं पर पियार का जामा पहिंदे*
कंगलन बीच प्रेम माया की अगणित गठरी बाँधि-बाँधि
चरवाहु चला बंसीवाला।।

(चकल्लस)

श्रृंगार रस : *दुलहा के मूँड़े पर गठरी वह पाछे-पाछे,*
चली जायि सुखु झुलुवा झूलति स्वामी नाथ झुलायि रहे।
वह वहिके मन मा पइठि रही उइ नस-नस व्यापा,
घसियारे के सुख पर देउता ल्यलकि-ल्यलकि ललचायि रहे।
घसियारिन घर का जायि रही। (चकल्लस)

बिम्ब विधान एवं अलंकारिक चित्रण--

उजले उजले बगुलन की पाँती उड़ति हयि,
सीधी, तिरछी, उलटी टेढ़ी-मेढ़ी बनि कयि,
का स्याम समुंदर की छाती पर बहती हयि,
पतरी-पतरी सुन्दर यी दूधे को धारयि? (चकल्लस)

अस्तु निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कविवर पढ़ीस अवधी शब्द-कोश के कुशल शिल्पी एवं उत्कृष्ट पारखी थे। इनका सम्पूर्ण काव्य मानव मूल्यों की उपादेयता पर आधारित सत्यम् शिवम् सुन्दरम् का प्रतीक है।

वंशीधर शुक्ल : व्यक्ति एवं रचनाकार

डॉ. रमेशचन्द्र त्रिपाठी

पंडित वंशीधर शुक्ल आधुनिक अवधी के मूर्द्धन्य कवि हैं। उन्होंने वैसे तो खड़ीबोली, ब्रज तथा अनेक विभाषाओं में काव्य की सृष्टि की है, परन्तु उनका हृदय अवधी में ही मुखर हुआ है। अवधी भाषा की अन्तःप्रकृति से वे खूब परिचित थे जिसके कारण वहाँ के प्रकृति-परिवेश, वहाँ की लोक-संस्कृति एवं वहाँ के जीवन-संभार को उन्होंने अपने काव्य में समर्थ रूपवत्ता प्रदान की है। वस्तुतः शुक्ल जी लोककवि होते हुए भी लोककाव्य तथा परिनिष्ठित काव्य के समन्वय-सेतु थे। आधुनिक अवधी भाषा और साहित्य को उन्होंने अपनी वाग्विभूति द्वारा उच्च बना दिया। आधुनिक अवधी की साहित्यिक श्रीवृद्धि में शुक्ल जी का योगदान ऐतिहासिक भूमिका का निर्वाह करता है।

शुक्ल जी का जन्म संवत् 1961 में वसंत-पंचमी की पावन तिथि पर हुआ था। वसंत-पंचमी के दिन जन्म होने के कारण उन्हें 'अवधी काव्य का निराला' भी कहा जाता है। पिता पं. छेदीलाल शुक्ल का निवास-स्थान जिला उन्नाव के ग्राम-बीघापुर में था; परन्तु बाद में वे लखीमपुर जिले के मन्यौरा ग्राम के निवासी हुए। शुक्ल जी का जन्मस्थल यही ग्राम है। वे सारस्वत ब्राह्मण थे। बाल्यावस्था में चेचक तथा गृहकलक से अत्यधिक पीड़ित होने के कारण शिक्षा-दीक्षा का उचित प्रबन्ध न हो सका। 15 वर्ष की अवस्था में ही पिता का स्वर्गवास हा गया।' आरम्भ में कुछ उर्दू का अध्ययन करके बाद में संस्कृत-प्रथमा की परीक्षा उत्तीर्ण की। जीविकोपार्जन के लिए उन्होंने किताब की दुकान खोली, जिसके परिणामस्वरूप साहित्यिक अभिरुचि उत्पन्न हुई। बाद में अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी के सम्पर्क में आए और उनसे प्रेरणा प्राप्त करके 1921 से राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय भूमिका अदा करने लगे। नमक, जंगल तथा झंडा-सत्याग्रह में उन्होंने बड़ी तत्परता से भाग लिया। शुक्ल जी ने कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में 'किसान की अर्जी' नामक कविता पढ़ी थी। उसे सुनकर अधिवेशन के अध्यक्ष पं. जवाहरलाल नेहरू रो पड़े थे।

शुक्ल जी को काव्य सुनाने की अद्‌भुत कला अभिज्ञात थी। मैं जब एम.ए. (सन् 1977) का छात्र था, तब विभाग में मुझे उनके मुखारविन्द से कविताओं के श्रवण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे अपनी कविताओं में जितने ग्रामीण थे, उतने ही बाह्य व्यक्तित्व से भी ग्रामीण थे। उनमें अन्तर-बाह्य व्यक्तित्व का अद्‌भुत समन्वय था। ये अवधी किसान की साक्षात् मूर्ति थे।

शुक्ल जी प्रतिभासम्पन्न कवि थे। उन्होंने सर्वप्रथम 50 छन्दों में 'आल्हा-सुमिरिनी' कृति का सृजन किया। उसके पश्चात् उन्होंने 'कृषक-मिलाप', 'बेटी-बेचन', 'युगल-चण्डालिका', 'मेलाघुमनी', 'कुकड़ कूँ', 'राष्ट्रीयगान' आदि कृतियों की रचना की। नौकरी करते समय उन्होंने 'अब ग्राम सुधार करो पुतवा' और 'अब दुनिया बदल गयी' नामक रचनाएँ प्रस्तुत कीं। स्वतंत्रता प्राप्त होने के पश्चात् उनकी प्रमुख काव्य-कृतियाँ हैं : 1. पंतपुराण, 2. नेहरू सावधान, 3. कमला-आख्यान, 4. गुप्ता-भाषण, 5. कांग्रेस

की कुकड़ूँ कूँ, 6. कांगेस सरकार स्वाहा, 7. नसबंदी बंद करो, आदि। शुक्ल जी ने राजनीति-प्रेरित रचनाओं के अतिरिक्त सैकड़ों साहित्यिक कविताओं का भी सृजन किया; परन्तु वे अभी तक अप्रकाशित हैं। उन्होंने 'स्वतंत्रता-संग्राम', 'मजदूर', 'दहेज', 'श्रीकृष्णचरित्र' प्रभृति ध्वनि-नाटकों को भी सृष्टि की है।

शुक्ल जी की प्रारम्भिक कृतियों–'खूनी परचा', 'दिल्ली षड्यंत्र', 'किसान की अर्जी' आदि में राजनीतिक-राष्ट्रीय विचारधारा दिखाई पड़ती है। इन कविताओं के पश्चात् उन्होंने अवध की ग्राम-मूर्ति का हृदयहारी सृजन किया। अवधी भाषा में लिखी गयी उनकी कविताओं का मुख्य विषय ग्रामीण परिवेश ही रहता था। उनके काव्य में अवध के ग्रामीण क्षेत्र तथा लोक-संस्कृति का मनमोहक और यथार्थ चित्रण मिलता है। वे जहाँ ग्रामीण परिवेश के सिद्धहस्त चित्रकार हैं, वहीं उनकी कविताओं में विद्रोहात्मकता के तत्त्व भी मिलते हैं। शुक्ल जी 'किसान कांग्रेस' नामक संस्था के अध्यक्ष तथा उत्तर प्रदेश विधान सभा के विधायक भी थे। किन्तु क्रांतिकारी व्यक्तित्व के कारण वे कांग्रेस छोड़कर सोशलिस्ट हुए और फिर लोकदल में शामिल हुए। शुक्ल जी ने आपातृकाल में परिवार-नियोजन का डटकर विरोध किया जिसके कारण उन्हें दो महीने की सजा भी भुगतनी पड़ी।

शुक्ल जी ने अपनी कविताओं में ग्राम्य प्रकृति-सौन्दर्य, किसान-जीवनयापन, ग्रामीणों की वास्तविक स्थिति, सामन्तवादी व्यवस्था, किसानों की निर्धनता, राज्य कर्मचारियों के अत्याचार, लोकसंस्कृति एवं उत्सवों तथा पर्वों का तो मार्मिक चित्रण किया ही है, साथ ही साथ राष्ट्रीय जागरण और उच्चस्तरीय हास्य-व्यंग्य का भी मनोहारी वर्णन किया है।

शुक्ल जी का जीवनयापन ग्रामीण वातावरण में हुआ, इसलिए वे वहाँ के नैसर्गिक सौन्दर्य आदि से अधिक प्रभावित हुए। इन्हीं प्रभावों को उन्होंने अपनी कविताओं में बड़ी ही भावुकतापूर्ण स्थिति में वर्णित किया है :

कहूँ-कहूँ बाँसन का झुरमुट नागफनी चौधारा।
मूजा, बेलझर, काँट-करौंदा रूँधि रहे गलियारा।।
जहाँ वसन्त चुवावै महुआ, जेठु तपै, जलु बरसै।
सरद कमल हेवन्तु गेंदन पर सिसिर कुसुम पर बिलसै।।

ग्रामीण वातावरण में जीवन-निर्वाह करनेवाले किसानों के प्रति उनकी अपार श्रद्धा है। वे अपने काव्य में किसानों के जीवन का सम्यक् चित्र खींच देते हैं। ग्रामीण नारी के कार्य आदि का चित्रण करते हुए वे कहते हैं :

गोरू का चारा पहुँचावै, लरिकन का फुसलावै।
सगरे घर का कामु चलावै, पति का अदब बजावै।।
चकिया पीसै, धानु कुटावै, कण्डा उपरी पाथै।
कपड़ा फीचै, बरतन माँजै, घर की करै सफाई।
रोटी करै खवावै सबका, आपुन ऊनी लुगाई।।

नैसर्गिक ग्रामीण प्राकृतिक सौन्दर्य में स्वच्छन्दतापूर्वक जीवन व्यतीत करनेवाले किसानों के हृदय में अपनी मातृभूमि के प्रति अटूट श्रद्धा है; परन्तु उनकी यथार्थ स्थिति अत्यन्त दयनीय है। किसान अथक परिश्रम के बावजूद भी दुखी जीवन व्यतीत करता है :

दुपहरिया मा चारि पनेथी बड़की लोटिया पानी।
कबौ चबैना मट्ठा सरबल ऐसेहि गै जिन्दगानी।

पेड़ा-गट्टा मेले-ठेले बेड़ई बरा फुलौरी।
तिथि परबी या भये बियाहे पूरी पुवा कचौरी।।

सामन्तवादी व्यवस्था में जमींदारों द्वारा किसानों पर किये जा रहे अत्याचार, शोषण आदि का भी चित्रण कवि ने अपनी कविताओं में किया है। उन्होंने पूँजीवादी व्यवस्था का घोर विरोध किया है:

जमींदार कुतवा अस नोचै देह की बोटी-बोटी।
नौकर, प्यादा औरु करिन्दा ताके रहैं लँगोटी।।
पटवारी खुरचाल चलावै बेदखली इस्तीफा।
रोजु कुडुक्की औ जुर्माना, छिन-छिन नवा लतीफा।।

शुक्ल जी समाज को गर्त में ले जानेवाले तत्त्व वर्गवैषम्य के घोर विरोधी थे। वे राजा-प्रजा में भेद नहीं स्वीकार करते थे। उन्होंने उच्चवर्ग की अनीति को अपने काव्य द्वारा लोगों के सम्मुख रखा :

दफतर बना रजिट्टर गोंजैं, लिखैं गुलाम कसाई।
फाटै प्याट किसानदेव कै, लूटै लाज कमाई।।
पूजा होई अफसरवन की, चलै छुरी सुधवन पर।
बनै लूटि का जाल राति-दिनु, नाव चलै तिकड़म पर।।

शुक्ल जी ने किसानों की दयनीय स्थिति के वर्णन के साथ ही ग्रामीण परिवेश में मनाए जानेवाले उत्सवों, त्योहारों का भी मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। गाँवों में आधुनिक मनोरंजन-सामग्री के अभाव में किसान किस प्रकार त्योहारों के माध्यम से अपना मनोरंजन करता है :

भये बियाहे मुड़ने चट्ट मेहरिया गावै ढोल बजाये।
हजारन गीत एक है ताल न राखै कोई बात उठाये।।
बैठके-बँगलन माँ लगि रहीं उड़ि रही चिलम चरस औ भाँग।
बिदेसिया नौटंकी औ रहसु सपेड़ा इन्द्रसभा औ स्वाँग।।
गीत ढोला कहरा माधंवा गजड़ना कजरी चैत मलार।
फाग होरी सावन धम्मारि निरौनी बिरहा और लहचार।।

ग्रामीण क्षेत्र में व्याप्त अंधविश्वासों की परम्परा होती है। इनमें टोना-टटका, झाड़-फूँक, दुआ-भभूत, मान-मनौती, देवी-देवता, पीपल-बरगद, नीम-डीह, कुलदेवता आदि की पूजा एक अंधविश्वास है। शुक्ल जी ने इन अंधविश्वासों को दूर करने का बीड़ा उठाया था :

मान मनौती डाँड़े घूरे चढ़ैं साल माँ छैया।
बकरा बीर पीर का मुर्गा चिलम लेय उड़वैया।।
लरिकन का सुख निंदिया चूसै औ धानन का गंधी।
बिरवा, पथरा, मुर्दा, पूजै दुनिया औंधी धंधी।।

शुक्ल जी ने ग्रामीण जीवन की नाना स्थितियों के साथ किसानों की वेष-भूषा, खान-पान, व्यवहार-आचार आदि का भी वर्णन किया है :

मिरजई धोती पहिरि उटंग चलै बुढ़वा मोछैं फर्राय।
ओढ़निया लेहँगा कुर्त्ता सजे चलै मेहरी टिकुली चमकाय।।

दिनचर्या

हँसै न बोलै, कछू न जानै, पूत खेलावै कनियाँ।
काम करै का रचिस बिधाता, यह किसान की दुनिया।।
बड़े सबेरे ते हरु नाधै, जोतै बोवे मयावै।
फिरि खारा खुरपा हँसिया लै, चारा घासै धावै।।

शुक्ली जी की इन कविताओं में केवल कपोल-कल्पना नहीं है, बल्कि उनमें वस्तुनिष्ठता, वास्तविकता एवं सूक्ष्मग्राहिता विद्यमान है।

शुक्ल जी के काव्य की दूसरी सर्वप्रमुख विशेषता है--राष्ट्रीय जागरण और शिष्ट हास्य-व्यंग्य। कवि के काव्य का श्रीगणेश ही राजनीतिक तथा राष्ट्रीय जीवन-चेतना से जुड़ने के उपरान्त हुआ। इसलिए उनकी आरम्भिक रचनाओं में राष्ट्रीय जागरण का स्वर अधिक मुखर हुआ है। 'खूनी परचा' कविता अंग्रेजों के खिलाफ भारतीय जनजीवन में राष्ट्र के प्रति जागृति उत्पन्न करने का कार्य करती है। उनके द्वारा लिखी गयी 'प्रभातफेरी' गाँधी-आश्रम की प्रार्थना-सभा में नित्य पढ़ी जाती थी :

उठ जाग मुसाफिर भोर भयो, अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है सो खोवत है, जो जागत है सो पावत है।।

इस प्रकार, शुक्ल जी के काव्य में राष्ट्रीय जागरण की भावना व्यापक स्तर पर समाहित हुई है। उन्होंने जमींदारी व्यवस्था, सामन्ती व्यवस्था, अफसरशाही आदि का भी डटकर मुकाबला किया है :

धन्ना दै मोहरे माँ बैठे उल्टा डारै खटिया।
लटै किहाड़े करै तगादा ताकै बहिनी बिटिया।
बने सिपाही लाठी बाँधे बौना और ठनगनियाँ।
उनका देखि छिपै कोने माँ यह किसान की दुनिया।।

शुक्ल जी गाँधीवादी व्यवस्था में विश्वास रखते थे, इसलिए उन्होंने अपनी कविताओं में उस व्यवस्था का समर्थन किया है :

हमारी मड़ई मा एक दिन झंडा वाले गाँधी आए।
उइ कहिनि जमीन फेरि तैहो कानून नये बनि-बनि आए।
सबकी जमीन मौरूसी भै सबकी बाकी देकि छूटिगै।
मुखिया महतौ सब अलग भये गाँवन माँ पन्चाइत बनिगै।।

कवि ने उन नेताओं को भी नहीं छोड़ा जो देश के सपूत होने तथा सत्याग्रही बनने के बावजूद भी निःस्वार्थ नहीं हो पाए :

कोई पद पदवी बाँटै बैठारे गद्दारन का।
हम मनु मसोस रहि जाई खद्दर पहिरावै उनका।।
हे राम कहूँ जो होतिउ औ हमरी कुछु सुनि पौतिउ।
तौ याक दाँव कांग्रेस पर तुम कसिकै बज्र गिरौतिउ।।

शुक्ल जी ने अपने काव्य में यत्र-तत्र हास्य-व्यंग्य को भी चातुर्य से संगुम्फित किया है। उनकी ये कविताएँ व्यंग्य-विद्रोह का कार्य करती हैं। व्यंग्यात्मक कविताओं के विषय हैं--नेता, प्राचीन परंपरा, फैशन आदि। आधुनिक स्वतंत्रता पर व्यंग्य करते हुए शुक्ल जी ने लिखा :

लरिका स्वतंत्र लरिकी स्वतंत्र।
विद्यालय की खिरकी स्वतंत्र।
परतंत्र भये सब हैसियतदार,
हुइगा स्वतंत्र भारत हमार।

धर्म, आडम्बर तथा अत्याचार पर जो व्यंग्य किये गये हैं, उनमें हास्य का भी समावेश हुआ है :

बछिया सब जन दिहिन बिसन्नी हम दीन्हेन चवन्नी,
हमसे पंडा झगरि परे तौ हम सुधियायेन टेन्नी।
हमरे बिगरति संगी बिगरे पंडा लिहिन गँडासा,
बदलि पैंतड़ा समुहै डीकै देखैं लोग तमाशा।।

इस तरह, व्यवस्था-विद्रोह, प्रकृति-चित्रण और हास्य-व्यंग्य से ओत-प्रोत शुक्ल जी की कविताएँ सर्वथा हृदयग्राहिणी हैं। उन्होंने अवधी काव्य के क्षेत्र में विविध प्रयोग किये हैं। गीत, मुक्तक, आख्यान, कुण्डलियाँ, बरवै, प्रहेलिका, सूक्ति, शेर, गजल आदि नाना छंदों तथा शिल्पों का उन्होंने प्रयोग किया। उनकी भाषा के कई रूप दिखाई पड़ते हैं; कहीं बोलचाल की सीधी सरल भाषा तथा कहीं ठेठ, देशज अवधी शब्दावली। उनके काव्य में रूढ़, पारिभाषिक शब्दों, लोकजीवन की प्रचलित कवि-प्रौढ़ोक्तियों तथा अभिव्यंजना की विविध प्रणालियों के दर्शन होते हैं। उनकी कविताएँ अवध-अंचल के लोक-सांस्कृतिक अध्ययन के लिए मूलाधार हैं। उनकी काव्य-भाषा में प्रेषणीयता, चिन्तन में प्रबुद्धता और सर्जक व्यक्तित्व में विलक्षणता विद्यमान है। शुक्ल जी की इस विलक्षणता को यदि प्रकाश में लाया जाय, तो अवधी भाषा तथा साहित्य का गौरव उच्च शिखर पर पहुँच जायगा।

रमई काका : व्यक्ति और रचनाकार

डॉ. अरुण त्रिवेदी

कविता में मानव जाति के श्रेष्ठतम अनुभव एक उत्सव की तरह प्रकट होते हैं, किन्तु भाषा में उत्सव का पुलक पाने के लिए ही कविता नहीं है। कविता मानव की एक ऐसी सहयात्रिणी है, जो उसका अनुगमन तो करती ही है, उसके अस्तित्व को प्रतिध्वनित भी करती है। इस ध्वनि संकलन के सूक्ष्म-संवेदनों में मनुष्य को मनुष्य रूप में बचाये रखने की प्रयत्नवत्ता भी है। इस प्रयत्नवत्ता का उत्साह लिए बिना कवि होना कठिन है। एक प्रकार से कवि का श्रेष्ठ इंसान होना आवश्यक है। वैसे तो मनुष्य के संदर्भ में अन्तिम रूप मे कुछ भी नहीं कहा जा सकता, किन्तु देखने में यही आया है, कि श्रेष्ठ कवियों में उच्च मानवीय गुण अवश्य पाये जाते हैं।

रमई काका को जितने लोग भी जानते हैं, एक अच्छे इंसान के रूप में जानते हैं। उनके कवि रूप के आलोचक सम्भवतः मिल भी जायँ, पर उनके व्यक्ति रूप के आलोचक मिलने कठिन है। जिन्हें काका की कविता से कुछ भी लेना-देना नहीं रहा, वे भी उनके व्यक्तित्व के प्रशंसक रहे हैं। काका को गाँव से असीम मोह था, किन्तु वे सुसंस्कृत नागरिक थे। उनका रहन-सहन सादगी भरा और साधारण था, पर वे असाधारण मेधा के कलाकार थे। वे मात्र कवि ही नहीं थे, लेखक, नाटककार, अभिनेता और संगीतज्ञ के रूप में भी उन्हें कम सम्मान प्राप्त नहीं हुआ। इतना होते हुए भी अंहकार उन्हें छू तक नहीं गया था। उनका सरल चित्त और कोमल स्वभाव उनके व्यवहार में बराबर झलकते थे, उनके मृदु सम्भाषण ने तो उन्हें अजातशत्रु ही बना दिया था।

जिस युग में रमई काका का जन्म हुआ, वह गाँधी का युग था। गाँधी ने अकेले ही मानव जाति को जितना प्रभावित किया, उसके उदाहरण इतिहास में विरल हैं। उस युग में मानवता ही मानव का भूषण थी। भौतिक समृद्धि की अपेक्षा, उस युग में मानव मूल्यों को धारण करना श्रेयस्कर माना जाता था। रमई काका को गाँधी ने बहुत गहराई से छुआ था। काका खादी पहनते ही नहीं थे, खादी उनके मन में बस गयी थीं और उसकी सादगी उनके में कहीं गहरे उतर गयी थी।

प्रेम और आदर का भारतीय तरीका कुछ अलग है, हम लोकप्रिय लोगों को देवत्व प्रदान कर देते हैं। काका को भी लोगों ने एक प्रकार का देवत्व प्रदान कर दिया था। उनके मित्र और शिष्य उतने नहीं हुए, जितने भक्त और प्रशंसक हुए। धीरे-धीरे रमई काका कवि की लोकप्रियता के मानदण्ड बन गये। अनेक कवियों ने उनसे प्रेरणा ली, अनुकरण किया, पर कुछ ने तो काका नाम ही धारण कर लिया। वे काका वंश के प्रवर्तक हिन्दी के आदि काका थे।

रमई काका जितने गाँधी से प्रभावित थे, लगभग उतने ही तुलसी से भी प्रभावित हुए, उनके व्यक्तित्व के विचार-अंश और आचरण-खण्डों के निर्माता, यही दोनों महापुरुष थे। 'वैष्णव जन ते तैंने कहिए, जे पीर पराई जाणै रे' तथा 'सुरसरि सम सब कर हित होई' पंक्तियों की ध्वनि रमई काका के जीवन और

काव्य में प्रतिध्वनि बन गयी थी। इसके अतिरिक्त रमई काका जिस गाँव में पैदा हुए थे, उस गाँव के वातावरण ने भी उन्हें प्रभावित किया। रमई काका का जन्मस्थान रावतपुर आर्यसमाज का गढ़ था तथा पं. प्रयागदत्त त्रिपाठी जैसे वेदों के अखण्ड विद्वान उस गाँव में निवास करते थे। यज्ञ धूम्र से आच्छादित उस गाँव में विद्या-प्रेम तथा पाखण्ड-विरोध काका को सहज उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुआ था।

रमई काका का जन्म उन्नाव जिले के जिस क्षेत्र में हुआ था, उसके आस-पास हिन्दी के अनेक लब्ध-प्रतिष्ठ साहित्यकारों का जन्म हुआ है। प्रतापनारायण मिश्र, नन्ददुलारे बाजपेयी, डॉ. रामविलास शर्मा तथा सनेही आदि के गाँव रमई काका के गाँव के सन्निकट ही हैं। स्वयं काका के गाँव रावतपुर में एक प्रतिष्ठित कवि पं. शिवमंगल दीक्षित हो चुके थे।

जीवन-सन्दर्भ

स्व. रमई काका का जन्म सन् 1915 ई. की दो फरवरी को ग्राम रावतपुर, जनपद उन्नाव में हुआ था। इस तरह काका का जन्म वर्ष के दूसरे महीने की दो तारीख को हुआ, संयोग से उस दिन फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की द्वितीया भी थी और सप्ताह का दूसरा दिन मंगल था। यह बात तो कोई ज्योतिषी ही बता सकता है, कि काका के जीवन में इस दो के अंक का क्या महत्व था, पर इतना अवश्य है, कि काका को भी प्रायः यह लगा करता था, कि इस दो के अंक का उनके जीवन में कुछ विशेष महत्व है।

रमई काका के पिता स्व. वृन्दावन त्रिवेदी अंग्रेजी सेना में सिपाही थे, वे अपने एकमात्र पुत्र को जीवन में मात्र एक बार ही देख सके, क्योंकि प्रथम विश्वयुद्ध में बसरा की लड़ाई में उन्हें वीरगति प्राप्त हुई थी, उस समय रमई काका की आयु मात्र एक वर्ष की थी। बसरा में घिरी हुई अंग्रेजी फौजों को छुड़ाने में स्व. वृन्दावन त्रिवेदी बहुत बहादुरी से लड़े थे और वीरगति प्राप्त होने पर अंग्रेजी सरकार ने रमई काका की माता श्रीमती गंगादेवी को तीन सौ रुपये बतौर पुरस्कार के प्रदान किये थे। रमई काका ने अपने आत्मकथ्य में इस घटना का उल्लेख करते हुए लिखा है 'गुलाम देश के वीर सिपाही के जीवन का मूल्य तीन सौ रुपये से अधिक क्या हो सकता था।'

रमई काका का जन्म एक साधारण कृषक परिवार में हुआ था, किन्तु उनकी माता, जो एक सैनिक की पत्नी ही नहीं पुत्री भी थीं, कुछ पढ़ी लिखी थीं, कम से कम शिक्षा का महत्व तो समझती ही थीं। यही कारण है, कि उन्होंने रमई काका को स्कूल भेजने का निश्चय किया। उन्हें पांच रुपये मासिक पेंशन मिलती थी और काका को पढ़ाई के लिए आठ रुपये मासिक की छात्रवृत्ति।

प्राथमिक शिक्षा पड़ोस के गाँव सिकन्दरपुर में पूरी कर रमई काका पड़री के मिडिल स्कूल में आगे की पढ़ाई के लिए प्रविष्ट हुए। इस स्कूल के हेडमास्टर पं. गौरीशंकर का काका के व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा। पण्डित जी एक आदर्श अध्यापक थे, पूरे जिले में उनकी शिक्षा और चरित्र की ख्याति थी। रमई काका की प्रथम उपलब्ध कविता इसी विद्यार्थी काल की है। विद्यालय के छात्रावास में सभी को प्रातःकाल उठना पड़ता था, सभी अपना भोजन स्वयं बनाते थे, तथा मौन रहकर भोजन करते थे। एक दिन भोजन करते समय पं. गौरीशंकर जी निरीक्षण करने आये, रमई काका उस समय भोजन कर रहे थे, उनके तवे को देखकर पण्डित जी ने व्यंग्य से कहा, 'मुला वाह चन्द्रभूषण क्यार तवा बड़ा नीक है।' बात ये थी, कि काका के तवे का आकार टेढ़ा था और पण्डित जी का व्यंग्य-बाण इसी तवे की ओर था। विद्यार्थी चन्द्रभूषण इस समय तो कुछ बोल नहीं सकते थे, पर वे मन ही मन अपने तवे की प्रशंसा में कविता रचने लगे। जब पण्डित गौरीशंकर जी भोजन कर रहे थे, तो वे उक्त कविता सुनाने पहुँच गये, यह घटना 1927 ई. की है, कविता इस प्रकार है-

है रंग जैसा कृष्ण का, वैसा इसे भी मानिए।
है अंग टेढ़ा कृष्ण का , टेढ़ा इसे भी जानिए।
है कृष्ण खायी एक दिन, यह रोज खाता आग है।
जो देख ले इस कृष्ण को, उसका बड़ा ही भाग है।।

पण्डित जी कविता बड़े ध्यान से सुनते रहे, पर अन्तिम पंक्ति पर वे अपने को न रोक सके, वे हँस पड़े और उछल गये। भोजन के पश्चात् पण्डित जी ने बालक चन्द्रभूषण को आशीर्वाद दिया कि तुम एक दिन कवि के नाम से विख्यात होगे।

पड़री से मिडिल स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण कर चन्द्रभूषण त्रिवेदी ने उन्नाव के अटल बिहारी हाईस्कूल (अब इण्टर कालेज) से हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। इन दोनों ही स्थानों पर अध्यापकों तथा सहपाठियों को विद्यार्थी चन्द्रभूषण के कवि नाटककार तथा अभिनेता रूपों का परिचय मिलता रहा। हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् रमई काका को नियोजन विभाग में निरीक्षक का पद प्राप्त हुआ। इस कार्य के लिए उन्हें प्रशिक्षण लेने मसौधा, फैजाबाद जाना पड़ा। प्रशिक्षणकाल में भी कविता और नाटक चलते रहे, यहाँ प्रशिक्षकों से काका को बहुत प्रशंसा मिली। यहाँ काका ने अनेक कविताएँ तो लिखी हीं, नाटकों का लेखन और मंचन भी किया। उनका 'गड़बड़ स्कूल' प्रहसन यहाँ बहुत प्रसिद्ध हुआ। उन्हें अच्छे अभिनय के लिए अलग से एक प्रमाण-पत्र भी दिया गया।

अपने प्रशिक्षणकाल में काका जी ने ग्राम-सुधार के प्रशिक्षण सिद्धान्तों को पद्यबद्ध कर लिया था। परीक्षा में उन्होंने इसका उपयोग भी किया, अधिकांश उत्तर उन्होंने पद्य में ही लिखे थे। प्रशिक्षण के उपरान्त गाँव के निकट ही बीकापुर केन्द्र में निरीक्षक पद पर उनकी नियुक्ति हो गयी। इस केन्द्र पर रहते हुए काका जी ने ग्राम-सुधार का कार्य अत्यन्त निष्ठापूर्वक किया। अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय देते हुए उन्होंने एक ऐसी बैलगाड़ी बनवायी, जिसके पहियों में बालबेयरिंग और ब्रेक का प्रयोग किया गया था।

निरीक्षण के समय बीकापुर केन्द्र की बहुत प्रशंसा हुई, तथा उसे संपूर्ण लखनऊ कमिश्नरी में सर्वश्रेष्ठ माना गया। काका जी को गवर्नर सर हेरी हेग शील्ड प्रदान की गयी। इस सेवा संदर्भ में अत्यधिक श्रम करने के कारण काका जी के स्वास्थ्य पर बहुत विपरीत असर पड़ा। उन्हें हृदय की धड़कन का रोग हो गया। फलतः उन्हें सन् 1938 ई. में सेवा से अवकाश लेना पड़ा। आने वाले दो ढाई वर्ष उन्हें घोर संकट में बिताने पड़े।

सेवाकाल में ही रमई काका का प्रथम विवाह कानपुर में पं. शिवनन्दन मिश्र की सुपुत्री सुशीला देवी के साथ हो चुका था। अस्वस्थता में चिकित्सा तो चल ही रही थी, किसी ने उन्हें सलाह दी, कि वे संगीत का अभ्यास करें। इससे स्नायविक दुर्बलता तथा धड़कन के रोग से मुक्ति पायी जा सकती है। काका ने संगीत का अभ्यास प्रारंभ किया और शीघ्र ही इसमें महारत प्राप्त कर ली। गाँव वालों का कहना है कि जो भी बाजा काका के हाथ में आता था, दो-तीन दिन में बजने लगता था। काका ने गाँव में अपनी एक संगीत-मण्डली बना ली थी। पं. रासबिहारी दीक्षित इस मण्डली में उनके मुख्य सखा थे। संगीत के साथ-साथ काव्यसाधना भी चलती रही। 'बौछार' काव्यसंकलन की अधिकांश रचनाएँ इसी काल की हैं।

धीरे-धीरे काका की ख्याति लखनऊ आकाशवाणी तक पहुँची। वहाँ किसी ने कहा, कि उन्नाव के गाँव रावतपुर में एक ऐसा व्यक्ति रहता है, जो संगीत में निपुण है और उसने वेदमंत्रों की संगीत रचना की है, फलतः सन् 1940 ई. में रमई काका को आकाशवाणी पर कार्यक्रम के लिए आमंत्रित किया गया। कालान्तर में एक प्रतियोगिता परीक्षा उत्तीर्ण कर श्री चन्द्रभूषण त्रिवेदी आकाशवाणी की सेवा में ही आ गये।

प्रतियोगिता परीक्षा में छः लोग बुलाये गये थे, जो अवध के छः जिलों से आये थे। प्रतियोगिता में डेढ़ घन्टे का समय दिया गया था, जिसमें 'कम्पोस्ट खाद' पर छः पृष्ठों का संवाद और 'वसंत' पर

कविता लिखनी थी। मात्र दो ही प्रतियोगी निर्धारित समय में यह कार्य पूरा कर सके थे। माइक पर ध्वनि परीक्षा के उपरान्त रमई काका गाँव चले गये, जहाँ चार-पांच दिन बाद उन्हें नियुक्ति पत्र मिला। वे आकाशवाणी के ग्रामीण कार्यक्रम में कलाकार के पद पर नियुक्त हुए--वेतन था 40 रुपये प्रतिमाह। यह नियुक्ति दिसम्बर 1941 ई. में हुई थी। प्रतियोगिता परीक्षा में वसन्त पर जो कविता काका ने लिखी थी, वह इस प्रकार है-

अब हवा बसन्ती डोलि परी, रितुअन का राजा आवा है,
सब बिहग मण्डली गाय उठी, बहु धीमी-धीमी बउखा ते।
हरियारी चँवर डोलाय उठी।।
ई हरियर सरसों के पउधा, हैं पियर-पियर लइ फूल खड़े।
खुसियाली मा बौराय उठे, आंबन के बिरवा बड़े-बड़े।
उनहिन पर कोयल कुहू-कुहू, कस सुन्दर अमरित घोरि परी।
अब हवा बसन्ती डोलि परी।।
सब फूल सगत्तर फूलि उठे, कलियन तन भँवरा दौरि परे।
मतवाले होइ मड़राय रहे, कुछु गुन-गुन गुन-गुन बोलि परे।।
आवा बसन्त आवा बसन्त, बस यहै गोहारि लगाय रहे।
कलियन के दीदा खोलि रहे, अउँघाये फूल जगाय रहे।
कू-कू-कू कोयल बोलि परी, अब हवा बसन्ती डोलि परी।।

आकाशवाणी पर काका की नियुक्ति 'पंचायत घर' कार्यक्रम के लिए कलाकार के रूप में हुई थी। काका का पूरा नाम चन्द्रभूषण त्रिवेदी था, कार्यक्रम में वे 'भूषण भइया' के नाम से भाग लेते थे। कार्यक्रम के लिए वे कविताएँ, एकांकी तथा वार्ताएँ लिखा करते थे, कभी-कभी संगीत कार्यक्रम भी प्रस्तुत करते थे। धीरे-धीरे 'भूषण भइया' की ख्याति बढ़ने लगी, श्रोताओं के प्रशंसा भरे पत्र आने लगे। एक दिन एक ऐसा पत्र आया जिसमें माँग की गयी थी, कि 'भूखन भइया' को काका बना दिया जाय। संयोग से 'पंचायत घर' कार्यक्रम में काका बनने वाले सज्जन नौकरी छोड़ कर चले गये और चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'भूखन भइया' को रमई काका बना दिया गया। काका से यह पूछा गया था कि वे कौन सा नाम पसन्द करेंगे, काका ने कहा 'वे राम के भक्त हैं और रमई काका नाम उन्हें रुचिकर लगेगा।' इस तरह पं. चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' हो गये। कालान्तर में यह नाम हिन्दी कविता-मंच का शृंगार बन गया।

आकाशवाणी पर सेवा करते हुए काका ने रेडियो की सभी विधाओं में लेखन किया, अपने 35 वर्ष लम्बे सेवाकाल में काका ने आकाशवाणी के सभी विभागों के लिए नाटक, प्रहसन, संगीत-रूपक, नौटंकी, संवाद, वार्ताएँ तथा कविताएँ हजारों की संख्या में लिखीं। आकाशवाणी के माध्यम को ठीक से समझ कर उन्होंने जनता से एक आत्मीयता भरा संवाद विकसित कर लिया था। अपने इसी संवाद के कारण उन्हें आशातीत ख्याति प्राप्त हुई, अवध के जनमानस में उनका नाम रच-बस गया। जैसी ख्याति उन्हें मिली, वैसी ख्याति आकाशवाणी के किसी कार्यक्रम संचालक को प्राप्त नहीं हुई। आकाशवाणी के नियमित और औपचारिक कार्यक्रम के माध्यम से उन्होंने अवधवासियों से एक अनौपचारिक संबंध बना लिया था।

आकाशवाणी पर काम करते हुए अभी रमई काका को लगभग दस वर्ष ही हुए थे, कि उनकी प्रथम पत्नी सुशीला देवी का 14 जनवरी 1946 में निधन हो गया। चार वर्ष तक काका ने एकाकी जीवन बिताया, उनका दूसरा विवाह लगभग पैंतीस वर्ष की अवस्था में सन् 1950 ई. में सरोजिनी देवी के साथ बकेवर इटावा में सम्पन्न हुआ। इन दो पत्नियों से रमई काका को तीन पुत्र तथा पाँच पुत्रियों का भरा-पूरा और बड़ा परिवार प्राप्त हुआ।

रमई काका ने आकाशवाणी पर अनेक भूमिकाएँ निभायीं। वे 'पंचायत घर' कार्यक्रम का संचालन रमई काका के नाम से करते थे और 'मजदूर मण्डल' कार्यक्रम का संचालन सन्तू दादा के नाम से। 'बहिरे बाबा', 'चतुरी चाचा' और 'छोटई-लोटई' आदि उनके धारावाहिक थे, जिनमें बहिरे बाबा को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। जितने लम्बे समय तक बहिरे बाबा आकाशवाणी से प्रसारित हुआ है, उतने लम्बे समय तक कोई भी धारावाहिक आकाशवाणी के किसी केन्द्र से प्रसारित नहीं हुआ। 'बहिरे बाबा' मात्र ग्रामीण जनों में ही प्रचलित नहीं था, उसके श्रोता सुधी साहित्यकार और गुणी नागरिक भी थे। 'बहिरे बाबा' एक प्रकार से रमई काका का दूसरा नाम हो गया था। इस धारावाहिक को वे न केवल लिखते थे, वरन् 'बहिरेबाबा' का अभिनय भी करते थे।

एक कवि के रूप में रमई काका की ख्याति से सभी परिचित हैं, वे एक प्रकार से हिन्दी मंचों के लिए अपरिहार्य बन गये थे। सन् 1950 से 1965 ई. तक वे शीर्ष रहे, इस बीच कवि सम्मेलनों में उनकी बेहद माँग थी। अपनी व्यस्तता और अस्वस्थता के कारण यद्यपि वे आयोजनों में कम जा पाते थे, पर अवध के क्षेत्र में लोग यही चेष्टा करते थे, कि वे उनके आयोजनों में अवश्य ही आयें। यद्यपि वे अवधी के कवि थे, पर उनका काव्य-पराक्रम दिग्विजयी सिद्ध हुआ, वे न केवल हिन्दी क्षेत्रों में वरन् अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में भी कवि सम्मेलनों में बुलाये गये। उत्तर में नैनीताल से दक्षिण में बंगलौर तक तथा पूर्व में कलकत्ते से पश्चिम में उदयपुर तक हिन्दी आयोजनों में न केवल आमंत्रित किये गये, वरन् प्रशंसित भी हुए। मंचों पर उनका काव्यपाठ साहित्योचित और गरिमापूर्ण रहा, उन्होंने न तो कभी अश्लीलता का सहारा लिया और न छिछले स्तर का सतही साहित्य प्रस्तुत किया। उन्हें हिन्दी मंचों के शीर्षस्थ कवि का सम्मान प्राप्त हुआ। अपनी लोकप्रियता के कारण वे दर्शनीय व्यक्ति बन गये थे।

स्व. पं. चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' सौम्य प्रकृति के सादगी पसन्द व्यक्ति थे। उनका रहन-सहन, खान-पान और वेश-भूषा सभी सात्विक और सादगीपूर्ण थे। अत्यधिक ख्याति प्राप्त करने के पश्चात् भी अभिमान उन्हें छू तक नहीं गया था, किन्तु वे स्वाभिमानी व्यक्ति थे। अपनी कर्मठता के बल पर गाँव की अत्यन्त साधारण पृष्ठभूमि से उठकर भारत प्रसिद्ध व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हुए। वे एक अत्यन्त संवेदनशील व्यक्ति थे और सेवा उनके जीवन का आदर्श था, गाँव तथा नगर में संपर्क में आये दुखी एवं निर्धन व्यक्तियों की उन्होंने पर्याप्त सेवा की।

कविता, नाटक और संगीत की साधना तो रमई काका ने की ही, पर यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि उन्हें चित्रकला और कुश्ती का भी शौक था। वे अपने पास अच्छे स्तर के रंग और तूलिका रखते थे तथा जब भी समय मिलता था, वे इनके प्रयोग से सुन्दर चित्रों की रचना करते थे। उनके समस्त चित्रों का संकलन तो आज उपलब्ध नहीं है, पर कुछ चित्र आज भी उनके निवास पर संकलित हैं। यद्यपि एक चित्रकार के रूप में वे अत्यन्त साधारण थे, पर इससे उनके जीवन की विविधता परिलक्षित होती है। वे एक अत्यन्त प्रसिद्ध और लोकप्रिय कवि थे, किन्तु नाटक के क्षेत्र में भी उन्हें कम प्रसिद्धि नहीं मिली। वस्तुतः वे अपने युग के महत्वपूर्ण रंगकर्मी थे तथा संगीत और चित्रकला के क्षेत्र में भी उन्होंने काम किया। उनका संगीत-ज्ञान गीत रचना में बहुत सहायक हुआ, यही कारण है कि शास्त्रीय रागों और तालों में वे अपनी गीत-रचनाएँ निबद्ध कर सके।

कला के इन क्षेत्रों के अतिरिक्त उनके जीवन का एक और क्षेत्र भी था, वे कुश्ती कला के अच्छे जानकार थे! वैसे तो वे दुबले-पतले और अत्यन्त साधारण कद-काठी के व्यक्ति थे, पर कुश्ती के दाँव-पेंचों का उन्हें अच्छा ज्ञान था। काका के मौसिया एवं सुप्रसिद्ध अल्हैत स्व. दुर्गाचरण त्रिवेदी कुश्ती कला में काका के गुरु थे। प्रशिक्षण देने के पश्चात् काका के गुरु ने उनसे कहा कि आज हमारी तुम्हारी कुश्ती होगी। आशीर्वाद देकर गुरु ने पीठ ठोंक कर काका को कुश्ती के क्षेत्र में उतार दिया। इसके पश्चात्

काका से जो क्षेत्रीय पहलवान लड़ा, वो हार गया। फिर तो बड़े-बड़े और नामी पहलवान भी काका से लड़ने में कतराने लगे। काका ने गाँव में कुछ दिन अखाड़ा भी चलाया, जिसमें कुश्ती के साथ-साथ लाठी तथा अन्य हथियार आदि चलाने का प्रशिक्षण भी दिया जाता था।

काका के जीवन के संदर्भ में प्राप्त इस जानकारी की पृष्ठभूमि में उनकी कविता पर विचार करने से पूर्व उनके साहित्यादर्श का विवेचन समीचीन होगा। लगभग 27 वर्ष की अवस्था में रमई काका आकाशवाणी की सेवा में आये तथा लखनऊ में स्थायी रूप से बस गये। यद्यपि गाँव से काका का संपर्क जीवन भर बना रहा, किन्तु लखनऊ आने के बाद वे फिर कभी गाँव में रहने नहीं गये। यह अवश्य था कि गाँव उनके मन में बराबर रहता रहा। 'मैं मूलतः गाँव का हूँ, अब मैं गाँव में तो नहीं रहता हूँ लेकिन गाँव मेरे अन्दर रहता है, उसकी ख्याति के लिए, यदि मैं कुछ कर पाता हूँ, तो मुझे हार्दिक प्रसन्नता होती है।' यह बात बहुत महत्वपूर्ण है, कि लखनऊ जैसे महानगर में रहते हुए भी काका अपने ग्रामीण मन को बराबर बचाए रहे और शहर को भी गाँव की दृष्टि से देखते रहे। इस तरह वे अपनी अस्मिता और तज्जन्य पहचान को बनाए रखने में सफल हुए।

भारत गाँवों का देश है और उसकी मूल संस्कृति आज भी ग्राम-संस्कृति है, किन्तु इसके विपरीत कविता में नागर संस्कार प्रबल रहा है, कवियों ने नागर-दृष्टि से ही गाँव को देखा है। अवधी के आधुनिक कवियों को इस बात का श्रेय जाता है, कि उन्होंने हिन्दी कविता में ग्राम-दृष्टि की स्थापना की। इस दृष्टि ने हमारे साहित्य का बहुत उपकार किया है, क्योंकि इसी कारण आधुनिक ग्रामोन्मुखी साहित्य को वास्तविक दृष्टि, भाषा और परिवेश मिला।

गाँव के प्रति काका के मोह को समझे बिना, उनकी काव्यदृष्टि को नहीं समझा जा सकता। रमई काका का काव्य अवध के गाँव से बहुत गहराई से जुड़ा है। उनके काव्य के केन्द्र में गाँव है और उनके गाँव के केन्द्र में किसान। यही कारण है कि ग्राम संस्कृति एवं प्रकृति, काका-काव्य के कथ्य-संदर्भों में से अधिकांश का संयोजन करते हैं। वस्तुतः रमई काका की काव्यगंगा का गोमुख इसी ग्राम संस्कृति में है।

काका का काव्यादर्श

अपनी काव्यदृष्टि को रमई काका ने अपनी तीन लघु कविताओं में स्पष्ट कर दिया है। ये तीनों कविताएँ उनके द्वितीय काव्य संकलन 'भिनसार' में संग्रहीत हैं। जीवनादर्श और काव्यादर्श की दृष्टि से ये कविताएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इनमें से 'अइसी कबिता ते कौनु लाभु' कविता में वे कहते हैं-

हिरदय की कोमल पँखुरिन मां, जो भँवरा असि न गूँजि सकै।
उसरील वाँठ हरियर ना करै, डभकत नयना ना पोंछि सकै।
जेहिका सुनतै खन बन्धन की, बेड़ी झन-झन ना झन-झनायँ।
उन पाँवन मा पौरुखु न भरै, जी अपने पथ पर डगमगायँ।
अँधियारु न दुरवै सविता बनि, अइसी कबिता ते कौनु लाभ?

काका वस्तुतः भावमयी कविता के पक्षधर थे, उन्होंने स्पष्ट कहा है, कि जो कविता हृदय-कमल में भँवरे की तरह नहीं गूँज सकती, मूक ओठों को वाणी नहीं दे सकती, दीन-दुखियों के आँसू नहीं पोंछ सकती, जिसे सुनकर दासता की बेड़ियाँ झन-झनाकर टूट नहीं जातीं तथा जो कविता मनुष्य के डगमगाते पैरों को पौरुष नहीं दे सकती और जो कविता सूर्य बनकर अंधकार को नष्ट नहीं कर सकती, उस कविता से कोई लाभ नहीं। काका ने कविता की कोमल और परुष दोनों भूमिकाओं की ओर संकेत किया है, तद्नुरूप ये दोनों भूमिकायें हमें काका की कविता में प्राप्त भी होती हैं। एक ओर उनकी कविता कृषक के सकरुण नेत्रों में आँसू पोंछती दिखायी देती है, तो दूसरी ओर वह कृषक-अस्मिता को विद्रोही वाणी देती है।

काका ने अपने काव्यादर्श का स्पष्ट उद्‌घोष करते हुए कहा है, कि कविता को लोगों के मनों में उतर जाना चाहिए। काका वस्तुतः जनकवि थे, वे जन सामान्य के लिए लिखते थे, उनकी सहृदय वाणी और सहज अभिव्यक्ति जन जन तक न केवल पहुंची, वरन् उनके मनों की गहराई में उतर भी गयी, आने वाले समय में भी उनकी कविता लोग भूल नहीं पायेंगे।

दासता और गरीबी की मार से भारत का कृषक सदियों से पीड़ित रहा है, उसके त्रस्त नयनों से आँसू तो निकलते रहे, पर उसके बंजर ओठों पर वाणी कभी नहीं उगी। काका ने किसान के ऊसर ओठों पर शब्दों की फसल उगायी, उसकी अस्मिता को विद्रोह की वाणी दी, यही कारण है कि वे 'धरती हमारि' जैसी ओज-तेजमयी कविता लिख सके। उनकी कविता में सहानुभूति का स्वर भी है और उन्होंने किसान की डबडबाई आँखों से आँसू पोंछने का महत्वपूर्ण कार्य भी किया।

जहाँ तक दासता की बेड़ियाँ काटने का प्रश्न है, रमई काका की कविता का प्रथम उन्मेष स्वातंत्र्य-समर ही है। डगमगाते पैरों में पौरुष भरनेवाली वीरत्व-व्यंजक वाणी भी उनके पास थी, इनका 'नेताजी' शीर्षक खण्डकाव्य इस संदर्भ का अच्छा उदाहरण है। रमई काका की कविता का सहानुभूति पूर्ण शब्द-स्पर्श तथा विद्रोही वाणी का ओज-तेजमय स्वरूप एक ऐसी प्रकाश-किरण को जन्म देते हैं, जो युगों तक मानवता का पथ प्रकाशित करेगी, वे ऐसी ही सनातन-सूर्योदयी कविता के कवि थे।

जो दो अन्य कविताएँ 'भिनसार' में संकलित हैं, उनमें से एक 'अइसी सरिता ते कौनु लाभु' शीर्षक कविता में काका कहते हैं

जो जल कै पूंजी पावन खन, बरखा मां बहुत उतराय चलै।
पक्के भवनन का गीत देय, कुरिया झोपड़ी बहाय चले।
सागर अहलक जल रासि लिहे, वहिका अपनौ जल करै दान।
गरमी परतै जलु सूखि जाय, मुरझे खेती बिकलैं किसान।
तब सींचि सकै ना धरती का, अइसी सरिता ते कौनु लाभ?

अन्योक्ति के माध्यम से कवि ने यहां पूंजीवादी तथा सामंती व्यवस्था के प्रति अपना असन्तोष व्यक्त किया है, तथा उस सरिता को व्यर्थ कहा है, जो किसान की सूखती फसल को जल नहीं दे सकती। वस्तुतः जन-सामान्य और विशेष रूप से कृषक उनकी काव्य-सरिता के लक्ष्य रहे हैं, काका वस्तुतः ऐसी ही अन्तस्सलिला वाणी-स्रोतस्विनी के भगीरथ थे।

'अइसी प्रभुता ते कौनु लाभु' शीर्षक कविता में पूंजीवादी सभ्यता पर सीधा प्रहार किया गया है, शोषण को लक्ष्य कर शोषक-प्रभुता पर काका ने धिक्कार फेंका है--

सुख सम्पति औ अधिकार पाय, जेहिकी आँखिन अँधियारु होय।
औ मनुज रकत के दिया बारि, जेहिके घर मा उजियारु होय।
दीनन की छाती पर चढ़ि-चढ़ि, जो बनै हिमालय का पहार।
दुखियन के आँसुन ते गाछै, निज सवारथ पथ का बिजय हार।
दुख दरद देखि ना पिघिलि सकै, तेहिकी प्रभुता ते कौनु लाभ?

'काव्यं यशसे अर्थकृते, व्यवहारविदे' तो कहा ही गया है, अशिवेतरऽक्षतये' भी कहा गया है, किन्तु इस शिवेतरता की क्षति के लिए शब्द-व्यूह में अर्थ का पराक्रम भरना पड़ता है। इस संदर्भ में काका शब्दभेध पराक्रमी सेनापति सिद्ध हुए। शोषण के विरुद्ध उनकी कविता एक युद्धक भूमिका की निर्वाह करती रही है।

तीनों ही कविताओं के कथ्य पूँजीवादी और सामन्ती व्यवस्था के प्रति आक्रोश से भरे हुए हैं। यह

आक्रोश उनके काव्य में स्थल-स्थल पर अभिव्यक्त भी हुआ है। अपनी 'छाती का पीपर' शीर्षक रचना में वे कहते हैं-

खेतिहर मजूर के प्याट काटि, जइसे कोउ बइठै बनि कुबेर।
लोहू के दीपक बारि कैर, अपने घर मा जगमग उजेर।
बसि वही तना ते चूसि-चूसि, है किहे देत हमका जर-जर।
यू हमरी छाती का पीपर।।

इस शोषण के विरुद्ध शोषित वृक्ष न केवल विद्रोह करता है, वरन् अन्नदाता किसान से हथियार उठाने का आग्रह भी करता है-

हे अनदाता अरदास सुनौ, तुम तेज ल्वाह कै धार करौ।
औ हमरी छाती ते उतारि कै, हलुक बिपति का भार करौ।
हाँ, सावधान होइकै काट्यौ, माना हमका दुखदाई है।
पर यहिकै जर न कटै पावै, नाते मा हमरै भाई है।
सुखु है अपने बल पर, हरियाय यहौ भइ के ऊपर।
यू हमरी छाती का पीपर।।

काका वैष्णव-मन और अहिंसक आचरण के कवि थे, उनका विद्रोह भी भारतीय संस्कृति से ही अपना तेज ग्रहण करता है। वे भारतीय सामाजिकता के उस रूप को बनाये रखना चाहते हैं, जो रिश्तों के निर्वाह में विश्वास रखती है। गाँधी ने यही राजनीति में किया और काका ने यही कविता में किया।

काका पढ़ी और गढ़ी हुई विचारधारा पर चलने वाले कवि नहीं थे। उन्होंने गरीबी न केवल देखी थी, वरन् स्वयं उसे भोगा भी था। यही नहीं दीन-दुखियों की सेवा उनकी जीवनचर्या में रहा है। गाँव में रहते हुए उन्होंने ग्रामीण जनों की तन-मन और धन से सेवा की और शहर में रहते हुए भी वे अपनी इस चर्या को बनाए रहे। वे अपनी आय का एक निश्चित भाग बराबर जरूरतमंदों को देते रहे। काका के बालसखा रमेश अवस्थी ने अपने संस्मरणों में कहा है- 'चन्द्रभूषण बाल-काल से ही समाजसेवी हैं, बूढ़ी औरतों जैसे भजन काकी को पानी भर कर दे आना व कण्ठे काका की सास को घर से रोटी बनवा कर दे आना, उनका लगभग नित्य कर्म बन गया था।'

दीन दुखियों के प्रति संवेदना का यह स्वरूप हमें काका की कविताओं में भी प्राप्त होता है। दीनों और दुखियों के कष्टों को वाणी देना उनके काव्य का प्रथम उद्घोष था। माँ सरस्वती से प्रार्थना करते हुए कवि ने जो वरदान माँगा है, वह उसके उद्घोष को नितान्त स्पष्ट करता है-

दुखिन कै अहक, भूख कै दहक, कुहुक स्यामा कै,
इन्द्रधनु लभक, बसन्ती लहक, कुलक झरना कै।
सरनि गुन पाय, सकै प्रगटाय मोरि यह बानी,
करौ कल्यान, देव बुधि दान अम्ब बरदानी।

यहाँ कवि ने अपने लिए कुछ नहीं माँगा, वह दलितों का दुख-दर्द और प्रकृति के सौन्दर्य को कह सकने की सामर्थ्य मात्र माँग रहा है और ये दोनों ही उद्देश्य कवि ने अपने काव्य में भलीभाँति पूरे भी किये हैं।

आधुनिक अवधी के सशक्त रचनाकार : महाकवि मृगेश

डॉ. गौरीशंकर पाण्डेय

इतिहास, पुराण और लोक-जीवन–इन सबके गहन अध्येता, देश-काल के प्रखर समीक्षक, भावना- लोक के मर्मी चित्रकार, काव्य-कथा-नाटक के समर्थ रचनाकार, लोकगीत-महाकाव्य के सफल शिल्पी, पारम्परिक और आधुनिक छन्द-विविध के सहज प्रयोक्ता, प्रकृति-छटा के मनोहर चित्रकार, गाँव और गलियों के चितेरे, भाव और अनुभूतियों के घनेरे तथा उद्‌बोधन-व्यंग्य और बरवै के अनूठे अभिव्यंजक महाकवि 'मृगेश' निश्चय ही अवधी नन्दन-वन के पुष्पित पारिजात थे। वे वर्तमान बाराबंकी के कवि-शिरोमणि तो रहे ही, आधुनिक अवधी के लोकप्रिय हीरक हस्ताक्षर के रूप में चिर-स्मरणीय रहेंगे।

जीवन-वृत्त

लोकजीवन की सहजता-सजीवता की साक्षात् मूर्ति गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश' अवध प्रान्त के केन्द्रवर्ती जनपद बाराबंकी के बुढ़वल नामक गाँव में, जो घाघरा-नदी के दक्षिण 6 कि.मी. की दूरी पर स्थित है, 2 जनवरी, सन् 1910 ई. को, ठाकुर गुलाब सिंह की पाँचवीं संतान के रूप में, माँ शारदा की प्रभामयी प्रज्ञा लेकर अवतरित हुए थे।

भारद्वाज गोत्रीय रैकवार वंश-विभूति कविवर मृगेश के पूर्वज रैका (काश्मीर) निवासी थे। बारहवीं शती में इनके पूर्वज कन्नौज आ बसे थे। कालान्तर में, उनके वंशजों ने पावनी सरयू-घाघरा के शस्य-श्यामल क्षेत्र बाराबंकी-गोण्डा-बहराइच तक अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया, और तबसे लेकर अब तक यह वंश 'मृगेश' सरीखी प्रतिभाओं से पुष्पित और जीवन्त है।

मृगेशजी की औपचारिक शिक्षा मात्र मिडिल स्कूल तक सीमित रही। किन्तु जमींदार घराने की उन्मुक्तता के बीच स्वाध्याय के बूते मृगेश का अध्येता व्यक्तित्व उच्च ज्ञानार्जन में पीछे न रहा। अपने पिता के वत्सल संरक्षण तथा अध्यापक-प्रवर 'द्विजदत्त' के नेहमय संपर्क में रहकर, उन्होंने अपने बाल्यकाल में ही अनेक कवियों-कलाकारों, साधु-सन्तों-गायकों की रचनाओं और उनकी रचना-धर्मी प्रवृत्ति से, काव्य-सर्जना एवं उसकी प्रभावी अभिव्यंजना-प्रस्तुति की कार्यकारी प्रेरणा प्राप्त कर ली थी।

16 वर्ष की अल्पायु में ही, उनका विवाह गोण्डा जनपद की तरबगंज तहसील के सिधौटी ग्राम के एक प्रतिष्ठित अधिवासी ठाकुर बलदेव सिंह की कन्या के साथ हो गया था। उनका पारिवारिक जीवन सुखमय तथा लोक-साहित्याराधन के लिए प्रायः अनुकूल रहा।

मृगेश जी 1930 ई. में ही प्राथमिक स्तरीय पाठशाला में अध्यापक हो गये थे। राजस्थानी साफा, शेरवानी तथा घोड़े की सवारी, जीवन के पूर्वार्ध में उन्हें अति प्रिय रहे। बाद में कुर्ता-धोती और सदरी के साथ उनका व्यक्तित्व शोभन प्रतीत होता था।

कवि-मंचों तथा आकाशवाणी से उनका घनिष्ठ जुड़ाव रहा। मृगेशजी सन् 1938 से आकाशवाणी के लखनऊ केन्द्र के अवधी-कार्यक्रमों से विशेष रूप से जुड़े रहे। उनका यह क्रम लगभग 15 वर्षों तक चलता रहा। पं. ब्रजनन्द पाण्डेय तथा पं. वंशीधर शुक्ल से आकाशवाणी केन्द्र, लखनऊ पर इनका प्रायः सम्मिलन होता एवं रचनाओं का प्रसारण होता।

रचना-वैभव

आधुनिक अवधी-कविता के एक विस्मयकारी प्रयोग-धर्मी महाकाव्यकार[1] कविवर मृगेश अवध- अंचल के एक यशस्वी और लोकप्रिय जनकवित के रूप में सादर स्मरणीय हैं। उन्होंने परम्परा से आगत शैली में ब्रज-भाषा-काव्य-सृजन तो किया ही, खड़ीबोली में भी 'परशुराम-कर्ण' प्रकरण पर 'दया-दण्ड' संज्ञक खण्डकाव्य समेत उत्तम काव्य-रचना की, किन्तु साहित्य-जगत् में उनकी अस्मिता प्रधानतया उत्कृष्ट अवधी काव्य-सर्जना और यशस्वी अवधी कविरूप के बल पर प्रतिष्ठित हुई।

कविवर मृगेश द्वारा विरचित साहित्य का विवरण निम्नवत् है :

(क) प्रकाशित

	पुस्तक नाम	प्रयुक्त भाषा	भूमिका-लेखक
1.	बरवै-व्यंजना (विरह-संदेश)	अवधी	पं. सोममित्र शास्त्री
2.	माधव-मंगल (कीर्तन)	अवधी-ब्रज-खड़ी	—
3.	दया-दण्ड (खण्ड-काव्य)	खड़ी	आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र
4.	पारिजात (लोकमहाकाव्य)	अवधी	डॉ. भगीरथ मिश्र

(ख) अप्रकाशित

1.	सेबरी-शतक (खण्ड-काव्य)	ब्रज	बाबू वृन्दावनदास
2.	मृगेश महाभारत (वीरकाव्य)	खड़ी	पं. श्यामनारायण पाण्डेय
3.	लहचारी (लोकगीत)	अवधी	प्रो. राजनाथ पाण्डेय
4.	सुगीत (गीत)	खड़ी	—
5.	मृगांक (मुक्तक, सवैया, घनाक्षरी)	खड़ी	—
6.	गाँव के गीत (लोकगीत)	अवधी	प्रो. सिद्धिनाथ मिश्र
7.	चयन (मुक्तक रचनाएँ)	खड़ी, अवधी, ब्रज	पं. त्रिभुवननाथ शर्मा 'मधु'
8.	कुछ अपनी ही (आत्मकथा)	खड़ी	—
9.	राणा की आन (नाटक)	खड़ी	—
10.	एकलव्य (नाटक)	खड़ी	—
11.	बैजू बावरा (नाटक)	खड़ी	—
12.	चहलारी-नरेश (महाकाव्य)	अवधी	डॉ. मुंशीराम शर्मा 'सोम'

यहाँ, यह उल्लेखनीय है कि उक्त सभी कृतियों-पुस्तकों का कुशल संपादन डॉ. त्रिभुवननाथ शर्मा 'मधु' ने किया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि डॉ. मधु स्व. मृगेश की साहित्य-लोक-यात्रा के परम घनिष्ठ सहयोगी और उनकी सर्जना के सर्वप्रधान प्रेरणा-स्रोत रहे हैं। उनके साहित्य को जो भी इतनी कुछ व्यवस्था, चारुता और प्रकाशना मिली, उसका सर्वाधिक श्रेय समर्पित साहित्य-समाराधक डॉ. मधु और उनकी स्वस्तिमती भार्या श्रीमती कांति शर्मा को है, जिसे शारदा-सुअन मृगेश जी ने स्पष्ट स्वीकार किया है।[2]

अवधी के शुभ्रभाल मृगेश की तीन-चार प्रतिष्ठित कृतियों का किंचित् विस्तृत परिचय यहाँ दिया जा रहा है :

दया-दण्ड

'दया-दण्ड' संज्ञक खण्डकाव्य की वस्तु वीर कर्ण की कथा और परशुराम से छद्मवेश में धनुर्विद्या पढ़ने के वृत्त पर आधारित है। धनुर्वेद के पारंगत विद्वान् की गुरु-रूप-वरण में यह बाधा थी कि परशुराम यह विद्या क्षत्रियों को न देकर, ब्राह्मण को ही देते थे, जबकि कर्ण ने विप्रवेश धारण कर उनसे यह विद्या प्राप्त की। यह भेद खुल गया। रुष्ट होने पर भी, गुरु ने दया-दण्ड दिया जिसकी काव्यमयी अभिव्यक्ति मृगेश के कवि ने निम्नवत् कीः

किन्तु गुरु का हृदय ही क्षमावान है
दण्ड में भी दया का उसे ध्यान है,
क्षम्य अपकीर्ति की छाप बन जायेगा
तुझको वरदान ही शाप बन जायेगा।

नीति में प्रीति भी पालनी है तुझे
ले महा पंचशर दे रहा हूँ तुझे,
ये रहे साथ तो काल भय खायगा
यदि पृथक् हो गये अन्त हो जायेगा।

- कुफल (दया), पृ. 33 (दया-दण्ड)

एवंविध, कविवर मृगेश ने गुरु-कृपा का शास्त्रसम्मत विशिष्ट आख्यान किया है और पाठकों तथा भावी पीढ़ी के लिए अपना संदेश भी प्रसारित किया है।

कवि ने काव्य की संपूर्ण वस्तु को मंगल-आह्वान, संकेत, शिष्य, गुरु, कपट, कुफल (दया) तथा उपसंहार नामक सात सर्गों में उपन्यस्त किया है। प्रथम सर्गान्तर्गत सुअधीत कवि ने यथापेक्षा मंगलाचरण द्वारा परम-पूज्या जननी और माँ भारती का जयगान किया है। द्वितीय सर्ग 'संकेत'-सीमा में वरेण्य कवि ने प्राचीन भारत के गौरव, आदर्श आश्रम-शिक्षा-व्यवस्था, शिष्य द्वारा गुरु से कपटपूर्ण व्यवहार की निन्दा, संदर्भित काव्य-प्रणयन के लक्ष्य आदि प्रसंगों का संयमित आख्यान किया है। यहाँ, काव्य के लक्ष्य की अभिव्यंजना-परक कतिपय पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :

इस संस्कृति की अमरता जिन पर टिकी प्रत्यक्ष है
केवल उन्हें सतर्कता देना कवि का लक्ष्य है
यह कपोल-कल्पित नहीं सबल सत्य इतिहास है
इसके व्यापक भाव पर अटल अचल विश्वास है।

x x x

कुछ भी हो इस मान्यता का आदर्श महान हो
हमसे भ्रम से भी न इन गुरुओं का अपमान हो
प्रगति पंथ पर बढ़ रहे जिनके सत्वर पाँव हैं
उनके सिन्धु अथा के यह गुरुवर की नाँव हैं।

'शिष्य' सर्गारम्भ में, कवि सतयुग-त्रेता युगों की प्रतिष्ठित परम्पराओं का संक्षिप्त स्मरण करते हुए, द्वापर की आँधी और संघर्षों की धारा का अभिकथन करता है। तदनन्तर, शिष्य कर्ण के शस्त्रज्ञानार्थ दृढ़

संकल्प, गुरु द्रोण और परशुराम का स्मरण, कर्ण के कपट-नीति-प्रेरित ब्राह्मणवेश-धारण और उसके अन्तर्द्वन्द्व आदि प्रसंगों को काव्य-छंदों में आख्यायित किया गया है।

'गुरु' सर्ग के प्रारम्भ में ऋषिवर परशुराम के आश्रम की मनोहारी प्राकृतिक छटा का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात्, ऋषि की तपःपूत तेजोमयता-गुरुता का अभिवर्णन किया गया है; जैसाकि नीचे उद्धृत छन्द से सुस्पष्ट है :

विजन के कण-कण की काया कथा गुरुता की कह रही
हिमांचल के आँचल में थी शौर्य की सरिता बह रही।
बड़ धन्वी योद्धाओं के मान मिट जाते थे यहाँ
धनुष-विद्या लेने मुनि से अमर भी आते थे यहाँ।

'गुरु' सर्ग की ही भाँति, 'कपट' सर्ग का प्रारम्भ भी, कवि ने प्रकृति की सहज चित्रणा से किया है, जहाँ कवि द्वारा अभिचित्रित दृश्य में भाव और भाषा, दोनों का समन्वित लालित्य अतीव मनोरंक है:

सरगम पर स्वर सधे विहंगम बोलते
सरसिज भी थे नयन उनींदे खोलते
निर्झरिणी गति ताल लहर में जाँचती
जिसका ले आधार मयूरी नाचती।

क्रमशः, धनुर्विद्या-दीक्षाकांक्षी कर्ण मुनि-आश्रम में पहुँचता, उनका अभिनन्दन करता, अपना परिचय देता, अन्तर्मन का उद्देश्य स्पष्ट करता दर्शाया गया है। सर्गान्त में, मुनिवर धनुर्विद्याकांक्षी कर्ण को सम्मानपूर्वक दीक्षा प्रदान करने का वचन देते हैं, जिसकी कवि ने सहज अभिव्यंजना की है :

यदि ब्राह्मण हो तो सुदया के दान से
तुम्हें धनुर्विद्या देंगे सम्मान से
सावधान! पर भ्रम में यदि खो जाएगा
गुरु से छल, का फल उल्टा हो जाएगा।

काव्य के 'कुफल' सर्ग में, धनुर्विद्या पारंगत मुनिवर परशुराम दीक्षार्थी कर्ण को शस्त्र-विद्या देना प्रारम्भ करते दिखाये गये हैं। सर्ग-मध्य में संवादपूर्वक शस्त्र-विद्यादान का काव्यमय वर्णन किया गया है। सर्गान्त में, विषैले कीट के जानु-छेदन एवं उसके फलस्वरूप कर्ण के कष्ट-कर्तव्य के घोर संघर्ष तथा गुरुवर परशुराम की क्षमा-संयुता शापजनक वचनावलि की कुशल अभिव्यंजना की गयी है।

शिक्षा-प्रधान प्रस्तुत खंडकाव्य के उपसंहार में, कवि ने अपने संकल्पित लक्ष्य और संदेश की चारु अभिव्यंजना की है। संसार की गुण-दोषमयी विषमता-विपरीतता भी कवि ने यहाँ कुशलतापूर्वक सरल भाषा में अभिवर्णित की है। उदाहरण-स्वरूप दो छन्द द्रष्टव्य हैं :

विधि विषमता में बँधा संसार है
सृष्टि रचना का विषम साकार है
फल सफल प्रतिकूलता के कोष का
दोष में गुण और गुण में दोष का।
किन्तु स्वाभाविक प्रकृति की रीति है
यह विषम विपरीतता भी नीति है

फूल में काँटा असंगत है सही
किन्तु पूर्ण अभाव भी संगत नहीं।

आशयतः, 'दया-दण्ड', अपने कलेवर और कथ्य की संक्षिप्तता के बावजूद एक सहज-सफल खण्डकाव्य है। कवि, अपने संकल्पित लक्ष्य की साधना में यहाँ पूर्ण सफल दिखायी पड़ता है। वस्तु की सहज अभिव्यंजना, संदेश की चारुव्यंजना, भावानुगामिनी प्रांजल किन्तु सरल प्रभावकारी भाषा-छंद-प्रयोगवत्ता मेरी दृष्टि में इसक सर्वप्रधान विशेषताएँ हैं।

पारिजात

'पारिजात' प्रातिभ कवि मृगेश द्वारा प्रणीत सांस्कृतिक आयाम का प्रतिनिधि महाकाव्य है, जिसे लब्धप्रतिष्ठ काव्यशास्त्री डॉ. भगीरथ मिश्र ने 'लोक महाकाव्य' की संज्ञा दी है। जनश्रुति की आधार-भूमि पर कवि ने उर्वर कल्पना-कूची से इसे रूपायित किया है। अवधी-विरचित प्रबंध-काव्य-परंपरा में वस्तुतः पारिजात गौरवपूर्ण स्थान का अधिकारी है।[3]

'पारिजात' एक पुरातन विशाल वृक्ष माना जाता है, जो बाराबंकी जनपद में 'बदोसराय' कस्बे से दो किमी. पूर्व की दूरी पर प्रसिद्ध तीर्थ 'कोटवाधाम' के पश्चिम चार किमी. पर अवस्थित है। इसके ठीक उत्तर एक मील की दूरी पर 'किन्तूर' (पुराना कुन्तीपुर) और कुन्तेश्वर महादेव का मठ है। बालुका-निर्मित प्राकृतिक भूड़ों पर स्थित यह विश्व का एकाकी वृक्ष माना जाता है जिसका तना हाथी की गर्दन जैसी सिलवटों का है और जो आभामण्डित रुपहले रंग का है। दंतकथाओं के अनुसार, इसका संबंध देवराज इन्द्र के 'नन्दन-वन' से है, जिसे महाभारत-काल में अर्जुन ने लाकर इस स्थान पर आरोपित किया था। इसी कथानक की सविस्तार विवेचना करते हुए कवि-शिरोमणि मृगेश ने पारिजात अभिधानी काव्य की रचना की है। हिन्दी की छन्द-विविध इस काव्य में सफलतापूर्वक प्रयोग की गयी है, जिससे अवधी न केवल समृद्ध हुई है, अपितु गौरवशालिनी बनी है।[4]

प्रबंधकार के ही अनुसार, काव्य में 'वरदा-वन्दना' के अतिरिक्त 15 स्तंभ अभिकल्पित हैं। प्रत्येक स्तंभ सामान्यतः 200 पंक्तियों का है। काव्य कुल 3244 पंक्तियों में समाप्त किया गया है। 'महाभारत' की युगव्यापी घटना का आरंभिक-आंशिक-कथा-तथ्य क्रमबद्ध वर्णन में समाविष्ट किया गया है। वर्ण्य-स्थलों को पारिजात वृक्ष से सम्बद्ध करने का सप्रमाण सफल प्रयास किया गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि कवि की ऐतिहासिक अभिरुचि ही प्रस्तुत काव्य-कृति के प्रणयन का कारण रही है।

'पारिजात' का भाव एवं अनुभूति-पक्ष प्रभावशाली एवं तलस्पर्शी है। मानवीय भावों-अनुभूतियों, प्राकृतिक दृश्यों-पदार्थों का अंकन, इनका सौन्दर्य-निरूपण यहाँ सहजता-कुशलता के साथ किया गया है। उदाहरण के तौर पर मानवीय द्रोहभाव का जैसा सहज-सत्य निरूपण कवि ने इस काव्य में किया है, वह देखते ही बनता है:

अस तौ न कौनौ देस बचा
जिहिमाँ न द्रोह कै भै चरचा
यू द्रोह न मनइन बीच मचा
गा देवासुर संग्राम रचा।
इनहूँ से सिर भारत ह्वैगा
गौरव-गरूर-गारत ह्वैगा
अस द्रोह-दुंदि माँ रत ह्वैगा
घमसान महाभारत ह्वैगा। (द्वितीय स्तंभ, पृ. 31-32)

प्रकृति के सहज नियमों, सृष्टिकर्ता की पोषक प्रकृति की सूक्ष्म जानकारी मृगेश के भाव-प्रवण कवि को थी। पारिजात में ऐसे तथ्यों का प्रचुर मात्रा में प्रभावकारी वर्णन मिलता है। प्रमाणस्वरूप, यहाँ एक सवैया उद्धृत है जिसका भाव और शिल्प-सौन्दर्य निश्चय ही मनहर है :

कुंत करील उगै बरुहे थल, लै जलधार उलीचै न कोई।
ऊँचे पहाड़न न्यारी लता, लहराँय सुक्यारिन खींचै न कोई।
दाख छुहारन क्यारन के बन, बाधक ब्याधिन मींचै न कोई।
लूक अँगारन माँ लहकै, तितुली औ मदारन सींचै न कोई।।

(द्वादश स्तंभ, पृ. 144)

स्पष्ट है, कवि ने ग्रंथ की रूपायन-भूमि में भाव-भित्ति को सुदृढ़ता देने, उसे यथाशक्ति सँवारने की निष्ठापूर्वक कोशिश की है, और वह अपने इस लक्ष्य की परिपूर्ति में सफल भी रहा है।

पारिजात की अभिव्यंजना-शिल्प भी चमत्कारिक और वैविध्यपूर्ण है। अवधी की अनेक शैलियाँ इसमें कुशलतापूर्वक प्रयुक्त हैं। पर ये प्रायः वहीं हैं जो क्षेत्रीय जनमानस से मेल खाती हैं। इसमें सहजता तथा अपनेपन के दर्शन होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि की कारयित्री लोक-प्रतिभा 'पारिजात' की साँचा-विविधा में ढल गयी है और वह अमर हो गयी है। चौपाई, आल्हा, सवैया, घनाक्षरी सरीखे लोक-छन्द इस काव्य में बहुलता से प्रयुक्त हैं। अवधी में सवैया-घनाक्षरी का इतना सफल प्रयोग प्रायः अन्यत्र देखने को नहीं मिलता।[5]

अवधी प्रबन्ध-काव्य-परंपरा में दोहा, चौपाई, हरिगीतिका, छप्पय, तोमर आदि छन्दों का प्रयोग ही प्रायः मिलता है, किन्तु 'पारिजात' लोक महाकाव्य में, इनके साथ-साथ आल्हा, कहरा, रसिया, विदेसिया जैसे लोकगीतों, गजल, रुबाई, सवैया, घनाक्षरी, जैसे मात्रिक छन्दों तथा द्रुतविलंबित, शिखरिणी जैसे संस्कृत वृत्तों का चारु प्रयोग किया गया है। निश्चय ही, इससे काव्य-शैली में विविधता और रोचकता का समाहार हुआ है। अभिमत की पुष्टि-स्वरूप यहाँ एक-दो छन्द उद्धृत हैं। छल-कपट भाव से निर्मित लाक्षागृह की भव्यता का वर्णन :

ऊ पाँच खण्ड का महल बना अक्कासी है
जिहिमाँ जुग के अनुकूल नयी नक्कासी है
राजन कस ऊ के कच्छ प्रभा माँ निखरि रहे
ऊँचे सिखरन पर सुरज-जोंधय्या उतरि रहे। (तृतीय स्तंभ, पृ. 51)

पारिजात पादप परिदृश्य और पाण्डु-नन्दन के सिहाने का वर्णन :

मंत्रपूत इन्द्र के प्रभूत अरजुन जब, सिथिल सरीर ह्वै अधीर अकुलायगे।
देवपारषद देवराज का हुकुम पाय, तब धरा धाम माँ सरग छोड़ि आयगे।।
स्वौतै अरजुन का उठाय कनिया माँ लाय, पारिजात पादप की छाँव माँ सोवायगे।
गंधरब गान गे जगाय सहजै सुभाय, नंदन निहारि पाण्डु-नंदन सिहायगे।।

(नवम स्तंभ, पृ. 114)

'पारिजात' के कवि ने यहाँ अपनी प्रगतिशीलता का परिचय देते हुए काव्य-शैली को प्रगति-परंपरा में अधिष्ठित करते हुए आधुनिकता के निर्वाह का भरसक प्रयास किया है। प्रत्येक सर्ग में पृथक्-पृथक् काव्यवृत्त प्रयुक्त किये गये हैं। निश्चय ही, इससे न केवल प्रगीतात्मकता सँवरी है अपितु काव्य की

प्रबन्धात्मक अपेक्षा भी परिपूरित हुई है। छन्द अन्त्यानुप्रासिक हैं, और यहाँ हिन्दी तथा क्षेत्र-अंचल में जनप्रिय चौपाई, गजल, रुबाई, कवित्त, सवैया, कहरा, आल्हा, रसिया, विदेसिया, सरीखे छन्दों-लोकगीतों के साथ-साथ, संस्कृत के द्रुतविलम्बित और शिखरिणी के तद्रूप छन्द भी कुशलता-सहजता से प्रयुक्त किये गये हैं जैसाकि कवि का स्वयं का कथन है।[6]

भाषा में सामान्य पाठक-बोध-सहायक लोक-प्रचलित शब्दों का यथेष्ट प्रयोग किया गया है। कवि को भाव-भाषा की सुसमन्वित श्री-सर्जना इष्ट रही है। इससे न केवल काव्य-माधुरी में उत्कर्ष आया है, न ही भाषा की चमत्कारिता द्विगुणित हुई है, अपितु कथ्य की संप्रेषणीयता भी संवर्द्धित हुई है। तथ्य के प्रमाणस्वरूप एक-दो छन्द यहाँ उद्‌धृत हैं। मधुमास की मनोहारिता का दिग्दर्शक एक चित्र :

मधु मधुराई मधुमास ढारे अपने मुँह कै
घूमि-घूमि, डारी-डारी झूमि कै कोयलिया कुहकै
सीरे-सीरे दखिने समीर तरु के तीरे धावै
सुमनन आसा लै मलिन्द गाथा गुन-गुन गावे। - पृ. 178

'पारिजात' के प्रतिष्ठापक वीर अर्जुन के श्रम-शोध की सार्थकता का वर्णन :

अर्जुन का ना स्रम-सोध कब्बौ मिथ्या जाई
जुगन-जुगन पारिजात उनकै गाथा गाई
सब थल होई सुपुनीत सुख के घन बन छइहैं
मनइन नाहीं, देबी-देव बिरवा द्याखै अइहैं। - त्रयोदश स्तंभ, पृ. 163

संक्षेप में, पारिजात आधुनिक अवधी का एक प्रतिनिधि लोक महाकाव्य है। कथ्य और शिल्प की विशिष्टता-मौलिकता, अनुभूति और कल्पना की प्रवणता-उर्वरता, संदेश और शुभाशा की अमरता-मंजुलता के कारण साहित्य-लोक में इसका अनूठा स्थान रहेगा, ऐसा हमारा अभिमत है।

चहलारी-नरेश

अवधी भाषा में विरचित 'चहलारी-नरेश' मृगेश जी का दूसरा महाकाव्य है, जिसे आंचलिक इतिहास की एक प्रशस्य कृति कहा जा सकता है। यह 12 सर्गों में विभाजित है तथा इसमें कुल 305 छन्द हैं। इस काव्य में बहराइच जनपद के चहलारी-नरेश बलभद्र सिंह की वीरता-शूरता का अत्यन्त सजीव और मार्मिक वर्णन किया गया है। वीर बलभद्र सिंह 1857 ई. के स्वतन्त्रता-संग्राम में, अपनी छोटी-सी सेना लेकर, बेगम हजरत महल की रक्षा-निमित्त, बाराबंकी में जमुरिया नाले के पास अँगरेज सैनिकों से भिड़ गये थे। युद्ध में उन्होंने बहुत से अँगरेज सैनिकों को तो मौत के घाट अवश्य उतारा, पर स्वयं वह इसमें शहीद हो गये। वीर बलभद्र सिंह उस समय नव-विवाहित और अल्पायु थे।

प्रसंगानुकूल काव्य ओज-वर्णन-प्रधान है, तथापि इसमें शृंगार एवं करुण प्रसंगों का अवसरानुसार सफल निरूपण भी हुआ है।[7] संपूर्ण काव्य घनाक्षरी और सवैया छन्दों में विरचित है।

बरवै-व्यंजना

बारहमासा-वर्णन हिन्दी कवियों को बहुत भाया है। अवधी काव्य-परंपरा में भी बारहमासा-वर्णन, ऋतु-वर्णन मिलता है। मृगेश के प्रयोगधर्मी कवि ने भी बरवै छन्द के कौशलपूर्ण प्रयोग द्वारा अवधी में बरवै-व्यंजना' कृति की रचना की और भारतीय संवत्सरों द्वारा अवधानित बारहमासों की इसमें मनोहारी चित्रणा की।

प्रस्तुत कृति में विरहवर्णन के साथ-साथ भारतीय महीनों-ऋतुओं का सूक्ष्म-सधा चित्रांकन किया

गया है, जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि कवि को प्राकृतिक दृश्यों-उपमानों, लोकजीवन और अनुभूतियों की विविधता की व्यापक जानकारी थी, जिसे उसने अपनी पैनी प्रज्ञा और उर्वर कल्पना से रूपायित किया है।

प्रेम-विरह की ललित अभिव्यंजना के भाव से ऐसा प्रतीत होता है कि मृगेश के प्रकृति-रागी कवि ने प्रकृति के उद्दीपनकारी रूप को वरीयता से चुना है, और उसका अवलम्बन ले, न केवल उसकी सूक्ष्म-मनोहारी अभिचित्रणा की है, अपितु अपने संलक्ष्य प्रेम-वियोग की अत्यन्त मार्मिक एवं जीवन्त अभिव्यंजना भी की है। तथ्य की पुष्टि हेतु संदर्भित कृति के तीन छन्द नीचे उद्धृत हैं :

काँपि-काँपि तन सिकुरै भकुरै हाड़।
रैन बिरह कै ह्वैगे पूर पहाड़।।

x x x

ज्वार बिरह-जुर जरिकै समुदौ भागि।
उफन फैलि फिरि फ्याना उगिलै लागि।।
मलै विषम विष अंगन मलै बयार।
अपनिनि साँस साँपिनियाँ कै सुसकार।।

अनुप्रास, यमक, श्लेष, रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकारों का जैसा सटीक अनुयोग यहाँ किया गया है, वह देखते ही बनता है।

आलंबन-रूप प्रकृतिपरक माह-ऋतु-वर्णन संदर्भ में कवि का भाव-संकल्पन एवं अभिव्यंजना-शिल्प कितना ललित एवं मनोहारी बन पड़ा है, यह सहज ध्यातव्य है। निम्नांकित कुछ छन्दों से यह तथ्य स्वयं प्रमाणित है :

प्रकृति सुहाग सजाइस पियरी धार।
बिन पति सून सिंगरवा भा पतझार।।
मौंरी भरिन भँवरवा रस बग झूमि।
दुर्दिन देखि न चितइन बेलिन घूमि।।
चैत चाँदनी चौगुन भा परगास।
आवा मधु मन भावा लै मधुमास।।

मृगेश का रचना-शिल्प 'बरवै-व्यंजना' में विस्मयकारी उत्कर्ष को प्राप्त हुआ है। ठेठ-तद्भव शब्दों के अनूठे उपयोग एवं रूपक-उत्प्रेक्षाओं के भव्य प्रयोग से अवधी की गुरुता-शक्तिमता निश्चय ही यहाँ प्रभूत संवर्द्धित हुई है, ऐसा हमारा मत है।

भावानुभूति एवं वस्तु-वर्णन-वैविध्य

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार, ऐन्द्रिक-अनुभूति की दृष्टि से काव्य के प्रमुख दो भेद हैं : 1. दृश्य काव्य तथा 2. श्रव्य काव्य।

संपूर्ण काव्य, पुनश्च परंपरागत रूपरचना की दृष्टि से काव्य-शास्त्रज्ञ मनीषियों द्वारा दो भागों में विभक्त किया गया है : 1. प्रबंध काव्य, तथा 2. मुक्तक काव्य।

कविवर मृगेश ने इन सभी कोटियों में अपनी साहित्य-रचना की है। प्रबंध काव्य कोटि में 'पारिजात' एवं 'चहलारी-नरेश' उनके उल्लेखनीय अवधी-महाकाव्य हैं। 'दयादण्ड' तथा 'सेबरी-शतक' इसी कोटि की उत्कृष्ट खण्डकाव्य हैं, जबकि 'बरवै-व्यंजना', 'मृगेश-महाभारत', 'लहचारी', 'सुगीत',

'मृगांक', 'गाँव के गीत', 'चयन' तथा 'माधव-मंगल' आदिक काव्य-रचनाएँ मुक्तक कोटि की हैं। उनकी नाटक-कृतियों में 'राणा की आन', 'बैजूबावरा' तथा 'एकलव्य' उल्लेखनीय हैं। अन्य गद्य-कृतियों में 'कुछ अपनी ही' (आत्मकथा) प्रमुख है।

भाव, काव्य के प्राणरूप उसके मूल में समाहित रहते हैं। मृगेश का कवि सहज-सरल-भावुक तथा प्रज्ञावान् था। उनकी भाव-सर्जना, पाठक को भावाभिभूत बनाने में सक्षम थी। प्रकृति के मनोहारी सौन्दर्य के विभावन द्वारा, कुंज-गलियों में सलोने श्याम के विहार का शृंगारिक भावमय चित्रण निश्चय ही पाठकों को रस-विभोर करता है :

सुन्दर सुरम्य उपकूल हो कलिन्दजा का, दृश्य वृंदावन का मनोरम निराला हो।
रम्य रजनी हो मधुमास की मृगेश व्योम, विहँस रहा हो पूर्ण चन्द्र का उजाला हो।।
विचर रहे हों श्याम कुंज गलियों में संग, कोई वनबाला सी सलोनी ब्रजबाला हो।
छवि छहराती सी सुहाती पीत अंबर की, कोर फहराती लहराती बनमाला हो।।

मृगेश का कथ्य-फलक व्यापक था। जमींदारी युग के किसान की व्यथा-कथा, वर्षा की विध्वंसकारी बाढ़-लीला, गरीब ग्रामीणों की दवा-दारू की समस्या, बेटियों की शादी-ब्याह-गौन की चिन्ता, अपढ़ों-पिछड़ों का अंधविश्वास, प्रकृति-व्यापारों की सहज नित्यता, ईश-विधानों की प्रबलता, अध्यात्म-चिंतन, युगीन कवियों की कविताई और [illegible], बदलती-बदली संस्कृति की दशा, व्यावहारिक निर्वाह की शर्तें, काव्य-सृजन-शैली में बदलाव, मानवतावाद, विश्वमैत्री, सोहर-मंगल, पेड़-पौधे, नदी-उपवन, गाँव-देश, सबका यथार्थ चित्रण, मार्मिक निरूपण-अंकर कवि को इष्ट रहा। कुरीतियों, विसंगतियों, झूठ-कदाचारों तथा शोषण-उत्पीड़न से, उसका संवेदनशील कवि आर्द्र और मर्माहत हो उठता था। इसीलिए तो उससे जमींदारी युग के किसान की दीन-हीन, शोषणग्रस्त दशा सही न गयी और वह आरत हो बोल पड़ाः

सेंतिन माँ पकरि बेगारि करवावैं सब, देंइ न छेदाम चहै जेती करी चाकरी।
सहना सिपाही रोजु ठाढ़ि गरियावा करैं, मन माँ मसूसा मारि सबिहौं सहा करी।।
नंगे औ उघारि जाड़े पाले माँ दुवारे परे, भूखन के मारे भइया नखत गना करी।
अत्यो पर परत पिटाव रोजु ड्योढ़ी पर, हाँ करी न ना करी बताओ फिरि का करी।।

दीन-हीन, साधनहीन-चिंताग्रस्त किसान की व्यथा के प्रति उनकी गहरी संवेदना थी। यही कारण था, वे सीधे-सपाट ढंग से किसान की व्यथा व्यंजित कर सके :

लरिका मरैं अन्न बिना घर माँ, हमहूँ हियाँ घास बेगारि माँ छोली।
माँदी परी घरवाली कुवार से, लाई कहाँ से दवाई की गोली।।
गौनु बिटेवा का देबै न तौ, बोलिहैं सब टोला-परोस के बोली।
सोच यहै दिन-राति रहै, अब नीकि न लागै देवारी औ होली।।

गाँव-देस के नर-नारियों में ईश-आस्था प्रायः प्रगाढ़ देखी जाती है। मृगेश का कवि भी, शायद, विधि-विधान का विश्वासी था। इसीलिए, बड़ी सहजता-चारुता से उसने स्पष्ट किया :

लाख बनै करता धरता कोइ, कौतुक कृत्य करैया है औरुइ।
बारि दिया धरै कोटिन जाहिर, जीवन-ज्योति जगैया है औरुइ।।
दाँव चहै कतन्यो करौ, नाव कुघाट से घाट लगैया है औरुइ।
मूल बिना भ्रम भूलि सकेलि कै, अम्बर बेलि बढ़ैया है औरुइ।।

- पारिजात, पृ. 145

जग की रीति-नीति की, वर्षा-वसंत की, बाध-घाघ की, समय-साधना की, हीरा और मोती आदि चेतन-जड़ पदार्थों-क्रियाओं-रूपों की सूक्ष्म और गहरी जानकारी कवि को थी। सही सहारे, सच्चे पारखी के महत्व को कवि खूब जानता था। इसीलिए, इनके महत्व का सुरुचिपूर्ण प्रकाशन कर सका :

हीरा रहै हीरै, दुर्भागि की लकीरैं लचीं, सीधि साधना भै सधा सुन्दर समइया मिला।
बरखा-बयारि पाय माटी गै सिमिटि, मैलु मिटिगा कुलच्छनी सरूप सुधरइया मिला।
आभा भै उदीत, जगजाहिर नयी भै ज्योति, किम्मती जवाहिर का जौहर जोंधइया मिला।
देखिनि देखइया वहै कौड़ी भै रुपइया, जब मिलिगा सहारा सही, सच्चा परखइया मिला।।

वही, 111

समसामयिक कवि-समुदाय और कविता-प्रवृत्तियों की, गाँव-प्रमुखों और सामाजिक गतिविधियों की, खेती और किसानी की उलझनों की, उसे गहरी जानकारी थी। हास-परिहास, व्यंग्य-विनोद में वह निपुण भी था। परंपरागत तुकान्त कविता की स्पष्टता-गेयात्मकता और प्रभावान्विति उसे पसंद थी। अतएव, नये-नये उभरते-विकसते साहित्य-वादों की उपयोगिता उसकी दृष्टि में प्रश्नचिह्नित थे। इस भाव की चारु व्यंजना उसी के स्वरों में यहाँ द्रष्टव्य है :

अब की प्रधान भय्या! कविसम्मेलन मैंहाँ, तुमरी दया से सुख पावा मनमाना हम।
कतन्यो कवित्तहा पुरानि पहिचाना, कत्त्यो नये कलाकारन का समुझा तराना हम।।
छाया-माया-प्रगति-प्रयोग का प्रयोग द्याखा, गीतन-प्रगीतन का त्याखा अनुमाना हम।
फैजाबाद, दरियाबाद सुनित रहै 'मृगेश', अब की पछाड़ औ उखाड़बाद जाना हम।।

उनकी वाणी अवध के गाँवों के रूपांकन में खूब रमी है। अवधी का रूप इन चित्रणों-अंकनों में यथेष्ट उभरा और विकसा है। उनकी प्रत्येक अवधी-रचना हृदय को छूती है और मन को उल्लसित करती है। लोक-जीवन की बाँकी झाँकी, उसकी सुघरता-विद्रूपता, मस्ती-उलझन, नीति-अनीति, आशा-निराशा, सादगी-रंगीनी, हास-उपहास, उजाला-अँधेरा, आदि सब कुछ मृगेश की साहित्य-सर्जना विशेषकर अवधी काव्य-रचनाओं में अभिचित्रित हुआ है। तथ्य के उदाहरण स्वरूप एक-दो चित्र यहाँ प्रस्तुत हैं। विपदा और निराशा के बीच राम के सहारे की अनुभूति का चित्रण :

का कही 'मृगेश' अस विपति परी है आँसौ, घर माँ न अन्न है न बैल का न चारा है।
पहुना पही जो कबौ आवैं तौ टिकाई कहाँ, छप्पर न प्वाढ़ है न साबुत दुवारा है।।
घर की दिवालैं सब चौपट परी हैं, राम कैसे कै उठवाई न मँजूरी है न भारा है।
आबरू गरीबन कै तुमहीं बचइहौ, असमय माँ काम अइहौ राम! तुमरै सहारा है।।

लोक-गीत का सुमधुर सृजन-गायन :

अनुभूति की चरमावस्था में लोकगीतों की स्वतः उत्पत्ति होती है। लोक-जीवन के अंतस् की सामान्य अनुभूतियाँ इनमें समवेत रूप से प्रतिफलित होती हैं। ये गीत एक कंठ से निकलकर प्रायः जन-जन के कंठ का हार बन जाते हैं। सदियों के घात-प्रतिघात, स्त्री-पुरुषों की थकानें, जवानों की प्रेम-मस्ती, विरही युवकों के मन की कसक, पथिकों की थकावटें, विरहिणियों की विभिन्न मनःस्थितियाँ, उनके आवेग, यहाँ सहजभावेन, अभिव्यंजित हो लयमण्डित विश्राम पाते हैं। तीव्र तन्मयता, भावावेगों की मार्मिकता, प्रभाव-संयुत चरित्र-चित्रण, गायन-त्वरा, आनन्द-तरंगों की लयात्मक स्वछन्द अभिव्यक्ति, अकृत्रिमता और कभी-कभी भक्ति-अध्यात्म-उन्मुखी उपदेशात्मकता--लोकगीतों ही सहज विशेषताएँ हैं। संस्कार-गीत, ऋतुगीत, व्रत-गीत, क्रियागीत, जाति-गीत, आदि इनकी भिन्न-भिन्न कोटियाँ हैं। झूमर-गीत,

देवर-भाभी-संवाद-गीत, तुलसी-गंगा-मइया के गीत भला लोक-जीवन के किस कोने में गूँजे नहीं हैं!

आशय यह है--इनमें से अनेक कोटियों का अवसरानुकूल विरचन और संगायन कवि मृगेश की साहित्य-सर्जना में यथेष्ट मिलता है। अवधी के साँचे में, इनका पारम्परिक और मौलिक विधायन कवि मृगेश को इष्ट रहा है। तथ्य के उदाहरण रूप, अवध की नारी की आकांक्षित सहज वत्सलता और दैन्य का निरूपक एक सोहर-गीत और उसकी माधुरी देखिये :

न रोओ निधनी के धनिया, न कनिया से मचलौ हो।
ललना रसे-रसे पलना झुलौबौ, समय के गीत गउबौ हो।
धाय अइहैं सरग जोंधइया, औ भइया का खेलइहैं हो।
नचिहैं संघै-संघै मोरी अँगनइया, बलैया मैं ल्याहौं हो।
हम रोई तौ पूत रोई, करमवा माँ लिखिगा हो।
सुगना तुम ना नयन-नीर ढारौ, न लोटनी पसारौ हो।

लोक-व्याप्त विद्रूपताओं और विवशताओं, व्यथाओं और विडंबनाओं की कितनी सफल व्यंजना मृगेश ने अपने लहचारी-गीतों में की है, यह सहज द्रष्टव्य है। भाषा और भावा के लालित्य की समन्वित व्यंजना भला किसका मन न मोह लेगी? देखिए एक चित्र :

कोई दुखिया न लागै ना गोहार
कहार तूरे डारैं डोलिया।
विदा करावै आये पिता से, कै-कै कौलु करार
मुल बीचै माँ नियति बदलिगै, उड़िगा हवा माँ जो ओहार।
कहार तूरे डारैं डोलिया।
नैहर बहुत पिछरिगा पाछे, बड़ी दूर ससुरार
रात अँधेरिया डगर अटपटी, घूरि रहे हैं बट-मार।
कहार तूरे डारैं डोलिया।

बेमेल स्थितियों, विसंगतियों, लोक में देखे जाने वाले बहुप्रचलित सत्यों-रहस्यों के निर्मम उद्घाटन में मृगेश का जनकवि प्रवीण था। कथन की पुष्टिकर्त्री कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत हैं :

है मीत बना जो लाख जुगाधिन का बैरी
बदला पुरान कब दाँव पाय कै पाटी ना।
जल माँ बसिकै कब मगरमच्छ से बैरु चली
औ आसतीन का साँप कहाँ तक काटी ना।
ह्वैगा सवार जब भूत वार कब तक न करी
मूड़े पर चढ़ी चुड़ैल भला कब तक निबही?
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

मृगेश एक प्रखर और सफल शिक्षक रहे। गुरु-शिष्य-जगत् की सूक्ष्म जानकारी उन्हें थी ही। उभय पक्ष के बीच होते संवाद की कितनी तीक्ष्ण अभिव्यंजना कवि ने की है, यह सहज विचारणीय है :

जमपुर माँ म्याला भवा गुरू औ च्याला का
दूनौ दूनौ का डाटि रहे, हम भरि पायन
ई भरनी माँ तुमरेन करमन कै करनी है

तुमरिन चलतन ई महापुरी तक हम आयन
जमराजौ उनकै दसा देखि अँसुवाय उठे
नरकौ माँ ठेलम ठेल भला तक निबही?
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

व्यंग्य और विनोद की इतनी मर्मभेदी व्यंजना, वस्तुतः मृगेश के कवि से ही संभव थी।

सामाजिक और साहित्य-लोकगत यथार्थ एवं बदलते युग की अपेक्षाओं की मुखर अभिव्यक्ति में मृगेश का गतिशील मन मौन न रहा। नवीन युगीन प्रवृत्तियों के प्रति उन्मुखता के लिए कवि ने लोगों को आगाह करना अपना धर्म समझा और उन्हें सावधान किया :

तुम करौ कवितई बन्द
बुढ़ौनू जुग बदला।
पछियाव बनी पुरवइया, सबिहौं गा बदलि रवैया
ई प्रगतिवाद के जुग माँ, को पूँछै कवित-सवैया।
ई दुर्मिल, मत्तगयन्द, बुढ़ौनू जुग बदला।
तुलसी कबीर कै बानी, सड़ियल भै और पुरानी
केशव कवि के कबितन माँ, अब रहा न कौनौ पानी
रचि-रचि मरिगे हरिचन्द, बुढ़ौनू जुग बदला।

आशयतः, मृगेश की भावानुभूति मर्मस्पर्शी, संवेदनामयी, तीक्ष्ण प्रेरणादायी और लोकमंगलकारिणी थी। उनका कथ्यफलक वैविध्यपूर्ण और समाज-लोक-प्रकृति-युग-आधारित था। उन्हें अपनी धरती, अपना धाम, अपना वातावरण-समाज-देश और अपनी संस्कृति-भाषा प्यारी थी। त्रासद स्थितियों के पति संवेदना, पर उनसे निपटने के लिए शिक्षा-संदेश, उन्हें अभीष्ट था। उन्हें चैन की नहीं, उद्‌बोधन की वंशी रुचती थी। सामाजिक प्रश्नों का काव्यवाणी से समाधान, युगापेक्षी जीवन-मूल्यों की निर्धारणा-आचरणा उन्हें परम प्रिय थी। उनकी काव्य-वाणी, शिक्षा-सरिता तुल्य शिवं-ओजस्-प्रवाहिनी थी। वे सच्चे अर्थों में 'गुरु' और 'मृगेश' थे। सादगी-सपाटबयानी उनकी अभिरुचि थी। वे सचमुच, नन्दन वन के 'पारिजात'-सम स्पृहणीय हैं।

मृगेश का शिल्प पक्ष, कुछ विशेष

मृगेश शिल्पगत सहजता के हामी थे। अपनी अनुभूतियों संवेदनाओं की वे सुबोध काव्याभिव्यंजना किंवा गद्याभिव्यंजना चाहते थे। सौन्दर्य-सृष्टि के बहाने उन्हें भाषा की क्लिष्टता किंवा अलंकारों का अतिशय विनियोजन अभीष्ट नहीं रहा। तथापि, उनके काव्य में भाषा की सहजता, चारुता, छन्द-प्रयोग की मौलिकता-कुशलता, लय की मधुरता-मर्मस्पर्शिता, लोक-सुरों की मधुरिमा, अर्थ-गुरुता, लालित्य-उत्कर्षी अलंकार-प्रयोग की विशिष्ट छटा प्रायः व्याप्त मिलती है। भाषा एवं आलंकारिक प्रयोग-सौष्ठव के कुछ उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं :

आनुप्रासिक छटा-मण्डित शब्दार्थ-लालित्य एवं मानवीकरण की भव्यता :

घमवा रुचै न अमवा झूमैं बौरि।
फिर मधुकर मधु लोभी आए दौरि।। - 'बरवै व्यंजना'

शृंगारिक प्रसंग में भावानुगामिनी ललित भाषा एवं मानवीकरण सौन्दर्य का दिग्दर्शन :

रतिया सजग सुरतिया छतिया छीजि।
दिन माँ पोंछि पसिनवा अँचरा भीजि।। - 'बरवै व्यंजना'

शारदीया अमृत-वर्षा का एक मनोहारी चित्र जिसके अंकन-कौशल के समक्ष संभवतः 'बिहारी' और 'नन्ददास' सरीखे महाकवि भी फीके लगने लगते हैं :

सीतक सरद जुन्हैया नभ मुसकाय।
साजैं साज सुहागिन जिय हुलसाय।।
बरसै सरद सेवाती बूँदनि तोलि।
अमरितु पियइ पपीहा पिव-पिव बोलि।। - 'बरवै व्यंजना'

'विधिना के लिखे अंक मेटे जाने को नहीं'--इस उक्तिगत भाव की कितनी सुघर व्यंजना कवि ने अपनी भाषा-ललिता के बीच की है, यह देखते ही बनता है :

यू आँखिनि द्याखा भाव अहं का सिरजा है
भगवानै का प्रतिबन्ध न मन से अरजा है
धनबल जनबल से जन-मन यू बौराय रहा
नमतै छाँह बनि मनई का पछुवाय रहा।

लोकजीवन-ग्रामजीवन से गृहीत मौलिक उपमाओं के प्रयोग का चारु निदर्शन :

जस बिगरै माटी नरम गीलि गिंजवाये से
फिर बनै न सूघरि लाखन ब्यार बनाये से
वैसे कूकुर औ काठी कै गति-मति वाले
सुधरैं न चहैं जस होंय बड़ी किम्मति वाले।

एवंविध, कथ्य की रोचकता के साथ-साथ, मृगेश जी की कथन-शैली की सुघरता बड़ी मनोहारी है। उनके दार्शनिक विचार, उनके नीति-अनुभवपरक तथ्य अवधी-खड़ी-बज, तीनों भाषाओं की शिल्प-भूमि में भव्यता से उतारे गये हैं। भिन्न-भिन्न अर्थ-व्यंजना-संवाही उनकी भाषा-भागीरथी में यदा-कदा संस्कृत तथा साहित्यिक जगत् में प्रयुक्त होने वाले तत्सम और तद्भव, दोनों कोटियों के शब्द सहजतापूर्वक प्रयुक्त-प्रवाहित दृष्टिगत होते हैं। लोक में प्रचलित छन्द परम्परागत तरीके से ही नहीं, नव्य प्रयोगवत्ता से चारुतर और अर्थ-भाव-संवाही बनाये गये हैं।

सारतः, मृगेश आधुनिक अवधी और अवधांचल के भास्वर मणि थे। उनका वस्तु-चयन-क्षेत्र व्यापक तथा समाज-अंचल-युग-राष्ट्र-आधारित था। जड़ प्रकृति के दृश्य-उपमान भी उनकी दृष्टि-परिधि में थे। दृश्य और श्रव्य, किंवा प्रबन्ध और मुक्तक-सर्जना की इन सभी विधाओं-कोटियों में उनकी सहज पैठ थी। वे प्रतिभा के धनी थे। उर्वर कल्पना की डोरी का अवलम्ब ले, लोक-भाषा के साँच में, अपनी तरल-सघन-तीक्ष्ण अनुभूतियों को, उन्होंने सुरुचिपूर्णता से, मुखरित किया। 'पारिजात', 'दया-दण्ड', 'बरवै व्यंजना' सरीखी उनकी काव्य कृतियाँ निश्चित रूपेण प्रशंसनीय और साहित्य-जगत् में चिरकाल तक संरक्षणीय हैं।

मृगेश की प्रवृत्ति लोक-समाजोन्मुखी थी। आडम्बर-कृत्रिमता के वे जन्म से बैरी थे। लोकजन की व्यथा-कथा में उनकी प्रबल अभिरुचि थी। परम्परागत भारतीय जीवन-मूल्यों में उनकी गहरी आस्था थी। तथापि वे प्रगतिशील-परिवर्तनशील समाज-युग की मान्यताओं-प्रवृत्तियों के साथ समायोजन

करने के विरोधी नहीं थे। अपितु अपना धर्म समझकर लोकहितार्थ यथावसर इनकी प्रभावी व्यंजना करते रहे।

औपचारिक-अध्ययन के बूते उन्होंने बड़ी-बड़ी उपाधियाँ तो जरूरत अर्जित नहीं की थीं, पर उनकी अध्ययन-पीठिका निश्चय ही अत्यन्त पुष्ट थी। व्यंग्य-विनोद, हास-परिहास, शिक्षा-संदेश, मर्यादा-नीति, ओज और कारुणिकता उनकी प्रकृति और व्यक्तित्व में समाये थे। लोकजीवन, लोकगीतों, लोकभाषाओं, लोक-संस्कृति में उनकी गहरी अभिरुचि और पैठ थी। उनके काव्य-साहित्य की शिक्षाएँ और सूक्तियाँ, अनुभूति और शिल्प-पक्ष की गहराइयाँ और विशिष्टताएँ, सृजन और अभिव्यंजनापक्ष (विशेषतया छंद-विधान) की विधाएँ और दिशाएँ तथा दर्शन और आचार-पक्ष की विचार-मणियाँ और मूल्य-संहिताएँ, निश्चयतः श्लाघ्य, अनुकरणीय और चिर-स्मरणीय हैं।

संदर्भ

1. द्रष्टव्य—ब्रजभाषा और अवधी के अधुनातन कवि : डॉ. रामप्रसाद मिश्र, राकेश प्रकाशन, मधु-निवास, बाराबंकी, प्रथम संस्करण-1990, पृ. 49
2. देखिये—'पारिजात' : मृगेश, यथार्थता, राकेश शर्मा, राकेश प्रकाशन, बाराबंकी
3. संदर्भ हेतु द्रष्टव्य—अवध-अवधी : विविध आयाम : संपादक डॉ. रामशंकर त्रिपाठी, ग्रंथ में प्रकाशित लेखक का ही आलेख 'बाराबंकी जनपद के प्रमुख अवधी रचनाकार', पृष्ठ 374
4. पुष्टि हेतु देखियें—आधुनिक अवधी के पारिजात 'मृगेश' : डॉ. वेदप्रकाश आर्य
5. पुष्टि हेतु द्रष्टव्य-भूमिका : डॉ. भगीरथ मिश्र, पारिजात-मृगेश, राकेश प्रकाशन, बाराबंकी, 1980
6. यथार्थता : मृगेश, पारिजात, प्रथम संस्करण
7. अवधी भाषा एवं साहित्य का इतिहास, प्रो. राजेन्द्रप्रसाद श्रीवास्तव, भवदीय प्रकाशन, शृंगारहाट, अयोध्या-फैजाबाद, पृष्ठ 133

पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र : अवधी के गुरु-गम्भीर काव्यकार

डॉ. प्रेमशंकर

हिन्दी कृष्ण-काव्य-परम्परा के कवियों में पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र का स्थान प्रमुख है। मिश्रजी का जन्म 5 अगस्त, सन् 1901 में ग्राम पड़री, जनपद उन्नाव में हुआ था और निधन 31 मई, 1988 को। मिश्रजी ने सामाजिक जीवन का प्रारम्भ मध्य प्रदेश से किया तथा बी.ए., एल-एल.बी. की उपाधियाँ प्राप्त कीं। मिश्रजी सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक क्षेत्र में समान रूप से समादृत हैं। कई साल तक वे सागर विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर अधिष्ठित रहे। कुशल नेतृत्व और प्रशासनिक क्षमता के कारण उन्होंने मध्यप्रदेश में गृहमन्त्री तथा मुख्यमन्त्री आदि महत्वपूर्ण पदों का दायित्व बखूबी निभाया। साहित्य एवं हिन्दी पत्रकारिता की सेवा में वे प्रारम्भ से संलग्न रहे तथा मध्यप्रदेश के 'लोकमत' दैनिक, 'श्रीशारदा' मासिक तथा 'सारथी' साप्ताहिक पत्रों के कुशल सम्पादक रहे। देश-भक्ति की भावना से भरपूर मिश्रजी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता-आन्दोलनों में कई बार जेल गये। कारागार में ही सन् 1942 में उन्होंने अवधी भाषा में कृष्ण के जीवन-चरित पर आधारित 'कृष्णायन' महाकाव्य की रचना की। इस कृति का प्रथम बार प्रकाशन 1947 ई. में हुआ।

'कृष्णायन' मिश्रजी की एकमात्र कृति है, जो उनके साहित्यिक अस्तित्व की आधारशिला है। भारतीय वाङ्मय में कृष्ण की जीवन-गाथा इतनी विविध, परस्पर विरोधी तत्वों से पूर्ण एवं विस्तृत है कि उसे समेटकर समन्वित रूप में प्रस्तुत करना एक दुःसाध्य कार्य समझा जाता रहा।

भक्तों ने भगवान् कृष्ण की बाल-लीलाओं एवं प्रणय-लीलाओं में अपने को इतना तल्लीन कर लिया वे महाभारत के योगिराज, राजनीतिज्ञ एवं कर्मयोगी कृष्ण के स्वरूप को जनमानस के समक्ष उज्ज्वल रूप में प्रस्तुत न कर सके। कृष्ण के व्यक्तित्व की इन समस्त विभिन्नताओं को समेटकर उनके लोकनायक, समाज-निर्माता एवं युग-प्रवर्तक रूप का उद्घाटन कठिन था। रीतिकाल में गुमानी मिश्र के द्वारा 'कृष्ण-चन्द्रिका' के प्रणयन में ऐसा प्रयास अवश्य किया गया, परन्तु कल्पना, वैविध्य और उदात्त गम्भीर दृष्टि के अभाव के कारण यह ग्रन्थ विद्वत्समाज में विशेष समादृत नहीं हो सका। महाकाव्योचित महाप्राणता, राष्ट्रव्यापी गुरुता, चरित्र-वैविध्य, व्यापक जीवन-दृष्टि एवं बहुआयामी दूरदर्शिता के कारण द्वारकाप्रसाद मिश्र कृत 'कृष्णायन' का कृष्णसम्बन्धी सभी चरित-काव्यों में महत्वपूर्ण स्थान है।

'कृष्णायन' का कथानक प्रमुखतः महाभारत के आख्यान पर आधारित है। 'श्रीमद्भागवत' और 'सूरसागर' का प्रस्तुत ग्रन्थ पर प्रत्यक्ष प्रभाव है। कवि ने कालिदास, भारवि, माघ आदि संस्कृत के प्रसिद्ध महाकवियों की रचनाओं से भी रचनात्मक सहायता ली है। जिस प्रकार मध्यकालीन दासता के युग में गोस्वामी तुलसीदास ने 'मानस' की रचना के द्वारा राम के उदात्त एवं अलौकिक रूप को प्रस्तुत कर भारतीय जनमानस को एक दृढ़ चरित्रावलम्बन देने का प्रयत्न किया था, उसी प्रकार मिश्रजी ने 'कृष्णायन' की समयानुकूल सर्जना करके युग के लिए कृष्ण के रूप में पूर्ण अनुकरणीय चरित्र की अवधारणा की जो एक साथ सांस्कृतिक, राष्ट्रीय, सामाजिक, राजनीतिक एवं व्यवहार-नीति के क्षेत्र में

व्यक्ति को एक सुदृढ़ आधार प्रदान कर युग के अनुकूल परिस्थितियों में सम्यक् मार्गदर्शन कर सके।

'कृष्णायन' एक ओर प्राचीन भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल स्वरूप को रेखांकित करता है, तो दूसरी ओर अतीत की पृष्ठभूमि पर वर्तमान का उचित मार्गदर्शन करता हुआ अनागत के लिए समाधान प्रस्तुत करता है। 'कृष्णायन' का रचयिता क्षुद्र क्षेत्रीयता एवं प्रान्तीयता की भावना से मुक्त, व्यापक राष्ट्रीय भावना से युक्त, भारत की अखण्डता का पक्षधर है। 'कृष्णायन' में कृष्ण एक अवतारी महापुरुष के रूप में चित्रित किये गये हैं, किन्तु साथ ही साथ वे नवीन युग को प्रेरणा देने वाली सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आचरण की उदात्तता से विभूषित हैं। ब्रज के मथुराधिपति कृष्ण को युगानुरूप स्वरूप देकर अवधी में उनके आख्यान की रसात्मक प्रस्तुति करके मिश्रजी ने अवधी की साहित्यिक श्रेष्ठता को अक्षुण्ण रखा है।

गोस्वामी तुलसीदास तथा उनका 'रामचरितमानस' कवि का आदर्श रहा है, इसलिए कवि ने मानस के सात सोपानों के अनुरूप सात काण्ड, अवधी भाषा और दोहा-चौपाई छन्दों की भी योजना की है। 'कृष्णायन' में 'मानस' की पौराणिक शैली की अपेक्षा नवीनता एवं नाटकीयता का अद्भुत समावेश है। 'कृष्णायन' कवि की बहुमुखी प्रतिभा का जीवन्त रूप है, जिसमें उसने भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, धर्म, नीति, प्रेम, शृंगार, परिहास, कर्म, भोग आदि विभिन्न विषयों को कल्पना-कौशल से उदात्त रूप प्रदान किया है। भारतीय चिन्तनधारा के त्यागमय भोग और भोगमय त्याग की महत्ता इस ग्रंथ में पूर्ण रूप से आलोकित है। रासलीला, कुरुक्षेत्र-मिलन-प्रसंग, युधिष्ठिर-राजसूय-यज्ञ आदि प्रसंगों में कवि की रसात्मकता तथा उदात्त कल्पनाशीलता देखते ही बनती है। वयस्क कृष्ण की अपेक्षा बालकृष्ण की विशिष्टता के प्रतिपादन में कवि की वचन-वक्रता अनूठी है :

वह न चक्रप्रिय, युद्धप्रिय, नहिं वयस्क यदुनाथ।
वह वंशीप्रिय, रासप्रिय, बालकृष्ण ब्रजनाथ।।

'कृष्णायन' में प्रायः सभी रसों का उत्कृष्ट समावेश दृष्टिगोचर होता है, पर अद्भुत, शान्त, करुण, रौद्र एवं वीररस की प्रधानता है। शृंगार की उज्ज्वल, उल्लासवर्धक एवं मर्यादित नियोजना है। हास्य का शिष्ट रूप भी मनोमुग्धकारी है। रोचकता, सुबोधता एवं भावशबलता की दृष्टि से इस ग्रन्थ की उपादेयता असंदिग्ध है। समुद्र, ऋतु, प्रात:, संध्या, विवाह, अभिषेक आदि वर्णनों में कवि की प्रतिभा विशेष रूप से रमी है। वस्तु-वर्णन एवं भाव-वर्णन दोनों में कवि का कल्पना-विलास रमणीय एवं चित्तानुरंजक है।

कलापक्ष की दृष्टि से भी 'कृष्णायन' पूर्ण समृद्ध है। कथानुरूप भाषा की प्रवाहात्मकता एवं संश्लिष्टता विशेष आकर्षक है। कवि की भाषा अवधी होते हुए भी संस्कृत की तत्सम शब्दावली से परिपूर्ण है जो आनुप्रासिकता, लाक्षणिकता एवं नाद-सौन्दर्य के गुण से अनुरंजित है। तुलसीदास ने तद्भव शब्दावली का प्रयोग अधिक किया है, जबकि मिश्रजी ने तत्सम शब्दों का विनियोग कर वर्णो के शुद्ध रूपों का ही संयोजन किया है। भाषा में समास का विलोम-क्रम अपना कर कवि ने अपनी स्वच्छन्द प्रवृत्ति का भी परिचय दिया है।

कवि ने जायसी की परम्परा का अनुसरण करते हुए संपूर्ण ग्रंथ में दोहा, चौपाई एवं सोरठा तीन ही छन्दों का प्रयोग किया है। 'मानस' से वृहत् आकार के ग्रंथ में छन्दों की विविधता की कमी अखरती है। तुलसी के 'मानस' में भावानुकूल विविध छन्दों की योजना प्रभावकारी सिद्ध हुई है। मिश्रजी के काव्य में अलंकारों का रसानुकूल संयोजन है। रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, दृष्टान्त, विरोधाभास आदि अलंकारों की इस ग्रंथ में प्रचुरता है। भावों की प्राणवत्ता में अलंकारों का वैशिष्ट्य देखते ही बनता है।

समग्रतः, सगुण ब्रह्म के महत्व के प्रतिपादन, परम्परा के निर्वाह के साथ आधुनिक भावबोध का संनियोजन, युगानुकूल प्रासंगिकता, गम्भीर जीवन-दृष्टि, उदात्त कल्पना-कौशल तथा विशिष्ट साहित्यिक वैभव की दृष्टि से 'कृष्णायन' का हिन्दी के प्रबन्ध-काव्यों में विशिष्ट स्थान है।

अवधी की महक : त्रिलोचन शास्त्री

डॉ. दुर्गाप्रसाद ओझा

(अ)

प्रगतिशील कवित्रयी के सशक्त हस्ताक्षर त्रिलोचन शास्त्री का जन्म भाद्र शुक्ल, तृतीया, सोमवार, विक्रम संवत् 1974, तदनुसार 20 अगस्त, 1917 को गाँव चिरानी-पट्‌टी (कटघरा-पट्‌टी), जिला सुलतानपुर (उत्तरप्रदेश) में हुआ था। इनके बचपन का, मूल नाम वासुदेव सिंह है। पाठशाला जाने पर, गाँव के संस्कृत-गुरु श्री देवदत्त (जो तिवारी थे, पर लिखते नहीं थे) ने पहले ही दिन त्रिलोचन नाम दे दिया। उन्होंने यह भी निर्देश दिया कि 'त्रिलोचन के साथ सिंह मत जोड़ना कभी'। शास्त्री उपाधि है। इस तरह पूरा नाम हुआ -- त्रिलोचन शास्त्री।

'त्रिलोचन की प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की ही टाट-पट्‌टी वाली पाठशाला में हुई। सन् 1934 में उन्होंने दोस्तपुर से मिडिल पास किया। घर पर ही दीपनारायण सिंह से अंग्रेजी तथा मौलवी मुहम्मद जाहिर से अरबी-फारसी की शिक्षा प्राप्त की। एक तरह से हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, अरबी-फारसी-उर्दू भाषाओं का अधिकांश ज्ञान एवं शिक्षा उन्होंने स्वाध्याय से अर्जित किया।

अनन्तर आर्थिक तंगी के कारण जीविकोपार्जन हेतु वे घर से बाहर निकल गये। विविध नौकरियों को करते-छोड़ते जीवनभर वे स्वाध्याय के प्रति सचेत-उन्मुख रहे।

सन् 1936 में उन्होंने लाहौर से शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण की। बनारस में रहते हुए सन् 50-52 के बीच बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से स्नातक उपाधि प्राप्त की। वहीं से स्नातकोत्तर उपाधि के लिए अंग्रेजी में एम.ए. पूर्वार्द्ध पास किया। फिर पढ़ाई बन्द हो गयी। किन्तु, स्वाध्याय जीवन के अन्त तक कभी बन्द नहीं हुआ।

त्रिलोचन के बचपन में आर्थिक दृष्टि से, उनकी पारिवारिक स्थिति अच्छी नहीं थी। अतः 18 वर्ष की अवस्था में ही त्रिलोचन को रोजी-रोटी की खोज में जुटना पड़ा। जीवन में संघर्ष की शुरुआत करते हुए, जीविका के लिए सबसे पहले सन् 1938 में, उन्होंने आगरा के 'प्रभाकर प्रेस' में कम्पोज़ीटर के रूप में कार्य शुरू किया। अनन्तर, 1938 ई. में 'वासर', सन् 1939 से 41 तक, बनारस से प्रकाशित 'कहानी' नामक पत्र-पत्रिकाओं में उन्होंने कार्य किया। सन् 1943 में वे 'हंस' से सम्बद्ध हुए ओर यहाँ 1945 तक वह रहे। 'यहीं पर उनका परिचय गजानन माधव मुक्तिबोध से हुआ। मुक्तिबोध उस समय 'हंस' में दफ्तरी थे।'

सन् 1945 में 'हंस' छोड़कर, उन्होंने काशी के 'ज्ञानमंडल' में 'बृहत् हिन्दी-कोश' के सम्पादन-विभाग में कार्य शुरू किया। यहाँ वे 1950 तक रहे। इसी अवधि में कुछ समय तक मासिक पत्रिका 'चित्ररेखा' और दैनिक-पत्र 'आज' का भी उन्होंने सम्पादन किया। सन् 1952-53 में करीब एक वर्ष गणेशराय इण्टर कालेज, कर्रा (डोभी), जौनपुर में अंग्रेजी के शिक्षक-रूप में कार्यरत रहे। फिर, 1953-54 में 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग' के 'हिन्दी-अंग्रेजी मानक-कोश' में सम्पादन-कार्य किया।

जीविकोपार्जन के इसी क्रम में त्रिलोचन ने 1954 से 1967 तक 'काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा' में 'हिन्दी-शब्द-सागर' के संशोधित-परिवर्धित संस्करण में कार्य किया। इसी बीच वर्ष 1959 में, जून महीने के बाद कुछ दिन तक राँची के 'राष्ट्रीय प्रेस' में प्रबन्धक के रूप में भी कार्यरत रहे; किन्तु 1960 में ही पुनः 'हिन्दी-शब्द-सागर' में कार्य के लिए लौट आये। सन् 1967 में उन्होंने 'सभा' से त्यागपत्र दे दिया और 1968 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में रहकर विदेशी छात्रों को हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं-- संस्कृत, उर्दू का अध्यापन-कार्य शुरू किया। वहाँ वे 1972 तक रहे। फिर, 1972 से 1975 तक बनारस से प्रकाशित दैनिक 'जनवार्ता' में सहायक सम्पादक तथा 1975 से 1978 तक 'हिन्दी ग्रन्थ अकादमी' भोपाल में 'भाषा-सम्पादक' के रूप में कार्य किया। कार्याधिक्य एवं अतिशय स्वाध्याय के कारण इसी बीच उन्हें दिल का दौरा पड़ा था।

अनन्तर, 1978 से मार्च 1984 तक दिल्ली विश्वविद्यालय के 'उर्दू-विभाग' के अन्तर्गत 'उर्दू-हिन्दी द्वैभाषिक कोश-परियोजना' में संलग्न रहे। 28 मार्च, 1984 से 28 जुलाई, 1990 तक डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (मध्यप्रदेश) में 'गजानन माधव मुक्तिबोध सृजन-पीठ' के अध्यक्ष-पद पर कार्यरत रहे। सन् 1991 में, 'साहित्य अकादमी, दिल्ली' से प्रकाशित 'मुक्तिबोध की कविताएँ,' संग्रह का सम्पादन किया। बाद में 11 नवम्बर से 31 मई, 1992 तक 'हिन्दी-विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय' में 'विज़िटिंग प्रोफेसर' रहे। उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि त्रिलोचन जी का सारा जीवन लिखने-पढ़ने, अध्ययन-अध्यापन, पत्रकारिता-सम्पादन, शिक्षा-संस्कृति के उन्नयन के लिए ही सहजभाव से समर्पित रहा। दिनांक 9 दिसम्बर, 2007 को शाम चार बजे त्रिलोचन जी का व्यक्ति एवं कवि सदा-सर्वदा के लिए तिरोहित हो गया।

(आ)

त्रिलोचन जी का व्यक्तित्व कई कोणों से अजीब रहा है -- आजकल के साहित्यकारों के खाँचे से बाहर। प्रकाश मनु द्वारा लिखित, त्रिलोचन के व्यक्तित्व को रेखांकित करनेवाली, ये काव्य-पंक्तियाँ बहुत सार्थक हैं :

'अजी त्रिलोचन जी
आप तो आदमी ही हैं कुछ विचित्र
प्रगतिशील तो कहीं से भी नहीं--आई एम श्योर
सजमुच बड़े अजीब हैं आप
बहुत खँगालो तो भी झलकता नहीं
कोई प्रोग्रेसिव तेवर-झल्लाई मुद्रा ....
नहीं आग-अंगार-विस्फोट, कोई धमाका, फाँ-फूँ
x x x
कोई ढाई-तीन घंटे की मशक्कत के बाद
लौटा तो पाता हूँ कि गजब है यह आदमी
कहीं से भी काबू में नहीं आता
नहीं खुश होता सुनकर प्रशंसा
नहीं निन्दा से नाराज
जैसे-जैसे कहो मान जाता है आसानी से--
आपकी बात
और मुसकराता है (यों ही -- खामखा !)'

छक कर भोजन करना त्रिलोचन की बचपन से आदत रही। खाने की ठान लें तो बड़े-से-बड़ा भोजनभट्ट भी मुँह चुरा ले। इसका यह मतलब नहीं कि वे विशिष्ट किस्म का व्यंजन-पदार्थ ढूढ़ते थे। नहीं, जो भी मिलता, प्रेम से डट कर खाते थे। खाने के मामले में किसी को परेशान नहीं करते थे। त्रिलोचन के भोजन-भाव से संबंधित मधुरेश का यह संस्मरण रेखांकनीय है - "एक दिन सब्जी में नमक कुछ ज्यादा हो गया। मैं पत्नी से दही के लिए कहता, इससे पहले ही देखा कि गिलास में रखे पानी में से थोड़ा-सा पानी सब्जी में डालकर त्रिलोचन जी उतने ही सहज और तल्लीन भाव से भोजन कर रहे हैं। अपने बचपन के दिनों की ओर लौटते हुए वह बोले- 'मधुरेश जी ! मेरी माँ बचपन में मुझे कहीं न्यौता खाने नहीं जाने देती थीं, क्योंकि मेरी खुराक बहुत थी और उसे डर था कि इससे समाज में बदनामी तो होगी ही, मुझे दूसरों की नजर भी लग जायेगी।'

मीलों-मील पैदल चलना, घूमना त्रिलोचन की प्रकृति में समाहित थी। पृथ्वी पर नंगे पाँव चलना उन्हें प्रिय रहा--ताकि पृथ्वी की रूपराशि को छूते रहें। डॉ. रामविलास शर्मा का कहना है कि 'बनारस में रहते हुए, मैं कुछ दिन उनके साथ रहा। ..... वे उन दिनों सम्भवतः नागरी-प्रचारिणी सभा में कार्य करते थे।..... हम लोग बनारस में बहुत ही घूमते थे। ऐसा नहीं याद आता कि हम लोग रिक्शे पर कभी बैठकर कहीं साथ गये हों। पैदल चलने का उन्हें बहुत अभ्यास था। शायद हिन्दी में सबसे अधिक पैदल चलनेवाले लेखक त्रिलोचन हैं।'

हिन्दी में घुमक्कड़ रचनाकारों की अधिकता नहीं, तो बहुत कम भी नहीं है। राहुल सांकृत्यायन की घुमक्कड़ी और अज्ञेय की यायावरी प्रसिद्ध है। और इतनी प्रसिद्ध है कि 'बोल्गा से गंगा', 'एक बूँद सहसा उछली', 'अरे यायावर! रहेगा याद?' आदि कृतियों के रूप में साहित्य-निधि बन चुकी हैं। प्रगतिशील कविता के पुरोधा बाबा नागार्जुन भी भयंकर घुमक्कड़ थे। इस तरह से अथक-अथिर यायावर अज्ञेय, नागार्जुन और त्रिलोचन अपने घुमक्कड़पन के कारण 'राहुल' जी के लघु-भ्राता हैं।

पता बदलना त्रिलोचन की जीवन भर आदत रही -- शायद मजबूरी भी रही। वाराणसी, आगरा, इलाहाबाद, बदायूँ, दिल्ली, सागर, भोपाल, अलीगढ़-- कहाँ-कहाँ नहीं घूमा है 'अमोला की धरती' का यह लाल--आजीविका के चक्कर में। एक बात और! 'राहुल' और 'अज्ञेय' के भ्रमण में 'देश' का आयाम विस्तृत है, विश्व का शायद ही कोई देश ऐसा बचा हो, वे जहाँ न घूमें हों। उनकी तुलना में नागार्जुन और त्रिलोचन का घूमना अपने ही देश में संभव हुआ है।

सहजता त्रिलोचन के स्वभाव में थी। मित्रों-समशीलों से ही नहीं वे मानव-पशु-पक्षी सबसे उसी सहजता से मिलते हैं। महावीर अग्रवाल का एक संस्मरण स्मरणीय है कि- '..... तीन-चार किलोमीटर पैदल चलकर पान की दुकान तक हम पहुँचे। दुकान वाले से बातें करने का त्रिलोचन जी का सहज व आत्मीय अन्दाज देखकर मैं मुग्ध हो गया। ठेले वाले से उन्हें बतियाते हुए देखकर कोई सोच भी नहीं सकता कि समकालीन हिन्दी कविता-संसार के चार महारथियों में से एक त्रिलोचन शास्त्री यही हैं।'

"त्रिलोचन जी की इस सादगी के पीछे एक बेहद मजबूत रीढ़ वाला आदमी मौजूद रहा है, जिसे कभी 'मुक्तिबोध' ने 'अवध का किसान-कवि' कहकर अभिहित किया था। समय की मार झेलकर जिसका चेहरा मैक्सिम गोर्की से मिलता था।"

त्रिलोचन के सहज-सामान्य किन्तु आत्मीय-विश्वासी व्यक्तित्व को उद्घाटित करते हुए मधुरेश जी कहते हैं कि "उन्हें देखकर ऐसा नहीं लगता कि कोई आदमी अविश्वसनीय सादगी में भी ज्ञान और सूचनाओं का जीवित कोष हो सकता है।" मुक्तिबोध ने कभी उनके बारे में लिखा था-- 'वह अनुभव के सजीव कोष हैं। त्रिलोचन ने अपने ढंग से काफी पढ़ा और सुना है, लेकिन वह अपना ज्ञान साथवाले व्यक्ति को पीटने या आतंकित करने के लिए इस्तेमाल कभी नहीं करते। उम्र के लम्बे अन्तराल के

बावजूद उनके साथ बराबरी के स्तर पर हिस्सेदारी की जा सकती है। उनकी सादगी में एक खास किस्म की विनम्रता है जो अपने से अधिक दूसरों को महत्त्व देती है। अद्भुत का छोर छूने पर भी वह सहज बने रहते हैं शायद इसीलिए वे कभी अविश्वसनीय नहीं लगते।''

'त्रिलोचन शास्त्री का मानसिक गठन उन बहुत-से मध्यवर्गीय लेखकों से भिन्न रहा है, जो छोटी-छोटी बातों को मान-सम्मान का सवाल बनाकर अपनी ही केंचुल में सिमटकर घोर आत्मकेन्द्रित और कुंठाग्रस्त होते चले जाते हैं। ......अपनी-अपनी कुंठाओं की गठरी लादे, अपने खोल में सिमटे हुए लेखकों में दूसरों के प्रति स्वीकार-भाव और गहरी हिस्सेदारी देखने को प्रायः नहीं मिलती है। साहित्य-संस्कृति में अभिरुचि रखनेवाले युवा और उदीयमान लेखकों का जितना बड़ा समूह त्रिलोचन जी से अत्यन्त आत्मीय भाव से जुड़ता गया है, वह अन्य किसी भी कवि के लिए स्पर्धा का विषय हो सकता है।'

त्रिलोचन जी का व्यक्तित्व कुल मिलाकर ऐसा रहा है कि ''उनकी सरलता, सहजता, स्वाभाविकता, विनम्रता सभी-कुछ आकर्षक है। उनकी बेलौस स्टीक उक्तियाँ मन को छूती है। वे इंसानियत, ईमानदारी के साथ-साथ समझदारी के कायल है।। उनका पानी खरा है। वे स्वाभिमानी हैं। वे दूसरों का सम्मान करते हैं कि उनके साथ भी शिष्टता का बर्ताव हो। वे अपनों से तो खुलकर मिलते और बतियाते ही हैं, अपरिचितों को भी अपनी विनम्रता और विद्वत्ता से प्रभावित करते हैं। .... त्रिलोचन-जैसा इंसान और वह भी मित्र-रूप में मिलना दुर्लभ है। उनकी धज निराली है। उनका पैनापन और संदीदगी आकर्षक है।'' (डॉ. पुरुषोत्तम वाजपेयी)।

त्रिलोचन ने अपने बारे में काफी-कुछ लिखा है। ऐसा भी लिखा है जिसमें अभावग्रस्त गर्वोक्ति में भी विशेषता यह है कि 'उसमें अहंकार समाहित न होकर औदात्य है।' और उस औदात्य का आधार है-- 'भीषण-दारुण अभाव में रहकर भी अपराजेय बने रहने का भाव।' उन्हें अपनी अभावमय स्थिति भी इस बात से संतोष देती है कि 'मैं देश की अधिकांश जनता की-सी स्थिति में हूँ।' यह बात कितनी सत्य है कि ''भूख, उपवास और बेरोजगारी पर जैसी अनुभूति-तीव्रता त्रिलोचन की कविताओं में है वैसी अन्य किसी प्रगतिशील कवि में नहीं। लगभग वैसी ही अनुभूति-तीव्रता जैसी 'तुलसी' और 'निराला' की आत्म-कथात्मक पंक्तियों में है। ऐसी उक्तियों में ट्रैजिक औदात्य है, नैतिक दृढ़ता से मंडित गरिमा है।'' त्रिलोचन का आत्मकथ्य भावनीय है :

''वही त्रिलोचन है, वह -- जिसके तन पर गंदे
कपड़े है। कपड़े भी कैसे -- फटे लदे हैं
x x x
कौन कह सकेगा इसका यह जीवन चंदे
पर अवलम्बित है। चलना तो देखो इसका -
उठा हुआ सिर, चौड़ी छाती, लम्बी बाँहें
सधे कदम, तेजी, वे टेढ़ी-मेढ़ी राहें
मानो डर से सिकुड़ रही हैं।''

त्रिलोचन की इस तरह की आत्म-उक्तियों में एक बहुत ही मार्मिक पंक्ति है-- 'दीनता देह से लिपटी है, मन तो अदीन है।' प्रश्न है कि इस देह से लिपटी दीनता में, मन की अदीनता का कारण क्या है?, रहस्य क्या है? सचमुच इसका कारण, कवि के मन का वह उदात्त-भाव है, जिसमें वह सोचता है कि-- मैं 'उस जनपद का कवि हूँ जो भूखा-दूखा है। नंगा है, अनजान है।' जब तक कवि में यह भाव है, तब तक जीवन का उत्साह-उल्लास है। अनेकानेक जीवन-सफल, सम्मानित-पुरस्कृत, स्वनामधन्य

सर्जक- साहित्यकार है, जिनकी देह से समृद्धि लिपटी-चिपटी है, किन्तु मन से वे इतने दीन-हीन-गरीब हैं कि वे अपने को अपनी माटी से, जनपद से, अपनी भूमि से जोड़ नहीं पाते। 'उस जनपद का कवि हूँ' का मूल आधार कवि की सहजता है। त्रिलोचन की कविताओं से स्पष्ट है कि सामान्य जन से, जीवन से प्रेम करनेवाला व्यक्ति, निपट अकेला होकर भी मानसिक रूप से लोगों से जुड़ा रहता है। जब मन में यह भाव होता है कि इस दुनिया में, गाँव-जेंवार-समाज में, केवल मैं ही दीन-हीन-दुःखी नहीं हूँ-- दुःख केवल मेरे ऊपर ही नहीं बज रहा है -- और भी बहुत-सारे लोग मुझसे भी अधिक दीन-दुःखी हैं, तब उसका वह दुःख, वह दैन्य-भाव भी व्यापक और सहज हो जाता है -- रचनाशील हो जाता है। ऐसी समझ से सारा दुःख गल जाता है, कवि इसे जानता है :

''अपनइ आपन ताके मन अफनाइ।
आनउँ कइ देखे ढाढस होई जाइ।।''

त्रिलोचन की वाणी 'जाड़ा, बरसात और घाम' खायी हुई वाणी है। 'टीहुर मुसहर' (त्रिलोचन का एक काव्य-पात्र) की तरह हर शब्द के पीछे शताब्दियों का दुःख-दर्द और साहस है। स्वयं 'धुनिया' त्रिलोचन का जीवन भी अनेक कशाघातों का ही जीवन रहा है। उनके जीवन ने ही उन्हें यह शक्ति दी कि वे वह देख सके और साध सके जो औरों से नहीं सधा।'' वे स्वयं इस बात को स्वीकारते हैं कि :

''अगर न पीड़ा होती तो भी क्या मैं गाता।
यदि गाता तो क्या उसमें ऐसा स्वर आता।''

अज्ञेय जिसे कहते हैं कि 'दु'ख सबको माँजता है और जिसको माँजता है/ उसे यह सीख देता है/ कि सबको मुक्त रखें' यह बात त्रिलोचन पर पूरी तरह लागू होती है। दुःख ने त्रिलोचन को इतना माँजा है कि दूसरो का दुःख भी उन्हें अपना लगने लगा है। त्रिलोचन का कवि दूसरों के दुःख-दर्द को सह नहीं पाता है। 'ताप के ताए हुए दिन' की एक कविता में कवि का कहना है :

''औरों का दुख-दर्द वह नहीं सह पाता है,
यथाशक्ति जितना बनता है, कर जाता है।''

उक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि 'वे जिस तरह की कविताएँ लिखते हैं, लिखते रहे हैं, वैसी कविताएँ, वह वैसा जीवन जीकर ही लिख सकते थे। वैसा जीवन जीने से उन्हें कष्ट अवश्य हुआ है, किन्तु उस कष्ट के बिना, उस तरह की कविताएँ वे लिख भी नहीं सकते थे।'

सम्पूर्ण विवेचन के बाद हम बिना किसी हिचक के कह सकते हैं कि त्रिलोचन का व्यक्तित्व महान् किंवा बेजोड़ है। यहाँ डॉ. सरोज खान 'बातिश' की अधोलिखित काव्य-पंक्तियाँ त्रिलोचन के गरिमामय व्यक्तित्व पर पूरा 'फोकस' डालती हैं :

''बूढ़े हुए जिस्म से चिंतन जवान है
धरती की तरह सोच है, दिल आसमान है।
माटी की गंध, शहरियत, कसबाई, गाँवपन
अदना से इस शरीर में सारा जहान है।
त्रिलोचनों में बंद कई पीढ़ियों के शास्त्र
वे युग हैं, उनकी शख्सियत हिन्दोस्तान है।
शायर हैं, पत्रकार हैं, शिक्षक हैं, अध्येता,
इन सबमें उनका आदमी सबसे महान् है।

'बातिश' ये गिरह बाँध लो दुनिया-ए-अदब में
ऊँचा वही है जो कि बहुत खुश-जुबान है।''

(इ)

त्रिलोचन की साहित्य-साधना कभी गतिहीन नहीं हुई। वे आजीवन साहित्यकर्मी बने रहे। जीवन में नाना आघातों-प्रत्याघातों को झेलते-सहते हुए, जीवन-यापन के लिए विविध कार्यों को निष्ठाभाव से सम्पादित करते हुए, वे साथ-साथ निरन्तर सृजनकर्म के प्रति सजगभाव से समर्पित रहे। उनकी प्रकाशित कृतियाँ इस बात के लिए स्वयं प्रमाण हैं। 'धरती', 'गुलाब और बुलबुल', 'दिगन्त', 'ताप के ताए हुए दिन', 'शब्द', 'उस जनपद का कवि हूँ', 'अरधान', 'अनकहनी भी कुछ कहनी है', 'तुम्हें सौंपता हूँ' 'फूल नाम है एक', 'देश-काल', 'सबका अपना आकाश', 'चैती' 'अमोला', 'मेरा घर', 'जीने की कला' आदि-इत्यादि कृतियों में उनकी सोच-समझ, दृष्टि-प्रतिदृष्टि, भाव-भावना, अभिव्यक्ति-क्षमता सबको एक साथ जाना-समझा जा सकता है।

त्रिलोचन की रचनाओं में **'अमोला'** अवधी-संस्कृति की अमोल धरोहर है। यह उनकी विशिष्ट अवधी-काव्यकृति है। सन् 1990 में प्रकाशित इस कृति में 2700 बरवै संगृहीत हैं।

'अमोला' तक आते-आते त्रिलोचन की कविता बहुत सहज हो गयी है। वे अपनी ज़मीन से कहीं बहुत गहरे जुड़ गये हैं। कवि त्रिलोचन सागर में रहें या भोपाल में, दिल्ली में हों या बनारस में, लेकिन बाबू जगरदेव सिंह का वह 'गदेला' त्रिलोचन अपने गाँव 'चिरानीपट्टी-कटघरापट्टी' में ही घूमता है। उसका मन अपने बचपन की पुरानी सुधियों-स्मृतियों में ही भटकता-रमता है। मलदहवा, बहेलिया, खटउआ, सेनुरहवा, कौआ-लिलनवा आमों के पेड़, पुरवैया के ढुरकते ही भद्‌द-भद्‌द, पट्ट-पट्ट खरखराकर गिरते-चूते आम, दौड़-दौड़कर झोरिया में आमों को भरते-धरते बच्चे, आधी रात को आँधी-झकोरा, आँधी में आम बीनने के लिए लुआठा-चोरबत्ती लिये दौड़ते लोग, धुर अँधियारे में भी कीरा-बीछी-साँप को न डरते हुए आम टोहियाते लोग, घूरे पर कुसुलियों का ढेर, कपड़ों-टुकड़ों पर सूखे हुए अमावट, सूखते हुए अमावट पर झुंड-झुंड छोपे हुए हाड़ा-बर्रें, सावन आते-आते घूरे के ढेर पर लाल-लाल पत्तियों में लहलहाते-झूमते अमोले, उन अमोलों को पत्थर या दीवार पर घिसकर बनायी गयी पिपिहिरियाँ- सीटियाँ– एक तरह से पूरी-की-पूरी 'अमोला की धरती' – यही सब उसकी स्मृतियों में उमड़ते-घुमड़ते रहते हैं।

कवि की आँखों के आगे पूस-माघ की कड़ाके की सर्दी में 'तपता' (अलाव) में आलू-गंजी भूजते, खुदिहारते, छीनाझपटी करते बच्चे, कोल्हार में पकते गुड़ की सोंधी महक, उसको पाने के लिए घेरकर ललचाये हुए लोग नाचते रहते हैं। कवि त्रिलोचन को 'अमोला' की धरती का गली-कूचा, राह-पैंड़ा, पशु-चरवाहे, हाट-बाजार, गठरी-मोटरी, मर-मुकदमा, आते-आते लोग सब याद आते हैं। यहाँ त्रिलोचन के समशील-कवि नागार्जुन की कविता बरबस याद आ जाती है, जिसमें वे भाव-विभोर होकर कहते हैं :

'याद आते स्वजन
जिनकी स्नेह से भीगी अमृतमय आँख
स्मृति-विहंगम की कभी थकने न देगी पाँख
याद आता मुझे अपना वह 'तरउनी' ग्राम
याद आतीं लीचियाँ, वे आम
याद आते मुझे मिथिला के रुचिर भू-भाग
याद आते धान
याद आते कमल, कुमुदिनि और तालम्खान
याद आते शस्य-श्यामल जनपदों के

रूप-गुण-अनुसार ही रक्खे गये वे नाम
याद आते वेणुवन वे नीलिमा के निलय, अति अभिराम
धन्य वे जिनके मृदुलतम अंक
हुए थे मेरे लिए पर्यंक
धन्य वे जिनकी उपज के भाग
अन्न-पानी और भाजी-साग
फूल-फल औ' कन्द-मूल, अनेकविध मधु-मांस
विपुल उनका ऋण, सधा सकता न मैं दशमांश।'

—'सिन्दूर तिलकित भाल'

अपने गाँव-गिराँव का वह सारा राह-पैड़ा, जिन पर से कभी कवि गुजरा है, उन पर चलते हुए उसने खूब-खूब लखा है कि कहाँ-कहाँ, कैसे-कैसे फूल खिले हैं, उसके मन में सब रचा-बसा है :

'आनइ आने अपनउ रूप भुलान।
लखेसि न पैंड़ा केस-केस फूल फुलान।।'

यही 'लखना' ही 'अमोला' की किसी भी कविता की 'शक्ति और सहजता' है। जो जहाँ भी है, जैसा भी है, जीवन की चिन्ताओं, सुख-दुःख से जुड़ा है, कितना ही लघु और महत्वहीन क्यों न हो, वह सहज भाव से 'अमोला' में--अमोला की कविताओं में उपस्थित है। यहाँ यह सहजता भाषा में नहीं, कवि की दृष्टि में है। यहाँ त्रिलोचन के संबंध में ब्रह्माशंकर पाण्डेय का यह कथन रेखांकनीय है कि 'पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु सब के लिए उनमें असीम सहानुभूति है। वे इनमे अपना सगापन स्थापित कर लेते हैं। रास्ता चलते-चलते अचानक रुक कर कब वे हमारा ध्यान गाछ, पौधे, फूल-पत्ती और चिड़िया-चुरुंगन की ओर ले जाकर पूछ बैठें उनके बारे में, और फिर खुद ही बताने लग जायें उनका समूचा इतिहास और हमें विस्मय में डालकर आगे बढ़ जायें, उनके पास चलने में इस तरह का डर सदा बना रहता है।'

कवि त्रिलोचन का मन जब 'भूत' से 'वर्तमान' में आ जाता है तो दुःखी हो जाता है। क्योंकि, इस धरती से उगा अमोला फलहीन सफेद यूक्लिप्टिसों से घिर गया है। गाँव की स्थिति बदल गयी है और यहाँ तक बदल गयी है कि :

'जेकर तपता कबहूँ बरा धँधोर।
अब केउ चितवत नाहीं तेकरी ओर।।'

गाँव की स्थिति बदल गयी है तो कवि का मनोभाव भी बदल गया है। त्रिलोचन गरीब-गुरबों की व्यथा-कथा कहनेवाले 'समरथ' रचनाकार हैं। इसीलिए उन्हें इस बात की चिन्ता ज्यादा है कि जहाँ जमींदारों-सेठों-साहूकारों के घर पक्के हो गये हैं, वहीं गरीबों-हरिजनों-कहारों-मुसहरों-की छानि-छप्पर, मड़िया-मड़ई वैसे ही हैं। वे इसका कारण भी जानते हैं, वे जानते हैं कि पीपर (जमींदार) जहाँ उगता-बढ़ता-फलता है, वहाँ दूसरा कोई पेड़-पालौ (गरीब-गुरबा) कभी पनप नहीं पाता। कवि के ही शब्दों में यह कथ्य-सत्य द्रष्टव्य है :

'मनइन मा पिपराह अहें बहु खानि।
जिनके विकसे बहुतन कइ हित हानि।।'
'पीपर जामइ दुसरे पेड़े जाइ।
ओकर बाढ़ि वियास ऐंचि के खाइ।।'

'अमोला' में संगृहीत ऐसे कितने ही बरबै हैं जो अपनी मार्मिकता, प्रभावोत्पादकता, अर्थवत्ता में

अनुपम-अद्वितीय हैं। उनके साथ कवि अपने अनुभवों का साझा करता है। उदाहरण के तौर पर कुछ बरवै अवलोकनीय हैं :

'लरिकइयाँ लरिकइयाँ जवन भुलाइ।
मनुसाने पै ऊ तन बेधत जाइ।।'
'अपनइ आपन ताके मन अफनाइ।
आनउँ कइ देखे ढाढस होइ जाइ।।'
'चिक्कन चिक्कन लखि न निकइ गनि लेइ।
कबहुँ-कबहुँ ऊ काटे लहरि न देइ।।'
'काँट धँसि गये गोड़ न थाम्हइ भार।
काढ़े बिना परग होइ जाइ अपार।।'
'दया इहउ आ आम त अपुना खाइ।
कोसिली मङ्ता के लग देइ बहाइ।।'
'आनइ कइ घर धामे छावा जाइ।
एहि सोचानि सुख कइसे पावा जाइ।।'
'लेब-देइ दूसर केउ देखइ नाइ।
मन कइ आ बएपार इहइ सब ठाँइ।।'

यहाँ यह बात स्पष्ट है कि यह धरती, जो जिन्दगी को पनाह देती है, उसका मर्म वही कवि जानता है जो उसके--उस धरती के नजदीक--निकट है। सुलतानपुर जनपद के ही बरवारीपुर निवासी स्व. मानबहादुर सिंह के शब्दों में कहें तो त्रिलोचन के रचना-संसार में विचरते हुए यह बात स्पष्ट हो जाती है कि "शब्द आकाश में भले समाते हों, लेकिन जन्मते तो इसी धरती से हैं। जिनके पास अपनी धरती के शब्द हैं, वे अपनी धरती से कैसे बिछुड़ सकते हैं। सुलतानपुर की यह धरती, जिसके बीच से अनादिकाल से आदि गंगा गोमती बह रही है, खाँटी अवधांचल है। खेत और बागों से भरी-पूरी सपाट धरती त्रिलोचन की काव्य-चेतना की सँघाती है। कब के गये हैं वे इसे छोड़, लेकिन क्या अभी तक छोड़ पाये इसे। उनके शब्द-शब्द इस माटी का समूचा सोंधापन लिये महक रहे हैं। 'आड़े-ओलते' जहाँ भी जो-कुछ यहाँ है, उठा-उठाकर अपने शब्दों में रखते जाते हैं। पुर में नधे बैल, गर्रा खींचते बैल, बेड़ी उबहते-ओहार लेते आदमी उनकी संधों में झाँकते रहते हैं। आज तो ट्यूबवेल, पम्पिगसेट धकधका रहे हैं, लेकिन इस यान्त्रिकता के पीछे जो खोया है और जो सुरक्षित है, त्रिलोचन के पास वह है भोले-भाले लोगों की हँसी, खिसकढ़ी, नोंकझोंक-भरी आत्मीयता। यंत्रों ने यहाँ सामूहिकता नष्ट की है। वह आपसदारी गुम हो गयी है, लोगों की अपनी सुख-सुविधाओं को प्राप्त करने की भागमभाग में जो पिराती रहती है बरबै की इन पंक्तियों में।"

'अमोला' पर डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी की टिप्पणी है कि 'उपवास, बेकारी, भूख, उपेक्षा, प्रियजन-वियोग और जलवायु, धरती-आकाश-वनस्पति, प्रिय-संयोग आदि जीवन--अमोला की डालें, जड़ें और फुनगियाँ हैं।'

स्पष्ट है कि कवि त्रिलोचन की प्रत्येक साँस में अवध की माटी की गन्ध समाहित है। इसीलिए उनकी अवधी रचनाओं में 'अवध' क्षेत्र के गाँवों की कथाएँ-व्यथाएँ-संवेदनाएँ तथा बनारस और उसके समीप का परिवेश अपनी पूरी सच्चाई के साथ उपस्थित है। 'अवधी' भाषा में सृजित उनकी कविताएँ पाठक को अपनी ही दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी से साक्षात्कार कराती हैं।

त्रिलोचन के अवधी-काव्य की समीक्षा करते हुए शमशेर कहते हैं कि --'त्रिलोचन का जो काव्य अवधी में बरवै छन्द में आया है, उसकी तुलना केवल क्लासिक-रचनाओं से की जा सकती है, और वह

आधुनिक भी है। आधुनिक इस मायने में कि आधुनिक कवि लिख रहा है। उसकी भावनाएँ आधुनिक हैं, उसमें पुराण-पंथीपन नहीं है।'

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि त्रिलोचन का रचना-संसार अति विस्तृत है। स्वयं उनकी, और साथ ही उनकी काव्य-कृतियों की महत्ता तथा उपादेयता इस बात से सिद्ध है कि उन्हें 'हिन्दी कविता के लिए' मध्यप्रदेश का 'मैथिलीशरण गुप्त सम्मान' (9 फरवरी, 1990 को) प्रदान किया गया। इसके अतिरिक्त, उन्हें 1989-90 के लिए हिन्दी अकादमी, दिल्ली के 'शलाका-सम्मान' से मार्च, 1992 में सम्मानित किया जा चुका है।

(ई)

स्तालिन ने बहुत पहले कहा था कि "लेखक मानव-आत्मा का शिल्पी होता है। इसे समझना जरूरी है। जिस समाज में कवि रहता है, उसी समाज में जनता भी रहती है। हमारी चेतना उस समाज से अलग नहीं रह सकती। व्यक्ति समाज से प्रभावित होता है और उसे प्रभावित भी करता है। समाज का सत्य व्यक्ति के ही माध्यम से साहित्य में प्रतिबिम्बित होता हैं। अगर हममें वैज्ञानिक समझ हो तो हम जनता के संघर्ष को ठीक से प्रतिबिम्बित कर सकते हैं। जनता के जीवन की सही तस्वीर पेश कर देना भी साहित्य के माध्यम से जनता के संघर्ष को आगे ले जाना है।" स्तालिन की यह बात त्रिलोचन के कवि पर पूर्णतः लागू होती है।

त्रिलोचन की कविता में आंचलिकता, परम्परा और जनपदीय अनुभवों का जितना गहरा बोध है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। त्रिलोचन किसान-कवि हैं, जिनका हवा, बादल, सर्दी-गर्मी-जाड़ा-पाला, मिट्टी-गोबर, भूमि-वनस्पति आदि-आदि से गहरा रिश्ता है। उनकी कविताएँ उस भारतीय कवि की कविताएँ हैं जो वहुमत समाज का कवि है। 'धूल-धक्कड़, सर्दी-गर्मी, कीचड़-पानी, आँधी-तूफान, बाढ़-महामारी-अकाल, दर्शन-पुराण, रामायण-महाभारत, नीम-बरगद, अलसी-सरसों, चिरई-चुरुंग, चील्ह-माँटा, कीरा-बीछी-साँप, रोशनी-ढिबरी, निहाई-खुरपी आदि के साथ शहरी जीवन एक साथ कहाँ और कितने कवियों में मिलता है! .... वैसे जिस भी कवि की कविता में उसका अड़ोस-पड़ोस, घर-द्वार, धरती-आकाश, परिवार-परिवेश, इतिहास-पुराण-साहित्य-दर्शन, हवा-पानी, आटा-दाल-रोटी-चावल ही नहीं होगा -- या उनसे दूरदराज का भी कोई संबंध नहीं होगा, क्या वह इस देश या किसी भी देश का बहुमान्य कवि हो सकता है? नहीं हो सकता है। इस दृष्टि से त्रिलोचन बेजोड़ कवि हैं।

'त्रिलोचन का यह वस्तु-बोध टीहुर मुसहर, नगई महरा, फेरू कहाँर, भोरई केवट आदि के जीवन-निष्कर्षों या ज्ञानात्मक संवेदनों से भी निर्मित है। धक्का खानेवाले, पीड़ित दुःखी, क्षुधित और रोटी के लिए परेशान लोग त्रिलोचन की कविताओं के स्थायी भाव हैं। भोले-भाले किसान, पूर्ण सर्वहारा, और गाँवों के श्रमिकों का जीवन, साथ ही जीवानुभव से प्राप्त जीवन और जगत्-संबंधी बातें उनकी संवेदना को निर्मित, विकसित और अभिव्यक्ति-क्षम बनाती हैं। ....त्रिलोचन की कवितओं में न बड़बोलापन है और न ही हवा में तलवारबाजी द्वारा क्रान्ति की मनोहारी कल्पना है। इसके बाद भी दुर्बल वर्ग के लिए, जन-जन के लिए मर्मान्तक पीड़ा उनकी रचनाओं में लगातार मुखर होती है। संघर्ष और आस्था का स्वर कहीं भी धीमा नहीं पड़ा है। अभावों में जीवन जीनेवालों की जो पीड़ा है, उनका जो दुःख है, सुख है, उनके सुखद जीवन के हर्ष-उल्लास के जो क्षण हैं, उनका प्रतिलिम्ब शब्द-शब्द में दिखायी देता है। भावों की अभिव्यक्ति शब्दों के प्रवाह में कलकल का संगीत बिखेरती हुए आगे बढ़ती है :

'यह तो सदा कामना की, इस तरह लिखूँ
जिन पर लिखूँ वही यों अपने स्वर में बोलें।।'

त्रिलोचन की काव्य-सृष्टि अपने सहृदय पाठक-श्रोता को आदमी की बुनियादी जरूरतों से जोड़ती है। उनकी कविता 'सर्वहारा समाज के पौरुष और कर्मठता की पहचान करती है। उसी के प्रेम, विश्वास और संघर्ष को गाती है। उसी की चिन्ता करती है।' 'पाँचू' को समझाते हुए कवि कहता है-

'भयवा अब वस सोचे
आपन नुकसान बा
यस करा कि लड़िकै सुतारे रहइँ
अबर जउ विचार करइँ
तउ कहइँ कि अगिले हमरे सबकाँ
खाले से ऊँचे पहुँचाइ दिहेन।'

किन्तु त्रिलोचन कंठ कँपा-कँपा कर दुःख का गान करनेवाले, उसके सहारे लोक को रिझानेवाले और उसके सहारे महज पेट भरनेवाले कवि-कलाकार नहीं हैं। वे इसे अच्छा मानते ही नहीं, बल्कि उनकी दृष्टि में यह चारण-वृत्ति है:

'दुःख गावइ जे कंठ कँपाइ-कँपाइ।
लोक रिझाई करै, एही से खाइ।।'

बल्कि वे अपनी कविताओं में भर-भर मुँह हवाई घोषणाएँ करने की जगह, कंठ कँपा-कँपा कर दुःक्ष का गान करने की जगह, उस दुःखी जन की बेहतरी के लिए, रूढ़ियों-बेड़ियों और जर्जर परम्पराओं के विरोध में तन कर खड़े होते हैं; शोषक-समाज के उत्पीड़न पर विद्रोह करते हैं। ऐसी स्थिति में स्वर में संयम रहते हुए भी वे विजीविषा की अदम्यता और जीवन-जगत् से अपनी तन्मयता के कारण पाठक को भावाभिभूत करते हैं।

त्रिलोचन के कवि-व्यक्तित्व और उनकी कविता की तासीर पर टिप्पणी करते हुए स्वप्निल श्रीवास्तव का कथन है कि - "त्रिलोचन और उनकी कविता के बारे में सोचना, एक अलग तरह का अनुभव है, ऐसा अनुभव जिसमें परम्परागत ढ़ंग से कवि-व्यक्तित्व का आकलन बने-बनाये ढर्रे पर नहीं किया जा सकता हैं वे ठेठ देहाती मानुष की तरह दिखते हैं जो जेठ की तपती दुपहरिया में कई कोस पैदल चलकर आने पर अनथंका दिखता है। उनके पाँव कविताओं की धरती नापने को तत्पर रहते हैं और अनुभव के अनछुए देशी इलाके को जिज्ञासा के साथ देखते हैं। जिन्होंने कवियों की कल्पना नाजुक-मिज़ाज के रूप में की है, वे त्रिलोचन को देखकर चकित हो जायेंगे, क्योंकि यहाँ मामला उल्टा है। ..... यह कहना गलत न होगा कि त्रिलोचन के कवि-व्यक्तित्व के निर्माण में अवध के संस्कारों और बनारस के औघड़पन की निर्णायक भूमिका रही है। इन्हीं संस्कारों के कारण वे बेईमानी नहीं कर पाये हैं। जीवन की कटुतम सच्चाइयाँ उनकी कविता में बिना लाग-लपेट के व्यक्त हैं।"

डॉ. ब्रह्माशंकर पाण्डेय का मानना है कि "जहर का घूँट-घूँट पी जानेवाले त्रिलोचन ने हिन्दीसाहित्य को अमृत सुलभ कराया है। सम्पूर्ण पूर्ववर्ती और समकालीन प्राच्य और पाश्चात्य काव्य-परम्पराओं का गहराई से उन्होंने चिंतन, मनन और अवगाहन किया है। यह सब उन्होंने एक जगह पर टिककर नहीं किया है : बल्कि घूम-घूमकर, यायावर बनकर, जहाँ जो मिला उसे लिया और साहित्य को दिया। उनके यहाँ न तो विषय का संकट है, न कथ्य, न भाषा का और न उसकी अभिव्यक्ति का। संस्कृतनिष्ठ शब्दों के साथ अवधी के भदेस शब्दों का घुला-मिला रूप उनके काव्य में मिलता है, जो अर्थ में बाधक न होकर उसे एक विस्तार देता है।"

त्रिलोचन जी की कविता के संबंध में डॉ. विजयबहादुर सिंह का यह कथन बिल्कुल सहीं है कि

'जीवन के विभिन्न रूपों और दृश्यों से त्रिलोचन की कविता जितना कुछ बुनती है और पेश करती है, उसका बहुलांश भारतीय निम्नवर्ग, गरीब विपन्न अंचलों से चलकर आता है। पढ़े-लिखे-संभ्रान्त बुद्धिजीवियों, फैशनपरस्त और पाखंडी आधुनिकों, दान-दक्षिणा-पुण्य-लाभ लेने-देनेवाले सेठों-संन्यासियों का जिक्र भी यहाँ है, पर अपेक्षाकृत बहुत कम।'

यह तो रहा त्रिलोचन की 'कविता की तासीर' का सिद्धान्त-पक्ष। उस सिद्धान्त का कितना और किस तरह का प्रयोग उन्होंने अपनी कविताओं में किया है, यह भी यहाँ जानना आवश्यक है। त्रिलोचन अपनी एक रचना 'अपराजेय' में अपनी कविताओं की प्रकृति, विषय, कथ्य आदि पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं :

''हिन्दी की कविता, उनकी कविता है जिनकी
साँसों को आराम नहीं था, और जिन्होंने
सारा जीवन लगा दिया कल्मष को धोने में
समाज के, नहीं काम करने में घिन की
कभी किसी दिन, हिन्दी में सतरंगी आभा
विभव-भूति की नहीं मिलेगी; जन-जीवन के
चित्र मिलेंगे, घर के वन के सब के मन के
भाव मिलेंगे. बोये हुए खेत में डाभा
जैसे एक साथ आता है, कुछ ऐसे ही
वातावरण एक-से भावों से छा जाता
है, फिर प्राणों-प्राणों में एकत्व दिखाता,
नेह उमड़ आये तो दूर कहाँ है नहीं?
भाव उन्हीं का सबका है जो थे अभावमय
पर अभाव में नहीं दबे जागे स्वभावमय।''

स्पष्ट है कि स्वयं त्रिलोचन की दृष्टि में उनकी कविता जन-सामान्य की कविता है, अवध के छोटे-गरीब-निम्न मध्यवर्गीय किसान की कविता है।

'त्रिलोचन की कविता की वस्तुगत नवीनता इस बात में होती है कि वे मार्मिकता की पहचान उन स्थितियों में करते हैं, जिसमें पहले मार्मिकता नहीं ढूँढ़ी जाती थी। इस दृष्टि से वे अकाव्यात्मक समझी जानेवाली स्थितियों का काव्य-स्थितियों में समावेश करके भाव-परिधि का विस्तार करते हैं। इस तरह त्रिलोचन के यहाँ जीवन की सामान्य दैनन्दिन स्थितियाँ काव्यात्मकता से भरपूर हैं। सामान्य रोजमर्रा की तथाकथित अकाव्यात्मक स्थितियों में कविता को पहचानना सहजता का एक रूप है। ऐसे ही सहज रूपों को त्रिलोचन बार-बार पहचानते हैं। उनकी एक ऐसी ही कविता है : 'सब्जी वाली बुढ़िया' :

''मेथी और पालक की दो हरी-हरी गड्डियाँ
लहसुन और प्याज की चार-चार पोटियाँ
बुढ़िया कह रही थी ग्राहक से--ले लो, यह सब ले लो कुल
पचास पैसे में।
ग्राहक बोला-- जो कुछ लेना था ले चुका
यह सब क्या करूँगा
रखने की चीज नहीं
बुढ़िया ने साँस ली और कहा-- दिन हैं ये ठंड के

ले लो तो मैं भी घर को जाऊँ
गाहक ने सुना नहीं और दाम चुका कर चला गया।
मैं पास वाले से गोभी ले रहा था
बुढ़िया से मैंने कहा-- अम्मा सारी चीजें इकट्ठे बाँधकर मुझको
दे दीजिए।
बुढ़िया असीसती हुई चली गयी।
उसकी बातें जो कानों में पड़ीं
उनको अनसुना कर नहीं पाया मैं।"

यहाँ, 'बुढ़िया ने साँस ली और कहा-- दिन हैं ये ठंड के'-- यह कविता की केन्द्रीय पंक्ति है। इस देश में 8-10 वर्ष के बच्चे होटलों में काम करते हैं, मिल-कारखानों में मजूरी करते हैं। 65-70 वर्ष के बूढ़े ठेला खींचते हैं, रिक्शा चलाते हैं। कविता को पढ़ते ही उनके भावहीन चेहरे आँखों के आगे नाच जाते हैं, मन दुःखी हो जाता है। कविता में ऐसी स्थितियों का चित्रण संभवतः त्रिलोचन ने पहली बार किया है। साक्षात् स्थिति ही एक दारुण कविता है, उसे किसी भी तरह से काव्यात्मक बनाने की जरूरत नहीं है। बस जरूरत उसे देखने-सुनने और पाठक-श्रोता को दिखाने-सुनाने की है। यहाँ 'बुढ़िया की बातों को अनसुना न कर पाना' ही कविता में सौन्दर्य और नवीनता उद्घाटित करता है। हिन्दी में इस कविता की भावना को लेकर अनेक कविताएँ लिखी गयी हैं।

त्रिलोचन ने इस तरह की अनेक कथा-कविताएँ लिखीं हैं। उन कथा-कविताओं के नायक-नायिकाएँ प्रेमचन्द के अनेक पात्रों के परिवार के है। (ऐसे पात्रोंवाली कथा-कविताएँ केदारनाथ अग्रवाल और नागार्जुन ने भी लिखी हैं। इस तरह की कविताओं के प्रवर्तक महाप्राण 'निराला' हैं।) 'चम्पा काले-काले अच्छार नहीं चीन्हती', 'नगई महरा', 'फेरू कहँार' आदि शीर्षक कविताएँ इसी कोटि की हैं।

प्रश्न है, इन कविताओं में सौन्दर्य कहाँ हैं! इन कविताओं के सौन्दर्य का रूप अलग है। 'चम्पा कातो-काले अच्छर नहीं चीन्हती' कविता उदाहरण-रूप में प्रस्तुत है (कविता लम्बी है, किन्तु अपनी सम्पूर्णता में इसकी उपस्थिति आवश्यक है।) ':

'चम्पा काले-काले अच्छर नहीं चीन्हती
मैं जब पढ़ने लगता हूँ वह आ जाती है
खड़ी-खड़ी चुपचाप सुना करती है :
इन सब काले चीन्हों से कैसे ये सब स्वर
निकला करते हैं
चम्पा सुन्दर की लड़की है
सुन्दर ग्वाला है : गायें-भैंसें रखता है
चम्पा चौपायों को लेकर
चरवाही करने जाती है
चम्पा अच्छी है
चंचल है
नटखट भी है
कभी-कभी ऊधम करती है
कभी-कभी वह कलम चुरा देती है
जैसे-तैसे ढूँढ़-ढाँढ़ कर जब लाता हूँ

पाता हूँ-- अब कागज गायब
परेशान फिर हो जाता हूँ
चम्पा कहती है :
तुम कागद ही गोदा करते हो दिन भर
क्या यह काम बहुत अच्छा है
यह सुनकर मैं हँस देता हूँ
फिर चम्पा चुप हो जाती है
उस दिन चम्पा आई, मैंने कहा कि
चम्पा, तुम भी पढ़ लो
हारे-गाढ़े काम करेगा
गाँधी बाबा की इच्छा है--
सब जन पढ़ना-लिखना सीखें
चम्पा ने यह कहा कि
मैं तो नहीं पढ़ूँगी
तुम तो कहते थे गाँधी अच्छे हैं
वे पढ़ने-लिखने की कैसे बात कहेंगे
मैं तो नहीं पढ़ूँगी
मैंने कहा कि चम्पा, पढ़ लेना अच्छा है
ब्याह तुम्हारा होगा, तुम गौने जाओगी
कुछ दिन बालम संग साथ रह चला जायगा
जब कलकत्ता
बड़ी दूर है वह कलकत्ता।
कैसे उसे संदेशा दोगी
कैसे उसके पत्र पढ़ोगी
चम्पा पढ़ लेना अच्छा है।
चम्पा बोली : तुम कितने झूठे हो, देखा
हाय राम, तुम पढ़-लिख कर इतने झूठे हो
मैं तो ब्याह कभी न करूँगी
और कहीं जो ब्याह हो गया
तो मैं अपने बालम को संग साथ रखूँगी
कलकत्ता मैं कभी न जाने दूँगी
कलकत्ते पर बजर गिरे।'

चम्पा-जैसी लड़की का चित्रण हिन्दीकविता में तो क्या, हिन्दी कथा-साहित्य में भी मुश्किल से कहीं मिलेगा। यहाँ चम्पा का सामान्य पात्र होना, उसकी वत्सल निरीहता या उसका भोलापन कवि की रचना नहीं है। रचनात्मकता उस भोलेपन की प्रस्तुति में है। वह भोलापन पाठक-श्रोता के मन में, कविता के संवाद से प्रकाशित होता है। यही त्रिलोचन के काव्य-सौन्दर्य की विधि है और इस विधि में वे अद्वितीय हैं। यहाँ दो बातें ध्यान देने की हैं-- एक तो यह कि 'चम्पा की निरीहता के साथ, उसके प्रति हमारी वह सांस्कृतिक पारम्परिक पवित्रता कैसे बची रहती है जो इस देश का पिता या बड़ा भाई अपनी बेटी

या बहिन के साथ महसूस करता है। इस विकृत सम्बन्धहीनता के माहौल में त्रिलोचन की ये कविता (ऐसी कविताएँ) ऐसी निरीहता सुरक्षित कैसे रख पाती हैं। इस कविता का सौन्दर्य मूलतः इसी निरीहता और वात्सल्य पर टिका है। दूसरे, इस कविता में वास्तविकताएँ समाविष्ट हैं। अभी कुछ दिनों पहले तक गाँवों-देहातों में लड़कियों का पढ़ना-लिखना अच्छा नहीं माना जाता था। उन्हें यह बताया जाता था कि पति (मर्द) कलकत्ता (परदेश) जाता है तो बहुत दुःख होता है। कितना सच है कि पति का कमाने के लिए कलकत्ता जाना और उसके विरह-विरोग में पत्नी का दुःखी रहना--इस हृदय-विदारक दारुण स्थिति ने ही लोक-साहित्य में 'विदेसिया'-जैसे काव्यरूप को जन्म दिया है। पूर्वी उत्तरप्रदेश और बिहार प्रदेश के निम्नवर्ग के खेतिहर-किसानों, मजदूरों की विवाहिताओं के लिए 'कलकत्ता भीषण दुःख का प्रतीक' था। उनकी यह सोच-समझ थी कि कलकत्ते जाकर मर्द भटक जाते हैं, वहाँ की औरतें जादू-टोना जानती हैं, वे उन्हें अपने वश में कर लेती हैं। चम्पा इन बातों का पूरा मतलब न जानते हुए भी, इन बातों के बारे में सुनती रही होगी। इसीलिए वह कहती है : 'मैं तो कभी ब्याह ही नहीं करूँगी। और, यदि ब्याह हो ही गया तो अपने बालम को सदैव संग-साथ रखूँगी। मैं उसे कलकत्ता जाने ही नहीं दूँगी। कलकत्ते पर बजर गिरे, जो कलकत्ता इतने दुःख का कारण है।' यदि चम्पा बच्ची न होती तो शर्माती-लजाती, कुछ कहने में सकुचाती। किन्तु, उस बच्ची का निःसंकोच विवाहित युवती की तरह बतियाना उसके वात्सल्य को ऋद्ध करता है। यहाँ प्रकारान्तर से कठिन वियोग को सहती हुई पति-वियुक्ता, विरह-विदग्धा, निम्न-मध्यवर्गीय भारतीय विवाहित नारियों की व्यथा-कथा तथा सुख-स्वप्न-कामना भी अभिव्यंजित है। स्पष्ट ही कविता वास्तविक जीवन के चित्रण से सौन्दर्य उत्पन्न करती है। (इस कविता में समाज-कल्याण की जो भावना समाहित है, उसका अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि 'किसी संकलनकार ने इस कविता को शिक्षा-प्रसार के काव्य-संकलन में शामिल कर लिया था।')

ऐसी ही कविताओं को देखकर, त्रिलोचन की काव्य-प्रतिभा पर लिखते हुए कवि-आलोचक डॉ. केदारनाथ सिंह कहते हैं कि 'मुझे त्रिलोचन की कविताएँ आधुनिक कविता के अभ्यस्त पाठक के लिए चुनौती की तरह लगती हैं, क्योंकि आज की कविता को देखने-परखने के जो प्रचलित मान हैं, जैसे विरोध, विडम्बना, तनाव वगैरह; कई बार उसके सामने झूठे पड़ने लगते हैं। ....असल में त्रिलोचन में अपनी माटी का रंग इतना गहरा है कि उनकी कविता में कुछ भी पढ़ा-गढ़ा नहीं, सब-कुछ सहज जिया हुआ लगता है।'

समाज में चतुर्दिक् बुराइयाँ एवं कुरीतियाँ फैली हुई हैं, त्रिलोचन का कवि उन्हें दीवारों के रूप में देखता है। ये दीवारें हैं-- सामाजिक विसंगतियों की, जाति-पाँति, छुआछूत, ऊँच-नीच, वर्ण-व्यवस्था, अमीर-गरीब के बीच खाई, धर्म-सम्प्रदाय आदि-आदि की जो मानव-मानव में भेद करती हैं, एक-दूसरे को आपस में मिलने नहीं देतीं। ये कवि को आक्रोशमय व्यथा से भर देती हैं। कवि इन अलगानेवाली, अवरोध उत्पन्न करनेवाली दीवारों को ढहाने-गिराने के लिए लोगों को आमंत्रित करता है, इसके लिए लोगों में उत्साह जगाता है। क्योंकि कवि जानता है कि मानव-मुक्ति, मानव-कल्याण और मानवता की रक्षा इन दीवारों को ढहा देने से ही संभव है। कवि के ही शब्दों में :

'दीवारें दीवारें दीवारें दीवारें
चारों ओर खड़ी हैं। तुम चुपचाव खड़े हो
हाथ धरे छाती पर, मानो वहीं गड़े हो।
मुक्ति चाहते हो तो आओ धक्के मारें
और ढहा दें। उद्यम करते कभी न हारें
ऐसे वैसे आघातों से। स्तब्ध पड़े हो

किस दुविधा में। हिचक छोड़ दो। जरा कड़े हो।
आओ, अलगाने वाले अवरोध निवारें।'

दीन-हीन-मजदूर, मेहनतकश कामगार, बँधुआ मजदूर, जो रात-दिन खटता है, लेकिन भरपेट सुख की रोटी जिसे नसीब नहीं होती, उससे कवि आँख नहीं चुरा पाता। उसके लिए वह मंगल-कामना करता है। अन्ततः वह भविष्य के प्रति आस्थावान् होने लगता है कि हाथों के दिन आयेंगे, किन्तु कब आयेंगे, यह वह नहीं जानता :

''हाथों के दिन आयेंगे। कब तक आयेंगे,
यह तो कोई नहीं बताता। करने वाले
जहाँ कहीं भी देखा अब तक डरने वाले
मिलते हैं। सुख की रोटी वे कब खायेंगे,
सुख से कब सोयेंगे, उसको कब पायेंगे
जिसको पाने की इच्छा है।''
X X X
हाथ कहाँ हैं, वंचक हाथों के चक्के में
बंधक हैं। बँधुए कहलाते हैं।''

कवि का यह अखण्ड विश्वास कि जो हाथ काम करेंगे, वे ही भविष्य में सुखी होंगे, लगता है अब फलीभूत होने लगा है-- कम-से-कम वह दिन तो आ ही गया है कि काम करनेवालों का पेट भरने लगा है। कोई किसी का बंधक नहीं है। कोई किसी की धौंस सुनने को तैयार नहीं हैं और अब तो स्थिति यह आ गयी है कि जो स्वयं अपने हाथों अपना काम नहीं कर रहा है, वह भूखों मर रहा है; और अगर अभी नहीं मर रहा है तो मरेगा। सुखी वे ही हाथ रहेंगे, जो स्वयं काम करेंगे।

उपर्युक्त विवरणों से स्पष्ट है कि कवि का दृष्टिकोण बड़ा व्यापक है। उसकी संवेदना बहुत बड़ी है-- उस संवेदना से कोई अछूता नहीं बचता। यही संवेदना ही उसे महान् कवि की श्रेणी में प्रतिष्ठित करती है।

(उ)

त्रिलोचन जितने गहरे स्तर पर बैठे हुए मानव-संघर्ष के चितेरे कवि हैं, कम-से-कम उतने ही प्रकृति की लीला और सौन्दर्य में डूबे हुए कलाकार हैं। प्रकृति बहुत गहराई तक उनकी कविता में रची-बसी-घुसी है। बड़े-से-बड़े दुर्दिन को भी साहस के साथ सहन करता हुआ त्रिलोचन का मन इसलिए खिला-खुला रहता है, क्योंकि वह प्रकृति से जीवन-प्रेरणा पाता है। कवि स्पष्ट कहता है कि :

'कितना भी बाँधो बह जाऊँगा
अदम्य वेग से लाँघ दुर्दिनों को,
प्रखर प्रवाह नदी का
कलकल-छलछल हो जाऊँगा।
लता-गुल्म-तरु-तृण-अन्तर में
हरी ध्वजा बन लहराऊँगा।'

त्रिलोचन की काव्य-प्रतिभा पर विचार करते हुए 'सापेक्ष'-संपादक महावीर अग्रवाल लिखते हैं कि 'उनकी कविताओं में केवल मनुष्य और उसका यथार्थ ही नहीं, वरन् पशु-पक्षी और प्रकृति के विभिन्न घटकों का समावेश भी है। प्रकृति का सौन्दर्य त्रिलोचन की कविताओं में मनुष्य की आस्था और विश्वास

को व्यक्त करता है। मानव-मूल्यों की स्थापना हेतु उन्होंने अपनी कविताओं में सहज रूप से प्रकृति को उभारा है। वे प्यार के, प्रकृति के बड़े खूबसूरत चित्र उतारते हैं। उनके लिए प्रकृति सुन्दरता और क्रियाशीलता का आधार बनी है :

'मत चले जाना भूल के, दिन ये फूल के हैं
किये मन के शृंगार सामने कचनार
आम के बौर कहते हैं देखो बहार
हाल ऐसे ही कुछ बबूल के हैं।'

डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र के अनुसार, " त्रिलोचन की कविताओं में प्रकृति जिस रूप में है वह जीवन की विविधता और नवीनता का नया अर्थ देती है। बल्कि यह कि वे अपने निष्कर्षों से कभी तो प्रकृति को अनुरंजित कर देते हैं और कभी प्रकृति उनके निष्कर्षों को सार्वभौम बना देती है। मेरी जानकारी में हवा, बादल, मिट्‌टी, जीव-जन्तु, पेड़ों, लताओं, ताल-तलैयों, नदियों के विविध रूपों के अनेक चित्र त्रिलोचन में जिस प्रकार जीवित स्पन्दन की तरह मिलते हैं वैसे कम कवियों में पाये जाते हैं। 'हरियाली' और 'हरेपन' शब्द का जितना प्रयोग इनकी कविताओं में है उतना मेरी जानकारी में हिन्दी के किसी कवि में नहीं है। एक प्रकार से 'हरा रंग' त्रिलोचन का सबसे प्रिय रंग है जो उनके अगाध विश्वास और जीवन के प्रति अपरबल निष्ठा का परिचायक है। 'ताप के ताए हुए दिन', 'अमोला' व 'शब्द' काव्य-संग्रहों की कुछ कविताएँ इसके प्रमाण के रूप में उद्‌घृत की जा सकती हैं। 'धरती' से लेकर 'अमोला' तक में 'हरापन' एक ललक की तरह छाया हुआ है और दूसरा शब्द अन्धकार या अँधेरा है जो उन्हें शक्ति देता है और जिसका प्रयोग अनेक कविताओं में मिलता है।"

त्रिलोचन की एक कविता है : **"पहले-पहल तुम्हें जब मैंने देखा/सोचा था/ इससे पहले ही/क्यों न तुम्हीं को देखा/अब तक/दृष्टि खोजती क्या थी/कौन रूप क्या रंग/देखने को उड़ती थी/ज्योति पंख पर/तुम्हीं बताओ/मेरे सुन्दर/अहे चराचर सुन्दरता की सीमा रेखा।"** प्रश्न है कि त्रिलोचन किस 'मेरे सुन्दर' को पहले-पहल देखकर अभिभूत हो गयें। किस 'सुन्दरता की सीमा रेखा' के प्रति प्रेमिल भाव से आकृष्ट हुए। सच तो यह है कि "प्रेम को, शुद्ध सांसारिक प्रेम को--जिसमें मनुष्य के साथ नदियाँ, वनस्पतियाँ, पर्वत-पहाड़, ढोर-डाँगर सभी कुछ हैं-- उन्होंने जिस अदीन मन से कौशल और भाषा की अद्‌भुत विच्छिति के साथ कविताओं में प्रतिष्ठित किया है, वह हिन्दीकविता को उनकी विशिष्ट देन है।" और इसी सुन्दरता की ओर वे बार-बार आकर्षित होते रहे है।

(ऊ)

त्रिलोचन कविता लिखते नहीं, कविता में सीधा-सादा जीवन जीते हैं, जीवन रचते हैं। रचाव की इस प्रक्रिया में विषय को प्रस्तुत करने का उनका ढंग भी सीधा-सादा है। जैसा सहज उनका जीवन, जैसी सहज उनकी कविता, वैसी ही सहज-सरल उनकी अभिव्यक्ति-पद्धति। ऊपर से देखने में 'नागार्जुन की भाषा सपाट-सी है, पर सपाट नहीं है। वे न तो नागार्जुन की तरह कविता को वक्तव्य बनने देना चाहते हैं और न ही उसे शमशेरबहादुर सिंह की तरह कलाकृति।' त्रिलोचन की कविताएँ सपाटपन के बावजूद कविताएँ हैं।

त्रिलोचन की अभिव्यक्ति-पद्धति पर विचार करते हुए डॉ. ब्रह्मशंकर पाण्डेय का कथन है कि "वे अभिव्यक्ति के लिए सपाट और स्पष्ट शैली अपनाते हैं तथा पूर्ण वाक्य-विन्यास को उपयोग में लाते हैं। उनके यहाँ शब्द मानो पहले से तैयार जिह्वा पर धरे-धराये हों, इस्तेमाल करना भर रह गया हो। मोती की लड़ियों में गुँथकर शब्द वहाँ चमकते पड़े रहते हैं। इतना सब बड़ी सादगी से बिना शोर-शराबे के वे कर ले जाते हैं, यही तो उनमें विशेषता है।"

छन्दों में, त्रिलोचन खड़ी बोली में सॉनेट, गजल, घनाक्षरी और सवैया लिखते हैं तथा अवधी भाषा

में (बोली में) बरवै छन्द लिखकर सहृदय पाठक का ध्यान अपनी ओर विशेषतः आकर्षित करते हैं। डॉ. रामविलास शर्मा कहते हैं कि 'त्रिलोचन अवधी भाषा के विद्वान् हैं। अवधी को खूब अच्छी तरह जानते हैं और भाषा-विज्ञान में उनकी बहुत अच्छी गति है।'

'सृजनात्मक अनुशासन का सबसे विलक्षण और रंगारंग रूप उनके सॉनेटों में दिखायी पड़ता है। शब्दों की जैसी मितव्ययिता और शिल्पगत कसाव उनके सॉनेटों में मिलता है, वैसा 'निराला' को छोड़कर आधुनिक हिन्दीकविता में अन्यत्र दुर्लभ है। ...सॉनेट-जैसे विजातीय काव्य-रूप को हिन्दी भाषा की सहज लय और संगीत में ढालकर त्रिलोचन ने एक ऐसी नयी काव्य-विधा का आविष्कार किया है, जो, लगभग, हिन्दी की अपनी विरासत बन गयी है।'

इस संबंध में स्वप्निल श्रीवास्तव का अभिमत है कि 'त्रिलोचन की कविता समकालीन रूढ़ियों से अलग है। सॉनेट-जैसे कठिन काव्यरूप की नकल करना किसी कवि के वश की बात नहीं। जिसने उगाही की, रँगे हाथ पकड़ा गया। विदेशी सॉनेट को त्रिलोचन ने अपना देशी रंग देकर प्रतिष्ठित किया है। सॉनेट और त्रिलोचन एक-दूसरे के पर्याय बन चुके हैं। सॉनेट को लेकर उनके बारे में अनेक दंतकथाएँ प्रचलित हैं।'

'त्रिलोचन की कविता उद्बोधन के ज्यादा करीब है। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उद्बोधन के होते हुए भी, उद्बोधन की इतिवृत्तात्मकता को कैसे बनाया जा सकता है, वह त्रिलोचन में है।'

उनकी कविता में औदात्य वाचन-लय में द्रुति से आता है-प्रवाह-अवरोध से नहीं। डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव का अभिमत है कि 'बहुतों को त्रिलोचन गद्यात्मक कवि जान पड़ते हैं पर उनकी गद्यात्मक कविता की खास अपनी लय है, जिसे धीमी गति से पढ़ना-पहचानना जरूरी हो जाता है। .... हिन्दी की अपनी प्रकृति का यह एक अन्यतम आधुनिक कवि अपने ढंग का अकेला कवि है, जिसका अनुकरण असम्भव है। त्रिलोचन को पढ़ने का अर्थ है त्रिलोचन को सुनना। उनकी कविता को सतर्क पाठक की जरूरत है।'

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी त्रिलोन की कविताओं का मूल्यांकन करते हुए लिखते हैं कि 'त्रिलोचन की कविता में नयापन केवल वस्तुपन में ही नहीं आता। वह रूप में, विशेषतः लय में सँवर कर आता है। ऐसा लगता है कि उनकी कविताओं में प्रवाह और लय केवल वार्त्तालाप का है।. ....उनमें लय और बोध-संवेदना 'कहियत भिन्न न भिन्न है'। त्रिलोचन की कविताओं की संवेदना को पकड़ने में सबसे ज्यादा मदद लय से मिलती है। उनकी कविताएँ विशिष्ट वाचनपद्धति की माँग करती हैं। इससे त्रिलोचन की विशिष्टता पहचानी जा सकती है।'

त्रिलोचन की कविता पाठक को देखते ही नहीं रिझाती है। वह सुनते ही आकर्षित कम करती है। 'यदि आप कविता के सावधान और संस्कारी पाठक-श्रोता नहीं हैं तो त्रिलोचन की कविता सपाट लगेगी। उसका सौन्दर्य-बोध अर्जित करना पड़ता है। उसके रूप का सौन्दर्य जानकारी के साथ उद्घाटित होता है। और, एक बार आत्मीय होने के बाद यह आजीवन संगिनी बनी रहती है।'

(ए)

कवि त्रिलोचन ने हिन्दी कविता की प्रगतिशील धारा को अपने कृतित्व से समृद्ध तो किया ही है, स्वयं को 'जनकवियों' के बीच अलग पहचान भी दी है। प्रगतिशील कविता की 'वृहत्त्रयी' में तीसरा और अन्तिम नाम त्रिलोचन का ही है- नागार्जुन, केदारनाथ और त्रिलोचन। वैसे भी 'प्रगतिशील हल्कों में सामान्य स्वीकृति के बावजूद त्रिलोचन को प्रमुख प्रगतिवादी आलोचकों द्वारा मुक्तकंठ सराहना नागार्जुन और केदारनाथ अग्रवाल की तुलना में तनिक देर से ही प्राप्त हो सकती है।'

'निराला', मुक्तिबोध, नागार्जुन और केदारनाथ अग्रवाल के बाद त्रिलोचन ही ऐसे कवि हैं, जिन्होंने 'आम-आदमी' की जिन्दगी से कविता का साक्षात्कार कराया। जिस तरह 'धूमिल' की कविता जन-सामान्य के बगल खड़ी होकर उसकी वकालत करती है, 'आदमी' की जिन्दगी के साथ खिलवाड़ करने वाली शोषक शक्तियों सें संघर्ष करने हेतु धारदार हथियार बनती है, उसी तरह त्रिलोचन की कविता भी आम आदमी के बगलगीर होकर उसकी सुरक्षा का प्रयत्न करती है।

स्वप्निल श्रीवास्तव के शब्दों में - ''व्यक्ति रूप में ही नहीं, त्रिलोचन कवि-रूप में भी विचलित करते है। उनकी कविता लोक-जीवन के निकट की कविता है। अवधी लोक-जीवन के अनेक प्रसंग उनकी कविताओं में स्पष्ट दिखायी देते है। अवधी-जीवन के अनेक शब्दों का प्रयोग त्रिलोचन ने पहली बार किया हैं शब्द-ज्ञान के मामले में वे भाषा-वैज्ञानिकों से लोहा ले सकते है...........कविता में आडम्बर और अलंकारबाजी के वे विरूद्ध रहे हैं।...............त्रिलोचन अकेले कवि हैं जिनकी कविता में अपने जनपद का दुःख-सुख, विसंगतियाँ प्रमाणिकता से अभिव्यक्त हुई है। उनकी कविता शहराती कविता के विरूद्ध ताकत के साथ खड़ी होती है।........... त्रिलोचन की कविता के पात्रों में भोरई केवट, चम्पा, सनेही, पाँचू, नगई महरा-जैसे लोग हैं। अभिजात-वर्ग के आलोचकों, पाठकों को इन नामों में 'भदेस' की गंध आ सकती है; लेकिन जो त्रिलोचन की कविता से दो-चार हुए हैं, उन्हें पता होगा कि त्रिलोचन के पात्र चेतना के कई स्तरों को झकझोरते हैं, क्योंकि वे सीधे जिन्दगी से उठाये गये पात्र हैं।''

त्रिलोचन के कवि का मर्म टटोलते हुए डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र कहते हैं-- 'त्रिलोचन अपने समय को परिभाषित करते समय अपने देश और काल की सच्चाई से मनुष्य के इतिहास को भी परिभाषित करते हैं। अपने समय के मनुष्य की पीड़ा और बेबसी को सहने और समझने के बाद वे उसके देश और काल को उस अनुभव के प्रकाश में फैलाने लगते हैं। घाघ और भड्डरी की तरह उनकी कविता कहावतों और मुहावरों में बदलने लगती है। मैं नहीं जानता कि हिन्दी में कोई कवि ऐसा है जो 'भाषा' की इकाई वाक्य को मुहावरों या कहावतों में बदलने की शक्ति रखता है।'

सुप्रसिद्ध कवि शमशेर की दृष्टि में 'त्रिलोचन के कवि की उपलब्धियाँ सहज चौंकानेवाली नहीं हैं, इसलिए कि वे अनुभूतियाँ हमारे सामान्य और व्यापक जीवन की अनेक तहों को छूकर, बार-बार और एक अजीब निर्विकार रूप से, उन तहों की मिट्टी लाकार हमारी मिट्टी में रखती हैं। लँगोट कसे हुए साँस बाँधकर गोता लगानेवाला एक शान्त व्यक्ति चुपचाप आकर हमारी हथेली एर जो-कुछ रख देता है, वह बड़ा सामान्य लगता है--मगर वह 'सामान्य' कुछ ऐसा सामान्य नहीं, जैसा कि लगता है।' त्रिलोचन की यह असामान्य सामान्यता उनके कवि-व्यक्तित्व का सहज हिस्सा बन गयी है।

त्रिलोचन की कविता पर सार्थक टिप्पणी करते हुए ज्ञानेन्द्रपति का अभिमत है : 'त्रिलोचन की कविता समकालीन हिन्दीकविता के भूगोल का एक ध्रुव है, जिस तरह कि शमशेर की कविता दूसरा ध्रुव। इन दो ध्रुवान्तों के बीच ही समकालीन हिन्दीकविता की तमाम अक्षांश और देशान्तर रेखाएँ आती है। एक में प्रगाढ़ पार्थिवता है तो दूसरे में व्योमोन्मुखता। हाँ, त्रिलोचन की कविता में पहली बारिश में माटी से उठनेवाली सोंधी गन्ध है, तो शमशेर की कविता में एक भासमान आकाश--यह चिदाकाश उनका चित्ताकाश ही है।.........त्रिलोचन (की कविता) में जीवन की असमाप्यता का 'मार्च-सांग' है, जिजीविषा की उत्कटता के तरंग-चित्र हैं, जीने की कर्मठता के अन्तहीन प्रकरण हैं, प्रकाश-उल्लास से भरे तो कहीं किंचित् उदास भी। लेकिन यह उदासी आत्मा की निर्जनता की आत्यन्तिक उदासी नहीं है--स्वजनों से दूर रहने की उदासी है--'आज मैं अकेला हूँ, अकेले रहा नहीं जाता।'............ आज का युवा-कवि अपने को त्रिलोचन के ध्रुव के अधिक निकट पाता है। त्रिलोचन की कविता की सहजता उसके लिए विशेष महत्त्व की है। अद्भुत है यह सहजता भी--त्रिलोचन के व्यक्तित्व की ही तरह जिसमें पाण्डित्य और

लोकजीवन में रमे होने का भाव-प्रभाव एक साथ है। वह पाश्चात्य छंद सॉनेट हो या अवधी का बरवै--त्रिलोचन की सिद्धहस्तता लासानी है। छन्दानुशासन में जीवन की निस्सीमता को समाना त्रिलोचन की ही कवि-प्रतिभा के बूते का है। त्रिलोचन की सहजता की साधना कला-साधना की अविरोधी है। बल्कि यदि यह सच है कि कला वहीं अपने निखरे रूप में होती है जहाँ वह तनिक ध्यान नहीं खींचती, तो कहना होगा कि त्रिलोचन से बड़ा कलाकार-कवि अभी हिन्दी में दूसरा नहीं। भाषा-बोध के स्तर पर त्रिलोचन 'निराला' के गहन अध्ययन से अर्जित सीख को बरतते और विकसित करते दिखायी देते हैं। त्रिलोचन की कविता-भाषा में सर्वत्र हिन्दी भाषा का प्रकृत स्वरूप सुरक्षित है। छन्द भी वहाँ भाषा को तोड़ने-मरोड़ने की कोई छूट नहीं लेता। बल्कि सच तो यह है कि भाषा का यह प्रकृत स्वरूप ही त्रिलोचन के यहाँ छन्द को कविता का कारागार नहीं बनने देता, बल्कि उस 'स्वाधीन चेतना' का कारण बनता है, 'परिमल' की अपनी युगान्तरकारी भूमिका में 'निराला' ने जिसे साहित्य के कल्याण का मूल और जाति के मुक्ति-प्रयास का पता देनेवाली बताया है। उसी भूमिका में निराला ने आलाप और ताल की रागिनी की चर्चा करते हुए आलाप को 'वन्य प्रकृति तथा मुक्त-काव्य-स्वभाव के अधिक अनुकूल' कहा है। त्रिलोचन की कविता में जहाँ वह मुक्त छन्द है वहीं नहीं, बल्कि जहाँ छन्दोबद्ध है वहाँ भी, ताल की रागिनी नहीं, आलाप का स्वर सुनायी पड़ता है। त्रिलोचन की कविता हर-हमेशा हमसे बोलती-बतियाती है।..... निराला के अनन्तर त्रिलोचन की कविता में कर्म की अविराम धारा बहती हुई देखी जा सकती है। त्रिलोचन की कविताएँ स्वयं सम्पूर्ण इकाइयाँ नहीं हैं, बल्कि लहरें हैं-- अलग-अलग होकर भी परस्पर सम्बद्ध-- जिनके आरोह-अवरोह में एक ही जीवन-सागर गरजता-गाता है। उनके मुक्तकों की महाकाव्यात्मकता का रहस्य इसी में निहित है।'

त्रिलोचन काव्य-कर्म और लोक-मर्म, दोनों ही दृष्टियों से अनूठे कवि हैं। (अवध-क्षेत्र के) जन-जन के मर्म में पैठनेवाला ऐसा लोकात्म कवि जो कविता की श्रेण्यता और कला की सूक्ष्मता पर समान सधाव रखता हो, ऐसा कवि हमें त्रिलोचन में ही मिलता है। वे सच्चे अर्थों में अवध-अवधी के अलंकार हैं, हिन्दी के शृंगार हैं।

रीडर : हिन्दीविभाग,
हेमवतीनन्दन बहुगुणा, पी.जी. कॉलेज,
लालगंज, प्रतापगढ़।

पारस 'भ्रमर'

प्रो. राजेन्द्रप्रसाद श्रीवास्तव

विलक्षण प्रतिभा के धनी 'भ्रमर' जी जन्मजात प्रातिभ, स्वप्नदर्शी, आधुनिक अवधी के रचनाकार हैं। अद्यतन अवधी लोकगीतकारों में आपका एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है। भ्रमर जी का व्यक्तित्व बहु-आयामी है। वे कवि, लोकगीतकार, पत्रकार, सम्पादक, इतिहास एवं पुरातत्व के जिज्ञासु, संगीत-प्रेमी, गम्भीर विचारक, मननशील चिन्तक आदि सब कुछ हैं। किन्तु प्रत्यक्ष रूप से आपका कविरूप ही प्रधान है।

पारस भ्रमर के नाम से विख्यात मिश्र जी का जन्म ब्रह्मपुरी मोहल्ले में एक प्रतिष्ठित एवं सम्पन्न मिश्र-कुल में सन् 1934 ई. में हुआ। आपके पिता पं. कन्हैयालाल मिश्र अपने समय के प्रसिद्ध वकील, समाज-सेवी, स्वदेशानुरागी और प्रगतिशील विचारक थे। आप बी.काम., एल-एल.बी., संगीत-प्रभाकर आदि अनेक उपाधियों से विभूषित हैं। स्थानीय साहित्यिक संस्था 'वातायन' द्वारा सन् 1974 ई. तथा 'साहित्यानन्द-परिषद : गोला गोकर्णनाथ, खीरी' द्वारा सन् 1989 ई. में आपका अभिनन्दन भी किया जा चुका है।

अवधी और खड़ी बोली, दोनों ही भाषाओं पर भ्रमर जी का समान अधिकार है। पर इनका अन्तर्मन अवधी में ही अच्छी तरह मुखर हुआ है, क्योंकि अवधी आपकी नस-नस में रसी-बसी है। उक्त दोनों भाषाओं के अतिरिक्त संस्कृत, अँगरेजी, उर्दू और नेपाली भाषा का भी आपको अच्छा ज्ञान है। भ्रमर जी की 'गौरैया', 'सैकत-शैय्या', 'रेत की दीवाल' आदि नामक कहानियाँ समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। अवधी में गीत, लोकगीत, गजल आदि का भी प्रकाशन हो चुका है। खड़ी बोली हिन्दी में लगभग छह पुस्तकें और अवधी में 'सुरसमयी', 'जगपती-चालीसा' एवं 'अष्टक' आदि पुस्तकें अभी तक प्रकाशित हैं। कुछ वर्ष पूर्व बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना ने इनके कुछ अवधी गीतों को प्रकाशित किया है। समय-समय पर भ्रमर जी की कविताएँ विविध साहित्यिक मंचों, कवि-सम्मेलनों, आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के माध्यम से प्रकाश में आती रही हैं। अवधी में 'संत-सत्तइसा', 'भगल' तथा खड़ीबोली में 'आदमी और बादल' 'आकर्षण' आदि अप्रकाशित काव्य-कृतियाँ हैं। विषय-वस्तु की दृष्टि से भ्रमर जी की कविता कृषक एवं ग्रामीण जीवन, प्रेम, प्रकृति, समाज, अध्यात्म, देशप्रेम, राजनीति, आर्थिक विषमता आदि के साथ श्रृंगार के संयोग-वियोग, वात्सल्य, भक्ति, हास्य एवं व्यंग के विविध विषयों से सम्बद्ध है। प्रकृति-चित्रण के अन्तर्गत उन्होंने कजली, होली, फगुआ, चैती, झूमर, कहरवा, दादरा आदि अनेक विषयक गीतों की रचना की है। किसी विषय के प्रस्तुतिकरण की जैसी कलात्मक क्षमता भ्रमर जी में पायी जाती है, उसका वर्तमान समय के अन्य अवधी गीतकारों में अभाव-सा है। सामाजिक जीवन की गहरी अनुभूति इनकी कविताओं में विद्यमान है। कल्पना-लोक में विचरण करते हुए भी उन्होंने धरती के यथार्थ का साथ कभी नहीं छोड़ा है। जैसे धरती से फूल-फल उपजते हैं, उसी तरह भ्रमर जी के गीत जीवन के उर्वर अनुभव-क्षेत्र से निकलते हैं।

भ्रमर जी की काव्य-साधना उनकी प्रखर बुद्धि, गहन जीवनानुभूति और व्यापक एवं गम्भीर अध्ययन का परिणाम है। वस्तुतः भ्रमर जी ने अपने गीतों द्वारा आधुनिक अवधी काव्य को एक नयी दृष्टि एवं दिशा दी है। इनके गीतों में भावों एवं कल्पना-चित्रों का गुम्फन पाया जाता है। आपकी सौन्दर्यानुभूति भारतीय दर्श के अभेदवाद पर आधारित है। मानसिक और वैचारिक दृष्टि से आक्रान्त होना, समस्या से दबकर टूट जाना या जीवन की सहज सार्थकता से अलग होकर जीवन-यापन करना भ्रमर जी ने कभी नहीं सीखा है। भ्रमर जी 'सुन्दर' के उपासक हैं। उनकी मान्यता है कि 'सुन्दरं' 'सत्यं' के माध्यम से 'शिवम्' में परिणत हो जाता है। सुन्दर के उपासक और जिज्ञासु होने के कारण भ्रमर जी ने अपने गीतों, लोकगीतों और गजलों में सौन्दर्य की सूक्ष्म कलात्मक प्रतिष्ठा की है।

काव्य-कला की दृष्टि से भ्रमर जी की कविताओं में श्रृंगार के दोनों पक्षों संयोग-वियोग के साथ ऋतु-वर्णन, लोक-चित्रण, भाषा-सौष्ठव और अलंकार-वैभव पदे-पदे संनिहित है। सूक्ष्मता एवं गहराई के कारण इनके गीतों में भाषागत शैथिल्य के दर्शन नहीं होते है। विचारों के अनुसार ही भाषा का प्रवाह है। आपकी भाषा में प्रसाद और माधुर्य गुण के साथ ध्वन्यात्मकता और चित्रात्मकता का सुन्दर विन्यास हुआ है। भाषा में कहीं ठेठ अवधी, तो कहीं संस्कृतनिष्ठ अवधी का सुष्ठु प्रयोग मिलता है। अलंकार-योजना की दृष्टि से भ्रमर जी ने अपने गीतों, लोकगीतों, गजलों आदि में अनुप्रास, उपमा, रूपक, श्लेष, उत्प्रेक्षा, अन्योक्ति आदि अलंकारों का बड़ा ही कलात्मक प्रयोग किया है। भ्रमर जी ने अपनी कविताओं में सवैया, कवित्त, घनाक्षरी, दोहा और मुक्त छन्दों के भी प्रयोग किये हैं। इन छन्दों के माध्यम से भ्रमर जी ने लोक-काव्य में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है।

इस प्रकार, भ्रमर जी मूलतः ग्रामीण एवं लोक-संस्कृति के सशक्त हस्ताक्षर और गीतकार हैं। आप अवधी भाषा और साहित्य को अपनी वाग्विभूति द्वारा विशेष गौरवान्वित कर रहे हैं। इन्होंने अवधी-भाषी जनता के रहन-सहन, रीति-रिवाज, खेत-खलिहान तथा उनकी भावना का जिस स्वर-माधुर्य, सरसता, सहजता, संगीतमयता, ध्वन्यात्मकता, चित्रात्मकता तथा आलंकारिक शैली के माध्यम से कलात्मक लोक-अभिव्यक्ति का प्राकृतिक सामंजस्य अपने गीतों, लोकगीतों, गजलों और कविताओं में स्थापित किया है, शायद वैसी बोधगम्य अभिव्यक्ति वर्तमान अवधी गीतकारों में से अभी तक कोई भी नहीं दे सका है। उदाहरण-स्वरूप कतिपय रचनाएँ प्रस्तुत हैं--

प्रकृति में वात्सल्य

घुटरुन बादर चलैं बकइयाँ,
दिन भर करैं जहाँ घमछँहियाँ,
पाय बाँस अस डील बाप कै मचलि परै लरिकइयाँ,
बेलि पकरि करिहाँव बिरिछ के चढ़ि चढ़ि जाय घोड़इयाँ",
देखै बँधवा से उझिकि बहार।

गजल--

दूरि हमसे सजन होइ गये,
राति-दिन कै सपन होइ गये।
प्रीति के गीत रूठे मुला,
रूठि कै उइ भजन होइ गये।
राति हमसे न काटे कटै
नींद के दिन दफन होइ गये।

फागुनी छन्दों में ध्वन्यात्मकता

लाही-सरसों रंग कटइया,
लटकै टेसू गाँव-गँवइया।
फूले महुवा, कदम, कचनार,
फगुनही बयारि बहै।
अर-रर, अर-रर लड़ै कबीरा,
सर-रर, सर-रर उड़ै अबीरा।
धिनगिन-धिनगिन बजै ढोल-ढफ,
किटधिन-किटधिन करै मँजीरा।
थिरकैं थइ-तथइ-त-तत-थइया,
अँगनन मा गोरहर गौरइया।
पहली, बिछुवा से करै तकरार,
फगुनही बयारि बहै।

एक नदी का अवतरण और उसके जल में प्राकृतिक बिम्बों के मानवीकरण में उभरे चित्रों का प्रस्तुतीकरण—

परबत कै पीरा हरियानी,
पाथर-पाथर निचुरै पानी।
धानी होइगै हमरे धरती कै चुँदरिया,
अँगनवा म गीत झरैं।
सुरुज नहायँ, चँदरमा पइरैं लै नखतन कै टोली,
झुकि-झुकि परै अकास लिहे काँधे बदरन बड़ डोली।
बदरी होइगै जइसे पानी कै मछरिया,
अँगनवा म गीत झरैं।

वियोग-श्रृंगार में विरहाग्नि के अनुरूप सावन के विरोधाभासी आचरण की अभिव्यक्ति—

बरसै सवनवा,
हमरे अँगनवा,
झर-झर परत फुहार;
लागै बुँदनिया अँगार।
सँवरी बदरिया नयनवा म सिसकै,
पियरी बिजुरिया परनवा म कसकै,
डँहकै सुरतिया,
दहकै पिरितिया,
जरिगा अँचरवा हमार;
लागै बुँदनिया अँगार।
बिसुरै दुवरवा सघन पुरवइया,
अँसुवा कै तलई भई है अँगनइया।
बूड़े सपनवा,

बूड़े परनवा,
बूड़ी उमिरि मँझधार;
लागै बुँदनिया अँगार।

समाज में वैवाहिक संस्कार के अन्तर्गत कन्या की विदाई के पश्चात् मोहग्रस्त करुणा की प्रतीकात्मक प्रतिक्रिया में छोटी बहन के भावात्मक घर-संसार का चित्र—

हमरे अँगनवा न बोलै सुगनवा,
अँखिया म सिसुकैं परान
कहाँ गयी निबिया जवान !
निबिया कै बिरवा कटाय दिह्यौ बाबा,
घर की चिरइया उड़ाय दिह्यौ बाबा।
उड़िगै मइनवा सयान,
कहाँ गई निबिया जवान !
निबिया कै चिफुरी, चइलवा कै अगिया,
जरि-जरि होइगै कोइलवा से रखिया।
लागै जहनवा मसान,
कहाँ गयी निबिया जवान।
सूनी है पुरई और सुने हैं पुरवा,
सूनी देहरिया है, सूने दुवरवा।
सूने ओसरवा-सिवान,
कहाँ गयी निबिया जवान।
दुधवा कै खिरिया लै ओखै मंतरिया,
भूले से कगवा न बोलै अँटरिया।
जइसै परनवा हेरान,
कहाँ गयी निबिया जवान।

सवैया *चीरत वक्ष पहारन कै निकसी जल-धार बहावति गंगा,*
पाथर-पाथर ताल लगावति, नाचति, गावति, आवति गंगा।
गाँव-गली-गलियारन-द्वारन ग्वालिनि भेस बनावति गंगा,
दूध मा पानी मिलावति हैं सब, पानी मा दूध मिलावति गंगा।।

गँवई-गाँव का देश

निचवा धरतिया है, उपरा अकसवा,
बिचवा म गँउवा हमार ओ-हो बिरना।
मथवा उठाये परबतवा निहारै,
धुरहे चरनवा सगरवा पखारै।
नदिया-नहरिया धोवत अँगनइया,
अँचरा से पुरवा दुवरवा बहारै।
दिनवा म सुरुज और रतिया चँदरमा,
गली-गली करै उजियार ओ-हो बिरना।

सँझवै से आय-आय रतिया सोवावै,
पछिलहरै से भोरहरिया जगावै।
बेद पढ़ै सुगवा, भजन गावै मइना,
कगवा सकरवै सँदेसवा सुनावै।
दुधवा उतारि थन कहै कलवरिया,
उतरा अँगन भिनसार ओ-हो बिरना।
फुलवा से रहस रचावै फुलवारी,
धीरे-धीरे सिटिया बजावैं बँसवारी।
बगिया के बिरछन चिरई-चिरंगुन,
चिहुँकत, उड़त, भरत किलकारी।
खेतवा म खनकै पसिनवा कै दनवा,
बिछुवा कै जस झनकार ओ-हो बिरना।
सोंधी-सोंधी मटिया म उपजै सपनवा,
सोनवा से चँदिया से भरै खरिहनवा।
हँसुली, हबेलि, पयलि, करधनिया,
झुमकी, मुँदरिया और गढ़ै लटकनवा।
सँवरी सुरतिया से छिटकै चँदनिया,
बिन किहे सोरहौ सिंगार ओ-हो बिरना।
पुसवा कै ठिठुरन जेठवा घटावै,
जेठवा कै तपन सवनवा बँटावै।
तनमा महकि बसै, मनमा उमंगै,
अँखिया मा रंग फगुनवा चढ़ावै।
सँझवा-सकरवा गाँव-गलियरवा,
होरहा है. सगरिउ जँवार ओ-हो बिरना।

धर्म, दर्शन और अध्यात्म

ज्ञानी, ज्ञान-गरूर न भावै।
जा तन बसै जीव-जगदीस्वर,
ता तन चूरि बतावै।
निरगुन सगुन, सगुन कहि निरगुन,
मूढ़न का समझावै।
सीमातीत ब्रह्म कै मायाद्ब
पिंजरा मा करियावै.
अनुभव हीन ज्ञान कै पाटी,
पढ़ि-पढ़ि हमहिं पढ़ावै।
सोहम् कहि-कहि अहम् ब्रह्मसे,
सो का दूरि भगावै।
करम करै तो चरम निभावै।

सियाराम-जप परम धरम बिन,
करमा ठाढ़ पछितावै।
धरम-करम के बीच भेद कै—
मरम जीव नहिं पावै।
रज-तम केर भरम, सत-पथ के—
पथिकन का भरमावै।

मिलन का मौसम

मनहिं मन फूली कली-कचनार।
दखिनी दखिन दुवार खोलि कै अँचरा छुइ-छुइ जाय,
द्वारे गमकि-गमकि कै छिन-छिन महुवा चुइ-चुइ जाय,
दसहुँ दिस डोली मतई बयार।

कविता में हास्य-व्यंग्य का रूप

लुगरी, झँगिया, चुँदरी, अँगिया, नउकी चपली चटकाय नहीं,
बिछिया, पहुँची, टँड़िया, हँसुली, नथुनी पहिरे अँठिलाय रहीं।
सेनुरा, टिकुली, कजरा, मेंहदी, रचि पायँ मेहाउर गाय रहीं,
सठियान घरैतिन छाँगुर कै महुवारिन मा ओंड़िराय रहीं।।
प्रभु कलजुगी साधु-सन्यासी।
चंदन चर्चित बदन कराला,
कंठ सुसोभित हीरक माला,
स्वर्णाभरण युक्त अरदासी।
सूत-कपास मनहिं नहि भावै,
वस्त्र रसायन केर सुहावै,
खउहट तन पर बसन सुबासी।
दूध, दही, घिउ, मेवा छाकैं,
रूखे भोजन ओर न ताकैं,
खायँ रसायन च्यवनपरासी।
बिना भजन के भगत कहावैं,
मूड़ैं स्स्यि, पाँव पुजवावैं,
सुख-सुविधा परिपूर्ण बिलासी।

अवधी-शिरोमणि आद्याप्रसाद 'उन्मत्त'

डॉ. नलिनकान्त उपमन्यु

व्यापक अर्थ में सम्पूर्ण दृश्यमान् जगत्, समस्त देशकाल ही प्रकृति है। मनुष्य स्वयं प्रकृति का अंग-भूत है। वाह चाहे भी तो अपने को उससे पृथक् नहीं कर सकता। प्रकृति में ही सारी सृष्टि उत्पन्न होती है, उसमें ही लीन हो जाती है वह चिर पुरातन भी है और नित नवीन भी। जीवन में हमें निरन्तर प्रकृति का बोध होता रहता है। जीवन का प्रकृति-बोध मुख्यतया इन्द्रियगोचर होता है, किन्तु 'साहित्य का प्रकृतिबोध मानवेतर इन्द्रियगोचर बाह्य परिवेश तक जाकर रुक नहीं जाता।' वह उससे आगे बढ़कर गोचर में अगोचर को देखने की चेष्टा करता है।

अज्ञेय के मत में 'प्रकृति' 'मानव' का प्रतिपक्ष है, अर्थात् मानवेतर ही प्रकृति है— वह सम्पूर्ण परिवेश जिसमें मानव रहता है, जीता है, भोगता है और संस्कार ग्रहण करता है। और भी स्थूल दृष्टि से देखने पर प्रकृति मानवेतर का वह अंश हो जाती है जो कि इन्द्रियगोचर है—जिसे हम देख, सुन और छू सकते हैं, जिसकी गंध पा सकते हैं और जिसका आस्वादन कर सकते हैं।

डॉ. विद्यानिवास मिश्र के अनुसार 'विश्व के प्रपंच में वस्तुतः तीन सत्ताएँ हैं— मनुष्य द्वारा निर्मित समाज, संस्कृति एवं सभ्यता के संस्थान, मनुष्य का अन्तःकरण और शेष वह समस्त चर-अचर जगत् जिसके निर्माण में मनुष्य का योगदान न होते हुंए भी उसके साथ मनुष्य का जन्म से ही किसी-न-किसी प्रकार का रागात्मक संबंध स्थापित हो जाता है। इसी तीसरी सत्ता को हम प्रकृति कहते हैं।'

वन, पर्वत, नदी, नाले, निर्झर, कछार, पटपर, चट्टान, वृक्ष, लता, झाड़ी, फूस, घास, शाखा, पशु-पक्षी, आकाश, मेघ, नक्षत्र, समुद्र इत्यादि ऐसे ही चिर सहचर रूप हैं। खेत, दुर्री, हल, झोपड़े, चौपाये इत्यादि भी कुछ कम पुराने नहीं हैं। इसी प्रकार पानी का बहना, सूखे पत्तों का झड़ना, बिजली का चमकना, घटा का घिरना, नदी का उमड़ना, कुहरे का छाना, डर से भागना, लोभ से लपकना, छीनना-झपटना, नदी या दलदल से बाँह पकड़कर निकालना, हाथ से खिलाना, आग में झोंकना, गला काटना—ऐसे व्यापारों का भी मनुष्य-जाति के भावों के साथ अत्यन्त प्राचीन साहचर्य है। ऐसे आदिरूपों और व्यापारों में वंशानुगत वासना की दीर्घ परम्परा के प्रभाव से भावों से उद्‌बोधन की गहरी शक्ति संचित है और इनमें रस-परिपाक की पूर्ण संभावना परिव्याप्त है।

प्रकृति अनन्त रूपों में हमारे सामने प्रस्तीर्ण है—कहीं मधुर, सुसज्जित या सुन्दर रूप में; कहीं रूखे, बेडौल या कर्कश रूप में, कहीं भव्य, विशाल या विचित्र रूप में, कहीं उग्र, कराल या भयंकर रूप में।

आधुनिक अवधी के महान् कवि एवं दलित-चेतना के अग्रणी हस्ताक्षर पं. आद्याप्रसाद मिश्र 'उन्मत्त' का जन्म प्रतापगढ़-इलाहाबाद राजमार्ग पर स्थित देल्हूपुर बाजार से पश्चिम करीब 2 किमी. की दूरी पर 'मल्हूपुर' गांव में 13 जुलाई, 1935 को हुआ था। 'उन्मत्त' आद्याप्रसाद मिश्र का कवि-नाम है, और यह उपनाम (किंवा कविनाम) प्रतापगढ़ की धरती पर इतना लोकप्रिय हो गया है कि मुख्य नाम 'आद्याप्रसाद' अब गौण हो गया है।

सच्चे कवि का हृदय प्रकृति के इन सब रूपों में लीन होता है; क्योंकि उसके अनुराग का कारण अपना ख़ास सुख-उपभोग नहीं, बल्कि चिरसाहचर्य द्वारा प्रतिष्ठित वासना है।

अस्तु, इस-ऐसी अनन्तरूपा प्रकृति का साहित्य में अनेक रूपों में भावन-वर्णन होता रहा है। इस अनन्त-प्रकृति में सर्वाधिक चेतनामय प्राणी मनुष्य है। मानवों में भी साहित्यकार-कलाकार अधिक प्रतिभा-सम्पन्न और विशेषतः कारयित्री एवं भावयित्री-शक्ति से युक्त होते हैं। प्रायः साहित्यकार परम्परा से प्रकृति का नानाविध शब्दांकन करते रहे हैं। प्रकृति-वर्णन की दृष्टि से 'उन्मत्त' जी के कवि कायोगदान प्रशंसनीय है।

'उन्मत्त' जी अवधी-माटी के खाँटी कवि हैं। वे किसान-कवि हैं, ग्रामीण मानस के कवि हैं। अतः उन्होंने प्रकृति-चित्रण के लिए प्रकृति के जिन नानारूपों को चित्रण का विषय बनाया है, वे प्रायः ग्राम्य प्रकृति से संबंधित हैं और उनकी सूची लम्बी है। एक ओर उनके काव्य में जहाँ नदी-ताल-तलैया, खेत-खलिहान, रास्ता-पगडण्डी आदि स्थान अपनी विशिष्ट छवि में अंकित हैं वहीं दूसरी ओर प्रकृति के अनेक उपादान—बादल-बिजली, आकाश-क्षितिज, सूर्य-चन्द्र, तारे, इन्द्रधनुष आदि; अनेक ऋतुएँ— शिशिर, हेमन्त, जाड़ा-गर्मी-बरसात, आदि; अनेक मास—फागुन, चैत, बैशाख, जेठ, असाढ़, सावन, भादौ, कुआर-कातिक आदि के संश्लिष्ट चित्र (उनके काव्य में) विद्यमान हैं।

कवि ने फूलों में गुलाब, कुईं, गुड़हल, गेंदा, कमल, चम्पा, पलाश आदि को विशेष रूप से स्मरण किया है। पेड़-पौधों में आम, महुआ, नीम, बबुर, पीपल, अक्षयवट, अर्जुन, अशोक, तुलसी आदि के चित्र कवि ने अंकित किये हैं। पक्षियों में कौआ, हंस, बगुला, टिटिहरी, सारस, गिद्ध, गौरेया, कबूतर, मोर-मुरैला, चातक आदि 'उन्मत्त' के काव्य में आये है तो पशुओं में कुत्ता, बिल्ली, गदहा, गाय, भैंस, बैल, हरिण, घोड़ा, हाथी, बकरी आदि भी आये हैं। जीव-जन्तुओं में साँप-केंचुए, मेढ़क-घोंघे, मक्खी, कीड़े-भुनगे-जैसे उपेक्षित जीव आये हैं तो तितलियाँ, मछलियाँ, जुगनू- जैसे मनमोहक जीव भी विद्यमान हैं।

'उन्मत्त' जी की स्मृति-दीर्घा में कहीं धूप, दीप, किरण, सेवार, इंजन, सीटी, जाड़े की कम्पन, भादौं की उमस, असाढ़ की सोंधी गन्ध-नमक आदि के बिम्ब टँके हैं तो कहीं धूल-धुआँ-धक्कड़, घास-फूस, आग-ज्वाला आदि की विशिष्ट छवियाँ टंकित हैं। इस तरह उन्होंने सभी प्रकार को प्रकृति को अपने साहित्य-संसार में स्थान दिया है। सब का सांगोपांग विवेचन कर पाना संभव नहीं है। कुछ महत्त्वपूर्ण प्रकृति-विषयों का विवेचन अवलोकनीय है।

प्रकृति का मानव से अभिन्न संबंध है, इसीलिए आदिकाल से लेकर आज तक किसी-न-किसी रूप में प्रकृति-चित्रण होता चला आ रहा है। इसका चित्रण 'षड्ऋतुवर्णन' तथा 'बारहमासा' के रूप में होता रहा है। 'उन्मत्त' जी ने उक्त परम्परागत प्रकृति-रूप का चित्रण नहीं किया है। उन्होंने ऋतुओं की प्राकृतिक सुषमा का चित्रण करते हुए ग्राम्य जीवन पर पड़नेवाले उसके प्रभावों का मनोहारी वर्णन किया है। इस दृष्टि से 'गँउना मा जाड़ा गवा आइ', 'गरमी आई तौ हँसा गाँव', 'छक-छक-छक-छक बरसा पानी', 'तनी झूमि के बरस कजरारे बदरा', 'बरखा कै अन्त' आदि कविताएँ विशेष रूप से भावनीय हैं, रेखांकनीय हैं।

'उन्मत्त' जी ने प्रायः प्रत्येक मौसम पर कविताएँ लिखी हैं। वे व्यक्ति पर मौसम का असर महसूस करते हैं। उसके साथ व्यक्ति की पूरी संवेदना को जोड़ते हैं। वर्षा ऋतु के बाद 'जाड़े' का आगमन होता है। शीत का आधिक्य इस ऋतु की परम विशिष्टता है। इस समय की शीत-गलन से शरीर काँपने लगता है, ठण्ड के मारे लोग सिसकारी भरते रहते हैं। पछुआ हवा जब सुरसुराकर चलती है तो वह नाक-कान-मुँह में बरछी की धार-जैसे चुभती है, दाँत किटकिटाने लगते हैं, सारा शरीर गिनगिना उठता है। यह ऋतु निर्धन-ग़रीबों, जीव-जन्तुओं एवं वृद्ध-जनों के लिए अतिशय कष्टकारक होती है। लोग जैसे-तैसे कथरी-गुदरी ओढ़कर दिन बिताते हैं। कोहरे-पाले का बराबर प्रकोप बना रहता है। फिर भी, इस तरह की भयंकर

शीत को जैसे-तैसे किसी तरह सहते हुए खेतिहर-मजदूर-किसान चैत में बढ़िया फसल काटने की आशा में खेतों की बोवाई-जोताई, निराई-गोड़ाई, सिंचाई-रखवाली आदि करने में जुटे रहते हैं। परिणामतः किसान-जन आलीशान फसल देखकर मगनमन दिखायी देते हैं। 'उन्मत्त' जी की पैनी दृष्टि से प्रकृति के ये अनुषंग बच नहीं पाते। इस प्रकार का वर्णन किसी शहराती कवि-सर्जक के बस-बूते का काम नहीं है। उदाहरण ध्यातव्य हैं, जिनमें जाड़े के प्रभाव को उसकी सम्पूर्णता में महसूस करते हुए वे लिखते हैं :

'महतो के घर तपता बरिगा, फिर जमठा जुरा दलाने मा,
केउ गमछा केउ कंटोप दिहे केउ टूकै बाँधे काने मा,
साफा बाँधे महराजदीन, कथरी ओढ़े मंगर आयेन,
निकुरा पोछत के मियाँदीन, बीड़ी फूँकत डंगर आयेन,
करिहाँउ टेढ़कै पहलादी और हाथ मलत आयेन पल्टन,
घोंधी मारे ननकऊ चलेन औ छाती ताने रामसरन,
लखि विप्र सुदामा रूप गाँव के हलधर किसन कन्हाई कै,
पाती-पाती पर आँस चुई बा जैसे धरती माई कै।'

x x x

धीरे-धीरे दिन छोट भवा, तनिकै-तनिकै बढ़ चली राति
जब सुरजै जागै सात बजे, तौ ई मनई कै का बिसात।
कथरिन मा मुँह मूँदे-मूँदे दिन पहर चढ़े रतियइ देखाइ
गँउना मा जाड़ा गवा आइ।

नीचे पुआल उप्पर कथरी, कथरी पर सोवइँ सात जना
गुड्डू जैसिरी किलोपा कोबा, आजी माई तिल्लोकना
केउ मूड़े कइती सरकि गवा, केउ गोड़वारी मू ढनगि जाइ।
गँउना मा जाड़ा गया आइ।

पछियाँव चला सुर-सुर-सुर-सुर बस, निकुरइ मा ओलियाइ गवा,
कानन मा तौ जइसे कौनउ, बरछी कै धार छुआइ गवा।
दँतवा बाजै किट-किट-किट-किट, औ सारी देहियाँ गिनगिनाइ।
गँउना मा जाड़ा गवा आइ।

तपता बरि गवा चौतरा पर, चौतरफा जुरी जमात अहै
बातै-बातै मा महदेवना कै गंजी जरि-जरि जात अहै।
चरचा छिड़ि जाइ गये दिन कै बुढ़ऊ कै हुक्का गुड़गुड़ाइ।
गँउना मा जाड़ा गया आइ।

अरहर झमकावै मूँड़ मटर के माथे रोली-चन्नन भा,
अब नये साल के आगम पर, जइसे सबकै अभिनन्नन भा।
आलू कै आलीसान फसिल लखि-लखि के जियरा झूमि जाइ।
गँउना मा जाड़ा गवा आइ।।

खेते-खेते मेड़े-मेड़े, मोतिन कै हार सजाये बा,
सरसउ फूली जानौ कौनौ, नाती कै गवन लिआये बा।
ई नई-नवेली अस धरती केका लखि-लखि के मुसकियाइ।
गँउना मा जाड़ा गवा आइ।।

जाड़ा खत्म होते ही प्राकृतिक परिवेश बदलने लगता है। ग्रामीण लोगों की जीवन-शैली भी बदलने लगती है। सर्दी, कँपकँपी, थरथरी सब समाप्त हो जाती है और गर्मी का शासन आ जाता है। गेहूँ पकने-कटने लगता है, महुआ फूलने-चूने लगता है, कृषक-लक्ष्मी जो अब तक खेतों की शोभा बढ़ा रही थीं, खलिहानों में इकट्ठा होने लगती हैं। ग्रामीण बालाओं के हाथ में कटनी के लिए हँसिया टनकने लगती है। सब अपने-अपने काम-काज में मग्न हो जाते हैं, इतनी भी फुर्सत नहीं कि घर आये मेहमान की भी ठीक से सेवा हो पाये। गर्मी की इस-ऐसी प्रकृति का कवि 'उन्मत्त' द्वारा किया गया वर्णन ध्यातव्य है :

कँपकँपी-थरथरी छू मंतर सरदी कै सासन गा ओराइ,
गरमी कै लौटा राजपाट अब कहाँ धुँआ-धक्कड़ देखाइ,
दुइ टेम कचालू खाइ-खाद मन तीत होइ गवा आलू से,
गोहूँ मा केतनी कसरि अहै काका पूछैं तब कालू से।
कालू बोले धीरज राखा अबकी कसिके लागी गुराँव।
गरमी आई तौ हँसा गाँव।।

महुआ फूले, फन काढ़ि ठाढ़ धौं सेसनाग फुलवारी मा,
उठि बड़े भिनौखै भै गोहार मनि बरै लाग फुलवारी मा,
धाये लरिका-बुढ़वा-जवान केउ पलरी केउ लइके झउआ
धरती से उड़ि के डारी पर कनमनिया लखै बइठि कउआ।
जागा रमई भिनसार भवा चढ़ि करइ बड़ेरी काँव-काँव।
गरमी आई तौ हँसा गाँव।।

जरि काटै बरे दरिद्दर कै जब हाथे मा हँसिया टनकी
रजवंती कोइली किरपलिया सुरताल भरे चूरी खनकी
मूड़े चढ़ि के लच्छिमी चलीं जब खेते से खरिहाने का
सब अपने-अपने कामे मा का अता-पता मेहमाने का।
मूड़े से लइके गोड़े तक लागै कंचन मा धँसा गाँव।
गरमी आई तौ हँसा गाँव।।

जस-जस तन झुरसै किरनन से तस-तस तर होइ पसीना से
श्रम की गंगा कै फूल झरै तो चमकै माथ नगीना से
ओनके कूलर कै ऐस-तैस बइठे निबियाँ की छहियाँ मा
ऊ मौज कहाँ चौमहला मा जइसा परकित की बहियाँ मा।
केतना सीतल केतना अजाद केतनौ किरनन मा कसा गाँव।
गरमी आई तौ हँसा गाँव।।

ग्रीष्म के पश्चात् वर्षा-ऋतु का आगमन होता है। अवध के ग्रामीण अंचलों में वर्षा का समय असाढ़ से कुआर तक माना जाता है। इसे ही चौमासा कहते हैं। चतुर्मास का हिन्दुओं में धार्मिक दृष्टि से बड़ा महत्त्व है। हरशयनी एकादशी, असाढ़ी पूर्णिमा, नागपंचमी, बहुला, हलषष्ठी, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, अनंत चतुर्दशी, पितृपक्ष, नवरात्र, दशहरा आदि व्रत-पर्व इसी के अन्तर्गत आते हैं। किसानों की आर्थिक दशा वर्षा पर ही निर्भर करती है, अतः उनके लिए यह ऋतु ही सर्वश्रेष्ठ है। बरसात पर लिखी अपनी कविताओं में 'उन्मत्त' जी वर्षा-ऋतु की प्रकृति को अपनी पूरी अनुभूति और ईमानदारी के साथ रेखांकित करते हैं। 'बरसा पानी' शीर्षक कविता इस सन्दर्भ में विशेष भावनीय है :

'तपतै-तपतै धरती जब महँगू कै आँवा अस बरइ लाग,
जब राह चलत पहलादी के गोड़े मा झलका परइ लाग,
भट्ठी मा जरत लुआठा अस कसि के दुपहरिया मनमनान,
जब आगि लाग गोड़े-मूड़े लौं निकुरा तक पहुँचा परान,
जब मिरगिसिरा के चरनन से धरती से चिनगी उधिरानी।
छक-छक-छक-छक बरसा पानी।

परतै पानी धरती सोन्हान, पोता चूल्हा अस महक उठी,
जब चुई ओरौनी धार बाँध, गुड़िया कै अम्मा चहक उठीं,
बालटी, कराही, बटुआ, गगरा दिहिन ओरौनी तर लगाइ,
जौने अमरित के बूँद कहूँ कौनउ, कइती से बहि न जाइ।
लरिका-जवान सब झूमि रहे बुढ़वन के जिउ कै हैरानी।
छक-छक-छक-छक बरसा पानी।

डीघी तारा और ताल चनौरा सब मिलके एकबरन भवा,
जइसे पहली बरखा नाहीं, संगम का पहिला चरन भवा,
सब राह-गली बंजर-परती सगरौ गड़हा-गड़ही भरिगै,
भरिगै झुरई के बर्दवान औ रमई कै मड़ही भरिगै।
जे जहैं रहा ते तहैं मगन ग्यानी, विग्यानी, अग्यानी।
छक-छक-छक-छक बरसा पानी।

कलपै लागीं दुबिया, चकवड़ कै बिया तरे से कसमसान,
जइसे मुर्दा की देही मा अमरित परतै जागइ परान,
जड़-जंगम सबके पाप-ताप महराजा इन्नर धोइ रहे,
धरती के वीर सपूतै कन-कन मा जिनगानी बोइ रहे।
देखतै-देखतै धरती मैया वह पहिरि लिहिन चूनर धानी।
छक-छक-छक-छक बरसा पानी।

जन-जन मंगल, कन-कन मंगल, मंगल घर-घर, आँगन मंगल,
मंगल है सगरौ छाइ रहा, बस्ती-बस्ती जंगल-जंगल,
कजरी, आल्हा, बंसरी, ढोल, लावनी, निरौनी के बहार,
जे थामै तरक असाढ़ तीन दिन ओकर नइया होइ पार,
ई बीरन कै धरती मैया छाती फारै ओकर चानी।
छक-छक-छक-छक बरसा पानी।

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि मानव तथा मानवेतर जीवन पर प्रकृति के प्रभाव का ऐसा सूक्ष्म निरीक्षण जैसा 'उन्मत्त' जी की कविताओं में मिलता है, कम ही कवियों में देखने को मिलता है।

कवि जानता है कि बादल ही नदी, कूप, ताल-तलैया, प्यासी धरती, चिरई-चिरोमन, खेती-किसानी-किसान, दीन-दुःखी सबका सहारा है। अतः लोक-मंगलकामी कवि कजरारे बादल से झूम के बरसने का आग्रहपूर्ण निवेदन करता है :

नदी-कूप-सर-ताल के सहारे बदरा
तनी झूम के बरस कजरारे बदरा।

बदरा बरस पियासी धरती कै छाती बा दरकी,
लता-पतर सूखे बिरछन कै टहनी सगरी लरकी।
घूम-घूम के बरस कजरारे बदरा,
तनी झूम के बरस कजरारे बदरा।
ताल-तलइयन अब पानी के बदले धूरि उड़ावैं,
चिरई अउर चिरोमन झंखैं मन आपन समुझावैं।
बड़ी धूम से बरस कजरारे बदरा,
तनी झूम के बरस कजरारे बदरा।
अंधाधुंध बरस धरती के चूनर कै दे धानी,
हर लैके मँहगू निकरैं औ बिया लिहे सिउरानी।
आँख मूँद के बरस कजरारे बदरा,
तनी झूम के बरस कजरारे बदरा।
झुंड-झुंड लरिकन कै जुरिके खेलै काल-कलोती,
मोरे अँगना बरस कि नरदा से बहि निकरै मोती।
माँगी इहै तोसे अँचरा पसारे बदरा,
तनी झूम के बरस कजरारे बदरा।
बदरा बरस कि खेतन मा उपजै सोने कै बाली,
नाचैं पहिरि महतुइन महतौ देखि बजावैं ताली।
दुःखी-दीनन के प्रान के पियारे बदरा,
तनी झूम के बरस कजरारे बदरा।

कवि के निवेदन पर कण-कण में प्राण फूँकनेवाला बादल अमृत-जल की वर्षा करता है। अपना तन-मन सब-कुछ लुटाकर वह धरती का रूप सँवार देता है। ठूँठ पड़े वृक्षों की गाँठ-गाँठ से भरभराकर कल्ले फूट पड़ते हैं। धरती पर नन्दनवन की बहार आ जाती है। प्रकृति की कोख ऐसे जग जाती है, मानो धरती पर सतयुग आ गया हो। गुलमेंहदी, गेंदा-जैसे फूल गली-गली गन्धायमान हो जाते हैं। खेती-किसानी से जुड़े हुए लोग भगवान् का नाम लेकर अपने काम-काज में लग जाते हैं। धीरे-धीरे वर्षा ऋतु का अन्त आ जाता है। कवि वर्षा के प्रति कृतज्ञभाव से उसका ऋण-स्वीकारी बनता है और वर्षा की विदा-बेला पर वर्षा-महारानी को शीश झुकाकर प्रणाम करता है। 'बरखा कै अन्त' शीर्षक कविता में कवि 'उन्मत्त' का यह भाव ध्यातव्य है :

कन-कन मा फूँकइ का परान बदरू अमरित बरसाइ गये,
आपन तन-मन सरबस लुटाइ, धरती कै रूप सजाइ गये।
जे जनम-जनम के ठूँठ रहे, तन के सब टूटि चुके नल्ला,
ऐसे बिरछन की गाँठि-गाँठि से, भरभराइ फूटे कल्ला।
पूरब कै लाली देखि-देखि, जब झरै भिनौखा हरसिंगार,
अस लागै जइसे धरती पै उतरी बा नन्दन कै बहार।
परकित कै जागी कोख राम थे, मानौ सतजुग आइ गवा,
गुलमेंहदी गेना घरे-घरे, औ गली-गली गंधाइ गवा।
धै हर कौंधे, फेंटा बाँधे, जब सुमिरि राम कै नाम चले,
लागइ जइसे बलई नाहीं, ई महाबली बलराम चले।

हँसिया लपकावत सुखपतिया, हँसि के मस्ती मा भरी चली,
जरि काटै बरे हरिद्दर कै, जइसे इन्नर कै परी चली।
ई सब बरखा कै किरपा आ, बरखै से ई हरियरी अहै,
फल-फूल-फसिल चारिउ कैती, धरती कै कोखी भरी अहै।
दुसरे का दुःख मेटै खातिर, जे आपन सरबस दान करै,
ओकरी करनी का सुमिरि-सुमिरि ई दुनिया सदा बखान करै।
बरखा कै आइ विदा बेला आवा सब मिलि के एक बार
कर जोरी सीस नवाइ कही, बरखा महरानी नमस्कार।

लोकसाहित्य में लोकगीतों का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है, जिसमें लोकजीवन प्रतिबिम्बित होता है। अतः इनमें जीवन के बहु-आयामी क्रियाकलाप समाहित होते हैं।

विभिन्न ऋतुओं में गाये जानेवाले गीत ऋतुपरक लोकगीत कहलाते हैं। इनमें फाग-फगुआ-होली-गीत फाल्गुन-माह-बसन्त-ऋतु में गाये जाते हैं। इस महीने में वासन्ती पवन अठखेलियाँ करता है, जिससे नर-नारी सभी मस्ती के आलम में रससिक्त रहते हैं। 'वसन्त' में जब आम्र-मंजरियों से गमक उठती है तो कोयल मतवाली होकर पंचम स्वर में कूकने लगती है। यही समय है जब अवध की बस्तियों में चैती, होली, फाग और धमार के स्वर फूट पड़ते हैं।

वसन्त सारी दुनिया के सारे कवियों-कलाकारों को सदा से प्रिय रहा है। कायदे से तो 'हिन्दी-कविता में वसंत-वर्णन' या 'अवधी-कविता में वसंत-वर्णन' विषय पर स्वतंत्र रूप से पूरा शोध-प्रबन्ध ही प्रस्तुत किया जा सकता है। वसन्त की सम्पूर्ण विशिष्टताओं के उद्‌घाटन के लिए यहाँ मुक्त अवकाश नहीं है, किन्तु इस सन्दर्भ में 'उन्मत्त' जी द्वारा प्रस्तुत इस ऋतु का संक्षिप्त विवेचन अपेक्षित है।

भारतभूमि में वर्षा ऋतुओं की रानी और वसन्त ऋतुओं का राजा है। वसन्त में चारों ओर अप्रतिम सौन्दर्य बिखर जाता हैं आम्र-बौरों से विलसित बगीचे, लालू टेसू के फूलों से सुसज्जित वन, नीली-पीली असली-सरसों के फूलों से रंग-बिरंगे खेत, नायक-नायिका द्वारा फेंके गये रंग और मले गये गुलाल वसन्त को साकार करते दिखायी देते हैं। फागुन आने के साथ ही प्रकृति में एक निखार आ जाता है। खेतों में खड़ी फसल हरे परिधान में सजी हुई इठलाने लगती है। फल-फूल से लदे वृक्ष, पक्षियों का मधुर कलरव, भौंरों का गान, कोयल की पुकार इस अवसर पर सभी अपना आह्लाद प्रकट करते जान पड़ते हैं। सुगन्धित पवन के झोंके के साथ-साथ मन-मयूर नृत्य कर उठता है। शीत का अन्त होने से ऋतु सुहानी लगने लगती है। फगुनी-हवा का शरीर से स्पर्श होने पर शृंगारिक भावना तथा आमोद-प्रमोद सब बन्धनमुक्त हो जाते हैं। फागुन के महीने में वसंतागम होते ही बूढ़ियाँ भी ठुमकने लगती हैं, बूढ़े भी जवान हो जाते हैं। कोई भाँग के नशे में 'बुत्त' तो कोई शराब के नशे में 'धुत्त' दिखायी देता है। 'उन्मत्त' जी द्वारा लिखित 'लागै वसन्त जब से' कविता इन स्थितियों को बखूबी अभिव्यक्त करती है :

लागै बसन्त जब से मस्ती चढ़ै हुमुकि के,
बनि जाइँ वोऊ रसिया से राह चलैं झुकि के,
मुँहना में दाँत नाहीं कसिके कबीर बोलैं,
रस्ता न चलै पावै बुढ़ियौ चले ठुमुकि के।
जे लेहे रहें बैठक ओनहूँ जवान होइगे,
होरिहन के फौज देखेन तो सावधान होइगे
वे हँसि के हाथ पकड़ेन वे कसि के देहेन झटका,
बिछलाइ के नरदा मा सोझै उतान होइगे।

वे कसि के भाँग छानिन बुद्धू कि कोठरिया मा,
ओनकै जौ मूड़ घूमा तौ बुत्त होइके परिगे।
जागैं न तौ जगाये बोलैं न तौ बोलाये,
कौआ-गोहार लागी पंडित तौ जनौं मरिगे।

इस संबंध में कवि द्वारा रचित 'रितुराज' शीर्षक कविता भी रेखांकनीय है। वसंतागम से होनेवाले प्राकृतिक परिवर्तनों की ओर इशारा करते हुए 'उन्मत्त' जी का कवि लिखता है कि :

दिसि-दिसि हास-परिहास की लहर चली,
हिय में हुलास रितुराज की अवाई से।
बोलत बंड़ेरी चढ़ि काम अनुराग दूत,
कोकिला प्रमत्त कूकि उठी अमराई से।
बिरहा की मारी उन्मत्त सुकुमारी कहै,
देवता औ पितर मनाइ अँगनाई से।
तन-मन जरत पियास ही पियास हाय,
सरत न कोई काम कन्त की कमाई से।
ऐरी सखि मोरी लखि मति अति भोरी,
चोरी-चोरी धूनी ध्यान में रमायो रितुराज है।
बातन में छायो फूल पातन में छायो,
स्वर-रागन में झूमि-झूमि गायो रितुराज है।
फूलन की डोरी भाल केसर की रोली,
बात-बात में ठिठोली आज आयो रितुराज है।

अवधांचल के त्योहारों में दो त्योहार प्रमुख हैं होली और दीपावली। होली ही एकमात्र ऐसा त्योहार है, जिसमें वर्षभर के मनमुटाव गले-मिलकर दूर हो जाते हैं। यह त्योहार अमीर गरीब, छोटे-बड़े सबके भेदभाव को मिटा देता है। गाँव का पासी-हरिजन-चमार भी चंदनधारी पंडित जी के माथे पर अबीर-गुलाब मल देता है और पंडित जी उसे गले से लगा लेते हैं। हिन्दू-मुसलमान सब गले मिलते हैं। स्त्रियाँ भी पुरुषों से पीछे नहीं रहती, खूब हँसी-मजाक करती हैं, ऊधम मचाती हैं। वसन्त के परिदर्शन में 'उन्मत्त' जी ने होली से संबंधित दो कविताएँ 'होली' तथा 'होली आई रंग-रँगीली' लिखी हैं। इन कविताओं में भारतीय संस्कृति से ओतप्रोत सरल-हृदय, नर-नारियों के शब्द-चित्र हैं। ग्रामीण परिवेश, नर-नारियों की चुहलबाजी, आत्मीयता एवं उछलकूद-धमाचौकड़ी है। ये कविताएँ ग्रामीण भारतीय संस्कृति के निदर्शन की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें रचे बिम्ब इतने बहुरूपी, जीवन्त और मानवीय राग से झंकृत हैं कि बिना पूरी कविता उद्धृत किये उनका भावन नहीं हो सकताः

होली आई रंग-रँगीली बरी प्रेम कै ज्वाला,
भउजी दपकी अहैं किसोरिया अहै दाल मा काला।
बनी बिलरिया दपकति आवैं झपटि परैं नियराने,
जाने कहाँ क चेंहटा पोतैं मुँह निकुरा औ काने।
अरे बार रे ओंहमुर देखा बड़की कसे कछौटा,
फुँफुनी की फुनगी मा खोंसे कट्टा अस कजरौटा।

चलिन 'गोलारिन' आगे पलरी गोबर लिहे पछाड़ी,
छिन मा मधु कै छत्ता होइगै मियाँदीन कै दाढ़ी।
काछ खोलि भरि दिहिस भगत के पोतनहारी कै माटी
देखत मा बेजिउ कै लागै बड़ी तेज बा नाटी।
पटके अहै लखापंडित का चनुआ कै महतारी,
भागत-भागत काँछ खुली, मुँह से चुइ परी सुपारी।
पोतना लिहे चली आवति बा चिउटहवा कै माई,
चकमक चितवन चली जाति या केकरे उपर डाई।
छोटकी-बड़की दुउनौ पटकिन रामदेव का मिलिके,
जात रहेन चौकड़ी देखावै मेहरारून मा हिलिके।
भाँग चढ़ाये रधवा परि के चित्त मूड़ खजुआवै,
आवै छींक रहै घंटा भै मुँह बावा का बावै।
चढ़ा भाँग का नसा मास्टर पेड़ पकड़ि के रोवैं।
काका इहीं रहा का होइगा, रहि-रहि निकुरा टोवैं।।
लड़खड़ात की जेठू आवैं, बड़बड़ात की बलई,
भरि अकवार मिलैं तो जैसे कोल्हू पेरैं ललई।
रमसुखवा नरदा मा लोटै हुमुकि चढ़ाये दारू,
उप्पर से पानी का छिट्टा देत खड़ी मेहरारू।
उड़ा गुलाल गली-घर चौखट रंग-बिरंगा होइगे,
बुत्त नसा मा कपड़ा फेंकत नीमर नंगा होइगे।
ना कौनौ कंटोल केहू पर ना कौनो सुनवाई,
आजु रंग कै राज भंग कै महिमा सगरौ छाई।
मस्ती मा बूड़ा गँउआ बहि चली प्रेम कै गंगा,
बैरभाव कै चिता जलावै होली कै हुड़दंगा।
पाँव छुऔ हिरदय से लावै बैरभाव बिसरावै,
बीती ताहि बिसारि प्रेम कै जगमग जोति जगावै।

हिन्दू-समाज में दीपावली धनधान्य, प्रसन्नता और आलोक का त्योहार है। इस पर्व के आगमन पर लोग अपने घर-दुआर को विधिवत् लीपते-पोतते हैं। अंधकार एवं गंदगी को दूर भगाते हैं। ऐन दीपावली के दिन घर के कोने-कोने में लोग तेल-घी के दीपक जलाते हैं और घर का दरवाजा खोले लक्ष्मी को अपने घर आने का निमंत्रण देते हैं। 'उन्मत्त' जी का कवि भी अन्धकार को भगाने के लिए दीपावली के पर्व पर दीपक जलाता है। कवि 'आजु देवारी आ' शीर्षक कविता में अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए लिखता है कि :

सोने मढ़िगै राम मड़इया, रूपन महल मढ़ा,
भा उछिन्न अँधियार अँजोरवा सबके मूड़ चढ़ा।
चला सरग मू दिया देखाई आजु देवारी आ।
अँधियर कतहूँ रहै न पाई, आजु देवारी आ।
सिरदा परै, मनावै माई हे लछिमी मइया,
जुग-जुग जियइँ-जुड़ाइँ तनौ-मन से हमरे भइया

कुछ ना चाही अउर मेवाई आजु देवारी आ।
अँधियर कतहूँ रहै न पाई, आजु देवारी आ।
तुलसी के चउरा डेहरी दरवाजा नीम तरे,
आजु बइठि के सोन चिरइया चहकइ घरे-घरे।
चमकि उठे चउका-अँगनाई आजु देवारी आ।
अँधियर कतहूँ रहै न पाई, आजु देवारी आ।
चढ़ी चौतरा, चरही, चढ़ि गई कुअना की छूही,
लरिकन के हाथे जागइ पुरखातन कै बूही।
कौने दिन के बरे कमाई, आजु देवारी आ।
अँधियार कतहूँ रहै न पाई, आजु देवारी आ।
पिछुवारे नरदा की कइती घुरवा की ओरी,
हाथे दिया, ओढ़ाये अँचरा ठुमुकि चली गोरी।
एक थरइ दुइ रहै छुपाई, आजु देवारी आ।
अँधियर कतहूँ रहै न पाई, आजु देवारी आ।
बजरी के खेते ऊखी के मेड़े धनखरिया,
ढरकि परी जइसे चारिउ मूँ सोने कै थरिया।
लखि-लखि रहे कुबेर लजाई आजु देवारी आ।
अँधियर कतहूँ रहै न पाई, आजु देवारी आ।

प्राकृतिक उपादानों में वैसे तो सभी महत्त्वपूर्ण है, किन्तु वृक्ष सबसे अधिक मूल्यवान् उपादान हैं। उनकी तो उपादेयता ही अलग है। वे धरती की शान तथा विश्व के समस्त प्राणियों की जान हैं। पृथ्वी की कोख फाड़कर जन्मनेवाले ये वृक्ष जीवन की ज्योति जलानेवाले है। मनुष्य तो क्या देवी-देवता भी इनके चरणो मे अधिवास की कामना करते हैं। पीपल में महादेव और नीम में भवानी का निवास है, यह भी जानते हैं। ये फल-फूल देकर जीवधारियों की क्षुधा मिटाते है, अपनी हरियाली से धरती की शोभा बढ़ाते है, शीतल-मंद हवा एवं छाया से लोगों का श्रम-परिहार करते हैं, पशुओं की आरामगाह एवं पक्षियों के बसेरे है ये धरती की छाती पर अडिगभाव से खड़े हुए दुनिया को स्वाभिमान का पाठ पढ़ाते हैं, परोपकार करने एवं सहनशीलता की सीख देते हैं। ऐसे वृक्षों का स्तवन करते हुए 'उन्मत्त' का कवि 'बिरछन की अजब कहानी है' कविता में उनका बहुविध गुणगान करता है :

उपजे धरती कै कोख फारि जीवन कइ जोत जगाइ रहे
गरमी-बरखा औ सीत-धाम ए सबका ओढ़ि-दसाइ रहे।
ना तौ करतब मा भूल-चूक ना कौनौ आनाकानी है।
बिरछन कै अजब कहानी है।
दूरौ जे रहा बहू का आपन, सीतल मंद बयार दिहेन,
ओनहूँ का ये फल-फूल दिहेन, जे एनका पाथर मारि दिहेन।
ये पात-पात एक झारि देईं एनकै जीवन बलिदानी है।
बिरछन कै अजब कहानी है।
देवता एनकी खातिर तरसैं, एनके पायन तर परे रहैं,
चाहे ये झरि के ठूँठ रहैं, चाहे ये कसि के फरे रहैं।
पीपर तर बैठे महादेव औ नीबी तरे भवानी है।
बिरछन कै अजब कहानी है।

फल-फूल लसै तौ ओनइ परैं, लंगर अस खोलि लुटाइ देंइ,
जे एनका काटइ बरे ठाढ़, ओनके सिर चँवर डोलाइ देंइ।
ये जहर खाइ वरदान देइँ, यनकै मन औढरदानी है।
बिरछन कै अजब कहानी है।
ये रामचिरैयन कै बसेर, ये बिना सहारन कै बस्ती,
ये ना होते तौ के करतै, येन बेचारन कै परवस्ती।
दुनिया मा जेतने जड़-जंगम सब पर एनकी परधानी है।
बिरछन कै अजब कहानी है।
ये दानी करन दधीच एई, सिबि हरीचंद से ब्रतधारी,
ये ना होते तौ कैसन होतै, ई दुनिया कै फुलवारी।
ऊ लाल, गुलाबी, नीला, पीला ऊ हरियर ऊ धानी है।
बिरछन कै अजब कहानी है।
यह मा अर्जुन, यह मा असोक, तुलसी, रसाल रसखानी हैं
बिरछन कै अजब कहानी है।'

'लागा परब अँजोर कै' शीर्षक कविता में कवि एक साथ धान की सोनहुली बाली, झब्बा झूलती जोंधरी, गदराई ऊख, लौकी, गड़ही और उसमें फूली कोकोबेली, खलिहान, मन्दिर, सोनामढ़ी भोर की किरन, दुधार गाय, धान की राशि, गौरैया, तुलसी का पौधा आदि-इत्यादि प्राकृतिक उपादानों की सुन्दरता का वर्णन करता है और निवेदन करता है कि वे लोकमंगलकारी बनें। पंक्तियाँ भावनीय हैं :

धान सोनहुरी बाली, जोंधरी के सिर झूला झब्बा
गदरायी उखिया, भुखिया के माथे लागा धब्बा,
मड़ही चढ़ी लौकिया, गड़ही फूली कोकोबेली
भिनसरहैं खरिहान बहारैं सुबराती के अब्बा।
मंदिर के कलसा पर सोना मढ़ै किरनिया भोर कै।
लागा परब अँजोर कै, जागा परब अँजोर कै।
गइया भई दुधार, धान की रासि चढ़ी गौरइया
लोटैं कबहुँ लगावैं गोता नाचै ताताथइया,
रोज नेम से बाती पावैं अँगना तुलसी मइया
दुलहिन आपन भागि मनावै पूत मनावै अइया।
माई तनिका पार लगाऊ हमरे जाँगरचोर कै।
लागा परब अँजोर कै, जागा परब अँजोर कै।

अन्ततः कवि प्रकृति की दानशीलता का वर्णन करते हुए अपना मन्तव्य व्यक्त करता है कि नानाविध प्रकृति की रूपरम्यता का कोई भी यथासत्य वर्णन नहीं कर सकता :

चन्ननबासी हवा बहै और अमरित घोरा पानी,
फल कै स्वाद फूल कइ खुसबू कैसे जाय बखानी,
जौने माँगै तौन लुटावै परकित अइसी दानी
कबहूँ लाल, बसन्ती कबहूँ, कभौ चुनरिया धानी।'

X X X

सगुनहटी पीत चुनरिया सरसौ, चमकै देह नवेलिन कै,
केउ नहकै बरनै रूप रामधे, परकित की अठखेलिन कै।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'उन्मत्त' जी की कविताओं में प्रकृति बहुत गहराई तक रची-बसी है। कवि ने प्रकृति के नानारूपों के स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत किये हैं। निस्सन्देह कवि की प्राकृतिक कल्पनाएँ, उद्‌भावनाएँ एवं उपमाएँ अनूठी हैं। उनकी रचनाओं में ग्रामीण प्रकृति के बड़े सुन्दर एवं संश्लिष्ट चित्र मिलते हैं। जिस तरह ग्राम-जीवन और ग्राम-संस्कृति 'उन्मत्त' के काव्य में विस्तार से वर्णित हैं, ठीक उसी तरह ग्राम-प्रकृति का विस्तार भी उनकी रचनाओं में कम नहीं है। उनके काव्य में प्रकृति-वर्णन नहीं, प्रकृति-साक्षात्कार है। उनका प्रकृति-वर्णन बिम्बों की पूर्णता के कारण मोहक रूप धारण कर लेता है। उनकी प्रकृति का जीवन के साथ एक सामंजस्य है। प्रकृति जीवन के साथ घुलमिल कर दृश्यबिम्बों का ऐसा संविधान करती है कि सुन्दर से सार्थक हो उठती हैं। इस तरह उनके काव्य में प्रकृति ग्राम-जीवन की और ग्राम-जीवन प्रकृति की सार्थकता बन गया है। उन्होंने प्रकृति को ग्रामजीवन से जोड़कर उसे जीवन्तता प्रदान की है।

उन्मत्त जी की कविता में मानव और प्रकृति का सहज सम्बन्ध दिखायी देता है। उनकी प्रकृति कृषकों के साथ घुली-मिली है। उनके प्राकृतिक चित्रों में अवध-क्षेत्र के गाँवों की सच्ची तस्वीर दिखायी पड़ती है। आलम्बन-रूप में प्रकृति के संश्लिष्ट चित्रवाली उनकी रचनाओं में प्रकृति के मानवीकरण और उपदेशात्मक रूप के दर्शन होते हैं।

इतना-कुछ कह-देख-सुन लेने के बाद भी हम 'इत्यलम्-भाव' से यह नहीं कह सकते कि हमने 'उन्मत्त' की सभी कविताओं में प्रकृति-संबंधी उपस्थिति मर्म को पा लिया है। और, कवि द्वारा प्रस्तुत प्रकृति-सौन्दर्य का पूरी तरह से भावन कर लिया है।

आचार्य विश्वनाथ पाठक : अवधी के गौरव

पं. सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश'

भारतीय संस्कृति के परिवेश में पले-ढले आचार्य पाठक मेधावतार हैं। उन्होंने अल्पवय में ही काव्य रचना प्रारंभ की। वह उपनामों का युग था, बिना उसके कविता लिखने वाले जैसे कुछ छूछापन महसूस करते थे। शायद इसीलिए पाठक जी ने भी अपने नाम के पीछे 'मोद' जोड़ लिया था, किन्तु हाईस्कूल तक पहुँचते-पहुँचते उन्होंने उपनाम का व्यामोह छोड़ दिया। उस समय की रचनायें भी भाषा, भाव और अभिव्यंजना की त्रिपुटी में गुंथी है।

सच्चा कवि अपने युग का उद्बोधक होता है। कविता-धर्मिता का यह सत्य सनातन है। आचार्य पाठक के उदय-काल में अवधी में हास्य रचनाएँ ही अधिक की जाती थीं। गम्भीर और युग सत्य को उद्घाटित करने वाली रचनाओं की अत्यन्त कमी थी। अतः अवधी के इस अपमान पर खिन्न होकर कवि अवधी को एक समर्थ रचना देने का संकल्प लेता है। 'सर्वमंगला' की रचना के पूर्व ही उसका मन, अवधी के इस अपमान के अनुताप से आर्त्त एवं आर्द्र हो गया था। इसका बिम्ब 'घर के कथा' में इस प्रकार आया है -

अवधी बोली परम पबित्तर, कुलि बोलिन कै रानी।
जेहमाँ बोलेनि आजा-अइया, जेहमाँ नाना-नानी।।
रातिउ दिन जेकर रस चूसै, हवइकै कान पियासा।
जेका पियेनं दूध के साथे, भरि-भरि रोज गिलासा।।

कवि की मर्म-वेदना नीचे की पंक्तियों में उमड़ी पड़ती है -

जौनि रही तुलसी एक कवि कै एक दिन लाड़-लड़ैती।
वहि बोली कै हँसी उड़ाइनि, लिखि-लिखि लोग भड़ैती।।
घूंटिसि ऊ अपमान गिरा कै, कइकै नयन रुआँसा।
छोड़ेसि मोह संसकीरति कै, तजिसि पराकृत भासा।।

किस मुहूर्त मैं, किस प्रकार, महाकवि ने अवधी का यह शुभारम्भ किया -

सुभ साइत माँ सुमिरि सिवा काँ, हवइकै पूरब माथे।
दहिने सुर के चलत सबेरे लिहिसि लेखनी हाथे।।

'घर कै कथा' में अवधी भाषा की दुर्दशा का मार्मिक चित्र खीचा गया है -

जेकरे 'हाँ' पै कंचन बरसै, 'ना' पै बरसै गाज।
रंक कुबेर बनै छिन भर माँ, इन्द्र गँवावै राज
जेकरी कनगुरिया के बल से, ढहै बजर कै कोट।

गदहा ग्यानी बनिकै बइठै, जैकर पाये वोट।।
जेकरे आगे खीस निपोरैं, नेता चढ़ि-चढ़ि कार।
तेकरि भासा कूकुरि ह्वइकै, फिरै दुआर-दुआर।।

आगे हम कवि की प्रमुख रचनाओं के भाव-मर्म एवं कला-कर्म पर विहंगम दृष्टिपात करेगे।

'सर्वमंगला' विश्वात्मैक्य भाव-भूमि का अत्यन्त मनोरम काव्य है। कथ्य वैराट्य के पटल पर वह 'दुर्गा सप्तशती' का आधार लेकर, युग-सन्दर्भ का सन्निवेश कर, जिस भाषा, भाव और अभिव्यक्ति की सहजता और कलात्मकता का सनातन संगम प्रस्तुत करता है, वह अप्रतिम है। वह 'मानस' के बाद अवधी का निस्सन्देह दूसरा महाकाव्य है।

'घर कै कथा'

अपने एकमात्र पुत्र स्व. हरिप्रसाद की मृत्यु से महाकवि का अन्तःकरण मर्म-व्यथा से भर गया। अपनी उस मर्म-भेदिनी पीड़ा के स्वान्तः भावन-हेतु उन्होंने 'घर कै कथा' लिखना प्रारम्भ कर दिया है। उनका 'स्व' विराट है और साधारणीकरण का अप्रतिम उदाहरण है। यही कारण है उनका महाकाव्य -- 'घर कै कथा' - उनका ही न होकर, सबका हो गया है। उनकी कथा में, इसीलिए, सबकी कथा झाँकती दिखायी देती है। महाकवि ने 'घर कै कथा' में अपनी ही सुख-दुख की कथा कही है परन्तु वह आत्म कथा की शैली में नहीं है, वह विषय-वस्तु की स्थापना और काव्य कला का अनूठा निदर्शन है।

आचार्य पाठक की प्रतिभा की तरंगें सनातन मर्मच्छवि, व्यंजना और अनुभूति की गंभीरता में अपना विशिष्ट स्थान दिखाती आयी है। आचार्य की कवि-प्रतिभा का क्या कहना। घिसी-पिटी गतानुगतिकता के पंक में वे कभी फँसे ही नहीं। संस्कृत तथा हिन्दी के कवियों ने परम्परागत उपमाओं और रूपकों से अपना काव्य सजाया है परन्तु पाठक जी ने परम्परा की अन्ध-भक्ति को छोड़कर, स्वाभाविकता और यथार्थता पर अधिक ध्यान दिया है। अतः उन्होंने गाँव के कितने ही उपेक्षित कुसुमों और वनस्पतियों को काव्य में प्रथम बार स्थान दिया है। गाँवों के तालाबों में उन्हें कमल नहीं, तलपटनी के मनोरम फूल खिले दिखायी देते हैं, अरहर के खेतों में पेटुआ और सनई तथा गेहूँ के साथ खिली सरसों का ही सौन्दर्य उन्हें अपनी ओर आकृष्ट करता है, कितने ही आचार्यों ने गाँव के भोंडपेन को ही देखा, उन्हें वहाँ अश्लीलता ही दिखी किन्तु पाठक जी ने गाँव के अन्तःपुर में प्रवेश कर, उसकी सहज सुषमा को देखा है।

पाठक जी की रचनाओं में प्रयुक्त अवधी की ललित-पद योजना कवियों के लिए अनुकरणीय है। उनके काव्य में, एक भी छन्द शिथिल नहीं है, एक भी प्रसंग नीरस नहीं है। 'घर कै कथा' उनके काव्य में गावों के जो सांस्कृतिक, प्राकृतिक और व्यावहारिक चित्र प्रस्तुत किये गये हैं, वे किसी अन्य काव्य में दुर्लभ हैं, रसों और अलंकारों की छटा ही निराली है।

काव्य के कतिपय सन्दर्भ

· कवि के शैशव के कुछ दिन ननिहाल में बीते। नानी का सरल स्नेह महाकवि के जीवन में बस गया। वहाँ से घर लौटते समय, मार्ग में ननिहाल की स्मृतियाँ उसे इस प्रकार व्यथित करती हैं-

जेहिमाँ खोता करैं कबूतर टुटहा उहै इनारा।
सोचि-सोचि कै राह न सूझै, लदी आँसू कै धारा।।
नानी कै कछरी भूलै ना, भूलं ऊ न कमोरी।
जेकै सोन्ह करोनी खाती, रौपै गेद गदोरी।।
एक छन उहै दूध कै गाड़ा, मन से टरै न टारे।
हउदी के छेदे से निकसै जहाँ धुआँ भिनसारे।।

अगहन के ग्राम्य जीवन का एक चित्र :-

चाउर धरे पछोरै तिरिया, बइठी साँझ-सकारे।
भूसी भुईं परै उड़ि, उड़िकैं, कना बिराजै बारे।।
हर धै उठा औरौनी के तर, खूंटी टँगा जुआठा।
चिउरा जुरा नये जड़हन कै, नई भैस कै माठा।।
दुनौं जून ताईं बटुला माँ, भात चढ़ै एकदइयाँ।
तेले से छौंकै सगपहिता, मँहकै गाँ सझइयाँ।।
साग उसिनि कै गाँव सुन्नरी, गढ़ै चरी कै रोटी।
गाले लटकी लट बारे कै, पीछे छिटकी चोटी।।

कवि ग्राम्य जीवन से ही उपमानों को ग्रहरण करता है। निम्नलिखित उत्प्रेक्षा देखिए -

धुनी रुई एस धौरा-धौरा, बादर दौरा आवै।
मानौ कउनौं परी सरग माँ, धुरिहर धान ओसावै।।

माता-पिता के घर को छोड़कर, पराये घर में बसने वाली बहू की स्थिति का वर्णन, इन शब्दों में देखिए -

ससुरे परी पराई धीआ, घर कै बहुत दुलारी।
दुसरे खेते लागि धान कै, बेरनि जनौं उखारी।।

दूर जाने पर महाकवि को अपने बिछड़े गाँव की याद आती है। शैशव से ही रागात्मक संबंध होने के कारण वहाँ की एक-एक वस्तु, उसे रमणीय लगती है। दूर क्षितिज पर दिखायी पड़ने वाले वृक्षों की काली रेखा के ऊपर गन्ने और अरहर के अन्तराल से उगते हुए सूर्य को ही नहीं, सूखे पेड़ पर प्रतिदिन बैठने वाले गीध के जोंड़े को भी देखने के लिए वह व्याकुल हो उठता है। यह सन्दर्भ कवि-कुल-गुरु कालिदास के 'कामासक्त' हंस मिथुनै स्रोतावहा मालिनी- की याद दिला रहा है।

ऊ करिया पेड़न कै रेखा, सरग जहाँ भुइं छूवै।
गन्ना और अरहरि के अँतरे, सुरुज जहां से ऊवै।।
जहां ताल मां उखिनै माटी सूअरि लइकै घेंटा।
घर-घर डोलै अहिरिनि मूंड़े, धरे दहिन कै मेटा।।
टेढ़ि-मेढ़ि घासिन के बीचे सांपिन एस पगडंडी।
जहां भगउती के चउरा पै, गड़ी लाल कै घोड़ा।
बइठै एक झुरान पेड़ पै, जहां गीध कै जोड़ा।।

गाँव के ताल में फूले तलपटनी के फूल और ग्रीष्म के नंगे बबूल पर, प्रभात के ओस-कणों से झिलमिलाते, मकरी के जाले का कैसा रूप-चित्र है :

ताले कै पिंडवरि माटी से भीति जहाँ कै पोती।
तहाँ झुराय छानि के ऊपर तरे लटकि कै धोती।।

गाँव का सहज, यथार्थ और मर्म-विदग्ध-चित्र कवि-कुल-गुरु कालिदास के 'श्रृंगे कृष्ण मृगस्य वामनयनं कण्डूयमानां मृगीम्' की याद दिला जाता है-

खुर से गाय कान खजुवावै लगे कुंलाचै लेरुआ।
दुइ गोड़े पै खड़ी कोठि पै छेगड़ी चरै करेआ।।

संसार की अनित्यता का एक चित्र देखिए -

जवनि डारिमां डारि झलुववा झूलिनि एक दिन कान्हा।
तवनि डारि माँ एक दिन देखेन घन्ट केहू कै बान्हा।।
दियना बरै जहाँ चउके पै धैकै मंगल छैला।
वही दरी केव मुरदा फूंकै, बरै चिता का चैला।।

गेहूँ और सरसों की एक जोड़ी का प्रकृति चित्र :-

दूर-दूर से पीअर-पीअर फूलि उठी सरसइया।
करिया-करिया गोहूँ लागै, मानौं कुंवर कन्हइया।।

चन्द्रोदय का एक अलंकृत वर्णन-

मटका नभ, खइलर पुनवासी, दहिउ अँजोर एलोना।
मथि काढ़िसि प्राची कै ग्वालिनि मसका कै एक लोना।।

माँ के देहावसान के पश्चात् कवि अपने विवाह के उपलक्ष्य में नानी को धोती पहनाने के लिए जाता है। पुत्री के मरण से विह्वल नानी के चरणों पर लोट जाता है।

जइसे नानी घर से निकरी लइके संझा-बाती।
तइसे लोटै लाग पहुँचि के दुनौं, गोड़ पै नाती।।
मुँह चीन्हें पै पलक ताल भै, नयना होइगा कुइयाँ।
दियना छूटि परा हाथे से, आँचर गिरिगा भुइयाँ।।
बइठि गई जूरतै धरती पै बन्ही टूठिगै मेंड़ी
ऊपर भीजै कवि कै मुँड़वा, तर नानी कै एँड़ी

नानी का स्नेह-निर्झर फूट चलता है। इस अवसर का चित्र है -

जेइसे आन्हर आँखि लहै, अउ रंक परा धन पावै।
जइसे मरिकै पूत राँड़ कै लउटि सरग से आवै।।
उनही खानि नानी के जिउमाँ, उपजा हर्ष अनोखा।
ब्रह्मा लिहे तराजू तउलैं तबहूँ जाय न जोखा।।
धरै करेजें माँ अपने की, पुतरी माँ लुकवावैं।
की घुलि कै मिलि जाय एक माँ, हाली सोचिन पावैं।।
बरबस बहियाँ पकरि, खींचि बइठाईं भरिकै कोरा।
एक एक आखर पै मुंह से, रस कै गिरै कटोरा।

नानी के प्रति कवि के मन में कितना आदर है -

हाड़े-हाड़े वन कै रिन बा, माँसु प्रीति माँ सानी.
वनकै अंस मिला खूने माँ, जसे दूध माँ पानी।।
बिना बयरिया पालि भरत ना, नाव रहति पौड़ाई।
नानी देती जौ न छाँह तौ कबि न करत कबिताई।।

महाकवि का गाँव पठखौली (तकिया कानूनगो) है। उनके उसी गाँव के हरिजन बिरतन्ती के घर का चित्र है -

जहां सेम फइलै बेरहा पै, उपजै जहाँ अरुइया।
जहां मनउआं की डारी से उड़ै दुपहरे रुइया।।
उही ओर बिरतन्ती कै घर, घासि-फूस से छावा।
परी दुआरे झिलँगा खटिया जेकर लंगड़ पावा।।
कवहीं के हुक्का नरियर कै, जेह पै चिलम चढ़ाई।
कउड़ा की राखी माँ कन्डी कइकै आगि जियाई।।
बिन चुल्ला कै घिसी कुराही चिमचा मुरचा खाबा।
एकठूं फूट कठउता घर माँ, एक चलनी एस तावा।।
फाटि रजाई एकठूं जेकर बहरे निकसी रुई।
उहाँ उहाँ भा छेद भुई माँ छानि जहाँ पै चूई।।
एक कोने माँ परा पहरुवा, दूसरे कोने जाँता।।
जबरा के तर से दुइ मसरी जहाँ लगावैं ताँता।।
छानी माँ खोंसा दुई हँसिया, लोढ़ा सिलि पै राखा।
करिखी से लदि उठा भीतिमाँ छोट दिया कै ताखा।।
कुलि कुरिया करिखान रौंह से, सरिसरि गै सरकन्डा।
दुइ कोरव के बीच चिरइया दिहिस झोंझ माँ अण्डा।।
मउई मकरी के जाला से, अंगुर-अंगुर गाँछी।
जहाँ कराइन पै तर-उप्पर, हवैकै लटकै माछी।।
अँगना माँ बिना ओरदावन कै एकठूं टूटि बसेटी।
सिकहर पै करिखान धरी दुई तरपराइ के मेंटी।।
वही दुआरे सांझ भये पै, कुलि जुरि आवै टोला।
केव निखहरि खटिया पै बइठै, केव भुइँ डारि खटोला।।

कवि की माता की मृत्यु के पश्चात. का एक चित्र (लरिकाई शीर्षक से)-

चली गईं सरगे पतिबरता धन संपति कै रानी।
छोड़ि गईं पीछे दुइ लरिका भरे आँखि माँ पानी।।
घन्ट बान्हि कै लोटत देखेन तब घर का एक ढोटा।
बांधे चीट अंगौछा पहिरे लिहे हाथ माँ लोटा।
नाव बूड़िगा बीच धारि माँ बिना उतारे खेवा।।
नान्हें-नान्हें भर के छीना होइगे आज बनेवा।।
रोइनि रामप्रताप दुआरे पीटि-पीटि कै छाती।
रहिगा पेड़ बिना पाती के, दिया बचा बिन बाती।।

संसार की क्षण भंगुरता एवं परिवर्तनशीलता का एक चित्र है-

संसृति-नदी निरन्तर भासै, ध्रुब न कहै मुल ग्यानी।
दुसरे छिन मां हाथ न आवे, पहिले छिन के पानी।।
लूके के नाचे पै भ्रम से बनै आगि के गोला।
वही खानि जे जग जाने ते फिरू न पहिरे चोला।।

कवि की ससुराल सुरहुरपुर चौराहे से पूरब एक मील की दूरी पर है। मझुई नदी मोहनपुर की

दक्खनी दिशा में बहती है। कवि पाठक कभी 'बसन्ती फागुन- में ससुराल गये थे। उन्होंने मझुई नदी की ओर उसके तट-प्रान्त को देखा। उनके मन पटल पर अवचेतना में यह भाव 'लमेरा' की तरह पड़ा था और वह 'घर कै कथा' लिखते समय उभर आया।

फागुन माँ बिरहिन एस लागै, ऊ मझुई कै सोती।
जहाँ रेह लइकै मृगनैनी मैलि पछारै धोती।।
परती कै कुस गड़ै चले पै, गोड़न माँ जस सूई।
गरमी माँ निकसै मदार से, चिटिक-चिटिक कै रुई।।

वर्षाकाल की सन्धया का रूप कुशल कवि की चटुल-चारुता भरी अवधी में देखिए -

साँझ भये पै लाल बदरवा लागै खूब सलोना।
ऊँच पेड़ पै परी किरनियाँ चमकै जैसे सोना।।
बादल कड़कै फोरि-फोरि भुइं - भा, भुँइफोर बिमौरे।
ताले हवैंगा नरम करेमुआँ, किसुली जामि कतौरे।।

वर्षा में किसानों की परेशानी का एक खण्ड चित्र कितना यथार्थ और द्रावक है-

रेउआँ रटैं, राति के आये हाथ न सूझै आँखी।
फाटि परै परसी थरिया माँ, दिया बरे पै पाँवी।।
हरहट बैल उखारै खूँटा, अन्धकार माँ भागै।
साँप झालिमाँ मेघा पकरै, बोलि सुने डर लागै।।

कवि की किशोरावस्था का चित्र दर्शनीय है। पिता ने बिरवा रूपी बालक के त्रण के लिए, उसके आलबाल को सींचा नहीं, देखभाल के लिए किसी सुचारु रक्षा का अभिधान किया नहीं -

बेढ़ा रून्हिसि कबहुँ न माली थाल्आ भरिसि न नीचे
कबि बनिकै बिरवा यस उपजा, बिना केहू के सींचे।।
खोलेसि गाँठि कठिन ग्रन्थन कै घर माँ बइठि अकेला।
अपने पौरुख विद्या पाइसि भा न केहू कै चेला।।
जब भटका तब मातु सारदा ब्रह्मलोक से धाईं।
धीरे से सटिकै काने में बिसरति बात बताईं।।

कवि समर्पित साधना भूमि से कभी डिगा नहीं। उसने एक-एक अक्षर का मर्म समझा। साधना में उसने भौतिक सम्पदा की ओर कभी ध्यान नहीं दिया। उसने जीवन और यौवन की कुँज गलियों की ओर ताका नहीं, पद्मराग के फेर में नहीं पड़ा। ताल में रहकर भी जल से दूर रहा, कैसी अविचल साधना है - पद्म पत्र बिम्बाभास

एक दरी पै सोरि जामिगै जूनी किहिस न दाना।
अच्छर मच्छर रोकड़ समझंसि जानेसि सब्द खजाना।।

...

ताले माँ घर किहिसि नीर से रहिकै निपट अछूता।
हाथे घड़ी न बाँन्हिसि कबहूँ गोड़े नीक न जूता।।
ऊँचि अटारी कबहुं न चाहिसि, चाहिसि नाहि रुपइया।
हेरेसि धान गंभीर ग्यान कै हलुक पछोरेसि पइया।।

काल की अनिवार्यता का एक बिम्ब -

एक दिन कुइयाँ खिलै ताल माँ, एक दिन लागै काई।
कबहुँ गगरिया चउके बइठै, कबौं रहे अउन्हाई।।
कबहुँ अचानक ओघा लागै, टूटै बजर बड़ेरिया।
काल जगत का ऐसन हाँकै जइसे भेड़ गड़रिया।।
जेठ तपे बिन झूर होय कब, बरखा रितु कै सोता।
थोरे दुख के परे बढ़ै तिन पेंछिउ तजै न खोता।।

दीवाली का एक चित्र -

दुलहिनि गोड़े दिहीं महावर माथे बिन्दु सलोना।
ऊ छबि ताकें सरग लोक कै परी लगावैं टोना।।
बारे तेल, आँखि माँ काजर, माथे दिहे दिठौना।
मनहँग हवैकै लरिका खेलैं, मन कै पाप खेलौना।।
केव माटी कै लिहे तराजू, केव घाटी के लोला।
केव धूरी के आँटा पीसै आगे धरे जतोला।।

आचार्य पाठक जी ने कबीर की सौ साखियों का श्लोकबद्ध संस्कृत रूपान्तर 'कबीर शतकम्' नाम से किया है जिसकी प्रशंसा विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से की है। प्राकृत काव्य गाहा सत्तसई का आपने सराहनयी हिन्दी अनुवाद किया। दशरूपक, ध्वन्यालोक और जैने रामायण 'पउम चरिउ' के अव्याख्यात और दुर्व्याख्यात प्राकृत पद्यों का भी पाठक जी ने अर्थोद्वार किया है।

'बज्जालग्ग' प्राकृत का श्रेष्ठ काव्य-ग्रन्थ है। उसकी अनेक गाथाओं पर अर्थ के अस्पष्टता की टिप्पणियाँ लगायी गयी थीं। पाठक जी ने उसका हिन्दी गद्य में अनुवाद कर उक्त अर्थ के काठिन्य को दूर कर दिया है। अनुवाद के अतिरिक्त विस्तृत भूमिका और परिशिष्ट में सैकड़ों दुरूह तथा कूट गाथाओं का पाण्डित्यपूर्ण एवं संगत अर्थ निरूपण कर, उनके अर्थोद्धार का उन्होंने स्तुत्य कार्य किया है।

आचार्य पाठक जी आत्मप्रचार और कवि-सम्मेलनों, गोष्ठियों आदि से दूर रहकर, साहित्य-साधना में ही तल्लीन रहते हैं। अवधी के अनेक अनुसंधित्सुओं ने पाठक जी की 'सर्वमंगला' के महत्व का मूल्यांकन कर, उसे आधुनिक युग का सर्वोत्तम काव्य घोषित किया है। इस अवसर पर, जुलाई' 88 की 'मानस-भारती' का 'गोस्वामी जी की कवितावली' का निबन्ध याद आ रहा है जिसके लेखक है श्री वेदप्रकाश द्विवेदी 'प्रकाश'। उन्होंने अवधी के सन्दर्भ में, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जी का 'क्लेश-कथन' तथा उसके समाधान में अपना अन्तर्वचन दिया है। उसे यहाँ प्रस्तुत करने का लोभ मैं संवरण नहीं कर पा रहा हूँ -

''तुलसीदास के पश्चात अवधी भाषा में कोई ऐसा कवि नहीं हुआ जो इनकी जमायी परिपाटी को व्यवस्थित रूप से आगे लेकर चलता। इसीलिए अवधी भाषा सामान्य काव्य-भाषा नहीं हो सकी। एक बार उसका उत्थान हुआ, वह थोड़ी विकसित होकर ही रह गयी।''

–आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

''हमें प्रसन्नता है कि आचार्य मिश्र के इस खेद को मानों दूर करने के लिए आचार्य विश्वनाथ पाठक को विधाता ने इस लोक में अवधी के उत्थान के लिए ही भेज दिया है। उनका जीवन अवधी के लिए समर्पित है। अवधी में बहुत कवि है, नाम गिनाकर मैं सन्दर्भ को प्रलम्ब नहीं करना चाहता, केवल इतना कहना चाहता हूँ कि गोस्वामी जी के बाद अवधी का जो श्रृंगार पाठक जी के द्वारा हो रहा है, वह

स्तुत्य है। उनका 'सर्वमंगला' महाकाव्य 'मानस' के बाद मानक काव्य है।''

–प्रकाश द्विवेदी

मैंने अवधी-काव्य का जहाँ तक अध्ययन-अनुशीलन किया है, मुझे यही लगा है कि 'मानस' के बाद भाषा, भाव और अभिव्यक्ति-भंगिमा की दृष्टि से आचार्य विश्वनाथ पाठक का सर्वोपरि स्थान है। किसी का कोई काव्य उठा लीजिए, भाषा, भाव और अभिव्यक्ति का स्खलन मिल जायेगा किन्तु आचार्य पाठक के काव्य में, खोजने पर भी उसका मिलना कठिन है। मैं यह बात जान रहा हूँ कि बहुतों को मेरी यह बात अतिशयोक्ति लगेगी परन्तु मैं 'सत्ये नास्ति भयं क्वचित' की दृढ़ चट्टान पर खड़ा हूँ। वस्तुतः ऐसे कालजयी महाकवि कभी-कभी जन्म लेते हैं।

आचार्य पाठक विलक्षण वाचस्पति मनीषी हैं। उनकी विलक्षण प्रतिभा की तरंगें सनातन मर्मच्छवि, व्यंजना और तलस्पर्शी गहन-अनुभूति की विशिष्ट बिम्बमालाएँ सजाती हैं। विज्ञापन के इस घोर युग में वे उससे सर्वथैव विदूर हैं, इसीलिए, उन्हें वह स्थान अभी मिल नहीं पाया है, जिसके वे अधिकारी हैं। उपवन का प्रसून-सौरभ समीर के संसर्ग से दूर तक पहुँच जाता है, तब वातावरण उसका हो जाता है, फिर कौन ऐसा होगा जो उसे स्वीकार नहीं करेगा?

हर्ष है, आचार्य पाठक के मूल्यांकन का श्रीगणेश हो गया है। पिछले दिनों उ.प्र. संस्कृत अकादमी ने देर से ही सही, उन्हें 'बज्जालग्ग' के पण्डित्य पूर्ण सम्पादन के लिए पुरस्कृत किया, अवधी संस्थान (अयोध्या) ने अवधी की साधना सिद्धि से अभिभूत होकर 23.11.1988 को उन्हें अभिनन्दित किया और इधर अवधी की श्री समृद्धि के व्रती और साधक श्री सुशील सिद्धार्थ आचार्य पाठक विशेषांक निकालकर, अवधी के प्रति समर्पित निष्ठा और अपनी सहज सहृदयता का परिचय दिया है।

मुझे विश्वास है कि आचार्य पाठक का वर्चस्व दीप्त वैदुष्य तथा उनकी कारयित्री और भावयित्री प्रतिभा का दिव्य नैवेद्य माँ भारती को, अवध-भारती को निवेदित होता रहेगा और सिद्ध सारस्वत समुदाय उनका महिम्न मूल्यांकन, सम्मान-भाव तथा चारुतर से करता रहेगा।

अद्भुत कवि आचार्य चतुर्भुज शर्मा

डॉ. चन्द्रशेखर

शर्मा जी की काव्य-प्रतिभा से मेरा प्रथम परिचय जीवन के किशोर काल में हुआ था। सन् 1952 के आसपास, जब मैं जूनियर हाई स्कूल का विद्यार्थी था, शर्मा जी सीतापुर जनपद में भली प्रकार कहे और सुने जा रहे थे। तब से लेकर आज तक उनकी काव्य-यात्रा जारी है। शर्मा जी अद्भुत प्रतिभा के कवि हैं, जिन्हें अपना सम्पूर्ण काव्य कंठस्थ है। आज अपनी वृद्धावस्था में भी वे एक सरस और सुरुचिपूर्ण काव्य-पाठ प्रस्तुत करने वाले महाकवि हैं। उनके श्रीकण्ठ से उनकी रचनाओं को सुनने का कुछ आनन्द ही और है। पुराण एवं इतिहास दोनों को शर्मा जी ने अपना काव्य-विषय चुना है। सीता-शोध, कृष्ण-जन्म, कृष्ण-मुण्डन, परशुराम-प्रतिज्ञा एवं श्री हनुमान बावनी (जो अब शतक होने वाली है) जैसी रचनाओं के वर्ण्य-विषय पुराणों से लिए गए हैं और गुरु गोविन्द सिंह के लड़के तथा ताराबाई जैसी रचनाए ऐतिहासिक पृष्ठों पर आधारित हैं। 'नादिरा' शर्मा जी की एक अनूठी ऐतिहासिक रचना है, जो प्रकाशन की प्रतीक्षा में है।

कृष्ण-जन्म की पृष्ठ भूमि प्रस्तुत करता हुआ कवि कहता है :-

नीरव प्रवास था न आस पास कोई कहीं,
सो रहा सनाका लिए सारा विश्व भर था।
अजब समाँ था साँय-साँय करती थी रात,
वायु. भी सपाटा भरे पूर्ण वेग पर था।।
सिंह गर्जना से कभी परदा जाता था हिल,
थोड़ी दूर ही पे वन प्रान्त भी उधर था।
वसुदेव देवकी थे, लौह श्रृंखला थी पग,
कँस का किला था और मथुरा नगर था।।

प्रस्तुत छन्द का प्रकृति-चित्रण कृष्ण-जन्म की पृष्ठ भूमि के वातावरण को रूपायित करने में सफल है। कंस का संपूर्ण आतंक मानों शब्दों के माध्यम से साकार हो उठा है, जैसे प्रकृति भी उससे आतंकित है। कृष्ण-जन्म होने पर वसुदेव और देवकी एक विचित्र किन्तु सुखद दृश्य देखते हैं :-

देखा शिशु ओर तथा चकित विशेष हुए,
काले घुँधराले केश गुम्फित लरों में थे।
सुन्दर सतेज भाल तिलक लगा था नव,
लोचन अमोल लोल पंकज सरों में थे।।
चारों कर शख चक आदिक सम्हाले हुए,
काम से ललाम श्याम पीत अम्बरों में थे।

दीन की बचाने लाज दुष्ट का मिटाने राज,
आज पार ब्रह्म आप देवकी करों में थे।।

यहाँ एक ही छन्द में शिशु कृष्ण का सौंदर्य, कृष्ण का महाविष्णु का अवतार होना तथा उन के अवतार का उद्देश्य वर्णित है। इसी प्रकार शर्मा जी ने गुरु गोविन्द सिंह के लड़कों के बलिदान का वर्णन करने के पूर्व औरंगजेब के शासन काल का चित्रण किया है :-

जो न झुका था कभी किसी काल में, आज वही नत भारत भाल था।
चक्र था भाग्य कुचक्र था काल का, या दुर्दैव का कोप कराल था।।
देश का जाति समाज का धर्म का, हाय हुआ सबका बुरा हाल था।
ऐब भरा दगा मक फरेब से, औरंगजेब का शासन काल था।।

दस छन्दों के इस प्रसंग के अन्तिम छन्द में कवि कहता है :-

रोने लगा लघु बन्धु अचानक, हाँथ रुका उस नीच गुलाम का।
ज्येष्ठ ने पूंछा हुआ तुम्हे क्या, क्या मोह हुआ अपने इस चाम का।।
बोला नहीं यह बात नहीं, मुझको दुख है अगले परिणाम का।
सोंच है बाद को मेरे कहीं, पढ़ आप न लें कलमा इसलाम का।।

छोटे का कद स्वभावतः छोटा है, दीवार में वह पहले चुन जायगा बड़ा भाई यह करुण दृश्य अपनी आँखों से देखेगा, उसका विचलित होना आश्चर्यजनक नहीं है। किन्तु अनुज के इस कथन ने भारतीय संस्कृति की धरोहर की रक्षा कर ली है और इस का श्रेय कवि को है।

राजस्थान स्थित थाडा राज्य की राजकुमारी तारा के शौर्य एवं बलिदान का वर्णन शर्मा जी ने 26 छन्दों में किया है। तेरहवीं शताब्दी का यह इतिहास शर्मा जी की लेखनी का सुयोग प्राप्त कर के मूर्त हो उठा है। तारा के विवाह के समय उसके दुल्हन रूप का वर्णन करते हुए कवि ने वीर एवं श्रृंगार का अद्भुत मिलन प्रस्तुत किया है :-

वीर वधू तारा की सुदेखते बनी थी छवि,
मंजुल विभूषणों में सुन्दर सजीली थी।
रूप में कराल रूप चण्डिका बनी थी वही,
आज गृह-कार्य-दक्ष गृहिणी छबीली थी।।
जिसकी हुँकार से न वैरी धर पाते धीर,
तारा वाही आज गान कोकिल सुरीली थी।
शत्रु को अँगार बरसाती रक्त-वर्ण वही,
आँख आज पति को लजीली कजरीली थी।।

परशुराम-प्रतिज्ञा कवि की एक पौराणिक रचना है, जिसकी पूर्ति 28 छन्दों में हुई है। प्रसंग के प्रथम छन्द में नैमिषारण्य स्थित ऋषि यमदग्नि के आश्रम का वर्णन हुआ है। ऋषि-आश्रम के प्रकृति-चित्रण में प्राकृतिक-सौंदर्य के साथ ही आश्रम-सुलभ पवित्रता द्रष्टव्य है :-

शीतल समीर मन्द-मन्द डोलता था रम्य,
सुन्दर सुगन्ध और सौरभ पगा हुआ।
लोनी थी लताएँ कुंज सघन सुवासित थे,
प्रकृति निखार था उदार उमगा हुआ।।

दृष्टि आ रहा था दूर ही से पापहारी मंजु,
धूम्र अग्नि कुण्ड से अभी का सुलगा हुआ।
दण्डक सुकानन था नैमिष पवित्र तीर्थ,
ऋषि यमदग्नि का था आसन लगा हुआ।।

ऋषि आश्रम में महाराज पधारते हैं। महर्षि यमदग्नि सैन्य सहित राजन् का वैभवपूर्ण स्वागत-सत्कार करते हैं। महाराज सहस्रबाहु ऋषि-आश्रम के राज वैभव को देखकर चकित रह जाते हैं, उन्हें रात भर नींद नहीं आती है। ऋषि-कुटरि का विपुल ऐश्वर्य राजन् के चिन्तन का विषय है। प्रातः कालीन प्राकृतिक-सौंदर्य सहस्रबाहु को अभिभूत करता है :-

हो गया प्रभात हुआ चंचल तड़ाग नीर,
राजहंस मंडली विहार करने लगी।
बिहँस सरोज उठे, गूँज उठे चंचरीक,
जागी पिक प्रियतम पुकार करने लगी।।
आते देख स्यंदन समीप दिवानायक को,
ऊषा त्याग मान अभिसार करने लगी।
चारु वन वाला रवि मुकुर सम्हाले कर,
भाल भरे सेंदूर श्रृंगार करने लगी।।

महाराज सहस्रबाहु ऋषिवर की सेवा में उपस्थित होते हैं। महर्षि यमदग्नि राजन् का कुशल-क्षेम पूँछकर स्वागत-सत्कार में रह गई कमी के लिए क्षमा चाहते हैं। सहस्रबाहु अपने आश्चर्य का निवेदन करते हैं कि ऋषिवर यह राज-वैभव आप को कैसे सुलभ है। महर्षि सम्मुख बैठी हुई कामधेनु-सुता नन्दिनी की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि राजन् यह सब इसी धेनु का प्रताप है और यह मेरे पास इन्द्र की धरोहर है। सहस्रबाहु का लोभी मन नन्दिनी को प्राप्त करने के लिए चंचल हो उठता है। वह महर्षि से धेनु के लिय याचना करता है। ऋषिवर अपनी विवशता प्रगट करते हैं कि दूसरे की धरोहर कैसे दी जा सकती है। सहस्रबाहु को क्रोध आ जाता है और वह बलपूर्वक धेनु ले जाना चाहता है। उस समय महर्षि की ओजपूर्ण वर्जना ब्राह्मणोचित तेज के साथ अभिव्यक्त हुई है :-

सावधान राजन् अनर्थ करते हैं आप,
डरिए अनीति का कुमार्ग गहते हुए।
भूले जो स्वधर्म को न सोंचे कुछ ऊँच-नीच,
देखे गए सैकड़ों समूल बहते हुए।।
हम हैं तपस्वी और भय भगवान का है,
जीवन वृथा है अपमान सहते हुए।
वस्तु इन्द्र की है बिना अनुमति उन्हीं के लिए,
जायगी न धेनु भूप प्राण रहते हुए।।

इसके बावजूद भी सहस्रबाहु महर्षि की हत्या करके नन्दिनी को ले जाता है। परशुराम फल-फूल और समिधाएँ लेने अरण्य की ओर गए हुए थे, वापस लौटने पर समाचार ज्ञात होता है। भयभीत आश्रम वासी और बिलखती हुई माता रेणुका परशुराम के क्रोध को और अधिक उद्दीप्त करते हैं तथा प्रलयंकर भगवान शंकर का ध्यान करके परशुराम प्रतिशोध की प्रतिज्ञा को उद्घोषित करते है। भगवान विष्णु के रोषावतारी श्री परशुराम की यह प्रतिज्ञा ही उनके द्वारा क्षत्रिय महासंहार का कारण बनती है। प्रस्तुत छन्द

पौराणिक प्रसंग का अन्तिम छन्द है :-

कम्पित स्वरों में हुआ वारिद गँभीर घोष,
घोर क्रान्ति विश्व में नवीन कर दूँगा मैं।
चूर्ण कर दूँगा गर्व कायर नराधम का,
पूर्ण बल-वैभव विलीन कर दूँगा मैं।।
पितृ परिशोध की भयंकर नराहुति में,
नीच की भुजाएँ बीन बीन कर दूँगा मैं।
धर्म का नवीन अनुवाद करने के लिए,
आज धरा क्षत्रिय विहीन कर दूँगा मैं।

सीतापुर नगर में स्थित आँख का अस्पताल, जो आज एशिया में सर्वश्रेष्ठ नेत्र-चिकित्सा के लिए मान्य है, मूलतः 'खैराबाद का सफीखाना' है। जिन दिनों यह प्रतिष्ठान अपने मूल रूप में खैराबाद में स्थित था, डॉ. महेश प्रसाद का नाम नेत्र-सेवा के लिए एक पहचान बन गया था। शर्मा जी ने अपनी एक कविता में इस खैराबाद सफीखाना' का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। प्रस्तुत रचना हिन्दी में अवधी-साहित्य एक धरोहर है :-

तुम पूछउ खइराबाद कहाँ ? अँधरन का मिलइ मुराद जहाँ,
पइसा न होई बरबाद जहाँ, डाक्टर महेश परसाद जहाँ,
आँखिन का दूर कारखाना। अस खइराबाद सफीखाना ।।
अन्धा रोगी बे माल ताल, दुखिया गरीब पुन फटेहाल,
जिनका न सुनइ कोई सवाल, उनहेन का है यू अस्पताल,
तनिकउ ना ठाठ अमीराना। अस खइराबाद सफीखाना।।
दिनु भरि माली खुरपइ ब्वावै, भिस्ती छिरकै मेहतरि ध्वावै,
तिनुका ना एकु रहइ पावै, बदबोहि न रत्तिउ भरि आवइ,
घर ते हैं साफ पायखाना। अस खइराबाद सफीखाना।।
बिजुली दिनहे ते लागि बरै, सब काम दिनु तना लाग करै,
जो कहूँ रेडियो कूक भरै, तौ अँधरन कइहाँ सूझि परै,
खटिया पर परे सुनइ गाना। अस खइराबाद सफीखाना।।
जी कँकरन पर सोए उधार, कढ़िलत घसिटत भइ घाँह पार,
खटिया न परी जिनके अगार, ती पलकन पर गावैं मल्हार,
गुलगुल गद्दा चँदवा ताना। अस खइराबाद सफीखाना।।
जी देखिन ना कोड़िया धानी, ना मिला माडु गइ जिंदगानी,
लपसिउ माँ है अंइचातानी, जो देखिन ना सफेद पानी,
ती पियइँ दूधु ततवा छाना। अस खइराबाद सफीखाना।।
सब उमिरि भुँखमरिम बीति गई, ना देखिनि मुट्ठी भरि गोजई,
मक्का नोखे दूबरि पोखई, भरि पेटु न जी खाइनि कोदई,
ती खुब झाँड़इँ साबूदाना। अस खइराबाद सफीखाना।।
जी खाइँ सराहइँ जिभीकन्द, सेरुका जिनका म्यावा दुचन्द,
जगु मिला मिली जो सकरकन्द, झरबेरियउ पाईनि तौ अनन्द,

ती पगुरावैं अनारदाना। अस खइराबाद सफीखाना।।
पंडित के मंतर परे फीक, कइ सके न मुल्ला जिन्द नीक
जब भए न कोइकि किहे ठीक, होइ होइगे मोतियाबिन्द नीक
अब रही न कोइ अँधरा काना। अस खइराबाद सफीखाना।।
जो कोई होई अँधरा अपंग, औ दुनिया ते होइ गवा तंग,
तौ सुनउ बताई नीक ढंग, अब खइराबादइ चलउ संग,
रस्ता हमार सबु है जाना। अस खइराबाद सफीखाना।।
हम रहेन महीना चारि पाँच, देखेन भालेन औ किहेन जाँच,
अपनी दानिश माँ कहेन साँच, सबहिन माना हमहू माना,
अस खइराबाद सफीखाना।।

प्रस्तुत कविता सीतापुर अवधी का एक सजीव उदाहरण है। हिन्दी में उर्दू के शब्दों का व्यवहार शर्मा जी की भाषा की निजी विशेषता है। कभी यह कविता खैराबाद के आँख अस्पताल के लिए एक प्रमाण पत्र समझी जाती थी। शर्मा जी सीतापुर जनपद के जन कवि हैं। गाँव के परिवेश में ग्रामीण जीवन व्यतीत करने के कारण शर्मा जी लोक जीवन से भली प्रकार परिचित है। यही कारण है कि उनकी अवधी भाषा अपने आंचल में लोक जीवन की अनेक महत्वपूर्ण विशेषताएँ संजोए हुए है

इस प्रकार शर्मा जी अद्‌भुत काव्य प्रतिभा के धनी हैं। अभी उनके सृजन का अधिकांश अप्रकाशित है। शर्मा जी के संपूर्ण काव्य का प्रकाशन हिन्दी जगत् का एक महत्वपूर्ण कार्य होगा। शर्मा जी ने अवधी, ब्रज एवं खड़ी बोली-तीनों में अपनी रचनाएं प्रस्तुत की हैं। उनके काव्य में भारतीय इतिहास के पृष्ठ सजीव हो उठे हैं। भारतीय इतिहास, पौराणिक आख्यान एवं लोक जीवन शर्मा जी की कविता के प्रमुख विषय हैं। स्फुट काव्य से प्रबन्ध काव्य तक शर्मा जी के सृजन का वर्ण्य विस्तार है। यह हर्ष का विषय है कि हिन्दी संस्थान, लखनऊ, उत्तर प्रदेश ने अभी हाल में ही शर्मा जी को पुरस्कृत करके हिन्दी भाषा एवं साहित्य को गौरवान्वित किया है। शर्मा जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व एक महत्वपूर्ण शोध प्रबन्ध का विषय है और जहाँ तक मुझे ज्ञात है, इस उत्तम कार्य का प्रारम्भ पारस नाथ पाण्डेय नामक शोध छात्र कर चुका है। मैं शर्मा जी की दीर्घायु की कामना करता हूँ एवं उनके बहुमूल्य साहित्य के प्रकाशन की भी।

सग की कोई हियाँ न देखाति, अँधेरे म कैसे अरे घर जइबा।
आँख मिचौनी के खेल मा ई तना, अत्ती कबी नहीं देर लगइबा।।
कान्हा रे साँची कही तुमते, घर की कोलिया कहूँ ढूँढ़े न पइबा।
आजु घरै पहुँचइहौ न जो तौ, तुम्हारे घरै कबौ ख्यालै न अइबा।।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
डी.ए.वी. डिग्री कालेज, लखनऊ

अवधी के जनकवि : गोवर्द्धन मछलीशहरी

डॉ. रवीन्द्र भूषण द्विवेदी

भाषा और वाणी मानवता की विकास-यात्रा के अप्रतिम दैवी गुण हैं। ज्ञान-विज्ञान, साहित्य और शास्त्रों में ही नहीं, अपितु आदिकालीन समाज से लेकर आज तक संसार में जो कुछ भी रचा गया है, वह वस्तुतः भाषा और वाणी की ही देन है। मानवता की इस विकास यात्रा में यद्यपि अनेकानेक भाषाओं के विविध रूप रहे हैं किन्तु लोकभाषाओं एवं लोक साहित्य का भी सदैव से अक्षुण्ण स्थान रहा है।

हिन्दी का राष्ट्रभाषा में जो वर्तमान स्वरूप है, वह खड़ी वोली के रूप में परिमार्जित होते हुए प्रतिष्ठित हुआ है, इसको समृद्ध बनाने में ब्रज एवं अवधी का अत्यन्त गौरवशाली स्थान रहा है। भक्तिकाल को हिन्दी साहित्य का स्वर्ण-काल बनाने में सूर, तुलसी एवं जायसी जैसे कवि सदैव स्मरण किये जाएंगे। महाकवि तुलसीकृत 'श्रीरामचरितमानस' नामक महाकाव्य मात्र अवधी भाषा का ही नहीं, वल्कि विश्वस्तर की गिनी-चुनी महान रचनाओं में सम्मिलित है।

आज खड़ी बोली अधिक विकसित, व्याकरण-सम्मत एवं शब्द-संगठन में अधिक समुन्नत होकर राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठापित है तथा सम्पर्क भाषा के रूप में विश्वस्तर पर सादर स्वीकार्य हो रही है किन्तु सहृदयजनों एवं लोकभाषा के मर्मज्ञों ने सदैव इसे अंगीकार किया है कि जो मधुरता एवं जो आत्माभिव्यंजना अवधी, ब्रजभाषा एवं भोजपुरी आदि के लोकगीतों में निहित है, वह प्रभावोत्पादकता में नितान्त अनूठा है। वर्तमान काल के अवधी के कवियों में चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका', आद्याप्रसाद 'उन्मत्त', जुमई खाँ 'आज़ाद', कैलाश गौतम, गोवर्द्धन मछलीशहरी आदि की रचनाओं का सन्दर्भ लेना इस दृष्टि से अत्यन्त प्रासंगिक होगा। उन्मत्त कृत 'पाती', कैलाश गौतम कृत 'अमौसा का मेला', जुमई खाँ आज़ाद कृत 'कथरी', तथा गोवर्द्धन मछलीशहरी कृत 'नई भौजी' शीर्षक कवितायें अपनी सहजता, स्वाभाविकता एवं सशक्त आत्माभिव्यंजना हेतु अवधी गतिधारा के अग्रेतर विकास में एक नया सोपान प्रस्तुत करती हैं।

अवधी की वर्तमान कविताधारा के जनकवि के रूप में गोवर्द्धन मछलीशहरी अपने गीतों एवं गजलों द्वारा काव्यमंचों पर श्रोताओं को भाव-विभोर कर सम्मोहित कर लेते थे। इनका पूरा नाम अब्दुल गफ्फार खाँ था और गोवर्द्धन मछलीशहरी के नाम से काव्य-जगत में प्रसिद्ध थे। जौनपुर जनपद के मछलीशहर कस्बे के अरबियान नामक मुहल्ले में 15 दिसम्बर 1922 ई. को मोहम्मद अरमान के पुत्र के रूप में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता को भी कविता लिखने-पढ़ने का शौक हुआ करता था और प्रायः अन्य क्षेत्रीय गीतकारों का उनके घर आना-जाना लगा रहता था, जिसका प्रभाव गोवर्द्धन मछलीशहरी के किशोर मन पर पड़ने लगा। अतः काव्य-रचना का अंकुर उन्हें पैतृक संस्कार के रूप में प्राप्त हुआ।

उन्नीस सौ साठ और सत्तर के दशक में गोवर्द्धन मछलीशहरी अवधी क्षेत्र के जनपदों, यथा-- प्रतापगढ़, सुलतानपुर, रायबरेली, फैजाबाद आदि के विभिन्न कवि सम्मेलनों में प्रायः आमंत्रित किये जाते

थे। यद्यपि इनकी विद्यालयी शिक्षा तो अधिक न थी, फिर भी सहज-सरल अवधी का प्रयोग करके अपने गीतों में अद्‌भुत प्रभावोत्पादकता एवं मार्मिकता कुशलतापूर्वक उत्पन्न कर लेते थे।

आपकी 'नयी भौजी' नामक कविता के कुछ अंश यहाँ उदाहरणार्थ उल्लेखनीय हैं, जिसमें गांव के एक किशोर हृदय बालक का अपनी नयी-नवेली भौजी के पदार्पण पर उत्पन्न उसकी मुग्धता एवं असीम उल्लास का एक बिम्ब-चित्र देखते ही बनता है, यथा--

नई-नई भउजी जो पायेन गोबरधन।
चरावैं न गइयन, खियावैं न बरधन।।
कहैं ए री भउजी, तू अउतिउ एहर तन।
करे! तोहरे भउजी, कमर बा कि नाहीं।
अरे! काहे तोहरी, सरकि जात करधन।।

अपनी नई-नई भउजी के प्रति किसी किशोर मन का यह आकर्षण अतीव सहज, सरल तथा चित्ताकर्षक है जो कवि की गहनतम अनुभूति की व्यंजना करने में पूर्णतया सक्षम भी है।

एक अन्य अवधी गीत में गोवर्द्धन मछलीशहरी का कवि मन किसी सुन्दरी नायिका की प्रलम्बित वेणियों और उनके आवरण में छुपे उरोजों को देखकर मुग्ध हो उठता है तथा खाँसकर उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना चाहता है। वह द्वार खुलवाकर उसके भवन में प्रवेश करना भी चाहता है। इस पर नायिका की प्रतिक्रिया बड़ी चित्ताकर्षक बन पड़ी है, यथा--

हम रची खोंखा-खेंखरा तो बुरा मानि गयेन।
हम कहा खोला मोहारा तो बुरा मानि गयेन।।
अपने काँधे पे ज दुइ नाग वो डारे निकरेन।
हम कहा का भा पेटारा तो बुरा मानि गयेन।।

कवि गोवर्द्धन मछलीशहरी ने सामाजिक एवं राजनीतिक धरातल पर व्याप्त विसंगतियों पर भी गहरी संवेदना अनुभव करते हुए अपने अवधी गीतों से करारा प्रहार किया है। आजादी के बाद की कागजी योजनायें उन्हें कचोट रही थीं, अतः बड़ी-बड़ी नहरों को शुष्क, सूखी एवं नितान्त जल-विहीन देखकर उन्होंने कहा--

नहरा जो सगर तौ तू खोदवाइ दिहे बाट्या।
पानी बरे घोंघा अस मुँह बाइ दिहे बाट्या।।
ऊँटे के मुँहें जीरा फुसलाइ दिहे बाट्या।
छेंड़ी के मुँहें कोंहड़ा ओलियाइ दिहे बाट्या।।

अतः यह कहना अतिरंजित न होगा कि श्री गोवर्द्धन मछलीशहरी अवधी गीतों के एक सशक्त और परिपक्व रचनाकार थे, तथा अवधी गीतों का भण्डार भरने की उनमें अपार सम्भावनायें थीं किन्तु यह उनके जीवन की विडम्बना ही थी कि स्वयं तो वे अल्पशिक्षित थे ही और उनकी रचनायें अव्यवस्थित होकर अप्राप्य एवं अप्रकाशित ही रह गयीं। उन्नीस सौ सत्तर के दशक में किसी समय यह जगमगाता नक्षत्र असमय टूटकर पुच्छल तारे के रूप में सदा-सदा के लिये विलुप्त भी हो गया।

अवधी-परम्परा के हस्ताक्षर कवि : जुमई ख़ाँ 'आज़ाद'

दीपक रूहानी

आमतौर से लोक-जीवन में प्रचलित गीतों एवं रीति-रिवाजों को उस पूरे समाज की 'सामूहिक कमाई' माना जाता है। कुछ लोग तो लोकगीतों को 'अपौरुषेय' मानते हैं। ऐसा शायद लोक-जीवन या सामान्य जीवन के साहित्य का लिपिबद्ध न होना है। यदि हम जागरूक एवं सूक्ष्म-दृष्टि से देखें तो इन लोकगीतों, परम्पराओं, रीति-रिवाजों, कहावतों एवं मुहावरों के निर्माण एवं निर्माण-प्रक्रिया को वर्तमान समय में या अपने-अपने समय में स्पष्ट रूप से देख सकते हैं।

प्रतापगढ़ ज़िले गोबरी गाँव में, जो कि प्रतापगढ़ से लखनऊ रेलमार्ग पर पड़ने वाले जगेशरगंज स्टेशन से दो कि.मी. पूर्व है, प्रकृति के नितान्त शान्त वातावरण में आज़ाद जी का 'अवधी-आश्रम' स्थित है। आज भी ये गाँव ज़िला मुख्यालय एवं अन्य किसी भी बाज़ार एवं क़स्बे के शोरोगुल से दूर है। जब आज के सूचना एवं प्रौद्योगिकी के युग में इस गाँव में इतनी शान्ति व्याप्त है तो आज के तीन-चार दशक पूर्व इस गाँव में कितना सुकून रहा होगा। पूरे माहौल में यहाँ इस क़दर सुकून रहता है कि शहर के शोरगुल का अभ्यस्त यदि कोई यहाँ पहुँच जाये तो घबराहट महसूस हो, ठीक उसी तरह जिस तरह गाँवों की शान्ति का अभ्यस्त कोई शहर पहुँचकर बेचैन हो उठता है। ऐसी जगह पर रहकर आज़ाद जी ने जिस परम्परा और भावना का बिगुल बजाया उसकी अनुगूँज आज अवधी-साहित्य में स्पष्ट रूप सुनी जा सकती है।

आज़ाद जी 1957 ई. में सोशलिस्ट पार्टी ऑफ इण्डिया की ओर से छः महीने की जेल भी काट चुके हैं, परन्तु इनका समाजवाद सिर्फ़ सैद्धान्तिक और राजनीतिक लाभ तक नहीं सीमित है। ये समाजवाद के उन कार्यकर्ताओं में हैं जो जीवनपर्यन्त सार्थक और सक्रिय सृजन-कर्म के द्वारा समाजवाद का क्रियान्वयन करते रहते हैं। गंगा-जमुनी तहज़ीब, जिसे संविधान में सामासिक संस्कृति (Composite culture) कहा गया है, आज़ाद जी के यहाँ एक शब्द के रूप में न आकर एक सतत आत्मसात् भाव के रूप में आता है। बिना किसी हिन्दू-मुस्लिम एकता का नारा लगाये आज़ाद जी सनातन धर्म के तमाम मिथकों, प्रतीकों, देवी-देवताओं और कथा-कहानियों को इस तरह अपनाये हुए, इस तरह उनकी शरण में चले गये हैं कि उनकी भक्ति-भावना जाति एवं धर्म की तमाम सीमाओं से ऊपर उठकर सनातन (सदा से चला आता हुआ) हो जाती है। पूरे प्रतापगढ़ ही क्या बल्कि समकालीन अवधी-साहित्य में शायद ही ऐसा कोई कवि हो जिसकी भक्ति-भावना आज़ाद जी के बराबर प्रवण हो। इनकी भक्ति-भावना पर विस्तार से चर्चा करने के पूर्व इस लेख के शीर्षक से सम्बन्धित कुछ बातों पर विचार किया जाय तो बेहतर होगा।

आज़ाद जी स्वयं एक परम्परा बन गये हैं और परम्परा का निर्वहन करनेवाले तथा परम्परा का प्रारम्भ करनेवाले भी। मैंने एक दिन अपनी माता जी को आज़ाद जी की एक प्रसिद्ध कविता 'कथरी' सुनायी।

वे कहने लगीं कि उन्होंने ये कविता अपने नइहर (मेरे ननिहाल) में सुनी थी। शेषराज मिश्र के बड़ावाला लड़का हुआ था तब। चार लोग गानेवाले आये थे और पूरा गाँव तथा आसपास के गाँव से बहुत लोग सुनने के लिए इकट्ठा हुए थे। जोड़ने-गाँठने पर पता चला कि शेषराज जी का बड़ावाला लड़का सन् 1974-75 के आसपास हुआ था। इस बातचीत के दौरान मेरी माता जी ने एक महत्वपूर्ण बात बतायी। वे कहने लगीं कि जो तुम ये कविता (कथरी) इस किताब (पहरुआ) से सुना रहे हो और उस कविता में जो उन गानेवालों ने गायी थी, कुछ फ़र्क़ है। किताब में जो लालबहादुर शास्त्री इत्यादि का नाम है वैसा उन लोगों ने नहीं गाया था। इसके अलावा उनके गाने में कुछ अन्य पंक्तियाँ भी शामिल थीं। इन तथ्यों से मेरा ध्यान इस बात की ओर गया कि शायद लालबहादुर, ईसा, मूसा, अब्दुल हमीद आदि की बात अशिक्षित ग्रामीण परिवेश या उस गाँव- विशेष के लोगों की समझ में न आने की सम्भावना से न गाया गया हो, लेकिन अपनी तरफ़ से कुछ पंक्तियाँ जोड़ देने की बात किसी अन्य तथ्य की ओर इशारा कर रही थी। वस्तुतः वे तथ्य कुछ ऐसे हैं जिनको ठीक-ठीक चिह्नित नहीं किया जा सकता। ये 'कथरी' कविता के पारम्परिक (Traditonal) हो जाने की प्रक्रिया-अवस्था है। जितने भी लोकगीत ग्रामीणांचलों में प्रचलित हैं वो किसी-न-किसी व्यक्ति द्वारा कभी-न-कभी तो लिखे ही गये होंगे। आने वाली पीढ़ी ने अपनी समझ, अपनी रुचि, अपनी इच्छा से उनमें प्रासंगिक संशोधन कर लिया है। यहीं एक रोचक तथ्य और सुनने को मिलता है। अवधी के प्रसिद्ध कवि निर्झर प्रतापगढ़ी जी ने एक बार मुझे बताया कि किसी नौटंकी में राम फ़क़ीरे (अजीब गंगा-जमुनी नाम है) नाम का कोई व्यक्ति 'कथरी' कविता को अक्सर मंच से गाता है। काँधे पर कथरी रखकर माइक के सामने अपने हर प्रोग्राम में या श्रोताओं की माँग पर वो इसे प्रस्तुत करता है। विद्यानिकेतन इण्टर कॉलेज, लालगंज अझारा, प्रतापगढ़ में संगीत-मास्टर श्री रामेश्वर तिवारी जी को 'कथरी' कविता को बहुत ही सरस एवं प्रभावकारी तरीक़े से गाते हुए मैंने सुना है। उपर्युक्त तमाम उदाहरण मेरी अपनी जानकारी की सीमा के भीतर हैं। इसी प्रकार के सैकड़ों उदाहरण आज़ाद जी के गीतों एवं लोकगीतों के संबंध में खोजे जा सकते हैं। आज़ाद जी द्वारा लिखित एक अन्य धोबी-गीत – "बड़ी-बड़ी कोठिया सजाया पूँजीपतिया, दुखिया कै रोटिया चोराइ-चोराइ", कई नौटंकियों और नाचों में गाया जाता है। ये एक छोटा-सा उदाहरण है आज़ाद जी की कविताओं के पारम्परिक हो जाने की।

परम्परा-निर्वहन भी परम्परा-निर्माण से कम महत्वपूर्ण नहीं होता। आज़ाद जी ने कई परम्पराएँ निबाही हैं और कई निर्मित की हैं। कोई व्यक्ति ये सोचकर कोई कार्य नहीं प्रारम्भ करता कि आगे चलकर ये एक परम्परा बन जायेगा। वस्तुतः उस कार्य से प्राप्त होनेवाले परिणाम और व्यापक स्वीकार्यता उसे परम्परा बना देते हैं। आज़ाद जी ने भक्ति-काव्य की जो परम्परा चलायी उसके प्रभाव में प्रतापगढ़ ही नहीं बल्कि पूरा अवधी-साहित्य का समकालीन काव्य आ गया। भक्ति-काव्य जो कि अवध-क्षेत्र की मूल आत्मा है। आज़ाद जी के भक्ति-भाववाले छन्दों के कारण इस प्रकार के छन्द आसपास के कई ज़िलों में प्रचलित-प्रसरित हो गये। दूसरी परम्परा आज़ाद जी ने ये चलायी कि इस्लाम धर्म के होकर सनातन धर्म से सम्बन्धित उच्च कोटि का साहित्य सृजित किया। आज़ाद जी की इस परम्परा को बेहतर से बेहतरीन बनाते हुए अनीस देहाती और परवाना प्रतापगढ़ी उन तमाम कट्टरपंथियों के मुँह पर तमाचा हैं जो धर्म की राजनीति करने का 'पाप' करते हैं।

एक अन्य आयाम या पहलू को आज़ाद जी द्वारा चलायी गयी परम्परा मान सकते हैं। उन्होंने अपनी भावाभिव्यक्ति में खड़ीबोली को माध्यम नहीं बनाया (यद्यपि कि बहुत-सी रचनाएँ खड़ीबोली में भी हैं, परन्तु मूलतः वे अवधी के ही कवि माने गये हैं) जबकि खड़ीबोली काव्य-भाषा के रूप में अत्यन्त समृद्ध हो चली है। लोकभाषा में साहित्य इन्होंने भावों के साथ-साथ भाषा (लोकभाषा) को बढ़ावा देने की परम्परा

डाली जिससे कि इनके उपरान्त अवधी-कवियों की एक पूरी-की-पूरी खेप तैयार हो गयी। आज़ाद जी की इन्हीं तमाम विशिष्टताओं-विशेषताओं– जैसे भक्ति-भावना का काव्य-सृजित करना, मुस्लिम होकर सनातनधर्मी कविता करना एवं लोक भाषा में कविता लिखना; के कारण इन्हें सूफ़ी-काव्य-परम्परा का श्रेष्ठतम ध्वजवाहक कम-से-कम समकालीन अवधी-काव्य के परिदृश्य में माना जा सकता है। आज़ाद जी की जिस भक्ति-भावना का ज़िक्र प्रारम्भ में हुआ था उस पर विस्तार से चर्चा करने के लिए एक स्वतंत्र पुस्तक भर का अवकाश चाहिए; परन्तु कुछ संकेत अवश्य दिये जा सकते हैं। सिद्धान्तः ऐसा है तो नहीं परन्तु व्यावहारिक रूप से कहा जा सकता है कि किसी भी लोकभाषा का साहित्य तभी तक ज़िन्दा है जब तक उसमें धार्मिक भावनाओं का साहित्य रचा जाता है। आज़ाद जी की भक्ति-भावना अपने-आप में कुछ समकालीन प्रासंगिकताओं को समेटे हुए हैं सरस्वती-वन्दना, शिव-स्तुति, गोस्वामी जी को नमन् आदि कविताओं के अतिरिक्त उन्होंने गंगा, राधा और केवट पर खण्डकाव्य की रचना की है। गंगा निर्मलता और सनातन धर्म की आदि-आस्था और परम्परा का प्रतीक हैं। राधा प्रेम एवं समर्पण का अनन्य उदाहरण हैं। केवट रामभक्तों की निश्छलता का प्रतीक है। इन सब चरित्रों पर स्वतन्त्र रूप से अलग-अलग खण्ड-काव्य लिखकर आज़ाद जी ने भक्ति और भक्ति-परम्परा के सूक्ष्मतम भावों को पकड़ने एवं उकेरने की कोशिश की है। ये एक सफल सद्प्रयास है। अधिक विस्तार में न जाकर 'केवट' (खण्डकाव्य) से एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा। इस खण्ड काव्य के षष्ठ सर्ग में कथानक एवं अन्य भक्ति-भावनाओं से हटकर आजाद जी ने केवट की व्यक्तिगत दीनता, पारिवारिक समस्याओं जैसे– अधिक सन्तान होना, अर्थोपार्जन की समस्या, घर-इत्यादि न होने का संकट आदि का चित्रण किया है। सभी छन्द बहुत ही मार्मिक हैं। इस सर्ग के सभी छन्द किंसी भी ग़रीब की स्थिति का वर्णन करने के लिए पर्याप्त हैं। भारत का एक बहुत बड़ा वर्ग इसी प्रकार दीनहीन अवस्था में रहकर ईश्वर, भगवान, प्रभु आदि में आस्था रखता है। केवट प्रकारान्तर से इसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। केवट के जीवन में एक प्रकार का संतोष है और भौतिकता का अभाव है। इस खण्डकाव्य का ये सर्ग अत्यन्त विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण है।

आज़ाद जी ने जहाँ एक ओर समाजवाद के विचारों से जुड़ी रचनाएँ (काव्य-संग्रह) लिखीं जैसे– 'मालिक और मज़दूर', 'जनता की ललकार', 'क्रान्ति-सन्देश', 'चिंगारी' वहीं दूसरी ओर देश-प्रेम एवं राष्ट्रीय भावनों से ओतप्रोत रचनाएँ (काव्य-संग्रह) लिखीं जैसे– 'भारत की सुरक्षा', 'त्याग और बलिदान', 'हिमालय बचाओ'। ये किताबें इस बात की ओर संकेत करती हैं कि कवि का भाव-विस्तार कहाँ से कहाँ तक है। भक्ति-भाव, समाजवाद, देश-प्रेम, लोकगीत आदि इस तथ्य की ओर इशारा करते हैं कि भारत का सामान्य आदमी जो एक गाँव-गिराँव में रहता है, अवधी बोली बोलता है, किन-किन भावों को अपने में समाहित किये हुए है। आज़ाद जी का ये भाव-विस्तार वस्तुतः एक सामान्य भारतीय का भाव-विस्तार है।

लोकगीतों की परम्परा भारत में बहुत ही व्यापक स्तर पर है। लोकगीत लोकभाषा में लिखे होने के कारण किसी साहित्यालोचन की परम्परा में शामिल नहीं हो पाते, परन्तु इस कारण ये गीत लुप्त नहीं हो जाते अपितु जन-जन के हृदय एवं कण्ठों में रचबस जाते हैं। ऐसा होने का मुख्य कारण इन लोकगीतों की लयात्मकता हैं आज़ाद जी को लोक-संगीत की गहरी समझ है। धोबिअउव्वा गीत, कँहरउव्वा गीत, अहिरउव्वा गीत एवं अन्य जाति-गीतों में जो लयात्मक विविधता है और जो कि इनकी विशिष्ट पहचान है, उसकी बहुत सूक्ष्म समझ आज़ाद जी को है। आज़ाद जी ने लोकसंगीत की लगभग सभी प्रचलित धुनों (लयों) पर गीत लिखे हैं। बसन्त-गीत, फागुनी गीत, सोहर, धोबी-गीत, बछू की चुनरी, दहेज़-दानव आदि-इत्यादि ऐसे गीत हैं जो लोकमानस से मेल खाते हैं, लोकस्वभाव के पोषक हैं और इसीलिए

लोक-हृदय में सहज रूप से बैठ जाते हैं। वाद्ययंत्रों पर सहज रूप से गाये जा सकने और लोकभाषा में लिखे होने के कारण आज़ाद जी के ये गीत पारम्परिक गीत होने की प्रक्रिया में हैं और हो भी रहे हैं।

लोकरंजन के साथ-साथ आज़ाद जी ने अपने लोकगीतों में जागरूकता का भाव सदैव बनाये रखा हैं जहाँ उन्होंने समाजवाद से प्रेरित होकर गीत लिखे, देशप्रेम के गीत लिखे वहीं छोटी-छोटी बुराइयों, कुरीतियों एवं समस्याओं को भी उल्लिखित किया है। शिक्षा के प्रति जागरूक करना, दहेज़ की बुराई करना, परिवार नियोजन की सलाह देना, छुआछूत की निन्दा करना ऐसे विषय हैं जिन पर आज़ाद जी ने स्वतन्त्र रूप से कई-कई कविताएँ लिखी हैं। इन समस्याओं पर सतत् रूप से चिन्तन-मनन एवं विचार-विमर्श करते रहना एक पढ़े-लिखे और जागरूक समाज की मूलभूत पहचान है।

आज़ाद जी पर विभिन्न लेख समय-समय पर कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं और होते भी रहते हैं। डॉ. संतोष कुमार मिश्र (हिन्दी-प्रवक्ता, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, स्याल्दे, अल्मोड़ा, उत्तरांचल) ने आज़ाद जी को केन्द्रित करके एक पुस्तक– 'कथरी के गुनगायक' नाम से पैंसठ (65) पृष्ठों की लिखी है। आज़ाद जी के रचना-विस्तार को देखते हुए इन पर शोध एवं अन्य प्रकार के कार्यों की आवश्यकता हैं इन पर होनेवाले शोधकार्य, लेखन, प्रकाशन आदि मूलतः उन परम्पराओं का ही पक्ष-पोषण करेंगे जो इनके माध्यम से सामने आयी हैं और दिन-ब-दिन आगे बढ़ रही हैं। आज़ाद जी के दोनों साहबज़ादे—मुस्तफ़ा और मुर्तज़ा साहित्य-सृजन में रत हैं। अवधी में रचना-कर्म करते हुए दोनों 'आज़ाद-पुत्र' अपने पिता की परम्परा को आगे ले जा रहे हैं, लेकिन ज़रूरत है एक सामूहिक प्रयास की, समेकित योजना की, सहयोगी उद्यम की।

लक्ष्मण प्रसाद मित्र

डॉ. गणेश दत्त सारस्वत

'मित्र' जी 'सनेही-मण्डल' के प्रौढ़ कवि थे। काव्य प्रकार कार द्वारा निर्दिष्ट काव्य के हेतु प्रतिभा, अध्यवसाय तथा अभ्यास के संगम में अवगाहन कर उनकी काव्य-कला काफी निखरी थी। उन्होंने बारहमासा, बहर तबील तथा चौबोलों से लिखना प्रारम्भ किया। फिर उर्दू मिश्रित सवैया-घनाक्षरी की ओर उन्मुख हुए, जिन्हें कवि-सम्राट 'सनेही' जी ने बहुत पसन्द किया।

'मित्र' जी का जन्म श्री रामचरण के यहां सं. 1963 वि. में हिंडौरा (सीतापुर) में हुआ था। अवधी की ओर आपका ध्यान श्री पढ़ीस जी के सम्पर्क से आकृष्ट हुआ। पढ़ीस जी 'मित्र' जी के पड़ोसी तथा अभिन्न हृदय थे। उनके तीन ग्रंथ- 'सुरभि', 'सतनजा' तथा 'बरसाती मेढक' में से अन्तिम दो अवधी में ही हैं। कविता के अतिरिक्त मित्र जी ने कहानियाँ तथा नाटक भी लिखे हैं। 'बाणशैय्या' उनका प्रकाशित नाटक है।

मित्र जी की प्रारम्भिक रचनाएँ उर्दू-मिश्रित हैं, जिनमें भावप्रवणता, सुशब्दिता तथा गम्भीरता का पर्याप्त अंश है। प्रवाह अबाधित होने के कारण इस कोटि की रचनाएँ सर्वथा सुपाठ्य तथा बोधगम्य हैं। 'ताजमहल' पर अनेक कवियों ने लिखा है। किन्तु, 'मित्र' जी उन सबसे इतर हैं। उनकी एतद्विषयक कविता करुण रस से ओत-प्रोत है। इसका प्रमाण यह छन्द है। इस छन्द में प्रकृति 'कयामत का पयाम' देती हुई सी प्रतीत हो रही है। मुहावरों के समुचित प्रयोग ने छन्द की अर्थवत्ता द्विगुणित कर दी है:

जीवन राह के राही थके पड़े सो रहे हैं ये यहाँ जरा देखो।
क्या न उठेंगे कभी, इनकी यह फानी हुई दुनियाँ जरा देखो।
झोंके पयाम कयामत दे रहे, 'मित्र' यहाँ की हवा जरा देखो।
पानी हुआ जा रहा दिल दर्द से, इश्क का यह जजबा जरा देखो।

मित्र जी की ऐतिहासिक रचनाएँ बड़ी मनोरम हैं। ऐसी रचनाओं का वर्ण्य-विषय उन्होंने इतिहास के पृष्ठों से खोज निकाला है, जो अभी तक उपेक्षित ही थे। 'जहाँआरा की मृत्यु शैय्या' उनकी इसी कोटि की रचना है।

इस लम्बी रचना में महाप्रयाण के अवसर पर जहाँआरा के उद्गारों का बड़ा ही सजीव किन्तु, करुण विवेचन है। एक छन्द देखिए- इसमें मृत्यु के समय की विवशता जहाँआरा के शब्दों में जिस रूप में व्यंजित है, वह सर्वथा प्रशंसनीय है :

मम वृद्ध पिता प्रिय शाहजहाँ दिन थे उनके अदबार के क्या?
दिले पाक को चाक करूँ दूँ दिखा उनके वह हौसले प्यार के क्या?
सब वे रह जायेंगे जायेंगे भी हमराह मिसाल ही यार के क्या?
चलना पड़ेगा जग से हाँ! मुझे मुमताज का प्यार बिसार के क्या?

जहाँआरा की पितृभक्ति सर्वविदित है। निम्नलिखित छन्द में उसकी इसी भक्तिभावना का प्रकाशन है। वह चाहती है कि अगले जन्म में उसे मुराद सा भाई, शाहजहाँ जैसा पिता तथा मुमताज सदृश माता मिले। अपनी इसी इच्छा की अभिव्यक्ति वह सहेलियों से इस रूप में कर रही है :

तुम सी सब प्यारी सहेलियों का शबेरोज सुहावना नाता मिले।
रनधीर गँभीर उदारता में वर वीर मुराद सा भ्राता मिले।
जिनकी हूँ निगाह में आह पली पिता शाहजहाँ सम त्राता मिले।
जनमूँ जहाँ मैं वहाँ फेर मुझे मुमताज सी माता विधाता! मिले।

इस प्रकार यह सम्पूर्ण रचना जहाँआरा के उज्ज्वल चरित्र के प्रकाशन में सर्वथा समर्थ है।

शेर अफगन भी इतिहास का एक उपेक्षित पात्र है। सिंह मारने के उपहार स्वरूप सम्राट अकबर से मिली हुई उसकी पत्नी मेहरुन्निसाँ को राजकुमार सलीम ने बलपूर्वक छीन लिया था। शेर अफगन के हृदय की इस पीड़ा का 'मित्र' जी ने अनुभव किया। उनका यही अनुभव 'शेर अफगन की सदा' शीर्षक रचना में व्यंजित है। इस कविता के कुछ छन्द देखिए। मेहरुन्निसाँ की अठखेलियाँ, जो शेर अफगन की स्मृति में घूम रही हैं, इस छन्द में वर्णित हैं :

कभी हाथ मरोड़ने का शिकवा कभी व्याकुल ही का ख्याल उठा।
गिने जारहे दाग हैं आरिज के वही मै की कमी का ख्याल उठा।
कभी आइने को ठहरा के गवाह विनोदभरा ये सवाल उठा।
अतिप्यार है आपसे प्यारे मुझे तो सही कह आइना हाल उठा।

शेर अफगन की कातरता, उसकी दुःखानुभूति की गहनता इस छन्द में अपनी पराकाष्ठा पर है:

ऐ दगा छल छन्द फरेब भरे अघस्वार्थ प्रलोभन चूर जहाँ।
दुख द्वेष प्रपंच प्रतारण के घर हो मुझसे बस दूर जहाँ।
अब मैं उस देश को जा रहा हूँ, पहुँचेगा नहीं कोई क्रूर जहाँ।
सुख से जहाँगीर सलीम बने, मेहरुन्निसा भी बने नूरजहाँ।

इसी प्रकार 'सोहराब वध' भी 'मित्र' जी की सफल ऐतिहासिक रचना है। 'मित्र' जी दृश्य चित्रण में कुशल हैं। वाजिद अली शाह का रंगीलापन इस छन्द में जैसे साकार हो उठा है :

रिन्द है, रऊनत की बू है बस चारों ओर, जाहिद का जिक्र है न इरफान बाकी है।
'बहियाँ मरोरी फोरी गागर' का गायन है, धा-धा की धुकार है, पुकार वाहवा की है।
दिन है सिरा बस रंगरेलियों में 'मित्र', खौफ उकना का दहशत न खुदा की है।
शाम का है वक्त नाम गुल गुलफाम का है, जाम का है जोर और शोर कहाँ साकी है।

'मित्र' जी की विशुद्ध हिन्दी में लिखी गई रचनाओं में एक स्वाभाविक आकर्षण एवं रमणीयता का गुण विद्यमान है। साथ ही उक्ति वैचित्र्य तथा स्निग्ध कल्पना का भी समावेश है। एक छन्द पर्याप्त होगा। प्रकृति के विभिन्न क्रियाकलापों के बीच विराट स्वरूप के दर्शन का प्रयत्न इस छन्द में है। कवि का यह प्रयत्न ही उसे जिज्ञासु बना देता है। वह तुरन्त प्रश्न पूछ बैठता है :

निर्झरों से गगनोच्च महीधरों का उर गीला किया करता है।
एक ही फूल के लाल किसी किसी भाग को पीला किया करता है।
रात्रि को तारक-राजि से रंजित जो नभ-नीला किया करता है।
कौन है जो रितुओं के गिरा परदे नट-लीला किया करता है?

'मित्र' जी के कथोपकथन बड़े ही भावुक हैं। इनकी भावुकता हृदय का स्पर्श पर पाठक को मुग्ध कर देती है। 'सरला की बिदा' शीर्षक रचना में इस प्रकार के संवादों की मनोरम योजना है।

'मित्र' जी की कुछ रचनाएं देश-प्रेम से नितान्त ओत-प्रोत हैं। इस प्रकार की रचनाओं में उनके हृदय का राष्ट्रीय भाव मुखर है। शहीदों के त्याग एवं बलिदान का गुणगान इस छन्द में द्रष्टव्य है :

भूल सुधोपम भोजन, देश की धूल को जीवन के हित फाँका।
वस्त्र नवीन पटे-पड़े फटे चीथड़ों से अपना तन ढाँका।
काल ने क्रूरता की अपनी पर बाल भी तेरा न हो सका बाँका।
मान के साथ जिया जग में फिर आन पै जान का मूल्य न आँका।

'मित्र' जी ने हास्य भी अच्छा लिखा है। एक छन्द देखिए :

आ गया बसन्त, अत्रि मत्त रस पीवन में, जीवन में तुम न बसन्त कन्त ला सके।
कैसा यह 'लव' कि तलब माहवारी रह, ऊपरी उपज का भी पैसा न पठा सके।
किसी रूपसी ने दे दिया है रस-घुट्टी या कि, छुट्टी ही चुनाव के प्रसार से न पा सके।
आठ ग्रह एक साथ आ गए मकर पर, पर तुम एक घर पर नहीं आ सके।

'मित्र' जी ने कुछ दृष्टकूटक छन्द भी लिखे हैं। इन छन्दों में काफी गूढ़ता तथा गंभीरता है। मित्र जी ने सरल अवधी भाप: में पर्याप्त मात्रा में लिखा है। 'सतनजा' उनकी इसी कोटि की रचनाओं का संग्रह है। इस संग्रह की सभी रचनाओं में बड़ा प्रवाह है। 'बहू की सीख' में ग्रामीण सास द्वारा बहू को दिया गया यह उपदेश सर्वथा ग्राह्य है :

भई भगवान की दाया जो हमारे धाम आई हौ।
लच्छिमी रूप हौ, सुख और सम्पति साथ लाई हौ।
सुना है सहर के इस्कूल माँ इलिमौ पढ़ी कुछु हौ।
अंगौछा, बढ़नियाँ, उरमालु काढ़े माँ कढ़ी कुछु हौ।
तुमारै आइ युहु सब गाइँ गोरू खेतु भुइँ छानी।
रही ना बात पर की है चुकिउ घर की बहूरानी।
चलाये अब तुमरेहे घरु चली यहिमां न बुल जानौ।
भरोसा म्वार कौनु बुढ़ानि काया पाक फलु जानौ।
बड़ी बूढ़ी ज्यठानी सासु की स्यावा किहेउ डटिकै।
चल्यौ वह चालु चौचन्दी, बढ़े मरजाद चौखटि कै।
न थौनी गैर की छावौ, न राखौ डाह पर धन की।
मेहरिया घोरि फुसिलैहैं, सुन्यौ सबकी, किहेउ मन की।
बिलाउज और जम्पर की हियाँ पहिरे न कीमति है।
किसानन की मड़ैया माँ कमीचन तच. गनीमति है।
उजर कपरा है उम्दा मुलु बुरी पोसाक भरकीली।
मिलौ सबते, चलौ ढंग ते, रहौ दीदा की सरमीली।
लगी लपटी न बातै, साँचु हैं, जो ध्यान दै चलिहौ।
तौ दाना पेट भरि खैहौ, हमेसा फूलिहौ फलिहौ।

'देहाती पैपुज्जी' शीर्षक रचना वातावरण की स्वाभाविकता के चित्रण की दृष्टि से अत्यन्त प्रशंसनीय है। 'छानु रे नथुवा बूटी' में निर्धनता का बड़ा हृदयग्राही वर्णन है। यह वर्णन समाज में व्याप्त

आर्थिक विषमता के प्रति कवि के आक्रोश का प्रतिफल है। इसी वैषम्य का प्रतीकों के माध्यम से कल्पना जन्य वर्णन 'तुम और हम' शीर्षक रचना की इन पंक्तियों में द्रष्टव्य है :

तुम साह खर्च अँबीर, दीन निरधन हम चुनियाँ।
तुम महलन के खम्भ, गिरे घर की हम थुनियाँ।
तुम केसरि महमही, करू हम खैनी जरदा।
तुम हौ पुहुप राग और हम भुइँ की गरदा।
तुम बहु साखी बिरछ बड़, हम करील बिन पात के।
तुम सनमाने अतिथि, हम पाहुन उबरे भात के।

'मित्र' जी ने अवधी भाषा में अनेक घनाक्षरियां भी लिखी हैं। एक पर्याप्त होगी। इसमें कृषक विरहिणी के उद्‌गारों का सुन्दर वर्णन है :

मैं हौं ख्यतिहर नारी काम निज काम करूं, बनि कै अन्यारी ध्यानु धीरजु कुड़कुना।
रामु जो दिहिसि रूखा सूखा खाइ ले रे उठु, बथुवा उसेउ नाक नथुवा सुड़ुकु ना।
आई घरै त्वार री बँधैया औ दिनैया कौरु, तोरि कै पघैया गैया दूबरी पुड़ुकुना।
काँचरु न बनु पीले आँचरु असाढ़ आये, आई त्वार दादा जादा लौंडवा हुड़ुकु ना।

'बरसाती मेढक' में 'मित्र' जी की चुनाव सम्बन्धी कविताएँ संग्रहीत हैं। ये कविताएँ शिष्ट एवं व्यक्तिगत आक्षेप से परे हैं। इस सम्बन्ध में कुछ पंक्तियाँ देखिए :

किसानौ केहिका द्‌याहौ वाट।
जो तुमका कुछु सुखु पहुँचाइनि, अकि पहुँचाइनि घाट।
आजु तलकु दुख दर्द नू पूंछिनि, लिहिनि नजरि माँ ल्वाट।
अब तुमका फुसलावै आये पहिरि कमरकट क्वाट।
कांगरेस की गैस उज्य़रिया मगन बड़े औ छ्वाट।
उलरि-उलरि कै चले बुझावै ई अँखिफ्वरवा ब्वाट।
का सरकार करै कौंसिलि माँ जन खुसामदी भाट।
कौनि लागु है परखैया की अपन दाम जब ख्वाट।
तुमहूँ 'मित्र' बुड़क्की मारौ, तौ जमि जाय ग्वाट।
किसानौ केहिका द्‌याहौ वाट।

उपर्युक्त विवेचन यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि 'मित्र' जी प्रातिभ कवि थे। हिन्दी जगत की गौरवपूर्ण विभूति के रूप में वे सदैव स्मरणीय रहेंगे।

अवधी के सपूत दिवाकर

डॉ. चन्द्रिकाप्रसाद शर्मा

जीवनपर्यन्त संघर्षों से जूझते हुए 'दिवाकर' जी ने दधीचि की भाँति अपनी हड्डियाँ भी समाज को समर्पित कर दीं। चौथे पाँचवें दशकों में कोई कवि सम्मेलन दिवाकरजी के बिना सफल और उच्च स्तर का नहीं माना जाता था। उस समय दिवाकर जी की ख्याति नीरज के समान ही थी। 'कंचना' में लोग दूर-दूर से आकर दिवाकर जी की स्वीकृति के लिए घंटों प्रतीक्षा किया करते थे। लखनऊ के न जाने कितने कवियों को उन्होंने गीतकार बना दिया। कई छुटभइयों को अपने साथ कवि-सम्मेलनों में ले जाते थे और बाद में वे ही दिवाकर जी को आँख दिखाने लगे, उनका उपहास करने लगे और उनकी कविताओं में त्रुटियाँ ढूँढ़ने लगे। पर वाह रे दिवाकर! उनके किए का तनिक भी माख नहीं माना। वे प्रायः उनके संबंध में यही कह दिया करते थे, 'अरे ई सब अपने ही तौ हैं, जउनु जउनु मनु करै तउनु तउनु करैं, हम कुच्छु न कहब।' संघर्ष, विरोध, उपेक्षा सब कुछ दिवाकर जी को सहना पड़ा। उनके लिए निराला जी की यह पंक्ति बड़ी सटीक है, 'धिक् जीवन! जो सहता ही आया विरोध।' वास्तव में संघर्ष ही जीवन की पर्तों में शक्ति भरता है जिसके सहारे व्यक्ति जीता है। अमीनाबाद की सड़कों पर महाप्राण निराला ने भी संघर्ष के दृढ़ पगों से जमीन नापी थी। यहीं दिवाकर ने भी निराला के दो टूक कलेजे को करने वाले भिखारी और गरम पकौड़ी बनाने वाली के दर्शन किए थे। दिवाकर का तेवर भी निराला जैसा ही खरा था। दिवाकर के गीत और गीतों के पढ़ने का उनका अपना ढंग सब कुछ वास्तव में निराला था। जेब में जब तक पैसा रहता था तब तक क्या मजाल कि दिवाकर जी के सामने चाय का पैसा कोई और दे। कवि-सम्मेलनों की आय मित्रों में बँट जाती थी। घर की, परिवार की, भोजन की, स्वास्थ्य की तो उन्होंने कभी चिन्ता ही नहीं की। धीरे-धीरे शरीर गलने लगा और तपेदिक ने धर दबोचा और ऐसा दबोचा कि फिर वे उठ न सके। एक दिन अपने हजारों प्रशंसकों को छोड़कर वे देवलोक सिधार गए।

गीतकार दिवाकर से सभी साहित्यकार परिचित हैं, किन्तु अवधी के पूत दिवाकर को कुछ ही जानते हैं। दिवाकर, पढ़ीस, वंशीधर और रमई काका की भाँति ही अवधी के सफल कवि थे। उन्होंने अवधी में कम नहीं लिखा। उनकी कृति 'हम तिनुका हन' सन् 1958 ई. में प्रकाशित हुई थी जिसकी रमई काका ने एक गोष्ठी में भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। संघर्षों ने कवि को परास्त करने की चेष्टा की थी पर वे स्वयं परास्त हो गए। कवि को अपने मिटने की परवाह रंच भर नहीं है, उसका उद्घोष सुनिये :

तपि तपि कइ जब फूलु जस, हम ई माटी माँ मिलिब,
कनु-कनु महकी, अउरु हम, अनगिन रूपन माँ खिलब।

यह उद्घोष जयघोष बन गया। वास्तव में महाप्राण निराला के महाप्रयाण ने कन-कन को महकाया है। कवि को अपनी लघुता पर गर्व है, उसे अपने अभावों पर संतोषा है, क्योंकि उसका अपना एक निराला

संसार है, जहाँ परितोष-सूर्य का प्रकाश उसका पथ-प्रदर्शन करता है :

हम तिनुका हन तउ का होइगा, हमरउ तउ हइ संसारु अपन।
तनु सूखे बनी खरहरा हम, द्वारे द्वारे का चम्मु करी,
घसियरवा खुरपिति छोलि लेइ, हरहा गोरुन की छुधा हरी।

कवि भारतीय जवानों को जगाता है। उनकी रगों के रक्त को गरमाता है और दुख की आँधियों को चीरकर आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है :

एहि माटी माँ लोटे-बढ़े कृष्ण जी, दीन्हिनि कंस पछारि।
एहि माटी माँ पनपे पले रामजी, डारिनि रावनु मारि।
न आये हउ अमरौती खाइ, करउ कुछु अइस अमर होइ जाउ।
करम की लइ हाथेम तरवारि, काल का खेदि खेदि कै खाउ।

कवि ने सच में कर्म की तलवार लेकर काल को खेद-खेद कर पछाड़ा और वह जीवट की जिन्दगी जिया। जीते सभी हैं पर जीने की दिवाकरी टेव विरले में ही होती है :

जिन्दगी है जीवट की नाउ, बना मुर्देन के हेतु मसान।
अरे! तुम मनई हउ कुछु अइसु, करउ, जो जग मा बनउ महान।

दिवाकर जी ने अवधी में कुछ ऐसे गीत भी रचे हैं जिनमें प्रकृति के नाना रूपों के अनेक मोहक चित्र हैं। सावन-भादौं की काली रात और टप-टप चुवइ ओरउनी–ऐसे में बिरहिन का जियरा कैसे काँप रहा है :

भादउँ केरि अँधेरिया, दियना काँपि रहा।
बिरहिनि का मनु उड़ि उड़ि, नभ का नापि रहा।
पाती पढ़ि पढ़ि स्वांचइ, कब धउँ राति कटी।
अच्छरु-अच्छरु सिसकइ, हिया पसीजि रहा।।

दिवाकर जी अपने जीवन में गाँधीजी से बहुत प्रभावित रहे। वे मानव द्वारा मानव के शोषण के विरोधी थे। उनकी दृष्टि में मानव-मानव में भेद न होना चाहिए। उनकी ये पंक्तियाँ पठनीय हैं :

मनई-मनइम भेदु भला कस, सब तौ याक समान हँईं।
जनमु मरनु सुख दुखु तउ निहचय, आवन जावन हार हँईं।
बिरथा बातैं ऊँच नीच की, घट घट माँ भगवान हँईं।।

कवि परोपकार की भावना का पोषक है। वह जन-जन में परहित की भावना भरना चाहता है। गोस्वामी जी की 'परहित सरिस धर्म नहिं भाई' की भावना कवि के हृदय में विराजमान है। वह सब का आह्वान करता है :

परहित माँ जो तुम रइहउ, जसु फैली संसारु माँ।
जिनका चित्तु रमा समता माँ, जग माँ वहै महान हँईं।।

आचार्य विनोबा भावे के भूदान, श्रमदान, ग्रामदान आन्दोलन ने कवि को प्रभावित किया था। कवि श्रम के द्वारा दरिद्रता को नष्ट करना चाहता है। 'दारिदु दूर करउ' कविता में कवि श्रम के महत्व को रेखांकित करता है :

स्रम ते रसु छलकावउ, दारिदु दूरि करउ।
प्रान अन्न माँ बसईं, जवानी अन्नय माँ,
अन्नइ माँ सब टन्न, रवानी अन्नइ माँ।
बिन पेटे माँ परे न अक्किल कामु करइ,
सपने के महलन की पुखता नीव धरउ।।

कवि किसी भी देश का हो, किसी भी भाषा का हो, वह वसंत की बहार का वर्णन किए बिना नहीं रह सकता। दिवाकर जी को भी वसंत की वासंतिकता मुग्ध करती है और वे कह उठते हैं :

मह मह महकि उठी है धरती, आइ गवा मधुमास है।
बौरे आम, कोयलिया कुहकी, गूँजि उठे बन बाग हईं।
पियरि-पियरि सरसउँ हैं फूली, गोहूँ जउ बलियाइगे।
बूँद पसीना के बालिन माँ, दाना बनिकइ छाइगे।।

दिवाकर जी ने 'राति यह जाड़े की' शीर्षक कविता के माध्यम से अवध-क्षेत्र के गाँवों का अत्यन्त सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। जाड़े में खेतों की दशा का एक वर्णन पढ़िए :

तना गोहुँक बिरवा, चना मुस्क्याइ रहा।
अरहरउ झूमि रही, मटरु फुलियाइ रहा।
x x x
ऊँख के ख्यातन माँ, सियरऊ बोलि रहे,
"ात माँ छगड़िन की, भेड़हुनू डोलि रहे!

शीत में बेचारा किसान कैसे रात बिताता है, पढ़िए :

सेज पर पइरा की, कटी कितनी राती,
बिछी कथरी गुदरी, किसनऊ की थाती।

कवि एटामिक-युद्ध की विभीषिका से घबराता है। वह मानव को सचेत करता है—कहीं यह धरती जल न जाए। इसको पूर्वजों ने अपने खून-पसीने से सींचा है :

पुरिखा रहे जुगाधिनि ते स्यावत जिहिका,
ढ्यालन माँ रसु बोइ, म्वावति जिहिका।
उहिकी नमी न जाइ ऐटमी जुग मैहाँ,
सील नेह के बिरवा के, फल ते सींचउ।

'हम धरती के पूत' शीर्षक कविता में कवि ने अपनी माटी के प्रति प्रगाढ़ प्रेम व्यक्त किया है :

हम धरती के पूत, पलेन पनपेन हइ इहिकी छाँह माँ।
जनमत माटी माँ मुँह मारेन, बचपनु बीता धूरि माँ।
सबका हिरदै ते चिपकाये फरकु न तेरे दूरि माँ।
यहर जवानिकि पंख लगाइसि, उड़ि देखेन संसारु हम,
फूल मिले मुस्क्याति कहूँ, तउ काँटउ देखेन राह माँ।।

दिवाकर जी ने उद्‌बोधन गीत भी अवधी में लिखे हैं। उनका 'पंथी तुइ आगे चलु' गीत बहुत प्रसिद्ध है :

आँखिन माँ सपन भरे भोर के,
पंथी तुइ आगे चलु। पंथी तुइ आगे चलु।
अबहीं मिटी है कहाँ दुख की अँधेरिया,
हारि न जायउ कहूँ जीतइ की बेरिया।
सूखि न जाइ जन-जीवन की बगिया,
उतरि न जाइ कहूँ माथे की पगिया।।

अपनी संस्कृति के प्रति कवि की निष्ठा-भावना बेजोड़ है। अपनी संस्कृति का बखान कवि किस सरल भाव से कर रहा है:

गंगा की पावनि धारा हइ, पुरिखन के इतिहास हँईं।
घर-घर माँ तुलसी का बिरवा, घर-घर तुलसीदास हँईं।
अजउ हंस पर बैठि सुरसती, बाँटति बिमल उजासु हँईं।।

दिवाकर जी ने कम 'उजास' नहीं बाँटा। तन गला दिया पर मित्रों को कुछ भी अदेय नहीं रखा। सचमुच वे गगन के दिवाकर की भाँति स्वयं तप कर दूसरों को जीवन देते रहे। वे कितने साहसी थे, कितने बड़े परोपकारी और कितने सरल थे, यह बताने के लिए उनके ढेरों संस्मरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। उनके लिए न कोई छोटा था, न बड़ा; न कोई धनवान् था, न कोई कंगाल; न कोई मन्त्री था, न कोई सेवक--सभी बराबर थे। वे पुरस्कार प्राप्त करने के लिए मंत्रियों की कार का द्वार खोलने में अन्य कवियों की भाँति गर्व का अनुभव करने वाले नहीं थे। न उन्हें पद्मश्री का मोह था, न पारितोषिक का। वे एक ऐसे स्वाभिमानी कवि थे जो साहित्य से वैर रखने वाले राजनीतिज्ञों को मंच पर देखकर बहुत अनमने हो जाते थे। उनकी अपनी विचारणा क्या थी, यह निम्नलिखित पंक्तियाँ व्यक्त करती हैं :

हम छोटइ होइ कइ देखि सकेन, हइ बड़ा कौनु हइ दुनिया माँ।
दुख माँ, सुख माँ, अपने बल पर, हइ खड़ा कौनु इहि दुनियाँ माँ।।

दिवाकर दादा कभी दूसरे के बलबूते आगे बढ़ने वालों में नहीं थे। वे जो कुछ थे अपने बल पर थे। काश! शासन ने उन्हें भी पहचाना होता। पर कैसे पहचानता--न वे चापलूस थे, न जी हुजूरी करने वाले थे और न हाँ-में-हाँ मिलाने वाले थे। वे पक्के लोहे की छड़ थे, टूट गये पर कभी झुके नहीं। ऐसों को शासन स्वतंत्र भारत में भला कैसे पहचाने। यहाँ तो 'श्वानों को मिलता दूध वस्त्र' और 'बच्चे भूखे सो जाते हैं।'

पं. दूधनाथ शर्मा 'श्रीश'

प्रस्तुति : डॉ. राधेश्याम तिवारी

पं. दूधनाथ शर्मा 'श्रीश' पूर्वी अवधी के अनेक ख्यातिनाम कवियों में अग्रगण्य हैं। महरेवँ, पूरेवँ, जौनपुर में 1919 ई. में जन्मा यह प्रतिभा-प्रशन्ना कवि आज भी अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा एवं त्वरा से सृजन- संकल्प को समर्पित है। उनकी बहुआयामी रचनाएँ अतीव हृद्य, आकर्षक एवं कलात्मक हैं। इससे भी अधिक प्रभावक और चमत्कारी उनकी मधुर स्वर लहरी है, जो काव्यपाठ के समय श्रोता-समुदाय को चकित एवं विस्मय विमुग्ध करती है। उनके वय वर्ग में आज उनके जैसा सुकंठ गायक विरल नहीं अपितु असम्भव है। गीत, गजल, कवित्त, सोहर, उलारा, कहरवा और निरगुन उनकी भावाभिव्यक्ति के माध्यम बने हैं। उनमें वीर, भक्ति एवं करुण रस तो मिलता ही है, पर उनका प्रिय रस शृंगार है, जो सम्भवतः उन्हें जीवन संघर्षों से जूझने की प्रेरणा देता है और अब तक उन्हें जीवन्त बनाये हुए है।

श्रीश जी के शुभचिन्तकों एवं प्रशंसकों के लिए यह सर्वाधिक प्रसन्नता का विषय है कि उनका प्रथम काव्य-संग्रह 'अँजोरिया मा गाँव' प्रकाशित होकर आ गया है। परम्परानुसार इसका आरम्भ मंगलाचरण से हुआ है। साहित्यिक अवधी और जंजीराछंद में कवि ने जो वाणी-वन्दना की है, उसी से उसकी काव्य सामर्थ्य का सहज अनुमान हो जाता है -

वर दे वरदायनी मातु मेरी कविता की कला को कला कर दे।
कर दे टुक कोर कृपा की सदा वर भाव की भावुकता भर दे।
भर दे शुचि शांति की लावनता उर की इठके हठता हर दे।
हर दे हर दीन की हायलता अब शीश को भक्ति भरा वर दे।।

अपने युग और समाज की पीड़ा को पहचानना और उसे वाणी देना कवि का मूल दायित्व होता है। इस दृष्टि से 'श्रीश' जी अपेक्षाकृत अधिक जागरूक हैं। हमारे देश में प्रतिभाओं को उचित सम्मान नहीं मिल रहा है, अतः वे कुण्ठित और पलायित हो रही हैं। मूल्यहीनता से हमारा समझौता हो गया है। सद्गुण-संस्कार खोजने पर भी नहीं मिल रहे हैं। द्वेष-दुराव के इस वातावरण में साधु-सज्जनों का जीवन दुर्वह हो गया है। सुराज और रामराज्य के सपने बुने गये, विकास का ढिंढोरा पीटा गया और समृद्धि की ढेर सारी योजनाएँ लायी गयीं, पर कवि के बँटे तो फूटी कौड़ी नहीं आयी। सामाजिक जीवन की इन विसंगतियों से उसका हृदय करुणा कातर हो उठता है। प्रश्नाकुल होकर उसका भाव-गम्भीर मन पूछने लगता है -

कितने दिन अथये हैं जुग सम, कितनी घड़ियाँ अधीर हो गयीं,
कितने साज सँजोए टूटे, प्रीति पुरानी पीर हो गयी।
कितना सावन बरस गया है, गरजा-गरज के गलियारे में,
कितनी तड़पन हूक बनी है, भादौं के घन अँधियारे में।

कितनी रातें विवश हो गयीं, प्राची के उस भिनुसारे में।
ऊषा की वह मलय माधुरी, अन्हराये की खीर हो गयी।।

यह कविता युगबोध के प्रति ईमानदार है, मन से निर्मल और भावना से पवित्र है, अतः आदर्श को थोथा आवरण न अंगीकार कर वह कटु यथार्थ को सबके सामने उघार कर रख देता है। अपने निजी जीवन के दुःख के साथ वह दुनिया के दर्द को भी उसी गम्भीरता से अनुभूत करता है। जहाँ घर में भोजन-वस्त्र के लाले पड़े हों, उस निर्धन की दीवाली कैसे होगी? इसकी अभिव्यक्ति कोई भोक्ता मन ही कर सकता है -

चौडगरे पर मुन्नी, अभिशापित से लिए तमन्ना,
धूल धूसरित आह समेटे, सहमी कुटिया सजी विपन्ना।
'श्रीश' बरसती आँखें निशि में, तकती रहीं दिवाली।

इन पंक्तियों में जो 'कन्ट्रास्ट' है, वस्तुतः वही काव्य-कला का उत्कर्ष है। मानव-मन की विवशता का ऐसा कारुणिक चित्रण इस कवि में प्रायः मिल जाता है। सदैव जी-तोड़ परिश्रम करने पर भी जनता को जीवनोपाय का जहाँ अल्पतम साधन भी न मिले, वहाँ कितना गम किया जाय और कहाँ तक दुःख उठाया जाए? नेताओं के आचरण और झूठे आश्वासनों के नाते ही आम आदमी अब भी विकास की मुख्य धारा से बाहर है। कवि स्वयं उस किसान-मजदूर का प्रतिनिधि है, जो अपने पुरुषार्थ पर भरोसा करता है किन्तु जब इससे भी उसे अनुकूलता और सफलता नहीं मिलती, तो वह इसे ही अपनी नियति मान लेता है -

भुखिया पियास करी हम कमवाँ, न जानी सरदी औ न जानी घमवाँ,
बरसैल पनियाँ पछुवा झोंकारे से हू हम आपन हिमतिया न हारे।
नाँव दूधनाथ घर में कुआँ नहीं है, घरवा रसोइसाँ होत धुवाँ नहीं है
निंदिया न आवे भुखिया के मारे, गिनीला तरइया रात सुकवा निहारे।

निराला के समान 'मैं' शैली की अभिव्यक्ति और उनकी जैसी ही साफगोई 'श्रीश' जी की कविता की अपनी विशेषता है। जिनके जीवन में ऐसा विरोधाभास है, कवि उन सब से अपना तारतम्य स्थापित करता चलता है।

महँगाई, बड़े परिवार, दहेज, नशाखोरी तथा अर्थाभाव की समस्या एक नहीं, अपितु अनेक लोगों की है। कवि इनसे पूरे समाज को छुटकारा दिलाना चाहता है। आज लोगों की मनोवृत्ति बदल रही है। समाज और देश के साथ सारा संसार बाजार में बदल गया है— जे आपन व्योपरी, परिवार टूट गये, सम्बन्ध कमजोर पड़ गये, भ्रातृत्व समाज हो गया। रक्षक ही भक्षक बन गए, 'लूले तानपूरा बजाने लगे और गूँगे गीत गोविन्द गा रहे हैं। इस विषमतापूर्ण समाज में कोई भी विचारशील, भला आदमी कैसे निर्वाह करेगा, यह चिन्त्य है।

'श्रीश' जी की कविता में आत्माभिव्यक्ति प्रकट दिखाई देता है जिसमं उन्होंने अपने नौ सदस्यीय परिवार कुँवारी बिटिया, आजीविका हेतु सुबह-शाम के संघर्ष तथा धनाभाव में तीज-त्यौहार की निःसारता बेबाक बयानी की है। जहाँ जीवन की प्रश्नचिह्नित हो, वहाँ राम भी झूठे हो गये हैं। ऐसी घोर निराशा में दुर्दम जिजीविषा का यह कवि आशा का सन्देश देता है।

गृहलक्ष्मी जहाँ वित्रादि को लेकर कुछ विमुख होती है, वहाँ यह अनुभवसिद्ध कवि उद्भव सामंजस्य बिठाता है। उसे इस शाश्वत दर्शन में विश्वास है कि हर साँझ की सुबह जरूर होती है। अतः अपने पुरुषार्थ पर भरोसा करके वह भविष्य में स्वप्न के साकार होने का विश्वास दिलाता है -

सुधरी सकलिया हमार धीरे-धीरे
मनवाँ न छोट करा करा जिन गलनियाँ
समया के काटी आवा दुनहुन परनियाँ
आठ गाँव रसवा कुरसवान बनवा हो,
उड़ि जइहैं बउखा बयार धीरे-धीरे।

आधुनिकता के प्रवाह में ढह-बहकर आज गाँव गायब हो रहे हैं। भौतिकतावाद और बढ़ते वैज्ञानिक विकास ने गाँवों की सहजता और उसके आनन्दोल्लास को छीन लिया है। ऐसे में गाँव की माटी का यह कवि अपनी सनातन परम्परा एवं संस्कृति के प्रति अनन्य अनुरक्ति-संसक्ति दिखाता है, उसकी रक्षा के लिए चिन्तित है -

घुरिया में खोजल हम सुपेली मउनियाँ, पेड़वा लगाइ लेई तोरि के टउनियाँ
चिन्हिया बनाइ खेली चकई भँवरवा, सुनि लेत विनती हमार
सनई के फुलवा लगाइ लेई मथवा, सिकियाक मुनरी पहिरि लेइ हथवा
घुरिया से भरी हम सेन्हुरवा.... सुनि लेत.....

कवि का देश-प्रेम और संस्कृति बोध सराहनीय है। जहाँ हर क्षण प्रकृति अपने साथ है, मन के निर्मल और दरियादिल निवासी है, जातीय एकता एवं धार्मिक सहिष्णुता है-- निश्चयेन वह 'भारत देश न्यारा' है। इसलिए ही गौरवान्वित होकर वह कहता है-- 'हमार देसवा अउर देसन से बढ़िके'। इसके रक्षा के लिए सचेत करता हुआ सजग रहे 'भइया रहेउ होसियार' जैसा जागरण गीत गाता है। निर्धनता और कुरूपता से यहाँ का संस्कार कभी पराजित नहीं हुआ, जबकि संतोष और आत्मिक सौन्दर्य सर्दव विजयी रहे -

हरवा में हमरे फरै मोती।
हाड़े कै ठठरी तन कै कारे, माना गरीब हैं गाँव गँवारे,
पै मन मैं कारिख नहीं होती।

'श्रीश' जी प्रेम की पद्धति से पूर्णतः परिचित हैं। वे संयोग-वियोग के मनोविज्ञान के ज्ञाता हैं। जो वस्तुएँ संयोग में सुखकर लगती हैं, वे ही वियोग में दुःखदायी। कवि ने अपने एतत सम्बन्धी मनोभावों को सफलता से व्यक्त किया है और इस प्रेमाभिव्यक्ति में प्रकृति सदैव उसकी सहचरी बनी है। इसीलिए यहाँ ऋतु एवं प्रकृति की सुन्दर झाँकी भी दिखाई देती है। कभी माघ शुक्ल पंचमी को बसन्त के जन्म पर वह आनन्दित होकर सोहर गाता है -

कली-कली किलकलि कोरवाँ कियरियन के हँसि-हँसि हो रामा
रस बस भँवरा अपार, आनंद भये आँगन हो।

तो कहीं प्रिया के साथ बासन्ती छाँव में जाने की इच्छा करता है -

अमराई बौराई बासंती बाँह में,
आओ चलो चलें पिया पेड़वा की छाँह में।

किन्तु वियोग के दुर्वह क्षणों में यह बसन्त और फागुन अत्यधिक पीड़ादायक हो उठा है -

आय फागुन खलत बाटै तोहरे बिना
पीरा गहिरे पलत बाटै तोहरे बिना
हाथ फागुन लिए लोग अउरै भयेन
आपन दुनिया जरत बाटै तोहरे बिना।

स्वानुभूत होने के साथ वह वियोग परम्परापोषित भी है, अतः प्रकृति के नाना उद्दीपन विरही की मनोव्यथा को गुणित कर देते हैं -

आइल बाटै सुधिया तोहार निरमोहिया...
मउरा बँधाये ठाढ़ आम अमरइया,
अमवाँ मा लगी सरस सरसइया... ओनवई लागी अब डार।
डारी-डारी बिरमलि काली रे कोयलिया,
बोली बोल मारैल कटार निरमोहिया...

बसन्त के अतिरिक्त शरद, ग्रीष्म और पावस भी समान रूप से विरही के लिए कष्टकारी बन गये हैं। पावस में सावन का महीना सावधि व्यग्र-व्याकुल बनानेवाला हो गया है -

साज के सिंगार सब साज भरी सखियाँ
गावैं हैं सावन सुहाग भरी अँखियाँ
बिरह भरा मोर मन, कलपै है रात-दिन
नैनों ने धरी निठुराई है, याद तेरी आई है।

सावन के कजरारे काले बादल मेघदूत के विरही यक्ष का स्मरण कराने लगते हैं -

देखि घटा घन स्याम निराले किलकै मोरवा बन में
नाचे केकी संगवा लइके कमवाँ उकसइ मन में
झिल्ली झमकि करै झनकार बदरा....
आवा बरसा न करा तू अबार बदरा।

कवि ने प्रकृति का सहारा मात्र भावोद्दीपन के लिए ही नहीं लिया है, अपितु इसके प्रति उसका सहज हार्दिक लगाव है, उसके अन्तस् में इसके लिए स्वाभाविक अनुराग है। तभी वह इसका सूक्ष्म निरीक्षण कर छायावादी कवियों की भाँति आलम्बन रूप में सुन्दर चित्रांकन करता है -

बड़ा नीक लागै अँजोरियाँ मा गाँव,
धीरे-धीरे उतरि के चली है अँजोरिया,
अस नीक लागै जइसे सजल सुगोरिया,
चली आवै धीरे-धीरे धइ-धइ पाँव। बड़ा नीक लागै.....

'श्रीश' जी की रचनाओं का भावपक्ष जितना ऋद्ध-गम्भीर है, उनका कलात्मक सौन्दर्य भी उतना ही हृद्य एवं विस्मयकारी है। यथावसर कवि की भाषा सहज आलंकारिक हो गयी है। उसकी रचनाओं में प्रायः प्रमुख अलंकारों के दर्शन हो जाते हैं। वे इस प्रकार हैं :

अनुप्रास : 1. *देखि हरियरी हिय हर्षित होइ लौटा घर खेतिहरवा।*
2. *दर-दर दादुर टर-टर टेरे सुधि-बुधि खोये तनकै।*
3. *छनदा छन-छन आवै छनही छन छिपि आवै।*
4. *झरी लागि झींगुर झनकारे रहि-रहि जुगनू चमकै।*
5. *कितने हुए अबोल बोल के बरबस ही बौराये से।*

रूपक : *प्रेम जाल में परिगै सँफरी प्रीतम पानी भागे।*
विरोधाभास : *घरवाँ रसोइहाँ होत धुवाँ नहीं है।*
यमक : *कितने कजरारे अनखाये-अनखाये हैं अनखाये से।*

मानवीकरण : *गावौला अटरिया मल्हार धीरे-धीरे।*

कवि की भाषा में लाक्षणिकता एवं सांकेतिकता भी पायी जाती है, जो समर्थ भाषा की एक विशिष्ट पहचान है -

1. *उड़ि जइहै बउखा बयार धीरे-धीरे।*
2. *जिनगी भइल तिन पतिया।*
3. *गिनती के चार भइल गतिया।*

कविता में कवि ने 'शम्भु कै सवारी' तथा भैरो जैसे शब्दों का प्रयोग करके कूट शैली का भी प्रयोग किया है। उसकी अवधी में संस्कृतनिष्ठता तो है ही, इसके साथ ही ठेठ शब्दों का प्रयोग भी उसने किया है; जैसे-- नकुवान, मुरहा, पुरहर, अनेसवा, हुड़कत, खनवइया, पिछलहरी, ओदरइ, गोडिया, गौगा आदि। यत्र-तत्र 'तेरह कातिक तीन अषाढ़' जैसी कहावतें भी मिल जाती हैं। कवि जानता है कि मुहावरों का प्रयोग भाषा की सामर्थ्य एवं धार को बढ़ावा है, पैनी करता है। अतः उसने इनका बहुलता से प्रयोग किया है। ये इस प्रकार हैं-- कोदौ दरना, सपना होना, नाक पर मक्खी बैठना, पीछे पड़ना, दिगम्बर होना, परदापानी रहना, नाम धराना, द्रौपदी का चीर होना, आग लगना, बोली बोलना, अंधे की खीर होना, खून पसीना करना, कला करना, छाती का होना, कचूमर निकलना आदि।

कवि की भाषा में बिम्बों का भी सफल प्रयोग हुआ, इनमें चाक्षुष, स्पर्श एवं नासिम्य बिम्ब अधिक हैं। ये बिम्ब भाव, अथवा व्यक्ति का जीवन्त चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ है। एक सुन्दर श्लिष्ट बिम्ब का उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है -

भाव विभाव लाज भय राखे पहुँची आइ दुवारे
गगरा-गगरी बखरी राखिसि रसरी अनत पोवारे
झुकि के झाँकेली ओरवा, रसरी काँधे पै धरे।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'श्रीश' जी का लोकानुभव बड़ा व्यापक है। सच को सच कहना ही उनका जीवन-दर्शन है। वे निश्चयेन एक प्रयोगधर्मी रचनाकार हैं। भाषा भाव एवं अभिव्यंजना शैली में बेजोड़ हैं। उनका लोकजीवन एवं जनभाषा का लगाव सराहनीय है। वस्तुतः उनकी कविता जग की कविताई नहीं है। वह सायास रची नहीं जाती, अपितु अनायास रचती जाती है, यही सच्ची कविता है। वर्ण्य विषय एवं काव्य रूपों के वैविध्य के नाते वे आधुनिक अवधी के 'आल राउण्डर कवि' कहे जा सकते हैं।

डॉ. माधवप्रसाद पाण्डेय

अवधी के हस्ताक्षर कवि : असविन्द द्विवेदी

डॉ. माधव प्रसाद पाण्डेय

स्वर्गीय श्री असविन्द कुमार द्विवेदी का जन्म 20 अक्टूबर 1958 को अफोइया, सुलतानपुर में हुआ था। संस्कारशील वैष्णव परिवार में जन्म लेने के कारण बचपन से ही उनमें कविता के प्रति लगाव और काव्य-प्रतिभा विद्यमान थी। सहज कवि तो वे थे ही, स्वाध्याय एवं अभ्यास से उनकी यह कला उत्कर्ष पाती गयी। फलतः वे परमहंस चालीसा, बूँदा-बाँदी, तपःपूत राजर्षि रणञ्जय, आँधी तथा वाह रे पवन पूत जैसी उत्कृष्ट अवधी काव्य कृतियों के कृती रचनाकार बने। संसार में मनुष्य-जन्म दुर्लभ है, विद्यावान होना उससे भी कठिन है। इसी प्रकार कवि बनना सहज सम्भव नहीं और प्रतिभा या कवित्व शक्ति की प्राप्ति तो बड़े सौभाग्य से होती है-

नरत्त्वं दुर्लभं लोके, विद्या तत्र सुदुर्लभा।
कवित्त्वं दुर्लभं तत्र, शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा।।

यह सुखद आश्चर्य है कि अनन्त जन्मों के पुण्य-फल के नाते असविन्द जी को यह सब एक साथ मिला। उनमें मन, वाणी एवं कर्म की एकता थी। उनके जैसा साधुशील, सत्त्वोज्ज्वल महामानव कम दिखाई देता है। इस कवि मनीषी का निष्काम वैष्णव व्यक्तित्व सचमुच कहीं सांसारिक राग का स्पर्श नहीं करता-

चाह मुझे सुख की न कभी, नहिं चाह बनूँ कभी काम का सेवक।
चाह नहीं जग मान करे, अरु चाह नहीं बनूँ दाम का सेवक।
चाहत हौं नहिं बुद्धि विवेक, न चाह बनूँ कभी नाम का सेवक।
चाह इहै सियराम के धाम के साथ बनूँ सियराम का सेवक।।

सन्तों जैसी इस आत्म स्वीकृति और विनम्रता में जितनी साफगोई है, उसमें किसी को संशय नहीं होना चाहिए। तुलसी की भाँति ये रघुवीर के चाकर होकर नर की मनसबदारी को नकारते हैं। उनकी यह उदात्तता और परिष्कृति उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, जो उन्हें असाधारण बनाती है। वे करुणापरायण, द्रवणशील और परदुःखकातर हैं। उनमें हर घर का अँधेरा दूर करने की चाह है। पर सेवा, परोपकार एवं मधुर वाणी से जो औरों को अपना बनाता चलता है, ऐसे कवि का एक अनन्य सामान्य जीवन-दर्शन है, जो सर्वग्राह्य एवं सर्वसुलभ नहीं है -

अनुरागी भगवान के, सहज राम के दास।
काम क्रोध मद लोभ सब, नहीं अधिक जेहि पास।
नहीं अधिक जेहि पास, सदा औरन उपकारी।
सेवा करैं सबन की, बानी जिनकी मंगलकारी।
कह कविवर असविन्द, धन्य सोइ पुर बड़भागी।
जहाँ बसैं नरसिंह, सकल मानव अनुरागी।।

फिर जिसे दुनिया से कुछ लेना-देना न हो, उसे डर किस बात का। न गलत करेगा, न किसी को वैसा करने की छूट ही देगा। कबीर की भाँति आँख पसारकर चतुर्दिक गाँव, समाज और देश की विकृतियों को वे देखते हैं। सांस्कृतिक पतनशीलता, अनास्था, भ्रष्टाचार और मूल्यहीनता के लिए उत्तरदायी तत्त्वों की वे जमकर खबर लेते हैं। वर्तमान सामाजिक परिवेश, यहाँ की विडम्बना-विद्रूपता उन्हें विचलित करती है। अतः एक सजग साहित्यकार के दायित्त्वबोध से भावित होकर उन नाना विसंगतियों के प्रति वे अपना प्रचण्ड आक्रोश व्यक्त करते हैं। आम आदमी का हिस्सा हरण करनेवाले तथा लोकव्यापी अव्यवस्था में भागीदारी निभानेवाले जो भी हों, कवि के व्यंग्य-बाण से कोई बचता नहीं है –

माना बात चहै न माना, डेर लागै अब देख के थाना,
हियाँ न्याय कै कर्‌या न आसा, सब पैसे कै अहै तमासा,
जे तहसील कचेहरी बाबू, उनके उप्पर और न काबू,
लेखपाल होइ औरै गाँठा, बिना फीस कै उठै न लाठा,
खेतिहर का सुख नहीं बदा बा, गर्मी बरखा जाड़े भैया,
राम दोहाई पाँड़े भैया।

अस्सी प्रतिशत किसान-आबादी के नाते ही भारतमाता ग्रामवासिनी कही गयी है। यहाँ का गरीब खेतिहर-मजदूर ही जनसामान्य है। स्वाधीनता के बाद से ही अनेक भगीरथों ने उनके उद्धार के लिए गंगा-धार लाने का वायदा किया था, पर वह सदैव यहाँ के धन कुबेर-शिवशंकरों के जटाजूट में ही उलझ कर रह गयी। ऐसे में जब उसके धैर्य का बाँध टूटता है, तो वह प्रश्नाकुल होकर देश के उन कर्णधारों से पूछता है -

कब ताईं अइसे रहबै हम?
ई देस तरक्की किहिस ढेर, मुल हम तौ होंई परा अही।
टुटही झोपड़ी हड्डही देंह, बस मरा नहीं अधमरा अही।
आपन तन पेट काट के हम, देसवा का सदा जिआई थै।
मुल वोहकी नेकी के मानै, दुई गारी सबसे पाई थै।
हे देसवा के चौकीदारौ, दुख अइसे कब तक सहबै हम। कब ताईं.....
बगदाई थै मेला ठेला, लरिकन का अबै अठन्नी से।
गुल्लइयै हमैं सिरोमन बा, हम काटी पेड़ नहन्नी से।
हमरौ बेटवा खुब पढ़ै लिखै, हम रही यही अभिलाषा मा।
मुल ई सब सपनै जान परै, दिन बीतै सदा निरासा मा।
बज्जर कै छाती लेहे भला, कब ताईं अइसे डहबै हम? कब ताईं...

असविन्द की कविता की इस सामर्थ्य और शक्तिमत्ता की जितनी अधिक प्रशंसा की जाय, उतनी ही कम है। यह मुर्दे में प्राण फूँकती है, चेतना की चिनगारी को भड़काकर क्रांति की ज्वाला जगाती है। इन्हें पढ़कर क्रांतिधर्मी कवि दिनकर तथा उनकी कविताओं - ओ नदी, समर शेष है तथा दिल्ली की याद ताजा हो जाती है। विचार-परम्परा से यह कवि निराला, दिनकर, प्रेमचंद, नागार्जुन, मुक्तिबोध, त्रिलोचन और गोरख पाण्डेय से सीधा मिलान करता है। गजब का आक्रामक उसका तेवर, अद्‌भुत है उसका अग्निज्वाल आक्रोश ! ऐसा इंकलाबी स्वर आधुनिक अवधी में दुर्लभ होगा–

अब सँभर जाउ आखिरी अहै, नाहीं हमहूँ हड़ताल करब
आँखी से आँखि मिलौबा ना, जौ आपन आँखी लाल करब

गरियाय देब ई जान लेहा, जौ कतहूँ टाँग अड़उबा तू
लुहुकार दियब कूकुर तुँहुका, जौ वोटवा माँगै अउबा तू
असविन्द बनब अर्जुन देखा, हाथे मा धनुहा गहबै हम। कब ताईं....

समकालीन समाज और देश के विकास में सबसे बड़ी बाधा है यहाँ का लोकव्यापी भ्रष्टाचार। भौतिकता की अंधी दौड़ में 'शार्टकट' अपनाकर प्रायः प्रत्येक व्यक्ति यथाशीघ्र धनवान और तथाकथित बड़ा बनने के प्रयास में लगा है। छल-छद्म, स्वार्थ और पापाचार ने उनकी आत्मा को मार दिया है। सब झूँठ-फरेब की सीढ़ी लगाकर ऊँचे चढ़ने को आतुर हैं। ऐसे में असविन्द का संस्कारशील मन विक्षुब्ध-विचलित होकर पूछता है-

के अब हरिश्चन्द बा बोला?
यक दुइ जन कै गिनती नाहीं, झुट्ठा भवा मुहल्ला-टोला।
वही का खनैं वही का भाठैं, अँधरू बरैं पड़उनूं गाठैं
केहू न बा दूधे कै धोवा, सबन पसेरी मा कुछ चोवा
अँधरे माँ कुछ काना राजा, आपन अहैं बजावत बाजा
शासन कर्त्ता हैं सब तगड़ा, शासन मुला होइ गवा लँगड़ा
पीके चौरस्ता पै माता, टाँगे गाँधी वाला झोला। के अब........
बड़ मनई अधिकारी नेता, दुराचार के यई प्रणेता
ये काहे यह का दुरियावैं, यह की जाती पूजा पावैं
नेतन से उपजी बरबादी, सारा पाप पचावै खादी
जियो बहादुर प्यारे नेता, भूख औ भ्रष्टाचार प्रणेता
लूट पाट ल्या जब तक बाट्या, जानी कब बदलै ई चोला। के अब....

व्यक्ति का चरित्र, संस्कार, आस्था-आचार सब पतनोन्मुख हो गया है। 'कबिरा आप ठगाइए' का सोच पुराना पड़ चुका है। गली-गली जब रावण बढ़ रहे हों, घर-परिवार सब बिखराव और टूटन झेल रहे हों, ऐसे में संवेदनशील कवि और समझदार आदमी का जीना दूभर हो जाता है। इस चतुर्दिक के संत्रास को झेलकर, कुण्ठा एवं तनाव से ग्रस्त होकर वह दिङ्मूढ़ और अवाक् रह गया है -

आयगा ऐसा जमाना का कही, कुछ नहीं केउकै ठेकाना का कही
देस के बारे मा जौ सोचा बिचारा, होइ सकै न हजम खाना का कही
स्वार्थ मा अब होइ गवा हर व्यक्ति अंधा
चार सौ बीसी दलाली घूस कै बस घृणित धंधा
भार अपने आदमी का भार लागै लाग
होइ गवा हर व्यक्ति के अब यहि तरह कमजोर कंधा
x x x
पतझार मा अनबन भै कुछ मधुमास मा धोखा मिला
हर आदमी के खास ही के पास में धोखा मिला
कान छेदागा वही कै लोभ मा जे मीठ खाइस
आज तक जेका मिला बिश्वास मा धोखा मिला
x x x
घर कै लखैं परदेस से आवत अहैं भइया
उनकै मिली असविन्द केवल लाश माना का कही।

असविन्द जी की रचनाओं में पदे-पदे युगबोध एवं यथार्थ की झलक मिलती है। उनका निर्भय-निष्पक्ष वस्तुवादी दृष्टिकोण पूरी साफगोई और बेबाकी से इनमें उजागर हुआ है। देश में काले धन्धे, लूट-खसोट एवं घूस की भरमार है। हर कोने घोटाला और हवाला जोर आजमाइश में लगा है। घूस अब अन्याय न रहकर 'अन्य आय' बन गया है। वह अन्तिम को पहला तथा नहले को दहला बनाने में समर्थ है। न्याय पैसे पर बिक रहा है। अस्पताल, थाना, कचहरी तथा अन्य कार्यालय 'सुविधा-शुल्क' के सहारे ही चल रहे हैं। इस घूस की आत्मकथा को कवि ने बड़े ही व्यंग्यात्मक लहजे में अभिव्यक्ति दी है -

वोहकै वतनै कल्याण करी जेकरे अंदर जस भक्ती बा
हम झूठ का सही बनाय देई हमरे अंदर ऊ सक्ती बा
हम निराकार नारायण अस पूरे देसवा मा व्यापा ही
हर गलत कार कै जड़ हमहीं हम भ्रष्टाचार कै पापा ही
कुछ ऐसेव भक्त हमार अहैं ऊपर से पूरा गऊ अहैं
चेहरा से बना प्रयाग रहैं अन्दर-अन्दर लखनऊ अहैं।

कवि जानता है कि घूस एक ऐसा कैंसर है जो भीतर-भीतर देश को जर्जर बना रहा है। फिलहाल तो यह लाइलाज लगता है, किन्तु वह इसका समुचित समाधान इस प्रकार प्रस्तुत करता है -

जौ अखबारन मा रोज छपै कि घूस लेवैया मारागा
मोहे मा करखा पोतागा जीतै आगी मा डारागा
ई सरकारी आदेश हुवै रक्षा की पूरी टोली से
जे घूस लेय पेलियाय दिया बिन पूछे एलजी गोली से।

उनके इस गहरे क्षोभ एवं आक्रोश से उनके अन्तस् की पीड़ा को भली-भाँति जाना जा सकता है, जिसके नाते वे अत्यन्त शिष्ट-सरल होकर भी 'धूमिल' जैसी भाषा का प्रयोग करने लगते हैं।

आज राजनीति का अर्थापकर्ष हो गया है। नगर-गाँव, टोला-मुहल्ला, गली-चौपाल, मकान-दुकान सर्वत्र छोटे से लेकर बड़े तक इसकी चर्चा में मशगूल मिलते हैं। कवि का विश्वास है कि हमारे देश में मन्दिर-मस्जिद का झगड़ा, काशी, मथुरा तथा अयोध्या की समस्या इसी की देन है। इसमें झूठ बोलनेवाला तथा चापलूस चमचा मजे में रहता है-

वारे राजनीति महरानी।
राम कृष्ण तोहरे घेरा माँ फँसा परा हैं अवढर दानी।
माने राखै चमचागीरी, झग्गर सिंह होइ गये झिंगरी
तोहरे साथे ई मजबूरी, तुहुँमा बाटै झूठ जरूरी
तू असविन्द कुलिन अस ब्यापिउ, भिड़ा रहैं ग्यानी-अग्यानी। वारे .....

आधुनिक युग के अधिकांश नेता स्वार्थी और अनपढ़ हैं। इनके पास कोई स्वस्थ निजी चिन्तन नहीं है। अपराधीकरण को बढ़ावा देनेवाले देश को दिशा कैसे दे सकेंगे, यह विचारणीय है। वे स्वयं हमारे आदर्श पुरुषों और परम्पराओं की हँसी उड़ाते हैं। अपने स्वार्थ के लिए मण्डल-कमण्डल का झगड़ा खड़ा करके ये मानव-मात्र को बाँट रहे हैं। अतः कवि इनके प्रति घोर वितृष्णा व्यक्त करता है और इन्हें हेय मानता है-

धत्तेरे गन्धइला की।
अपने स्वारथ की ताईं तू पूरा तलाव गँहड़ोर देह्या
दुश्मन मनई कै मनई भा अस जाति-पाँति का फोर देह्या
वोटे की खातिर जनता का भेड़ा की तरह लड़ाय दिया

तू वही मा खाय के छेद करा न पावा दाल अड़ाय दिया
कैसे विकास कै आस करी हम नीमी चढ़े करैला की। धत्तेरे.....

देश की समस्याओं के प्रति ये नेतागण गम्भीर नहीं हैं, फिर भी इतने शक्तिमान हैं कि विधाता की भाँति इनमें सर्वकर्तृत्त्व है। आये दिन संवैधानिक मर्यादाओं का उल्लंघन करना इनके लिए आम बात है। वस्तुतः देश को पतन के गर्त में धकेलने के लिए ये ही उत्तरदायी हैं-

जियो बहादुर वाह रे ज्वान।
लही बहादुर तोहरै बाटै, गदहौ हुवै पँजीरी काटै
अधिकारी तक तलुवा चाटै, तोहरै सारी माया आटै
कुलिन मचावा गड़बड़-सड़बड़, देश का समझे अहा दुकान। जियो....
जहाँ देखि ल्या वहीं उजहिगा, सामकूल घर कतौं न रहिगा
मानवता कै मंदिर ढहिगा, बुधुवा अच्छी जगहा लहिगा
चौबिस घंटा व्यस्त रहा तू, सोउतेव मा लागा हैरान। जियो......
टुटपुँजिहौ सम्पन्न होइ गवा, घर दुवार सब टन्न होइ गवा
दूषित तन औ मन्न होइ गवा, जेहका डपट्या सन्न होइ गवा
गुर कै कोल्हू तुहीं बहादुर चिरकुट होइगा हिन्दुस्तान। जियो......

असविन्द जी मूलतः गाँव के कवि हैं। वहीं वै पैदा हुए, पले-बढ़े। अतः उसके कण-कण से उनका राग-लगाव और सम्पृक्ति स्वाभाविक है। यह उनके रोम-रोम में रचा-बसा है। अपने सुख-दुःख, उपेक्षा-पीड़ा से भी सदैव सन्तुष्ट, सीमा और अभावों में हँसकर जीने वाला गाँव, अपनी परम्पराओं तथा सांस्कृतिक मान्यताओं पर गर्व करनेवाला 'गाँव' उनकी कविता में महिमान्वित है। वंशीधर शुक्ल की 'राम मड़ैया' की भाँति द्विवेदी जी की यह रचना ऐसा बाइस्कोप है, जिसमें झाँकने पर गाँव की सम्पूर्ण झाँकी आँखों के सामने प्रत्यक्ष हो जाती है -

गाँव मा काका दादा भार्य, गाँव कै महिमा कही न जाय
अनेकन साधू संत फकीर, गाँव कै तुलसी सूर कबीर
गाँव कै मनई बड़ा महान, गाँव कै प्रेमचन्द रसखान
गाँव के बगले भीटा ताल, गाँव मा हैं गुदरी के लाल
हियाँ कै गर्मी वर्षा जाड़, हियाँ के परब तीज त्यौहार।
गाँव कै महिमा अपरम्पार।

आज कवि को इस बात का कष्ट है कि गाँव के उस पुराने स्नेह-सद्भाव का लोप हो रहा है। नगर की चातुरी, छल-छद्म ने वहाँ के भोलेपन को प्रभावित किया है। आधुनिकता की चपेट में आने के कारण इन गाँवों को टूटन एवं बिखराव झेलना पड़ रहा है। अभाव-गरीबी के साथ आज भी वहाँ अन्धविश्वास तथा अन्य अनेक कुरीतियाँ फैली हुई हैं-

यक्कौ दिन अस कबौ न बीतै जेहि दिन हुवै बवाल न काका
पूछा गाँव कै हाल न काका।
बहुत झुठबोला बछ्छुटपापी, इरषा दोषी परसंतापी
बिटिया सुंदर भले पढ़ी बा, काका दैजा बहुत बढ़ी बा
ओनहीं आग लगावै वाले, ओनहीं आग बुझावै वाले
बड़े जोर कै चाल न पूछा, मँहगाई कै हाल न पूछा
आग लाग सागे-पाते मा, मिलै अघउवा दाल न काका। पूछा गाँव....

ये 'अघउवा दाल' तो शायद गाँव के साधारण आदमी को कभी नसीब नहीं रही। वह उत्पादक होकर भी स्वयं मोटा खाता है, मोटा पहनता है--महीन धनपतियों के हिस्से में चला जाता है। इधर देश के साथ जब गाँव की भी माली हालत कुछ सुधरी, तो वहाँ नशाखोरी जैसे अनेक दुर्व्यसन जोर पकड़ने लगे। पुरानी अमराई समाप्त हो रही है, बागवाली जमीन पर खेती होने लगी है। घनी छाँववाले पेड़ अब समाप्त हो चले हैं। गांव पर नगरीकरण, औद्योगीकरण और यांत्रिकता का जादू चढ़ गया है। यहाँ के आगत-स्वागत, आचार-व्यवहार एवं विचार में कृत्रिमता का समावेश कवि को चिन्तित करनेवाला है-

घनी पेड़ कै छाँव न काका, पहिले वाले गाँव न काका
गायब भा गंगा कै पानी, घरे-घरे मदिरा महरानी
नंबर दुइ कै धंधा फैला, मस्त वही मा मजनू लैला
बहुत जोजना छूट कै काका, चार सौ बीसी लूट कै काका
चलति अहैं असविंद गाँव मा, दीन दुखी खुशहाल न काका।
पूछा गाँव....

असविन्द जी प्रगतिशीलता के समर्थक हैं। देश की दुर्दशा और चतुर्दिक का नैतिक पतन उनसे देखा नहीं जाता। अतः वे देशवासियों का आह्वान करते हैं कि सब मिलजुलकर राष्ट्र को प्रगति-पंथ पर अग्रसर करें। हमारे अकर्मण्य-उदासीन होने से देश आगे नहीं बढ़ेगा। जड़वाद को छोड़कर नई ऊर्जा-स्फूर्ति से हम कार्य संस्कृति का विकास करें, विकृतियों को दूर करें, तभी इसका कल्याण सम्भव है -

चला सब केहू यहिरी आवा, देश प्रगति मा हाथ बटावा
बड़कू भैया सुन्दर काका, अपने घर कै झाँकी झाँका
चँदई जुम्मन अब्दुल चाचा, यहर चला अखबार न बाँचा
अरे बाप रे राम रे दैया, काव-काव सुन परत बा भैया
घर कै दशा देख के भ्राता, बहुत दुखी बा भारत माता
कौनउ करा उपाय तिलंगा, झूठै न वोहरी मुँह बावा। चला सब केहू....

कवि 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' के मर्म से विधिवत परिचित है। संसार की तरह वह सुखिया न होकर कबीर की भाँति पूरम्पूर दुखिया है, जो जागृत-चैतन्य है, अपने दायित्त्वबोध के प्रति सजग है, अतः देश की दुर्दशा पर वह रोता है। उसकी कामना है कि देश में अगड़े-पिछड़े, हिन्दू-मुस्लिम सबमें परस्पर प्रीति-प्रतीति, स्नेह-सद्भाव बना रहे, सामाजिक विषमता दूर हो और गांधी के रामराज्य का सपना साकार हो सके-

यक्कै दादा यक्कै माई, अही सब केहू भाई-भाई
केहू न केहु से बाटै नाबर, अही हियाँ सब जने बराबर
भेदभाव का मारा गोली, बोला सबसे मीठी बोली
होत नहीं कुछ धरम जात से, काम तौ केवल करामात से
सबकै हुवै विकास बराबर, अस कौनौ रस्ता अपनावा। चला सब केहू...
x x x
भले अलग सब जाति अहै, बाभन ठाकुर चमार पासी
सबकै यक्कै अहार पानी, हम सबै अही भारतवासी

कवि की दृष्टि में देश की माटी चन्दन है। अतः इस धरती पर वह किसी भी प्रकार की हिंसा का विरोध करके साम्प्रदायिक सद्भाव की सृष्टि करना चाहता है। द्विवेदी जी की उपर्युक्त उदात्त

भाव-सृष्टि से निराला की पंक्तियाँ-- 'नाई धोबी चमार पासी एक साथ सब मिलकर टाट बिछायेंगे, आओ आओ आओ' बरबस याद आ जाती हैं।

अपने देश के इतिहास एवं संस्कृति का गौरव-बोध कवि के मन में है। यह अनुपम भारत आरम्भ से ही जगद्गुरु रहा है। दुर्भाग्य से पश्चिमीकरण की आँधी के प्रभाव से आज हम 'माड' होते जा रहे हैं। यहाँ की स्वस्थ परम्पराओं के प्रति हमारा राग और आकर्षण कम हो गया है। प्रकृत परिवेश से कटकर हम नये के मोहजाल में फँस रहे हैं। सदाचार और संस्कारशीलता नये साँचे में ढल रही है। अब घर-घर पापा-मम्मी, डबलू-बबलू, रिंकू-पिंटू पाये जा रहे हैं और प्रणाम की जगह को 'गुडमार्निंग' ने ले लिया है। निष्कर्ष यह है कि हमें अपने घर की अँगनाई भूल गयी है। हमारे जीवन से आनन्द-उल्लास, मस्ती और सरसता पलायन कर गयी है। नैतिकता, आदर्श और मूल्यों का सौदा करनेवाले देश के अनेक नेताओं ने भी यहाँ की संस्कृति को बेच देने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। इससे चिंतित होकर कवि सबसे अनुरोध करता है कि वे बुराई को छोड़कर अच्छाई के मार्ग पर चलें-

बात हमार भले ई कोंचै, मुला आज हर मनई सोचै
कौनो ऐसी राह निकारै, पावै जहाँ बुराई मारै
भारत कै गौरव लौटावै, विश्वगुरू फिर देश कहावै
नाहीं तौ नेता खुरपेंची, डइहैं सारा देसवा बेंची
भारतमाता बहुत दुखी बा, रोय रही चिघ्घाड़े भैया।
राम दोहाई पांड़े भैया।

अपमिश्रण के इस दौर में वस्तु के साथ संस्कृति भी दूषित हो रही है। वैचारिक एवं पर्यावरणीय प्रदूषण भी बढ़ गया है। ऐसे में यदि हम निष्क्रिय, उदासीन और शिथिल प्रयत्न हुए, तो समाज और देश ततोधिक बदहाल हो जायगा -

रहे न उपवन कै हरियाली, अगर आलसी होइगा माली
बहुत गिरा आचरण होइ गवा, दूषित वातावरण होइ गवा
शुद्ध चीजं ना कहूँ मिलै का, भले मिलावट मासा-तोला।
के अब हरिश्चंद बा बोला।

नारियों की शिक्षा एवं रोजगार के सन्दर्भ में शनैः-शनैः प्रगति हो रही है। विसंगति यह है कि लोभियों की दुर्नीति के नाते विकसित समाज में भी वे दहेज की आग में जल रही हैं। कवि यहाँ उनके अधिकारों की पूरी शिद्दत से लड़ाई लड़ता है। किन्तु जहाँ वे आधुनिका बनने के मोह में फैशनपरस्त हो रही हैं, स्वाभाविक शील-सदाचार का लोप कर रही हैं, वहाँ वह उनके प्रति भी व्यंग्य-बाण से रमई काका की भाँति सन्नद्ध मिलता है -

काल्हि काल्हि कै बिटिया भाई, कक्कू उनकै नखरा हाई
पेट उघार न चोटी फीता, सही कहा तौ लगै पलीता
किंचौ लोक लिहाज न काका, परदा पुरदी आज न काका
दसै पाँच टू ऐसेन बाटीं, क्रीम पाउडर गाल न काका।
पूछा गाँव कै हाल न काका।

राष्ट्रभाषा हिन्दी हमारी संस्कृति की संवाहिका है, किन्तु राजनीतिक भँवरजाल में पड़कर आज उसका भविष्य प्रश्नचिह्नित हो रहा है। किसी स्वाधीन देश का इससे बड़ा दुर्भाग्य दूसरा कुछ नहीं होगा कि उसकी अपनी कोई सर्वमान्य राष्ट्रभाषा नहीं है। उसकी इस दुर्दशा के लिए देश के नागरिक और

नेता समान रूप से उत्तरदायी हैं। कवि ने हिन्दी के भविष्य के साथ देश का भविष्य जुड़ा हुआ जानकर इसके लिए गहरी चिन्ता व्यक्त की है -

नाहक नेता बना रँगाये, कोटिन खद्दरधारी
अपने घर सम्मान न पावै, आपन सग महतारी
काल्हि-काल्हि कै जोगिन जेतनी, केतनी जटा बढ़ाये
अबै तौ ई अच्छा लागत बा लेकिन कबौ गढ़ाये
बियही का फटही लुगरी ना उढ़री पहिरै सारी। अपने घर सम्मान....

असविन्द जी जन्मजात वैष्णव थे। उनके पास निर्मल विवेक और ज्ञान था, सांसारिक सत् और असत् का बोध था। उनकी कथनी-करनी में अभेद था। न वे भ्रम में थे, न दूसरों को भ्रमित करते थे। समय, सीमा और सामर्थ्य के अनुसार उन्होंने भारतीय धर्म, अध्यात्म एवं दर्शन का कार्यसाधक अध्ययन भी किया था। अतः कहीं वे मन और जीव की स्थिति को घोड़ा और घुड़सवार द्वारा तो कहीं जगत् और जीव की स्थिति को मेला और मेलहरू के द्वारा समझाते हैं। सत्कर्म को वे मुक्ति का आधार मानते हैं, अतः पाखण्ड एवं आडम्बर को वे कदर्थित करते हैं। कबीर की ही भाँति वे काजी-मुल्ला और पण्डे-पुरोहितों को चेतावनी भी देते हैं - 'करम साथ जाये न कासी अयोध्या, न कुछ काम देइहैं मदीना औ मक्का'। उनका दृढ़ विश्वास है कि सिर मुड़ाने, दाढ़ी बढ़ाने या वेश बनाने से कुछ नहीं होनेवाला है, अपितु परमात्मा को शुद्ध अन्तःकरण की तलाश रहती है -

सधुवाव केतनेउ बना बाबा अइया, बिना त्याग तप कै न कुछ होए भइया
भले सिर मुड़ावा या दाढ़ी बढ़ावा, दुसरे का छ डेउढ़े बारा पढ़ावा
मथुरा औ कासी अयोध्या क सेवा, गाँठा भले तू मुनक्का औ मेवा
बहुत नीक गावा तू चौपाई दोहा, अँतरवाली सीसी सरीरी मा बोहा
मुला यहसे उद्धार होए कबौ ना, खाबा तू परलोक मा जाय धक्का।

असविन्द की इस चेतावनी और व्यंग्य में कबीर से कम धार, तेवर और मारकता नहीं है।

भारतीय धर्म-साधना बहुदेवोपासना को मान्यता देती है। वस्तुतः 'एकं सद्विप्राः बहुधा वदन्ति' के अनुसार ये सारे देव एक ही परम सत्ता के अनेक रूप हैं। यही मानकर असविन्द जी भी आराध्य के चरणों में अपनी श्रद्धा और आस्था निवेदित करते हैं। कहीं यह ब्रह्मा, विष्णु, महेश हैं, राम-कृष्ण, गणेश और सरस्वती हैं तो कहीं यही सद्गुरु और हनुमान भी हैं। जो भी हो उनके भक्तिभाव की पराकाष्ठा 'वाह रे पवनपूत' में दिखायी देती है। यहाँ उनके भक्ति-भाव-सागर की असंख्य उर्मियाँ तरंगायित होती हैं। उनकी पवनपुत्र-वन्दना का एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है -

राम के दुवारे कै तुहीं तौ रखवारे प्यारे,
जेका चाहा तारा जेकै चाहा नाउ बोरि दया।
विनती हमार बार-बार केसरी कुमार,
एक दायीं प्रभु की कृपा कै तार जोरि दया।
मुक्ति मिलै कौनो ऐसी युक्ति तू बतावा बीर,
सोक हरा मृत्युलोक वाली डोर तोरि दया।
पढ़ै जे ई काव्य 'असविन्द' जियै सौ बरीस
छन्द-छन्द बन्द मा अमृत रस घोरि दया।।

वे मन की चंचलता से, संसार की नश्वरता से सुपरिचित हैं। जीवन और जगत् का उन्हें यथार्थ

बोध था, इसीलिए भक्ति को मात्र वे मुक्ति का सोपान मानते हैं। मुक्ति हमारे यहाँ दो प्रकार की बतायी गयी है- विदेह-मुक्ति और जीवन्मुक्ति। असविन्द जी जीवनकाल में ही सांसारिकता का परित्याग करके जीवन्मुक्ति का वरण और समर्थन करते हैं-

इहै एक बिनती करब अन्त मा हम, हियाँ कुछ न लइके मरब अन्त मा हम
नाता जौ यहि देह से छूटि जाए, तौ धरा मा धरा धन सबै छूटि जाये
तौ काहे हम अग्यान के पीछे भागी, बनी एक ईश्वर कै पक्कानुरागी
तौ करा काम असविन्द जीतेन पै ऐसे, कि जीतेन पै छोड़ा तू दुनिया कै माया।।

जिसे मृत्यु का बोध रहता है, उससे गलत कार्य होने की सम्भावना कम होती है। यह बोध इस कवि में सतत विद्यमान है। अतः उनकी वाणी संतों-भक्तों की वाणी से मेल खाती है। उन्होंने कुछ ऐसे भावपूर्ण 'निर्गुन' लिखे हैं, जो जीव की विवेक-दृष्टि खोलने में पूर्ण समर्थ हैं -

दिन तिथि आए तौ न केहू रोक पाए फिर, डोला मा चढ़ाय के बिदाई गाँव भै करे।
नीक व्यवहार यदि सबही से रहा प्रिय, गुन गाइ-गाइ के रोवाई गाँव भै करे।
असविन्द उमर ठिठोली मा बितउबू जब, बेशरम कहिके हँसाई गाँव भै करे।
करनी न नीक यदि पति न प्रसन्न भवा, मारी जाबू मदत न पाई गाँव भै करे।।

असविन्द जी की काव्य-कला का मूल्यांकन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वे सच्चे और पूर्ण कवि हैं। इसलिए कि कविता सबके कल्याण के लिए होती है, वह आम आदमी की समस्याओं से जूझती है। यह वैशिष्ट्य उनकी रचनाओं में बखूबी मिलता है। कविता तब तक सार्थक नहीं होती, जब तक वह हमारे हृदय को आन्दोलित न करे, सोचने पर मजबूर न करे और आत्मा का अतिक्रमण न करे। कवि-सम्मेलनों में वे अथ से इति तक श्रोता को अपने से जोड़े-बाँधे रहते थे, उसे विस्मय विमुग्ध करते थे। उनमें भरपूर भावुकता पाई जाती है। उन्हें मानव मनोविज्ञान का भी ज्ञान है और सच्चे भावुक कवि वे इसलिए हैं कि उन्हें 'लोक हृदय की पहचान' है। रस की दृष्टि से उन्होंने रौद्र, वीर, शृंगार, करुण, भक्ति एवं शान्त आदि का मनोरम चित्रण किया है। शृंगार उनकी 'होली' जैसी स्फुट कविताओं में तथा शेष 'वाह रे पवनपूत' में देखे जा सकते हैं। छंद और भाषा उनके वशीभूत होकर जैसे क्रीड़ा करते हैं, कविता हृदय से फूटती चलती है, वह भी अनायास। होली के अवसर पर एक विरहिणी की मनोदशा की व्यंजना करानेवाली कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

लगतै फागुन आयगें देखा रिंकूहन कै पापा
परौं झिंगुरवौ पहुँचा जब की बिल्कुल अहै बुढ़ापा
हमरे यस कै भें निर्मोही करत अहैं मनमानी
झुठिनैं हमसे कहैं कि तुँहका जिउ से जादा जानी
उनकै मौखिक प्रेम हे देवर ! बहुत बार अजमाये
जब से फागुन लाग तबै से साजन कै सुधि आये।

असविन्द जी की कविताओं का भाषागत वैशिष्ट्य भी निश्चयेन सराहनीय है। भाषा के बिम्बात्मक प्रयोग में वे सिद्धहस्त हैं। इस कसौटी पर उनकी सारी रचनाएँ खरी उतरती हैं। चाक्षुष एवं स्पर्श बिम्बों के उदाहरण स्वरूप एक बन्द द्रष्टव्य है-

कुछ दिन चढ़तै गाँव-गाँव मा चँहटा होइगा चालू
मेहररुवे सब जुटीं घरे मा आजी चुरवैं आलू

मझिली खड़ी मोहारे अपनी गोबरी लैके दउरै
छोटकी तौ सबकै मन मोहै मजा लगावै अउरै
गजब मजे मा जात रहे हैं भेड़ी मोछा ऐंठे
खुब बनइस हाथी अस टीकिस हमरे बैठे-बैठे।

इस रचना में होली का चित्र पाठक के समक्ष सहज उपस्थित हो जाता है। इस दृष्टि से उनकी- गर्मी, फिर आयगा अषाढ़, जाड़ा, आँधी, आलू, साइकिल आदि रचनाएँ पूर्णतः सफल हैं। भाषा की दूसरी विशेषता है प्रतीकात्मकता। इसमें संकेतों अथवा प्रतीकों के माध्यम से कवि अपनी भावनाओं को व्यक्त करता है। असविन्द जी ने संतों की भाँति अपनी अध्यात्ममूलक रचनाओं में अधिकांशतः इनका प्रयोग किया है-

नैहरे मा माया बहुति अहै पै दसै बीस दिन रहै का है
ससुरे से तार जबै आये अइया कै धौंस सहै का है।

यहाँ नैहर-सासुर क्रमशः लोक-परलोक के तथा अइया, यमगणों के प्रतीक हैं। इसी तरह 'बापौ की आज्ञा से छटका अही' में बाप, परमात्मा का बोधक है। जहाँ वे कहते हैं-- 'रोवाँ-रोवाँ बिकाय गा है अपनी यहि सोन चिरइया कै' वहाँ वे अतीतकालिक समृद्ध भारत के ऋण-भार से ग्रस्त होने का बोध कराते हैं। उनके अनेक लाक्षणिक प्रयोगों में भी सुन्दर प्रतीकों का प्रयोग हुआ है। जैसे -

कोयल का ना खाब अघउवा, मौज करत बा ससुरा कौवा
बगुलन के सिर ताज निहारा, हंस फिरत बा मारा-मारा।

यहाँ कोयल और हंस सज्जन-सुपात्र तथा कौवा और बगुला दुर्जन-अपात्र के स्पष्ट बोधक हैं। इसी प्रकार 'पंडै सारा घाट रोकाये झंडा आपन गाड़े भैया' में पण्डे बाहुबली, समर्थ, प्रभावशाली लोगों के प्रतीक हैं, जिनके मुकाबले कार्य-साधन में आम आदमी बेचारा रह जाता है। ऐसे भाषिक प्रयोग जहाँ भी हुए हैं, वहाँ उसमें नई प्राणवत्ता आ गई है। ये प्रतीकात्मकता इनके काव्य-सौन्दर्य को, भाषा की शक्ति को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई है।

नयी आलोचना में भाषा के मिथकीय प्रयोग को भी बहुत महत्त्व मिला है। ये मिथक प्रायः पौराणिक और ऐतिहासिक हैं, जिनके प्रयोग से भाषा की त्वरा बढ़ जाती है, धार तीक्ष्ण हो जाती है। इनसे भाषा की बोधगम्यता और व्यंजना शक्ति में भी वृद्धि हुई है। असविन्द जी ने धड़ल्ले से इनका प्रयोग किया है। जैसे-

(1) सुरसा की नाईं मुँह बाइव, कालनेमि सा रूप बनाइउ
(2) चित्त पड़ा हैं शिवाजी राणा, जयचंदन कै बजा नगाड़ा
(3) गाँव कै चेंहटा माटी, धूल, लखन के बरे सजीवन मूल
(4) असविन्द बनब अर्जुन देखा हाथे मा धनुहा गहबै हम
(5) व्यक्तित्त्व से जौ आदमी कै पद बड़ा होइगा
तौ नहीं संदेह वोहका मद बड़ा होइगा
जब ठगै का भा केहू बलि जैसे दाता का
हर बावनी भगवान कै तब कद बड़ा होइगा
(6) चला शीश शिशुपाल कै काटा, सेठ करोड़ीमल का छाँटा
मारा कंस सरीखे मामा, मदत करा जे अहैं सुदामा

इस कवि का भाषा पर जबरदस्त अधिकार है। वह भावानुरूप है और कवि की इच्छानुसार चलती

है। इसकी व्यंग्य-शक्ति इतनी प्रखर है, जिसका कोई जवाब नहीं। यह किसी भी सफल कवि की विशिष्ट पहचान है। यह व्यंग्य असविन्द जी में अपनी असाधारणता में विद्यमान है। जैसे -

(1) नौकरिहै सब सुख मा सोवैं, गंगा नहाँय औ पैसौ टोवैं

(2) पइसै कमाय कै सब उपाय, है मची चतुर्दिक हाय-हाय
झुट्ठन कै ढोलक रही बाज, है ऐसा आवा राम राज

(3) सारा धान बिकै डेहरी कै, लेकिन मान रहै मेहरी कै

अलंकार काव्य के शोभाकारक धर्म माने गये हैं। अतः ये भी काव्य-भाषा के प्रधान-स्वाभाविक गुण हैं। असविंद जी अपनी कविता-कामिनी को अलंकारों के बोझ से तो अनावश्यक बोझिल नहीं करते पर उनकी कविता में इनका सहज प्रयोग उसकी सौन्दर्यवृद्धि अवश्य करता है। इन विविध अलंकारों की उपस्थिति को हम इस प्रकार देख सकते हैं -

अनुप्रास : गंगाधर गौरीपति गौरवर्न गिरिजेस,
गिरिजा गिरीस गिरिवासी कॲ प्रनाम है।
उपमा : जस गंगा कै धारा/धोबी के दुलहा की नाहीं/टुटही नौका सी नदिया मा...... आदि
रूपक : कीर्ति कै आँधी
श्लेष : बाजा बजाना, राग अलापना
विरोधाभास : दिल तोड़ि-तोड़ि जोड़ैं समाज, गाँधी तक का गरियाय रहे
पुनरुक्ति : गाँव-गाँव मा गली-गली मा रंग बसंती छाये
रहि-रहि के हमरौ मन हुमसै/भाँति-भाँति के फूल फुलाने
यमक : (1) पुरवैया सारी सरकाये सारी रात जगाये
(2) धरा मा धरा धन सबै छूटि जाये
अतिशयोक्ति : यादि भवा बल आजु कपीस कअ,जौन कबौ ऋषि साप से मुइगा
बाज समान चला कपिराज, न देखा केहू कब छोड़के भुँइगा

मुहावरे तथा लोकोक्तियों से भाषा की सामर्थ्य बढ़ती है। असविन्द जी की कविताओं में इनका इतना बहुल प्रयोग हुआ है कि आचार्य विश्वनाथ पाठक को छोड़कर इस सन्दर्भ में कोई अन्य उनकी टक्कर में कम ही दिखाई देता है। जैसे– नाव किनारे लगना, गंगा में हाथ धोना, धाक जमाना, तलुवा चाटना, गुर कै कोल्हू होना, हवा लगना, पउवा होना, आग लगाना, गिरकिट सा रंग बदलना, नगाड़ा बजना, पहाड़ा पढ़ना, जोड़ घटाव करना, तीन पाँच होना, ढोल में पोल होना, पत्ता गोल होना, देह पिटाना, टेढ़ी चाल होना, थूककर चाटना, मछरी फँसाना, हरी झंडी मिलना, बोल जाना, नौ दो ग्यारह होना, आधे सरग में लटकना, घर का न घाट का, पाप पचाना, चटका लगना, तन पेट काटना, इज्जत नीलाम होना, ताली ठोंकना, अवतारी होना, सान बघारना, भार लगना, कीड़ा लगना, हाथ साफ करना, बगुला भगत होना, परकाय के मारना, हरिश्चंद्र होना, काल होना, दूध का धोवा, बाजा बजना, मन डोलना, बारह बजना, बारू की भीत होना, नहन्नी से पेड़ काटना, बज्जर की छाती होना, सिरोमन होना, सपना होना, खीस निपोरना, आँख लाल करना, टाँग अड़ाना, गदहा को दादा कहना, अन्धों में काना राजा, मूस मोटाय के लोढ़ा, आँधरू बरैं पड़उनू गाठैं, जीते न राधा मरे पै सराधा, मुँह मा राम बगल मा छूरी, साँप मरै न लाठी टूटै, मजबूरी का नाम महात्मा गाँधी, गदहा पँजीरी खाय, बकरी का मुँह कोहड़ा लीलै, भैंस कूदिगै पानी मा, आदि।

असविन्द जी की भाषा ठेठ या खाँटी अवधी है, जो प्रसाद गुण सम्पन्न हैं और इसलिए ही उसकी ग्राह्यता और सम्प्रेषणीयता हर आम-खास के लिए सरल-सुकर हो जाती है। जहाँ इसमें लाक्षणिकता और व्यंजनात्मकता है, वहाँ भी वह दुरूह नहीं होती। बीच-बीच में कामा, सोर्स, सेलेक्शन, एलेक्शन, प्राइवेट,

हाई, टैक्सी, जैसे अँग्रेजी शब्दों के प्रयोग से उसकी रोचकता बढ़ गयी है। इनकी भाषा अपनी अभिव्यक्ति में बेजोड़ है, इसलिए कि वह लोकमन को भाती, रिझाती और व्यक्त करती है। साधारणीकरण की कसौटी पर तो इनकी रचनाएँ अद्‌भुत ढंग से खरी उतरती हैं। मात्र पढ़ते या सुनते ही इनका भाव तुरन्त-तत्काल भावक को हृदयंगम हो जाता है। छंदों की दृष्टि से इन्होंने दोहा, कुंडलिया, कवित्त (मनहरण) तथा सवैया (मत्तगयंद) का प्रयोग किया है। उनकी मुक्तक काव्य-कला का चरम उत्कर्ष 'वाह रे पवन पूत' में दिखाई देता है। भाषा की समास-शक्ति के साथ कल्पना की समाहार शक्ति उनमें पूर्णतः विद्यमान है। अतः उन्हें कविता एवं मुक्तक-लेखन में सिद्धि प्राप्त हुई है। राम-कथा के विशेष प्रसंग में इनकी मौलिक उद्‌भावनाएँ भी सराहनीय बन पड़ी हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अपनी बहुआयामी रचनाओं के माध्यम से असविन्द जी ने हमारे सामाजिक जीवन के अनेक महत्त्वपूर्ण पक्षों का स्पर्श एवं उद्‌घाटन किया। उनकी दृष्टि में कविता चुटकुलेबाजी मात्र न होकर, गम्भीर भावों की अभिव्यक्ति है। इसलिए उन्हें आकाशवाणी में स्थान मिला ओर अवधक्षेत्र के अनेक जनपदीय कवि सम्मेलनों में उनकी उपस्थिति अनिवार्य मानी गई। उद्‌बोधन नो वे कबीर जैसा करते हैं, पर अनसुना होने पर क्षोभ भी वैसा ही व्यक्त करते हैं- 'जे बाटै कबीर अस भेया, वोह कै बात न केहू सुनैया'। वे मुक्तिबोध की भाँति अधीर आत्माओं में महाकाव्य की पीड़ा तलाशते हैं। अपनी विशेष भंगिमा में प्रगतिशील भावों को वैसे ही व्यक्त करते हैं, जैसे केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन या नागार्जुन करते आ रहे हैं। कष्ट है कि ऐसा क्रांतिधर्मी कवि आज हमारे बीच नहीं रहा। विगत 7 मई 1999 ई. को यह माटी का कवि पावन माटी में विलीन हो गया, अन्यथा अवधी काव्य और साहित्य-जगत् की ततोधिक अभिवृद्धि होती। फिर भी अपने यशःशरीर से, अपने कृतित्व से वे सदैव अमर-स्मरणीय बने रहेंगे और इस बात की प्रेरणा तथा सन्देश देते रहेंगे कि -

'और चाहिए किरण जगत् को, और चाहिए चिनगारी'।

रीडर एवं अध्यक्ष (हिन्दी विभाग)
रणवीर रणञ्जय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अमेठी-सुलतानपुर

जनकवि ओंकारनाथ उपाध्याय

मत्स्येन्द्र शुक्ल

प्रत्येक युग के जनकवियों ने अपने समाज को नयी शक्ति, स्फूर्ति तथा आदर्श मानवीय दृष्टि प्रदान किया है। जनकवि राष्ट्रीय भाव-धारा का अभिन्न अंग होता है। उसमें किसी के प्रति पूर्वाग्रह नहीं होता। वह अतिशयोक्तिपूर्ण यशगान करना नहीं जानता। वह समाज का सच्चा मित्र और सुख-दुःख में साथ चलनेवाला अनन्य सखा है। ये कवि दरबार में ऊँचा आसन पाने के लिए कभी चिन्तित नहीं हुए। इन्हें इसका भी ज्ञान नहीं कि इतिहास भी कोई चीज है जो किसी का नाम अमर कर सकता है। जो शिल्पी अहम् से मुक्त हो, सादगी के धरातल पर इस तरह खड़े हैं वे निश्चय ही जो कुछ बोलेंगे उसमें युग की आत्मा का स्पन्दन अवश्य होगा।

क्या आपने किसी पर्व या त्यौहार के अवसर पर भीड़ द्वारा गाये जानेवाले गीतों या अँधेरी रात में गाँव की सूनी पगडण्डियों पर चलनेवाले युवकों की मधुर टेर को सुना है। यदि सुना है तो इसका मतलब यह है कि आप जनकवियों की परम्परागत साधना को जानते हैं तथा उनकी सीधी-सच्ची बात से परिचित भी हैं। न कहीं नाम, न गाँव, न पता, न व्यक्तिवादी चेतना। लिख दिया केवल आनेवाली पीढ़ी के लिए कि वे अपना सही रास्ता ढूँढ़कर बिना किसी भ्रम में पड़े आगे बढ़ सकें। समाज इन अनामी कवियों के प्रति कृतज्ञ है। और यह होना भी चाहिए।

जनकवियों द्वारा कही गयी बातों को गाँव के आदमी सदैव गौरवपूर्वक उद्धृत करते हैं। इन्हें इन पर जितना विश्वास है उतना बड़े-से-बड़े ग्रन्थों पर भी नहीं है। ग्रामवासी सम्भवतः इनकी बातों में भावात्मक सामीप्य का बोध करते हैं। उपकारी और सच्चे साहित्य की यही पहचान है।

उपाध्याय जी जनकवियों की इसी परम्परा के समर्थ कवि हैं। ये उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जनपद के तवंकलपुर ग्राम के निवासी हैं। इन्होंने अपना पूरा जीवन अवधी भाषा और साहित्य के उन्नयन में खपा दिया है। इनके लिखने की गति में आज भी कोई अन्तर नहीं आया है। ये मानवता के पुजारी और वर्तमान जीवन-व्यवस्था के व्याख्याता कहे जा सकते हैं। अवध-खण्ड में इधर उपाध्याय जी के साहित्य को लेकर तमाम चर्चाएँ आरम्भ हो गयी हैं। यह उनके वैचारिक गाम्भीर्य तथा उपयोगितावादी भावालोक की उद्‌घाटन-क्षमता का प्रतीक है।

उपाध्याय जी गाँव के निवासी हैं अतः उन्होंने संस्कारानुसार गाँव की बात कहने में सहजता और सरलता का पूर्ण परिचय भी दिया है। आजादी मिलने के पूर्व और कुछ समय बाद तक जमींदारों ने समाज पर खूब जुल्म ढाया है। इस वर्ग ने गरीबी और साधन विहीनता के बीच टूटते इंसानों को सहारा देने के बदले उन्हें दलदल में दाबकर नष्ट कर देने का प्रयास किया है। क्रूर परिस्थितियों के भार से दबकर ग्रामवासियों ने सब-कुछ सह लिया है। मुख से आह तक न निकाली। किन्तु समय के बदलाव के साथ मनुष्य की ताकत में परिवर्तन आया। उसने अपने भीतर छिपी शक्ति को पहचानने की कोशिश की और

संघर्ष कर आगे बढ़ने के लिए कृत संकल्प हो गया। उपाध्याय जी ने यह सब अपनी आँखों से देखा है। अतः इन बातों को कविता में उभारने का उन्हें अच्छा अवसर मिला है।

आजादी मिलने के बाद गाँवों की उन्नति के लिए सरकार की ओर से अनेक व्यवस्थाएँ की गयीं लेकिन इसका वास्तविक प्रभाव कहीं देखने को न मिला। सारे साधन बीच ही में समाप्त हो गये और आज भी हमारे गाँव वहीं हैं जहाँ कुछ वर्ष पूर्व थे। समाज की इस दुर्गति से उपाध्याय जी बहुत क्षुब्ध हैं। वे एक रचना में पथिक को माध्यम बनाकर दिल्ली सन्देश भेजते हैं और देश में व्याप्त अन्याय, भ्रष्टाचार के प्रति दुःख व्यक्त करते हैं। बड़े राजकुमारों को क्या पता कि गाँव में क्या हो रहा है :

राही अबकी जाया कंचित दिल्ली देसवा
सनेसवा सरकार से कह्या
खोवा मेवा और मलाई पोषक अहैं सरीर
सिरफ सान्ति से काम चलावैं साधू और फकीर
शासन चलतै नाहीं पूजे गौरि गनेसवा।
जरै नाहिं उसरौरी मन्तर पढ़े हजारन बार
घटे गरीबी कहे-कहे हरगिज ना ओंकार
भइया ग्पज बढ़े ना लाख दिहीं उपदेसवा।
सनेसवा सरकार से कह्या।

दिल्ली देश की राजधानी है, जनता के प्रतिनिधि वहीं रहते हैं। मगर वे चुनाव के बाद गाँव को वैसे ही भूल जाते हैं जैसे उधार खानेवाला आदमी किसी दूकान को। राष्ट्र की प्रगति के लिए यह शुभ लक्षण नहीं है। उपाध्याय जी प्रजातंत्र को स्वस्थ रूप देने की दृष्टि से दोनों के बीच सामीप्य का होना आवश्यक मानते हैं।

भारतवर्ष की भौगोलिक स्थिति पर्याप्त विचित्र है। कृषि-प्रधान देश होने के कारण यहाँ की समृद्धि वर्षा पर निर्भर है। वर्षा के अभाव में यहाँ के आदमी को प्रायः संकट का मुकाबला करना पड़ता है। भारतीय किसान एक तो वैसे ही मजबूरियों में फँसा है, दूसरे ये समस्याएँ सामने आकर उसका जीना मुश्किल कर देती हैं। एक गीत में कवि ने सूखे का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। मार्मिक शब्दों का प्रयोग देखने लायक है :

झूरा परा देश मा सोहा भई सेंवरिया
डगरिया उड़े धूरि सजनी।
सन् पैंसठ के गई जुलाई, आवा अगस्त महीना
बूँद एक ना हेठे आवै, मुश्किल होइगा जीना।
नदिया रेता घटा, कूप जल अहै न तलवा पानी
सुरुज किरन से देहिया सुलगै, नसिगै सगर किसानी।
चौमुख उठत बवंडर मनकति बा दुपहरिया
डगरिया उड़ै धूरि सजनी।

जनकवि देश की समस्याओं पर चिन्तन करना अपना कर्तव्य समझता है। ओंकार जी में यह बात विशेष रूप से दिखायी पड़ती है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जब हम अपने उजड़े घर का नव-निर्माण कर रहे थे, तो जाने क्यों यह बात पड़ोसी देशों को पसन्द न आयी। शायद उन्हें हमारी कमजोरी ज्यादा प्रिय थी। यह बात चीन और पाकिस्तान के सम्बन्ध में कही जा रही है, जिन्हें भारत सदैव अपना भाई समझता रहा है। स्वर्गीय नेहरू ने एकता और शान्ति का बहुत नारा लगाया, साथ चलने की कोशिश भी की, मगर शत्रु के दिल पर कोई असर न पड़ा। सारे आदर्शों तथा सिद्धान्तों को एक तरफ रखकर चीन ने सन्

बासठ में भारत पर आक्रमण कर ही दिया। हमने पूरी ताकत से आक्रमण का मुकाबला किया और लाचार होकर चीन को अपनी सीमा में वापस लौटना पड़ा। यह आक्रमण घातक जरूर था किन्तु इस घटना से समूचा देश चौकन्ना होकर हर परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए तैयार हो गया। कुछ दिन बाद पाकिस्तान का आक्रमण हुआ। इस बार हम अधिक साधन सम्पन्न थे, फलतः पाकिस्तान को मुँह की खानी पड़ी। ओंकारनाथ उपाध्याय ने इन तमाम बातों को सबल रूप में विवेचन किया है। यही नहीं, इन घटनाओं के प्रति अवध-प्रदेश के नागरिकों की प्रतिक्रिया का भी कवि ने उल्लेख किया है। पूरा देश दुश्मन का मुकाबला करने के लिए किस तरह तैयार हो चुका है, एक नमूना इन पंक्तियों में देखिए:

धरती डोले उगिले आगी आसमनवाँ
चरनवाँ लेकिन पीछे ना हटे।
खेद चीन जब लग ना देबै, तब लग नाहीं चैन,
करत रहब संग्राम सम्हरि के, समर भूमि दिन रैन।
तिल-तिल कटे देह औ होये घाव निसनवाँ।
धरती डोले उगिले आगी आसमनवाँ।

उपाध्याय जी ने कौटुम्बिक जीवन की समस्याओं का भी उल्लेख किया है। मजदूरी के सहारे जीनेवाले आदमी के लिए प्रतिदिन की मजदूरी के अलावा कोई दूसरा आधार नहीं रहता। बैठक के दिन पूरा परिवार उपवास करने के लिए मजबूर रहता है। कोई स्त्री अपने पति से कहती है कि तुम मेहनत करते हो और अच्छी-से-अच्छी चीजें तैयार करते हो। तुम्हारा मालिक मौज की वंशी बजाता है। सावन-भादौं के महीने में वर्षा के कारण छप्पर चूता है। हमें अनेक संकट घेरे हैं। इन समस्याओं पर विजय पाना कठिन लगता है। यह कहकर वह अपने पति को उलाहना देती है :

लरिका भूखन रोवैं, अहै न घर मा दनवाँ
सजनवाँ जनमत मरि न गया
तन पर बाटे फटी लुगरिया, रोवत कटै रहनियाँ
वर्षा चुये बखरिया चौमुख तोहरी चाल चलनियाँ।

ये विचार जन-जागरण की दृष्टि से बड़े महत्व के हैं। जब तक हम आत्मनिर्भर नहीं हो लेते तव तक यातना के चक्र से मुक्ति पाना मुश्किल है। इसके लिए समस्या से जूझना ही एक रास्ता रह गया है। सचमुच कितना बड़ा मजाक है कि आजाद होने के बाद भी हम रोटी के लिए रोते-बिलखते नजर आ रहे हैं। कौन सुने गरीब आदमी की कहानी। जो जहाँ है वहीं कील की तरह गड़ा आकाश ताक रहा है।

उपाध्याय जी रूढ़िवादी नहीं हैं। इसका मतलब यह नहीं कि उन्हें भारतीय परम्पराओं पर विश्वास नहीं है। वे हर पुरानी बात, जो अच्छी है उसे स्वीकारते हैं किन्तु नवीन रास्तों और सिद्धान्तों को भी साथ लेकर चलने के हिमायती हैं। प्रगतिशील जनकवि का यही लक्षण है। समाज या सरकार ने इस दिशा में जो भी कदम उठाये हैं, उन सबको उन्होंने पूर्ण समर्थन दिया है। सम्भवतः इसी परिप्रेक्ष्य में उपाध्याय जी ने परिवार-नियोजन की चर्चा की है। इस व्यवस्था को अपनाने में उन्हें राष्ट्रीय कल्याण की सम्भावना ज्यादा दीखती है। उपाध्याय जी हर बात को अपने पैमाने पर समझने का प्रयत्न किये हैं इसीलिए अन्य जनकवियों की तुलना में वे अधिक मौलिक और प्रासंगिक लगते हैं।

देश की वर्तमान आर्थिक विसंगतियों पर भी कवि ने विचार किया है। योजना के बाद योजना, जाने कितनी योजनाएँ बनती जा रही हैं फिर भी विभिन्न प्रकार की समस्याएँ अपने मूल रूप में ज्यों-की-त्यों मौजूद हैं। गरीब मजदूर कारखानों और फैक्टरियों में, चिलकती धूप में सड़कों पर जी-तोड़

काम करते हैं किन्तु उन्हें इतना भी नहीं मिल पाता कि वे अपनी शरीर को सही-सलामत रख सकें। मजदूरों के प्रति मालिकों का व्यवहार अच्छा नहीं है। इस बात को कवि जानता है। एक गीत में यातना-चक्र का चित्र देखिए :

होइगा देसवा सुखारी, हम भिखारी रहि गये
बारह घण्टा के करी नौकरी, तब पाई बीस आना
पाँच मिनट चूकि गंये से, मना है अन्दर जाना
बाबू कहैं पुकारि पुकारी, हम भिखारी रहि गये।

देश में व्याप्त घोर असन्तुलन पर जोर देने के लिए कवि ने स्वर्ग-लोक में महात्मा गाँधी, जवाहर लाल नेहरू तथा लाल बहादुर शास्त्री के बीच एक वार्ता करायी है। इस वार्ता में वे बातें बड़े साफ पैमाने पर उभरकर सामने आयी हैं जिन्हें हम रोज के जीवन में अनुभव कर रहे हैं। कवि की भाषा पूरे प्रवाह में भावों के साथ आगे बढ़ी है। फलतः अभिव्यक्ति में पर्याप्त बल आ गया है :

पूँछे शास्त्री जी से गांधी के समनवाँ
वतनवाँ के हाल नेहरू।
कसत विदेसिन से समझौता कइसे अहै नगरिया,
हाल कहा मजदूरन केरी ढंग काउ व्यापरिया,
कउनी नीति चलत बा पूँजीपतिन करनवाँ।
पूँछे शास्त्री जी से गाँधी जी के समनवाँ।

जनकवि का मुख्य उद्देश्य समाज को सजग बनाना और उसमें नवचेतना का संचार करना है। इसीलिए वह जनता का विश्वास-पात्र होता है। गाँवों में क्या हो रहा है, वहाँ के आदमी किस तरह जीवन व्यतीत कर रहे हैं या उन्हें अपने अस्तित्व के बचाव के लिए किन स्तरों पर जूझना पड़ रहा है--इन बातों का सही ज्ञान जनकवियों की रचनाओं से ही मिल सकता है। साफ-सुथरी भाषा में सहज एवं लालित्यपूर्ण उद्गारों का अक्षुण रूप देखने योग्य है।

ओंकारनाथ उपाध्याय की रचनाओं में जितना नये जीवन सन्दर्भों का तनाव है, उतना या उससे भी अधिक भावों का कसाव है। वे किसी बात को ऊपरी सतह के आधार पर नहीं कहते, वरन् भीतर प्रवेश कर उसकी मूल आत्मा को आन्दोलित करते हुए नये अनुभवों का रत्नमाल लेकर बाहर आते हैं। यही कारण है कि उनकी हर कविता में जीवन के नैरन्तर्य का बोध मिलता है। उपाध्याय जी नाना पूर्वाग्रहों से भी मुक्त हैं जबकि ग्रामीण अंचल के कवि प्रायः इस जाल में उलझ जाया करते हैं। राजा हों या जमींदार, नेता हों या अधिकारी---जहाँ भी इन्हें किंचित दोष का आभास मिला है उसे कहे बिना नहीं रहे हैं। जिस जनकवि में सीमातीत आत्मविश्वास होगा, वही इस तलवार की धार पर खरा उतर सकता है।

उपाध्याय जी ने शुद्ध अवधी भाषा का प्रयोग किया है। उसमें मिलावट या टूटन की प्रवृत्ति नहीं है। भाषा-प्रयोग की दृष्टि से यह उनकी बहुत बड़ी उपलब्धि मानी जाएगी। यद्यपि यहीं यह भी बता देना जरूरी है कि वे मौज में कभी-कभी खड़ीबोली या उर्दू में भी कविताएँ लिख लिये हैं किन्तु इनकी संख्या बहुत कम है और रचनात्मक वैशिष्ट्य की दृष्टि से विशेष महत्त्व भी नहीं है। शब्दों का पर्याप्त ज्ञान होते हुए भी उपाध्याय जी ने प्रयोग की दिशा में सम्यक सतर्कता दिखाई है। अपने उत्तम साहित्य, प्रखर भाषा, ओजस्वी-प्रवाहपूर्ण शैली तथा मौलिक उद्भावनाओं के कारण अवधी जनकाव्य की स्वस्थ परम्परा में उपाध्याय जी सदैव गौरवपूर्वक उद्धृत किये जायेंगे। उनका साहित्य समाज को निरन्तर प्रकाश देता रहेगा, मुझे इस बात का पूरा विश्वास है।

अवधी के श्रेष्ठ कवि पं. मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज'

आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप'

पं. मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज' का जन्म सुलतानपुर जनपद के बौरा जगदीशपुर नामक गाँव में 1 नवम्बर 1949 को हुआ था। आपके पिता श्री रामदेव पाण्डेय कर्मकाण्ड के विद्वान् एवं एक अच्छे कृषक थे। क्षेत्र में आपकी प्रतिष्ठा थी। 'मनोज' जी की माता श्रीमती स्वर्णकली देवी एक सौम्य एवं साध्वी महिला थीं। बौरा जगदीशपुर गाँव सुलतानपुर और अम्बेदकर नगर को जोड़नेवाली सड़क पर महरुआ और सेमरी के मध्य में पड़ता है। यह गाँव बहुत समय पहले से साहित्य, संगीत और कला का श्रेष्ठ समन्वयक था। जनपद के श्रेष्ठ संगीतज्ञ, साहित्यकार और कथावाचक पं. वेणीमाधव पाण्डेय 'व्यास' का जन्म इसी गाँव में हुआ था। 'मनोज' जी भी तथैव साहित्य-सर्जक, लोकगीतों के मर्मज्ञ, एवं मंचों पर छा जाने वाले श्रेष्ठ कलाकार हैं। अवधी भाषा के मूर्धन्य विद्वान आचार्य विश्वनाथ पाठक ने 'मनोज' जी के कृतित्व की खुले मन से सराहना की है।

मनोज जी का रचनासंसार परम समृद्ध है। इन्होंने लगभग एक दर्जन गीत-काव्यों की रचना की है। उनमें गउवाँ हमार, मनोज-मंजरी, लोक लहर, गीत गुंजन, सोने क चिरई, अवध कौमुदी, बाल किरन, नाची झूम-झूम कर बिल्ली' आदि हैं। मनोज जी ने एक हजार दोहों की रचना कर 'दोहा हजारा' नाम से ग्रन्थ को नामित किया है। आपने 'सरवन', 'गंगा गरिमा' महाकाव्य, कौत्स, दधीच, सेवरी आदि खण्डकाव्यों के साथ-साथ स्फुट छन्दों का पर्याप्त सृजन कर साहित्य पथ पर अग्रसर हैं। आपने खड़ीबोली में अनेक गीतों और अगीतों की भी सर्जना की है। आप हिन्दी-साहित्य के एक श्रेष्ठ सर्जक हैं।

पं. मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज' की रचनाओं में अलंकार विधान का जो स्वरूप देखने को मिलता है, उसका उद्धरण हम उनके 'मनोज छन्द मंजरी' से देना चाहेंगे। छन्द की चार पंक्तियों में अनुप्रास की छटा है। यहाँ हर पंक्ति में अलग-अलग वर्णों की आवृत्ति है। यथा

विमल विवेक बुद्धि बार बार बादु बानि, बीनापानि वर दे विशाल बाहु वर से।
सहज सनेह सुविचार सद्भाउ सुचि, स्वर दे सुखद सहसानन सुघर से।
माया की मरीचिका में मचले मनकमृग, मंजुल मयंक सी 'मनोज' मति हर से।
आर्यावरत को अगम अन्हियार आजु, अन्त हो अपरमित अवधी अमर से।।

कवि अपने कल्पना-लोक का राजा होता है। वह नयन अर्थात् नेत्र की परिकल्पना करता और शब्द-चित्र उरेहता है। लगता है निश्चय ही कवि ने घायल होकर ही ऐसी बात की है। इस छन्द में उपमा अलंकार की प्रधानता है। रूपक भी अपना अस्तित्व बनाये हुए है। छन्द देखें—

नयन कजरौटा ये हमका 'मनोज' लागें, कारी पुतरी के कारे काजर ये पारे हैं।
नयनन के स्वेत भाग स्यामता विराजे जनु, छीरनिधि बीच हरि सेज पै पधारे हैं।

याकि व्योम बीच घुमिड़त घनस्याम, याकि, करत किलोल जमुना के मझधारे हैं।
याकि निज नेत्र से 'मनोज' के त्रिनेत्र जारे, सोई गात-छार-पुंज धारे कारे-कारे हैं।।

मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज' प्रकृति के भी सुकुमार कवि हैं। इन्होंने वन, पर्वत, घाटी, नद, नदी आदि का मनोरम रूप अपने सृजन में पिरोया है। पक्षियों, पशुओं का चित्रण करते कवि ने मानवीकरण अलंकार का जहाँ पर रूप साजा है, वहीं पर वन के सौन्दर्य का भी चित्रण किया है।

चिरई बइठि अपसा में बतराइ सब, बिनु सरवन निक लागे न बसेर।
बोलिया मधुरि नव रस घोरि सात स्वर, के करावे पान सब सँझवा सबेर।
आवा चली सब केउ ओनहीं के संग संग, सँझवा विहान रही ओनहीं के नेर।
जउनी भुई वास करैं डोलिया उतारि सरवन, उहीं करी हम सब मिलि के बसेर।।

कवि सौन्दर्य चित्रण में अग्रणी है। सरवन का रूप उसके मन में जैसा बसा है, उसे उसी तरह प्रस्तुत करने में वह कुशल है। सुन्दर रूप, मधुर वाणी, कान्तिमय कपोल, कमलाकृत दोनों विशाल नेत्र, भ्रमर की भृकुटि, शंख सा ग्रीव, श्वेत दन्त-पंक्ति, वर-ललाट, कुंचित अलकें, दर्शनीय हैं। यथा--

वय किसोर, तन गौर, सपन कै रूप रंग मन भावा थै।
मधुरि बैन वर मिलनि परसपर मन उर सबहिं सोहावा थै।
सुन्नर चिबुक कपोल कान्तिमय, कीरहिं नाक लजावा थै।
नयन विसाल दुवौ कमलाकृत भ्रमर भृकुटि दरसावा थै।।
वर ललाट उन्नत सिर पै कच, कुंचित कारिख छाय रहे।
दन्तन पंक्ति भाँति बहु उज्जर, विज्जु हँसत हुहवाय रहे।
कंठ सुकोमल संख ग्रीव वर, कंधन विरसभ सजाये।
दीर्घ बाहु वर वक्ष महातम, बरजसिला का जलाये।।

आगे सरवन पानी भरने जाते हैं। उनके बान लगता है। राजा दशरथ ने यह बहाना किया कि उन्होंने शिकार योग्य जन्तु समझकर शब्द पर बाण चलाया है। उस समय श्रवनकुमार ने कहा, मैंने कहाँ स्वर किया जो आपने मुझे बाण मारा। बाण तो स्वर पर लगाना चाहिए था। तर्कपूर्ण चित्रण कवि के बूते की ही बात है-

भयउ है सबद कमण्डल से भूप सोइ, हम नाहीं निज मुख सबद उचारे हैं।
तुम तौ कहत मारे सबद के वेधी बान, तब काहे बधि दियो हृदै हमारे हैं।
या तो तुम सीखि रहे बान कै निसान भूप, या तो भूलचूक में अपान ही बिसारे हैं।
अबहीं प्रवीन नाहीं सबद कै बेधी बान, लागे जनु लकक्ष कै वेधी बान मारे हैं।।

कौत्स खण्डकाव्य कवि का सम्मानित काव्य-ग्रन्थ है। इस पर जबलपुर (म.प्र.) से कवि को सम्मान प्राप्त हुआ है। कादम्बरी संस्था जबलपुर ने वास्तव में इस ग्रन्थ को सम्मान देकर अपने दायित्व का विधिवत निर्वहन किया है। कवि ने कौत्स द्वारा पशु-पक्षियां का चित्रण करवाया है, जिन्हें आश्रम में निरन्तर देखा जा रहा था। यह नामांकन कवि की बहुज्ञता का चिर परिचायक है-

तोता, मैना, कोकिल, हारिल, रैमुनियाँ खग सोहैं।
हंस, पपिहरा, मोर, ललेसन, बुलबुल मन का मोहैं।
तीतिर, टिट्टिभ, नकट, हुद्हुदा, कठफोरवा बन बीचे।
पेड़की, बकुला, बाज, कबूतर, अउ धनेस उर खींचे।

भुँइ दबकी, उल्लू, महोख, चमगादड़ चंगुल चेहरे।
नीलकण्ठ, गौरैया, बत्तख, पनडुब्बी जल गहरे।।

कौत्स प्रबन्धकाव्य में कवि ने प्रकृति चित्रण बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। सूर्योदय का चित्रण कवि ने बड़े सुरम्य ढंग से प्रस्तुत किया है। सूर्य के जग जाने पर आकाश में अरुणाभा बिखर जाती है। ऊषा सुन्दरी का स्वरूप भी परम आकर्षक लगने लगता है। कवि के शब्दों में यह चित्रण दर्शनीय है। यथा

व्योम बीच बिखरी अरुणाभा दिव्य भानु जब जागे।
उठे त्यागि सुचि सेज सलोनी स्नेह जगत हित पागे।
उषा सुन्दरी लै अँगड़ाई उचकि नीन से जागी।
अपने प्रीतम कै पद पंकज प्रेम सहित अनुरागी।।

यहाँ पर कवि ने अलंकार विधा पर दृष्टिपात किया है। रूपक का सुन्दर सहज चित्रण करने में कवि निष्णात है। सूर्य निकलने पर प्रभात वेला आकर अपना कार्य आरम्भ कर देता है। चित्रण देखें-

सुबरन किरिनि सुरथ पै चढ़ि के चला प्रभात सलोना।
जागि उठा बन उपवन कन-कन, सगर धरा कै कोना।
रवि की सुबरन किरिनि तार से रचित साठिका न्यारी।
पहिरे प्रकृति नटी निज तन में लागे परम पियारी।।

लोकविधा में कवि ने काव्य-सृजन की जो प्रबन्धात्मकता हासिल की है, वह अपने में बेजोड़ है। प्रबन्ध-काव्य की लोकविधा की वन्दना का छन्द द्रष्टव्य है। यथा--

करौं मैं तोरे चरन कमल वन्दन रे मैया।
सुधि बुधि कै दायिनि मा ज्ञान कै प्रदायिनि माँ,
आखर प्रति आखर मा तुही तौ बोलइया।
वपुष बीन तार-तार झंकृत करि बार-बार,
मानष ब्रह्माण्ड बीच आनन्द बधैया,
करौं मैं तोरे चरन कमल वन्दन रे मैया।

कौत्स खण्डकाव्य में कवि की बहुज्ञता का चित्रण उस समय प्राप्त होता है, जब कवि पशु-पक्षी, जड़ीबूटी का चित्रण करता है। कवि आश्रम को हर प्रकार से सुसज्जित देखता है। वह सुखद क्यारियों में फूल-पौधों को देखता है। ऐसे सुरम्य आश्रम में हर प्रकार के पौधे व बिरवे कितने सुन्दर लगते हैं-

कहुँ बेला चम्पा कनेर कहुँ सूरजमुखी चमेली।
कहुँ जूही गेंदा गुलाब कहुँ सोहे सघन करेली।
सोनजुही अज्जक बकावली हरसिंगार झलबेली।
नव माल्लिका नाग नव केसर करना सुलाल रसबेली।
रतरानी औ सूपमंजरी नाकबोय गुलमेंहदी।
सुरुवारी कपास बैजन्ती कहुँ-कहुँ आमा हरदी।
कहुँ गुड़हल केतकी मुसम्मी अउ संजीवनि बूटी।
मौलिश्री तरु खरहद अउ बकचुनि रेउती लज्जफूटी।
मधुर मालती कदम सिरस गुलल्लारी अउ केंवड़ा।
आछी करवन झल मकोय पैं सुघर करेरुआ जकड़ा।

कवि ने जहाँ पर सुन्दरतम फूलों, पौधों, पक्षियों आदि का सुन्दर चित्रण किया है, वहीं पर उसने जड़ी-बूटियों एवं सुन्दर दवाओं का भी जिक्र किया है। जड़ी-बूटियों का नाम जो आश्रम पर जनकल्याण के लिए सँजोई हुई हैं, को भी कवि उजागर करता है। कवि को आश्रम के ओर-छोर तक कल्पना-लोक में झाँकना पड़ता है।

तुलसी बिरवा वन कपूर करम्हीं मकोय करियारी।
बड़का बिरवा लछिमन बूटी सहदेइया अम्बारी।
करवन बनमुरई बनसेमी मेडुई नागर मोथा।
कोबर गुर्च करेरुआ गोभी अउर करेमुआँ गोथा।
वन भाँटा हुरहुर भँटकैय्या गुरखुल औ अमरैया।
कंजा तूत भड़भड़ा सरपत आछी सिरस पुरैय्या।
पाढ़ी चीत पपीता केला सूरनकूट मकोया।
चकवड़ चौराई धतूर औ लहसुन हल्दी सोया।
पुष्पीसंख फरीदी बूटी बरुवा धँवर कसोरिया।
कुकुरौन्हा औ ललकी दुद्धी तिनपतिया विषहरिया।
हाथी पाव दादरा छपया कानु विमल हरजोरा।
मधुर कन्द वन बीच विराजै कंदमूल हरओरा।।

जहाँ पर कवि को नयनों के कोरों ने वेधकर रसराज की निष्पत्ति की है, वहीं पर हास्य व्यंग्य का भी चित्रण कवि ने कल्पना लोक में किया है। मल्हना, कवि की एक पात्र है। गोल्हई उसका पति होता है। दोनों पर आपबीती बातों को उतार कर कवि ने हास्य-गान प्रस्तुत किया है। कविता में कवि के शब्दों का भी चयन उतना ही मार्मिक बन पड़ा है, जितना उसके भाव। यथा-

मल्हना अपने लरिकौना का खींचि के मारी बेलना।
इहौ हरमजादा उठि भेनसरवै मागै भोजना।
गोल्हई बोलेनि सुनिल्या मल्हना करत ना बाटी हाँसी।
हमका थोरकै टाटक बनवा गनुँवा क दइदा बासी।
अतनी तगड़ी ठण्डी बाटै यहमा बाटै मरना।
अतने भोरे खाब न देवै अरे मोरे सजना।
कैसे कै नौकरिया बचिहै अरे मोरी सजनी।

समाज की एक कुप्रथा दहेज को कवि खोटी दृष्टि से देखता है। उसने इसे अनेक प्रकार से नकारा है। दारुन दहेज से संत्रस्त एक ललना अपने परिवार के माँ-बाप व भाई को याद करने लगती है। सास-ससुर का संत्रास उसे नित्य ही झेलना पड़ रहा है। यद्यपि वह यह नहीं चाहती कि उसके माँ व पिता को उसकी वेदना से पीड़ित होना पड़े, तथापि अपने भाई को याद करती है--

लेव्या कहिया तु सुधिया हमार बिरना।
तुहैं बिनु कोउ सुनै न गोहारि बिरना।।
सासु औ ससुर दोऊ करैं कलिकनियाँ।
गोरुवन क हमसे करावैं सानी पनियाँ।
उपरासे माजी धोई बनई भोजनवाँ।
सबका खियाई मिलै हमका न दनवाँ।।

जूठ मूठ खाइ के ओलरि जाई खटिया।
दिन बीति जाइ न बितै आवै रतिया।।

'मनोज दोहावली' मनोज जी के दोहों का संग्रह है। इसमें एक हजार से अधिक दोहे हैं। दोहों का कथ्य पूर्णतया वर्तमान सन्दर्भों में है। हिन्दुस्तान में हिन्दी की दुर्दशा पर कविवर मनोज बहुत त्रस्त हैं। समाज में छुआछूत, ठगी, चोरी, बेईमानी, दहेज, घोटाले आदि अमानवीय गुणों के सम्मान से कवि खिन्न है। दोहों के माध्यम से निश्चय ही मनोज जी के भाव उदात्त हैं-

इंगलिस रानी बनि गई, ले पस्चिम की सीख।
हिन्दी हिन्दुस्तान में, घर घर माँगे भीख।।
हिन्दी हिन्दी सब कहैं, हिन्दी गहैं न कोय।
हिन्दी के आँगन इहाँ, अँगरेजी की लोय।।
मुँह बावैं सुरसा सरिस, दोउ कर ऐंठे मूछ।
मागैं मोटर साइकिल, जेहि सीख्या नहिं पूछ।।

कवि मन अन्तर से समाज की दशा देख व्यथित है। इसी व्यथा को कवि ने अपनी रचना में उतारने का प्रयास किया है। कविवर 'मनोज' ने गंगा-गरिमा महाकाव्य लिख कर अपनी भव्य साहित्यिक ऊर्जा का पर्याप्त प्रदर्शन किया है। कवि कल्पनालोक का राजा हुआ करता है। इस महाकाव्य में रस-छन्द अलंकार का भव्य संयोग प्राप्त है। इस ललित छन्दावली से कतिपय छन्द दर्शनीय हैं

सिव की जटा पे विकराल सुरसरि धार, छरर छरर बौछार लागि गै करै।
जलधार छितराय परति है चहुँ ओर, हिम से गिरीस कै सिंगार लागि गै करै।
मातु के समीप खड़ी पारबती नेह भरी, जोर-जोर गंग कै पुकार लागि गै करै।
छटकि के एक बून मयना के अँचरे मा, सिसु रूप धारि किलकारि लागि गै करै।।

रूपराशि नायिका का चित्रण करने में कवि का शृंगारिक भाव भी दर्शनीय है। मुख चन्द्रमा है। इसमें रूपक अलंकार भी देखने योग्य है। नयन के कोर बान हैं, भौंह की अरालिका धनुषवत् दिख रही है। घुँघराले बाल वक्षस्थल तक लटकते भी अतीव सुन्दर लग रहे हैं। बाल नागिन की अनुहार लग रहे हैं। यथा

चन्द्रबदनि को अंग अंग मदमस्त लिहे यौवन गहरे।
भृकुटि कमान नयन कोरन जनु बाँके भृकुटि सुवान धरे।
मंजुल कच कुंचित वर लट धरि लटकि रहे वर वक्षस्थल।
मानहु पियन अमिय रस नागिनि कुच प्रदेश पहुँचत वरतल।।

कवि ने बाल साहित्य में भी पर्याप्त लेखन किया है। पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों, आदि के माध्यम से बच्चों को मार्गदर्शन का कार्य किया है। सुग्गा बैठा आम कि डारी, आज गाँव में बन्दर आया, बन्दर मामा, बिल्ली मौसी, चूहे राजा, मेढ़क, खरगोश तथा अन्यान्य जन्तुओं, पेड़-पौधों को लक्ष्य करके 'मनोज' जी ने पर्याप्त साहित्य-सृजन किया है।

इस प्रकार, पं. मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज' की साहित्यिक यात्रा पर यदि सिंहावलोकन किया जाय, तो उनकी प्रचुर साहित्यिक ऊर्जा का पता चलता है। क्या लेख, कहानी, क्या गीत-अगीत, क्या खण्डकाव्य, क्या महाकाव्य, चतुर्दिक मनोज की ऊर्जा छलकती नजर आने लगती है। हमें आशा ही नहीं, पूर्ण रूप से विश्वास है कि मनोज जी इसी तरह साहित्य सृजन करते रहेंगे। इनसे हिन्दी की अपार सेवा होती रहेगी।

अवधी के श्रेष्ठ रचनाकार : आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप'

पवन कुमार सिंह

आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप' का जन्म सुलतानपुर जनपद के रानेपुर नामक गाँव में 5 अगस्त 1945 को हुआ था। इनकी माता का नाम ईशराजी और पिता का नाम दुर्गाप्रसाद था। यह गाँव आदिगंगा गोमती के उत्तरी तट पर स्थित कादीपुर तहसील मुख्यालय से लगभग 8 किमी. उत्तर प्रकृति की गोद में स्थित है। गाँव के पूर्व-उत्तर में वेहनवाँ ताल अपनी लहरों से गाँव का अभिसिंचन करता रहता है। दक्षिण में गाना और वीरम तालाब तथा सघन वृक्षों की हरीतिमा अन्तर्मन को अपनी तरफ खींच लिया करती है। पश्चिम में पाण्डे और बसहिया तालाब दोनों प्राकृतिक सौन्दर्य में चार चाँद लगाते रहते हैं। गाँव की आबादी के निकट बाग-बगीचे, वनस्थली और परौवा व तलिया तालाब गाँव की सुषमा की वृद्धि करते हैं। ऐसे प्राकृतिक परिवेश में पले-पुसे 'प्रदीप' जी को साहित्यिक ऊर्जा का अक्षुण्ण स्रोत प्राप्त हुआ। वह गाँव बहुत पहले से साहित्य और संगीत का एक केन्द्र है। यहाँ कथा भागवत, रामचरितमानस, तथा अनेक साहित्यिक और धार्मिक ग्रन्थों का पाठ और पारायण चला करता है। गाँव के दक्षिण में एक मन्दिर है, जहाँ हमेशा सन्तों और महात्माओं का आगमन होता रहता है। इस प्रकार यहाँ का परिवेश धार्मिक और साहित्यिक बना रहता है। रामनयन सिंह 'काका' का जन्म इसी गाँव में हुआ था, जिन्होंने 'अवध आध्यात्मक रामायण' अवधी महाकाव्य तथा अनेक लोकविधा की पुस्तकों का सृजन किया था। जिनका प्रकाशन लोकनाथ पुस्तकालय, कलकत्ता से होता था। काका जी कलकत्ता में नौकरी करते थे और गाँव से हमेशा सम्बन्ध बनाये रखते थे।

'प्रदीप' जी के साहित्य पर तीन से अधिक शोध हुए हैं। पहला शोध 'अवधी के वर्तमान प्रबन्धकाव्य' पर दूसरा गद्य-साहित्य पर और तीसरा व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर हुआ है। इसके अलावा अनेक शोध-ग्रन्थों में पुस्तकों की समीक्षाएँ होती रहती हैं।

डॉ. सुशील कुमार पाण्डेय 'साहित्येन्दु', रीडर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग ने एक निबन्ध में प्रदीप जी पर लिखा है कि 'प्रदीप जी का हृदय विशाल, चिन्तन उदात्त, स्वाध्याय अप्रमाद सम्पन्न, सहयोग निर्विवाद, चरित्र अनुकरणीय एवं साहित्य सर्वथा पठनीय, मानवीय एवं अनुकरणीय है। वे शाश्वत साधना विषयक कठोर तपस्वी, मनस्वी, ओजस्वी, क्रान्त-द्रष्टा एवं कालजयी रचनाकार हैं। 'प्रदीप' जैसे उच्च मानव हैं वैसे ही सरस्वती के परमात्मीय भक्त।'

'प्रदीप' जी को देश-विदेश के लगभग पचास से अधिक सम्मान प्राप्त हो चुके हैं। आप बीसों साहित्यिक संस्थाओं के सर्जक, संकल्पक एवं संचालक हैं। इनका साक्षात्कार अनेक समाचार पत्रों, पत्रिकाओं तथा स्मारिकाओं में विस्तारपूर्वक छपा है। इनका पहला साक्षात्कार 10 फरवरी 1988 में प्रकाशित हुआ, जिसका शीर्षक था 'पुरस्कार रचनाधर्म का मूल्यांकन नहीं कर सकता'। साक्षात्कार लेने वाले डॉ. वीरेन्द्रप्रताप सिंह ने लिखा है कि 'श्री आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप' हिन्दी साहित्य के यशस्वी

साहित्यकार हैं। इन्होंने साहित्य के लिए एक पूर्ण समर्पित जीवन जिया है। इनकी साधना राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना से सम्पृक्त होकर युग यथार्थ की कठोर भूमि पर नित्य नये आयाम ग्रहण कर रही है। प्रेम की गंगा हर हृदय में प्रवाहित कर एक खुशहाल अन्तरराष्ट्रीय मानव परिवार उनकी रचनाओं का गन्तव्य है। देशवासियों में देश के प्रति कर्तव्य-बोध जाग्रत करनेवाली उनकी निर्मल युगानुकूल भावना खड़ीबोली और अवधी में समान रूप से अभिव्यक्त हुई है।'

प्रदीप जी ने कुल लगभग 110 पुस्तकों का सृजन किया है। उनकी कुछ कृतियों की यहाँ सर्जनात्मक समीक्षा करना आवश्यक है। महाराणा प्रताप महाकाव्य में 'प्रदीप' जी ने खड़ीबोली में लिखा है, वन्दना छन्द द्रष्टव्य है :

नमन तुम्हें है अम्ब शारदे, छन्द सुखद सरसाओ।
माँ काली को नमन करूँ मैं लाकर भाव पिन्हाओ।।
नमन करूँ मैं उन वीरों का जो उद्भट बलिदानी।
शीश चढ़ाकर मातृभूमि को रखा देश का पानी।।

प्रकृति चित्रण करने में 'प्रदीप' जी को महारत हासिल है। हर खण्ड के आरम्भ में कवि ने भव्य प्रकृति-चित्रण किया है। यथा :

कूक-कूक कर कोयल ने अपना मृदुतान सुनाया।
पीव पीव पपिहा ने मृदुस्वर स्वागत में दुहराया।।
झूम रही आनन्द मग्न हो तरु की डाली-डाली।
फूल-फूल पर थिरक रही वह कैसी भोली-भाली।।

'गोसाईं तुलसीदास' प्रदीप जी का अवधी महाकाव्य है। इसमें नौ खण्ड हैं। इस महाकाव्य में कुल मिलाकर 1910 छन्द हैं। हर खण्ड के छन्द अलग-अलग हैं। कवि मनीषी तुलसी ने अवधी भाषा का वरण किया था, कथा के लिए रामचरित्र को चुना। उन्होंने शब्दों के अथाह सिन्धु गाँव घर के शब्दों को थहाना शुरू किया :

अवधी अवध कैरि भाउ कै सुछन्द भरि, लोक मनरंजन में अंजन लगाइ गै।
राम कै चरित्र जो विचित्र चित धारि-धरि, दोहा छन्द सोरठा चौपाई बन्द गाइगै।।

अनुप्रास का उदाहरण भी दर्शनीय है :

भाउ के तरंगनि में अंगनि डुबाइ डारे, मन के मयूर जोर-जोर हुलसै लगे।
चंचल चकोर चित्त चारु चन्द चाँदनी में, मंगल मनाइ पोर-पोर पुलकै लगे।।
अवधी अवध के अघायि आइ अंगन तें, भाउ के भुवंग कोर-कोर कुलकै लगे।
प्रकृति परी क देखि पन्नग पलान पूर, छवि छकि छोनि छोर-छोर ढलकै लगे।।

पर्वत पर तुलसी भ्रमण करते रहे। वहाँ पर प्रकृति की परम रम्य सुषमा चतुर्दिक फैल रही थी। पर्वत पर वर्षा का एक दृश्य देखने योग्" है। पहाड़ों से छोटा बादल उठता है। देखते ही देखते वर्षा की झड़ी लगाकर चला जाता है। क्षण भर में तड़क-भड़क सभी हो जाता है। उस बादल वर्षा और पानी के प्रवाहित होने का एक दृश्य देखने योग्य है। सवैया छन्द में देखें :

कहुँ मेघ उठै गरजै-बरसै बिजुरी बरि ताल लगावत की।
सब नार पहार बहैं छलकैं झलकैं जलधारि बहावत की।।
जल जोर गिरै त रै कतहूँ दिक् छोर गुहार मचावत की।
बरसात के गीत पहाड़ पढ़ैं जल जात चला जनु गावत की।।

शेष सनातन दास जी तुलसी ऐसे सुजान शिष्य को पाकर अपने को धन्य समझने लगे। कुछ समय बाद नरहर्यानन्द जी तो राम को प्यारे हो गये। इधर शेष सनातन दास जी भी शरीर छोड़कर परलोकवासी हो गये। तुलसी उनका अन्तिम संस्कार सम्पन्न कर काशी छोड़ राजापुर देखने को प्रस्थान किये। उन्होंने वहाँ पहुँच जन्मस्थली को देखा। गाँव घर के लोग जुट आये। सबने तुलसी को गाँव का इतिहास बताया। काल, अकाल, झंझा, महामारी में गाँव के जो लोग मरे थे, उनका वर्णन देखें :

धिनहूँ वैरागी वेरतन्ती। गई इहाँ से घिसना मन्ती।।
चौथी चरन जगन मनतोरा। गयेनि रमापति गईं कटोरा।।
आत्माराम मुलायम ओझा। ढोइ न पायेस ई भुइं बोझा।।
रमई गयेनि मतोले काका। राधेश्याम धरम कै टाँका।।
परमू दुखी सुखी घिसियावन। राजबहादुर पण्डित बावन।।
सन्तू दुखी जगेसरउ, गयेनि चला महिपाल।
चिरकुट भजन कहाँर गै, धनई गै परमाल।।

'कृष्णचरितमानस' प्रदीप जी का अगला महाकाव्य है। इसके आरम्भ में कवि ने अपने गाँव रानेपुर का चित्र खींचा है। कवि ने वन्दना करते समय अपने गाँव गिराँव के देवी देवताओं को भली विधि मनाया है। बरदँइत बाबा, पाण्डे बाबा, कारेदेउ बाबा, कराह बाबा, सतई बाबा की वन्दना के बाद गाँव का सुरम्य चित्र खींचा है।

रानेपुर यहु गाँव सुहावन। परम रम्य सुचि सुखद सुहावन।।
इहाँ प्रकृति साजु नित साजै। अनुपम रूप देखि जग लागैं।।
ससक सियार हिरन द्रुत धावैं। पानि पियैं आतुर चलि आवैं।।
करियारी कचूर चहुँ ओरी। खेसका करइलि लखें न थेरी।।
बग्धा जामैं फरै करेरुआ। तोरैं गेद कुलाँचैं लेरुआ।।
दुद्धी बन आलू अरु केरा। फूलै करै सदा चहुँ फेरा।।
पनडुब्बी महोख मिलि, बोलैं बोल सुबोल।
सुक पिक कोकिल कूक में, भरैं भाव अनमोल।।

कवि ने इस महाकाव्य में 27 खण्ड की रचना की है। सभी में श्रीकृष्ण के कार्यों का वर्णन हुआ है। धनुषभंग खण्ड में कवि ने जो चित्रण किया है, बड़ा ही मनोहर है। कृष्ण ग्वालबाल के साथ पुर देखते लोगों को दर्शन देते चले जा रहे हैं। सभी लोग उनका रूप देख रहे थे, परमसुख को प्राप्त हो रहे हैं। श्रीकृष्ण एकाएक धनुष को उठाकर तोड़ दिये :

भ्रमण करत पुर देखत, संग ग्वाल अरु बाल।
पुर बजार बन वाटिका, देखत भये निहाल।।
भयउ मोह बस सब पुर लोगा। निरखहि रूप पाइ सनयोगा।।
निरखत चलेउ पहुँचि गै तहँवा। भारी धनुष कंस कै जहँवा।।
रक्षक अमित वीर बरियारा। रक्षा करहिं अनेक प्रकारा।।
धनुष देखि के गयउ मुरारी। पहरेदार न कीन्हेउ रासी।।
गयउ निकट तब कृष्ण कन्हाई। लीन्हेउ बायें हाथ उठाई।।
खींचे टूट पिनाक बरोरा। व्यापि रहेउ स्वर चारिउ ओरा।।
रक्षक अउर पहरुये नाना। कियेउ कोप धायेउ मन माना।।

दस दिसान महँ गूँजेऊ, तेहिकै सबद महान।
कंस केर तन मन कँपेउ, जय जय कृपानिधान।।

'प्रदीप' जी ने अवधी में गुरुदक्षिणा नाम के एक खण्डकाव्य की भी रचना की है। इसमें कुल सात खण्ड हैं। कवि ने प्रकृति का सुघर सलोना चित्रण प्रस्तुत किया है। एकलव्य ने बिना गुरु के ही गाँव को डाकुओं से बचा लिया। यदि गुरु के पास वह अध्ययन कर लेता तो वह अद्वितीय निशानेबाज हो जाता, ऐसा लोग कहने लगे। कुछ लोगों ने वन के मध्य आश्रम की चर्चा की, जहाँ पर द्रोणाचार्य अपने शिष्यों को शिक्षा देते थे। एकलव्य भी वहाँ जाने को तैयार हुआ। कवि की चित्रण विधा दर्शनीय है:

माई-दादा के गोड़े पइ धइके आपन माथ।
अब जंगल मा बढ़ा अगाड़ी छोड़ेस सब कइ साथ।।
झुर-झुर-झुर-झुर बहइ बयरिया सींचइ तन कइ रोम।
महँकि-महँकि सब फूल करा थें जइसे बन मा होम।।
गावइ मंगल गान चिरइया बइठि पेड़ की डारी।
काटि सियार राहि विरमावंइ, घूमइँ आरी-आरी।।
पेड़ डारि से पुहुप गिरावइँ, साजइँ भुइँ कै आँचर।
धीरे-धीरे मलयानिल बाटइ सेवा मा तत्पर।।

एकलव्य बीच वन से चला जा रहा है। एक राही मिला तो एकलव्य उससे द्रोणाचार्य आश्रम का पता पूछने लगा। दोनों पेड़ की छाया में बैठकर बात करने लगे। राहगीर को सारे जंगल का पूरा ज्ञान है। वह एकलव्य को आश्रम के बारे में बताता है :

बढ़ब्या जौ यहिं से कुछु आगे बाटै सोन्नरि घास।।
उहाँ धर्मसाला सुन्नरि बा पिया जाइ के पानी।
मिटिहैं तन कै सारी पीरा रस्ता कै हैरानी।।
उहाँ सुगन्धि होम कै आये उठै वेद कै रागि।
उहाँ पहुँचि क तन कै पीरा तोहरे जाये भागि।।
घन्टा घनन सुनाइ कान मा आये सुखद बयारि।

x x x

सारा जंगल गमकै लागै चलै यज्ञ कै काम।।
यज्ञ धुआँ वहिं चारिउ ओरी रुके करै बिसराम।।
लखा सरग का फहरत बाटै जेकै भव्य पताका।
गुरुद्वारा आ उहै द्रोन कै पावन आश्रम बाँका।।

पूरी जानकारी एकलव्य को मिल गयी। वह गुरुचरन में गया। परन्तु वहाँ गुरु द्रोण की व्यवस्था कुछ और ही थी। उसे देखकर आश्रम के शिष्यगण अनेक कल्पना करने लगे। गुरु के पास आकर प्रणाम किया। गुरु ने पूछा, तुम कौन हो? कहाँ तेरा घर है? कौन जाति है? प्रश्नों की झड़ी लग गयी। उत्तर सुनकर जो गुरु जी ने कहा, वह एकलव्य को बड़ा अटपटा लगा :

एकलव्य निज नाउ बतायेस कोल-भील कै जाति।
धनुहा बान सिखइ की खातिर आये सुनि कै बाति।।
कहु रे भील पूत तइँ कइसे आइ गये यहिं ठाउँ।
के तोका ई राहि बतायेस तजि आये केहि गाँउ।।

इहाँ राजपूते कइ लरिका पढ़ैं सास्त्र औ वेद।
धरम करम मा पूरा राखैं ऊँच-नीच कइ भेद।।
कोल-किरात बइठि चरने कब बाँचेनि वेद-पुरान।
मान प्रतिष्ठा यहिं आश्रम कइ कबहूँ नाइ झुरान।।
भीले कइ बेटवा तू होइके काहे यहिं पै आया।
इहाँ परति अपवित्र भाउ से तोहरे तन कै छाया।।
तुरत हटावा यहिं भीले का तीरथ भै अपवित्र।
जल छालन अब करा भुईं कइ, छिरका तनिका इत्र।।

एकलव्य निर्भीक और निडर था। गुरु की भेदभरी सारी बातों को सुना और गुरु से अपने मन की सारी बात कहकर रुदन करता हुआ वहाँ से वापस हुआ। रोते हुए उसने गुरु से बताया :

गुरुवर तू तो धर्म गुरु होइ आया वन के बीच।
तोहरे चरने की धूरी का हम तरसी होइ नीच।।
जाति तुहारि गुरु कै जानै विद्यार्थी निज जाति।
अउर हृदै मा बइठि न पायेस तोहरे मन कै पाँति।।
रुदन करत चलि परा उहाँ से मोचत दृग से वारी।
x x x
ओहरी श्री गुरु के अदेस पै लीपेन पोतेन धाम।
गंगा जल का लाइ के छिरकेनि पूर किहेन सब काम।।

एक दिन गुरु द्रोण शिष्यों के साथ जंगल भ्रमण के लिये निकले थे। सुन्दर तालाब देखकर गुरु स्नान ध्यान करने के लिए रुके। शिष्यगण फूल लाने के लिए निकले तो एकलव्य से उनकी भेंट हो गयी। एक पेड़ से ऊँचाई से पुष्प न तोड़ पाने की दशा में एकलव्य ने बाण से फूल तोड़कर दिया। सभी शिष्य आश्चर्यचकित रह गये और गुरु द्रोण से आकर सारी बातें बतायीं। उसने अपने को गुरु द्रोणाचार्य का शिष्य भी बताया। गुरु द्रोण ने उसे असमर्थ बनाने के लिये गुरुदक्षिणा में अँगूठा माँग लिया। उसने सहर्ष अपना अँगूठा काटकर गुरु को दे दिया :

बेरि-बेरि माथे का पोछँइ, अउर बहै पसीना।
चिन्तन कै गति तेज उठत बा, झंकृत मन कै बीना।।
बेरि-बेरि अन्तर मन वरजै जिनि बोला अनबोलि।
फेरि ओप्पर से भाउ उठत बा, कहिद्या जल्दी खोलि।।
जउ तू सिस्य हमार हया तउ जल्दी ऐसन कइद्या।
आपन काटि अँगूठा दहिना लाइ सामने धइद्या।।
काटि अँगूठा धरेस सामने ऊ चेला कइ जाति।
खून धारि भूईं पै ढरकै बिलखै देउता पाँति।।

राजतन्त्र के बचाव में गुरु ने ऐसा किया अवश्य, परन्तु उनके अन्तर्मन ने उन्हें बहुत धिक्कारा। अँगूठा कटने के बाद भी एकलव्य सुघर निशाने की कला में पारंगत हो गया। अन्तिम परीक्षा में भी वह शामिल हुआ। अब वह निश्चिन्त है क्योंकि गुरु को मुँहमागी गुरुदक्षिणा मिल चुकी है। एकलव्य के आने और प्रणाम करने पर गुरु के हृदय की सद्भावना सामने प्रबल हो उठी। उन्होंने एकलव्य को भी परीक्षा में शामिल किया। उसकी कला देख गुरु बहुत प्रभावित हुये :

लखेन द्रोन गुरु एकलव्य कै सबसे आगे पाउँ।
वहिका अपने लगे बोलायेनि लइके सुन्दर नाउँ।।
यहरी आवा यहरी आवा, बेटवा सुनिल्या बाति।
लखेन न रूपरंग लरिका कै, अउर न वहिकै जाति।।
लपकेनि लिहेन उठाइ गोद मा पुचकारेनि छुइ गाल।
धन्नि हया बेटवा यहि जग मा सोहरायेनि हइ भाल।।
ढुरुकि परी गुरु की आँखी से गरम आँसु कै धारि।
भेत्तर कै सब ललकि पूरि भइ रही न आजु उधारि।।

गुरुवर अपने वास्तविक रूप में आ गये जिससे वास्तव में जनकल्याण सम्भव होने को है। आज चाहिये कि जाति-पाँति भेदभाव सब दूर करके जगत्कल्याण का कार्य करें। यह कथा चाहे वास्तविकता से हटकर भले हो, परन्तु कवि ने अपने मन का भाव प्रस्तुत किया है। इस प्रकार प्रतिभाओं का सम्मान होना चाहिये। प्रतिभा किसी की बाँटी नहीं है। कवि ने आगे भी लिखा है :

रंग-रंग कै फूल खिला थै सजी रहै फुलवारी।
भिन्न-भिन्न कै रूपरंग है केतनी सुन्नरि क्यारी।।
देस हमार बढ़े आगे का होये चिर उत्थान।
जब कान्हे से कान्ह मिलाये चलिहैं सबै जवान।।
x x x
सब लरिके तब गले लगायेनि एकलव्य का मिलिके।
सब केउ सोन्नरि राज सजायेनि एक साथ मा मिलिके।।

कवि ने रावण की पुत्रवधू सुलोचना पर भी एक खण्डकाव्य लिखा है, जो अवधी में ही है। सुलोचना खण्डकाव्य को कवि ने सात खण्डों में लिखा है। सुलोचना एक परम सुन्दरी और सात्विक महिला है:

कंचन अस जेकै काया, विजुरी अस ज्योति निराली।
भाउना भाउ कै मलिका पहिरायेसि गुहिके माली।।
कोइल पेड़े से बोलैं तू लइला सुर हे रानी।
दइदा तनिका भे हमका आपन सुनरउता दानी।।

कवि ने सगुन-असगुन का भावपूर्ण चिन्तन किया है। रानी सुलोचना पूजा-पाठ के लिये घर से मन्दिर जाती है। उस असगुन का रूप सामने आता है :

गिरा घण्टा मन्दिर कै टूटि, फूटिगै थारी कर ते छूटि।
लखेस सब जब असगुन कै बाति, समझिगै कि देउता गै रूठि।।
दिनै मा टूटैं लूक अनन्त, चलै विपरीतै सकल बयारि।
पेड़ कै टेहरी झटका खाइ, देइ सब बिसरी बाति उघारि।।

मेघनाथ का हाथ सलाका से लक्ष्मण का यशवर्णन कर सुलोचना को समझाता है कि लखन ब्रह्मस्वरूप हैं, उनका दर्शन करो। जीवन सनाथ हो जायेगा :

जेहिमा ब्रह्मा विष्णु बसा थें, लइ महेस का साथे।
सेस सारदा कीरति बरनै लिहे भार सब माथे।।

भक्त बरे जे धरैं देह का उइ लछिमन का जाना।
रोम-रोम में कोटि-कोटि सत देउ अपरिमित माना।।

कवि राम-लक्ष्मण के मानव वेश में जगत के नियन्ता का निरूपण करता है :

वहिं सरवर मा साधू रीझैं कबौ लवटि ना आवैं।
अमरित बून झरै चहुं ओरी लाभु जियन कै पावैं।।
पाँच तत्व गुन तीनि मिलावैं नगर बसावैं न्यारा।
जेकेउ जांइ वनिज का ओहरी फेरि नहिं फिरै दुबारा।।

उपर्युक्त के अतिरिक्त आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप' ने अवधी में गद्य विधा में अनेक ग्रंथों का सृजन किया है। प्रदीप जी ने अवधी में 'भाग मोरी गुइयाँ' नाम से एक कहानी संग्रह तैयार किया है। इस पुस्तक में 15 कहानियाँ हैं। हर कहानी आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समाज का चित्र प्रस्तुत करती है। 'कलि के कविन करौं परनामा' कहानी में आधुनिक कवियों पर कुठाराघात है।

अवध झरोखा : यह अवधी के 14 निबन्धों का पुञ्ज है। इसी पुस्तक पर प्रदीप जी को वर्ष 1997 में मलिक मुहम्मद जायसी सम्मान मिला था। यह पुस्तक एक प्रकार से लोकसाहित्य का विश्लेषण है। **लोकस्वर :** यह भी निबन्धों की पुस्तक है। इस पर वर्ष 2000 में रामनरेश त्रिपाठी सम्मान प्राप्त हुआ था। इसमें कुल 12 निबन्ध हैं। **खड़हर के वहि वार** नाम की कहानियों की एक पुस्तक है, जिसमें 9 कहानियाँ हैं।

इनके अतिरिक्त कवि द्वारा ग्राम देवताओं पर, सेवरी, सुदामा कै तेन्दुल, विदुर क साग खण्डकाव्य लिखे गये हैं। इनके अलावा 5 फुटकर अवधी कविताओं की पुस्तकें हैं। इनमें से अवध बानी पर वर्ष 1982 में जायसी पुरस्कार मिला था।

इस प्रकार अवधी काव्य के सशक्त हस्ताक्षर डॉ. आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप' की समूची साहित्य-सेवा अविस्मरणीय है। उन्होंने हिन्दी साहित्यकोश में अपरिमित श्रीवृद्धि की है। हिन्दी खासकर अवधी-लेखन के क्षेत्र में जहाँ उन्होंने स्वयं दर्जनों कृतियों यथा खण्डकाव्यों, महाकाव्यों, प्रबन्धकाव्यों, निबन्ध आदि लगभग सभी विधाओं में अनूठी कृतियों की सर्जना की है, वहीं उनके निर्देशन में बहुत से नवोदित साहित्यकार भी लाभान्वित होकर साहित्य सर्जना के क्षेत्र में अभूतपूर्व उपलब्धि हासिल कर रहे हैं।

जगदीश पीयूष

डॉ. रामबहादुर मिश्र

जगदीश पीयूष समकालीन अवधी परिदृश्य में एक 'रचनात्मक आन्दोलन' के रूप में प्रतिष्ठित हैं। अवधी की त्रिशक्ति (पढ़ीस, बंशीधर और रमई काका) की सक्रियताएं क्षीण होने के साथ अवधी के सरोकार भी बदलने लगे थे। केवल 'गउवां हमार' या 'छपरा पर की तोरई' या 'या सरकार निकम्मी है' लिखकर अब अवधी का कल्याण नहीं होना था। लेखन और समाज दोनों में एक वास्तविक आंदोलन की आवश्यकता थी। जगदीश पीयूष इस ऐतिहासिक आवश्यकता की पूर्ति करने वाले व्यक्ति बने। 1975 में पीयूष ने 'अवधी अकादमी' की स्थापना कर उसका पहला अधिवेशन पूरी भव्यता से किया। अकादमी की भूमिका उन्हीं के द्वारा गठित 'अवधी संगम' (1972) द्वारा बनी। इन कार्यों को पूरे देश में प्रशंसा मिली। अपनी अद्भुत संगठनात्मक योग्यता के चलते जगदीश पीयूष ने राजनेता, चिन्तक, सर्जक, राजपुरुष, उद्योगपति, पत्रकार और अन्य क्षेत्र के लोगों को अवधी के हित से जोड़ दिया। यह अवधी के इतिहास में पहली बार हुआ था। प्रसंगवश यह जानना आवश्यक है कि पीयूष ने यह सब तब किया जब अवधी भाषी जनपदों में विभाषा के नाम पर केवल विलाप व्याप्त था। अवधी के क्षेत्र में यह एक रचनात्मक क्रांति थी। राष्ट्रकवि बंशीधर शुक्ल ने पीयूष के नाम लिखे एक पत्र में कहा था, 'कहना यह है कि संगठन का युग है, अकेले कोई काम ठींक नहीं हो सकता। आप जो कुछ कर रहे हैं ढंग से बुनियाद पकड़ के करें तो ठीक होगा।' यह उल्लेखनीय है कि पीयूष ने बंशीधर शुक्ल के ये सूत्र मंत्र की तरह मान लिए हैं। अवधी अकादमी की गतिविधियों और उसके प्रकाशनों ने ही अन्य संस्थाओं के गठन को प्रोत्साहन दिया। सुशील सिद्धार्थ जैसे अवधी के महत्वपूर्ण रचनाकार-संपादक- संगठनकर्ता यह स्वीकार करते हैं कि उन्हें इस क्षेत्र में आगे बढ़ने की आदि प्रेरणा जगदीश पीयूष की पुस्तक 'अवधी साहित्य : सर्वेक्षण और समीक्षा' से ही मिली। यह पीयूष के प्रयासों का ही दबाव-प्रभाव था कि हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय में अवधी परिषद का गठन हुआ और क्षीणकाय-अल्पजीवी अवधी पत्रिका के कुछ अंक निकले। निश्चित रूप से जगदीश पीयूष अवधी से जुड़े आंदोलनों-आयोजनों-संकल्पों के 'इतिहास पुरुष' हैं। अब तो 'बोली बानी' पत्रिका के द्वारा वे अवधी का वर्तमान और भविष्य तैयार कर रहे हैं। यदि अतिशयोक्ति न मानी जाय तो सच्चाई यह है कि 'सरस्वती' और 'सारिका' पत्रिकाओं के माध्यम से जो युगान्तर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा कमलेश्वर ने किया था, अवधी में 'बोली-बानी' पत्रिका के द्वारा पीयूष ऐसा ही ऐतिहासिक कार्य कर रहे हैं। उन्हें अपनी जिम्मेदारी का एहसास है। लिखते हैं, 'हमैं भरोस बा कि आवे वाले दिनन मा अवधी कै हल्ला मची अउर हमार सबकै सुलगाई चिनगी से अवधी समाज धमधा तापी।' (अंधेरे के हाथ बटेर : भूमिका)।

संगठनकर्ता, सम्पादक एवं आयोजक से इतर जगदीश पीयूष का एक अन्य व्यक्तित्व है जो उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त होता है। 'अवधी त्रिधारा' में उनके पचीस नवगीत इस बात का प्रमाण हैं कि

वे जीवन के किन आवश्यक संदर्भों से मुठभेड़ करते रहते हैं। अवधी में लिखते हुए पीयूष प्रायः तीन कविता प्रविधियाँ अपनाते हैं :-

1. नवगीत; 2. मुक्तछंद; 3. घनाक्षरी-सवैया आदि पारम्परिक छंद

'अंधरे के हाथ बटेर' में इन तीनों का समावेश है। नवगीत-चर्चा से पूर्व शेष दो पर विश्लेषणात्मक दृष्टि आवश्यक है। पीयूष की मुक्तछंदी कविता 'गांव' उनकी पर्यवेक्षण शक्ति, परम्पराबोध और लोकजीवन से सहज आत्मीयता को व्यक्त करती है। इसे डॉ. मत्स्येन्द्र शुक्ल 'हिन्दी काव्यधारा की छंदमुक्त कविताओं के सम्मुख चुनौती' मानते हैं। डॉ. शिवप्रसाद मिश्र का मानना है, 'ग्राम जीवन अथवा लोक जीवन की वास्तविक तस्वीर कवि ने अपनी लेखनी से खींचने का सुंदर उपक्रम किया है। कोई भी चित्र उसकी आंखों से ओझल नहीं हो सका है।' पीयूष जाति के महाभारत में अक्षौहिणी सेना का नेतृत्व करने वाले राजनीतिज्ञों, बुद्धिजीवियों और अन्य लोगों के सामने परम्परागत 'सहमेल की दिनचर्या' का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं :-

गांव मा बांभन अहैं
ठाकुर अहैं, बनिया अहैं
गांव मा नाऊ अहैं, बारी अहैं, बढ़ई अहैं
गांव मा लोनिया, गड़ेरिया औ लोहार
गांव मा बाटे अहिर, कुर्मी, मुराई
गांव मा कोरी अहैं, पासी अहैं
गांव चमकटिया अहैं धोबी अहैं लोधी अहैं
गांव सगरौ जाति का
एक्कै खटोला पै सोवावै
सबै काका, सबै दादा
सबका लरिका सब खेलावै
एक भुजइन है
चबैना सब भुजावै।

यह मुक्तछंदी कविता भारतीय समाज की ग्रामीण व्यवस्था का विराट बिम्ब है। इसमें 'संपूर्ण ग्रामीण संस्कृति प्रतिबिम्बित हुई है। रीति-रिवाज, मेला-ठेला, खेल मनोरंजन, खेती किसानी, पर्व उत्सव, शकुन अपशकुन, ग्रामीण विकास तथा गांवों में बढ़ते ईर्ष्या द्वेष, वैमनस्य आदि का बड़ा ही स्वाभाविक चित्रण किया गया है। गांव रचना में कवि ने प्रतीकों के माध्यम से धनिकों तथा बाहुबलियों द्वारा कमजोरों पर किए जानेवाले अमानवीय व्यवहार का कितना प्रभावपूर्ण वर्णन किया है।' ('नये पुराने' मार्च 2006/पृ. 196-197)। उल्लेखनीय यह है कि पीयूष गांव को लेकर आत्ममुग्धता नहीं पालते। यथार्थवाद अवधी कविता की मुख्य विशेषता है और उसके कई पुष्ट प्रारूप 'गांव' कविता में प्राप्त होते हैं। इसमें लम्बी कविता के तत्व भी हैं। जगदीश पीयूष और सुशील सिद्धार्थ अवधी में मुक्तछंद अपनाकर लम्बी कविताएं लिखते हैं और अन्य के लिए पथ प्रशस्त करते हैं।

'काली माई' शीर्षक से पीयूष ने 29 पारंपरिक छंद रचे हैं। इनमें आस्था और आधुनिकता का सम्मिलित स्वर है। बिम्ब विधायक भाषा और शब्द प्रवाह उत्तम है। जो तत्व मन खींचता है वह यह कि पीयूष चित्रभाषा में निपुण हैं:

'काली काली काली काली करर रही है दांत
अरा ररा करके पहाड़ टूटने लगे।'

आस्था के बीच भी पीयूष अपनी व्यंग्यभरी अभिव्यक्ति के लिए अवकाश निकाल लेते हैं। जैसे- 'माई चरणों में एक बाभन बवाली है' या 'पैंजनी बजी तो शेषनाग कांखने लगे' या 'कालनेमियों को राम का कपीश चाहिए' या 'जोर लगाकर चोर भगे सब भागे लबार औ भागे लुहाड़ा।' ये छंद पीयूष की काव्यशक्ति में निहित परम्परा बोध को व्यक्त करते हैं। आलोचक का अभिमत है, 'काली माई' कविता में कवि का समग्र रचना कौशल भागीरथी प्रवाह की तरह उत्ताल तरंगाघात करते हुए अग्रसर हो रहा है। कविता में तीव्र प्रवाह है, गति है, लय है, ताल है, छन्द है। अनुप्रास, रूपक, यमक तथा उपमा की छटा अविरल गति से प्रवहमान है। कहीं रौद्र, कहीं वीभत्स, कहीं हास्य तो कहीं करुणा का सागर हिलोरें ले रहा है।' (इन्दुप्रभा/दिसंबर-फरवरी 06/पृ. 88)।

सर्वोपरि हैं जगदीश पीयूष के 'नवगीत'। गीत-नवगीत के पारखी व रचनाकार दिनेश सिंह का विचार है, 'कविता के जिन मूल्य मानकों की स्थापना की चिन्तना में मौजूदा काव्य साहित्य, गीत साहित्य, बहसों मुबाहिसों से जूझ रहा है, वे सारे मूल्य अपनी स्वाभाविक भाषा लय में पीयूष के इन अवधी गीतों में सहज ही स्थापित हैं।' दिनेश सिंह एक सुसंगत-सुसिद्ध आलोचनात्मक विवेक के साथ निष्कर्ष देते हैं, '... लोकगीतों का शिल्पमान, रागभाव या भावप्रवणता, वस्तुनिष्ठता, आत्मपरकता, वैयक्तिकता में समष्टि, यथार्थ की चुटीली अभिव्यक्ति, व्यंग्य व विद्रोह की मुद्रा सांकेतिकता और संक्षिप्तता, वैचारिकता, सामाजिक विसंगतियों का उद्घाटन आदि ऐसे अनेकानेक सोपान हैं जिनमें उतरकर आपको पीयूष की इस अतिप्रासंगिक अवधी रचना का अर्थ व आनंद सहज ही प्राप्त हो सकेगा।'(अंधरे के हाथ बटेर/पृ. 17-18)।

पीयूष जिस जीवन से अपने अनुभव बटोरते हैं, उससे अगाध प्रेम भी करते हैं। कई 'चतुर सुजान' रचनाकार अनुभव प्रदाता जीवन/परिवेश को कच्चा माल मानते हैं। पीयूष जीवन/परिवेश के साथ जीतते/हारते हैं। इसके साथ रोष और परितोष का नाता है। नवगीतों में ग्रामीण परिवेश का चित्रित करते हुए, संगति-विसंगति व्याख्यायित करते हुए पीयूष अग्रांकित संदर्भ रेखांकित करते हैं-- गांव के सुख-समृद्धि की कामना, विवशता, अभाव, अशिक्षा, रूढ़ियां, संस्कृति-प्रेम, संस्कृति में निहित प्रतिरोध क्षमता, खादी का संत्रास, राजनीति का पतन, दलाली-ठेकेदारी, भ्रष्ट नौकरशाही, वोट का व्यापार, स्वार्थपरता, राष्ट्रीय असुरक्षा, अमरीकी दादागीरी, पंच परमेश्वर बनाम प्रपंच परमेश्वर, कमीशनखोरी, जनता की संपत्ति का बंदरबांट, दिल्ली का विचित्र चरित्र, पारिवारिक विद्वेष, गांवों में बढ़ता असंतोष-अनाचार-अन्याय-अपराध, भ्रष्ट पुलिस, महंगाई, कठिन जीवनयापन, सरकारी तंत्र, जनप्रतिनिधियों के कारनामे, गांवों में आते नये परिवर्तन, गांव का शहरीकरण, गांव में पहुंचती संचार क्रांति, वैश्वीकरण- बाजारीकरण, खेती में आती उपकरण क्रांति, ऋतुचक्र, कठिनाइयों में विहंसता जीवन, गर्मी-सर्दी-बरखा से जूझते लोग, ऋतुचक्र में जीवन के खट्टे-मीठे, मधुर गोपनीय-प्रकट अनुभव, शृंगार के अद्भुत आयाम, सौन्दर्य का देशज दर्प, नखरा, ठिठोली, ठसका, ओरहन, दुलार-पियार, स्मृतियां, वात्सल्य, जन्मोत्सव, विपन्नता, गोहार, ढहता सामंतवाद, स्त्रियों की स्थिति, पुरुष वर्चस्व की ताकाझांकी, दहेज दानव, भ्रष्टाचार और सब कुछ के बाद भी जीता-जागता गांव। यह सब व्यक्त करना कठिन होता यदि पीयूष के पास वह काव्य विवेक न होता जो बड़े धैर्य के साथ कविता के लिए राह बनाता है--एक गीत में पीयूष लिखते हैं :-

'बरैं अंधरू पड़उनू चबांय माई जी।
पइसा आवा सरकारी
पुला बनै कै तयारी
होय हेरा फेरी जाने ना खोदाय माई जी।'

दृष्टव्य है गीत की पहली पंक्ति लोकसंपत्ति अर्थात कहावत है, कवि ने इस कुशलता से उसे टांक दिया है कि शेष गीत इसका भाष्य बन गया है। इस भाष्य के भीतर भारतीय संस्कृति की सघन समीक्षा भी है। हम कितना भी सुभाषितों की खेती कर लें, कितने ही वेदमंत्र उचार लें और कितना ही तम से ज्योति की ओर धावा बोलते रहें--सत्य से असत्य की ओर कबड्डी खेलते रहें--जब तक आचरण में न्यूनतम नैतिकता-मनुष्यता का अवतरण न होगा तब तक अवसर मिलते ही 'निमरुआ मोटाय माई जी' और 'मिलि बांटि बांटि खांय डेकरांय माई जी'। पीयूष अल्प कथन और सांकेतिकता का महत्व जानते हैं। वे इन पंक्तियों में एक समूची 'लोलुप लीला' आंक देते हैं :-

'आवै जब जब धन।
बनि जाय करधन।।
गोरी पतली कमरिया पिराय माई जी।'

जनता के धन से गोरी पतली कमरियों के लिए करधन बनना वैसी ही प्रक्रिया है जिस पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने टिप्पणी की थी, 'पै धन बिदेस चलि जात यही बड़ि ख्वारी।' अब स्वदेशी लुटेरे-डकहा सक्रिय हैं, यही है आज का सत्य। यह 'जीवन सत्य' गांव में अधिक प्रत्यक्ष है। कारण यह कि गांव निरक्षरता और रूढ़ियों से ज्यादा त्रस्त है। जिन मूल्यों के कारण उसकी सहजता-समरसता बनी हुई थी, वे नये विकास के धमकच्चर में विचलित हो रहे हैं। यह विकास का अर्द्धसत्य पीयूष की नवगीतात्मकता समझाती है। 'कलजुग खरान' गीत में वे अनेक चिन्ताओं पर उंगली रखते हैं। नवयुवकों में पनपती बुराइयों तक पीयूष की दृष्टि गई है। यहां के प्रपंचपूर्ण परिवेश का सत्य वे खोलते हैं:-

'अब तौ कलजुग बहुत खरान।
देखा काव करै परधान।।
गउना होइगा नेतवन ताईं चारो धाम माई जी।
चुगुली चाईं जीना गांव म हराम माई जी।।'

यह निष्कर्ष बिल्कुल ठीक है कि, 'पीयूष जी का मन काव्य यात्रा पर जब भी निकला है, हृदय को साथ लेकर। अवधी लोकजीवन की संपन्नता देख वह प्रमुदित हुआ है तथा विपन्नता में वह बिफर पड़ा है। उसका दुख दर्द देखकर उनका कवि हृदय चुप नहीं रह सका है। मद्यपान, दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों को देखकर कवि हृदय कराह उठा है।' (इन्दुप्रभा--दिसंबर-फरवरी'6/पृ. 86)। कभी प्रेमचंद आदि लेखकों ने दहेज की विभीषिका पर प्रहार किए थे। युग बदला मगर यह लुटहा लेन-देन न बदला। लड़की की सामाजिक स्थिति से जुड़े इस 'बड़वार सवाल' पर पीयूष की मार्मिक दृष्टि गई है। वे दहेज के लोभियों को लील लेने के लिए काली माई का आवाहन तक कर डालते हैं। यह लोभ का 'समाजशास्त्र-धर्माचार' पीयूष के इन शब्दों में व्यंग्य और करुणा के साथ प्रकट हुआ है:-

'आये जेतना बराती।
खाये पिये दिनराती।।
मुला दुलहा क बपवा कोहान माई जी।
ई दहेजवा क पपवा मोटान माई जी।।
करै ममवा बवाल।
मचा धिंगरा धमाल।।
लागै पगला मंछिलवा टोनान माई जी।
ई दहेजवा क पपवा मोटान माई जी।।'

बिटिया बियाह के बाद 'गंगा नहाने' का मुहावरा इसीलिए संचरा होगा। एक प्रियकर्म के पीछे छिपा इतना धतकरम! तभी तो कवि जैसे भहराकर गिर पड़ता है:

'भवा बिटिया क बियाह।
नाहीं बाटै कवनो चाह।।
अपनी भगती म हमका लगावा माई जी।
गुन औरौ कवनो जियइ क बतावा माई जी।।'

यह कितनी 'विडम्बनापूर्ण आस्था' है। समाज में इज्जत बचा ले जाने की कवायद इतना थका डालती है कि फिर हारे को हरिनाम ही बचता है। इन स्थितियों में जीते व्यक्तियों की पीड़ा पीयूष के अवधी नवगीतों की आत्मा में धंसी है। फिर भी उनकी यह विनम्रता है कि अपनी रचनाशीलता को इन शब्दों में याद करते हैं, 'भाई दिनेश सिंह, जौन नये पुराने पत्रिका कै सम्पादक हैं... हमरे लंगोटिया साथी हैं, वे यहि किताब मा आपन बिचार ऐसा लिखेन जैसे हम कौनौ बड़ी चीज लिखि दीन्ह, हम तौ मलंगई म कुछ कविताई कइ दीन, अब अच्छी बनी होय अ बेकार, आपन समझा बूझा। हम तौ कबिन्ह केर पछलगा।' (अंधरे के हाथ बटेर/आपनि बात)। पीयूष की इस भावना पर सुशील सिद्धार्थ ने 'अंधरे के हाथ बटेर' पुस्तक पर लिखी समीक्षा में कहा है, 'आज जब वैचारिक लफंगई और दारुण दबंगई का बोलबाला है तब कवि पीयूष की यह 'मलंगई' मूल्यवान है। यह भी कह दूं कि पीयूष परम्परा का आदर करते हैं किन्तु पिछलग्गू नहीं हैं। वे इस समय अवधी की अस्मिता का समर लड़ रहे हैं और इन नवगीतों में उसका परचम लहरा रहा है।' लोकमर्मज्ञ कमलनयन पांडेय ने पीयूष की अवधी कविताओं पर सही टिप्पणी की है कि, 'ये कविताएं हमसे संवाद करती हैं। ऐसी कविताएं समय के समर में जनता का हथियार बनती हैं।' सुशील सिद्धार्थ के एक गीत में 'समय जुझारू बाजा जइसन आजु बजि रहा भइया' तो पीयूष के गीत में 'लड़ि गवा इराक अमरीका हुंवा पर/ तू हियां से कुछ तौ बोला हस्तिनापुर।' पीयूष के गीतों में हस्तिनापुर के लिए चुनौती है। दिनकर की कविता 'दिल्ली' और श्रीकांत वर्मा की कई कविताएं याद आ सकती हैं। यह परंपरा बोध और आधुनिक विवेक पीयूष के अवधी गीतों में निजता का निनाद उत्पन्न करता है।

यह विवेक जब परम्परा का संदर्भ पाता है तो धर्मप्राण देश में निष्प्राण होते धर्मतत्व की कसक पीयूष के गीतों में उतरती है-

'बने बड़े बड़े मठ
बइठ बड़े बड़े सठ
देखा धरम नदी के घरियार माई जी।
करैं टटिया के अड़वा सिकार माई जी।।'

यदि आधुनिक अवधी की पहली त्रयी पढ़ीस-बंशीधर-रमई काका की कविताओं का स्मरण करें तो पीयूष इसी परम्परा का समकालीन चरण हैं। पीयूष टटिया की ओट से शिकार करने वाले पोंगा पंथियों को चिन्हित करते चलते हैं। टटिया बन गया है धर्म--यह पीड़ा पीयूष को है। उन्हें विश्वास है कि गहरी सांस्कृतिक जड़ोंवाला यह देश निश्चित रूप से आत्म साक्षात्कार करेगा--'लड़ै लाठी से लंगोटी गऊदान माई जी।'

जगदीश पीयूष उस समय को पहचानते हैं जिसमें किसान अपने श्रम का उचित मूल्य नहीं पा रहा। ध्यान रहे यह देश कृषिप्रधान है। किसान की दुर्दशा 'किसान की अरजी' (बंशीधर शुक्ल) और 'किसान कै अरदास' (चतुर्भुज शर्मा) से होती हुई पीयूष के यहां इस तरह व्यक्त हुई है :-

'हलाकान बा किसान
ना बिकाय गोहूं धान
भवा जियरा हमार तौ ठठेर माई जी।
लागा अंधरे के हथवा बटेर माई जी।।'

इस संवेदनात्मक तीव्रता और वैचारिक आवेग को पीयूष की संवेद्य भाषा का सहारा मिला है। जगदीश पीयूष इस उक्ति को चरितार्थ करते हैं :-

'जिस तरह हम बोलते हैं उस तरह तू लिख।
और इसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख।।'

सुलतानपुर का अवधी-आस्वाद पीयूष की जनधर्मी नवगीतात्मकता में सम्मिलित है। वे मुहावरों, कहावतों, टटके शब्दों और लोकपारिभाषिकों का समुचित प्रयोग करते हैं। भाषा स्वच्छ बहती हुई नदी की तरह पीयूष के गीतों में है। एक उदाहरणः-

'घर मां रही चहै जंगल मां
तनहा चली चहै दंगल मां
कबौ दुआरे कबौ ओसारे।
देहे रहा आंचर कै छांव
आखर आखर तोहरे नांव।'

इस गीतांश को पढ़कर स्वर्गीय रामकृष्ण संतोष के एक छंद की यह पंक्ति कौंध जाती है, 'जांचक पूत की झोरी म आखर के दुइ चाउर डारि दे माई।' कहना न होगा कि ऐसे सार्थक 'अक्षर-अक्षत' ही जगदीश पीयूष का सर्वस्व हैं। उन्हें शब्द में सांस बांधे छिपे अर्थ की पहचान है। वे बड़े आदर व दुलार से इस अर्थ का आवाहन करते हैं। यह प्रक्रिया अवधी की प्रकृति है— 'सुमिरत सारद आवत धाई'। यही कारण है कि पीयूष के नवगीत भाव-भाषा-शिल्प-सोच की दृष्टि से पूर्णपरिपक्व-प्रखर-प्रबुद्ध हैं। अवधी के समकालीन रचनाकारों में अपनी तरह के विशिष्ट कवि हैं। उल्लेखनीय है कि पीयूष ने अवधी कविता को एक नया प्रवाह दिया है। उनके नवगीत 'त्रिधारा' को समृद्ध कर रहे हैं। यह धारा नवगीतों का 'पीयूषधर्मी प्रवाह' है।

इस प्रवाह में यदि उन नवगीतों का उल्लेख न हो तो बात मुकम्मल नहीं होगी जो श्रृंगार की विविध छवियों से प्रेरित-अभिमंडित-अभिमंत्रित हैं। ये आमंत्रित करते हैं कि अहं को खोकर रस के महासिन्धु में उतर जाया जाय। ध्यान रहे यह जमीन से जुड़ा श्रृंगार है। यह प्रसाद का 'आह रे वह अधीर यौवन' या पंत की बाला का बाल जाल नहीं है। यह रहीम के बरवै की नायिका का ठनगन है, यह पढ़ीस की 'बाला' की लुनाई है। इस सौन्दर्य-शृंगार में 'कुलीनता के कलंक' नहीं हैं जिसने 'रीतिकाल' और 'प्रयोगवाद' भरा पड़ा है। इसमें 'सहजता की शाश्वती' है। पीयूष ने 'मलीनता में छिपी महानता' को परख कर ही ऐसी अद्‌भुत अभिव्यक्तियां दी हैं:-

'नई नई चूरियां मंगाय दे मुरहुआ।
धानी रंग चुनरी ओढ़ाय दे मुरहुआ।।
पनवा के बिरवा म जिभिया चटाइ के खवाव मोरे राम।
निमिया के पेड़वा म डाइ के झुलनवा झुलाव मोरे राम।।'

जगदीश पीयूष जीवन की संपूर्णता के प्रसन्न-संपन्न रचनाकार हैं। उनके नवगीत अवधी को एक उत्कर्ष प्रदान करते हैं।

सुशील सिद्धार्थ

डॉ. रामबहादुर मिश्र

1997 में प्रकाशित अपने पहले अवधी कविता संग्रह 'बागन बागन कहै चिरैया' की भूमिका में सुशील सिद्धार्थ लिखते हैं, 'मुझे यह भी महसूस हुआ कि न जाने किन कारणों से अवधी साहित्य में सामाजिक परिवर्तन या सामाजिक संघर्ष उचित तरीके से दर्ज नहीं हो पा रहा है। ...जरूरत है अवधी भाषा को रचनात्मक प्रासंगिकता के आलोक में खड़ा करने की।' 2003 में प्रकाशित दूसरे कविता संग्रह 'एका' की भूमिका के ये वाक्य फिर इसी संकल्प को रेखांकित करते हैं, 'प्रायः अवधी भाषा की रचनाएं भावविगलित स्मृतियों या फसल परिगणन या हास्य तक सीमित मान ली जाती हैं। मेरा विनम्र मत है कि भाषा तो अभिव्यक्ति का माध्यम है। आज अवध समेत संपूर्ण भारत में जो कुछ घट रहा है, सबकी अनुगूंज और अभिव्यक्ति अवधी में होनी चाहिए। यह अवधी कविताएं आम नागरिक की स्पष्ट पक्षधरता से लैस हैं और हर उस विचार को नकारती हैं जो लोकतंत्र को अपने कुनबे तक सीमित मानता है।' सुशील सिद्धार्थ एक प्रतिबद्ध, जनपक्षधर और बहुआयामी अवधी-साहित्यकार हैं। वे स्वयं को 'तुलसी और पढ़ीस स्कूल' का कवि मानते हैं।

1988 में अवधी अध्ययन केन्द्र की स्थापना की और जनवरी 1989 में 'बिरवा' (अवधी त्रैमासिक) का प्रकाशन प्रारंभ किया। इन कार्यों को व्यापक हिन्दी जगत में पर्याप्त प्रशंसा प्राप्त हुई। संगठन और सम्पादन के साथ सिद्धार्थ ने 1988 में 'अंधियार पाखु' शीर्षक से अवधी के प्रथम आधुनिक और संपूर्ण उपन्यास की रचना की। इस उपन्यास का कई शोध प्रबंधों में विश्लेषण किया जा चुका है। जनसेवी संस्थाओं में सक्रिय होने एवं ग्रामीण जीवन व्यवस्था तथा नगरीय जीवन पद्धति से समान रूपेण परिचित होने के कारण सिद्धार्थ 'अवधी कविता' में एक कल्पान्तर लेकर उपस्थित हुए। 1997 में उनकी अवधी कविताओं का पहला संग्रह 'बागन बागन कहै चिरैया' प्रकाशित हुआ। इस कृति को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा 'जायसी नामित पुरस्कार' से अलंकृत किया गया। साथ ही, पाठकों व आलोचकों द्वारा इस संग्रह की अनेक कविताओं को महत्वपूर्ण माना गया। 'एका' शीर्षक से उनकी अवधी कविताओं का दूसरा संग्रह सन् 2003 में प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत संग्रह में सुशील सिद्धार्थ के नवगीत चुने गए हैं, किन्तु प्रसंगवश उनके द्वारा प्रयुक्त अन्य शैलियों का परिचय भी जरूरी है। दोनों कविता संग्रहों में सुशील सिद्धार्थ इन शैलियों का प्रयोग करते हैं :

1. गीत (या नवगीत), 2. ग़ज़ल, 3. दोहा, 4. पदगीत, 5. मुक्त छन्द, 6. आल्हा

अवधी कविता में कई कवि अपनी-अपनी तरह से इन शैलियों का प्रयोग करते रहे हैं। सुशील सिद्धार्थ इन शैलियों में अपने रचनात्मक सरोकार भरकर इन्हें एक अभिनव उत्कर्ष प्रदान करते हैं। जब वे अवधी ग़ज़ल लिखते हैं तो सामाजिक अव्यवस्था, राजनैतिक कदाचार, सांप्रदायिकता, पाखंड, स्वतंत्रता विमर्श, बाज़ारवाद, विद्रोह, प्रेम, प्रतिरोध, संबंध और नागरिक गरिमा को केन्द्र में रखते हैं। ज़ाहिर है ये

सब सुशील सिद्धार्थ के समूचे अवधी कवि कर्म का हिस्सा हैं। ये ग़ज़लें पढ़कर सुशील सिद्धार्थ को अवधी का दुष्यंत कुमार कहा जा सकता है। एक ग़ज़ल में वे कहते हैं :

'कौनी कोठिन मा छिपा है सूरजु।
वइसे बरसन ते उगा है सूरजु।।
रोसनी वहिका बोझु लागति है।
जेहिके कांधे पे लदा है सूरजु।।
कुछु छिपावति है कुछु देखावति है।
का कही केहिका सगा है सूरजु।।'

सुशील सिद्धार्थ की पचास से अधिक ग़ज़लें अवधी को अपनी तरह से समृद्ध करती हैं। उन्होंने दोहे कम लिखे हैं, फिर भी इस छन्द में उनके सरोकार देखे जा सकते हैं :

'झुर्रिनि मइहां छिपि गवा हउसन क्यार बजार।
अंसुवन मइहां बहि गवा मोर सिंगार पटार।।
x x x
बगुला मछरी लीलि गा तालु रहा खामोस।
बउरी दुनिया दै रही ई का उइ का दोसु।।

सुशील सिद्धार्थ एक लोकसिद्ध रचनाकार हैं। वे लोक में प्रचलित कविता पद्धतियों का पुनरुद्धार अपनी कविता में करते रहते हैं। उदाहरणार्थ उनके द्वारा लिखित 'आल्हा उर्फ जियौ साफिया'। एक सच्ची घटना पर आधारित यह आल्हा कविता और उसमें व्याप्त प्रतिरोधक ऊर्जा का प्रमाण है। यह आल्हा पढ़ने योग्य है कि जब एक स्त्री गांव के सवर्ण दबंगों से पीड़ित होती है तब किस तरह भाकपा (माले) और अन्य सामाजिक संगठन उसकी सहायता करते हैं। इसी क्रम में निकले जुलूस की प्रभविष्णुता का वर्णन कवि करता है :

'गुंडन केरी कब्र बनी अब ई धरती पर लाल सलाम।
धरती बोली अम्बर ब्याला सब जन बोले लाल सलाम।।
दसौं दिसा कै पवन आय कै हांक लगाइनि लाल सलाम।
ख्यात और गल्ली बगिया मा सब दोहराइनि लाल सलाम।।'

इस आल्हा में सुशील सिद्धार्थ परम्परा को समकालीन शक्ति से लैस करते हैं। वे निराला के प्रखर अध्येता हैं और यह बात उनके द्वारा मुक्त छंद में लिखित कविताओं से प्रकट होती है। भउजी, भोरु, स्वांचौ तौ, हौसिला, भीरा, जानै को, बटई, बाबा-1, बाबा-2, उइकी यादि-1, उइकी यादि-2, मदारी पासी, बुद्ध की बजार, जो बरा सो बुताना, तुम को आव, सूनु परा नीमसार, सीस पगा न, गोमा मैया, चउराहा और टबका आदि कविताएं छंद के साथ मुक्त छंद में कवि की रचनासिद्धि को व्याख्यायित करती हैं। इनमें सामाजिकता के जाने कितने उल्लास-संत्रास उपस्थित हैं। इस अर्थ में सुशील सिद्धार्थ अवधी में कवि त्रिलोचन की परम्परा को आगे बढ़ाते हैं। अवध में किसान आंदोलन के महानायक मदारी पासी पर लिखी कविता में वे कहते हैं :

'बतावति हैं जानिस्कार
जहां जाति रहै मदारी
हुवां खोदाय कै एकु गड्ढा

पानी भरिकै
कहै सबते छुवौ यहिका
औ खाव कसम
कि बेगारि न करब
भूखेन न मरब
एकु बने रहब
कोई जाति न पांति
है गरीबन कै एक्कै जाति।
यह तना किसानन मजूरन का
एका मा बांधति रहै मदारी।
अवध क्यार अनूठा जननायक
एकु भूला बिसरा सिपाही
एकु यादि करै लायक नेता।'

सुशील सिद्धार्थ मदारी पासी के 'एका आंदोलन' को फिर शुरू करने का प्रस्ताव रखते हैं। उनकी अन्य मुक्तछंदी कविताएं भी अवधी का एक नया युग निर्मित करती हैं।

'अवधी त्रिधारा' में सुशील सिद्धार्थ के पचीस नवगीत संकलित हैं। इन्हें पढ़ते हुए निराला की यह प्रसिद्ध पंक्ति कौंध जाती है, 'नवगति नवलय ताल छंद नव'। सुशील सिद्धार्थ के नवगीत अवधी में नवगति के शिल्पी हैं। उनके गीतों में जिस जनवाद की सक्रियता है उसकी ओर प्रसिद्ध अवधी मर्मज्ञ डॉ. श्यामसुंदर मिश्र 'मधुप' अपनी पुस्तक 'अवधी काव्य धारा' में संकेत करते हैं, 'डॉ. सुशील सिद्धार्थ अवधी के अच्छे प्रगतिवादी रचनाकार हैं। जनवाद में उनकी पूरी आस्था है। भाषा और भावभूमि दोनों क्षेत्रों में उन्होंने जनवादी चरित्र की पहचान बनाई है। उन्होंने सामाजिक तथा राजनीतिक विसंगतियों की जो धज्जियां उड़ाई हैं, वे स्तुत्य हैं। पूंजीवाद-पर उनके करारे व्यंग्य और धारदार तेवर देखने योग्य हैं। उनका नवयुवक कवि समझ रहा है कि अभी केवल राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई है परंतु आर्थिक स्वराज्य का युद्ध शेष है। अतः उसे लड़ा जाना है।' (पृ. 162)। यह सत्य है कि बुद्ध, विवेकानंद और अम्बेडकर के साथ कार्ल मार्क्स में आस्था रखने वाले सिद्धार्थ मीठे-मीठे नपुंसक गीत नहीं लिखते। उन्हें वंध्या व्यंजनाओं से घृणा है। समूची हिन्दी कविता का प्रतिरोधी स्वर परम्परा की तरह उनमें उपस्थित है। 'जोति कै गीत' में वे अपना संकल्प व्यक्त करते हैं :

'होय केतनेउ बिकट अंधेरु
जोति कै गीत जगाइब हो।
जी लड़िहै हक कै लड़ाई
उनकी महिमा गाइब हो।।'

सुशील सिद्धार्थ के अवधी गीत सचमुच 'सभ्यता समीक्षा' करते हैं। सभय और समाज की तमाम व्यथा कथा उनके इस 'पदगीत' में दृष्टव्य है। प्रसंगवश बताते चलें कि सिद्धार्थ ने 'हिन्दी गीति काव्य' के मूल 'पद' को पुनः प्रासंगिक बनाने का प्रयास किया है। इन्हें वे 'पदगीत' भी कहते हैं, नवगीत तो ये हैं ही। इनमें कबीर, तुलसी, रैदास आदि की परम्परा का सुखद प्राकट्य है। ...तो वह पदगीत इस प्रकार है :

'साधो, रोइ परेन तब जाना।
जौन छुरा मारिसि पीठी मा ऊ है मीतु पुराना।।

धीरे धीरे चिथरा होइगे हउसन के समियाना।
सोहर मनौ मर्सिया बनिगे अइस दर्दु गहिराना।।
अइस बखतु लगहिल कहार खुद लूटि लिहिनि हैं म्याना।
आपुलि आपुलि परी चहूं दिसि ठगवा भवा सयाना।।

उनके नवगीत जिन अंतर्वस्तुगत सरोकारों से युक्त हैं वे हैं-- नवपूंजीवाद-बाजार वर्चस्व का विरोध, साम्राज्यवादी साजिशों की चिन्ता, पर्यावरण की फिक्र, आमजन के जीवन पर ध्यान, परिवर्तन का स्वागत, जनशक्ति पर भरोसा, जनस्वाभिमान, संघर्ष-स्वप्न का सहमेल, ऋतुवर्णन, एकता-समता, शहीदों की स्मृति, जीवन में अटूट विश्वास, विसंगति-संत्रास, राजनीतिक दुश्चक्र, प्रशासन की तुच्छताएं, बढ़ता अकेलापन घटता संवाद, ग्रामीण प्रकृति का विनाश, आत्मीयता के संकट, बढ़ती गुंडई, बेहया शिक्षक और उत्तरदायित्व विहीन बुद्धिजीवी आदि। इन सरोकारों को सुशील सिद्धार्थ भांति-भांति से व्यक्त करते हैं। उनकी सर्वाधिक चिन्ताएं भ्रष्ट राजनीति से जुड़ी हैं। जाहिर है, वे एक स्पष्ट राजनीतिक विवेक से लैस रचनाकार हैं। यहां यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि अवधी में बंशीधर शुक्ल के बाद इतनी प्रखर, पुष्ट और परिवर्तनकारी रचनाएं सुशील सिद्धार्थ के यहां ही मिलती हैं। कुलीनतंत्र के ढीठपने को वे कितनी मार्मिकता से प्रकट करते हैं :

'उइ कहिनि तुमका हिस्से मा खंड़हरु मिला
अब जियौ या मरौ।
भूत जेहि पर बसैं अइस पीपरु मिला
अब जियौ या मरौ।।'

अपने नवगीत सरोकारों को सुशील सिद्धार्थ लोकलयों के अद्‌भुत सम्मिश्रण के साथ प्रस्तुत करते हैं। उन्हें संगीत का सम्यक् बोध है, इसलिए यति-गति और शब्द प्रवाह साहित्यिक गुणों को परिवर्द्धित करने में सहायक है। बाबा साहब पर लिखे गीत में इसकी गवाही मिलती है। इस संग्रह में मौजूद गीतों में तो कवि की क्षमताएं दिखती ही हैं, उन्होंने 'चमचों का गीत', 'दलालों का गीत', 'हत्यारे का गीत' आदि नौ गीतों की एक सीरीज में कथ्य और शिल्प के विलक्षण प्रयोग किए हैं। उनका एक गीत 'कोख की बिटिया का गीत' तो मार्मिकता में बेजोड़ है :

'तुमरे अंचरा का महकउबै
अम्मा कोखि म मारेउ ना।
तुमरे कुल का नाउं बढ़उबै
बाबू कोखि म मारेउ ना।।'

एक गीत में वनवासिनी सीता और अयोध्या की सत्ता को केन्द्र में रखकर सिद्धार्थ ने जीवन की सच्चाइयां व्यक्त की हैं :

'सोने कै दियना मा चमकै अजोधिया
सीता कै कुटिया अकेल हो।
माटी के दियना ते लव कुस ख्यालैं
बाती औ जोती का खेल हो।।'

यह वही जीवन का सच है जिसके बारे में सिद्धार्थ एक दूसरे गीत में कहते हैं :

'बदरा ब्वालै अम्बर ते
धरती ते दूब कहै।
जियरा भीतर केतना पानी
केतनी अगिनि रहै।।'

सुशील सिद्धार्थ के नवगीत आग और पानी के संयोग से ही बने हैं। विचित्र यह है कि जब पानी मिलता है तो आग का पराग और बढ़ जाता है। यह सघन संसक्ति जनभाषा और जनजीवन से उनके रिश्तों को लगातार संपन्न करती रही है। सुशील सिद्धार्थ ने बिरवा : 1 अंक के संपादकीय में लिखा था, 'जो क्षेत्रीय भाषाओं को गंवार मानकर इनके पास मजा मारने आते हैं अथवा जो हरी भरी भाषा पर क्षण भर बैठने आते हैं--उन्हें छोड़कर समस्त पाठकों का अभिवादन।' सिद्धार्थ किसी भी चीज को 'इस्तेमाल' करने के विरुद्ध रहे हैं। इसी के चलते 'अवध ज्योति' के 2 अक्तूबर 1994 के अंक में उन्होंने 'बंशीधर शुक्ल' का इस्तेमाल कर रूमाल की तरह फेंक देनेवालों की ख़बर ली थी।

सुशील सिद्धार्थ विभिन्न प्रयोगों से अवधी कविता को और विकसित करते रहते हैं। उन्होंने 'लघु नवगीत' शीर्षक से कई रचनाएं लिखी हैं, जिनमें से तीन 'अवध ज्योति' (जून'95) के अंक में छपीं। दो प्रस्तुत हैं :-

'भोरहे ते संझा तक
बिनु कउनौ झंझा के
बंगी जस नाची हम।
दोंय दोंय ब्यांत परैं
जूता औ लात परैं
कब्बौ जब हिम्मति ते
बात कही सांची हम।।'

रचनाशीलता की बहुआयामिता और गुणवत्ता के कारण ही एक लेख में प्रसंगवश पं. सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश' ने सुशील सिद्धार्थ को 'अवधी की श्री समृद्धि के व्रती और साधक' कहकर संबोधित किया है। (संदर्भ- 'बिरवा' : अंक 6, पृ. 11)। कोई भी रचनाकार निरंतर सचेत रहकर ही भाषा को समृद्ध करता है। उसके प्रयोग साहित्य में नये रास्तों का उद्‌घाटन करते हैं। अवधी नवगीत को कई तरह के संवेदनात्मक प्रयोगों से वे प्रगतिशील करते हैं। कुछ गीतांश उदाहरण रूप में प्रस्तुत हैं :

i) *बूझ मोरा का नाउं रे।*
नरक किनारे गाउं रे।।
कुतवा झांकति मोरे अंगना।
भेड़हा ढूंढ़ति दाउं रे।।

ii) *या हंसी कइसे बचायो।*
पीठि पर घेठ्ठा परे अस दुखन कै ब्वारा उठायो।।

iii) *अफसरन केर तरवा चाटैं*
ई प्रेमचंद के वारिस हैं।
बिनु मेहनति के धन मा ल्वाटैं
ई प्रेमचंद के वारिस हैं।।

सुशील सिद्धार्थ के एक जनगीत के बहाने कर्मठ साथी कामरेड डॉ. बृजबिहारी कहते हैं, 'सुशील

सिद्धार्थ की कविताएं हिन्दी कविता के प्रचलित चौखटे के भीतर सीमित रहने वाली कविताएं नहीं हैं। न तो बयान के लिहाज से न ही अंदाजे बयां के लिहाज से। गांवों के समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति से जनता कितनी उत्पीड़ित है और इस उत्पीड़न के खिलाफ प्रतिनाद की धारा कितनी बलवती है, जनता के गांव के जनप्रतिनिधि का अपना सरोकार क्या है और वह किस भूमिका में खड़ा है— जनता को संबोधित प्रधान के वर्ग चरित्र को स्पष्ट करती सुशील की यह कविता गांवों में एक बड़े सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक बदलाव का हथियार बन रही है।' यहां डॉ. बृजबिहारी जिस कविता (गीत) की ओर संकेत कर रहे हैं वह यह है :-

'मनहेम नाचि रहे परधान।
पांच सालु बदि फिरि मिलिगा है लूटै का बरदान।।
गाउं गवा अइसी तइसी मा ख्यालै सार कबड्डी
यहिकी खातिनि मेहनति कै को तूरे आपनि हड्डी
पहिलि योजना के रुपयन ते पक्का बनी मकान।।

सुशील सिद्धार्थ ऐसे बेधक गीत लिखते हैं जो कई व्यक्तियों के दायित्वों को तय करते भी दिखते हैं। यह गीत एक विधायक की 'नमक हरामी' को उजागर करता है :-

'जौ किसान लिहिनि फसरी लगाय
जौ गरीब गवा जर ते बिलाय
यहिमा ई का करैं
ई बिधायक जी आयं
गाड़ी आगे बढ़ावौ हो।
कालिस आगे बढ़ावौ हो।।

सुशील सिद्धार्थ 'विषयवस्तु' का इस प्रकार विस्तार करते हैं कि समय का पूरा यथार्थ प्रकट हो जाता है। 'नदी' गीत में यह विस्तार जैसे समय का प्रतिमान बन जाता है :-

'जब घाट ना रही
जब हाट ना रही
जब भोर सांझि सब अथाह मा समाय जइहैं
तुम यहे तना बहिहौ ओ मैया!'

व्यंग्य सुशील सिद्धार्थ के गीतों का लगभग अनिवार्य तत्व है। वे कई तरह से इसका प्रयोग करते हैं। इसी शक्ति के सहारे वे उन व्यक्तियों, शक्तियों, संस्थाओं और सिद्धांतों से टक्कर लेते हैं जो धूर्तता, हरामखोरी, प्रपंच, चंटई और विश्वासघात के प्रतीक बन जाते हैं। उदाहरणार्थ 'डाक्टर ठग्गू' गीत में एक ऐसे व्यक्ति पर प्रहार है जिसने दूसरे की मेहनत का पैसा गायब कर दिया है। सिद्धार्थ प्रतिरोध में विश्वास करते हैं। 'बरैया' गीत में वे कहते हैं :

'जौ दाब परै तौ काटि लेय
तुमते तौ नीकि बरैया।।
तुम घींच लचाये चले जाउ।
सौ जूता खाये चले जाउ।

वस्तुतः वे अमूर्तन से बचनेवाले रचनाकार हैं, इसलिए प्रत्यक्ष और उसके पीछे छिपे कारणों पर सम्यक् विचार करते हैं। अवधी में पढ़ीस और बंशीधर शुक्ल ने यह राह दिखाई है। सिद्धार्थ जैसे कवि

इसी राह पर चल रहे हैं। व्यंग्य वैसे भी अवधी कविता का प्रमुख अस्त्र है। हां, सुशील सिद्धार्थ 'हास्य' से परहेज करते हैं। छिछले हास्य के स्थान पर मार्मिक व्यंग्य को वे प्राथमिकता देते हैं। जींवन के कटु अनुभवों ने भी उनमें ऐसे विचार भरे हैं कि वे जगत की तीखी समीक्षा करते हैं। इस 'समीक्षा' में एक व्यापक सामाजिक दृष्टिकोण की उपस्थिति उनके नवगीतों की विशेषता है।

सुशील सिद्धार्थ का 'एका' और 'जोति कै गीत' जनस्वाभिमान को पूरी ऊर्जा के साथ शब्दबद्ध करता है। नैतिकता और साहस की अनुगूंज 'औरु का' की इन पंक्तियों में सुनी जा सकती है :

'पाखु अंधियारु जब राह का खाइ गा
एकु बौंड़रु हजारन जुलुम ढाइ गा
तब गवाही किरन की दिहेन, औरु का!
हम दिया जइस जिन्दा रहेन, औरु का!!'

यही कारण है कि 'अवधी त्रिधारा' में उनकी रचनाओं का अमंद-स्वच्छंद प्रवाह सम्मिलित हुआ है। इन रचनाओं की भाषा भी उल्लेखनीय है। डॉ. कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह ने 'बिरवा' के 'आचार्य विश्वनाथ पाठक' विशेषांक में छपे अपने लेख में तुलसीदास द्वारा विकसित 'अवधी के सार्वदेशिक रूप' की बात विस्तार से कही है और अति आंचलिक आग्रहों के चलते अवधी के आधुनिक विकास के वाधित होने पर चिन्ता भी प्रकट की है। सुशील सिद्धार्थ 'अवधी के सार्वदेशिक रूप' को ही स्वीकार कर अग्रसर हुए हैं। यही अवधी का मानक स्वरूप है। सीतापुरी और लखनवी अवधी के मिश्रण से सिद्धार्थ ने यह रूप बनाया है। भाषिक ध्येय तुलसीदास का.... प्रक्रिया सिद्धार्थ की। एक उदाहरण :-

'आंखि क्यार पानी मरिगा तौ देखाय कइसे पानी।
बनिकै आतिमा का मोती जगमगाय कइसे पानी।
हमरा चित्तु मानौ सूखि राजधानी होइ गवा।
अइसि बेहयाई
पानी, पानी पानी होइ गवा।।'

सिद्धार्थ भाषा में सहजता का सौन्दर्य अर्जित करते हैं। कई बार मुहावरों के प्रयोग से वे भाषा का घनत्व बढ़ाते हैं। स्फीति का कहीं नाम नहीं है और 'अरथ अमित अति आखर थोरे' का आदर्श मान्य है। अवधी शोध और आलोचना के रामचन्द्र शुक्ल माने जाने वाले डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र ने सुशील सिद्धार्थ की रचनात्मक क्षमताओं को इन शब्दों में प्रशंसित किया है :

'बिरवा अवधी क्यार यहु, फूलै फलै अकूत।
सींचिनि तुलसी जायसी, तकु सिद्धार्थ सपूत।।'

(बिरवा : 2, अप्रैल 1989, पृ. 7)

अपने दो कविता संग्रहों 'बागन बागन कहै चिरैया' और 'एका' से अवधी कविता में स्थायी स्थान बना लेनेवाले सुशील सिद्धार्थ के नवगीत एक 'नवप्रस्थान' हैं। वे राहुल सांकृत्यायन, राजकमल चौधरी, त्रिलोचन, बाबा नागार्जुन और गोरख पांडेय की परम्परा में खड़ी बोली हिन्दी तथा अपनी विभाषा में समान रूप से सक्रिय, समर्थ एवं सुपरिचित हैं। **अपनी व्यापक जीवनदृष्टि, जनप्रतिबद्धता, राजनीतिक विवेक तथा रचनात्मक क्षमता के कारण सुशील सिद्धार्थ यदि 'अवधी के नागार्जुन' के रूप में सर्वसमादृत हों, तो आश्चर्य न होगा।**

जनपदीय अवधी साहित्य

विभिन्न जनपदों के प्रमुख अवधी साहित्यकार

आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप'

जनपद सुलतानपुर

1. अजमल सुलतानपुरी
2. असविन्द कुमार द्विवेदी
3. अख्तर इसौलवी
4. अशोक कुमार पाण्डेय 'अनहद'
5. अच्छेलाल शुक्ल 'रसिक'
6. अर्जुनप्रकाश त्रिपाठी 'गँवार'
7. अवनीन्द्र नाथ 'कमल'
8. अर्चना शुक्ला
9. आद्या प्रसाद सिंह 'प्रदीप'
10. आनन्द कृष्ण 'जायसवाल'
11. इन्द्रजीत पाण्डेय 'घायल'
12. ईश्वरी प्रसाद शर्मा
13. उमेशदत्त श्रीवास्तव 'सुमन'
14. ओंकारनाथ श्रीवास्तव
15. ओंकारनाथ द्विवेदी
16. ओमप्रकाश दुबे 'प्रकाश'
17. ओंकार नाथ सिंह 'विभाकर'
18. कमल नयन पाण्डेय
19. कमला शुक्ला
20. कृपाशंकर लाल 'शंकर'
21. कृष्णमणि चतुर्वेदी
22. कपिलदेव त्रिपाठी 'शैलानी'
23. कालिका प्रसाद त्रिपाठी
24. कृष्ण कुमार मिश्र
25. किशोरदास 'सन्त'
26. गुरुदीन सिंह 'दीन'
27. गुरुदत्त सिंह 'भूपति'
28. गोदावरी सिंह
29. चन्द्र भान सिंह
30. जगदीश पीयूष
31. जाहिल सुलतानपुरी
32. त्रिलोचन शास्त्री
33. दयाराम 'कंचन सुलतानपुरी'
34. दयाराम अटल
35. दूधनाथ शुक्ल 'करुण'
36. पवन कुमार सिंह
37. प्रभुनाथ शास्त्री तिवारी
38. प्रतिभा सिंह
39. भवानी प्रसाद पाठक 'नीरज'
40. मथुरा प्रसाद सिंह 'जटायु'
41. मदन मोहन पाण्डेय 'मनोज'
42. मनोराम मिश्र 'मनोरम'
43. मंजुल
44. राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय 'गड़बड़'
45. राजेन्द्र शुक्ल 'अमरेश'
46. रामअकबाल त्रिपाठी 'अनजान'
47. रामचन्द्र शुक्ल शम्बर
48. रामबहादुर मिश्र 'अवधेन्दु'
49. राम समुझ 'चट्टान'
50. राम सुभग पाण्डेय 'विकल'
51. रामानुज मिश्र 'अनुज'
52. राम नयन सिंह 'काका'
53. राम सूरत 'अनाम'

54. रामराज सिंह
55. रामेश्वर सिंह 'निराश'
56. रमाशंकर यादव 'विद्रोही'
57. राघवराम मिश्र 'मलूक'
58. राम प्यारे प्रजापति
59. ऋषिराम मिश्र 'सम्राट'
60. लाल शीतला शरण सिंह
61. बृजेश कुमार पाण्डेय 'इन्दु'
62. वेणीमाधव पाण्डेय 'व्यास'
63. वंशराज वर्मा 'प्रलयंकर'
64. विजय प्रकाश 'अकेला'
65. विनोद कुमार मिश्र
66. बैजनाथ शुक्ल 'भव्य'
67. सियाराम विश्वकर्मा 'पवन'
68. शम्भूनाथ पाठक 'पंकज'
69. स्वराज्य बहादुर सिंह 'अटल'
70. संकटा प्रसाद सिंह 'देव'
71. शिवमूर्ति पाण्डेय 'कुबरी'
72. शिवनाथ यादव 'उत्साही'
73. शिवराम 'चक्रवर्ती'
74. हनुमान प्रसाद 'हनुमत'
75. हनुमान प्रसाद तिवारी
76. हरीलाल मिश्र 'सदोष'

जनपद बाराबंकी

1. अनिल श्रीवास्तव
2. अल्हड़ गोण्डवी
3. कमलेश चन्द्र मिश्र
4. कृष्ण शलभ
5. गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द'
6. जलाल अहमद खाँ 'तनवीर'
7. पुरुषोत्तम 'प्रभु लाडले'
8. मनीराम अवस्थी
9. भगवती प्रसाद अवस्थी
10. राघव बिहारी सिंह
11. रामकिशोर त्रिपाठी
12. बृजेन्द्र मिश्र
13. शिवहर्ष पाठक
14. शिवकुमार गुप्त
15. श्यामनाथ द्विज 'श्याम'
16. सच्चिदानन्द तिवारी 'शलभ'
17. सुरेश अवस्थी
18. बृजलाल भट्ट 'बृजेश'
19. गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश'
20. अम्बरीश 'अम्बर'
21. कृपाशंकर त्रिपाठी 'प्रशान्त'
22. केशवराम शुक्ल 'केशव'
23. गिरधारी लाल 'पुण्डरीक'
24. जगदीश सिंह 'नीरद'
25. ओम प्रकाश 'जयन्त'
26. पुरुषोत्तम शरण मिश्र
27. महेश दत्त शुक्ल
28. रामनरेश दीक्षित
29. रामेश्वर प्रसाद द्विवेदी
30. लाल अवध नारायण
31. वेद प्रकाश सिंह
32. ब्रह्मदत्त तिवारी 'ब्रह्माण्ड'
33. श्यामनारायण अग्रवाल 'विटप'
34. सहजराम 'विमल'
35. राम बहादुर मिश्र 'अवधेन्दु'
36. नरेन्द्र त्रिवेदी
37. हिमाचल राम

जनपद प्रतापगढ़

1. अवध नारायण शुक्ल 'वियोगी'
2. अनीस देहाती
3. आद्या प्रसाद 'उन्मत्त'
4. ओंकार नाथ उपाध्याय
5. चन्द्रेश बहादुर सिंह 'पागल'
6. जुमई खाँ आजाद
7. निर्झर प्रतापगढ़ी
8. पारस नाथ मिश्र 'भ्रमर'
9. परशुराम उपाध्याय
10. प्रेमशंकर द्विवेदी 'भास्कर'
11. योगेन्द्र मिश्र 'मणि'
12. रघुवीर सिंह पवन

13. राजेन्द्र प्रसाद 'राज'
14. राजनारायण शुक्ल 'राजन'
15. राधेश्याम 'दीन'
16. रामसमुझ मिश्र 'अकेला'
17. रामधीरज सिंह 'धीर'
18. विजय बहादुर सिंह
19. शीतला प्रसाद अग्रहरि
20. सती चन्द्र प्रेमी
21. देवव्रत मिश्र
22. सागर सत्यार्थी
23. सुनील कुमार मिश्र 'प्रभाकर'

जनपद फैजाबाद/अम्बेडकर नगर

1. आचार्य विश्वनाथ पाठक
2. जियाराम शुक्ल 'विकल साकेती'
3. करुणेश
4. कोमल शास्त्री
5. ब्रह्मदेव यादव 'मधुकर'
6. प्रकाश द्विवेदी
7. रफीक सादानी
8. राधा पाण्डेय
9. रामनाथ शास्त्री
10. भाल चन्द्र त्रिपाठी
11. दयानन्द सिंह 'मृदुल'
12. शीतला प्रसाद शुक्ल
13. नरसिंहचारी 'भ्रमर'
14. हरीराम मिश्र
15. प्रेमशंकर मिश्र
16. टाटम्बरी जी
17. जगदीशनारायण तिवारी 'लोकेश'
18. भवानी भीख त्रिपाठी
19. रमापति द्विवेदी
20. ठाकुरप्रसाद पाण्डेय 'मधुर'
21. राज बली यादव
22. राम जवाहिर द्विवेदी
23. सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश'
24. श्यामजी पाण्डेय
25. हरिप्रसाद मिश्र
26. हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल'

जनपद लखनऊ

1. उमाशंकर शुक्ल 'शितिकण्ठ'
2. गोविन्द मिश्र
3. परमानन्द जड़िया
4. योगेश दयालु
5. रमाकान्त श्रीवास्तव
6. लालता प्रसाद जायसवाल
7. रामकुमार मिश्र 'घोंघा'
8. सुशील सिद्धार्थ
9. बृजकिशोर त्रिवेदी 'बृजेश'
10. सद्धर्म सृजन निगम
11. शंकर सुलतानपुरी
12. भारतेन्दु मिश्र
13. ओमप्रकाश मिश्र 'प्रकाश'
14. दिवाकर अग्निहोत्री
15. मनीराम अवस्थी
16. योगेन्द्र प्रताप सिंह
17. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'
18. विद्याविन्दु सिंह
19. सनकी लखनवी
20. मुहम्मद अखलाक
21. सच्चिदानन्द तिवारी
22. शारदा प्रसाद वर्मा 'भुशुण्डि'
23. वैजनाथ प्रसाद शुक्ल 'भव्य'

जनपद बहराइच

1. पारस भ्रमर
2. सत्यव्रत सिंह
3. राम सुमिरन बाजपेई
4. रक्षाराम त्रिपाठी
5. राजितराम मिश्र
6. राम औतार सिंह 'मोद'
7. जगदीशप्रसाद त्रिपाठी 'जलधि'
8. हरिभक्त सिंह 'पँवार'
9. सूर्यप्रताप पाण्डेय 'पंकज'
10. सत्यप्रकाश सिंह 'प्रकाश'
11. राम भरोसे त्रिपाठी

12. माधव राम अवस्थी
13. श्रीधर पाठक
14. गीता श्रीवास्तव

जनपद गोण्डा

1. विश्वनाथ सिंह 'विकल'
2. ब्रजभूषण श्रीवास्तव
3. जगदीश सिंह 'निर्भीक'
4. अवनीन्द्र विनोद
5. सतीश आर्य
6. बेकल उत्साही
7. आदित्य वर्मा
8. महेन्द्र नाथ पाण्डेय

जनपद उन्नाव

1. रमई काका
2. द्वारिका प्रसाद मिश्र
3. देवीशंकर द्विवेदी
4. शिवप्रसाद वर्मा
5. धर्मदत्त द्विवेदी
6. भानुदत्त त्रिपाठी 'मधुरेश'
7. केदार नाथ तिवारी
8. अरुण त्रिवेदी
9. काका बैसवारी
10. सुमित्रा कुमारी सिंह
11. कृपाशंकर मिश्र 'निर्द्वन्द'
12. सूर्य प्रसाद द्विवेदी
13. वागीश शास्त्री
14. सूर्यप्रसाद शर्मा 'निशिहर'
15. घूरू प्रसाद किसान
16. डॉ. महावीर सिंह
17. मनीराम द्विवेदी 'नवीन'

जनपद लखीमपुर

1. वंशीधर शुक्ल
2. सत्यधर शुक्ल
3. फारूक सरल
4. गजराज सिंह यादव 'अमर'
5. प्रसाद गेजरहा
6. जगदीश अवस्थी
7. टोडस प्रसाद शुक्ल
8. ओम नीरव

जनपद सीतापुर

1. आदित्य प्रसाद अवस्थी
2. उमादत्त बाजपेई
3. कुंवर योगेश बहादुर सिंह
4. केदारनाथ द्विवेदी 'नवीन'
5. गणेश दत्त सारस्वत
6. गजराज सिंह यादव
7. जागेश्वर बाजपेई
8. बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस'
9. माधव चरण अवस्थी
10. युक्तिभद्र दीक्षित
11. रामकृष्ण 'संतोष'
12. विन्ध्येश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव
13. श्याम सुन्दर मिश्र 'मधुप'
14. श्रीप्रकाश
15. लक्ष्मण प्रसाद 'मित्र'
16. उमादत्त सारस्वत
17. उमाप्रसाद बाजपेई 'सुजान'
18. कमलेश मौर्य 'मृदु'
19. कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह
20. गंगा प्रसाद शर्मा
21. चतुर्भुज शर्मा
22. तुलाराम बाजपेई
23. पुत्तूलाल चन्द्राकर
24. महेन्द्र कुमार शास्त्री 'सरल'
25. महेन्द्र कुमार बाजपेई
26. रामदत्त तिवारी 'कुलीन'
27. लवकुश दीक्षित
28. ब्रजभूषण तिवारी 'बृजेश'
29. श्याम सुन्दर शर्मा 'कलानिधि'
30. सोम दीक्षित

जनपद जौनपुर

1. कृष्णकान्त एकलव्य
2. दूधनाथ शर्मा 'श्रीश'
3. माता प्रसाद
4. रूपनारायन त्रिपाठी
5. शोभ नाथ अनाड़ी
6. शिवलोचन तिवारी
7. गफ्फार मछलीशहरी
8. द्वारिका प्रसाद तिवारी 'ब्रजनाथ'
9. बाबा उमाशंकर
10. मंगला प्रसाद
11. रामलखन यादव 'अनपढ़'
12. श्रीपाल सिंह 'क्षेम'

जनपद रायबरेली

1. अमर बहादुर सिंह 'अमरेश'
2. अब्दुल रसीद खाँ
3. इन्द्रेश बहादुर सिंह
4. कौशलेन्द्र पाण्डेय
5. गिरिजेश सूर्यबक्स सिंह
6. चंद्रिका प्रसाद बाजपेई
7. जगऊ यादव
8. देवकी नन्दन श्रीवास्तव
9. दिनेश सिंह
10. पाण्डेय रामेन्द्र
11. महेश नारायण अवस्थी
12. रामस्वरूप मिश्र 'विशारद'
13. राम प्रकाश यादव 'निर्झर'
14. राम दुलारे 'विद्याधर'
15. वीरेन्द्र प्रताप सिंह
16. शेषपाल सिंह 'शेष'
17. शारदा प्रसाद शुक्ल 'शारदेश'
18. अमरनाथ बाजपेई 'प्रकाश'
19. आनन्द प्रकाश अवस्थी
20. ऋषि कुमार मिश्र
21. गुदड़ी के लाल
22. चक्रपाणि पाण्डेय
23. चन्द्रशेखर पाण्डेय
24. जी.एन. 'व्याकुल'
25. देवीरत्न अवस्थी 'करील'
26. बृजकिशोर पाण्डेय 'बृजनन्दन'
27. महेन्द्र कुमार वर्मा 'नयन'
28. रमाकान्त श्रीवास्तव
29. रामकृष्ण यादव
30. राजेश कान्त भ..ौरिया
31. लक्ष्मी प्रसाद 'प्रकाश'
32. शम्भू शरण द्विवेदी 'बन्धु'
33. शम्भू दयाल सिंह 'सुधाकर'
34. रामकेवल वर्मा 'केवल'
35. अशोक अज्ञानी

प्रकीर्ण अवधी साहित्यकार

1. त्रिभुवन नाथ शुक्ल, जबलपुर
2. दयाशंकर देहाती, कानपुर
3. भागवतप्रसाद मि.. वागीश, बांदा
4. कैलाश गौतम, इला..बाद
5. वाहिद अली 'वाहिद', लखनऊ
6. रफीक सादानी, फैजाबाद
7. रमेशचन्द्र अस्थाना 'सुकंठ',हरदोई
8. डॉ. श्याम तिवारी, हरैय्या, बस्ती
9. डॉ. योगेश चन्द्र दुबे, चित्रकूट
10. शिव प्रसाद गुप्त 'पागल',सहडोल
11. डॉ. अनुजप्रताप सिंह, मिर्जापुर

अवधी का क्षेत्र बहुत बड़ा है। लगभग 20 जिलों में पूरी तरह अवधी भाषा, उसका क्रियापद और उसका साहित्य बिखरा पड़ा है। हर जनपद में सौ से अधिक साहित्यकारों ने अवधी में कलम चलायी है। इसका व्यापक सर्वेक्षण अपेक्षित है।

फैजाबाद जनपद के प्रमुख अवधी रचनाकार

पं. सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश'

अवध क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा 'अवधी' है। इसके तीन रूप हैं– पश्चिमी, मध्यवर्ती तथा पूर्वी। अवधी फैजाबाद और उसके आसपास बोली जाती है। यही सर्वमान्य वास्तविक अवधी है। इसकी साहित्यिक परम्परा बहुत प्राचीन है। उपलब्ध कृतियों में मुल्ला-दाऊद-रचित 'चन्दायन' प्राचीनतम रचना है। इसकी रचना 1379 ई. में हुई थी। इसके वाद मलिक मुहम्मद जायसी की अमर कृति 'पद्मावत' की रचना हुई। 'जायसी' ने इससे पूर्व की कुछ रचनाओं– 'मुग्धावती', 'मृगावती' और 'मधुमालती' का उल्लेख किया है।

अवधी में काव्य रचना हिन्दू और मुसलमान– दोनों प्रकार के कवियों ने की है। मुसलमान कवि सूफी थे। उन्होंने फारसी काव्य-पद्धति से सूफी प्रेम-दर्शन की व्यंजना की है। उन्होंने लोक-प्रचलित प्रेम-कथाओं के आधार पर दोहे-चौपाई में आख्यानक प्रबन्धों की सृष्टि की, जिनके अनुसरण पर आगे 'रामचरितमानस' की रचना हुई है। इसलिए प्रबंधशिल्प की दृष्टि से इनका अशेष महत्व है। दूसरे, ठेठ अवधी की लोक-व्यंजना की दृष्टि से 'जायसी' अनूठे हैं। कदाचित् अवधी भाषा की व्यंजना शक्ति की पहचान कराने वाला ऐसा समर्थ कवि दूसरा नहीं है। प्रेम-प्रबंधों की रचना करने वाले हिन्दू कवियों ने भारतीय प्रेम-पद्धति का आश्रय लिया है। यह परम्परा प्राकृत, संस्कृत और अपभ्रंश से होती हुई हिन्दी में पहुँची है। इस प्रकार, अवधी को प्रबन्ध काव्य की भापा के रूप में प्रतिष्ठित करने में मुसलमान तथा हिन्दू कवियों का समसमान योगदान है।

आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने गाँव की अवधी-भाषा में काव्य-रचना पर जोर दिया था। उनसे प्रेरित होकर 'प्रेमघन' का भी इधर झुकाव हुआ। बाबा बनादास ने 'उभय-प्रबोधक-रामायण' लिखकर अवधी को अच्छा प्रबन्ध-काव्य दिया। उनके साथ ही कानपुर के प्रतापनारायण मिश्र, लखनऊ के बलभद्र मिश्र, प्रयाग के परसन और 'नवम ब्रह्मपुराण' के रचयिता लुरखुर ने अवधी में अनेक रचनाएँ लिखी। इसी समय रसिक-सम्प्रदाय के विपुल कवियों ने अपनी लेखनी उठायी। अयोध्या के भक्तकवि बाबा रघुनाथदास रामसनेही ने 'विश्रामसागर' और जानकीप्रसाद 'रसिकविहारी' ने 'राम रसायन' लिखा।

ब्रजभूषण त्रिपाठी 'ब्रजेश', महिपाल सिंह, बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस', द्वारिका प्रसाद मिश्र, भवानी भीख त्रिपाठी 'दिव्य', वंशीधर शुक्ल, माधव व्यास, 'मुनीश', लक्ष्मी शंकर मिश्र 'निशंक', उमादत्त सारस्वत, त्रिलोचन शास्त्री, गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश', दयाशंकर दीक्षित 'देहाती', ब्रजनंदनपाण्डेय, डॉ. श्याम तिवारी, श्यामसुन्दर 'मधुप', केदारनाथ त्रिवेदी, द्वारिकाप्रसाद यादव, रमाकान्त श्रीवास्तव, विश्वनाथपाठक, रूपनारायण त्रिपाठी, श्रीपाल सिंह 'क्षेम', लवकुश दीक्षित, युक्तिभद्र दीक्षित, जुमई खाँ 'आजाद', आद्याप्रसाद 'उन्मत्त', जगदीश पीयूष, सुशील सिद्धार्थ आदि ने अवधी-काव्य-परम्परा को समृद्ध करने में प्रशंसनीय योगदान किया है।

अवधी काव्य परंपरा में नवोत्थान :

उपर्युक्त कवियों में अधिकांश काव्य के परम्परागत साँचे में काव्य-रचना करने वाले तथा नये छन्दों और शैलियों में गीत, मुक्तक और प्रबन्ध रचने वाले, दोनों प्रकार के रचयिताओं के नाम हैं। कवित्त, सवैया, रोला, घनाक्षरी (रूप, देव, कृपाण आदि), कुंडलिया आदि छन्दों के साँचे में जो काव्य-भाषा उभरकर आ रही थी, वह व्रजभाषा मिश्रित बैसवाड़ी या पूर्वी अवधी थी। इन कवियों ने अधिकतर पुराने विषयों ही पर अपनीलेखनी चलायी, लेकिन दूसरे प्रकार के कवियों ने ठेठ भाषा के आग्रह को स्वीकार किया। इनमें पुराने छन्दों के साथ लोकगीतों की पद्धति पर काव्य रचना का उपक्रम करने वाले लोग भी थे।

इसी बीच अवधी की इस काव्य परम्परा में नूतन दीप्ति और नये संस्कार उत्पन्न करने के लिए अवधी के लोक साहित्य के प्रभाव को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। पंडित रामनरेश त्रिपाठी द्वारा प्रस्तुत अवधी लोकगीतों के संकलनों ने आधुनिक अवधी काव्य के क्षेत्र में नयी सम्भावना तथा उत्तेजना उत्पन्न कर दी। बीसवीं शताब्दी के तृतीय, चतुर्थ दशकों में अवधी साहित्यकारों का ध्यान ग्राम-संस्कृति और ग्राम-साहित्य की ओर जा चुका था। परिणामस्वरूप लोकगीतों की पद्धति पर गीत लेखन होने लगा जो अल्प साक्षर जनकवियों या ग्राम कवियों के भजनों, ननदी भौजैया के उन्माद गीतों, कहँरवा, लोरिकी, सोहर, बिदेसिया आदि की धुनों पर सस्ते साहित्य के समानान्तर ही था। इस क्रम में राष्ट्रीय भावधारा के जनगीत भी लिखे गये। ठेठ अवधी भाषा की व्यंजना-शक्ति, लालित्य, मनोवृत्ति और प्रकृति के साथ सांस्कृतिक एवं सामुदायिक जीवन का बोध कराने वाले गीत बड़े महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। फलतः बोलचाल की मुहावरेदार अवधी काव्य भाषा में गाँव के विषय पर लिखी गयी कविताओं में जहाँ उक्ति का नया चमत्कार सामने आया, ठेठ भाषा की व्यंजना शक्ति प्रकट हुई, वहीं लोक धुनों पर लिखे गये गीतों पर ग्राम्य जीवन एवं ग्राम संस्कृति का ललित स्वर भी उभर कर सामने आ गया। प्रथम प्रकार की कविताओं में अधिकांशतः जो विषय चुना गया, वह था प्रायः गाँव का असत पक्ष, भोड़ापन, दारिद्र्य और मूर्खता की सीमा तक विस्तृत अजानपन। इसमें जिस रस को प्रतिष्ठा हुई, वह घाघ, भड़ुरी की उक्तियों के समान न होकर, हास्य-व्यंग्य के रूप में परिहास-रस ही था जो नगरवासियों और तथाकथित अभिजात-कुलीन या साक्षर कहे जाने वाले वर्ग के लिए मनोरंजन प्रस्तुत करता रहा। अवधी साहित्य में हास्य-व्यंग्य और निन्दा-परिहास की इस प्रवृत्ति को अवधी साहित्य की गम्भीर पृष्ठभूमि में बहुत भाजूँ नहीं कहा जा सकता, परन्तु इससे अवधी बोल-चाल की उक्तियों को व्यापक प्रचार मिला। कदाचित् कवि-सम्मेलनों और रेडियों में सस्ती लोकप्रियता प्राप्त करने के उद्देश्य से ऐसा कुछ स्वभावतः होता चला गया। परिणामस्वरूप अधिकांश अवधी कवियों ने आत्मावमाननापरक कविताओं का धुआँधार प्रणयन किया। लेकिन यह प्रवृत्ति धीरे-धीरे बदली और इसके साथ ही गांव-सम्बन्धी गम्भीर विषयों पर यथार्थ-परक रचनाएँ भी प्रस्तुत होने लगीं जिनमें शैली-शिल्प की दृष्टि से एक ओर लोकगीत तो दूसरी ओर खड़ी बोली की छायावादी तथा छायावादोत्तर गीतपद्धति को अपनाने का प्रयत्न हुआ। इसी क्रम में अवधी में नये-नये विषयों और शैलियों में प्रबन्ध-काव्य तथा लम्बी कविताएँ भी लिखी गयीं। आज अवधी का वर्तमान काव्यपथ अनेक दिशाओं में मुड़ चुका है और उन पर समर्थ प्रतिभा वाले रचनाकार अपने चरण बढ़ा रहे हैं।

अवधी काव्य के उपर्युक्त विकास-क्रम के सन्दर्भ में अब फैजाबाद जनपद की अवधी काव्य-धारा का विहंगावलोकन कर सकते हैं।

फैजाबाद जनपद लखनऊ और जौनपुर की नवाबी के मध्य तथा परम पुनीत हिन्दू तीर्थ-भूमि में अवस्थित है जो आधुनिक अवधी भाषा तथा काव्य का अवतरण- स्थल है जिस पर वर्णित काव्य-शैलियों तथा प्रवृत्तियों का भरपूर प्रभाव पड़ा है, परन्तु **तुलसी-साहित्य, बनादास-साहित्य, पलटू-साहित्य, गोविन्द-(साहब)-साहित्य, शेखनिसार** का प्रेमाख्यानक साहित्य और 'प्रेमघन'-साहित्य के सातत्य में

उद्भूत फैजाबाद की आधुनिक काव्य-मनीषा किसी भी रूप में अशक्त नहीं है। इन रचनाकारों में अनेक रंग-ढंग के कवियों का सिलसिला यद्यपि सदा बना रहा, तथापि सच तो यही है कि पुरानों में द्विज छोटकुन और नयों में आचार्य विश्वनाथ पाठक के बीच ऐसा कोई समर्थ कवि यहाँ नहीं हुआ जो समकालीन तथा भविष्य के जनपदीय अवधी रचनाकारों को प्रेरित एवं प्रभावित करने में समर्थ होता। इन समर्थ कवियों के साथ कुछ ऐसे कवि भी निम्नांकित विवरण के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिये गये हैं जो सामान्य रसिक जन थे और यदा-कदा बोलचाल की कविताएँ रचकर लोगों का मनोरंजन करते रहे। अस्तु, यहाँ अब आधुनिक जनपदीय कवियों के सम्बन्ध में आवश्यक विवरण प्रस्तुत किया जाता है।

फैजाबाद के जन-कवि : पुराने जनपदीय कवियों के समानान्तर जनकवियों की एक समृद्ध परम्परा प्राचीन काल से ही यहाँ विकसित होती रही है। गोस्वामी जी ने 'पार्वतीमंगल' और 'जानकीमंगल'—जैसे लोक-काव्य-रूपों के आश्रय से रचना कर इस परम्परा का संकेत शताब्दियों पूर्व दे दिया था। वही परम्परा अज्ञात रूप से निरन्तर प्रवहमान होती रही है। इनके रचयिता वे जन-कवि हैं जिन्होंने चिरकाल से यहाँ के सामान्य लोकजनों के लिए जन-काव्य की रचना की है। इन्हें हम लोकगीताश्रित काव्य कह सकते हैं। ऐसे कवियों ने परम्परागत काव्य-विषय'लेकर प्रायः ऋतु-गीतों की रचना की है। लोकप्रियता तथा व्यापकता की दृष्टि से जनता में प्रचलित इन जन-गीतों की समृद्ध परम्परा को अवधी लोक-धारा के विकास-क्रम में अनदेखा नहीं किया जा सकता। ऐसे जन-कवियों में भरतपुर टँडवा के द्विज छोटकुन का अवदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन्होंने अवधी में चौतालों की पुष्कल रचना की है। इन्होंने ही फाग-गीतों की इस शैली-विशेष को अन्वेषित किया था। इनके चौतालों का प्रचार-प्रसार बस्ती, गोंडा, आजमगढ़, जौनपुर और सुलतानपुर तक हुआ। आज भी होली के अवसर पर इन्हें इन जनपदों में कहीं भी सुना जा सकता है। इन गीतों के प्रचार-प्रसार का श्रेय बहुत-कुछ कत्थकों को भी है। इस जनपद से सटे अन्य जनपदों के कवियों ने प्रभाव ग्रहण कर इसी ढंग के फाग गीतों की रचना की है। द्विज छोटकुन के चौताल श्रेष्ठ काव्य की कसौटी पर भी खरे उतरते हैं। एक कृष्णाभिसारिका नायिका कृष्ण से निवेदन करती है—

वहि कदम तरे बृजराज आज मैं आवौं।
अबहीं जात भवन के भीतर पाक पुनीत बनावौं,
कन्त जेंवाय, सोवाय पलँग पर, अपनो औसर पावौं,
पायल काढ़ि छिपाय धरौं तन सारी, सबुज लगावौं।
तुमहूँ कन्त जुट्यो तेहि औसर, निसि अध बिते तहँ ठावौं।

इनके एक अन्य चौताल में जनकपुर में विचरते राम के विषय में सीता की एक सखी से इस प्रकार कहलवाया गया है—

मोहिं अवध छैल दिलदारे नयन-सर मारे।
मैं मिथिलापति भवन जाति ह्यौं राजित रंग ओसारे,
औचक चितै बदन हँसि मारत भृगुटी छवि धनुष सुधारे। नयन.

साँप के काटने पर 'जहर' चढ़ता है, यहाँ 'जुल्फ' देखते ही 'जहर' चढ़ जाता है-

सीस चौतनी घनी बनी जुलफी हरि हाथ सँवारे,
जोहत जहर चढ़त जुबतिन उर मानो डसत भुवंगम कारे,
कुँडल करन बरन दामिनि दुति, झलकत उभै किनारे,
नासा जलद जलजमणि राजित चमकत दसनन दुति न्यारे। मोहिं.

स्याम सरूप बने तबसे दिलदार हमारे,
द्विज छोटकुन सजनी मिथिलापति करिहैं कतल हजारे...........

केले के पत्ते से पीठ की उपमा बड़ी ही अर्थवती है। संयोग की अवस्था में नायिका की जो पीठ केले के पत्ते के चिकने भाग की तरह सुडौल होती है, वहीं वियोग में केले के पत्ते के दूसरो भाग की तरह, मांस की कमी के कारण, रीढ़ निकल आने से, सिकुड़ जाती है; नसें पतली दिखायी देती हैं, स्निग्धता नहीं रहती है। जन-कवि इस अछूते चित्र को बड़ी ही सहजता से अर्थगर्भत्व प्रदान कर देता है।

द्विज छोटकुन के अतिरिक्त दूसरे जनकवि द्विज भागीरथी का जन्म बसखारी से पूर्व लगभग 6 मील दूर—सेहरामऊ में सन् 1900 के आस-पास हुआ था। आस्थावान् कुलीन ब्राह्मण परिवार में जन्मे भागीरथी जी बड़े प्रतिभाशाली, सहज और जन-मानस के चित्रकार थे।

कुलीन रसबसी नायिका श्यामसुन्दर को उलाहना देती हुई कहती है—
तोरी तिरछी नजर जिय मारा सँवलिया हो प्यारा।
अमित भाव भरि भवन हमारे आवत साँझ-सकारा,
हम गृह काज छाँड़ि मन मोहन लागे जोहन बाट तुम्हारा।

भुवंगम जैसे मणि चाहता है, वैसे आपने औरों से प्रीति कर हमें केंचुल की तरह अलग कर दिया। कैसी दाहक अकह व्यथा है!

स्याम स्वरूप दिखाय हमारो मन कीनो मतवारा,
प्रीति की नाव चढ़ाय दयानिधि बोरत हो मँझधारा। नैन.....
नीके रहौ चहौ उनही को जाय करो सुख सारा,
द्विज भागीरथी वै चतुरानन लिखे हैहैं सो हैहै लिलारा।..........

एक 'झूमर' की ये पंक्तियाँ भी द्रष्टव्य हैं—
पिया छोड़ि दे मेरुकि मोरी जइहै हो नरम कलाई।
अबहीं निपट नदान तरुणता तनिक न आई,
नवय रोज की मौज रही छतिया छबि छाई,
सो तुम्हरे परतीत न आवत अँचरा हम खोलि देखाई...........

इन गीतों का भाव-संस्कार यद्यपि मध्यकालिक संगीत-काव्यों का है, परन्तु भाषा के स्तर पर वे हमें चकित और पुलकित करते हैं, इसमें सन्देह नहीं।

मालीपुर चौराहे से, फैजाबाद-वाराणसी रोड से पूर्व-दक्षिण लगभग दो किलोमीटर दूर, सुरहुरपुर गाँव से सटे पुरवा जफरपुर में सन् 1895 के आस-पास लम्बोदरराय 'गजानन' का जन्म हुआ था। ये ब्रह्मभट्ट थे, वैद्य थे और अपनी हाजिरजवाबी के कारण दरबारों में समादृत थे। ये लिखे-पढ़े तो कम थे, किन्तु रचनाओं में इनकी काव्यप्रतिभा खूब निखरी है। इनका कोई संग्रह नहीं है। इनकी रचनाएँ पुराने-नये रसिकों के कण्ठ में बसी हैं। इनकी सारी काव्य-सम्पदा इनकी धर्मपत्नी 'लल्लो' ने 'मझुई' को भेंट कर दी।

खण्डिता नायिका का एक चित्र देखिए। नायक प्रभातकाल में घर आता है, तब नायिका उससे पूछती है—

साँची बतावौ बितायो कहाँ रतिया?
अंजन अधर, पीक नैनन माँ बिन गुन माल सुभग छवि छतिया?.......

इस उक्ति पर 'बिहारी' के 'पलन पीक, अंजन अधर' की छाया स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ती है।

अलनाभारी स्टेशन से दक्षिण लगभग तीन किलोमीटर पर स्थित सुदामापुर के चौथे जन-कवि द्विज जगन्नाथ का जन्म सन् 1900 के आस-पास हुआ था। होली गीत की निम्नांकित पंक्तियों में वसन्तकालीन ग्राम-प्रकृति के उद्दीपक रूप का वर्णन इस प्रकार हुआ है–

फुलवन में भँवर मनमाने, रितुपति आगमन लखाने, रसिक हरसाने।
सभै रूख पतझार भयो है, कली कली रस माति गयी है, मास फगुनवाँ बुढ़ाने।

परम्परानिष्ठ काव्य-परिपाटी और प्रकृति को लेकर चलने वाले इन जन-कवियों में राष्ट्रीय भाव-धारा के गीत लिखने वाले जन-कवि भी आते हैं। ये कवि मुख्य रूप से कृष्ण-लीला-प्रसंगों के गायक हैं, परन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन के दिनों में इन्होंने उस प्रकार के उद्‌बोधनात्मक गीत भी लिखे हैं। इनमें परस्पर स्पर्द्धा थी और दंगल भी आयोजित होते रहते थे। जन-कवि गान्धीदास और फगुहार जगन्नाथ के बीच दंगल के आयोजन में जनता बड़ी ही रूचि लेती थी।

श्यामसुन्दर गान्धीदास का जन्म 1901 ई. के अगहन शुक्ल पंचमी को तकिया पठखौली में हुआ था। ये राष्ट्रीय भाव-धारा के गान्धीवादी कवि थे। इनके 'चमन' से नेहरू जी प्रभावित थे। इनका 'चमन' 1934 ई. में छपा जिसमें इन्होंने अनेक राग-रागिनियों का आविष्कार किया। पहले 'चौताल' चलता था, इन्होंने 'डेढ़ ताल' का आविष्कार किया। एक-दो उदाहरणों से इसे स्पष्ट कर देना अप्रासंगिक न होगा–

'पिरथी पापन से गरुआनी आगि उधिरानी'– (चौताल : रामप्रताप पाठक)

पाठक-रचित इसका 'डेढ़ ताल' इस प्रकार है–

'पिरथी पापन से गरुआनी, दीनानाथ कै भृगुटी टेढ़ानी, आगि उधिरानी।'

सन् 1930 में खजुरिहवा रामपुर में प्रसिद्ध फगुहार द्विज जगन्नाथ और गान्धीदास का दंगल हुआ। उसमें लोगों ने गान्धीदास का 'चमन' तो सुना, परन्तु जगन्नाथ का चौताल नहीं। गान्धीदास से जगन्नाथ पराजित हो गये। जगन्नाथ ने कहा–'यह क्या है?' गान्धीदास ने कहा–'यह 'चमन' है, चौताल का परिवर्धित रूप।' जगन्नाथ स्तब्ध रह गये। उन्होंने उत्तर दिया–'इस 'चमन' को हम चमका के रहेंगे।' जगन्नाथ हार कर घर पहुँच गये और अनन्तर 'चमन' का 'डेढ़ताल' नाम देकर उन्होंने प्रचारित किया. इसीलिए क्षेत्र तथा उसके बाहर के जन-समाज में वे 'डेढ़ताल' के आविष्कारक के रूप में प्रसिद्ध हो गये और उसके सही आविष्कारक गान्धीदास पिछड़ गये। 'चमन' की राग-रागनियों का आविष्कार सराहनीय है, किन्तु खेद है कि उसका प्रचार-प्रसार न हो सका। 'डेढ़ताल' के रूप में प्रसिद्ध गान्धीदास के 'चमन' की कुछ पंक्तियाँ उदाहरण के रूप में प्रस्तुत हैं–

1. सन् चौंतिस माघ अमावस को, भुँइचाल गजब करि डारी, विहार उजारी।
2. सोभित भल राज समाज, आज दसरथ जी के राजकुमार, जनक जी के द्वारे।
3. धिक जीवन अरे यह उमिरि मोरि मस्तानी, बिना हे सैलानी।

कटहरी स्टेशन से लगभग 6 किलोमीटर उत्तर-पूर्व अवस्थित खूखूतारा में जन्मे शिवप्रसाद सिंह फगुवा, कजरी और विविध लोकगीतों के यशस्वी जन-कवि के रूप में परम प्रसिद्ध हैं। इनके गीतों की पंक्तियों से इनकी काव्य-शक्ति का अनुमान लग जाता है। इनके शृंगार-सरोवर का एक उदाहरण–

'केऊ कहै यनके निकरि आये पाका
कोऊ कहै बा पति निकरा उमा का.......
केऊ कहत नाग बाटीं पाले, गोहुँवन रँग है मुँह काले,
तोर दुनौं भाले।'

'डेढ़ताल' की एक पंक्ति में ही कवि की शक्ति की घनीभूत भाव-व्यंजना देखने लायक है–

गोरी नहँकै घूँघुटवा तैं खोले दन दन दनन दगन
लागे गोले सबुजवा' के डोले. ...

कृष्ण-लीला 'डेढ़ताल' की पंक्तियों में कितनी सफाई से दिखायी गयी है--
मोहन धरे रूप जनाना,
चले बेंचै सहर बरसाना हो चुरिया सहाना'.......

'घरवाली' की ओर से 'पिया' परदेसिया को लिखायी गयी 'पाती' कवि की मर्म-विदग्ध दृष्टि की परिचायिका है--

'पिया पतिया लिखै घर वाली, मोरी गोदिया होरिल बिन खाली.......'

भारतीय भावना को उजागर करने वाले कवि के बहुत से गीत हैं। 'कँहरवा' गीत में उसे सिद्धि प्राप्त है--'गोतवा सरजू माँ लगाये पपवा पाँखी एस जरे' लोक-कण्ठ में गूँजने वाला गीत है। शृंगार के उत्तान गीत कवि ने अधिक लिखे हैं। लगता है, उनसे चिढ़कर किसी समीक्षक बुद्धि के व्यक्ति ने--'सिवप्रसाद गड़हिया मँ लोटैं, सम्मै कनइया रजइया मँ पोतैं.....' आदि लिख दिया है।

मिर्जापुरी कजरी, श्रमगीत, ऋतु-गीत और जागरण-गीत के प्रसिद्ध रचयिता और गायक दयाराम तिवारी 'पुष्प' गोसाईगंज स्टेशन के रनीवाँ-भीटी रोड से लगभग 8 किलोमीटर दक्षिण रायपुर में पंडित जगन्नाथ त्रिपाठी के पुत्र-रूप में सन् 1920 में जन्मे थे। इनकी एक 'कजरी' की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं--

अरे रामा चितवत चुप चितचोर चपल चितवनियाँ रे हारी।
मुख मयंक मृदु कलित कपोल पै टेढ़ी मेढ़ी अलकै रामा,
अरे रामा लटकति लागति ससि पर चढ़त नगिनियाँ रे हारी........

लीला-माधुरी की ये पंक्तियाँ हृदय को तीर के समान छू लेती हैं--
ऊधो ! वन-कुंजन की कलियाँ।
खिलिहैं अब केहि के सहारे, बिना हरि प्यारे......

गोसाईगंज से 6 किलोमीटर दूर, रनीवाँ के सन्निकट नोकरापुर में सन् 1915 के आस-पास रामराज उपाध्याय जन्मे थे। ये ऋतुगीत तथा भक्तिगीतों के जनकवि हैं और आज भी गुनगुनाते रहते हैं। इनके कुछ गीतों की पंक्तियाँ अलग-अलग द्रष्टव्य हैं--

कइसे रचबै बैराग साज,
ब्रजराज बिना निबहै ना, बिरह सहबै ना।

जलालपुर से लगभग 6 किलोमीटर दूर, उत्तर, अरई गाँव में सन् 1911 के आस-पास राजबली यादव का जन्म हुआ था। विलक्षण प्रतिभा किन्तु सामान्य शिक्षा के साथ लोकजीवन में सहज प्रवेश कर उन्होंने स्वतन्त्रता-संग्राम में साहसी सेनानी का परिचय दिया। बापू द्वारा छेड़ी गयी उस आजादी की लड़ाई में इस सिपाही और क्रान्तिकारी नेता ने अपने लोकगीतों से ब्रिटिश सरकार की कड़ी आलोचनाएँ कीं। उन्होंने जमींदारों, ताल्लुकेदारों, सेठ-साहूकारों और राजाओं को ललकार कर, जन-चेतना को जगाने के लिए बिगुल बजाने का काम किया है। उनका **अवधी आल्हा** 'भारत की लूट' ब्रिटिश शासन के काले कारनामों का उद्घोषक है। उनके दहकते गीत 'बुर्जुवा वर्ग' के कलेजे कँपा देने वाले हैं। 'मोरे पिछवरवा जमींदार भइया मीत लहरी क लहरा भीजै दे' आदि उनकी गरजती वाणियाँ हैं, जिनमें अतीत तिरने लगता है। उनके अनेक संग्रह निकल चुके हैं। उनकी लोकप्रियता उनके नाटकों और गीतों के साथ जुड़ी है।

मया बाजार से उत्तर, मया गाँव में, सन् 1932 के आस-पास रामचन्द्र सिंह का एक कुलीन क्षत्रिय

परिवार में जन्म हुआ। सामान्य शिक्षा के बाद राष्ट्रीय चेतना के ये सहज व्यक्ति और समाजसेवी व्यक्तित्व के उदाहरण के रूप में जनता में प्रतिष्ठित हैं। सम्पन्न होने के बावजूद, खादी धोती-कुर्ता में, साइकिल चला-चलाकर, गाँव-गाँव में संगठन और एकता के लिए प्रयास-परायण होकर इन्होंने 'अवधी ग्राम मंच' की स्थापना की तथा लोकगीत, लोककथा और लोकनाट्य लिखे। 'मंच' की वार्षिकी पत्रिका 'अमोला' की लोकजागृति की दिशा में ये अग्रसर हैं। 'सहूर की पूँजी' इनका प्रसिद्ध, मंच-प्रशंसित, लोकनाट्य है।

अवधी के पुराने-नये कवि—जनपद के जिन प्राचीन अवधी कवियों का उल्लेख हो चुका है, उनमें 'यूसुफ-जुलेखा' के रचयिता शेखनिसार ने जायसी के ढर्रे पर प्रेमाख्यानक काव्य की रचना की है। ये सोहावल स्टेशन से लगभग 8 किलोमीटर दूर शेखपुर गाँव में सन् 1779 में उत्पन्न हुए थे। इन्होंने अपना परिचय इस प्रकार दिया है—

अवध रुदौली के मँझठावाँ। शेखपूर अति सुन्दर गावाँ।
चारिहुँ ओर सघन अमराई। अगम अगाध चहूँ दिसि खाईं।
इमिली बिरिछ न जाय बखाना। द्वारे पै जस तमुवाँ ताना।
अति उतंग औ सीतल छाहाँ। पंछी बहुत रहैं तेहि पाहाँ।
ताकी छाँह जौ बैठे कोई। वै सो सूर कि सायर होई।

अवधी में रचित सबलसिंह चौहान का 'महाभारत' अच्छा प्रबन्ध-प्रयास है। खेद है, इधर समीक्षकों का ध्यान नहीं गया।

इनके अनन्तर अयोध्यावासी बाबा रघुनाथदास महत्वपूर्ण रचनाकार हैं। इन्होंने पुराणों के आधार पर सन् 1854 में 'विश्रामसागर' की रचना की थी जो आस्तिक जनों में खूब प्रचलित हुई। यह दोहा-चौपाई छन्द में निबद्ध सरल अवधी भाषा का अनूठा काव्य है जो लगभग एक शताब्दी तक भक्तों का कण्ठहार रहा है।

रसिक-सम्प्रदाय में दीक्षित अयोध्यावासी साधु बाबा जानकीप्रसाद उर्फ 'रसिक-विहारी' 'रामरसायन' के रचयिता माने जाते हैं जो सन् 1882 में रचा गया था। इन्होंने अनेक छन्दों में रसिक भाव से सम्बन्धित बड़ी ही समर्थ उक्तियाँ ब्रज-भाषा-मिश्रित अवधी में कही हैं जो आज भी लोगों में खूब प्रचलित हैं। बानगी के तौर पर केवल एक पंक्ति—

'बिरह विहाल रघुराई को लखाई परी,
औचक ललाई मंजु अथवत भान की।'

बाबा बनादास मूलतः गोण्डा के निवासी, अयोध्यावासी, प्रसिद्ध भक्त कवि थे। इन्होंने दर्जनों काव्य रचे। 'उभय-प्रबोधक-रामायण' सर्वाधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय है। इनके वंशज डॉ. भगवतीप्रसाद सिंह ने इन पर शोध-प्रबन्ध ही नहीं लिखा है, अपितु इनकी हस्तलिखित रचनाओं के मुद्रण की व्यवस्था कर उन्होंने अवधी के अलभ्य काव्यरत्नों का उद्धार भी किया है।

अमरेश सिंह दर्शननगर स्टेशन से लगभग 4 किलोमीटर दूर, सन् 1870 के आस-पास 'सिरसिण्डा' में जन्मे थे। इनकी अपनी जन्म-भूमि पर लिखी रचना '......तीरथ है 'रविकुण्डा'। ताही समीप भनै अमरेस सुहावन ग्राम बसै सिरसिण्डा।'—इस क्षेत्र में लोगों को खूब याद है। ये बड़े ही विचक्षण और शिक्षित कवि थे। इन्हें अरबी-फारसी की विधिवत् शिक्षा मिली थी। यही कारण है कि इनके कवित्तों और सवैयों में फारसी के शब्दों के प्रचुर प्रयोग मिलते हैं। 'समालंकार' के इनके उदाहरण बड़े ललित हैं। इनकी फुटकर रचनाएँ आस-पास के लोगों में प्रचलित हैं। कोई संग्रह अभी तक प्राप्त नहीं है।

अंगिरामुनि 'झूलुर' बसखारी के निकट-निवासी थे और परमहंस-रूप में प्रसिद्ध तथा फलाहारी बाबा के रूप में सम्बोधित थे। उनका व्यक्तित्व बड़ा ही भव्य और प्रभावशाली था। जनता में वे सिद्ध सन्त के रूप में मान्य थे। 'निर्गुन' शैली में निबद्ध इनके चार सौ पदों की एक हस्तलिखित प्रति मुझे बी. एन.के.बी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्राचार्य श्री रामकुमार त्रिपाठी जी से देखने को मिली थी। इनमें से कुछ पद 'भक्त-भगवन्त' नामक पत्रिका में उसके सम्पादक श्री ओंकारनाथ जी द्वारा प्रकाशित हुए हैं। नमूने के लिए कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं–

गगन हिय देखि परत है उजाला।
जनम-जनम कै सत्य धर्म जब लागै सहाय सुझाला,
नाड़ी अनेक यन्त्र डमरू-बिच इड़ा-पिंगला-सुषुम्णा बुझाला।

इन पंक्तियों की भाषा मूलतः अवधी है परन्तु भोजपुरी क्रियापद का सुविधानुसार व्यवहार दिखायी पड़ता है।

पण्डित भवानीभीख त्रिपाठी 'दिव्य', मालीपुर के निकट स्थित गानेपुर गाँव के निवासी, सन् 1896 में उत्पन्न हुए थे। इनके द्वारा अनेक विषयों पर अवधी में निबद्ध प्रकीर्ण छन्द तथा पद प्राप्त होते हैं। अवधी के साथ-साथ ब्रजभाषा और खड़ी बोली में इन्होंने बहुत लिखा है। 'त्रिधारा' संज्ञक काव्य-संग्रह प्रकाशनार्थ तैयार है। 'पानी का पैसा' तथा 'हँसता हुआ फूल' इनकी बालोपयोगी रचनाएँ प्रकाशित हैं। ये बहुत वृद्ध हो चुके हैं, फिर भी इनकी काव्य-रसिकता में कोई अन्तर नहीं पड़ा है। लगभग 40 वर्षों तक शिक्षक के रूप में सेवा करके शिक्षा-विभाग से अवकाश प्राप्त कर, अब देवाराधन में निमग्न रहते हुए, घर ही पर कालयापन करते हैं और कभी-कभी अवधी में ही कुछ रचनाएँ किया करते हैं।

जन्म से सनेथू (दर्शननगर के सन्निकट), साधना से रायगंज, अयोध्या को गौरवान्वित करने वाले रामगोपाल पाण्डेय 'शारद' ब्रज भाषा और खड़ी बोली के ही नहीं, अवधी के भी सिद्धहस्त कवि थे। इन्होंने दर्जनों नाटक, दर्जनों खड़ी बोली और अवधी के–छोटे-छोटे ही सही–संग्रह रूपायित किये। प्रबन्ध-परम्परा में उन्होंने 'हरदौल' (खण्ड काव्य) और 'कीरति'सागर' (25 सर्गो का प्रबन्ध-काव्य) लिखा। 'विरक्त' के सम्पादक के रूप में भी उनका कम महत्व नहीं है। खेद है, खण्ड काव्य और प्रबन्ध काव्य की ही भाँति इनके और भी संग्रह अप्रकाशित हैं। ये बड़े ही भावुक और निर्भीक व्यक्ति थे। कवि-सम्मेलन के मंच से काव्य-पाठ करते समय अत्यन्त भाव-विभोर करते तथा हो जाते थे। इनकी कई पुस्तकेंप्रकाशित हैं। अवधी में इनके अनेक फुटकर छन्द प्राप्त होते हैं जो बड़े ही मर्मस्पर्शी हैं।

पण्डित रामनाथ शास्त्री 'द्विजराज' का जन्म मालीपुर के सन्निकट खनूसपुर गाँव में 10 अक्टूबर, 1913 को हुआ था। अब उन्होंने यह गाँव छोड़ दिया है और सोहावल के पास 'खिरौनी' में बस गये हैं। इन्होंने खड़ी बोली और ब्रजी में कुछ छन्द लिखे हैं, अवधी में उससे कुछ अधिक। संस्कृत के गम्भीर ग्रन्थों के अनुवाद में वे ऐसे जुटे कि कविता का कोमल पक्ष लगभग छूट-सा गया। इन्होंने 'गंगा', 'मानस', 'तुलसी'; 'हुलसी' और 'रत्नावली' पर बड़े ही भावपूर्ण तथा भक्ति-भावना से ओत-प्रोत सवैया छन्द लिखे हैं जो बड़े ही ललित हैं। इनके छन्दों की भाषा शुद्ध अवधी नहीं हैं, इस पर ब्रज भाषा और संस्कृत के तत्सम रूपों का विशेष प्रभाव है।

पठखौली के रामप्रताप पाठक का जन्म अगहन, संवत् 1968 में हुआ था। ये यशस्वी सुकवि विश्वनाथ पाठक के पिता थे। इन्हें हिन्दी-संस्कृत की अच्छी जानकारी थी। सतसई-परम्परा के दोहे इन्होंने अच्छे लिखे हैं। भाषा पुष्ट, भाव रीति-परम्परावादी हैं।

अपने प्यारे से मिलने के लिए निकली प्रेमिका खलिहान में उसको सोता हुआ देख, खलिहान के दूसरे लोगों के भय से, कज्जल-सने आँसुओं से, प्यारे की हथेली पर, अपनी अँगुलियों के सेठे से (कलम

से) कुछ लिखकर, दुखित होकर चली गयी, उसे जगाया नहीं—

1. *कज्जल दृगजल मसि किहिसि, खल पिउ निद्रित जानि।*
   कर कागद करि करज सर, लिखि गै घर दुख मानि।।
2. *मिटै पान से नहिं तृषा, जब जब हेरत पानि।*
   पानि न परसत पानि से, गो सम पीवत पानि।।

ऊपर के दोहे से उसके प्रियतम की क्या दशा हुई, उसका भाव नीचे दिया जाता है—

सबेरा होने पर प्यासा होकर जब उस स्त्री का प्यारा पानी पीने के लिए जाता है और हाथ से जल पीना चाहता है, तब हथेली पर कुछ लिखा देखता है। अपनी प्यारी की लिखावट वह पहचान जाता है। तब उसके मिटने के भय से वह हाथ से पानी नहीं पीता है, प्रत्युत गाय के समान झुककर, मुँह से पानी पीता है।

यशस्वी पत्रकार पण्डित रामरक्षा त्रिपाठी 'निर्भीक' अयोध्या के निवासी थे। वहीं उनका जन्म 1915 के आस-पास हुआ था। ये अवध, अवधी और अवधेश के परम उपासक थे। अध्यापक रहते हुए, इन्होंने न केवल लेखन द्वारा प्रत्युत सभा तथा कवि-सम्मेलनों के आयोजन, पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन द्वारा अवधी के लिए आन्दोलन भी किया था। ये बड़े ही मनस्वी और उदारचेता व्यक्ति थे। अवधी के अतिरिक्त खड़ी बोली तथा ब्रजभाषा में इन्होंने राष्ट्रीय विचाराधारा के वीररसात्मक छन्द रचे थे जिसे वे बड़े ही ओजपूर्ण ढंग से प्रस्तुत भी करते थे। इन्हें अवधी के अनन्य सेवक के रूप में स्मरण किया जायगा। इन्होंने अवधवासी 'वसाली' के राम के शोभा-वर्णन से सम्बन्धित 'मामुकीमा' (फारसी) काव्य का अवधी के 'वरवै' छन्द में अनुवाद किया था।

ख्यातिलब्ध साहित्यकार **केशवचन्द्र वर्मा** फैजाबाद नगर के निवासी हैं। इनका जन्म 1924 के आस-पास हुआ। शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त ये इलाहाबाद में आकाशवाणी की सेवा में आये और वहीं बस गये। ये बड़े ही विचक्षण और काव्यमर्मज्ञ साहित्यकारों में माने जाते हैं। हिन्दी नवलेखन के आन्दोलनों में ये प्रत्यक्ष भागीदार रहे हैं। आकाशवाणी की सेवा में रहते हुए, इन्होंने न केवल उच्चकोटि की रचनाओं को प्रश्रय दिया, अपितु प्रोत्साहन देकर उच्चकोटि के साहित्यकार भी बनाये। ये अनेक लोगों के प्रेरक, गुरु तथा सखा रूप में समादृत हैं और खड़ीबोली की वर्तमान काव्य-धारा के रचनाकारों में परम प्रसिद्ध हैं। इन्होंने संगीत, नाटक आदि विभिन्न क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा प्रदर्शित की है और अवधी में दर्जनों रचनाएँ लिखकर आधुनिक अवधी-काव्यधारा को गौरवान्वित किया है। इनका अवधी-कविताओं का एक संग्रह 'झरबेरिया' नाम से प्रकाशित हुआ था जिसमें अवधी भाषा के लालित्य, उक्ति-वैचित्र्य और भावगरिमा के अतिरिक्त इन्होंने गाँव की सहज-सरल प्रकृति को उकेरने की कुशलता प्रमाणित कर दी है। एक व्यक्ति के रूप में अवधी की जितनी सेवा इन्होंने की है, वैसी बहुत कम लोग कर सके हैं।

अकबरपुर (अब अम्बेदकर नगर) के निकट 'सुकुलपटी' के **जियाराम शुक्ला 'विकल साकेती'** खड़ी बोली हिन्दी के प्रसिद्ध गजलकार, गीतकार और अत्यन्त सुकण्ठ कवि हैं। उत्तर भारत के कवि-सम्मेलनों में इनकी धूम रहा करती है। ये राजनीतिक दृष्टि से कांग्रेस के पक्षधर हैं और विधायक भी रह चुके हैं। अवधी में इन्होंने कुछ राष्ट्रीय भावधारा वाले गीत लिखे हैं जो अत्यन्त लोकप्रिय हैं। व्यंग्य-विनोद से सम्बन्धित अवधी की कुछ रचनाएँ भी इन्होंने लिखी हैं। ये व्यवहार में निश्छल तथा परोपकारी प्रवृत्ति वाले व्यक्ति हैं। जनपद की अवधी काव्य-परम्परा को इनसे बड़ी आशाएँ हैं।

भाव-धारा में भाषा की परवाह न करने वाले अम्बिकाप्रसाद त्रिपाठी 'मतवाला' का जन्म फैजाबाद के 'सिहैता' गाँव में 8 अक्टूबर, सन् 1921 को हुआ था। ये एम0 ए0 करके अध्यापक-जीवन में आये और मंचों से प्रभावित होकर सारस्वत साधना में लग गये। कवि-सम्मेलनों के आयोजक रूप का इनका

अपना अलग महत्व है। 'अवधी' में ये वेग से लिखा करते हैं। 'झाँसी की रानी' और 'नजर की करेन्ट' इनके प्रसिद्ध और प्रकाशित संग्रह हैं।

कण्ठ-माधुरी के कवि ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी 'मधुर' का जन्म रासलपारा गाँव में सन् 1922 ई. में हुआ था। सन् '42 की जन-क्रांति में भाग लेने वाले, कारागार में राष्ट्रीयता की चेतना देने वाले 'मधुर' खड़ी बोली के गीत और प्रलम्ब रचनाएँ तो रचते ही हैं, 'अवधी' में भी उन्होंने बहुत-कुछ लिखा है। अवधी लोकगीतों की विविध शैलियों में उन्होंने बड़ी सहजता से काव्यसर्जना की है। 'किसान' संज्ञक प्रबन्ध-काव्य उनकी ग्रामांचल चेतना का उत्कृष्ट उदाहरण है।

साधनाशील **विश्वनाथ पाठक** जनपदीय अवधी काव्य-धारा के मानदण्ड हैं। इन्हें वर्तमान अवधी काव्य-धारा का 'जायसी' कहा जा सकता है। इनका पाण्डित्य, काव्य-प्रतिभा, विद्वत्ता और अन्वेषण-दृष्टि सम्पूर्ण अवधी साहित्यकारों में सर्वोपरि है। ये एक अनूठे तथा अद्भुत भाववृत्ति वाले प्रकृष्ट काव्य-साधक हैं। इनका प्रसिद्ध काव्य 'सर्वमंगला' विद्वानों तथा काव्य-रसिकों में प्रतिष्ठित एवं समादृत हो चुका है। अवधी की प्रकृति तथा उसकी रसात्मकता को पहचानने वाला ऐसा विचक्षण विद्वान् वर्तमान समय में कोई दूसरा नहीं है। 'घर कै कथा' नामक इनका प्रबन्ध-काव्य, जो अभी अप्रकाशित और अपूर्ण है, रसात्मक उक्तियों, अछूते शब्द-चित्रों और मर्मस्पर्शी भाव-तन्तुओं से अलंकृत, स्वानुभूति-सघन तथा साहचर्यजनित यथार्थ जीवन की महागाथा है। ऐसा काव्य किसी भी भाषा और साहित्य के लिए गौरव की वस्तु सिद्ध हो सकता है। कुल मिला कर पाठक जी एक महान् मनीषी ही नहीं, विलक्षण प्रतिभापुत्र हैं। अवधी को इनकी सारस्वत-साधना से पुष्पित और पल्लवित होने का सौभाग्य मिलता रहेगा, ऐसी शुभाशा है। हिन्दी के श्रेष्ठ गीतकार श्रीराम सिंह 'शील' ने अवधी में ग्राम्य प्रकृति की सहज सुषमा के साथ उसके यथार्थ और आर्द्र पक्ष को भी अच्छे ढंग से उकेरने का प्रयत्न किया है। उनके प्रस्फुट गीतों का अप्रकाशित संकलन 'सँझौती' है।

मंच के बेजोड़ कवि **हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल'** पहितीपुर-कवलापुर के निवासी हैं। ये स्वर्गीय डॉक्टर महादेवप्रसाद पाण्डेय के पुत्र हैं। इन्होंने सरकारी सेवा में रहते हुए अवधी भाषा तथा साहित्य की उल्लेखनीय सेवा की है। ये बड़े ही सरल, सरस, प्रबुद्ध और गम्भीर व्यक्तित्व वाले अवधी कवि हैं। इनके कण्ठ में स्वर का जादू निवास करता है। काव्य-पाठ करते समय ये हजारों की भीड़ को मन्त्र-मुग्ध ही नहीं करते, रस-विभोर भी कर देते हैं। इनके गीतों में ग्राम्य जीवन की मधुर, ललित और करुणावेष्टित सरस भावनाओं का अक्षयकोष सम्पुटित रहता है। मर्म को छू जाने वाली उक्तियों के तो जैसे ये अक्षयकोष ही हैं। अवधी के इनके दो संकलन—'पुरवइया' और 'काँट झरबेरी के' साहित्य-रसिकों में समादृत हैं।

अयोध्यावासी 'दिनेश' वैसे तो खड़ी बोली में भी लिखते थे, किन्तु उनके अवधी के पद, गीत और 'झूलागीत' बरबस उनकी याद दिलाते हैं। इसी प्रकार अयोध्या के 'रवि', 'शरण' ओमप्रकाश हेमकार, रामसुमेर सिंह 'निशंक' और रामप्रताप पाण्डेय 'पंकज' के सरस अवधी गीत भुलाये नहीं भूलते। इसी सरणि में अयोध्यावासी किरण मिश्र का भी नाम आता है।

गीतों और छन्दों की विविध विधा के शिल्पी रामसहाय मिश्र 'कोमल शास्त्री' का जन्म फैजाबाद के 'कटघरमूसा' के गाँव कान्दीपुर में हुआ था। इन्होंने हिन्दी, उर्दू और संस्कृत की जमकर पढ़ाई की और इनकी काव्य-प्रतिभा ने इनका अभिषेक किया। इनके गीत चुटीले शब्दों के खजाने से भरे हैं। ये उनहें गीतों की अंगूठी में 'नग' सा जड़ते हुए जान पड़ते हैं। 'उड़ि जा बड़ेरिया से काग सजन से सनेस कहेउ' से प्रियतम को संदेसा देने वाले हंस के गले में मोतियों की माला डालती दमयन्ती याद आ जाती है। इसी प्रकार इनके गीत का 'मुरहवा' व्रजभाषा के 'निगोड़ी' और 'निगोड़ा' की याद दिला जाता है। इन कटूक्तियों-भरे शब्दों की काँटे-जैसी चुभन में भी आह्लादकारिणी कुंकुमी छविराशि की चन्दनी गन्ध छिपी है। कवि की अनेक रचनाएँ उसकी नैसर्गिकी प्रतिभा से सँवारी गयी हैं। 'पलाश-पत्राणि', 'त्रिफलियाँ',

'बरछी' एवं 'घनाक्षरी की घनी छावँ में' कवि के संग्रह हैं। अवधी का 'काकातूआ' इनका अच्छा संकलन है।

फैजाबाद जनपद के मिल्कीपुर क्षेत्र के मवई खुर्द गाँव के निवासी **श्यामाप्रसाद 'प्रदीप'** प्रबुद्ध साहित्यकार, प्रखर पत्रकार और समाजवादी विचारधारा के आकर्षक व्यक्तित्व वाले अनूठे व्यक्ति हैं। ये बड़े ही स्वाध्याय-व्रती हैं। अवधी में भी कुछ गीत और फुटकल गद्य-रचनाएँ प्रस्तुत कर इन्होंने अवधी के प्रति अपनी निष्ठा प्रमाणित कर दी है। पिछले दो सालों से बम्बई के 'नवभारत टाइम्स' में इनकी 'अवधी की पाती' बड़ी विदग्धता के साथ प्रतिसप्ताह प्रकाशित हो रही है।

प्रकाश द्विवेदी का जन्म साहित्य-सदन सेठवा में 1 जनवरी, 1950 को हुआ था। अँगरेजी, हिन्दी, संस्कृत के मनीषी विद्वान् डॉक्टर रामशंकर त्रिपाठी के अन्तेवासित्व में रहकर इन्होंने साहित्यरत्न, एम. ए. किया और हिन्दी, अँगरेजी और संस्कृत के गहन अध्ययन के साथ स्वाध्याय से ब्रजभाषा और अवधी का निगूढ़ अनुशीलन किया। ये अवधी, ब्रजभाषा और खड़ीबोली में निरन्तर लिखते रहे हैं। खड़ीबोली के सात संकलन, ब्रजभाषा में एक कथा-काव्य (पारावार ब्रजकौं) के अतिरिक्त इन्होंने अवधी में अनेक प्रस्फुट रचनाएँ लिखी हैं जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं।

हिन्दी, संस्कृत और प्राकृत के गंभीर अध्येता हरिप्रसाद मिश्र का जन्म फैजाबाद के 'महुलिया' के अन्तर्गत नहरपुर गाँव में हौसिलाप्रसाद मिश्र के यहाँ हुआ। खड़ी बोली में इनके दो काव्य संकलन—'सुपर्णा' और 'आलोकशिखा' प्रकाशित तथा 'दूर्वांकुर' और 'मुक्तपर्ण' प्रकाश्य हैं। खड़ी बोली में एक उपन्यास 'तृषा-तृप्ति' छप चुका है। निबन्ध-संग्रह 'चिन्तन के आयाम' मुद्रणाधीन है। 'प्राणवेलि' अवधी काव्य है। इसमें जीवन को यज्ञीय धारा में चलाने के विविध सोपानों का सहज वर्णन है। उन्हें स्वतन्त्र कविताओं के रूप में भी देखा समझा जासकता है। शीर्षक प्रतीकात्मक है। इसमें जीवन की यज्ञीय धारा को आनन्द लक्ष्य की ओर ले चलने के उपायों का संक्षिप्त निरूपण किया गया है।

जनपद के भीटी ब्लाक के 'बथुआ' गाँव में रमापित द्विवेदी 'आनन्द' का जन्म हुआ था। ये यशस्वी डॉक्टर होने के साथ, विविध परिवेशी साहित्य रुचि के वीररस के तेजस्वी कवि हैं। खड़ी बोली के 'वातायन' और 'इन्द्रफूल' इनके गीत संकलन हैं। अवधी कविताओं का संकलन 'चन्दा मामा' है। इनके काव्य-प्रेरक डॉक्टर श्याम तिवारी हैं। अवधी में बालकाव्य की कमी की पूर्ति करने में, आशा है, ये सफल होंगे। प्रकाश चन्द्र 'विद्रोही' का गोसाईंगंज से सटे शिवगढ़ में जन्म हुआ। 'बहुता भउजी' पर केन्द्रित हास्य-व्यंग्य लेखक की नयी दृष्टि कोउजागर करता है। 'परधानी तोरे कारन' 'काहे के साहेब, मुलि खुनचुसवा', और 'सासु-बहू कै झगरा'....अच्छी प्रगतिशील कहानियाँ हैं।

फैजाबाद के कवियों में रघुनाथ वैश्य 'नाथ', गुदुन पंडा, देव, अवधेश, नरसिंहाचारी 'भ्रमर' दयानन्द सिंह 'मृदुल', रामराज पाण्डेय, गौरीशंकर पाण्डेय, महिदेव, हनुमान प्रसाद मिश्र, अशोक मिश्र आदि प्रमुख हैं। अवधी में युग-चेतना जोड़ने का इन्होंने मनोज्ञ प्रयास किया है। प्रतिभा-पुत्र रामचन्द्र मिश्र 'तरुणेश' आदि उस परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं।

अवधी लोकगीत पर गम्भीर शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करने वाली कवयित्री **विद्याविन्दु सिंह** का जन्म गोसाईगंज से लगभग 9 किलोमीटर दूर जैतपुर-सोनावाँ निवासी श्री देव नारायण सिंह के यहाँ पुत्री-रूप में हुआ। संस्कार-सम्पन्न परिवार के प्रभाव तथा अपनी कारयित्री और भावयित्री प्रतिभा के कारण इन्होंने हिन्दी की विभिन्न दिशाओं तथा अवधी में अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य कर जनपद का मुख उज्जवल किया है। इनकी तीन पुस्तकें प्रकाश में आयी हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है—

1. लोकमानस, 2. अवधी-लोकगीत-समीक्षा, 3. बखरी के लोग, (कहानी-संग्रह)।

खिरौनी, सोहावल, फैजाबाद के खड़ी बोली और अवधी के कवि सहदेव दुबे का जन्म सन् 1930 के आसपास हुआ था। अवधी में इनके स्फुट गीतों की सहजता, सरलता सराहनीय है। अवधी के कथा-काव्य के कवियों में ब्रजेशकुमार श्रीवास्तव 'ब्रजेश' प्रतिभाशाली कवि हैं। इन्होंने स्फुट गीतों की

भी रचना की है। अवधी लोकगीतों की धुन पर इधर सहज रूप से लिखने वालों में उदयभानु पाठक, राधा पाण्डेय, विवेक और निशाकान्त मिश्र आदि का नाम लिया जा सकता है।

गोस्वामी तुलसीदास, बाबा बनादास आदि की भाँति आज भी कितने ही अन्य जनपदों के साहित्यिकों का साधना-स्थल होने का गौरव इस जनपद को प्राप्त है। बस्ती के सुकवि 'द्विवेदी' के सुपुत्र प्रेमशंकर मिश्र और अवधी के समर्पित कवि रामजवाहर द्विवेदी, प्राणनाथपुरकलाँ सुलतानपुर के आशुकवि रामअकबाल त्रिपाठी 'अनजान' बाराबंकी के 'धन रुपहले' के कवि गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द' और उन्नाव के भानुदत्त त्रिपाठी 'मधुरेश' आदि उल्लेखनीय हैं। मिश्र जी हिन्दी के यशस्वी हस्ताक्षर, 'अनजान' जी हिन्दी तथा अवधी के समर्थ कवि और 'मंच' के गौरव हैं। कवि-सम्मेलनों में मंच-कवियों के छन्दों की अन्तिम पंक्तियों से उन्हीं छन्दों में ये उत्तरात्मक आशुकवित्व से श्रोतृमण्डली को भाव विभोर करने के लिए प्रसिद्ध हैं। 'अरविन्द' जी शिक्षा-शास्त्री होने के साथ काव्य की विविध विधाओं के कवि हैं। 'मधुरेश' जी ने अवधी में 'भारत-व्यथा' प्रबन्ध-काव्य देकर स्तुत्य काव्यसाधना की है।

इधर पिछले आठ वर्षों से 'अवधी साहित्य संस्थानः अयोध्या' अवधी साहित्य, संस्कृति कला एवं जीवन की अतिप्रशंसनीय अथक-अनुज्झित साधना कर रहा है। संस्थान के अध्यक्ष, श्री राजबहादुर द्विवेदी अग्रणी राजनेता होने के साथ-साथ परम समर्पित, अनूठे लोक-प्राण अवधी-आराधक है। संस्थान के महामंत्री, डॉ. रामशंकर त्रिपाठी गंभीर साहित्यमर्मी, उत्कृष्ट संस्कृति-चेता, सुनिष्ठि सारस्वत-साधक हैं। इन दोनों महानुभावों ने अवध-अवधी में नये प्राणों का संचार कर दिया है। संस्थान की मुख-पत्रिका 'अवधी' डॉ. त्रिपाठी के श्रेष्ठ सम्पादन में अवधी-साहित्य-संस्कृति-कला आदि की चिरस्मरणीय सेवा किया है। 'अवधी' के अब तक प्रकाशित सभी अंक साहित्य की स्थायी निधि हैं। 'अवध-अवधी : विविध आयाम' संज्ञक प्रस्तुत ग्रन्थ डॉ. त्रिपाठी की अवधी-साहित्य-साधना का प्रकृष्ट प्रतिमान है। सन्त-काव्य के अन्वेषी डॉ. राधिकाप्रसाद त्रिपाठी ने अवधी साहित्य की सतत सेवा द्वारा फैजाबाद जनपद को गौरव गरिमा प्रदान की है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन काल से गतिवती अवधी काव्य-धारा आधुनिक काल में निरन्तर प्रशस्त होती जा रही है। अयोध्या के रामानन्दी, कबीर-पन्थी, रसिक-सम्प्रदाय और अन्य सम्प्रदायों के साधु-सन्तों ने जिस प्रकार के साहित्य की सृष्टि की है, उसका प्रभाव जनपदीय काव्य धारा के विभिन्न चरणों में बराबर पड़ता गया है। आधुनिक काल में अवधी काव्य जनगीत, लोकगीत और खड़ी बोली के गीतों के प्रभाव से अनेक रूपों में प्रकट हुआ है और मुक्तक तथा प्रबन्ध के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हुई हैं। लेकिन हास्य-व्यंग्य के क्षेत्र में गंभीर प्रयासों का अभाव रहा है। जो अवधी अपनी चोखी, तीखी उक्तियों, व्यंजना-पद्धतियों और लोकोक्तियों तथा मुहावरों से चोटीली अभिव्यक्तियों के लिए प्रसिद्ध है, उसमें यह कमी खटकती है। दूसरी बात यह है कि इस परम्परा की समृद्धि में मुसलमान कवियों का योगदान इधर नगण्य ही रहा। आधुनिक काल की कुछ प्रमुख काव्य विधाओं, जैसे गजल, सॉनेट, मर्सिया या शोकगीत आदि का अवधी में विधिवत् आगमन न हो सका। यही नहीं, अवधी में गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं का अभाव उसके आधुनिक होने में प्रश्न-चिह्न खड़ा करता है। वर्षों पूर्व फैजाबाद से 'अवध-भारती' के प्रकाशन द्वारा उपेन्द्रनाथ राय ने एक स्वस्थ, सजीव, रोमांचकारी और प्रगतिशील प्रयास किया था, परन्तु खेद है कि अवधी साहित्य के रसिकों की उदासीनता के कारण वह सारस्वत प्रक्रम अग्रसर न हो सका। इस क्षेत्र में आगे आकर कुछ करने की तथा सामूहिक रूप से सतत प्रयास द्वारा अवधी भाषा और साहित्य के लेखकों और कवियों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। यदि इन पंक्तियों से अवधी भाषा-भाषी जनपदीय साहित्य-रसिकों और प्रतिभाओं को उत्तेजना तथा प्रेरणा प्राप्त हो सके तो मैं अवधी काव्यधारा के विकास को रेखांकित करने वाला अपना यह प्रयास अकारथ नहीं मानूँगा।

उन्नाव जनपद के प्रमुख अवधी रचनाकार

डॉ. चन्द्रिका प्रसाद वर्मा

अवधी का काव्य-साहित्य अपनी विविध विशिष्टताओं के कारण अपनी विशेष पहचान बनाने में समर्थ है। उन्नाव जनपद ने हिन्दी साहित्य को अनेक बहुमूल्य रत्न दिये हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास के प्रथम भारतीय लेखक शिव सिंह सेंगर यहीं के ग्राम काँथा में उत्पन्न हुए थे। पं. प्रतापनारायण मिश्र के जन्मस्थान होने का गौरव यही के बैजेगाँव (बेथर) को है। महाप्राण निराला गढ़ाकोला गाँव के निवासी थे। आलोचक-श्रेष्ठ पं. नन्ददुलारे वाजपेयी ग्राम मगरायर में संभूत हुए थे। कवि और कथाकार भगवतीचरण वर्मा (सफीपुर), कवयित्री चकोरी (बेथर), गयाप्रसाद शुक्ल सनेही (हड़हा), श्यामविहारी शर्मा (सिकन्दरपुर), नूतन जी (मौरावाँ) आदि उन्नाव जनपद के ही यशस्वी रचनाकार हैं। कवयित्री सुमित्राकुमारी सिन्हा, समीक्षक डॉ. रामविलास शर्मा, प्रगतिवादी कवि डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' तथा रघुवीर सहाय जैसी उत्कृष्ट प्रतिभाओं के जन्म का श्रेय भी उन्नाव जनपद को ही है। 'कृष्णायन' के प्रणेता पं. द्वारिकाप्रसाद मिश्र यही के नर-रत्न थे।

अवधी के वर्तमान युग के श्रेष्ठ कवियों में पं. चन्द्रभूषण त्रिवेदी 'रमई काका' भी उन्नाव जनपद में उत्पन्न हुए थे। इनके अतिरिक्त अन्य कई कवियों ने अवधी की काव्य-श्री की समृद्धि में अपना योगदान दिया है। प्रस्तुत है आधुनिक अवधी काव्य के कतिपय प्रमुख रचनाकारों का संक्षिप्त विवरण :

1. रमई काका—धरती के कवि 'रमई काका' का जन्म उन्नाव जनपद के ग्राम रावतपुर में 2 फरवरी, सन् 1915 को हुआ था। इनके पिता फौज में सिपाही थे। जब ये ढाई वर्ष के थे, तभी प्रथम महायुद्ध में गोली लग जाने से पिता का निधन हो गया था। अँग्रेज सरकार ने उनकी वीरता के पुरस्कार-स्वरूप काका की माता को तीन सौ रु. प्रदान किये थे और पाँच रु. मासिक पेंशन बाँध दी थी। इस पर टिप्पणी करते अपनी छप्पनवीं वर्षगाँठ पर रमई काका ने कहा था ''गुलाम देश के एक वीर सिपाही के प्राणों का मूल्य इससे अधिक और क्या होता?''

'रमई काका' की प्रारम्भिक शिक्षा उनके ग्राम रावतपुर में हुई। इसके बाद वे पड़रीकलाँ के मिडिल स्कूल में भर्ती हुए। वहाँ के तत्कालीन हेडमास्टर पं. गौरीशंकर इनकी प्रतिभा से बहुत प्रभावित थे। एक दिन बोर्डिंग हाउस के चौके में उन्होंने एक टेढ़े-मेढ़े तवे पर इन्हें रोटी बनाते देखा और कहा— ''चन्द्रभूषण, तुम्हारा तवा तो बहुत बढ़िया है।'' अपने तवे की तारीफ सुनकर उन्होंने एक कविता बनायी :

है रंग जैसा कृष्ण का, वैसा इसे भी मानिए।
है अंग टेढ़ा कृष्ण का वैसा इसे भी जानिए।
है कृष्ण खाई एक दिन, यह रोज खाता आग है।
जो देख ले इस कृष्ण को, उसका बड़ा ही भाग्य है।।

यह कविता चन्द्रभूषण ने अपने गुरु को सुनाई। उन्होंन आशीर्वाद देते हुए कहा— ''चन्द्रभूषण,

तुम एक दिन बहुत बड़े कवि बनोगे।'' गुरु का आशीर्वाद फलीभूत हुआ।

मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण कर ये उन्नाव के अटलबिहारी स्कूल में पढ़ने लगे। प्रत्येक शनिवार को ये तेरह मील पैदल चलकर गाँव आते थे और सीधा-सामान झोले में लेकर सोमवार को फिर उन्नाव पहुँचते थे। हाईस्कूल में इन्हें संस्कृत में विशेष योग्यता प्राप्त हुई थी।

पैसों की तंगी के कारण पढ़ाई यहीं रोक देनी पड़ी। फैजाबाद के मसौधा प्रशिक्षण केन्द्र पर इन्होंने तीन महीने की 'ग्राम-सुधार' की ट्रेनिंग ली। नौकरी मिल गयी पर कुछ समय बाद नौकरी छोड़ दी। इसके बाद उन्हें आकाशवाणी लखनऊ में नौकरी मिली। 'बहिरे बाबा' शीर्षक प्रसहन-कार्यक्रम से उनकी ख्याति चारों और फैल गयी। देश के हास्यरस के कवि-सम्मेलन में उन्हें खूब मान-सम्मान मिलने लगा।

रमई काका आधुनिक युग के अवधी काव्य के सर्वोत्कृष्ट कवि हैं। बैसवाड़ी अवधी का सच्चा स्वरूप प्रस्तुत कर गाँव को कविता के निकट न लाकर कविता को गाँव के निकट लाने वाले सफल हस्ताक्षर का नाम है रमई काका। उनकी चुटकियाँ मर्म को छूने वाली है, उनके भाव वैविध्यपूर्ण हैं और उनका शिल्प अनूठा है—

गाँव छोड़ि के चल्यो नगर का, धरती तुमको टेरि रही है।
बिसरि न जायो भुइयाँ देवी, जेहि कै धूरि अंग लपटायो।
खेलि कूदि कै कुलकि कुलकि कै, जेहिकी गोद मा मोद बढ़ायो।
पुरिखन्ह के ई ख्यातन बिसर्‌यो, अन्न देव कै दीरघ दायो।।''

धरती के कवि काका जनकवि हैं, लोककवि हैं। उनका काव्य कभी बासी नहीं हो सकता, क्योंकि उसमें उन्होंने ऐसी छौंकन लगाई है जो सब के मुँह में पानी ला देती है। मैं अवधी के पूत की श्रद्धा-सुमन समर्पित करता हूँ।

2. सुमित्रा कुमारी सिन्हा—सुमित्रा जी का जन्म सन् 1914 ई. में विजयादशमी को फैजाबाद में हुआ था। आपके पिता डॉ. महेशचरण सिन्हा श्रेष्ठ साहित्य-प्रेमी और समाज-सेवी थे। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। इनका विवाह उन्नाव जिले के प्रसिद्ध रईस चौधरी राजेन्द्रशंकर के साथ छोटी अवस्था में ही सन् 1930 में हुआ था। चौधरी साहब भी सहृदय और साहित्यानुरागी थे। उन्नाव में ही सुमित्रा जी ने इण्टरमीडिएट तथा साहित्यरत्न की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की और हिन्दी, संस्कृत के अतिरिक्त अँग्रेजी का भी अध्ययन किया।

सुमित्रा जी अपने युग की जागरूक साहित्यकार रही हैं। प्रगतिशीलता उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है। साहित्यिक तथा सामाजिक कार्यों में वे सदैव अग्रणी रही। कवयित्री के रूप में उन्होंने अच्छी ख्याति अर्जित की। सन् 1927-28 के आस-पास उन्होंने कहानी-लेखन के क्षेत्र में भी पदार्पण किया। उन्होंने उन्नाव जनपद के महिला संगठन, कांग्रेस मण्डल, नारी सेवा संघ आदि में अपनी सक्रियता का स्पष्ट प्रमाण दिया। वे जिला काँग्रेस कमेटी की उपाध्यक्ष भी रहीं। स्वतंत्रता-संग्राम में भी उनका योगदान सराहनीय रहा। उन्होंने आकाशवाणी (लखनऊ) में भी कार्य किया।

सुमित्रा जी की रचनाओं में प्रेम-भावना का प्राधान्य है। प्रकृति के प्रति गहरा अनुराग उनकी विशेषता है। वे विभिन्न वादों से अलग रहकर स्वच्छन्द साहित्य साधिका रही है। महादेवी जी उन्हें 'विद्रोहिणी' और 'रवीन्द्रनाथ टैगोर का अवतार' कहा करती थीं।

''माटी का न्योता'' उनकी अवधी रचनाओं का संग्रह है। यहाँ 'शरद गीत' शीर्षक कविता की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं—

बदरिया अँजुरिन रही उड़ाय, देवपूजा कै महक पवित्र,
भोर के कंचन थारा माँ, उरेहिसि हरसिंगारी चित्र।

सुनहरी किरनै लीपि रही, चटक दिन कै गोरा आँगन,
पुरावैं चौक रँगीले फूल, सुरन दै पंछी अमिरत कन।

3. वागीश शास्त्री–वागीश शास्त्री के जन्म का गौरव भी उन्नाव को ही प्राप्त है। शास्त्री जी अवधी के लोकप्रिय 'पैरोडी'–रचयिता हैं। इनके परिहास-रूपान्तरों ने अच्छी ख्याति प्राप्त की है। अवधी में विशेष प्रकार के व्यंग्य के लिए इनकी कविता ने अपनी अलग पहचान बनायी है। किसानों-मजदूरों और दलितों की दयनीय दशा पर इन्होंने कई कविताएँ रची हैं। जमीदारी-प्रथा के उन्मूलन के बाद 'दो जमीदारिनों की बात' शीर्षक इनकी कविता गाँवों में अब भी सुनी जा सकती है। कविता इस प्रकार है :

ओरी, धाखौ यहै बुढ़वा हवै जो, हमरी जमीदारी का नासि कराएसि।
बनिकै बड़ा भक्त किसानन का, उनका तौ यो पूरा सुपासु देवाएसि।
यहि ते जगु जीतेसि कौनु भला, अपन्यो घर माँ कबौं भाँड़ा भराएसि।
अब कामे न आवति है परजा, हमरे सबै र्‌वाब माँ राब गिराएसि।।

शास्त्री जी ने विश्वम्भरदयालु त्रिपाठी के गुणों की चर्चा करते एक बड़ा प्यारा छंद लिखा है–

ई सबै गुन से भरी सोंठ हैं बैंतरा, औषध माँ त्रिफला हैं त्रिपाठी।
तम चीरि प्रकास भरै के बदे, बसुधा-गृह के जंगला हैं त्रिपाठी।
उपकार करैं जगती भरे का, नहीं लेत कबौं बदला हैं त्रिपाठी।
सबै नेता स्वतंत्रता ते धनी भे, मुला ई अब हूँ कंगला हैं त्रिपाठी।।

4. डॉ. देवीशंकर द्विवेदी–कोरारीकलाँ गाँव के निवासी डॉ. देवीशंकर द्विवेदी एक प्रतिभा-सम्पन्न छात्र रहे हैं। गाँव की पाठशाला से प्राथमिक परीक्षा और बड़ौरा से मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण कर इन्होंने उन्नाव नगर के सुभाष कालेज से इण्टर पास किया। बी.ए. और एम.ए. की परीक्षाएँ आगरा विश्वविद्यालय से प्राइवेट परीक्षार्थी के रूप में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। 'बराती' और 'सुहास' नामों से ये कविता लिखते रहे। अवधी में इनकी कविताएँ 'बराती' उपनाम से प्रकाशित होती रही हैं।

ग्रामीण अंचल की झाँकियाँ इन्होंने बहुत सहज रूप में प्रस्तुत की हैं। इनकी व्यक्तिपरक रचनाएँ काफी सराही गयी हैं। दो छंद प्रस्तुत हैं–

तुम हौ विश्वम्भर दयालु औरु ऊपर ते, जानि तहूँ यहि ते का लाभु ना उठइबे।
तुम हीं ढकेलि कै बढ़ैहौ आगे हमका, माटी के खेलौना ऐस आगे बढ़ि जइबे।
त्यागु तुम कीन्ह्यो, पीछे लागि कै कमैबे धनु, ऐसी-वैसी गाँवन माँ नाँमहू कमइबे।
तुम ही ते पइबे खइबे तुमहीं ते माँगि माँगि, पेटु प्वाढ़ होतै झट्ट पीठि हू देखइबे।।

गाढ़े औरु सँकरे तुमार साथु छाँड़ि देबे, जाय झट्ट स्याब हम बैरिन कै कुरिया।
कबहूँ बोलइहौ तौ सरम बड़ी लागी तौनु, बैठि जइबे घर मइहाँ पहिनि कै चुरिया।
आई जौ चुनाव कउनौ, हुद्दो केरे लालच माँ, करिब तब दौरि दौरि लाख लुरुखुरिया।
मन के न भाँपि पइहौ, छाती ते लगाय लेहौ, तुम का मनैबे, यहै जादू केरि पुरिया।।

5. डॉ. कृपाशंकर मिश्र 'निर्द्वन्द्व'–उन्नाव जनपद की तहसील पुरवा के ग्राम ऊँचगाँव सानी में श्री कृपाशंकर मिश्र 'निर्द्वन्द्व' का जन्म हुआ था। गाँव के स्कूल से कक्षा चार पास कर पड़रीकलाँ के मिडिल स्कूल से इन्होंने मिडिल की परीक्षा पास की। एम.आर.आर.एस. हाईस्कूल रणवीपुर, पुरवा से हाईस्कूल पास किया। वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में ये उन दिनों खूब पुरस्कृत होते थे। व्यक्तिगत परीक्षार्थी के रूप में एम.ए. (हिन्दी) की परीक्षा उत्तीर्ण कर ये सागर चले गए और वहीं पर आचार्य

नन्ददुलारे वाजपेयी के निर्देशन में पी-एच.डी. उपाधि प्राप्त की। कई महाविद्यालयों में अध्यायन कार्य किया, किन्तु अपनी स्वच्छद प्रकृति के कारण कहीं टिक न सके। संप्रति ये लखनऊ में स्वतंत्र लेखन-कार्य में लगे हैं।

अवधी काव्य-रचना की प्रेरणा इन्हें रमई काका से मिली थी। ''चमरउधा'' इनकी अवधी कविताओं का संग्रह है। 'निर्द्वन्द्व' ने यथार्थवादी कविताएँ रची हैं। किसान और मजदूर के दयनीय जीवन ने कवि के हृदय को विगलित किया है। किसान को कितना अधिक श्रम करना पड़ता है, इसका यथार्थ चित्रण इन्होंने अपनी कई कविताओं में किया हैं ''है कठिन सब ते किसानी'' शीर्षक इनकी कविता बहुप्रशंसित हैं:

6. शिवप्रसाद वर्मा–शिवप्रसाद वर्मा अपनी ठेठ बैसवाड़ी कविताओं के लिए काफी लोकप्रिय हैं। उनकी कविताओं पर रमईकाका की कविताओं की छाप देखने को मिलती हैं प्रकृति के प्रति इनमें बड़ी ललक है। इनकी उपमाएँ पाठकों को बहुत भाती हैं। 'कुटिया का देवता' शीर्ष इनकी कविता बहुत प्रसिद्ध हुई। उसके कुछ अंश यहाँ दिये जा रहे हैं :

कउने तरुवर कै छाँह सघन?
केहि ते कुटिया माँ बरसै घन?
जेहिके पनपे तेने धरती, माता कै गोदी सरसाई।
माता कै ममता देखि-देखि, अम्बर कै प्रभुता सरमाई।

7. काका बैसवारी–काका बैसवारी के नाम से जाने-पहचाने जाने वाले पं. सूर्यप्रसाद द्विवेदी उन्नाव जनपद के ग्राम अकवाबाद में सन् 1935 में उत्पन्न हुए। बचपन से ही ये बीघापुर, मगरायर और गढ़ाकोला की साहित्यिक काव्य-गोष्ठियों में जाया करते थे। कविता के अंकुर धीरे-धीरे बढ़ने लगे और ये अवधी के प्रसिद्ध कवि हो गये। इन्होंने वीरछंद, भक्तिगीत, एकांकी, हास्य-व्यंग्य और खण्ड-काव्यों की रचना की है।

काका बैसवारी की रचनाओं पर रमई काका का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। इनकी भाषा ठेठ बैसवारी है। इन्होंने खड़ी बोली और ब्रजभाषा में छदों की भी रचना की है। इनके व्यंग्य श्रोताओं को बहुत अच्छे लगते हैं। कवि-सम्मेलनों में इन्हें बहुत आमंत्रित किया जाता है। इनकी हास्यपूर्ण रचनाएँ लोगों को लोट-पोट कर देती हैं। इनके एक अवधी गीत की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं :

तुम तौ पिया परदेस सिधारे, सँकरे म जियरा हमार।
एक तौ गरीबी, दूजे मँहगाई, तीजे बड़ा परिवार।।
रहि-रहि बिजुरी बदरवा म चमकै,
जिया घबराय कौंधा लप-लप लपकै।
झुकी है अँधेरिया राति पलक न झपकै,
टुटही मड़इया मोर टप-टप टपकै।
पिपरा कै पात लड़ैं पिछवारे छाये गड़हिया दुआर।।

काका बैसवारी ने समय-समय पर महान् देशसेवियों और साहित्यसेवियों पर कविताएँ लिखी हैं। 'रमई काका' पर लिखी गयी उनकी कविता प्रस्तुत है :

जी रूढ़िबाद के महल पइठि कै, हास्य व्यंग्य बउछार किहिनि।
धरती की बलगरि माटी मा, श्रम अमिरितु अइस फुहार किहिनि।
जी चोर बजारिन की रातिनि मा जगा जगा भिनसार किहिनि।
सीमा के बीर जवानन कइहाँ, हर पाती तरवारि दिहिनि।

ई उन के चरनन का है बन्दन, रमई काका का अभिनन्दन।
जी तुलसी बाबा के चउरा मा, अवधी क्यार दिया बारेनि।
सच्चाई का घिव गुरु कपूरु, दै सँझवाती चोला गारेनि।
ध्रुव तारा बने चन्द्र भूषण, सब तन उपेरु सीतल ढारेनि।
गइयन के पिण्ड छोड़ावै का, कुकुरन कै पूँछि पुँज डारेनि।
साँपन के बीच जइस चन्दन, रमई काका का अभिनन्दन।।

8. धर्मदत्त द्विवेदी–पं. धर्मदत्त द्विवेदी उन्नाव जनपद के ग्राम रावतपुर के निवासी हैं। रमईकाका की प्रेरणा से ये अवधी काव्य-रचना की ओर बढ़े। इनकी भाषा ठेठ बैसवाड़ी है। इनकी ''मन मा रमिगे रमई काका'' शीर्षक कविता लोगों को बहुत पसंद है :

तनु दूबर है मनु सबल मुलौ, चेहरा हँसमुख है मिलनसार।
सुरसुती जीभि पर नाचति है, हिरदै मा छलकत है पियार।।
रावतपुर गाँव म पैदा भे, गँवई गाँवन ते नेहु करैं।
गाँवन की अवधी बोली माँ, जन-जन के हिये सनेहु भरैं।।
वी काबि-कला संदेसन ते, कवितै मा अमिरितु घोरि देयँ।
मनइन का मनई बनावै का, वी ग्यान कै पोटरी खोलि देयँ।।
भिनसार, रतौंधी, गुलछर्रा, हरपाती और तरवारि लिखेनि।
नेताजी पर पोथी लिखिकै, बहिरे बाबा कै कथा रचेनि।।
उनके गुन गन हम का बरनी, कविगन मा उन कै है साका।
बौछार केरि बौछारन ते, मन मा रमिगे रमई काका।

बहराइच जनपद के प्रमुख अवधी रचनाकार

प्रो. राजेन्द्रप्रसाद श्रीवास्तव

अवधी क्षेत्र की सुप्रसिद्ध पौराणिक नगरी 'ब्रह्मायच' आज भी विद्यमान है, किन्तु अब वह 'बहराइच' जनपद के रूप में संज्ञायित है। ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक दृष्टि से उत्तर भारत का यह क्षेत्र अपने आप में ख्याति की कीर्ति-स्तम्भ है। यह नगरी अपने होने की विसंगतियों को झेलती हुई विभिन्न प्राकृतिक सम्पदाओं से भरपूर जितनी बहिर्मुखी है, साधना, चिन्तन तथा भावनात्मक दृष्टि से उतनी ही अन्तर्मुखी भी। विसंगति मात्र इतनी है कि आज यह होते हुए भी न होने के तुल्य है।

सम्पूर्ण भारत में ज्ञान-विज्ञान, सभ्यता-संस्कृति, विकास-समृद्धि तथा अध्यात्म एवं भौतिकता की दृष्टि से जितना पिछड़ा वर्तमान उत्तर प्रदेश है, उत्तर प्रदेश में उससे भी अधिक पिछड़ा अवध-क्षेत्र और अवध-क्षेत्र में पिछड़ेपन की पराकाष्ठा को पार करता हुआ बहराइच जनपद है। इस जनपद की भाषा को डॉ. बाबूराम सक्सेना ने केन्द्रीय अवधी माना है, पर भाषावैज्ञानिक दृष्टि से इसे पूर्वी अवधी के नाम से संज्ञायित किया जा सकता है। वस्तुतः अवधी मात्र अवधी है, मात्र उच्चारण-भेद से इसके विभिन्न क्षेत्रीय रूपान्तरों की आत्मा में भेद नहीं किया जा सकता। क्षेत्रीयता की यह प्रक्रिया भाषा की मूलसत्ता को छिन्न-छिन्न करते हुए उसकी साहित्यिक समृद्धि को संकुचित करने का एक प्रयास ही कही जा सकती है।

कुछ ऐसा ही दुर्भाग्य बहराइच जनपद के अवधी साहित्य के साथ भी जुड़ा हुआ है। आज तक किसी ने भी यहाँ के क्षेत्रीय साहित्य का मूल्यांकन करके साहित्य के प्रति अपने सम्पूर्ण दायित्वों का निर्वाह नहीं किया है। अपने जीवन्त साहित्यिक इतिहास में इसे अपना उचित स्थान न मिल पाने का एक कारण यहाँ के कवियों और साहित्यकारों द्वारा 'स्वान्तःसुखाय तुलसी-रघुनाथ-गाथा' जैसी उक्ति का अनुपालन भी है। उनकी यह प्रवृत्ति साहित्यिक उपलब्धियों को जग-जाहिर करने के प्रति बरती जाने वाली उदासीनता को लेकर मूल्यांकन की दिशा में एक बहुत बड़ी बाधा है। जिसके पास अपनी अथवा पूर्वजों से विरासत में मिली जो कृतियाँ उपलब्ध हैं, उनके समुचित मूल्यांकन हेतु तत्सम्बन्धी पर्याप्त सूचना देने में लोगों में रुचि, सदाशयता और सहयोग की भावना का नितान्त अभाव है।

साहित्य-जगत् द्वारा यहाँ के सत्साहित्य की मूल्यांकन-सम्बन्धी उपयोग-उपेक्षा के कारण भी साहित्यकारों की कुण्ठा ने इन परिस्थितियों के निर्माण में तदनुसार भूमिका का निर्वाह किया है। वस्तुतः साहित्य मान्यता तथा सम्मान का मुखापेक्षी होता है, जो साहित्यकार के भावनात्मक पहलू की प्रतिक्रिया है। ऐसी दशा में उसके मूल्यांकन की अप्रस्तुति ने उसे भी लोगों की उपेक्षा करने हेतु बाध्य कर दिया है। यहाँ के लोग लिखते हैं, किन्तु अवसर तथा सुविधाओं के अभाव में छपते नहीं। कुछ उत्साही कवि और साहित्यकार यदि इस दिशा में प्रयत्न भी करते हैं, तो अभिव्यक्ति के प्रकाशन-माध्यमों में व्याप्त मित्रवाद तथा इने-गिने स्थापित कृतिकारों की सीमा-बद्धता के कारण उन्हें समुचित प्रोत्साहन नहीं मिला पाता है।

उपर्युक्त संदर्भों की प्रतिक्रिया-स्वरूप प्रस्तुत आलेख के निमित्त कवियों के जीवन-परिचय तथा उद्धरण-हेतु कृतित्व को लेकर उनकी जिस उदासीनता और उपेक्षा का भोग भोगना पड़ा है, वह अन्यथा नहीं है। अवधी साहित्य की श्रीवृद्धि में सहायक बहराइच जनपद के कवियों की एक लम्बी सूची है। इनमें से अधिकांश साहित्य-जगत् में अपरिचित हैं और कई-एक अपना विशिष्ट परिचयात्मक स्थान बना चुके हैं।

1. रामभरोसे त्रिपाठी 'राम'—श्री त्रिपाठी का जन्म मोहल्ला ब्राह्मणीपुरा (वर्तमान ब्रह्मपुरी) में सन् 1872 ई. में हुआ था। इनके पिताश्री का नाम नित्यानन्द त्रिपाठी था। वर्नाक्यूलर मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् इन्होंने राजकीय विद्यालय में अध्यापन-कार्य शुरू किया। हिन्दी-अध्यापक के रूप में श्री त्रिपाठी ने राजकीय जुबली कालेज लखनऊ, राजकीय विद्यालय प्रतापगढ़ और बहराइच में कार्य किया। सेवा-निवृत्त होने के बाद जीवन-पर्यन्त आप बन्दी-सुधार-सेवा-कार्य में संलग्न रहे। आप मुंशी प्रेमचन्द के साथ अध्यापक के रूप में सहकर्मी रहे। और इनकी प्रतिभा-सम्पन्नता के आधार पर मुंशी प्रेमचन्द इनसे यदा कदा अपनी कहानियों में सुधार-सम्बन्धी अपेक्षित सहयोग भी लेते रहे। सन् 1927 में सेवा-शर्तों के 55 साला नियमान्तर्गत आपने अवकाश ग्रहण किया और लगभग 92 वर्ष तक जीवित रहे। सन् 1962 में श्री त्रिपाठी का स्वर्गवास हो गया।

त्रिपाठी जी संस्कृत, हिन्दी, फारसी और अँगरेजी के अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने लगभग 150 ग्रन्थों की रचना की थी, किन्तु सभी अप्रकाशित रहे। इनकी 'नयनानन्द-पद्य-हजारा' ही एक मात्र प्रकाशित कृति है।

त्रिपाठी जी की सूक्ष्म दृष्टि शास्त्रों के गहन अध्ययन की ओर संकेत करती थी। तुलसी-साहित्य में इनकी विशेष रूचि थी। इन्होंने अनेक ग्रन्थ तुलसीकृत 'रामचरितमानस' की मीमांसा-सम्बन्धी लिखे हैं जो अपने आपमें शोध के विषय हैं। त्रिपाठी जी की काव्य-रचनाएँ अवधी में हैं, किन्तु उन पर क्रियापदों की दृष्टि से कहीं-कहीं खड़ी बोली की छाप पायी जाती है। कबीर ने विभिन्न भाषाओं की एकरसता को लेकर अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम सधुक्कड़ी भाषा को बनाया था तो त्रिपाठी जी ने अवधी को मूल डिंगल के पार्श्व में रखकर उसे तदनुरूप यतिं, गति और मति प्रदान की है। उदाहरणस्वरूप इनकी कुछ कविताएँ प्रस्तुत हैं—

बनाया रहा मय सुदानव सुरगै जु भूमी विलक्षण।
जलैथल थलैजल सु अदभुत अनूपम नजर में ।। 1
अचम्भित भवा देखि कुरुपति विचारौ नयन भ्रम भवा जो।
जलै-थल लखा अरु थलै-जल विलोका यहै तौ नजर में ।। 2।
जु कौतुक लखत सब अटारी चढ़ी नारि सारी कहत सुनु।
लिहिस सुन कुरूपति उठा नैन देखा, पड़ी द्रौपदी जी नजर में।।3

(नयनानन्द-पद्य-हजारा : विचार-शतक)

2. रक्षाराम त्रिपाठी 'रक्ष'—'रक्ष' जी का जन्म 23 फरवरी, सन् 1907 ई. को मोहल्ला ब्राह्मणीपुरा में हुआ था। प्रसिद्ध कवि एवं विचारक उक्त पं. रामभरोसे त्रिपाठी 'राम' इनके पिता थे। इन्होंने वर्नाक्यूलर परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् आयुर्वेदाचार्य की परीक्षा पास की। स्थानीय जिला परिषद् में चिकित्सक के पद पर कार्य करना प्रारम्भ किया और कुछ वर्षों के बाद ये प्रधान चिकित्सक बना दिये गये। तीन वर्ष तक इसी पद पर कार्य करने के पश्चात् उन्होंने प्रधान चिकित्सक के पद से त्यागपत्र देकर स्वतंत्र रूप से चिकित्सक का कार्य शुरू कर दिया। सन् 1948 ई. में इनकी मृत्यु जलोदर रोग से हो गयी।

अवधी भाषा पर इनका अच्छा अधिकार था। इन्होंने ठेठ अवधी में गीत, लोकगीत, दोहा और

समस्यापूर्ति की सुन्दर रचनाएँ लिखी हैं। उदाहरणस्वरूप रचना प्रस्तुत है–

पानी के बरसे ते घर दुआर गिरन लाग।
बहिया कै पानी घर जाँघ भर है गवा।।
खेत-खरिहान माँ पानिन पानी देखात।
ईंधन के बिना बस उपास है-है गवा।।
छानी और छपरन कै बाती तौ तूरि-तूरि।
अटिया पै पिहान धै बनाय खवतै भवा।।
पानिन माँ खाना और पखाना सब पानिन माँ।
नाना भाँति दुःख दीन दाना तक लै गवा।।

3. **राजितराम मिश्र**–कवि अपनी लेखनी द्वारा किस प्रकार युग-विशेष से सम्बद्ध विचारों को अपने अनुरूप मोड़ लेता है, इसका अवलोकन करने के लिए हमें पं. राजितराम मिश्र की कविताओं को देखना चाहिए। ये अपने समय के समर्थ अवधी-हस्ताक्षर थे। इनका जन्म ग्राम रामपुरवा में जुलाई, 1911 ई. में हुआ था। इनके पिता श्री देवीसहाय मिश्र थे। पारिवारिक वातावरण सुखद होने के बावजूद आप कक्षा चार तक ही पढ़ सके। स्वाध्याय द्वारा इन्होंने हिन्दी, उर्दू, संस्कृत का सम्यक् ज्ञानार्जन किया था। मिश्र जी की सराही गयी रचनाओं में 'वकालत', 'कचेहरी', 'तम्बाकू', 'सिनेमा', 'प्रथम गणतंत्र-दिवस', 'लेखपाल-स्तुति', 'नवग्रह-पूजन', 'गाँवन के राजा', 'तुम डार-डार हम पात-पात' आदि हैं।

मातृ-भाषा अवधी के प्रति इनके मन में अधिक मोह था। स्वतत्रंता-संग्राम की झंझावातीय परिस्थितियों का मिश्रजी के कवि-रूप पर व्यापक प्रभाव पड़ा था। मिश्रजी की भाषा ठेठ अवधी है। इसमें अन्य भाषाओं की शब्दावली का मेल-जोल नहीं है। भाषा सरल, स्वाभाविक, प्रवाहपूर्ण और बोलचाल की है। अलंकार एवं रस-नियोजन पर भी कवि ने पूर्ण दृष्टि रखी है। इनकी 'गाँवन के राजा' शीर्षक कविता की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

हम गाँवन के राजा हन सब कुछ हमरे हाँथे माँ।
ब्रह्मा का लिख्खा को म्याटै लिखि गवा जौन माथे माँ।।
वा तपत ज्याठ कै गर्मी जब लूक झरसि मुँह जारै।
जब कोई घरन के भीतर से विरला पाँव निकारै।।
तब लिहे कुदारि किसनऊँ दुपहरिया मा चमकावैं।
देहीं ते बहै पसीना मुल छाँह नियर न आवै।।
चुटकी भरि सेतुआ लैके लोटा भरि पानिम डारैं।
पी कै ज्यों-त्यों कौनौ विधि खेते मा दिन निपटारैं।।
भुइ लोट चली पुरवइया चेंटीं आँड़ा लै भागी।
सब छोड़ि कै काभ घरैतिन तब धान पछोरै लागीं।।
अमिला खेतन माँ मारैं बिरहा कै तान उड़ावैं।
निकरत जब देखैं पानी तब दौरि म्याड़ सपतावैं।।
जब अच्छा लेवा उठिगा तब कसिकै खेत मयाइन।
भरि धान गोझारा धोती तब चारि दफा छिटकाइन।।
चौथे दिन अँखुवा फोरिस चारिउ पाटी तकि आए।
अब बहुत नीक जामा है घरका खुसखबरी लाए।।
जब छः अंगुर कै होइगा तब घर भरि बैठि निराइन।

फिर डेढ़ बीत का होइगा तब दोहिरेउना पनियाइन।।
फिरि धान गरे भरि बाढ़ा तब जियरा गरगज होइगा।
घर फूली फिरैं घरैतिन दुःख दारिद अबकी हरिगा।।
जब धान फूल पर आवा तब अइसि बयरिया चलिगै।
सब एक-एक बाली पर दुइ-दुइ सै गन्धी चढ़िगै।।
आसा पर पानी फिरिगा ना बिया बेचारउ पाइन।
अब देयँ कहाँ ते ड्योढ़ी जो बरखा मा हैं खाइन।।
सरकार तकाबी माँगै, हैं उधम अमीन मचाए।
पोतउ के खातिर बैठे, हैं नंगा नाच नचाए।।
ई गाँव केरि सब राजा दाना-दाना का तरसैं।
इनहिन के नौकर-चाकर बनि हाकिम इनते गरजैं।।
फिरि करैं भरोस दैव पर विधि लिखिन जौन माथे माँ।
हम गाँवन के राजा हन सब कुछ हमरे हाँथे माँ।।

4. माधवराम अवस्थी—अवस्थी जी का जन्म ग्राम धन्नी-पुरवा (नेवादा) में सन् 1912 ई. में एक कुलीन ब्राह्मण-परिवार में हुआ था। मिडिल स्कूल परीक्षा पास करने के पश्चात् आप जनपद की एक प्राइमरी पाठशाला में अध्यापन का कार्य करने लगे। इनकी मृत्यु 1990 ई. में हुई। अवस्थी जी अवधी-जनकाव्य के समर्थ रचनाकार रहे हैं। सामाजिक जीवन की गहरी अनुभूति इनकी रचनाओं में पायी जाती है। 'बापू', 'ऐतिहासिक विनोद-माला' आपके दो प्रकाशित और 'बजरंग-विरुदावली' एक अप्रकाशित ग्रंथ है।

अवस्थी जी भारतीयता के संपोषक थे। इस संदर्भ में लिखे उनके गीत और छन्द पठनीय हैं। अवधी भाषा पर अवस्थी जी का पूर्ण अधिकार रहा है। शब्द-शब्द में उनके विचारों की सहजता तथा स्वाभाविकता के दर्शन होते हैं। उनके 'बजरंग-विरुदावली' नामक ग्रंथ की कुछ पंक्तियाँ संदर्भित हैं—

(1) *हे हनुमन्त दयालु कृपालु उदार महा जगती यश गावै।*
वक्ष विशाल लंगूर है लाल और लाल सिन्दूर तुम्हैं अति भावै।।
पीलो है रंग जो नैनन को सोई दानव देखि कै लाल है जादै।
नाथ तुम्हारे निबाहे बनै मोंहि दानव मण्डल रोज सतावै।।

(2) *यदि चाहत हौ यहि जीवन में सुख शान्ति समेत गुजारा करैं।*
दुःख संकट में न फँसै कबहूँ मुख श्याम सरोज निहारा करैं।।
कबहूँ न घटै रस प्रेम सुधा हरिनाम सदा ही उचारा करैं।
(तो) बजरंगबली से करौ विनती सब ओर से वो ही सुधारा करैं।।

5. मेवाराम पाण्डेय 'भवेश'—श्री भवेश जी का जन्म 15 अक्टूबर, सन् 1922 ई. में ग्राम न्योतला में हुआ। इनके पिताश्री का नाम भीखीराम पाण्डेय था। इन्होंने शास्त्री, साहित्य-रत्न, साहित्याचार्य की उपाधियाँ अधिगत कीं। आदर्श संस्कृतायुर्वेद महाविद्यालय बहराइच में प्राध्यापन करते हुए सन् 1983 ई. में इन्होंने अवकाश ग्रहण किया। हिन्दी, संस्कृत के अतिरिक्त आप को अँगरेजी का भी ज्ञान है। आपकी कविताओं की भाषा ठेठ अवधी है। अवधी के अतिरिक्त भवेश जी ने संस्कृत और खड़ी बोली हिन्दी में भी कविताएँ लिखी हैं। इनकी अवधी रचनाओं में सर्वत्र सहजता, सरसता और मधुरता का भाव परिलक्षित होता है। श्री भवेश जी के भीतर का कवि समाज और राष्ट्र के प्रति अहितकर व्यवस्था तथा विसंगतियों का विद्रोही है। इन्हें आदर्शमूलक अपेक्षाएँ ही स्वीकार्य हैं। वास्तव में भवेश जी विचारक,

समाज-सुधारक के साथ, राष्ट्र के प्रति समर्पित रचनाकार हैं। नीचे लिखी कविताओं में श्री भवेश जी का व्यक्तित्व, कृतित्व और कवि-कौशल दर्शनीय है–

'मँहगाई'–
काम वहै, दिन-रात वहै, सब बात वहै जस होत रहै तब।
या मँहगाई न तौ कबहूँ अस डाहिस है जेतना अब।।
लूट मची, सब ओर ठगी, उतपात बड़ा, सुख-सान्ति भला कब।
हाल-बिहाल है भारत कै अनगिन्त हकूमत बाज भरे जब।।

'बिलगाव'–
अपने-अपने सब भाइन मा कहूँ मेल कै नाँव-निसान है नाहीं।
प्रेम कै खेती करै मिलिकै अस देस मा कोऊ किसान है नाहीं।।
उप्पर ठाठ, सराब-जुआ, घर चाउर-दाल-पिसान है नाही।
खाँय उधार और चोरी करैं कुछ मूँड़े पै मानौ बेसान है नाहीं।।

'अमरजाद'–
पसु-पच्छिउ खात हैं देखौ सदा अपने कुल जाति के बन्धन मा।
मनई मुल देखौ भवा कस है कनवा जस राजा है अन्धन मा।।
न तौ जाति न धर्म कै बाति करै भरमावा फिरै जग-फन्दन मा।
अब बोलि रहे अँगरेजी घरे-बहिरे जनमे मनौ लन्दन मा।।

आजादी कै अरथ-
जब आपन धर्म न नीति करौ, तुमरे भये नेता से होत है का।
हमसे कहि जौनि बन्यौ अगुवा, समझावौ तनी अब होत है का।।
जब देस कै लाभ देखात न है तब बातन-बातन होत है का।
बची बोली न सभ्यता आपन जौ भला अर्थ आजादी कै होत है का।

6. पारसनाथ मिश्र 'भ्रमर'–पारस भ्रमर के नाम से विख्यात मिश्र जी का जन्म ब्रह्मपुरी मोहल्ले में एक प्रतिष्ठित एवं सम्पन्न मिश्र-कुल में सन् 1934 ई. में हुआ। आपके पिता पं. कन्हैयालाल मिश्र अपने समय के प्रसिद्ध वकील, समाज-सेवी, स्वदेशानुरागी और प्रगतिशील विचारक थे। आप वी.काम., एल-एल.बी., संगीत-प्रभाकर आदि अनेक उपाधियों से विभूषित हैं। स्थानीय साहित्यिक संस्था 'वातायन' द्वारा सन् 1974 ई. तथा 'साहित्यानन्द-परिषद : गोला गोकर्णनाथ, खीरी' द्वारा सन् 1989 ई. में आपका अभिनन्दन भी किया जा चुका है।

विलक्षण प्रतिभा के धनी 'भ्रमर' जी जन्मजात प्रातिभ, स्वप्नदर्शी, आधुनिक अवधी के रचनाकार हैं। अद्यतन अवधी लोकगीतकारों में आपका एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है। भ्रमर जी का व्यक्तित्व बहु-आयामी है। वे कवि, लोकगीतकार, पत्रकार, सम्पादक, इतिहास एवं पुरातत्व के जिज्ञासु, संगीत-प्रेमी, गम्भीर विचारक, मननशील चिन्तक आदि सब कुछ हैं। किन्तु प्रत्यक्ष रूप से आपका कविरूप ही प्रधान है।

अवधी और खड़ी बोली, दोनों ही भाषाओं पर भ्रमर जी का समान अधिकार है। पर इनका अन्तर्मन अवधी में ही अच्छी तरह मुखर हुआ है, क्योंकि अवधी आपकी नस-नस में रसी-बसी है। उक्त दोनों भाषाओं के अतिरिक्त संस्कृत, अँगरेजी, उर्दू और नेपाली भाषा का भी आपको अच्छा ज्ञान है। भ्रमर जी की 'गौरैया', 'सैकत-शैय्या', 'रेत की दीवाल' आदि नामक कहानियाँ समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। अवधी में गीत, लोकगीत, गजल आदि का भी प्रकाशन हो चुका है। खड़ी बोली हिन्दी में लगभग छह पुस्तकें और अवधी में 'सुरसमयी', 'जगपती-चालीसा' एवं 'अष्टक' आदि पुस्तकें अभी तक प्रकाशित हैं। कुछ वर्ष पूर्व बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना ने इनके कुछ अवधी गीतों को प्रकाशित किया है। समय-समय पर भ्रमर जी की कविताएँ विविध साहित्यिक मंचों, कवि-सम्मेलनों, आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के माध्यम से प्रकाश में आती रही हैं। अवधी में 'संत-सत्तइसा', 'भगल' तथा

खड़ीबोली में 'आदमी और बादल' 'आकर्षण' आदि अप्रकाशित काव्य-कृतियाँ हैं। विषय-वस्तु की दृष्टि से भ्रमर जी की कविता कृषक एवं ग्रामीण जीवन, प्रेम, प्रकृति, समाज, अध्यात्म, देशप्रेम, राजनीति, आर्थिक विषमता आदि के साथ श्रृंगार के संयोग-वियोग, वात्सल्य, भक्ति, हास्य एवं व्यंग के विविध विषयों से सम्बद्ध है। प्रकृति-चित्रण के अन्तर्गत उन्होंने कजली, होली, फगुआ, चैती, झूमर, कहरवा, दादरा आदि अनेक विषयक गीतों की रचना की है। किसी विषय के प्रस्तुतिकरण की जैसी कलात्मक क्षमता भ्रमर जी में पायी जाती है, उसका वर्तमान समय के अन्य अवधी गीतकारों में अभाव-सा है। सामाजिक जीवन की गहरी अनुभूति इनकी कविताओं में विद्यमान है। कल्पना-लोक में विचरण करते हुए भी उन्होंने धरती के यथार्थ का साथ कभी नहीं छोड़ा है। जैसे धरती से फूल-फल उपजते हैं, उसी तरह भ्रमर जी के गीत जीवन के उर्वर अनुभव-क्षेत्र से निकलते हैं।

7. डॉ. राम सुमिरन बाजपेयी—बाजपेयी जी का जन्म ग्राम बिसवाँ में सन् 1937 ई. में हुआ। इनके पिता श्री पं. प्रयागदत्त वाजपेयी थे। इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. और पी-एच.डी. उपाधियाँ अर्जित कीं। सम्प्रति डॉ. वाजपेयी जगतजीत इण्टर कालेज, इकौना में वरिष्ठ हिन्दी प्रवक्ता के रूप में कार्यरत हैं। प्रारम्भ से ही डॉ. वाजपेयी स्वतंत्र विचारों के सम्पोषक तथा नवीन विषयों को जानने हेतु सतत जिज्ञासु रहे हैं। अवधी और खड़ी बोली इन दोनों भाषाओं पर डा. बाजपेयी का अधिकार है। अवधी के नवोदित कवियों में डॉ. वाजपेयी एक प्रबुद्ध रचनाकार के रूप में स्थापित हैं। भविष्य में इनसे और सशक्त भावपूर्ण रचनाओं की अपेक्षा है। 'मेरे राम' और 'कामना' शीर्षक इनकी दो रचनाएँ प्रकाशित हैं और शेष अप्रकाशित। डॉ. वाजपेयी की भाषा खड़ी बोली-मिश्रित अवधी है। खड़ी बोली-मिश्रित अवधी में लिखी इनकी छोटी-छोटी दो रचनाएँ 'मेरे राम' से प्रस्तुत हैं—

(1) *'नाम लेत आवैं भगावैं दुःख द्वन्दन पै।*
जाने क्यूँ रामलला हमसे यूँ रूठे हैं।।
(2) *काम क्रोध लोभन मिलाय धूरि धारनि पै।*
गंगा कछारन में राम' रहिहौं कहीं।।

8. हरिबख्श सिंह 'पवाँर'—अवधी के अधुनातन जन-कवि 'पवाँर' जी का जन्म 1 मई, 1943 ई. को ग्राम अटोडर रानीबाग में हुआ। पवाँर जी के पिता का नाम श्री शिवनारायण सिंह पवाँर है। इनकी शिक्षा एम.ए. तक हुई। श्री पवाँर लघु माध्यमिक विद्यालय, गुलामअली पुरा, नगर बहराइच में प्रधान शिक्षक के पद पर कार्यरत थे। 'पवाँर' जी ठेठ अवधी एवं खड़ी बोली हिन्दी के सुपरिचित गीतकार एवं मंच के स्थापित कवि हैं, साथ ही इनकी रचनाएँ आकाशवाणी और दूरदर्शन लखनऊ से भी यदा-कदा प्रसारित होती रहती हैं।

ग्रामीण अंचल के सौन्दर्य और वहाँ की धरती के मनमोहक नैसर्गिक वातावरण का इनकी कविताओं पर विशेष प्रभाव है। जो व्यक्ति गाँव में पैदा हुआ, धूल में लोट- पोट कर बड़ा हुआ और उसी के साथ जी भी रहा है, उसके हृदय में वहाँ के कण-कण के प्रति अगाध आस्था और अनुराग का होना स्वाभाविक। 'पवाँर' की कविताओं के विषय खेत-खलिहान, गाँव-गिराँव, फूल-फल, माटी-परिपाटी, समाज, देश तथा अन्यान्य अछूते प्रकरण हैं। इनकी 'जै देश', 'बदरवा बड़े छली', 'यह टोपी का ठेला', 'गीत-गंगा' आदि प्रकाशित कृतियाँ हैं और 'माण्डवी गीत काव्य', 'गाँव', 'खेत-खरिहान', 'कँधैया', 'बनफूल' आदि अप्रकाशित काव्य-कृतियाँ हैं। 'रब्बी', 'गाँव', 'एका', 'बरखा', 'देशवा हमार' आदि शीर्षक इनके गीत तथा लोकगीत बहु-श्रुत हैं।

'पवाँर' जी की कविताओं में दोहा, सवैया, चौपदी, एकादसी, एका आदि पुराने और नये छन्द प्रयुक्त हुए हैं। अलंकारों में विशेषतः अनुप्रास, यमक, श्लेष, पुनरुक्ति-प्रकाश, उपमा आदि का सुन्दर विन्यास

पाया जाता है। जन-कवि 'पवाँर' से अवधी भाषा और साहित्य की अभिवृद्धि हेतु विशेष अपेक्षा है। इनकी कतिपय रचनाएँ प्रस्तुत हैं जिनमें क्रमशः लोकगीत, एका, सवैया और एकादसी छन्द हैं—

देशवा हमार (लोक गीत)—*मड़हा पुरनका अउ टुटही मड़ैया*
महला-दुमहला बने हैं जिनते भैया,
जहाँ रहैं रजऊ, धरतिया के पुतऊ, गमकत जहवाँ बहार,
बसा रे भैया, गउवाँ मइहाँ देसवा हमार।
माटी कै घर सबकै सुन्दर निर्धन या धनवाला
पक्का कुवाँ बना बगलै माँ समुहे बना सिवाला
जहवाँ बसे प्रयाग बसे हैं जहाँ कासी
जेहिका देखै बदे भये राम बनबासी जहाँ
जहाँ रहैं गोपिया, जहाँ पै रहैं ग्वाले जहवाँ कान्ह लिहिन औतार।
बसा रे भैया, गउवउँ मइहाँ देसवा हमार।।

एका(छन्द)—*भगवानौ मेवा छौड़ि दिहिन, हैं खाइनि साग सोंठाउर मा।*
वा खसबू कहाँ इतर मा है, जो नये कूट के चाउर मा।।
मुफतै मा महक लटाय रही, गुड़ भेली-राव कोल्हाउर मा।
सोहन हलुवा हैं बिसरि गवा, ऊ मजा मिला रसियाउर मा।।

एकादसी (छन्द)—*देश बदे मरि जाय। नाव अमर कै जाय।।*
जहासुमति नहिं नेह। लहू-लहु गेह।।
कलम भयी भिनसार। चौढ़िंग भा उजियार।।
तिसना अस फलिहान। मनई भा सैतान।।
जहाँ सबै जल्लाद। न कर हुवाँ फरियाद।।
पवन चलै उनचास। रहु धीरज के पास।।

9. सत्यप्रकाश सिंह 'प्रकाश'—श्री सत्यप्रकाश जी का जन्म सन् 1948 ई. में नगर बहराइच के चाँदपुरा मोहल्ले में हुआ। इनके पिता श्री शारदाप्रसाद सिंह 'शैदा' हिन्दी, उर्दू तथा फारसी के अच्छे विद्वान तथा वीर रस के कवि हैं, जिन्होंने अभी कुछ ही वर्ष पूर्व स्थानीय आजाद इण्टर कालेज के प्राचार्य पद से अवकाश ग्रहण किया है। सत्यप्रकाश जी की शिक्षा बी.ए. तक है। सम्प्रति श्री सिंह जिला परिषद् में कार्यरत हैं। खड़ी बोली हिन्दी के अतिरिक्त श्री सिंह ने अवधी में भी कुछ रचनाएँ लिखी हैं। अवधी में कविता लिखने की प्रेरणा श्री सिंह को अवधी लोकगीतों के ख्यातिलब्ध गीतकार 'भ्रमर' जी से मिली। श्री सिंह एक नवोदित रचनाकार हैं। इनके काव्य जीवन में इनके पिताश्री का भी काफो कुछ प्रभाव है। अभी तक इन्होंने अवधी में गीत, मुक्तक ओरलोकगीतों की रचना की है। इनकी रचनाओं में माधुर्य और सहजता की बात शब्द-शब्द में लक्षित होती है। अवलोकनार्थ इनकी दो रचनाएँ प्रस्तुत हैं—

सरस्वती-वन्दना—*ओ! मैया तोहरे चरन हम लागी।*
दुनिया मा तोहरे अँचरवा से छाया। जेहसे मगन होय माटी की काया।
बुद्धि, विवेक, ज्ञानदेउ मैया, पइयाँ पकरि वर माँगी।
हाथे मा पुस्तक अउ बीन तोरे सोहैं। साहित्य-संगीत जियरा का मोरे मोहै।
अइसन बीन बजाओ मैया, द्वेष-दम्भ सब त्यागी।
लरिकन की गलती का माफ करौ मैया। जिनगी कै सगरिव कलेश हरौ मैया।
काम, क्रोध, मद-मोह लोभ से होइगै उमिरिया दागी।।ओ मैया.।।

लोकगीत—*कारी-कारी रतिया डसत जइसै नागिन।*
निंदिया बिचारी बड़ी है हतभागिन। मन की पिरितिया बनी है अपराधिन।
आँसुन से आँखिन कै धोइ गवा कजरा। तुहैं बिना देखे तरसि गवा जियरा।।
दिन-दिन रहिया मा अँखिया बिछावत। उमिरि घटत गई सगुन-उठावत।
रतिया कटत गइ दियना जरावत। बिरहा की अगिनि लगाय गयौ अँचरा।
तुहैं बिना देखे तरसि गवा जियरा।।

बहराइच के कुछ ऐसे भी रचनाकार हैं जिन्होंने साहित्य की श्रीवृद्धि में अपना बहुमूल्य सहयोग प्रदान किया है। काफी खोजबीन के बाद भी उनके सम्बन्ध में अपेक्षित सूचनाएँ संगृहीत नहीं हो सकीं। समस्यापूर्ति तथा अन्यान्य प्रकाशित काव्य-संग्रहों में उनकी रचनाओं के दर्शन होते हैं जो निम्नवत् हैं—रामअवतार सिंह 'मोद' (बड़नापुर के राजकवि), पं. सूर्यलाल दिवाकर (सिकन्दरपुर), श्रीधर पाठक (टेड़िया-गिलौला), बेचूदयाल 'पागल' (पयागपुर), शम्भूनाथ त्रिपाठी 'खिपटा' (तिवारीपुरवा-महसी), मथुराप्रसाद अवस्थी (रेहुआ मंसूर), मयंक (भिनगा), शिवनारायण त्रिपाठी 'शिव' (ब्रह्मणीपुरा), पं. रामशरण त्रिपाठी 'मिलिन्द' (ब्रह्मणीपुरा), जगदीशप्रसाद त्रिपाठी 'जलधि' (ब्रह्मणीपुरा), रामकुमार त्रिपाठी, पं. रामकृपाल पाण्डेय 'कृपालु' पं. गुरुसहाय दीक्षित 'द्विजदीन' पं. रामलखन पाण्डेय 'भानु', पं. बलभद्र मिश्र, रसिकबिहारी श्रीवास्तव 'प्रेम', शिवप्रसाद मिश्र 'शैलेन्द्र' आदि।

प्रतापगढ़ की अवधी चेतना

डॉ. दुर्गाप्रसाद ओझा

प्रतापगढ़ जनपद अपनी राजनीतिक, साहित्यिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना के लिए सदैव सुप्रसिद्ध रहा है। भारतीय राजनीतिक आन्दोलन और भारतीय पत्रकारिता के पृष्ठों को जब भी उलटकर देखा जायेगा, दैनिक 'हिन्दोस्थान' की परिकल्पना एवं प्रकाशन के लिए, कालाकाँकर-नरेश राजा रामपाल सिंह का नाम सबसे पहले दिखेगा। प्रतापगढ़ के पूर्वांचल में, पट्टी तहसील में स्थित 'दाऊदपुर' नामक स्थान से बाबा रामचन्द्रदास ने 'किसान आन्दोलन' की शुरुआत की थी, और पट्टी के ही निकट 'झिंगुरे' गाँव में पहली-पहली उग्र जनसभा को सम्बोधित करके विश्वविख्यात राजनेता पं. जवाहरलाल नेहरू ने अपने राजनीतिक जीवन की। इसी गाँव का एक किसान उस दिन जवाहरलाल जी को अपने कन्धे पर बैठाकर 'कहला' गाँव तक ले गया था, जहाँ उन्होंने दूसरी जनसभा सम्बोधित की थी। 'झिंगुरे' और 'कहला' दोनों जगहों पर आज 'शहीद-स्मारक' बने हुए हैं। 'किसान-आंदोलन' से सम्बन्धित जनसभा के लिए एकत्र समूह पर 'हीरापुर' स्टेट के राय कृष्णपाल सिंह और रानीगंज थाने के दारोगा के आदेश पर चलायी गयी गोलियों से तीन-चार किसान सभास्थल पर ही शहीद हो गये थे। उसी याद को ताजा करता है 'कहला' का 'शहीद स्मारक'।

एक समय उत्तरप्रदेश की राजनीति में पं. मुनीश्वरदत्त उपाध्याय का नाम बहुचर्चित था। कभी भी ऐसा नहीं रहा, जब देश अथवा प्रदेश के शासन में प्रतापगढ़ के चार-छह सक्रिय जननायकों का वर्चस्व न रहा हो। कालाकाँकर के राजा दिनेश सिंह केन्द्रीय मंत्रिमंडल में कैबिनेट मन्त्री रह चुके हैं, और उत्तर प्रदेश के मंत्रिमंडल में राजा अजितप्रताप सिंह, श्रीयुत प्रमोदकुमार तिवारी विशिष्ट मन्त्रि-पद को प्रतिष्ठित कर चुके हैं। उत्तरप्रदेश विधानसभा के पूर्व अध्यक्ष श्री नियाजहसन और प्रदेश योजना-आयोग के पूर्व उपाध्यक्ष श्री रामनरेश शुक्ल प्रतापगढ़ की माटी की ही उपज हैं। प्रतिभासम्पन्न पं. रामअँजोर मिश्र, डॉ. राजेश्वरसहाय त्रिपाठी भी इसी माटी के दिये हुए हैं।

प्रतापगढ़ में जन्मे आचार्य भिखारीदास का नाम, अपने साहित्यिक अवदान के कारण, हिन्दी साहित्य के 'रीतिकाल' में अमर है। कालाकाँकर की माटी की सुगन्ध से आप्यायित रचनाओं--'नौकाविहार', 'ग्रन्थि', 'ग्राम्या', 'युगवाणी' आदि--के कारण पन्त जी आधुनिक हिन्दीसाहित्य के देदीप्यमान नक्षत्र बने हुए हैं। धर्म एवं साहित्य--दोनों के मूर्त्तरूप स्वामी 'करपात्री' जी एवं श्री शिवहर्ष ओझा 'ब्रह्मचारी जी' को कौन भूल सकता है? यहीं के गुलाब खण्डेलवाल, ओमप्रकाश खण्डेलवाल, पं. आद्याप्रसाद 'उन्मत्त', जुमई खाँ 'आजाद', अनीस देहाती, डॉ. कामताप्रसाद त्रिपाठी, मत्स्येन्द्र शुक्ल, 'निर्झर' आदि-इत्यादि अनेक प्रतिभापुत्रों ने अपनी लेखनी से साहित्य को समृद्ध बनाया है।

प्रतापगढ़ जनपद के दाऊदपुर, अजगरा, हण्डौर, शृंगवेरपुर, घुसमेश्वरनाथ, शनिदेव धाम, बेल्हा, संडवा-चन्द्रिका आदि स्थान अपने ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व के लिए विख्यात हैं।

किसान-आंदोलन के लिए दाऊदपुर का नाम सदैव याद किया जायेगा। रानीगंज अजगरा में वह तालाब है, जहाँ यक्ष ने धर्मराज युधिष्ठिर से प्रश्न किये थे। पुरातात्त्विक जानकारी हेतु रानीगंज में कई बार उत्खनन-कार्य हो चुका है। हण्डौर वह प्रसिद्ध स्थल है, जहाँ महाभारतकालीन 'हिडिम्बा' रहती थी। लाक्षागृह से पाण्डवों के जीवित बच निकलने के बाद छिपकर विचरते हुए 'महाबली भीम' को यही कहीं हिडिम्बा मिली होगी। अजगरा और हण्डौर के बीच की करीब 9-10 कि.मी. की दूरी का नैकट्य और दोनों स्थानों का पाण्डवों से सम्बन्ध यह द्योतित करता है कि अवश्य ही यहाँ की धरती पर पाण्डवों के चरण-चिह्न अंकित होंगे, आज वे हमें भले ही दिखायी न देते हों। प्रतापगढ़-इलाहाबाद की सीमा पर स्थित शृंगवेरपुर वह स्थान है, जहाँ से मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम को वनगमन के समय केवट गुह ने गंगापार कराया था। आज श्रीराम के साथ निषादराज गुह भी ऐतिहासिक पुरुष बन गया है। घुसमेश्वरनाथ प्रसिद्ध शिव-स्थान है और इसी कारण उ.प्र. का मनोरम पर्यटन-स्थल है। इस जनपद के लोगों में इस बात के प्रति अगाध विश्वास है कि 'घुइसरनाथ' के भोले बाबा शंकर, बेल्हा की देवी--'बेल्हामाई' और सण्डवा चन्द्रिका की 'चन्द्रिकन' देवी मनवांछित फल देनेवाली हैं। स्पष्टतः ये सभी स्थल इतिहास की धरोहर हैं।

किन्तु, हमारा विवेच्य विषय, 'प्रतापगढ़ जनपद की साहित्यिक चेतना' है, इसलिए हम इस प्रलेख में मात्र साहित्यिक अवदान पर विचार करेंगे। प्रतापगढ़ में अनेकानेक साहित्य-सेवी पैदा हुए, पले-बढ़े और अपनी रचनात्मक मनीषा से साहित्य को सम्पन्न बनाया! उन्हीं पर एक दृष्टिपात प्रासंगिक है।

आचार्य भिखारीदास : हिन्दीसाहित्य के 'उत्तरमध्ययुग' (रीतिकाल) के प्रमुख आचार्यों एवं कवियों में आचार्य-कवि भिखारीदास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये प्रतापगढ़ जिला मुख्यालय के पास करीब 2 कि. मी. पश्चिम, लखनऊ राजमार्ग पर स्थित, ट्योंगा गाँव के श्रीवास्तव कायस्थ थे। इनके पिता का नाम कृपालदास था। अपनी कृति 'काव्यनिर्णय' में उन्होंने अपना सम्पूर्ण वंश परिचय दिया है। इसी कृति में भिखारीदास जी ने प्रतापगढ़ के सोमवंशी राजा पृथ्वीपति सिंह के भाई बाबू हिन्दूपति सिंह को अपना आश्रयदाता लिखा है। इनके जन्मकाल एवं मृत्युकाल-- दोनों का ठीक-ठीक निश्चय नहीं हो पाया है। कुछ लोगों का अभिमत है कि इनकी मृत्यु भभुआ, जिला आरा (बिहार) में हुई थी।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने इतिहास-ग्रंथ में भिखारीदास के निम्नलिखित ग्रंथों का उल्लेख किया है--1. रस-सारांश, 2. छंदोर्णव-पिंगल, 3. शृंगारनिर्णय, 4. काव्यनिर्णय, 5. नामप्रकाश (कोश), 6. विष्णु पुराण-भाषा, 7. छंदप्रकाश, 8. शतरंजशतिका और 9. अमरप्रकाश (संस्कृत अमरकोश-भाषा, पद्य में)।

मिश्रबन्धुओं ने 'मिश्रबन्धु-विनोद' में भिखारीदास के उक्त नौ ग्रन्थों में से अन्तिम 'अमरप्रकाश' को छोड़कर शेष सभी आठ ग्रन्थों का उल्लेख किया है।

'प्रताप-सोमवंशावली' के रचयिता कवि द्विजदेव ने एक स्थल पर भिखारीदास के सात ग्रन्थों का उल्लेख किया है। इसके आधार पर इन सात ग्रन्थों-- 1. काव्यनिर्णय, 2. शृंगारनिर्णय, 3. छन्दोर्णव-पिंगल, 4. विष्णुपुराण, 5. रससारांश, 6. अमरकोश (शब्द-नाम-प्रकाश), तथा शतरंजशतिका-- के प्रामाणिक होने में कोई सन्देह नहीं रहना चाहिए।

उपर्युक्त ग्रन्थों में से, 'रससारांश' में रस का प्रसंग है, जिसके अंतर्गत नायक- नायिका-भेद का विस्तारपूर्वक वर्णन है। इसके अतिरिक्त इसमें नायिकाओं के हावभावादि, सात्त्विक अलंकारों, अन्य रसों तथा भावाभास आदि का भी निरूपण है। 'शृंगारनिर्णय' में मुख्यरूप से शृंगाररस-विषयक सामग्री प्रस्तुत की गयी है। 'काव्य- निर्णय' इनका प्रमुख ग्रन्थ है। यह रीतिशास्त्र का सर्वांगपूर्ण ग्रन्थ है, क्योंकि इसमें ध्वनि, रस, अलंकार, गुण-दोष-तुक आदि सभी का विवेचन किया गया है। 'छन्दोर्णव पिंगल' छन्दशास्त्र का ग्रन्थ है और हिन्दी के छन्दशास्त्रीय ग्रन्थों में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। अन्य ग्रन्थों में एक (अमरकोश) शब्दकोश है, दूसरा (विष्णुपुराण) अनुवाद तथा तीसरा (शतरंजशतिका) शतरंज पर लिखा गया

है। 'नामप्रकाश' संस्कृत के अमरकोश के ढंग का हिन्दी कोश-ग्रन्थ है। यह चार सौ पृष्ठों का एक भारी-भरकम ग्रन्थ है, जिसमें विभिन्न छन्दों में शब्दों के पर्यायवाची शब्द दिये गये हैं। उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि काव्यांगों के निरूपण में भिखारीदास का स्थान प्रमुख है, क्योंकि इन्होंने रीतिकालीन अन्य कवियों की तुलना में रस, छन्द, अलंकार, रीति, गुण-दोष, शब्दशक्ति आदि विषयों का विस्तृत वर्णन किया है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का अभिमत है कि 'आचार्यत्व के क्षेत्र में औरों को देखते दास जी ने अधिक काम किया है, पर सच्चे आचार्य का पूरा रूप इन्हें भी नहीं प्राप्त हो सका है। .....दास जी भी औरों के समान वस्तुतः कवि-रूप में ही हमारे सामने आते हैं।' किन्तु, सच यह है कि आचार्य भिखारीदास की प्रतिभा में आचार्यत्व एवं कवित्व दोनों का मणिकांचन सहयोग है। काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों के प्रतिपादन में आचार्य भिखारीदास ने सारगर्भित बातें लिखी हैं। दो-एक उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

एक लहैं तपपुंजनि के फल ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाईं।
एक लहैं बहु सम्पति केशव भूषन ज्यों बरबीर बड़ाई।
एकनि को जस ही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम की नाँईं।
दास कवित्तनि की चरचा बुधिवन्तनि को सुख दै सब ठाँईं।

काव्य-प्रयोजन के अंतर्गत संस्कृत के आचार्यों ने काव्य के भिन्न-भिन्न प्रयोजन स्वीकार किये हैं। इनमें से कुछ प्रेरणा-रूप आन्तरिक हैं और कुछ प्रयोजन-रूप बाह्य। आचार्य भिखारीदास ने दोनों का सामंजस्य प्रस्तुत करते हुए उक्त छन्द में वड़ी अच्छी बात कही है। इसी तरह, काव्यहेतुओं के सम्बन्ध में आचार्य भिखारीदास का निम्नलिखित पद कितना सटीक है :

सक्ति कवित्त बनाइबे की जिहि जन्मनछत्र में दीन्हि विधातैं।
काव्य की रीति सिख्यौ सुकवीन सों देखी-सुनी बहुलोक की बातैं।।
दास जी जामें इकत्र ये तीन्यौ बनै कविता मनरोचक तातैं।
एक बिना न चलै रथ जैसे, धुरन्धर सूत की चक्र निपातैं।।

जहाँ तक दास जी की कविताओं के शिल्प-पक्ष की बात है--'दास जी ने साहित्यिक और परिमार्जित भाषा का व्यवहार किया है। ....भाषा में शब्दाडम्बर नहीं है। न ये शब्द-चमत्कार पर टूटे हैं, न दूर की सूझ के लिए व्याकुल हुए हैं। इनकी रचना कलापक्ष में संयत और भावपक्ष में रंजनकारिणी है। ....जिस बात को ये जिस ढंग से चाहे वह ढंग बहुत विलक्षण न हो--कहना चाहते थे, उसको उस ढंग से कहने की पूरी सामर्थ्य इनमें थी।'

इस कथन की सत्यता का परीक्षण भिखारीदास की कविताओं को सामने रखकर किया जा सकता है। एकाध उदाहरण देखें :

नैनन को तरसैए कहाँ लौं, कहाँ लौं हियौ विरहागि मैं तैए?
एक घरी न कहूँ कलपैए, कहाँ लगि प्रानन को कलपैए?
आवै यही अब जी में विचार, सखी चलि सौतिहुँ के घर जैए।
मान घटे ते कहा घटिहै, जु पै प्रानपियारे को देखन पैए।

नायिका नायक के वियोग में अत्यन्त व्यथित है। नायक के दर्शन-हेतु उसके नेत्र तरस रहे हैं। हृदय में विरहाग्नि प्रज्वलित है। एक क्षण के लिए भी उसे शान्ति नहीं मिलती। ऐसी स्थिति में वह अपनी अंतरंगिणी सखी से कहती है कि कहाँ तक नानाविध दुःख सहे जायँ, कहाँ तक प्राणों को तरसाया जाय। अब तो

मेरा मन कहता है कि मैं सौत के ही घर चली जाऊँ। मान घटे तो घटे, और फिर मान घटने से क्या घट जायेगा, कम-से-कम प्राणप्रिय का दर्शन तो मिल जायेगा। यहाँ कवि ने बड़ी सरल और सीधी भाषा में नायिका के मनोभावों को व्यक्त किया है जो सुननेवाले के अंतर्मन को भी भावविगलित कर देता है।

इसी तरह, निम्नोद्धृत पंक्तियों में भी नायिका की आँखों की विवशता, दयनीयता, निर्लज्जता एवं विलक्षणता का सीधी-सरल भाषा में मर्मस्पर्शी चित्रण भावनीय है :

अँखियाँ हमारी दईमारी सुधि-बुधि हारी, मोहूँ ते जु न्यारी, दास रहैं सब काल में।
कौन गहे ज्ञानै, काहि सौंपत सयानै, कौन लोक ओक जानै, ये नहीं हैं निज हाल में।
प्रेम पगि रहीं, महामोह में उमगि रहीं, ठीक ठगि रहीं, लगि रहीं वनमाल में।
लाज को अँचै के, कुलधरम पचै के वृथा, बंधन सँचै के, भईं मगन गोपाल में।।

कलाकार के अंदर जो अनासक्ति की भावना उसे श्रेष्ठ बनाती है, वह दास जी में पूरी तरह से थी-- 'आगे के सुकवि रीझिहैं तौ कविताई, न त राधिका-कन्हाई सुमिरन को बहानो है।' से यह सुस्पष्ट है। वास्तविकता तो यह है कि भिखारीदास जी रीतिकाल के श्रेष्ठ कवियों में हैं और प्रमुख आचार्यों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

कालाकाँकर का महत्त्व : भारतीय इतिहास में पत्रकारिता, राष्ट्रीय चेतना एवं साहित्यिक वैभव की दृष्टि से प्रतापगढ़ के ग्रामीण अंचल कालाकाँकर का नाम युग-युगान्तर तक अमर रहेगा। राष्ट्रवादी चेतना एवं देशप्रेम की भावना से सम्पन्न दैनिक 'हिन्दोस्थान' का प्रकाशन यहीं से हुआ था। इसी 'हिन्दोस्थान' द्वारा आधुनिक पत्रकारिता की नई-नई स्वस्थ परम्पराएँ स्थापित हुईं और अनेकानेक प्रतिभाएँ दीक्षित होकर नामीगिरामी सिद्ध हुईं। कालाकाँकर अपनी बस्ती के लिए तो शायद ही कभी प्रसिद्ध रहा होगा, लेकिन यहाँ के राजवंश के देशप्रेम तथा कलाप्रवृत्ति के लिए यह सदा से जाना जाता रहा है। आज कालाकाँकर कवियों-कलाकारों-भावकों के लिए इसलिए भी दर्शनीय हो गया है, क्योंकि वर्षों तक इस मनोरम भूमि से प्रकृति के सुकुमार कवि-कलाकार श्री सुमित्रानन्दन पन्त का रागात्मक एवं आत्मीय सम्बन्ध रहा है।

दैनिक 'हिन्दोस्थान' : यह कालाकाँकर--प्रतापगढ़ जनपद के सुदूर पश्चिमान्त में गंगातट पर स्थित नगर--से निकलनेवाला हिन्दी का प्रथम दैनिक पत्र था। हिन्दी-पत्रकारिता के इतिहास में 'दैनिक हिन्दोस्थान' की महत्ता अप्रतिम है। सन् 1885 में भारतवर्ष में दो महान् घटनाएँ हुईं--1. 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की स्थापना और 2. कालाकाँकर से 'हिन्दोस्थान' का प्रकाशन। दोनों के मूल में निहित उद्देश्य एक ही था--दैनिक 'हिन्दोस्थान' का प्रारंभ 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' के उद्देश्यों को प्रकाशित-प्रसारित करने के लिए ही किया गया था। इस सत्य का प्रमाण यह है कि 'हिन्दोस्थान' पत्र, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना करनेवाले राष्ट्रभक्तों में प्रमुख तत्कालीन कालाकाँकर-नरेश राजा रामपाल सिंह तथा मनीषी चिंतक महामना पं. मदनमोहन मालवीय की ही परिकल्पना का सुपरिणाम था।

प्रारंभ में 'हिन्दोस्थान' का सम्पादन मालवीय जी ने लगभग तीन वर्षों तक किया। उन दिनों वे प्रयाग छोड़कर कालाकाँकर में ही रहते थे। 'रविवासरीय संस्करण' का संपादन राजा साहब स्वयं करते थे। तीन वर्षों के उपरांत मालवीय जी जब कालाकाँकर छोड़कर प्रयाग जाने लगे, तब 'हिन्दोस्थान' का संपादन-भार उन्होंने बालमुकुन्द गुप्त को सौंपा था। इसके संपादक-मंडल में, समय-समय पर, उस समय के चोटी के विद्वान् एवं पत्रकार सम्मिलित हुए। पं. प्रतापनारायण मिश्र, शशिभूषण चटर्जी, अमृतलाल चक्रवर्ती, लालबहादुर बी.ए., गोपालराम गहमरी, पं. गुलाबचन्द्र चौबे, पं. शीतलाप्रसाद उपाध्याय, ठाकुर रामप्रसाद सिंह, बाबू शिवनारायण सिंह आदि प्रतिभाओं ने इस पत्र से अपने को जोड़कर अपना एवं पत्र का मान- संवर्द्धन किया। हिन्दोस्थान के संपादक-मंडल के सदस्य 'नवरत्न' के रूप में प्रसिद्ध थे। यह

नवरत्न संपादकीय मंडल हिन्दी-जगत् में ऐतिहासिक था। बाद में इस मंडल के अधिकतर सदस्यों ने स्वतंत्र रूप से यशस्वी समाचारपत्रों का संपादन कर हिन्दी-पत्रकारिता को अग्रसर किया।

राजा रामपाल सिंह ने इस पत्र को सबसे पहले लंदन (ब्रिटेन) में निकालना प्रारंभ किया था। वहाँ यह पत्र त्रैमासिक था। भारत में आकर उन्होंने इसे पहले साप्ताहिक और बाद में दैनिक पत्र का स्वरूप दिया। पत्र 'हिन्दोस्थान' हिन्दी-पत्रकारिता और 'भारतीय स्वतंत्रता संग्राम'--दोनों के लिए अपूर्व वरदान सिद्ध हुआ। इस पत्र की उपादेयता एवं इसके महत्त्व का अनुमान निम्नलिखित बातों से लगाया जा सकता है:

1. अपनी प्रारम्भिक स्थिति में यह पत्र कांग्रेस का प्रबल समर्थक था (उन दिनों यह बड़ी बात थी)। पं. प्रतापनारायण मिश्र ने 1891 में कांग्रेस की प्रशस्ति में एक कविता लिखी थी, शीर्षक था--'जय जयति भगवति कांग्रेस'। कांग्रेस की प्रशंसा में लिखी गयी यह पहली कविता थी।
2. इस पत्र से मालवीय जी को वह गरिमा और दीक्षा प्राप्त हुई, जिससे वे राजनीति, पत्रकारिता, समाजसेवा और साहित्य-सृजन के क्षेत्र में अद्वितीय प्रमाणित हुए। वे निर्विवाद महनीयता, उत्कृष्ट लोकसेवा, निष्कलंक चरित्र तथा असंदिग्ध देशभक्ति से सम्पन्न बहुआयामी व्यक्तित्व के स्वामी बन सके। (इसका यह मतलब नहीं कि 'हिन्दोस्थान' में आने से पहले मालवीय जी को पत्रकारिता का कोई ज्ञान नहीं था।)
3. 'हिन्दोस्थान' के ही कारण कालाकाँकर बहुत दिनों तक विद्याकेन्द्र बना रहा।
4. पं. प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, अमृतलाल चक्रवर्ती, पं. रुद्रदत्त सम्पादकाचार्य, गोपालराम गहमरी-जैसे अनेक पत्रकार 'हिन्दोस्थान' से अलग होकर हिन्दी-पत्रकारिता-जगत् में स्वनामधन्य सिद्ध हुए। उन्होंने हिन्दी-पत्रकारिता को एक स्वस्थ-सुदृढ़ परम्परा प्रदान की। आगे चलकर अमृतलाल चक्रवर्ती ने 'बंगवासी', 'वेंकटेश्वर समाचार' तथा 'भारतमित्र' में सम्पादन-कार्य किया। बालमुकुन्द गुप्त ने 'सरस्वती' के प्रकाशन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी।
5. 1 नवम्बर, 1885 से अपनी यात्रा प्रारम्भ करनेवाला 'हिन्दोस्थान' सन् 1908 तक अनवरत् अपने लक्ष्य-पथ पर अग्रसर होता रहा। 23 वर्षों की इस सुदीर्घ जीवन-यात्रा में वह हिन्दी की अस्मिता का प्रबल पक्षधर था। उसने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपर्ण भूमिका निभायी। राजा साहब का आत्मकथ्य इसका ज्वलन्त प्रमाण है :

   हिन्दी भाषा में जदपि, प्रचलित पत्र अनेक।
   ये है हिन्दोस्थान ही, तामे दैनिक एक।।

   डॉ. लक्ष्मीशंकर व्यास के शब्दों में, 'राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार को अग्रसर करने तथा राष्ट्रीय विचारधारा की भावना उत्पन्न करने में इस पत्र का योगदान स्मरणीय रहेगा।'
6. 'हिन्दोस्थान' अपनी गरिमा के अनुरूप समग्र भारत और भारतीय लोगों की हित-चिन्तना का सदैव ध्यान रखता था। कुछ उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जायेगी :

   1- इस पत्र के माध्यम से राजासाहब ने ब्रिटिश-संसद् में भारतीयों को प्रतिनिधित्व देने की जोरदार माँग की थी। 31 मई, 1887 के अंक के अनुसार, 'सम्पूर्ण भारत प्रतिनिधित्व की माँग करता है तथा आशा करता है कि ब्रिटिश सरकार अवश्य ही इस माँग को मानकर भारतीयों को आभारी बनायेगी।'

   2- 'हिन्दोस्थान' ने वायसराय के लखनऊ आगमन पर हुए व्यय की आलोचना करते हुए लिखा था: 'ताल्लुकेदार सभा, हुसैनाबाद एंडोमेंट और म्युनिसिपल बोर्ड आदि ने लगभग एक लाख 95 हजार रुपये व्यय किये। इस व्यय से सभी ताल्लुकेदार ऋणी हो गये।

   3- मालवीय जी की सम्पादकीय नीति का प्रधान लक्ष्य था--'भारत की स्वतन्त्रता'। एक तरह

से उन दिनों 'हिन्दोस्थान' के माध्यम से कालाकाँकर राष्ट्रीय जागरण का प्रमुख केन्द्र बन गया था।

'सम्राट्' और राजा रमेश सिंह : कालाकाँकर राज्य से प्रकाशित होनेवाला यह दूसरा पत्र था। इस साप्ताहिक पत्र का प्रारम्भ कालाकाँकर राज-खानदान के राजा रमेश सिंह द्वारा 30 मार्च, 1908 को रामनवमी पर्व पर किया गया था। यह पत्र भी 'हिन्दोस्थान' के ही समान साहित्यिक गतिविधियों को प्रश्रय देनेवाला था। किन्तु, 'हिन्दोस्थान' को जहाँ अनेकानेक साहित्य-महारथियों की सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ, वहाँ 'सम्राट्' को मात्र पं. बालकृष्ण भट्ट का सान्निध्य-सुख उपलब्ध हुआ। सन् 1910 में राजा रमेश सिंह की मृत्यु हो जाने पर यह पत्र बन्द हो गया।

राजा रमेश सिंह सम्पादक और पत्रकार के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के साहित्यकार भी थे। उनके द्वारा रचित अनेक कृतियों में नौ कृतियाँ आज भी उपलब्ध हैं। ये हैं-- रमेश शतक, फाग नहीं समर, पुत्रशोक, ऋतुविलासिका (संस्कृत), पंचानन पंचकम् (संस्कृत), विष्णु-विनयम् (संस्कृत), पूर्तिप्रभा, रमेश-रहस्य तथा ऋतुसंरूपक। उदाहरण के तौर पर उनकी एक रचना प्रस्तुत है :

पात कुसासन चारु बिछाय, सरीर पराग-विभूति रमाइ के,
पैन्हि अली अली माल मली, वर कुन्दकली तिरपुंड लगाइ के,
त्यों धरि कन्ध कमण्डल पास में, कोकिल शृंगी 'रमेश' बजाइ के,
है भगवन्त को ध्यान लगाये, बसन्त सुसन्त इकन्त में आइ के।

यहाँ वसन्त-रूपी सुसन्त के ध्यान लगाने का बड़ा मनोरम वर्णन है।

शिवहर्ष ओझा 'ब्रह्मचारी जी' : उपमन्यु ऋषिवंशीय श्री 'ब्रह्मचारी जी' का जन्म सन् 1885 में बेलखरनाथ धाम के करीब अहियापुर गाँव में हुआ था। अपने जन्म के सम्बन्ध में 'ब्रह्मचारी जी' ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'श्रीकृष्णायनमानस' में लिखां है किः

नेत्र वेद नव शशि विक्रम के। भयउ जन्म रवि हरि संक्रम के।।
भादौं कृष्ण तिथी हरिवासर। भृगु दिन सार्द्धधिं याम दिवाकर।।

'अकानाम वामतो गतिः' सूत्र के अनुसार उपर्युक्त चौपाई विक्रम सम्वत् 1942 (तदनुसार सन् 1885) की भादों मास कृष्णपक्ष की एकादशी, दिन शुक्रवार, प्रातःकाल में जन्म का समय प्रमाणित करती है।

ब्रह्मचारी जी की कीर्ति का स्तम्भ उनके द्वारा सृजित अवधी-कृति 'कृष्णायनमानस' है। यह महाकाव्यात्मक कृति 37 तरंगों में विभाजित है। 'श्रीरामचरितमानस' के शैली-शिल्प पर रचित यह कृति श्रीकृष्ण के सम्पूर्ण जीवन पर आधारित है। अप्रकाशन की स्थिति में यह अब तक सामाजिक-पाठक के लिए अनुपलब्ध है। सम्प्रति यह कृति मुद्रणाधीन है और बहुत जल्दी ही 'प्रकाशन-केन्द्र' लखनऊ से प्रकाशित हो रही है। इस कृति में उपस्थित निम्नलिखित पंक्तियों से इस कृति के भाववैभव और भाषा-शिल्प का अन्दाजा लगाया जा सकता है :

अद्भुत रूप देखि पितु माता। परम मनोहर सुन्दर गाता।।
निज आयुध भुज चारि विराजै। क्रीट मुकुट सिर सुभग सुछाजै।।
पीताम्बर सुंकठ वनमाला। स्रवननि कुंडल परम बिसाला।।
आभूषण सब विविध प्रकारा। रूप देखि बहुत लाजत मारा।।
तेहि छबि बरनि कहौं केहि भाँती। ता सम और कि कतहुँ दिखाती।।
जासु रोम प्रति अण्ड अनेका। भनत नेति निगमागम जेका।।

ताकी छबि किमि पटतरि कहहूँ। भाँति अनेक हास्यपद गहहूँ।।
एक एक रोमहुँ पर जाके। बहुसत कोटिकु नहि सम ताके।।

डॉ. शिवमूर्ति शर्मा : जन्म—प्रतापगढ़ जनपद की कुण्डा तहसीलान्तर्गत ग्राम 'भटपुरवा लोहियन' में सन् 1941 में। प्रारम्भिक शिक्षा—गाँव की पाठशालाओं में। उच्चशिक्षा—इलाहाबाद विश्वविद्यालय से। हेमवतीनन्दन बहुगुणा स्ना. महा. लालगंज-प्रतापगढ़ के प्राचार्य पद से सेवानिवृत्त। इनकी प्रमुख प्रकाशित रचनाएँ हैं: 1. उजड़े लोग (उपन्यास), 2. छोटे नेता बड़े नेता, 3. उधार का बेटा (दोनों काव्यकृतियाँ), 4. अपनी-अपनी डफली अपना-अपना राग (उपन्यास), 5. निराला, 6. संस्कृत सहित्य का इतिहास, 7. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्यात्मक इतिहास, 8. कबीर और जायसी, 9. पद्मावत, और 10. साकेत-समीक्षा। इनमें क्रमसंख्या 4 तक की कृतियाँ रचनात्मक साहित्य और शेष सभी समीक्षाग्रन्थ हैं। इसके अतिरिक्त विविध पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित होती रही हैं। अब भी लेखन के प्रगति-पथ पर अग्रसर हैं।

देवीप्रसाद मिश्र : जन्म—लालगंज के समीप ग्राम हर्षपुर में। इनका पहला ही काव्यसंग्रह 'प्रार्थना के शिल्प में नहीं' बहुप्रशंसित हुआ है। मिश्र जी को इस कृति की श्रेष्ठ सर्जना हेतु वर्ष 1989 में 'भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। इनकी रचनाओं का प्रसारण आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से होता रहता है। समकालीन सर्जक-रचनाकारों में श्री देवीप्रसाद मिश्र सशक्त हस्ताक्षर हैं।

मत्स्येन्द्रनाथ शुक्ल : जन्म—प्रतापगढ़ जनपद के ग्राम्यांचल में। आरम्भिक शिक्षा गृह-जनपद प्रतापगढ़ में। उच्चशिक्षा इलाहाबाद और सागर विश्वविद्यालय से। शिक्षा विभाग में सेवारत रहे। शुक्लजी शिक्षा के विविध उत्तरदायी पदों को सुशोभित करनेवाले साहित्यिक व्यक्तित्व हैं। मत्स्येन्द्र जी ने रचनात्मक लेखन की शुरुआत विद्यार्थी-जीवन से ही की। गाँव से निकट सम्बन्ध एवं आत्मीयता होने के कारण इन्हें जिन्दगी एवं दुःख-दर्द का सही अनुभव प्राप्त है। इसीलिए इनकी रचनाओं में गँवई टच, सहजता और जुझारू तेवर सहज विद्यमान है।

इनकी प्रमुख प्रकाशित कृतियों में से कुछ हैं : 'कन्धे पर लाश', 'हवाएँ दे रही हैं सन्देश', 'शब्दों को समझना जरूरी है', 'झोपड़े', 'ये लोग' आदि। कविता एवं कहानी के साथ-साथ अन्य विधाओं में से भी शुक्ल जी का सार्थक हस्तक्षेप है।

डॉ. विश्वनाथप्रसाद के अनुसार, 'मत्स्येन्द्र शुक्ल जी किसानों और मजदूरों के कथाकार हैं। इन्होंने जिन कहानियों में जीवन-चेतना और संवेदना को ग्रामीण अनुभव पर आधारित किया है, वे बहुत अच्छी बन पड़ी हैं। घुमक्कड़, परिस्थितियाँ, वसूली तथा विश्वास इसी प्रकार की कहानियाँ हैं।' इनके द्वारा लिखित लड़के, जनमत, इज्जत, कूड़ा, हड़ताल, पत्थरों का देश तथा झील के तट पर प्रतिबद्ध कहानियाँ हैं। इनमें प्रगतिशील साहित्य के तत्त्व विद्यमान हैं। श्री शुक्ल प्रतिष्ठित कथाकार, कवि एवं विचारक हैं।

डॉ. ब्रजेन्द्रनारायण द्विवेदी 'शैलेश' : जन्म वाराणसी जनपद के ग्राम्यांचल में। प्रारम्भिक शिक्षा कलकत्ता में। उच्चशिक्षा सांस्कृतिक नगरी काशी में। सम्प्रति—प्रतापगढ़ जनपदान्तर्गत बहुगुणा महाविद्यालय, लालगंज में समाजशास्त्र का प्राध्यापन।

कवि 'शैलेश' का आत्मकथ्य है: 'वैसे तो नयी कविता सन् 1972 में प्रारम्भ हुई। पर, काव्य-यात्रा बाद में गीत, गजल, तेवरी, कथा-लेखन तक सीमित हो गयी। प्रयास अब भी है कि एक नया आयाम गीतों, नवगीतों व गजलों का हा सके।' स्पष्ट है कि 'शैलेश' जी की काव्ययात्रा की शुरुआत सन् 1972 में हुई। तब से आज तक के लम्बे अन्तराल में इन्होंने बहुत-सी नयी कविताओं, गीतों एवं गज़लों को अपनी आत्मीयता का संस्पर्श दिया है। इन्होंने अपने काव्यलेखन में भाषा-माध्यम के रूप में खड़ी बोली एवं अवधी, दोनों को सार्थक-सिद्ध किया है। इनके द्वारा सृजित काव्य-कृतियाँ निम्नलिखित हैं :

1. प्रवाह : नयी कविताओं का संकलन, 2. दीवार : अतुकांत नयी कविताओं का संकलन, 3. मेघ फिर आना : गीत-संकलन, 4. परछाइयाँ : गजलों का संकलन, 5. सुबह-शाम : गजलों का संकलन। इनके अतिरिक्त 'बाँध टूटेगा न ये मालूम था', 'सम्बोधन', 'युवारश्मि', 'आइने कलम के', 'धुएँ की लकीर' तथा 'प्रतिध्वनि' नामक सामूहिक संकलनों में भी 'शैलेश' जी के गीत, गजल एवं नयी कविताएँ प्रकाशित हैं। इनकी रचना का एक उदाहरण भावनीय है--

हम का करी जौ तोहके हमसे मलाल बाटै
एहि एक जान खातिर, बहुतै बवाल बाटै।
गरजै बहुत जे बादर, बरसै न बूँद भर ऊ
केतना जवाब देबा, सौ-सौ सवाल बाटै।

'निर्झर' प्रतापगढ़ी : नाम राजेशकुमार पाण्डेय, उपनाम 'निर्झर' प्रतापगढ़ी। जन्म 10 मई, सन् 1960 को ग्राम 'अजगरा' में। अजगरा ऐतिहासिक महत्त्व का स्थान है। यहाँ पुरातत्त्व-जानकारी हेतु कई बार उत्खनन-कार्य हो चुका है। शिक्षा एम.ए.(हिन्दी), बी.एड., साहित्याचार्य, साहित्यरत्न। सम्प्रति-राजकीय सेवारत।

निर्झर मूलतः लोकप्रिय सम्मेलनी कवि हैं। इनकी कविताएँ कवि-सम्मेलनों में अधिक सराही जाती हैं। लोकप्रियता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि ये 29 अप्रैल, 1984 को डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' द्वारा 35 वर्ष से कम आयु के 'श्रेष्ठ मंचीय कवि' के रूप में सम्मानित एवं पुरस्कृत किये गये। वर्ष 1984 में ही पूर्व मुख्यमंत्री पं. श्रीपति मिश्र द्वारा भी पुरस्कृत किये गये। जनवरी 1984 में लालबहादुर शास्त्री महाविद्यालय, गोण्डा में आयोजित कवि-सम्मेलन प्रतियोगिता में डॉ.ए.पी. मेहरोत्रा--तत्कालीन कुलपति, अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद--द्वारा प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। अन्यान्य संस्थाओं द्वारा भी अनेक बार पुरस्कृत एवं सम्मानित किये गये हैं। वर्ष 1981 से आकाशवाणी इलाहाबाद से कवि के रूप में सम्बद्ध हैं। वहाँ से अक्सर इनके काव्य-पाठ का प्रसारण होता है। इनके लोकगीतों एवं हास्य-व्यंग्य रचनाओं के कैसेट भी निर्मित हुए हैं। कविता-यात्रा सन् 1984 से प्रारंभ हुई।

'निर्झर' द्वारा लिखित प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं: 1. निर्झर-वाणीः यह हाईस्कूल में पढ़ते समय की रचना है। रचनाकालः 1974-1975 ई.। इसमें सवा पाँच सौ दोहे संकलित हैं। 2. कलियुग-कथाः दोहा, चौपाई तथा मनहर कवित्त छन्द में लिखी इस कृति में समाज में व्याप्त नानाविध विसंगतियों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। 3. निर्झर पदावली : यह फुटकर पदों का संग्रह है। 4. क्रान्ति के दूत : सन् 1977 में प्रकाशित इस काव्यकृति में वीर शहीदों की स्मृति में लिखे लोकगीत संकलित हैं। 5. गउवाँ की ओर : यह समाज के यथार्थ चित्रण से परिपूर्ण अवधी-लोकगीतों का संग्रह है। 6. देख तमाशा : यह 'निर्झर' की हास्य-व्यंग्य रचनाओं का संग्रह है। इनके अतिरिक्त भी निर्झर द्वारा सृजित अनेकानेक फुटकर रचनाएँ उपलब्ध हैं। निर्झर ने अपनी कविताओं के लिए खड़ी बोली एवं अवधी दोनों भाषाओं का प्रयोग किया है।

निर्झर की काव्य-सृष्टि में से एक उदाहरण भावनीय है। कविता यद्यपि बड़ी है, किन्तु सौन्दर्य एवं प्रभाव, उसे पूरा-पूरा प्रस्तुत करने में ही संभव है। इसमें दो बेरोजगारों की वार्ता के माध्यम से बेरोजगारी एवं हर जगह व्याप्त भ्रष्टाचार पर व्यंग्य प्रस्तुत किया गया हैः

आवा गोबिन्दे भैंस चराई।
बिना कमाही भये उठल्लू, अपनिव मेहरि लगै पराई। आवा...
हमहूँ जौ अफसर होइ जाइत, बइठ मजे मा नोट कमाइत।

लरिका-परिका मौज उड़उतें, बीबी कै नक्सा होतै हाई।। आवा...
प्राइमरी मा मुंसी होइत, जानौ गंगा मा जौ बोइत।
सेंत-मेंत मा मिलतै पइसा, घरहीं बइठित घूम-घुमाई।। आवा...
कोर्ट कचेहरी मा होइ जाइत, मनचाही खुब लूट मचाइत।
बड़े-बड़े सब घेरे रहतेन, चला बाबू जी चाय पियाई।। आवा...
अफसर भा जब गोबर गनेस, तौ जेकर लाठी ओकर भैंस।
सीधे कै मुँह चाटै कुत्ता, केकरे-केकरे तेल लगाई।। आवा...
नेता अफसर सब पिछुवइहैं, सीधे पै केउ ध्यान न देइहैं।
मन बोलत बा अगले हफ्ता, फूलन जैसा गैंग बनाई।। आवा...
कमवइया जौ घर मा आवैं, देवता जइसे पूजा पावैं।
बर्धा एस हम पेरी तब पै, कुकुर एस दुरियावा जाई।। आवा...
क्रीम पाउडर कहाँ से ल्याई, केकर पइसा चली चोराई।
रोजै दुलहिन एही बिना, गोबड़ौरा एस मुँह लेइ फुलाई।। आवा...
क्लर्की कै हम दीन परिच्छा, इन्टरव्यू कै रही प्रतिच्छा।
पता चला की काम करत बा, उहाँ बड़े बाबू कै भाई।। आवा...
सुना परोसी हँसि के बोला, लिया चला अब आलू निकोला।
कहत रहे कुछ काम न होये, जब तक जेबा न गरमाई।। आवा...
सबकै लरिका मजा उड़ावैं, नौ से बारा पिक्चर धावैं।
एक्कै लरिका हमरौ लेकिन, करजौ काढ़े फीस न पाई।। आवा...
बड़े नन्हइयैं होइगैं शादी, 'निर्झर' जीवन कै बरबादी।
बीस बरिस मा दुइ-दुइ लरिका, राम दिहेन फिर नम्बर लाई।। आवा...
('देख तमाशा' से)

इसी तरह 'बुढ़वा अहिर भुलक्कड़ बतियान सगर ढर्रा', 'मारब सारे बीसन चट्टा' 'निर्झर' की और भी अनेक रचनाएँ बड़ी प्रसिद्ध हैं।

आद्याप्रसाद मिश्र 'उन्मत्त' : ये कविरूप में 'उन्मत्त' जी के नाम से जाने जात हैं। प्रतापगढ़ जनपद के मल्हूपुर गाँव में सन् 1935 में जन्में 'उन्मत्त' जी 'अवधी के शिरोरत्न' हैं। वे काव्यकर्म और लोकमर्म दोनों दृष्टियों से अद्वितीय कवि हैं। वास्तव में 'उन्मत्त' जी अवध-अवधी के अलंकार हैं। वे अवधी के किसान-कवि हैं। उनकी कविताओं में अवध-क्षेत्र का गाँव-गिराँव, गोबर-पानी, सभ्यता-संस्कृति, खेती-किसानी, मेहनत-मजदूरी, जाड़ा-पाला, सर्दी-गर्मी, ईमानदारी-बेईमानी, सब-कुछ एकसाथ उपस्थित है। उनकी अवधी रचनाओं का एक संग्रह 'माटी औ महतारी' प्रकाशित है। श्री जगदीश पीयूष द्वारा सम्पादित 'बोली-बानी' का एक अंक पूर्णरूपेण 'उन्मत्त' जी की अवधी रचनाओं पर ही केन्दित है। खड़ी बोली कविताओं का एक संग्रह प्रकाशन की प्रतीक्षा में है। 'प्रहरी सावधान', 'नेहरू महान्' उनकी प्रकाशित खड़ी बोली कविताओं के संग्रह हैं। इनमें 'नेहरू महान्' पं. जवाहरलाल नेहरू के जीवनवृत्त पर आधारित खण्डकाव्य-रचना है।

'गाँव', 'होली आई रंग-रँगीली', 'चली रेलगाड़ी', 'गजल', 'धूतू-धूतू', 'पाती', 'अब केस कै आई रामराज', 'नींव कै पाथर', 'डगर महकी', 'झाड़े रौ मँहगुआ', 'गँउना मा जाड़ा गवा आइ', 'गरमी आई तौं हँसा गाँव', 'छक छक छक छक बरसा पानी', 'तोहरी नानी के हाड़े मा', आदि-इत्यादि उनके द्वारा रचित अवधी की बेजोड़ कविताएँ हैं। उनके द्वारा रचित कविताओं की कुछ पंक्तियाँ उदाहरण के रूप में भावनीय हैं:

(1) *ढेबरी की कठिन पढ़ाई मा आँखी कै जोती जात रही,*
दादा लूकी लै खात रहे, माई अँधियारे खात रही।
डेहरी से लैके ओबरी तक अब सगरौ बिजुरी बरै लागि,
मनई के कहै भँइस बइठी उजियारे पागुर करै लागि।
का जना-जना की आँखी मा अब दिया देखाई रामराज?
अब केस कै आई रामराज?

(2) *तू धूर आँख मा झोंकि-झोंकि धन दुइनौ हाथ बटोर्‌या है,*
तू पेट देस कै काटि-काटि अपने खाता मा जोर्‌या है।
तू कसम खाइ के घाट किह्‌या कम तौल्या सोझै काँटा मा,
तू किह्‌या मिलावट तेल-मसाला-नमक-दवाई आँटा मा।
तू बड़का साहूकार बना औ जहर मिलावा खाड़े मा,
मूड़े धै राजा बेनु गये? तू धरती बँधब्या फाड़े मा।
तोहरी नानी के हाड़े मा।।

(3) *स्वारथ क जग परमारथ से डरु रे,*
दुसरे क पेट काटि ठूँस-ठूँस भरु रे।
जहाँ लौ निगाह जाइ कूद-फाँद करु रे,
आनकै हड़पि के उतान होइ डकरु रे।
खाइ पाउ खाउ नाहीं मारि के अड़ाउ,
लैके नेता जी कै नाउ धुजा गाड़े रौ मँहगुआ।
दुइ पइसा कै टोपी दैके झाड़े रौ मँहगुआ।।

एक रेखांकनीय बात यह है कि 'उन्मत्त' जी की कोई भी रचना, अथवा किसी भी रचना की कोई भी पंक्ति कहीं से कमजोर नहीं है। उनके इसी प्रदेय के कारण, नलिनकान्त उपमन्यु द्वारा, उन पर आधारित लघु शोध-प्रबन्ध (अवध वि.वि., फैजाबाद से) लिखा जा चुका है, जो अनन्तर 'आद्याप्रसाद मिश्र उन्मत्त : अवधी के शिरोरत्न' शीर्षक से पुस्तक-रूप में प्रकाशित हुआ है। सम्प्रति 'उन्मत्त' जी अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद के बी.ए. भाग तीन के, हिन्दी-विषय के अन्तर्गत पाठ्यक्रम में सम्मिलित हैं और पढ़ाये जा रहे हैं।

'उन्मत्त' जी सन् 2007 में कथाशेष हो गये, फिर भी वे अपनी रचनाओं के बल पर हिन्दीसाहित्य की निधि बन गये हैं।

जुमई खाँ आजाद : लोकभाषा अवधी के सिद्ध-कवि श्री जुमई खाँ 'आजाद' का जन्म प्रतापगढ़ जनपद के 'गोबरी' गाँव में 5 अगस्त, 1931 को हुआ था। आर्थिक विपन्नता के कारण उनकी विद्यालयी-शिक्षा हाईस्कूल तक ही संभव हो सकी। 'आजाद' जी ने शुद्ध रूप से, एकनिष्ठ भाव से साहित्यिक जीवन जिया है। 'आर्यभारत', 'हमी सीख', 'त्याग और बलिदान', 'उपहार', 'जीवन-सरगम', 'तूफान', 'मालिक और मजदूर', 'गागर में सागर', 'भारत की सुरक्षा', 'इन्कलाब', 'धरती के गीत', 'नवविहान', 'पहरुआ', 'केवट' (खण्डकाव्य), 'गंगावतरण' आदि कृतियों के माध्यम से 'आजाद' जी ने अवधी-साहित्य की श्रीवृद्धि की है और साहित्य को गौरवान्वित किया है। 'आजाद' जी पर केन्द्रित एक पुस्तक 'कथरी के गुनगायकः जुमई खाँ आजाद' (लेखकः डॉ. सन्तोषकुमार मिश्र) शीर्षक से प्रकाशित हो चुकी है।

'सरस्वती' के अनन्य साधक जुमई खाँ मूलतः अवधी के कवि हैं और सामान्य कवि नहीं, बल्कि

'अवधी के रसखान' कहे जाते हैं। उनके द्वारा रचित कविताओं की कुछ पंक्तियाँ, उनके काव्य सामर्थ्य के प्रमाणरूप में द्रष्टव्य हैं:

(1) *आमदनी मां इतना अन्तर जेस बिरवा जरि पुलुई,*
चतुरी के घर सोना बरसै, गिनै बुधइया कोरई।
निर्धनता पर चलइ हुकूमत, बुद्धिहीन पर भाषन,
ई सिद्धान्त सबै अपनाये, करै बरे बस शासन। ('रामराज' शीर्षक कविता)

(2) *कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।*
लोटइँ लरिका सयान, सारा परिवार बेचारा कथरी मा।।
एतनी अनमोल अहा कथरी, न मोल बिकानू हरिया मा।
मुल तुहुका देखे घरे-घरे सब जने बिछाये खटिया मा।। ('कथरी' शीर्षक कविता)

(3) *महराज दुखी खटिया पै परे, केहुवै कर बोल करात न बा।*
एस आगि बरै धधकै जियरा, दनवा पनियाँ लखि जात न बा।।
दरबारी सबै समुझाइ रहे मुल छाती कै डाह बुतात न बा।
महराज कहैं जिनगानी वृथा, अब दहीं मा पीर समाति न बा।।

(4) *तट प सुविधा श्री राम बरे, गुह जोरि-बटोरि लगावत बा।*
अपने घर से दुधवा मिसिरी टटकै फल-फूल मँगावत बा।।
उत घाट कमंडल बोरि धरे, गोदरी रेतिया मा बिछावत बा।
जलपान की ताँई चिरौरी करै, कर जोरि के शीश नवावत बा।।

('केवट' खण्डकाव्य से)

विशालमूर्ति मिश्र 'विशाल' : प्रतापगढ़ जिले की लालगंज तहसील के 'केशवपुर' गाँव के रहनेवाले श्री 'विशाल' जी पेशे से अध्यापक हैं। सामाजिक सोच-सरोकार-सम्पन्न कवि विशालमूर्ति की रचनाओं में सामाजिक विसंगतियों एवं व्यंग्य के चित्र आसानी से देखे जा सकते हैं, वैसे उन्होंने विविध भावबोध पर आधारित रचनाएँ की हैं। 'गीत-माधुरी' उनका प्रकाशित काव्य-संग्रह है। 'गजलों' का एक संग्रह तथा अन्यान्य कविताओं का एक दूसरा संग्रह प्रकाशनाधीन है। उदाहरण के रूप में उनकी कुछ काव्यपंक्तियाँ प्रस्तुत हैं :

(1) *बीसवें बसंत की अनन्त रूपराशि, अंग-घट न समाती छलकाती चली जाती है।*
रंग भीगा पट है, लिपट गया अंग संग, रूप अंतरंग झलकाती चली जाती है।।
अंग के उभार को उघारप्राय देखि-देखि, कर सों छिपाय लजियाय चली जाती है।
लूटती-लुटाती नैन-मदिरा पिलाती, देखो कैसे लहराती बल खाती चली जाती है।।

(2) *उतरे उतारे नांही, बिसरे बिसारे नांहि, ऐसी मग्न मदिरा पियाय के चली गयी।*
छेड़ि मन-वीणा से अनंग-चतुरंग राग, तार-तार मन के हिलायि के चली गयी।।
निकरे निकारे नहीं, जान से भी मारे नहीं, तीर अनियारे को धँसाय के चली गयी।
नेहिया की डोरिया से, अँखिया की कँटिया से, मोर मन-मछरी फँसाय के चली गयी।।

राजाराम शुक्ल : प्रतापगढ़ के 'खजुरनी' गाँव में जन्में राजाराम शुक्ल अवधी के श्रेष्ठ रचनाकार हैं। 'पाँखुरी' उनकी अवधी रचनाओं का संग्रह है। उनकी 'मारिषा', 'अब तो नींद खुले', 'गंगायतन' आदि कृतियाँ भी प्रकाशित हैं। उनकी कविता का एक उदाहरण देखें :

फूलै लागे फुलवा बऊरइ लागीं डारी, चुमइ लागे कलियाँ क भँवरा अनारी
काली रंग चोलिया चँदनिया में ढारी, खेलइ लागी चन्दा से रतिया दुलारी
रानी उषा के अँगनवा ते निकरे, सुरुजू सिंदुर अस लाल।
उड़इ लागी अबिरिया गुलाल।।

('आवा फागुन' शीर्षक कविता - 'पाँखुरी' संग्रह से)

परवाना प्रतापगढ़ी : जन्म - प्रतापगढ़ जिले के 'खानापट्टी' गाँव में। जीविकोपार्जन हेतु छोटा- मोटा व्यवसाय करते हैं। 'अवधी' के उभरते हुए रचनाकार और मूलतः सम्मेलनी-कवि हैं। फैय्याज अहमद 'परवाना' की अवधी कविताओं की एक कृति 'रस गागरी' प्रकाशित है। उनकी कविता की एक बानगी भावनीय है :

फटी लँगोटी, टुटहा जूता, बिगड़ा ताना-बाना,
लाख जतन जौ करी, तौ पाई पेट भरै का दाना।
कैसे बितिहैं अब तौ मँहगा हर समान बाबू जी
कुल बिपतिऔ बा कपारे हम किसान बाबू जी।।
कानी कौड़ी पास नहीं आकाश चढ़ी मँहगाई,
रात-रात भै जागि के नैना भोर भये पथराई।
जब से बिटिया होइगै घर मा सयान बाबू जी
कुल बिपतिऔ बा कपारे हम किसान बाबू जी।।

नागेन्द्र 'अनुज' : प्रतापगढ़ जिले की लालगंज तहसील से सटे गाँव उमापुर में पैदा हुए कवि नागेन्द्र 'अनुज' अवधी के प्रकृष्ट रचनाकार हैं। उन्होंने अवधी गीतों-गजलों की रचना से अवधी-साहित्य को समृद्ध किया है। उनकी रचनाएँ विविध समवेत संकलनों ('श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य गीत' तथा 'नई सदी के प्रतिनिधि दोहाकार') तथा पत्र-पत्रिकाओं ('हस्तक्षेप', 'बोली-बानी' आदि) में प्रकाशित हुई हैं। उनकी रचनाओं की बानगी के लिए एक ही उदाहरण काफी है :

चोट्टा-डकइत, पुलिस-कसाई, दुइनउ हाँथे करैं कमाई
का हिन्दू का मुसुरमान सिख सबका छलै आज मँहगाई
हियाँ गरीब मरत बा भूखन भा बिलेक रासन सरकारी।
तौ काहे ना मिटै लिहारी।।
जहाँ गरीब हलाल होत बा, रोजै नवा बवाल होत बा
वही देस कै नेतै चोकड़ैं ई भारत खुसहाल होत बा
उल्लू सीधा करत अहैं ये, इनका पूजै दुनिया सारी।
तौ काहे न मिटै लिहारी।।
अब तौ डिगिरी मुँह मटकावै, नोट देय तौ सरबिस पावै
भाय भतीजाबाद के चलतन, अब तौ गदहौ मौज उड़ावै
आपन स्वारथ साधै खातिर चारिउ ढर्रा बइठ सिकारी।
तौ काहे न मिटै लिहारी।।

सुनील 'प्रभाकर' : प्रतापगढ़ जनपदान्तर्गत 'सराय नाहरराय' गाँव में जन्में श्री सुलीन प्रभाकर सरकारी-सेवारत कर्मचारी हैं। हिन्दीसाहित्य से एम.ए., अनन्तर 'स्लेट' परीक्षा उत्तीर्ण, सुनील प्रभाकर सिविल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा भी हैं। ये अपनी कविताओं के बल पर कवि-सम्मेलनों में सादर सराहे जाते हैं। अब तक इनकी खड़ी बोली व अवधी-कविताओं का एक संग्रह 'मन की वीणा' प्रकाशित हुआ

है। इनकी कविताएं इनके कवि-सामर्थ्य की प्रमाण हैं। उदाहरण देखें :

(1) *वृषभानु के द्वार चलो सजनी, जहँ राधिका के पग पावन हैं।*
जहँ जेठ भई सब देह परी, दोउ नैन बने बस सावन हैं।।
कीर्तिकुमारी ही आस हैं आखिरी, जीवन आवन-जावन है।
हमरे तो हिये में बसे उनके, रोम-रोम बसे मनभावन हैं।।

(2) *होत न धीर वही प्रभु हैं, शबरी के घरे महँ हो फल खाये।*
तारे अजामिल औ गणिका, गज को भवसागर पार कराये।
काँह भई हमसो ऐ 'सुनील' जो छाये उहाँ हैं इहाँ नहिं आये।
अँखियाँ गहि बन्द करौं पर ई, हियरा नहिं मानत है समुझाये।।

चन्द्रेश 'पागल' : चन्द्रेश 'पागल' जी का पूरा नाम चन्द्रेशबहादुर सिंह है और इनका जन्म प्रतापगढ़ में लक्ष्मणपुर ब्लाक के चमरूपुर गाँव में हुआ था। चन्द्रेश जी पेशे से वकील थे और यही कारण है कि उनकी रचनाओं में एक सरस तर्कणाशक्ति देखने को मिलती है। चन्द्रेश जी ने अवधी और खड़ी बोली में समान रूप से लिखा है। गीत, ग़ज़ल, छन्द, लोकगीत, अतुकान्त कविताओं के अतिरिक्त उन्होंने आल्हा-जैसी प्राचीन विधा में भी रचनाएँ कीं। उन्होंने खड़ी बोली में ग़ज़लों के साथ-साथ अवधी में भी ग़ज़लें लिखीं। जहाँ वो खड़ीबोली में ग़ज़ल कहते समय :

वो कभी क़यामत है, तो कभी नज़ारा है,
टूट पड़े तो उल्का, चमके तो सितारा है।

जैसी बातें करते हैं। या कहते हैं :

उफ़! कितनी बेक़द्री है, उफ़! कितनी बनावट है,
मुर्दा हुए जिस्मों पर फूलों की सजावट है।

वहीं अवधी-ग़ज़ल लिखते समय देश की दुर्दशा पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं :

आवा देसवा कै उद्धार मिलि के करी,
तूहुँ काटा गरी, हमहूँ काटी गरी।

विभिन्न प्रकार की विधाओं के साथ-साथ चन्द्रेश जी ने लगभग सभी रसों में रचनाएँ की हैं। विभिन्न शास्त्रीय रसों के अलावा आजकल व्यापक स्तर पर गद्य और पद्य मं व्यंग्य को अलग से महत्व दिया जाने लगा है। चन्द्रेश जी इसमें भी सिद्धहस्त थे। उनके गीतों में श्रृंगार के साथ दर्शन का कुछ ऐसा मिश्रण देखने को मिलता है कि हृदय बरबस कह उठता है बिना श्रृंगार के दर्शन अधूरा है और बिना दर्शन के श्रृंगार। चन्द्रेश जी द्वारा इतना विपुल साहित्य रचा गया है कि उस पर पूरा शोध-कार्य किया जा सकता है। सन् 2001 में मृत्युरूपी अटल सत्य का सामना चन्द्रेश जी को भी असमय करना पड़ा। शीघ्र ही चन्द्रेश जी की सम्पूर्ण रचनाओं का संग्रह प्रकाशित होनेवाला है।

अनीस देहाती : प्रतापगढ़ के बरीबोझ गाँव में जन्में शेख मुंशी रज़ा जन्म से ही देहाती हैं, लेकिन देहाती सिर्फ इन्हीं मायनों में कि देहात में पैदा हुए, देहात म ही पढ़े-लिखे, देहात में ही रहते हैं और देहात के ही ग्राम-प्रधान हुए। उनकी सोच-समझ और रचनाधर्मिता से ये बात स्पष्ट हो जाती है कि वे शहर में रहनेवाले विद्वानों से कई गुना जागरूक हैं।

भारतीय समाज के परिदृश्य में जिस मिली-जुली संस्कृति या गंगा-जमुनी तहज़ीब की बात की जाती है, अनीस जी उसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं। अवधी की रचना लिखते समय 'अनीस' जी जिस ठेठ अंदाज में पेश आते हैं, खड़ीबोली की रचनाओं में उससे कहीं ज़्यादा शिष्ट और तर्कपूर्ण शैली में नजर आते हैं। शीघ्र ही अनीस जी की अवधी-रचनाओं का एक संग्रह 'करम-कमाई' नाम से प्रकाशित होनेवालाहै। गीत,

ग़ज़ल, छन्द, कविता, लोकगीत आदि पर अनीस जी की गहरी पकड़ है। इसी बीच सम्पूर्ण 'श्रीमद्भगवत गीता' के श्लोकों का खड़ीबोली में छन्दानुवाद का कार्य भी अनीस जी ने सम्पन्न कर दिया है। अनीस जी संस्कृत से एम.ए. हैं, आचार्य हैं और इस समय सरदार पटेल इण्टर कालेज, रानीगंज कैथोला, प्रतापगढ़ में अध्यापन-कार्य कर रहे हैं। उनकी कुछ-एक कविताओं की पंक्तियाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं :

(1) *हिन्दू अही हम न मुसुरमान अही हम।*
पंचौ! गरीब गाँव कै परधान अही हम।।
एक मुद्दतै से गाँव म लाये रहे लासा।
तिकड़म से अपने छोट अऊर मोट का फाँसा।।
देबै जरूर तुहँका भुँइ, ई दीन दिलासा।
तब जाइ के यहि वोट म बहुमत मिला खासा।।
जनता कै धान्य खाइ के उँचियान अही हम।
पंचौ! गरीब गाँव कै परधान अही हम।।
तोहका कसम हमार है सच का न सच कहा।
आराम भले हम सही, तकलीफ तू सहा।।
चाँदी कटै हमार औ बिल्डिंग मा रही हम।
चिन्ता न हमैं तू भले भरसार मा रहा।।
सानी की तरह साँड़ के लसियान अही हम।
पंचौ! गरीब गाँव कै परधान अही हम।।

(2) *बिना फीस थान्हौ चउकी माँ लिखी जाय ना फाई आर।*
अहेन डाग्डर सरकारी मुल बऊ भये पइसै कै यार।।
कटा कनक्सन सन् तिरसठ माँ बिजली कै बिल काल्हौ आय।
सन् छतिस कै पठई चिट्ठी आज डाकिया दिहिस लियाय।।
मंत्री से लइके संत्री तक में 'अनीस' सब बड़का सेर।
अरे राम! एतनी अन्धेर। अरे राम! एतनी अन्धेर।।

रघुवीर सिंह 'पवन' : ये श्रमजीवी साहित्यकार हैं। इनकी रचनाएँ मास्को रेडियो स्टेशन से प्रसारित हो चुकी हैं। 'मील के इन पत्थरों से पूछ लो युग की कहानी/ हर पथिक पथ पर गया है छोड़कर अपनी निशानी' इनकी प्रसिद्ध काव्य-पंक्तियाँ हैं। सन् 2007 में स्मृतिशेष हो गये।

राधेश्याम 'दीन' : 'दीन' जी प्रतापगढ़ जनपद के सण्डवा-चन्द्रिका के पास जूड़ापुर गाँव के रहने वाले हैं। इनकी अधिकाशं रचनाएँ अवधी-भाषा में हैं। 'अरे चैतुआ कब तक सोउबे, उठ जल्दी अब भोर होइ गवा' इनकी अत्यन्त सराही जानेवाली कविता है। इन्होंने 'चन्द्रिकन' देवी की स्तुति में 'चन्द्रिका-चालीसा' भी लिखा है।

भानुप्रताप त्रिपाठी 'मराल' : 'मराल' जी पेशे से अधिवक्ता हैं। इनके द्वारा लिखित निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हैं- 1. संजय (खण्डकाव्य), 2. दहेज (उपन्यास), 3. अगुआ बियाह कै भये भाय, 4. सपनों का भारत (राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह), 5. इन्दिरा गांधी (स्वतंत्रता संग्राम का काव्यगत इतिहास), 6. देश हमारा धरती अपनी, और 7. संत तुलसीदास (खण्डकाव्य)।

इनके अतिरिक्त 'प्रभा', 'अवधी पियार बाटै', 'भिखारी का बेटा', 'रूपवती' (खण्डकाव्य), 'हनुमान्-स्तुति', 'मंथरा' (खण्डकाव्य), 'भरत' (खण्डकाव्य), 'आखिरी किताब' (उपन्यास), 'भारत के सपूत' (स्वतंत्रता-संग्राम-सेनानियों का चरित्र-चित्रण) और 'भारत का जवाहर' (काव्य) आदि संग्रह प्रकाशन की

प्रतीक्षा में हैं। 'मराल' जी खड़ी बोली एवं अवधी, दोनों भाषा-माध्यमों से काव्य-सृष्टि करते हैं।

शेष जी : ये अब कथाशेष हो गये हैं। शेष जी अतिप्रसिद्ध देवस्थान 'घुइसरनाथ' के निकटस्थ 'नौबस्ता' गाँव के रहनेवाले थे। गाँधी पर लिखी गयी इनकी रचना अति प्रसिद्ध है।

ओंकारनाथ उपाध्याय : कवि ओंकारनाथ पेशे से 'कृषक' हैं। नयी पीढ़ी के कवियों में इनका अवधी-साहित्य के विकास में अद्वितीय योगदान है। इन्होंने लोक-साहित्य की हर विधा--सोहर, नकटा, बिरहा, लोरिकी, धोबिया-गीत आदि--को अपनी लेखनी की मधुरिमा से समृद्ध बनाया है।

इम्तियाजुद्दीन खाँ 'बाबू जी' : ये कवि-रूप में राष्ट्रीय एकता के प्रतीक-रूप हैं। इन्होंने सुप्रसिद्ध कृति 'रामचरितमानस' तथा भर्तृहरि के तीनों शतकों का उर्दू में सफल अनुवाद किया है।

ऊपर वर्णित अवधी साहित्य-साधकों के अतिरिक्त श्री गुलाब खण्डेलवाल, ओमप्रकाश खण्डेलवाल, अमजद हुसैन शास्त्री, कामताप्रसाद पीयूष, श्रीविष्णुदत्त मिश्र 'प्रसून', पं. मधुसूदन 'मधु', परशुराम उपाध्याय 'सुमन' (अधिवक्ता), डॉ. रामचरित्र सिंह 'अनाम', डॉ. हंसराज त्रिपाठी, डॉ. महावीरप्रसाद उपाध्याय 'मधुवर्ष', श्रीरामसेवक शुक्ल, श्रीरविउल्लाह 'दर्द' (सभी पेशे से प्राध्यापक), छविश्याम पाण्डेय 'शिक्षक' (अब कथाशेष), 'मयूर' जी, श्री उमेशचन्द्र पाण्डेय 'तरुण', श्रीराम श्रीवास्तव 'कमलेश जी', डॉ. जमीर अहसन अंसारी, श्री रामसमुझ मिश्र 'अकेला', 'नाथ' मानिकपुरी, रत्नेश जी, नाजिस प्रतापगढ़ी, चन्द्रशेखर 'प्राण', डॉ. [illegible] शुक्ल, डॉ. अनिल मिश्र, डॉ. ओम निश्चल, कैसर प्रतापगढ़ी, राजमूर्ति सिंह 'सौरभ', दयाशंकर शुक्ल 'हेम', डॉ. राधेश्याम द्विवेदी 'प्रशान्त', पं. तीर्थपाल शुक्ल, वकील अहमद, अशोककुमार 'निर्भय', राजनारायण शुक्ल 'शार्दूल', डॉ. संगललाल त्रिपाठी 'भँवर', रामसहाय सिंह कुंज, डॉ. अनिल सिंह 'शलभ', केशरीनन्दन शुक्ल, ओमप्रकाश श्रीवास्तव 'पंछी', रमेशप्रताप सिंह 'कपूत प्रतापगढ़ी', विजयबहादुर सिंह 'अक्खड़', सत्येन्द्रनाथ मिश्र 'मृदुल', संजय पाण्डेय 'पुष्पेन्दु', श्यामशंकर शुक्ल 'श्याम', इमरान प्रतापगढ़ी, बाबूलाल 'सरल', गुलाम जी, डॉ. रणजीत सिंह, मुर्तजा जाफरी, रामनारायण सिंह, संतोष सिंह, भूपाल सिंह 'कविदास', 'निराश' आदि-इत्यादि छोटे-बड़े अनेक साहित्यिक व्यक्तित्व हैं जिन्होंने प्रतापगढ़ के साहित्यिक विकास में अपनी सहभागिता निभायी है। और, आज भी साहित्य-साधना के मार्ग पर अग्रसर हैं।

साहित्यमर्मी विद्वान् पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी का यह कहना बिलकुल सच है कि 'मैंने अपने जीवन में ऐसे कितने ही कवियों को देखा है, जो अपने समय में बहुत बड़े समझे जाते थे, किन्तु 25-30 वर्ष बाद ही वे भुला दिये गये। रहीम, रसखान, पद्माकर, गिरिधर, सूर आदि की आज साहित्यिक एवं शैक्षिक जगत् में काफी उपेक्षा है, फिर भी वे जनता के कंठ में हैं और देहातों में भी सुने जा सकते हैं।' यह सच है कि उपर्युक्त साहित्य-सेवियों में से दो-चार को छोड़कर अधिकांश रहीम, रसखान, पद्माकर आदि की कोटि के नहीं हैं। यह भी सच है कि अधिकांश 25-30 वर्ष तो क्या, इससे पहले ही भुला दिये जायेंगे, और, यह भी सच है कि आगे बहुत दिन बाद जनता के कंठ में भी नहीं रहेंगे। किन्तु, आज इनमें से ज्यादातर ऐसे हैं जो जनसामान्य के कंठ में रचे-बसे हैं। इनके द्वारा सृजित गीतों की मिठास के वशीभूत लोग अक्सर इनके गीतों को गुनगुनाते मिलते हैं।

एक बात और, कोई यह कह सकता है कि इनमें से अधिकांश मंचीय (सम्मेलनी) कवि हैं, और यह भी कि सम्मेलनी कवियों से साहित्यिक इतिहास नहीं बनता। तो, इसके लिए यह कहना बहुत होगा कि आज हिन्दीसाहित्य में प्रतिष्ठित साहित्य-महारथियों में से अधिकांश ऐसे हैं, जो अपने प्रारम्भिक दिनों में मंचीय कवि ही थे। महाप्राण 'निराला', सुकुमार कवि पन्त, महाकवि 'प्रसाद', बहुआयामी 'अज्ञेय', महीयसी महादेवी, समयसूर्य 'दिनकर', मधुवर्षी बच्चन, जनकवि बाबा नागार्जुन, डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. धर्मवीर भारती आदि-आदि सभी कवि-सम्मेलनों की शोभा बढ़ानेवाले कवि थे, किन्तु आगे चलकर

सब-के-सब स्वनामधन्य साहित्यकार हुए। इनमें से लगभग सभी भारतीय ज्ञानपीठ, भारत-भारती, साहित्य-अकादमी अथवा हिन्दी संस्थान द्वारा प्रदान किए जानेवाले पुरस्कारों से पुरस्कृत हुए। और, आज ये सभी हिन्दीसाहित्य की अक्षय निधि हैं। प्रस्तुत प्रलेख में वर्णित साहित्यधर्मियों में से बहुतों को समय भुला देगा, किन्तु कुछ ऐसे हैं—जैसे आचार्य भिखारीदास, पन्तजी, राजा रामपाल सिंह, गुलाब खण्डेलवाल, पं. आद्याप्रसाद मिश्र 'उन्मत्त', जुमई खाँ 'आजाद', अनीस देहाती, आदि—और एकाध ऐसे हो सकते हैं, जिन्हें समय आसानी से भुला नहीं पायेगा, वे साहित्यनिधि साबित होंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि प्रतापगढ़ की माटी ने आचार्य भिखारीदास, राजा रामपाल सिंह-जैसी साहित्यिक प्रतिभाओं को जन्म दिया है। यहाँ की माटी ने सौन्दर्यचेता कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त, गुलाब खण्डेलवाल, डॉ. ब्रजेन्द्र 'शैलेश'-जैसे प्रातिभ रचनाकारों को साहित्य-सृष्टि के लिए भावभूमि प्रदान की है। इसलिए प्रतापगढ़ का नाम अपने साहित्यिक अवदान के लिए विशेषतः अवधी-रचनाओं के लिए हिन्दीसाहित्य में सदा अमर रहेगा।

सुलतानपुर जनपद का अवधी अवदान

डॉ. प्रेमलता पाण्डेय

अपनी ऐतिहासिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक महत्ता के कारण जनपद सुलतानपुर का अवध प्रांत में विशेष स्थान है। यहाँ की रस-प्रसविनी धरती शस्योत्पादन में भले ही किञ्चिद् ऊन रही हो, किन्तु अनेक ख्यातनामा साहित्यकारों को जन्म देकर इसने अपनी रत्नगर्भा संज्ञा को सार्थक बना दिया है। अवधी के आदि भक्त-कवि पुरुषोत्तम दास की यह जन्म एवं कर्मभूमि रही है। सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी के जीवन का उत्तरार्द्ध यहीं व्यतीत हुआ। असि और मसि दोनों के धनी राजा हिम्मत सिंह 'महीपति', गुरुदत्त सिंह 'भूपति' और लाल माधवसिंह 'छितिपाल' आदि के नाते यहाँ की माटी और भी महिमान्वित हुई है। लोक-साहित्य एवं लोक-जीवन को समर्पित कवि श्री रामनरेश त्रिपाठी, पं. गयाप्रसाद द्विवेदी 'प्रसाद' तथा कविकिंकर रामगुलाम इसी उर्वर धरती की उपज हैं। श्री त्रिलोचन शास्त्री, प्रो. अनजान, कविवर मुनीश एवं डॉ. सुरेश जैसे अनेक स्वनामधन्य कवियों से यह आज भी अलंकृत है। और भी अनेक श्रेष्ठ साहित्य-सेवियों एवं वाणी के वरद पुत्रों ने अपनी सारस्वत साधना से समय-समय पर इसका गौरव बढ़ाया है। आज भी यहाँ की साहित्यिक चेतना पूर्ववत् जीवन्त-जाग्रत एवं अटूट-अविच्छिन्न है। इस जनपद के इसी साहित्यिक अवदान का क्रमिक मूल्यांकन हमारा ध्येय है।

भक्त-कवि पुरुषोत्तमदास : इनका जन्म जनपद सुलतानपुर की मुसाफिरखाना तहसील के अंतर्गत दादर ग्राम में हुआ था। यह स्थान तहसील मुख्यालय से तीन कि.मी. उत्तर में है। इनके पिता का नाम क्षेमानन्द तथा पितामह का नाम देवकी नन्दन था। इनके रघुनन्दन, आशानन्द एवं विमलानन्द नामक तीन पुत्र थे। काशी जाकर इन्होंने पं. रघुनाथ से व्याकरण एवं निघण्टु का अध्ययन किया। वे ही इनके गुरु थे।

व्यास के प्रमुख शिष्य जैमिनि ने 'जैमिनि-अवश्वमेध-पर्व' नामक संस्कृत ग्रंथ की रचना की थी। अवधी भाषा में इसकी छन्दोबद्ध रचना पुरुषोत्तमदास ने की। इसका नाम हैं- 'जैमिनीयाश्वमेध भाषा-छन्दोवद्ध'। जैमिनि पुराण का अनेक भाषा- कवियों ने छंदोबद्ध अनुवाद प्रस्तुत किया। उक्त रचना निश्चय ही महत्वपूर्ण है। दो भिन्न प्रतियों में पुरुषोत्तमदास के इस ग्रंथ का रचनाकाल भिन्न मिलता है। इसलिए इनकी रचना को भी लोग जैमिनीयाश्वमेध और जैमिनि पुराण नाम से दो बताते हैं, किन्तु ऐसा पाठान्तर से ही भ्रम हुआ है। वस्तुतः वे एक ही लगती हैं। वास्तव में इस ग्रन्थ का रचनाकाल संवत् 1558 है। इस आधार पर लगता है कि कवि का जन्म पन्द्रहवीं शती के उत्तरार्द्ध में हुआ होगा। संवत् 1983 में खेमराज श्रीकृष्णदास ने इस ग्रंथ का प्रकाशन किया था। पुरुषोत्तमदास ने यह रूपान्तर संस्कृत ग्रंथ के श्लोक-क्रम से शब्दशः नहीं किया है, अपितु ग्रंथ को पर्याप्त संक्षिप्त कर दिया है। इसमें धर्म-सम्बन्धी श्लोकों को कम करके रचना को साहित्यिक बनाने का प्रयास किया गया है। अधिकांश दोहों और अर्द्धालियों में कवि ने अपना नाम दिया है। कहीं-कहीं 'कहत विप्र पुरुषोत्तम' अथवा 'नमत

विप्र पुरुषोत्तम' से कवि की जाति का भी पता चल जाता है। कवि ने अपनी रचना में पर्याप्त विनम्रता का प्रदर्शन किया है। इनके द्वारा 'लवकुश उपाख्यान' की भी रचना संवत् 1620 में की गयी। 'जैमिनीयाश्वमेध' की किन्हीं प्रतियों में इसे जोड़ दिया गया है।

पुरुषोत्तमदास तुलसी-पूर्व के अवधी कवि हैं। वे सुलतानपुर के साहित्य गौरव हैं। उनके गाँव के उत्तर में उनकी पूजास्थली थी, जहाँ अब एक पक्का मन्दिर और उसके भीतर कवि का चौरा बना दिया गया है। गोमती के वर्तमान तट से कुछ दूर कवि का एक और चौरा बना है। कवि प्रतिदिन गोमती स्नान करके यहीं भजन करता था। मुसाफिरखाना से 6 कि.मी. पश्चिम उनके बड़े पुत्र के गाँव चकरघुनन्दन में भी कवि के नाम का एक चौरा बना हुआ है। इधर अनेक विद्वानों ने उन पर अपने शोधपूर्ण आलेख लिखे हैं। उन पर शोध भी किया जा रहा है।

राजा हिम्मत सिंह 'महीपति' : ये अमेठी के राजा पहाड़ सिंह के पुत्र थे। इनका जन्म लगभग सोलहवीं शती के उत्तरार्द्ध में हुआ था। इन्होंने लगभग 30 वर्षों तक शासन किया। इन्हें संस्कृत, अवधी, ब्रज भाषा एवं उर्दू-फारसी का पूरा ज्ञान था। ये 'महीपति' उपनाम से कविता करते थे। 'कविकुलतिलक प्रकाश' इनका प्रसिद्ध लक्षण ग्रंथ है जो बाईस आलोक में लिखा गया है। इसमें लक्षण प्रायः दोहे में तथा उदाहरण सवैया छन्द में दिये गये हैं। सर्वांग-निरूपक यह ग्रंथ अभी तक अप्रकाशित है। इसमें रस, छन्द, अलंकार, ख्याति, वृत्ति एवं नायक-नायिका भेद आदि वर्णित हैं। इस ग्रंथ की रचना संवत् 1666 में की गयी। रचनाकार का संक्षिप्त परिचय भी इसमें प्राप्त होता है। काव्य-प्रयोजनों को बताते हुए अंत में कवि ने विनय-प्रदर्शन भी किया है।

गुरुदत्त सिंह 'भूपति : ये अमेठी के राजा हिम्मत सिंह के पुत्र थे। पिता की भाँति इनमें भी अद्भुत कवित्व-शक्ति विद्यमान थी। ये स्वयं विद्वान्, सुकवि एवं कवियों के आश्रयदाता थे। सतसई, रस-रत्नावली, भागवत-भाषा, कण्ठाभरण, रसदीपं तथा रस-रत्नाकर इनकी रचनाएँ हैं। प्रथम दो रचनाएँ सम्प्रति उपलब्ध हैं। रस-रत्नावली संस्कृत भाषा में रचित वैद्यक का एक लघु ग्रन्थ है। इससे कवि के आयुर्वेद-ज्ञान का पता चलता है। इस ग्रंथ के अन्त में स्पष्ट लिखा है--'इति श्रीमद्राजा गुरुदत्त सिंह कृता रस-रत्नावली समाप्ता'।

'भूपति-सतसई' इनकी महत्वपूर्ण कृति है। संवत् 1791 में इसकी रचना हुई है। सुख-प्राप्ति के उद्‌देश्य से राधा-कृष्ण-विलास-वर्णन को कवि ने अपना ध्येय माना है। अनेक विषयों पर विभिन्न हृदयहारी दोहे इन्होंने लिखे हैं। इन्हें देखकर लगता है कि वास्तव में कवि मालाकार की भाँति प्रयोग-निपुण है। इसके दोहे मधुर एवं सरस हैं। इसमें वर्ण्य विषय को इस प्रकार शीर्षकबद्ध किया गया है जिसे देखने से लगता है कि कवि कोई लक्षणग्रन्थ लिख रहा हो। अन्य सतसइयों की अपेक्षा इसका वर्ण्य-विषय अधिक काव्यशास्त्रीय है।

भूपति ने भी बिहारी की भाँति गागर में सागर भरा है। अनुप्रास और यमक इनके प्रिय अलंकार लगते हैं। श्रृंगार रस की इसमें प्रधानता है। नायक-नायिका- भेद, लोक-शिक्षा, इतिहास, राजनीति, प्रकृति-सौन्दर्य आदि से सम्बन्धित दोहे इसमें प्राप्त होते हैं। इसमें कुल 701 दोहे हैं जिनसे कवि की बहुज्ञता का पता चलता है। कवि के लोक एवं शास्त्र-ज्ञान का पूर्ण परिचय भी ये देते हैं। सतसई की भाषा ब्रज है। दोहा छंदों के अतिरिक्त अन्य अनेक स्फुट छंदों की रचना भी भूपति ने सफलतापूर्वक की है। कवि होने के साथ-साथ ये सफल योद्धा भी थे। रामजन्मभूमि की रक्षा में इन्होंने अवध के नवाब सआदत अली खाँ से युद्ध करके उसे पराजित किया। इनके आश्रित कवि श्री उदयनाथ 'कविन्द' ने इनकी वीरता की प्रशंसा में अनेक सुन्दर छंद लिखे हैं। वास्तव में भूपति की साहित्य-सेवा सराहनीय है। सतसई-परम्परा में इनकी सतसई का महत्वपूर्ण स्थान है। आचार्य शुक्ल, मिश्र-बन्धु. डॉ. नगेन्द्र आदि

ने इसकी प्रशंसा की है। भूपति रीतिकाल की एक विमल विभूति थे। रस, भाषा, भाव आदि सभी दृष्टियों से इनका काव्य प्रशंसनीय है।

लाल माधवसिंह 'छितिपाल' : इनका जन्म 29 नवम्बर, 1823 ई. को हुआ था। 1842 से 1891 ई. तक इन्होंने अमेठी राज्य का शासन सँभाला। ये गुणग्राही, कवियों के आश्रयदाता एवं स्वयं सत्कवि थे। साहित्य के साथ संगीत एवं स्थापत्य- कला को भी इन्होंने बहुत आदर दिया। मनोजलतिका, देवीचरित्रसरोज, श्रीरघुनाथ- चरित्र, लवकुश-चरित्रप्रकाश, भक्ति-रत्नाकर, भगवती-विजय, विज्ञान-विलास, सीता- स्वयंवर, वैराग्यप्रकाश, भजनप्रदीप, सज्जनविलास, कामोद्दीपन-कौमुदी (संस्कृत), अनुराग-चन्द्रिका, दोहाशतक, सोरठाशतक, कुण्डलियाशतक, षट्पदावली, पंचाष्टक, सुरस-रसदीप, रागप्रकाश, भाषाप्रदीप, मोक्षचिन्तामणि, मोक्षदिवाकर और ब्रह्मज्ञान-निरूपण इनकी रचनाएँ हैं।

छितिपाल नीति-निपुण, धर्मात्मा एवं भक्त थे। अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों दृष्टि से इनकी रचनाएँ बेजोड़ हैं। वे भगवती बाला सुन्दरी के उपासक थे। मनोजलतिका इनका श्रृंगाररस प्रधानकाव्य है। षड्ऋतु-वर्णन और प्रकृति-चित्रण- संबंधी मनोहर छंद इसमें पाये जाते हैं। त्रिदीप नामक ग्रंथ में भर्तृहरि के शतक-त्रय का छंदोबद्ध भाषानुवाद इन्होंने प्रस्तुत किया है। इसके आरम्भ में उन्होंने गणेश-वन्दना की है। श्रीरघुनाथचरित दोहा-चौपाई-शैली की अवधी रचना है। इसकी भाषा-शैली रामचरितमानस से पूर्णतः मेल खाती है। लवकुशचरितप्रकाश भी इसी शैली में लिखा गया है। संवत् 1944 में इसकी रचना की गयी। भक्ति-रत्नाकर में भक्ति संबंधी पद विविध रागों में लिखे गये हैं। अनेक देवताओं की स्तुति इसमें की गयी है। भगवतीविजय दुर्गासप्तशती का दोहा-चौपाई शैली में किया गया अनुवाद है। अनुराग चन्द्रिका, भजनप्रदीप, सज्जनविलास, वैराग्यप्रकाश, विज्ञानविलास ज्ञान, कर्म, उपासना आदि से सम्बन्धित भक्ति एवं अध्यात्मप्रधान रचनाएँ हैं। सीतास्वयंवर दोहा-चौपाई शैली की अवधी रचना है। कामोद्दीपन-कौमुदी में कामवर्द्धक आयुर्वेदिक औषधियों का वर्णन है। मोक्षचिन्तामणि इनका गद्य-ग्रंथ है और रागप्रकाश में संगीत की विविध राग-रागिनियों का चित्रण है।

छितिपाल हिन्दी-संस्कृत के विशेषज्ञ एवं सहृदय कवि थे। छंद एवं संगीतशास्त्र की उन्हें पूर्ण जानकारी थी। प्रतिभा एवं पांडित्य उनमें भरा था। उनकी रचनाएँ अधिकांशतः भक्तिपरक हैं। उन्हें उर्दू-फारसी का ज्ञान था। वे लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह के घनिष्ठ मित्र थे। 1857 के स्वाधीनता-संग्राम में उनका अविस्मरणीय योगदान है। अपने कवित्व, शौर्य एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के नाते वे चिरकाल तक साहित्यिकों में समादृत रहेंगे।

पं. रामनरेश त्रिपाठी : पं. रामनरेश त्रिपाठी का जन्म संवत् 1946 में फाल्गुन त्रयोदशी को ग्राम कोइरीपुर, सुलतानपुर के एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पिता पं. रामदत्त त्रिपाठी भारतीय संस्कृति के उपासक, संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित, कर्मकाण्डी एवं धार्मिक ग्रंथों के निष्ठावान् अध्येता थे। उनका भरपूर प्रभाव त्रिपाठी जी पर पड़ा। उन्होंने रामचरितमानस का जैसा सश्रद्ध अध्ययन-मनन किया, वह अनुकरणीय है। इसके परिणामस्वरूप उनके जीवन में पवित्रता और सादगी घर कर गयी। कक्षा आठ की शिक्षा के बाद घर पर ही स्वाध्याय के बल पर अंग्रेजी, उर्दू, फारसी, बंगला, संस्कृत तथा गुजराती का गहन ज्ञान आपने प्राप्त किया। तेरह वर्ष की अवस्था से ही आप कविता करने लगे। इनके प्रारम्भिक जीवन का अधिकांश कलकत्ता और गुजरात में व्यतीत हुआ। इन्हें जगह-जगह युग की कुरीतियों एवं अंधविश्वासों से लड़ना पड़ा, किन्तु उन्होंने हार नहीं मानी।

श्री त्रिपाठी जी में देशभक्ति, आस्तिकता और राष्ट्रीयता भरी थी। आपने राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लिया। फलतः कठोर कारावास का दण्ड भी भोगना पड़ा। जेल-जीवन व्यतीत कर प्रयाग में आपने 'हिन्दी-मन्दिर' की स्थापना की। प्रयाग की जानी-मानी साहित्यिक-राजनीतिक हस्तियों से इनकी घनिष्ठता हुई। ये हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के मंत्री भी चुने गये। आपने 'उद्योग', 'कविकौमुदी', 'वानर' एवं 'सम्मेलन' पत्रिकाओं का सम्पादन किया। पथिक, स्वप्न एवं मिलन इनके खण्डकाव्य हैं और 'मानसी' कविता संग्रह। इनका आलोचना-साहित्य, कोश, ग्राम- साहित्य, जीवनी-साहित्य, पिंगल, यात्रा-साहित्य, भाषा का इतिहास, अनूदित-साहित्य, धर्म, संगीत एवं शिक्षापरक विविध साहित्य नितान्त महत्वपूर्ण है। अगणित सम्पादन कार्य आपने किया है। शताधिक की संख्या में आप द्वारा रचित नाटक, कथा-साहित्य एवं बाल-साहित्य होंगे। पं. मदनमोहन मालवीय और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन की श्रेणी में आने वाले त्रिपाठी जी अजर-अमर हिन्दी-सेवी हैं।

जिन दिनों हरिऔध जी के 'प्रियप्रवास' की धूम मची थी, उन्हीं दिनों 'पथिक' की रचना करके त्रिपाठी जी ने साहित्य-जगत् को चमत्कृत कर दिया। अपने वर्ण्य- विषय, वर्णनशैली आदि के नाते यह रचना उत्कृष्ट कोटि की है। इसमें गांधीवादी विचारधारा के दर्शन होते हैं। प्रकृति-चित्रण-संबंधी विविध मनोहर दृश्य इसमें पाये जाते हैं। युग-जीवन का जैसा वर्णन कवि ने इसमें किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। सारे समाज और देश को उन्होंने निकट से देखा-परखा था, अतः युग की आशा-आकांक्षा को उन्होंने वाणी प्रदान की है। समस्याओं के समाधान का उपाय भी वे सुझाते हैं। 1932 में 'पथिक' पर आपको 'हिन्दुस्तानी एकेडमी' से पुरस्कार प्राप्त हुआ।

'कविता-कौमुदी' के तीसरे भाग में ग्राम-गीतों का संकलन है। यह त्रिपाठी जी की अनवरत साधना का प्रतिफल है और हिन्दी साहित्य की एक अभूतपूर्व देन भी। सादा जीवन, उच्च विचार में वे विश्वास करते थे। उनकी मधुर वाणी से सरलता, मृदुता एवं विदग्धता झलकती थी। भाषण-कला उनमें अद्भुत थी। बागवानी का उन्हें विचित्र शौक था। उनमें अमन्द उत्साह एवं अदम्य पौरुष था। वे सदैव युग का विषपान करने को तत्पर रहते थे। कवि-सम्मेलनों में त्रिपाठी जी सोत्साह भाग लेते थे। वे आशुकवि थे। कठिन-से-कठिन समस्या-पूर्तियाँ वे क्षण भर में लिख लेते थे। हास्य और व्यंग्य-लेखन में भी वे बड़े पटु थे। सिंगरा-मऊ के राजा हरपाल सिंह से उनकी नहीं पटती थी। उनके प्रति उन्होंने बड़ा चुटीला व्यंग्य किया है। उनके विचारों में बेहद मौलिकता एवं भाषा में जीवन्तता थी। उनकी बालोपयोगी कहानियाँ अनूठी हैं। साम्प्रदायिक सद्भाव की दृष्टि से उनके 'बफाती चाचा' आज भी प्रासंगिक हैं। हृदय-रोग से आक्रान्त होकर 16 जनवरी, 1962 को आप स्वर्गवासी हुए। सुलतानपुर जनपद के ही नहीं अपितु सम्पूर्ण हिन्दी वाङ्मय के वे शीर्षस्थ कवि हैं।

पं. गयाप्रसाद द्विवेदी 'प्रसाद' : इनका जन्म ज्येष्ठ कृष्ण 11, संवत् 1956 में गंगावली ग्राम में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा के बाद इन्होंने विद्वज्जनों के सान्निध्य एवं स्वाध्याय से ज्ञानार्जन किया। हिन्दी-संस्कृत भाषाओं के साथ-साथ योगशास्त्र का भी इन्हें सम्यक् ज्ञान था। ये स्वभाव से सरल एवं मृदुभाषी थे।

'कविकिङ्कर' रामगुलाम : इनका जन्म कार्तिक शुक्ल एकादशी, सवंत् 1948 में पूरे जैतराय (बड़गाँव) में हुआ था। इन्होंने संस्कृत-व्याकरण, काव्य, नीतिशास्त्र, छंद-शास्त्र तथा अलंकारों का अच्छा अध्ययन किया था। अमेठी के राजा ददन साहब ने इन्हें अमेठी में निवास हेतु एक बीघा जमीन देकर

पिङ्गलाचार्य की उपाधि से विभूषित किया था। अयोध्या के रानोपाली में श्री महन्त नारायणदास से इन्होंने गुरुदीक्षा ली थी। इनकी रचनाएँ अवधी, खड़ीबोली और ब्रज भाषा में हैं। इनकी प्रकाशित रचनाओं में कालिका-पचीसी, कृष्णकीर्तन, चारुचंद्रिका, श्री दुर्गासप्तशती (पद्यानुवाद), श्री सौमित्रि-सेवा रामलीला नाटक और अप्रकाशित रचनाओं में राम-सरोवर, पिंगल-प्रमोद, अलंकार-प्रदर्शन, सरस पिंगल तथा कृष्णचंद्रिका आती हैं। इन्होंने 'कविकिङ्कर' अपना उपनाम रखा था। विभिन्न देवी-देवताओं के प्रति इनके मन में आस्था थी। इनके अवधी छंदों में लिखे व्यंग्य बड़े मार्मिक एवं चुटीले हैं। 4 मार्च, 1975 में ये परलोकवासी हुए।

पं. श्रीपाल तिवारी : ये अमेठी के पश्चिम स्थित ग्राम खजुरी के निवासी थे इनमें उत्कृष्ट कोटि की काव्य-प्रतिभा थी। पहले ये बाबू लालप्रताप सिंह के यहाँ रहते और उनकी ओर से पत्रों का उत्तर पद्यबद्ध लिखकर भेजते थे। अमेठी के राजकुमार रणवीर सिंह ने इनकी कवित्व-शक्ति से प्रभावित होकर इन्हें अपने यहाँ नियुक्त कर लिया। रणवीर सिंह जी के असामयिक निधन पर इन्हें बड़ा दुःख हुआ। इन्होंने अपनी अनेक पद्यबद्ध श्रद्धांजलियाँ उन्हें अर्पित की हैं।

राजकुमार रणवीर सिंह : इनका जन्म 21 जुलाई, 1899 ई. में हुआ था। ये अमेठी के राजा भगवानबख्श सिंह के द्वितीय पुत्र थे। ये बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न होनहार युवक थे। सदाचार और सद्‌गुणों की वे खानि थे। अपने अल्पकालिक जीवन में जैसे वे मात्र सद्‌वृत्तियों का प्रसार करने आये थे। हर व्यक्ति के लिए वे आदरास्पद और प्रशंसा के पात्र थे। हिन्दी-संस्कृत का उन्हें गंभीर ज्ञान था। उन्होंने अनेक छोटे-छोटे उपन्यास, निबन्ध एवं कविताएँ लिखी हैं। वे हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के कट्टर पोषक थे।

राजर्षि रणञ्जय सिंह : 29 अप्रैल, 1901 ई. में जन्मे रणञ्जय सिंह जी अमेठी राज्य के तृतीय राजकुमार थे। राजा साहब अमेठी के रूप में क्षेत्रीय जनता तथा अन्य जनपदों एवं प्रदेशों के संभ्रान्त सज्जनों में आपका बड़ा आदर-सम्मान था। ये साधु-सात्विक स्वभाव के निरभिमान व्यक्ति थे। बचपन से ही काव्य-शास्त्र-विनोद में कालक्षेप करना इनका ध्येय रहा। ये अनेक भाषाओं के ज्ञाता, सहृदय कवि एवं गुणज्ञ महापुरुष थे। यावज्जीवन इनके यहाँ का वातावरण काव्यमय बना रहा। इनके सान्निध्य में रहकर दर्जनों लोग कवि बन गये हैं।

कविवर सतीप्रसाद : ये राजा लालमाधव सिंह (अमेठी) के आश्रित कवि थे। दोहा-चौपाई छंदों में इनकी 'भाषा-विन्ध्यमाहात्म्य' नामक एक पुस्तक बतायी जाती है। इस आधार पर लगता है कि ये विन्ध्य क्षेत्र के आस-पास के रहने वाले थे। वैसे ये बड़े प्रकृष्ट कवि थे। छंद-शास्त्र में ये सिद्धहस्त लगते हैं। लगभग 80 छंदों में इन्होंने अमेठी राज्य की वंशावली और माधव सिंह की कीर्ति का बखान किया है। कवित्त, छप्पय, त्रोटक, कुंडलिया, त्रिभंगी आदि छंदों में रचित इनका काव्य मनोरम है। अपने आश्रयदाता की दानवीरता का अतिशयोक्तिपूर्ण अद्‌भुत वर्णन इन्होंने किया है।

पं. ऋषिराम मिश्र : इनका जन्म अमेठी से 5 कि.मी. दक्षिण घाघूघार गाँव में हुआ था। अधिक दिनों तक ये अध्यापक रहे। स्वभाव से ये फक्कड़-घुमक्कड़ दिखते थे। नंदिनी-शतक, जवानी की पचीसी, शिविर-पचीसी, ददन-पचीसी, अमेठी- दोहावली, वीर सुभाष और कृष्णचरितमानस इनकी रचनाएँ हैं। कलेवर से ये सभी लघु हैं। वीररसपूर्ण छंद लिखने का इन्हें बड़ा शौक था। कविताएँ इनकी अवधी और खड़ी बोली में हैं।

ओंङ्कारनारायण मिश्र 'प्रणव' : 1 नवम्बर, 1917 ई. को जन्मे प्रणवजी का पैतृक निवास रौजा, पूरे रामदीन पंडित में है। राजा साहब अमेठी के कॉलेज में ये अध्यापक थे। ये राजा रणञ्जय सिंह के अत्यधिक स्नेहभाजन थे और उन्हीं के यहाँ रहते थे। हिन्दी और संस्कृत काव्य-रचना में आपकी समान पैठ है। संस्कृत श्लोकों में इन्होंने रणञ्जय-शतक की रचना की है। इनका 'सतीसूक्तिसुधा' नामक ग्रंथ 9 सर्गों और 1001 छंदों में लिखा गया है जिसमें दुर्गासप्तशती के आधार पर सती देवी की आराधना है। सती-शतक, वृकोदर-बावनी तथा पुण्य-चालीसा इनकी अन्य रचनाएँ हैं। खड़ी बोली और अवधी दोनों में आपकी रचनाएँ हैं। इनका प्रकृति-चित्रण सुन्दर बन पड़ा है।

बटुकबहादुर सिंह 'दद्दूबाबू' : ये अमेठी राज्यान्तर्गत करनाईपुर गाँव के जमींदार और राजा रणञ्जय सिंह जी के समवयस्क हैं। राजा साहब इन्हें लघुभ्राता की तरह स्नेह देते थे और इनका अधिक समय अमेठी-राजभवन में व्यतीत होता था। पं. गयाप्रसाद द्विवेदी और रामगुलाम कौशल भी इनके बालसखा-समान थे। कवित्त और सवैया छंदों में ये सुन्दर कविताएँ कर लेते हैं। प्रायः छंद लिखकर ये राजा साहब को समर्पित करते रहते थे। योग-विद्या का भी इन्हें अच्छा ज्ञान है।

पं. मुनीश जी : आप दियरा रियासत के समीप स्थित लामा गाँव के निवासी और परम देवी-भक्त हैं। वर्तमान युग में पंडित जी रीतिकालीन आचार्य कवियों की परम्परा के ध्वजा-वाहक हैं। ये पिङ्गल के प्रकाण्ड पण्डित हैं। अमेठी के तो ये राजकवि हैं। स्व. ददन साहब इन्हें अत्यधिक आदर-मान देते थे। कुछ वर्ष पूर्व लखनऊ में महामहिम राज्यपाल ने प्रदेश के पुरानी पीढ़ी के कवियों का सम्मान किया था, उनमें मुनीश जी धुरीण और अग्रगण्य थे। ये आशु-कवि हैं। दुर्गा-स्तुति-संबंधी अनेक छंद इन्होंने लिखे हैं। अमेठी आने पर ये सप्ताह भर कम से कम रोके जाते थे। इनकी काव्य-प्रतिभा की जितनी प्रशंसा की जाय, कम है। अमृतध्वनि-जैसे छंदों की सहज-आयास-रहित रचना यह प्रमाणित करती है कि वास्तव में इन्हें वाणी की सिद्धि प्राप्त है। राजर्षि रणञ्जय सिंह के निधन से इन्हें हार्दिक कष्ट हुआ। अनेक छंदों में उनके लिए इन्होंने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है।

नागेश्वरलाल 'निर्मम' : 1 जनवरी, 1942 ई. में जन्मे श्री निर्मम जी अधिक दिनों तक विकास खण्ड अमेठी में सेवारत रहे। इनकी साहित्य-साधना का अंकुर यहीं प्रस्फुटित हुआ। सम्प्रति ये अपने गाँव के पास मुसाफिरखाना विकास खण्ड कार्यालय में सेवारत हैं। इन्होंने अनेक श्रृंगारपरक मुक्तकों एवं गीतों की रचना की है, किन्तु इनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि ये सच्चे अर्थों में जनवादी और मानववादी कवि हैं। इन्होंने युग की पीड़ा को अभिव्यक्ति दी है और अपनी रचना के बहाने उनके हमदर्द बने हैं जिनका संगी-साथी कोई नहीं है। वास्तव में बचपन से इन्होंने जो देखा, जिस विषमता को झेला है, उसके प्रति इनके मन में एक विद्रोह और पीड़ा है। सहज संवेद्य इनकी रचनाओं में मानवीय चेतना की समर्थ प्रतिभा है। उसी लगन से आज भी ये उसका प्रस्फुटन करते जा रहे हैं।

जियालाल आर्य : आपका जन्म ग्राम पण्डरी में हुआ। आर्य जी अमेठी की ऊसर-बंजर धरती की हरियाली हैं, यहाँ की माटी के गौरव और इसकी महक हैं। वे भारतीय प्रशासनिक सेवा में बिहार सरकार के गृह-सचिव पद को सुशोभित कर चुके हैं। वे एक ईमानदार, अनुभवी, योग्य एवं कर्तव्य-परायण अधिकारी हैं। स्वभाव से निश्छल-निरभिमान, अति विनम्र और सरल-सात्विक हैं। गंभीर व्यक्तित्व और महनीय-चरित्र-संपन्न आर्य जी सहृदय संवेदनशील कवि भी हैं। 'जय बिरसा' आप द्वारा रचित एक उत्तम काव्य है जिसमें 1857 के स्वाधीनता-संग्राम में बिहार के आदिवासी पावन-चरित बिरसा के

योगदान का महत्व-मूल्यांकन किया गया है। इसके अतिरिक्त आपके कई गीत-संग्रह भी प्रकाशित हैं। अमेठी की धरती, यहाँ के लोकजीवन से आपका बड़ा लगाव है, उनके एक भावपूर्ण पत्र से इसका स्पष्ट पता चलता है।

विनोदचन्द्र पाण्डेय 'विनोद' : अमेठी के सुप्रतिष्ठित अधिवक्ता पं. विजयपाल पाण्डेय के आप होनहार सुपुत्र हैं। सम्प्रति ये उत्तर प्रदेश शासन की सेवा में वरिष्ठ अधिकारी हैं और सौभाग्य से उसी पण्डरी ग्राम में पैदा हुए हैं। कविता करने का शौक आपमें बचपन से ही था। ये वक्तृता-कुशल, मेधावी छात्र थे। 'जय सुभाष' नामक एक खण्डकाव्य और 'हृदयवीणा' जैसे अनेक गीत-संग्रह आपके प्रकाशित हैं। गीतों का वर्ण्य-विषय प्रायः प्रेम और शृंगार है। अनुभूति और अभिव्यक्ति में आपकी रचनाएँ अतीव मनोरम हैं।

जगदीशप्रसाद पाण्डेय 'पीयूष' : आपका जन्म अगस्त 1950 में अमेठी के कसारा ग्राम में हुआ था। प्रारंभ से ही आपकी रुचि साहित्य, कविता-लेखन, संपादन और पत्रकारिता के प्रति रही। पं. रामनरेश त्रिपाठी : एक युग, एक व्यक्ति; अवधी साहित्यः सर्वेक्षण और समीक्षा; लोक साहित्य के आयाम; लोक साहित्य में सरस प्रसंग; सोनिया गांधी : राजनीति की पवित्र गंगा तथा गांधी-गांधी-गांधी जैसी अनेक पुस्तकों का सफल संपादन आपके द्वारा संभव हुआ है। 'नीराजना', 'संभावना', 'लोकायतन' और 'बोली-बानी' जैसी पत्रिकाओं के प्रकाशन का श्रेय भी आपको है। सम्प्रति, आप राजनीति एवं पत्रकारिता से जुड़े हैं और अमेठी-समाचार (पाक्षिक) के संपादक हैं। युग-बोध इनकी रचनाओं में झाँकता है। 'अंधरे के हाथ बटेर', 'पानी पर हिमालय', 'सुयोधन' एवं 'तथागत' इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। कविताएँ प्रायः वीररसप्रधान और ओजगुण-संपन्न हैं। देश-प्रेम एवं सांस्कृतिक गरिमा से ये संपृक्त हैं। आदि-शक्ति दुर्गा से संबंधित अनेक सुन्दर छंद आपने लिखे हैं।

पं. आनन्दकुमार त्रिपाठी : आप स्व. पं. रामनरेश त्रिपाठी जी के सुपुत्र हैं। कवि-प्रतिभा इन्हें उत्तराधिकार में जैसे प्राप्त हुई हो। त्रिपाठी जी स्वाभिमानी स्वभाव के अधीतविद्य व्यक्ति हैं। 'खटोला' और 'बातचीत' हास्य-रसपूर्ण रचनाएँ हैं। 'पुण्यबाल' और 'सारिका' नामक दो अन्य काव्य-संकलन तथा 'अंगराज' महाकाव्य आपकी अमर-अनुपम कृति है। 'अंगराज' इनका एक मौलिक ओजस्वी वीर-काव्य है। इसमें 25 सर्ग हैं। इसमें उच्चतम राष्ट्रीय एवं मानवीय आदर्शों की उज्जवल झाँकी प्राप्त होती है। इस पर उत्तर प्रदेश शासन ने अपने सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार से इन्हें सम्मानित किया है। इसमें महाभारत के आदर्श कर्मवीर, महारथी कर्ण का चरित्र हिन्दी-संस्कृत के विविध छंदों में वर्णित किया गया है। कवि का काव्य-कौशल सराहनीय है। इनका वर्ण-विन्यास विलक्षण और छंदों का प्रभाव अद्भुत है।

शिवराम मिश्र 'चक्रवर्ती : ये पं. ऋषिराम जी के सुपुत्र हैं। अपने पिता के सान्निध्य में रहकर इन्होंने काव्य-रचना आरंभ की। उन्हीं की भाँति सुन्दर वीर रसपूर्ण छन्दों का प्रणयन आपने किया है। स्फुट मुक्तक आपने अधिक लिखे हैं।

राधेश्याम 'आर्य' : मुसाफिरखाना निवासी श्री आर्य जी व्यवसाय से एक कुशल अधिवक्ता हैं। आप 'रश्मिरथी' नामक पत्रिका के संपादक थे। साहित्यिक-सांस्कृतिक गतिविधियों में आप सदा से सक्रिय रहे हैं। आपका दृष्टिकोण मूल्यवादी एवं मानववादी है। भारत-भारतीयता के आप प्रबल समर्थक हैं, इसलिए अपनी संस्कृति, भाषा आदि के प्रति आग्रही हैं। सारतः वे जीवन के सत्पक्ष के उद्गाता और उसकी जय के आकांक्षी हैं। आज के पतनशील समाज के वे सच्चे दिशावाहक हैं।

सियाराम विश्वकर्मा 'पवन सुलतानपुरी' : गूँगेमऊ-निवासी पवन जी एक उत्साही युवा कवि हैं। समाज की विसंगतियों को देख इनका भावुक मन कराह उठता है और एक-एक के उन्मूलन के लिए वे बद्ध-परिकर दिखायी देते हैं। संकीर्णता, स्वार्थलिप्सा, सांप्रदायिकता, नशाखोरी, दहेज, वर्गभेद आदि से वे विचलित हैं, किन्तु निराश नहीं। प्रत्येक इस प्रकार के गढ़ को वे अपने हथौड़े की चोट से ढहाने का पुरजोर प्रयास कर रहे हैं। वे सुन्दर छंद, मुक्तक और गजलें लिख रहे हैं। समाज के प्रति उनका दायित्वबोध वास्तव में सराहनीय है।

लाल शीतलाशरण सिंह 'पतंजलि' : आप हरगाँव स्टेट के राजा हैं। कृषि में परास्नातक उपाधिधारी 'पतंजलि' जी सुन्दर कविताएँ करते हैं। वास्तव में हरगाँव बाबा सिद्धादास की साधना-भूमि है। वे भी संत-परंपरा के सुधीसाधक और वाणीकार संत थे। यहाँ का जन-मानस उनसे बड़ा प्रभावित है। लाल साहब अतुकान्त कविताएँ लिखते हैं। आज की अभाव-गर्भित, घुटनभरी जिन्दगी का उन्हें पूरा एहसास है। अतीत की सुखद स्मृतियाँ तो हैं, किन्तु उनका निरर्थक वर्तमान अब उनमें प्राण नहीं फूँक पा रहा है। अनुभूति और अभिव्यक्ति इनकी उत्तम है।

चन्द्रभानु सिंह 'भानु' : आप मुसाफिरखाना विद्यालय में लोकप्रिय अध्यापक हैं। ये आदर्श बघारने में विश्वास नहीं करते, अपितु उसे व्यावहारिक रूप देने हेतु तत्पर दीखते हैं। आज की उच्छृंखल राजनीति से इन्हें घृणा है, और जहाँ कथनी-करनी में एकता न हो, ऐसे व्यक्ति और समाज से ये अलग रहना चाहते हैं।

असविन्दकुमार द्विवेदी : अफोइया गाँव में 20 अक्टूबर 1958 को जन्मे श्री असविन्द जी आधुनिक अवधी कविता के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। ये अमेठी महाविद्यालय की सेवा में थे। कवि-सम्मेलनों में इनकी कविता की धूम मच जाती थी। सामान्य लोकजीवन के विविध पहलुओं का स्पर्श करती हुई इनकी कविताएँ अतीव हृद्य एवं मनोरंजनकारी होती हैं। इस युवाकवि के सुपरिपक्व अनुभवों एवं समर्थ अभिव्यक्ति को सुनकर मुक्त कंठ से उनकी सराहना करनी पड़ती है। अनेक अवसरों पर आकाशवाणी से इनकी कविताओं का प्रसारण हुआ है। 'बूँदाबादी' नामक इनका काव्य-संग्रह प्रकाशित है, अन्य अनेक अप्रकाशित रचना-संग्रह हैं। नमक, आलू, साइकिल, होली, भरत, जटायु मन, माटी जैसे विविध शीर्षकों पर इनकी भावपूर्ण अवधी कविताएँ लिखी गयी हैं। 7 मई 1999 ई. को यह माटी का कवि, पावन माटी में विलीन हो गया।

राजेन्द्रप्रसाद शुक्ल 'अमरेश' : 6 सितम्बर, 1956 को जन्मे अमरेश जी ग्राम खजुरी के निवासी हैं। इन दिनों ये अमेठी महाविद्यालय में सेवारत हैं, और अपने गाँव में कविवर श्रीपाल तिवारी के बाद आई साहित्यिक रिक्ति को पूरा कर रहे हैं। ये प्रायः वीररस-पूर्ण छंद लिखते हैं। छंदों में कुंडलिया, कवित्त, सवैया आदि प्रधान रूप से लिखते हैं।

रामअकबाल त्रिपाठी 'अनजान' : कादीपुर ग्राम्याञ्चल में उत्पन्न श्री 'अनजान' जी साकेत महाविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक हैं। ये सारस्वत-प्रतिभा सम्पन्न आशुकवि हैं। विविध छंदों में रचित आपकी कविताएँ साहित्य की अनुपम निधि हैं। कवि सम्मेलनों में आपकी मधुर स्वर-लहरी से श्रोता-समूह मंत्रमुग्ध रह जाता है। मंचीय कवियों में ये सुस्थापित एवं अग्रगण्य हैं। द्वादश सर्गात्मक महाकाव्य 'तुलसीदास' की रचना आपने की है। भारतीय समाज को तुलसी का अवदान महत्वपूर्ण है, इसीलिए वे मानते हैं कि 'वसुन्धरा के वैभव की परिभाषा तुलसीदास, भारतीय-जीवन-दर्शन की आशा

तुलसीदास'। इस रचना का कथ्य एवं शिल्प उत्तम बन पड़ा है। प्रकृति का सुन्दर वर्णन इसमें मिलता है। कुंडलिया, गीत, दोहा, सवैया आदि के लेखन में आपको सिद्धि प्राप्त है। इनके शृंगारिक सवैये कलात्मक दृष्टि से उत्तम हैं।

विजयनाथ पाण्डेय : ये दीनापुर के प्रसिद्ध कर्मकाण्डी पं. शोभनाथ जी के सुपुत्र हैं। संस्कारी परिवार में पैदा होने के कारण ये परम विनीत एवं साधु-प्रकृति के कवि हैं। साहित्य-सेवा का इन्हें व्यसन है। साहित्य में आचार्य उपाधिधारी श्री पाण्डेय अपनी रचनाओं में शुद्ध, परिमार्जित एवं संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग करते हैं। अनेक गीत इन्होंने लिखे हैं और छंद भी। इनमें कुछ शृंगार रस-पूर्ण हैं, शेष भक्ति एवं अध्यात्म प्रधान। 'भक्ति-गीतावली' इनका एक प्रकाशित काव्य-संग्रह है। पद-शैली में भी इनकी सुन्दर रचनाएँ लिखी गयी हैं। व्यवसाय से ये अध्यापन में हैं।

श्री दूधनाथ शुक्ल 'करुण' : साहित्य की अनेक विधाओं पर आपने लेखनी चलायी थी। 'सुलतानपुर जनपद का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान' विषय पर इन्होंने एक प्रौढ़ काव्य लिखा था। 'करुणायतन' इनकी कविताओं का संग्रह है। ये प्रदेश के यशस्वी पत्रकार, अध्यापक एवं समाजसेवी थे। ये सुन्दर मुक्तक लिखते थे। अल्पायु में ही एक मार्ग-दुर्घटना में 'करुण' जी का कारुणिक निधन हो गया।

डॉ. सुशीलकुमार पाण्डेय : छायावादी कृति 'आँसू' की शैली में लिखे गये आपके 'प्रतीक्षा' नामक खण्डकाव्य ने पर्याप्त ख्याति अर्जित की है। सुमधुर छंदों में रचित 'प्रतीक्षा' एक सुन्दर विरह-काव्य है। इसकी अनुभूति निश्चयेन हृदय-द्रावक है। डॉ. पाण्डेय जी अन्वेषी विद्वान् हैं। 17 सर्गों तथा 1005 छंदों में आपने 'कौण्डिन्य' महाकाव्य की रचना की है। 'अगस्त्य' भी आपकी एक प्रबन्ध रचना है। 'कवि की बातें' इनका हास्य-व्यंग्य संग्रह है। 'शिवकाम' भी आपकी सुन्दर रचना है। 'इन्तजार' उर्दू गीतों का संग्रह तथा 'भावनिकुञ्ज' निबन्धों का संकलन है। अभिज्ञान-शाकुन्तलम् एवं कामायनी का तुलनात्मक अनुशीलन भी इन्होंने किया है। सम्प्रति डॉ. पाण्डेय कादीपुर महाविद्यालय में संस्कृत के प्राध्यापक हैं।

श्री आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप': इनकी 'चिनगारी' बाल-साहित्य की उत्कृष्ट कृति है। ये अत्यन्त कर्मठ एवं श्रमशील साहित्यकार हैं। 'सावित्री' और 'दमयन्ती' पर भी इन्होंने खण्डकाव्य लिखे हैं। श्री मथुराप्रसाद सिंह 'हनुमद्भक्त' एक रससिद्ध प्रबंधकार हैं। 17 सर्गों और 1060 छंदों में रचित आपका 'ज्वाला' नामक प्रबन्ध काव्य अतीव मनोवैज्ञानिक एवं मानवीय दृष्टिकोण से संयुक्त है। 'कलिका' 'शिविका' तथा 'अल्पिका' इनके गीत संग्रह है। आपने अनेक सुन्दर छंद भी लिखे हैं।

इनके अतिरिक्त अन्य अनेक साहित्यकार समिति के सदस्य हैं। डॉ. माताप्रसाद सिंह सुन्दर गद्य-गीतों के रचनाकार हैं। श्री चन्द्रपाल उपाध्याय 'चन्द्र' कृत 'चन्द्रिका' उनके गीतों का अनूठा संकलन है। श्री रामकरन पाण्डेय 'विमल' के फुटकर गीतों के संग्रह का नाम 'गीत गंगा' है। डॉ. ओंकारनाथ द्विवेदी हास्य-व्यंग्य-प्रधान गद्य-गीतों के रचनाकार हैं। 'मधुमालिनी' इनका एक उत्कृष्ट खण्डकाव्य है। देवदूत, मयूरशिखा आदि इनकी अन्य कृतियाँ हैं। डॉ. ओमप्रकाश दूबे 'प्रकाश' कृत 'कजरौटा' और 'दियालेसान' हास्य व्यंग्य के मधुर संग्रह हैं। जनवाद के प्रमुख गायक श्री राममूर्ति यादव 'अनुरागी', स्वराज्यबहादुर सिंह 'अटल', ओंकारनाथ श्रीवास्तव 'ओंकार', कृपाशंकरलाल श्रीवास्तव 'शंकर', लालमणि मिश्र 'मणि', रामकुबेर सिंह, सुमन सुलतानपुरी, वंशराज वर्मा 'प्रलयंकर', रामकुमार 'अनुरागी', गिरीशनारायण 'गिरीश', डॉ. अम्बिकाप्रसाद मिश्र आदि अन्य ऐसे प्रमुख गीतकार, कहानीकार और उपन्यास लेखक हैं,

जिनकी हिन्दी-सेवा से यह जनपद उपकृत है।

त्रिलोचन शास्त्री : आधुनिक हिन्दी कविता में दीप्तिमान् व्यक्तित्व के धनी त्रिलोचन जी इसी कादीपुर की धरती की देन हैं। आज की जनवादी हिन्दी कविता की वृहत्त्रयी के वे एक प्रमुख एवं सशक्त हस्ताक्षर हैं। उन्होंने प्रारंभ से ही प्रगतिशील साहित्यिक आन्दोलनों में भाग लिया है। वे मूलतः प्रगतिशील कवि हैं। बीसवीं सदी के चौथे दशक के आरंभ से ही वे लगातार लिखते आ रहे हैं। उनके दर्जनों काव्य संग्रह अब तक प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें--तुम्हें सौंपता हूँ, चैती गुलाब और बुलबुल, शब्दशील, कर्मवाची शब्द हैं ये, अनकहनी भी कुछ कहनी है, उस जनपद का कवि हूँ, फूल नाम है एक, सबका अपना आकाश आदि प्रमुख हैं। उनकी अवधी कविताओं का एक संग्रह 'अमोला' नाम से सद्यः प्रकाशित हुआ है।

वे सर्वहारा के, आम आदमी के कवि हैं और सदैव अंधकार से जूझकर प्रकाश पाने की कोशिश में रहते हैं। सांस्कृतिक निधियों की रक्षा के साथ-साथ उनमें नवनिर्माण की अभिलाषा है। गरीबी और अपमान से वे टूटते नहीं अपितु और अधिक तनकर खड़े होते हैं। असंभव को पाने के प्रयास में उन्हें हँसे जाने का भय नहीं होता। 'चरैवेति' उनके जीवन का मूल मंत्र है। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' उनका आदर्श है। शोषक और शोषित की धारणा को वे निर्मूल करना चाहते हैं। पूँजीपतियों के प्रति उनके मन में तीव्र आक्रोश भरा हुआ है। किसान-मजदूर जनता के प्रतिनिधि हैं, उनकी अपरिमित शक्ति के नाते ही सारी विश्व-मानवता हरी-भरी है। इसलिए वे सदैव इनकी प्रबल पक्षधरता करते हैं। वे माटी के कवि हैं, ग्रामीण मानस के कवि हैं। वे ठेठ देशी कवि हैं। उनकी कविताओं में लोकधुन, लोकलय और लोकछंदों की भरमार है। 'सानेट' का यह कवि वास्तव में गाँव-रस से सराबोर है। वे इस जनपद की बहुमूल्य संपदा हैं। अभी हाल ही में उनका निधन हो गया।

जनपद सुलतानपुर में अमेठी, कादीपुर और जामो (मुसाफिरखाना) ऐसे क्षेत्र हैं जिन्हें साहित्यिक चेतना का प्रमुख केन्द्र माना जा सकता है। अंन्य अंचलों में साहित्यिक गतिविधियों में उतनी जागरूकता नहीं दिखायी देती। जामो प्रक्षेत्र के कतिपय शेष-विशेष कवियों का विवरण इस प्रकार है :

भगवतीप्रसाद द्विवेदी : बीसवीं शती के प्रारम्भ में ग्राम कटारी में इनका जन्म हुआ था। ये अत्यन्त संस्कारवान् ब्राह्मण परिवार से सम्बद्ध थे। अनेक सुन्दर छंदों में इन्होंने अपनी कवित्वशक्ति का परिचय दिया है। इनके अनेक फुटकर छंद उपलब्ध हैं।

कालीदत्त द्विवेदी 'दिव्य' : 25 मई, 1944 में ग्राम भोएँ में उत्पन्न दिव्यजी में वंशानुगत काव्य-प्रतिभा पायी जाती है। ये स्वभावतः स्वाभिमानी, निश्छल एवं साधु-सात्विक हैं। इस युग में ऐसी सद्वृत्ति वाले लोग सहज सुलभ नहीं हैं। आज के मूल्य-संकट से इनका पीड़ित होना स्वाभाविक है। युग-जीवन का दुर्निवार प्रभाव इनके मानस पर पड़ा है जो यथास्थान अभिव्यक्ति पाता चलता है। आपकी अनेक कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। ये मुक्तक, कवित्त, सवैया, छंद, गीत और पद शैली में कविताएँ लिखते हैं। 'द्विति' और 'श्रीकृष्णगुणागरी' उनके अप्रकाशित काव्य-संग्रह हैं।

डॉ. विशाल त्रिपाठी : पूरे सरयाँ तिवारी निवासी डॉ. विशाल त्रिपाठी सम्प्रति शिक्षा निदेशालय दिल्ली के पत्राचार विद्यालय में संस्कृत के प्राध्यापक हैं। संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, में समान रूप से आप लिखते हैं। आप एक सुधी समीक्षक एवं संवेदनशील कवि हैं। संस्कृत एवं हिन्दी दोनों में आपकी कविताएँ सुन्दर होती हैं। आपके गीत बड़े भावपूर्ण होते हैं। इन्होंने अनेक पत्रिकाओं का संपादन तथा

शोधपूर्ण ग्रंथों का प्रणयन किया है।

लालताप्रसाद द्विवेदी 'अगम' : 20 सितम्बर, 1962 में जन्मे 'अगम'जी नवोदित कवि हैं। संस्कृत में एम.ए. करने के उपरांत सम्प्रति ये अवध विश्वविद्यालय से संस्कृत एवं शिक्षाशास्त्र में शोध कर चुके हैं। आचारवान् कवि-पिता की संतान होने के नाते इनमें सुसंस्कार कूट- कूटकर भरा है। नैतिक-आध्यात्मिक दृष्टिकोण लेकर अनेक छंदों की रचना इन्होंने की है। सुबुद्धि-सम्पन्न 'अगम' जी में सर्वत्र लोक-कल्याण की भावना दिखायी देती है।

परमानन्द पाण्डेय 'आशुकवि' : आप ग्राम रामपुर चौधरी के निवासी हैं। आधुनिकता-बोध लेकर लिखी गयी इनकी रचनाएँ बहुत भावपूर्ण होती हैं। ये अतुकांत कविताएँ लिखते हैं जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं।

रामललन पाण्डेय : साल्हीपुर निवासी पाण्डेय जी गीत और अगीत दोनों विधाओं में लिखते हैं। आपके अगीत बड़े भाव-प्रधान और व्यंग्यपूर्ण हुआ करते हैं। इनमें जीवन के अनेक मधुर-तिक्त भावों को अभिव्यक्ति मिली है। इनका लेखन नियमित होता है।

इनके अतिरिक्त भी इस जनपद के अनेक कवि हैं जो माँ भारती की सेवा में संलग्न हैं। चन्द्रशेखर आर्य (वलीपुर), शिवबालक सत्संगी 'किंकर' (भवानीगढ़), ओंकार सिंह विभाकर (उमरा), राजकवि रामदुलार (कुड़वार), बांकेबिहारी सिंह एडवोकेट, जाहिल सुलतानपुरी, वीरेन्द्र कुँवर (सुलतानपुर), भवानीप्रसाद पाठक 'नीरज', भोलानाथ पाठक 'भ्रमर' (ग्राम रुदौली), हनुमंतप्रसाद तिवारी (दादरा), शिवभूषण ओझा 'व्याकुल', आत्माराम त्रिपाठी 'प्रलयंकर' (मनौली), रामअधारसिंह (रुनवा), दूधनारायण मिश्र, बलराम त्रिपाठी (सोनारी), रामकिशोर सिंह (सूरापुर), कालीप्रसाद 'मृग', रुद्रदत्त त्रिपाठी 'मधुकर' (मुसाफिरखाना), गजेन्द्र चांद्रायण, आचार्य नन्दकिशोर पाण्डेय 'अशांत', गिरिजाशंकर (जामो), पं. रामसुमेर जी, 'हरिओऽम्', रामसेवक पाण्डेय, सत्यनारायण शर्मा (अमेठी), सामवेदी जी, त्रिभुवन नारायण 'बिम्ब' (गौरीगंज), जैसे अनेक नाम हैं जिन्हें उनकी काव्य-रचना के लिए उल्लेखित किया जा सकता है।

डॉ. सुरेश 'व्यथित' : अमेठी के नयी पीढ़ी के हिन्दी कवियों में 'डॉ. सुरेश' एक अति लोकप्रिय और महत्वपूर्ण नाम है। ये अमेठी खास (मुहल्ला कायस्थाना) के निवासी हैं। विद्यार्थी जीवन से ही कविता के प्रति इनका बड़ा रुझान था। पहले ये मुक्तक और प्रेम-गीत लिखते थे। धीरे-धीरे गजल और नवगीत लिखने लगे। मुक्तक इनके बड़े जोरदार होते थे। इनका प्रेम-चिन्तन अपने ढंग का अनोखा ओर विशिष्ट था :

'प्रेम को तुम प्रेम रहने दो न बदलो वासना में,
प्रेम का अस्तित्व ही मिट जाएगा इस कामना में।'

बहुत दिनों तक उनका यह गीत जन-जन के कंठ में गूँजता रहा। कवि-सम्मेलनों के माध्यम से आपको अतीव ख्याति मिली। श्रोता इनके सुकंठ गायन को सुनकर आत्मविभोर हो जाते हैं। साहित्य को इन्होंने एक से एक श्रेष्ठ गीत और गजल दिये हैं। युग-जीवन की स्थिति-परिस्थिति इन्हें झकझोरती है। अन्ततः वे अनुभूतियाँ अभिव्यक्ति बनकर फूटती हैं। आपातकाल के दौरान लिखी गयी उनकी कविता आज भी ताजी लगती है। डॉ. शम्भुनाथ सिंह के सान्निध्य में (हिन्दी विषय में) उन्होंने अपना शोधकार्य पूर्ण किया। डॉ. सिंह द्वारा संपादित 'नवगीत-दशक' के कवियों में इन्हें उल्लेखनीय स्थान मिला है। आपके अनेक गीतों के कैसेट भी तैयार किये गये हैं। मंचीय कवियों में देश-स्तर पर आप विख्यात

हैं। सामाजिक एवं वैयक्तिक जीवन की विसंगति, घुटन और पीड़ा को इनके गीतों में अभिव्यक्ति मिली है। बढ़ती हुई साम्प्रदायिकता और आतंकवाद जिस प्रकार देश को जर्जर बना रहे हैं, वास्तव में यह चिन्त्य है। डॉ. सुरेश अमेठी के ही नहीं, अपितु देश के गौरव हैं।

सुलतानपुर के आधुनिक **अवधी कवियों** में सर्वश्री रामबरन पाण्डेय 'विकल', चन्द्रप्रकाश मंजुल, रामबदन 'पथिक', रामेश्वर सिंह 'निराश', सुरेश शुक्ल एवं गाफिल सुलतानपुरी उल्लेखनीय हैं। सतनामी संप्रदाय के पुराने शीर्षस्थ संत कवियों में उमापुर (शुकुल बाजार) के नवलदास का नाम विशेष महत्वपूर्ण है। सेमरी अंचल से माधवव्यास का नाम अतीव आदरास्पद है किन्तु इनकी रचनाएँ नहीं के बराबर मिलती हैं। जनपद के अन्य धुरीण रचनाकारों में बाबू जगपति सिंह, डॉ. जयसिंह 'व्यथित', देवरानायण पाठक, मदनमोहन पाण्डेय 'मनोज', श्री शोभनाथ जी, स्व. मानबहादुर सिंह, राजपाल पाण्डेय (पंडरी), कृष्णमणि चतुर्वेदी 'मैत्रेय', दयाराम अटल, जयंत त्रिपाठी, अजमल सुलतानपुरी, मथुरा प्रसाद 'जटायु', नन्दल हितैषी, डॉ. डी.एम.मिश्र, बैजनाथ शुक्ल 'भव्य', डॉ. जगदीश खरे, मजरूह सुलतानपुरी, शंकर सुलतानपुरी आदि की गणना होती है। इनमें से अनेक कवि इतने स्तरीय हैं जिन पर स्वतंत्र शोध किए जा चुके हैं और अनेक पर करणीय हैं। इस क्रम में 'तुलसी तरु' के संपादक डॉ. त्रिभुवन नाथ चौबे तथा स्व. राधेश्याम आर्य (मुसाफिरखाना) भी विशेष स्मरणीय हैं। मानवतावादी विचारों के सम्पोषक सहज, सरल, निश्छल व्यक्तित्व के धीन श्री आर्य जी ने राष्ट्र एवं राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा के लिए निरन्तर 28 वर्षों तक 'रश्मिरथी' का प्रकाशन करके अनेक स्थानीय एवं देश स्तरीय रचनाकारों को प्रोत्साहित किया है। निश्चय ही अपने इस कृतित्व के लिए वे साहित्य समाराधकों के लिए प्रेरणास्रोत एवं चिरस्मरणीय रहेंगे। शोध-समीक्षा एवं संपादन में डॉ. कमल नयन पाण्डेय एवं डॉ. राधेश्याम सिंह ने जनपद को नई धार दिया है। लोकमन के गहन पारखी श्री पाण्डेय जी 'युग तेवर' का सफल संपादन कर रहे हैं।

अन्ततः, सुलतानपुर की साहित्य-चेतना-विषयक इस अनुशीलन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह जनपद लगभग पाँच-छह शताब्दियों के साहित्येतिहास को अपने भीतर समेटे हुए है। इस सुदीर्घावधि में अनेक ऐसे महत्वपूर्ण कवि और साहित्यकार हुए हैं जिन्होंने अपने कृतित्व से हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि की है। गद्य हो या पद्य, कथासाहित्य हो अथवा लोकसाहित्य, यहाँ के रचनाकारों द्वारा बहुआयामी विपुल साहित्य का सृजन किया गया है। अमेठी तो विशेषकर अपनी साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिरुचि और उसके उत्कर्ष के लिए 'लहुरी-काशी' के नाम से जाना गया है। हिन्दी-साहित्य की सेवा और उसके उन्नयन में यहाँ के राजवंश का सक्रिय योगदान रहा है। इतना सब होने के बावजूद एक-दो कवियों को छोड़कर साहित्येतिहासकारों ने अन्य किसी का नामोल्लेख अपने इतिहास-ग्रंथों में नहीं किया है। आवश्यकता इस बात की है कि भविष्य में जो भी साहित्येतिहास लिखा जाय, उसमें इन साहित्यसेवियों को उचित स्थान और आदर दिया जाय। यही उनके कृतित्व का सम्यक् मूल्यांकन होगा। इतिहासकारों और शोधार्थियों का सम्मिलित दायित्व है कि वे उन्हें अंधकार के गह्वर से निकालकर सुधीजनों के सम्मुख लावें। वास्तव में इस जनपद के इन साहित्यकारों की सेवा के लिए हमें उनका ऋणी और आभारी होना चाहिए। गर्व इस बात का है कि यह चेतना आज भी उसी दीप्ति और चटकाई से जीवन्त-जाग्रत है। (उपर्युक्त लेख जनपद की समग्र साहित्य चेतना पर है, जिसमें अवधी भी शामिल है। अवधी कवियों की खास जानकारी के लिए पीछे प्रदीप जी की सूची देखें।)

लखनऊ जनपद के अवधी-रचनाकार

डॉ. उमाशंकर शुक्ल

लखनऊ प्रारंभ से ही साहित्य, संस्कृति और कला का केन्द्र रहा है। नवाबों के काल में इसे साहित्य तथा कला के क्षेत्र में विशेष ख्याति मिली। अन्य विविध कलाओं के साथ ही काव्य-कला के विकास-विस्तार की दृष्टि से भी लखनऊ का स्थान महत्वपूर्ण है। हिन्दी खड़ी बोली के अतिरिक्त अवधी-काव्य के समुन्नयन में भी लखनऊ का विशिष्ट योगदान है। यहाँ लखनऊ के प्रमुख अवधी कवियों का संक्षिप्त उल्लेख किया जा रहा है :

ललकदास–आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास (पृ. 385-86) में इनका परिचय देते हुए लिखा है, 'बेनी कवि के भँड़ीवा से ये लखनऊ के कोई कंठीधारी महन्त जान पड़ते हैं, जो अपनी शिष्य-मण्डली के साथ इधर-उधर फिरा करते थे। अतः संवत् 1680 और 1880 के बीच इनका वर्तमान रहना अनुमान किया जा सकता है। इन्होंने 'सत्योपाख्यान' नामक एक बड़ा वर्णनात्मक ग्रंथ लिखा है जिसमें रामचन्द्र जी के जन्म से लेकर विवाह तक की कथा बड़े विस्तार के साथ वर्णित है। इस ग्रंथ का उद्देश्य कौशल के साथ कथा चलाने का नहीं, बल्कि जन्म की बधाई, बाललीला, होली, जलक्रीड़ा, झूला, विवाहोत्सव आदि का बड़े ब्यौरे और विस्तार के साथ वर्णन करने का है। जो उद्देश्य महाराज रघुराज सिंह के 'रामस्वयंवर' का है, वही इसका भी समझिए। पर इसमें सादगी है और यह केवल दोहे-चौपाइयों में लिखा गया है। वर्णन करने में ललकदास जी ने भाषा-कवियों के भाव तो इकट्ठे किये ही हैं, संस्कृत-कवियों के भाव भी वहीं रखे हैं। रचना अच्छी जान पड़ती है। कुछ चौपाइयाँ देखिए–

धरि इक अंक राम को माता। लह्यौ मोद लखि मुख मृदु गाता।
दंत कुंद मुकुता सम सोहै। बंधु जीव सम जीभ बिगोहै।
किसलय सधर अधर छबि छाजै। इन्द्रनील सम गंड बिराजै।
सुंदर चिबुक नासिका सोहै। कुंकुम तिलक चिलक मन मोहै।
काम चाप सम भृकुटि बिराजैं। अलक कलित अति ही छवि छाजैं।
यहि बिधि सकल राम के अंगा। लखि चूमति जननी सुख संगा।'

(स्व.) प्रयागनारायण मिश्र–सुप्रसिद्ध उपन्यासकार स्व. अमृतलाल नागर ने 'हिन्दी के पुराने पुरखे की भूली-बिसरी काव्य-कृति' शीर्षक के अन्तर्गत मिश्र जी के सम्बन्ध में लिखा है–"लखनऊ के दौलतगंज निवासी पं. प्रयागनारायण जी मिश्र ने 'राघवगीत' की रचना की थी। पुस्तक का दूसरा संस्करण सन् 1912 में प्रकाशित हुआ था। जहाँ तक मुझे याद पड़ता है, मेरे स्वर्गीय पितामह के पुस्तक-संग्रह में मैंने 'राघवगीत' का प्रथम संस्करण भी देखा था जो स्व. साह मदनमोहन के द्वारा स्थापित 'लक्ष्मण-साहित्य-भण्डार' से कदाचित् सन् 1909 ई. में प्रकाशित हुआ था। उस समय मिश्र जी के 'राघवगीत' की बड़ी चर्चा हुई थी। 'माडर्न रिव्यू' 'एडवोकेट', 'लीडर' 'हिन्दी बंगवासी', 'निगमागमचन्द्रिका',

'क्षत्रियमित्र', 'नागरी-प्रचारक' आदि— हिन्दी-अँग्रेजी के तत्कालीन दैनिक और मासिक पत्रों में 'राघवगीत' की बड़ी प्रशंसा की गयी थी।" (श्रीराघवगीत : तृ.सं., भूमिका)

'राघवगीत' में रामजन्म से लेकर लंका-विजय करके पुष्पक विमान से सीता-सहित राम के अयोध्या-आगमन तक के विविध मार्मिक प्रसंगों को विशेषतः गेय पदों के माध्यम से बड़े मनोरम तथा आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसका उद्देश्य राम-कथा को रंग-मंच के माध्यम से उपस्थित करना रहा है। दोहा, रोला, पद आदि विविध छन्दों का सफल उपयोग इस कृति की विशेषता है। इसका साहित्यिक स्तर ऊँचा है। भाषा ब्रज से प्रभावित अवधी है।

द्वारिकाप्रसाद यादव 'यदुचन्द'—यदुचन्द जी का जन्म लखनऊ जिले के सिसेंडी नामक ग्राम में 1 फरवरी, 1906 ई. को हुआ था। इनके पिता बन्दीदीन यादव एक सम्पन्न किसान थे। वे लखनऊ के 'कोर्ट आफ वार्ड्स' में मोहनलालगंज क्षेत्र के जिलेदार भी थे। यदुचन्द जी ने सन् 1922 ई. में वर्नाक्युलर फाइनल परीक्षा उत्तीर्ण की और जिला बोर्ड लखनऊ में अध्यापक हो गए। कालान्तर में वे म्यूनिसिपल बोर्ड के जूनियर हाई स्कूल में भी अध्यापक रहे और अपनी सेवावधि के अन्तिम 5 वर्ष तक वे अमीनाबाद इण्टर कालेज में जूनियर कक्षाओं में अध्यापन करते रहे। 1966 ई. में सेवा-निवृत्त होकर सिसेंडी चले आए। सन् 1983 में उनका देहान्त हो गया।

यदुचन्द जी माधुरी-सम्पादक पं. रूपनारायण पाण्डेय से प्रेरणा प्राप्त कर काव्यक्षेत्र में आए थे। उनकी कुछ कविताएँ माधुरी के मुख-पृष्ठ पर छपी थीं। वे अवधी के बड़े समर्थ कवि थे। यद्यपि उनका कोई काव्य-संकलन या पुस्तक प्रकाशित नहीं है, तथापि 'बिरवा' (त्रैमासिक), 1 जनवरी, 89 अंक में 'बतकही' शीर्षक के अन्तर्गत डॉ. निशंक द्वारा संकलित उनके 53 छन्द प्रकाशित हुए हैं। 'अवधी' पत्रिका (फैजाबाद) के 1 मार्च, 1987 के अंक में 'अल्पज्ञात अवधी-कवि : यदुचन्द' शीर्षक डॉ. निशंक के लेख से यदुचन्द जी की काव्यशक्ति का यथेष्ट परिचय मिलता है।

देवानन्द साहब—लखनऊ जिले के गोसाईगंज के निवासी देवानन्द साहब का जन्म 1900 ई. के लगभग हुआ था। इनकी भाव-सम्पदा सन्त-काव्य-परम्परा से सम्बद्ध है। इनके पद उत्तम हैं। भाषा व्यावहारिक है। एक उदाहरणं द्रष्टव्य है—

रामनगर को चला व्यौपरिया।
सत्य-भक्ति की गठरी लादे, घूमत फिरत डगर डगरिया।
पाँच-पचीस चोरवा भय लगते, इनसे लेउ छुटकरिया।
सत्यगुरू और बेद संग चल, नहिं जीति सकै बरियरिया।
सात शिकारी, चौदह व्याधे, एक कनक एक तिरिया।
इन ठगवन ते सँभरि के चलियौ, करिकै चारिहु अंश विचरिया।
खण्ड सोरह और सत्तरह तत्व पर अधर दीप की होय उजरिया।

श्री शारदाप्रसादवर्मा 'भुशुंडि—हास्य-रस के जाने-माने कवि 'भुशुण्डि' जी का जन्म बैशाख, सुदी सप्तमी, शुक्रवार, संवत् 1968 में कैम्बे, जिला इलाहाबाद में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री मेवालाल तथा माता का नाम जेजी था। इनके पिता अपने क्षेत्र के अच्छे वैद्य थे।

भुशुण्डि जी ने सन् 1930 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से एडमिशन परीक्षा उत्तीर्ण की और 1932 में वन विभाग में कार्य करने लगे। कुछ समय बाद वन विभाग की सेवा छोड़कर वे पनुः इलाहाबाद लौट आये और सन् 1937 में इलाहाबाद से लखनऊ आ गये। यहाँ वे नगरपालिका में कार्य करने लगे। इसके पूर्व इनका कोई उपनाम नहीं था। 'भुशुण्डि' उपनाम लखनऊ में ही रखा। नगरपालिका की सेवा में रहते हुए भी उन्होंने इण्टर, बी.ए. तथा साहित्यरत्न की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की।

लखनऊ में ये सम्पादकाचार्य श्री अंबिकाप्रसाद बाजपेयी, श्री श्यामबिहारी मिश्र (मिश्रबन्धु), पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी, श्री रूपनारायण पाण्डेय, श्री अमृतलाल नागर, श्री ज्ञानचन्द्र जैन, श्री यशपाल, श्री भगवतीचरण वर्मा, डॉ. भगीरथ मिश्र, डॉ. प्रेमनारायण टंडन प्रभृति विद्वानों के सम्पर्क में आये। विशेषतः अपने हास्य-रस के दोहों और कुण्डलियों के लिए उन्हें अच्छी ख्याति मिली। इन्होंने लगभग 800 दोहे और और 500 कुण्डलियों की रचना की है। सम्प्रति भुशुण्डि जी 223, राजेन्द्रनगर, लखनऊ में रहते हैं।

भुशुण्डि जी प्रमुखतः खड़ी बोली के रचनाकार हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने ब्रज और अवधी में भी रचनाएँ की हैं। उनकी एक दर्जन से अधिक पुस्तकें हैं। अवधी में उन्होंने लगभग तीस कविताएँ लिखी हैं जो "अवधी की बहार" शीर्षक संग्रह में हैं। यह काव्य-संग्रह अभी अप्रकाशित है। सन् 1950 में लिखित 'अब लखनऊ न छ्वाड़ा जाई' शीर्षक कविता यहाँ उद्धृत है–

अब लखनऊ न छ्वाड़ा जाई।
छ्वाड़ति छ्वाड़ति उमर खिसकि गइ, धरिसि बुढ़ापा आई।
बड़े भाग ते कुर्सी पावा, कइसे कहौ गँवाई।
चालिस ते तनखाह साठ भइ, औ पचीस महँगाई।
जौ औ चना छुई ना तनकी, नित हम गोहूँ खोई।
चचा हमार भूमिधर बनिगे, अन्नु रहे उपजाई।
भाई रासन माँ इसपेक्टर, करत है रकम सवाई।
लरिकौना मुर्गी पालै माँ, दूनी करै कमाई।
औ प्रोग्राम रेडियो भीतर, पावै लाग लुगाई।
चारि सनीमा ते चौदह भे, होटल कै अधिकाई।
चमक-दमक लखि हमरे पुर की, इन्द्रउ रहे सिहाई।
कह भुशुण्डि जमराजपुरी का, जाइ हमारि बलाई।
मौत जो हमरे समुहे आई, थैली देब थम्हाई।

श्री राजेशदयालु 'राजेश'–राजेश जी का जन्म सन् 1923 में लखनऊ में हुआ था। इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम. ए. किया। साहित्य-साधना और भगवद्भक्ति इनके प्रिय क्षेत्र रहे हैं। भक्ति, श्रृङ्गार, प्रकृति, युग-बोध आदि इनकी कविता का क्षेत्र हैं अवधी में 'बरवै हजारा' की रचना करके इन्होंने आधुनिक अवधी-काव्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है।

डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'–खड़ीबोली, अवधी तथा ब्रजभाषा के लब्ध-प्रतिष्ठ कवि डॉ. निशंक का जन्म कार्तिक कृष्ण चतुर्थी, संवत् 1975 वि. में भगवन्तनगर, जिला हरदोई में हुआ था। पहली कविता उन्होंने 'टोडरमल' पर लिखी थी, जब छठी कक्षा में थे। सन् 1935 में नवीं कक्षा के छात्र रूप में उन्हें हरदोई की कविता प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार मिला था। सन् 1938 में वे लखनऊ आ गए थे। यहाँ आकर उन्होंने हितैषी, निराला, सोहनलाल द्विवेदी, पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी, आशुकवि जगमोहननाथ अवस्थी से प्रेरणा प्राप्त की और काव्य-क्षेत्र में अग्रसर हुए। सन् 39 में वे सनेही जी के सम्पर्क में आये और बाद में 'सनेहीमण्डल' के कवियों में गिने जाने लगे। सन् 43 में उनका परिचय पं. रूपनारायण पाण्डेय से हुआ और सन् 1950 से उनकी रचनाएँ 'माधुरी' के मुख-पृष्ठ पर छपने लगीं। सन् 1951 में वे कान्यकुब्ज कॉलेज, लखनऊ में सेवा-रत हुए। उन्होंने डॉ. भगीरथ मिश्र के निर्देशन में 'हिन्दी में सवैया साहित्य' विषय पर सन् 1964 में लखनऊ विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. उपाधि प्राप्त की। 1973 से 1983 की दीर्घ कालावधि तक उन्होंने 'सुकवि-विनोद' (काव्य-मासिक) का सफल सम्पादन किया। उनकी साहित्य-सेवा से प्रभावित होकर उ.प्र. शासन ने उन्हें कई बार पुरस्कृत और सम्मानित किया।

'पुरवाई' डॉ. निशंक की अवधी कविताओं का श्रेष्ठ संकलन है। यह काव्य- संग्रह अभी अप्रकाशित है। इसमें भारतीय अस्मिता के गौरव, पाश्चात्य सभ्यता के कुप्रभाव, आज के ग्राम्य तथा नागरिक परिवेश के यथार्थ, प्रकृति-चित्रण, राजनीति की विषाक्तता, विघटन और आतंकवाद तथा नव-जागरण की चेतना आदि से सम्बन्धित खास रचनाएँ संकलित हैं। दोहा, सवैया, कवित्त, लोकधुन पर आधृत गीत आदि विविध छन्द-रूपों का सफल उपयोग-प्रयोग निशंक जी की सारस्वत-साधना की सहज परिणति है।

श्री विश्वनाथ सिंह 'विकल गोंडवी'–अवधी-जगत् के लोकप्रिय कवि 'विकल गोंडवी' का जन्म 8 फरवरी, 1924 ई. को मोतीगंज, जिला गोण्डा में हुआ था। सन् 1937-38 से वे काव्य-रचना की ओर उन्मुख हुए। लगभग एक वर्ष वे मनकापुर रियासत से सम्बद्ध रहे। सन् 1943 से 1946 ई. तक दिल्ली तथा गोरखपुर के इलाहाबाद बैंक में कार्य-रत रहे और जून 1946 में रेलवे की सेवा में आये। सन् 1969 से अब तक वे लखनऊ में निवास कर रहे हैं। 28 फरवरी, 1982 को वे रेलसेवा से निवृत्त हो चुके हैं।

इनकी पहली रचना सन् 1949-50 में रेलवे मैगजीन, गोरखपुर में कुम्भ मेले के अवसर पर प्रकाशित हुई थी। सन् 1951 ई. में डॉ. रामकुमार वर्मा की अध्यक्षता में टामसन इण्टर कॉलेज, गोण्डा में आयोजित कवि-सम्मेलन में विकल जी ने अपनी पहली अवधी रचना "विधाता भई कौनि अब चूक किलरकी हमरे माथे परी" पढ़ी थी और इसी से उन्होंने अपनी अलग पहचान बना ली थी।

विकल जी ने अवधी में गजल, गीत, मुक्तक, सवैया, कवित्त, लोक-गीतों आदि की सफल रचना की है। उनकी अवधी गजलें तो विशेष लोकप्रिय हुई हैं। कवि- सम्मेलन, आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि के द्वारा वे निरन्तर श्रोताओं को रस-विभोर करते रहते हैं। 'रतना-तुलसी' उनकी प्रकाशित काव्य-कृति है। 'धरती कै धिया' उनकी दूसरी (अप्रकाशित) कृति है। 'विकल' जी की सारस्वत-साधना का सम्मान 'अवधी साहित्य संस्थान, अयोध्या' द्वारा फाल्गुन, कृष्ण त्रयोदशी, वि.सं. 2039 में किया जा चुका है। 8 जनवरी, 89 को वागेश्वरी साहित्य परिषद् खदरा (लखनऊ) द्वारा उनका अभिनन्दन किया गया और 11 फरवरी, 1989 को 'पं. वंशीधर शुक्ल स्मारक समिति : लखीमपुर' (खीरी) द्वारा भी उनका अभिनन्दन किया गया था। विकल जी ने भक्ति, प्रेम, श्रृंगार तथा हास्य-व्यंग्यपरक सफल रचनाएँ की हैं। यहाँ उनकी एक गजल दर्शनीय है–

सदा नाव तोहरै पुकारा करित है।
सदा राह तोहरै निहारा करति है।
सहारा सहारा भयेन बेसहारा,
तेहू पर मुला हम सहारा करित है।
समझि देन तोहरै, बड़े नेह से हम,
हमेसा दुखन का दुलारा करित है,
बन्है तोहरे माथे बिजै केर सेहरा
यही से सदा दाँव हारा करित है।
कबौं तौ पसिजबौ, खबरि खोजि लेबौ,
इहै सोचि कै धीर धारा करित है।

श्री रामचन्द्र मिश्र 'विनीत'–लखनऊ को अपना कर्मक्षेत्र बनाने वाले 'विनीत' जी का जन्म 11 सितम्बर, सन् 1934 को ग्राम समाधा, जिला उन्नाव में हुआ था। आपके पिता स्व. रामेश्वर मिश्र साधु-सेवी भक्त थे। आपकी शिक्षा उन्नाव, कानपुर तथा लखनऊ में हुई। इन्होंने लखनऊ वि.वि. से हिन्दी तथा अँग्रेजी में एम.ए. और एलू-एलू.बी. की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं। आप गोपीनाथ लक्ष्मणदास रस्तोगी इण्टर कालेज, ऐशबाग, लखनऊ में अँग्रेजी के प्रवक्ता एवं उप-प्रधानाचार्य भी रह चुके हैं। विनीतजी ने

सवैया, घनाक्षरी, मुक्तक, आदि विविध छंदों में अवधी में लिखा है। संयोग-वियोग श्रृंगार के अतिरिक्त प्रकृति-प्रेम और जीवन की विसंगतियों का अंकन इनकी कविताओं में दर्शनीय है। प्रस्तुत है एक उदाहरण—

वन्दना : *काटहु मूड़ु लुटेरन केरि, कुचालिन का तिरसूल उछारौ।*
छाँटि भिरिस्टन के कर दोउ, अनीति करैं तिनका गहि मारौ।
भूख-अभाव-अँध्यारन बीच, परे जन जी, गहि हाथ उबारौ।
रागु बराबरी क्यार रचौ भुँइ, या फिरि तीसर नैनु उघारौ।

श्री रघुनाथ सिंह चौहान—कविवर रघुनाथ सिंह चौहान का जन्म आषाढ़, कृष्ण एकादशी, शनिवार, वि.सं. 1967 में ग्राम-भवानीपुर, बख्शी का तालाब, जिला-लखनऊ में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री भगवानदीन चौहान था। साधारण शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् ये काव्य-रचना की ओर उन्मुख हुए। इन्होंने अवधी-काव्य-साहित्य के भण्डार को अपनी अनेकानेक रचनाओं से समृद्ध किया। रचनाएँ प्रायः साधारण हैं। इनकी प्रकाशित कृतियों में 'राम सत चौबीसा' तथा 'चन्द्रिका देवी चालीसा' उल्लेखनीय हैं। इनकी छोटी-बड़ी अप्रकाशित कृतियों की संख्या चौबीस है। इनके नाम हैं—गनेस-चरित (महाकाव्य), 'त्रेता में राम' (महाकाव्य), ध्रुव-चरित (खण्ड काव्य), प्रह्लाद-चरित, राम-चालीसा, भवानी-चालीसा, गिरिजा-चालीसा, गनेस-पच्चीसी, संकरपच्चासा, बजरंग-पच्चासा, श्रीकृष्ण-पच्चासा, रामजन्म, भगवत्-प्रार्थना, गो-पुकार, पौराणिक सोहर, धार्मिक कीर्तन, श्रीहरि-कीर्तन, समस्यापूर्ति, दोहा- संकलन, ब्रह्म-निरूपण, भारत का भ्रष्टाचार, पर्यायवाची शब्द पुस्तिका, विशेष ज्ञानावली और कैलास-दर्शन।

रघुनाथ सिंह जी की भाषा लोकप्रचलित सरल ग्रामीण अवधी है। कवि ने अनेक छन्दों को अपनाया है। कुछ उद्धरण यहाँ दर्शनीय हैं—

देखि कै महान अत्याचार दुराचारिन के, क्रोधित कटक वीर छत्रिन की गाजैगी।
गर्जि-गर्जि रन माँझ मारि काटि दुष्टन को, कम्पित कुचालिन की सेना सब भाजैगी।
हाहाकार मचि है अखिल देस भारत माँ, लखि देस सत्रुन की छाती दर्कि फाटैगी।
होइगो संहार 'रघुनाथ' धर्म-हीनन का, भारत माँ फेरि टाप चेतक की बाजैगी।

सुनि भारत राम गये बन का, दुख पाइ हिये बिलखा रहे हैं।
गुरू मातु के पायन धाइ गिरे, जल नीरज नैन बहा रहे हैं।
पितु दाह क्रिया करिकै विधि ते, बन गौन का साज सजा रहे हैं।
उठि प्रातहिं राज समाज सजा, रघुनाथ मनावन जा रहे हैं।

('त्रेता में राम' महाकाव्य से)

श्री चन्द्रशेखर सिंह 'चन्द्र'—कविवर 'चन्द्र' जी श्री रघुनाथ सिंह जी के सुपुत्र हैं। इनका जन्म 1 अगस्त सन् 1931 को ग्राम-भवानीपुर जिला-लखनऊ में हुआ था। इनकी शिक्षा केवल कक्षा चार तक हो सकी। व्यवसाय से कृषक 'चन्द्र' जी अवधी के सहज रचनाकार हैं। भाषा पर इनका अच्छा अधिकार है। हास्य-व्यंग्य और सामयिक समस्याओं को लेकर इन्होंने मार्मिक रचनाएँ की हैं। हास्य और व्यंग्य के ये सचमुच सिद्ध कवि है। इनकी कविताएँ सहज ही 'रमई काका' का स्मरण दिला देती हैं। मौलिकता इनका विशेष गुण है।

चन्द्र जी की सभी कृतियाँ अप्रकाशित हैं। छन्दमाला : भाग 1, छन्दमाला : भाग 2, अंगद-रावण-सम्वाद, 'लंका-सम्वाद', 'हास्य-काव्यांजलि'—इनकी काव्य-कृतियाँ हैं। यहाँ केवल एक छन्द प्रस्तुत है—

गीध अजामिल और गनिका कहँ, जौ पहिले प्रभु तारे न होत्यू।
याक पुकार म दौरति आप, कहूँ गजराज उबारे न होत्यू।

ध्रू प्रहलाद बिभीषण द्रोपदि, के यदि काज सँवारे न होत्यू।
तौ न पुकारत 'चन्द्र' तुम्हें, जौ गरीबन के दुख टारे न होत्यू।।

श्री गणेशप्रसाद सक्सेना 'भिक्षुक'—'भिक्षुक' जी का जन्म 16 अगस्त, 1928 ई. को कर्नलगंज, कानपुर में हुआ था। इनके पिता श्री विष्णुप्रसाद सक्सेना लखनऊ के निबासी थे। भिक्षुक जी ने लखनऊ वि.वि. से स्नातक तथा हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से साहित्यरत्न की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। ये हास्य-व्यंग्य-प्रधान रचनाकार हैं। एक सक्रिय सामाजिक कार्यकर्ता होने के साथ ही ये साहित्यिक संस्थाओं से सम्बन्द्ध रहते हैं। भिक्षुक जी अवधी में भी लिखते हैं। अवधी में इनकी कुछ स्फुट रचनाएँ प्रकाशित हैं। यहाँ दो-एक उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

आपद स्थिति देखि कै बदलौ निज ब्योहार।
लेन-देन तकरार सो, ब्याह भयो ब्यौपार
ब्याह भयौ ब्यौपार, पूत कौ सौदा करिहौ।
घर माँ कलह मचाय, जनम भरि घुटि-घुटि मरिहौ।
कह 'भिक्षुक' भलि होय, त्याग तकरार निरापद।
प्रेम-भाव सों ब्याह करौ, लखि स्थिति आपद।।

श्री परमानन्द जड़िया—कवि श्री जड़िया का जन्म खत्रीटोला, मशकगंज, लखनऊ में हुआ था। इनके पिता का नाम बैजनाथ जड़िया तथा माता का नाम श्रीमती मुन्नी देवी था। जड़िया जी ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से मध्यमा तथा लखनऊ वि.वि. से बी.ए., एल-एल.बी. की उपाधियाँ प्राप्त की। सम्प्रति ये सहकारिता विभाग में वरिष्ठ इन्सपेक्टर पद पर कार्यरत हैं। ये मुख्यतः कवि और कहानीकार हैं। खड़ी बोली में इनकी अनेक कृतियाँ प्रकाशित हैं। इन्होंने अवधी में भी लिखा है, किन्तु अवधी में अभी तक कोई कृति प्रकाशित नहीं है। यहाँ इनकी अवधी-रचना की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

जब याकु दिना अपने घर माँ, बोलवावा हम कवि-सम्मेलन।
लरिका-बच्चा सब दिक्क भये, घरवाली हाथ लिहिस बेलन।
हम कहा, अरे 'बौड़म' जी का, हम आजु इहाँ बोलवायेन है।
'सनकी', 'भिक्षुक', 'बरखारानी' का, आजु इहाँ पर गायन है।
तुम समझौ का 'चौपट', नासिर, 'बौड़मी कवित्री' साथै हैं।
'मधुकर', 'पतग' की कहै कौन कवि डण्डा उनके हाथै हैं।
उइ भईं ततैया लाल मिर्च, बोलीं लरिकउनू ते 'लल्ला-
थाने पर जल्दी रपट करौ, हुइ जइहै आजु इहाँ हल्ला।'

श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'—ये श्री परमानन्द जड़िया के अनुज हैं। सम्प्रति ये सुजानपुरा डाकघर, लखनऊ में उप डाकपाल हैं। 'अबोध' जी की अनेक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। ये खड़ीबोली के अतिरिक्त अवधी में भी निखते हैं। दो-एक उदाहरण दर्शनीय हैं—

गाढ़ी बिजया छानि कै, चले संग हैं मित्र।
याखत महँ अइसे लगैं, कार्टून को चित्र।
कार्टून को चित्र, देखि कै राही चौंके।
चाल-ढाल को देखि, राह के कूकुर भौंके।
लड़खड़ाइ कै गिरे, कीच सों सनि गै दाढ़ी।
कहै लागि गा तेलु, अइस उइ छाने गाढ़ी।।

डॉ. 'शितिकंठ'—डॉ. 'शितिकंठ' का जन्म 1 जुलाई, 1943 ई. को ग्राम गुलाबपुर, जिला-सीतापुर में हुआ था। इनके पिता श्री प्यारेलाल शुक्ल वैद्य साहित्यानुरागी और भक्त हैं। 'शितिकंठ' की प्रारम्भिक शिक्षा सीतापुर और उच्चशिक्षा लखनऊ विश्वविद्यालय में हुई। सम्प्रति ये लखनऊ के जयनारायण महाविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक हैं। इनकी अवधी की कतिपय स्फुट रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। सवैया, धनाक्षरी, बरवै, गीत, मुक्तक आदि विविध शैलियाँ इन्होंने अपनायी हैं। द्रष्टव्य हैं—

सिर धरि सुमिरौं सरजू सरि गुन-गाथ।
लहरि-लहरि हरि लहरैं लछिमी साथ।।
जनम-भूमि देहरी रिधि-सिधि कै खानि।
बिथरइ रघुबर-मुख-अंबुज मुसकानि।।
सुदिन सिद्धि दातार, कहउँ सति भायँ।
सुरमुनि तिरथहु जाइँ सुभाग सिहायँ।।
निरगुन-सगुन अराधन साधन-धाम।
बूड़ति बीच बिबाद, बचावहु राम!!

फैलि गवा धास माँ अतंकबादी कंस बंसु, करौ निरबंस सबै छाँटि देउ अँधियार।
मुस्टिक-चानूर जैस जतने अतंकी जहाँ, करौ चूर-चूर हरौ अत्याचार धुवाँधार
कुटिल कुचालिन ते खाली करौ पुन्यभूमि, होय मजबूत भाईचारा क्यार अधिकार।
खलस्थानी सपन उजारौ, धास का सँभारौ प्यारौ तौ सुदरसन, निहारौ करुना की क्वार।।

श्री ब्रजेन्द्र खरे—ब्रजेन्द्र जी की वास्तविक जन्म-तिथि अज्ञात है। इनकी अवस्था 50 वर्ष के लगभग है। इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से उच्चशिक्षा प्राप्त थी। सर्वप्रथम सन् 1958 में आकाशवाणी से कविता का प्रसारण हुआ। ये अच्छे लोकगीतकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। सम्प्रति, ये उत्तर प्रदेश परिवहन निगम, लखनऊ के जन-सम्पर्क-प्रबन्धक के पद पर कार्यरत हैं। 'सोनचिरइया' इनकी अवधी कविताओं का प्रकाशित संग्रह है। अवधी पर कवि का अधिक अधिकार है। भावों की मार्मिक अभिव्यंजना इनका वैशिष्ट्य है। वसन्त-वर्णन-विषयक कतिपय पंक्तियाँ दर्शनीय हैं—

नागिन बनी राति डसि-डसि कै खींचै मोर परनवाँ,
कागा आइ चिढ़ावै रोजै, भोरै मोर अँगनवाँ
बिछुरे हमरे सपनवाँ, रूठे हमरे कँगनवाँ,
यहु महिनवाँ भावै ना।
पंचम सुरल कोयलिया कुहकै, तन विरहिन कै जारै,
दबि-दबि जायँ उमंगै मन की, बइठि जाइ मन मारै,
आवा रे मोर बैरी बसंत दुआर।

श्री तेजशंकर अवस्थी 'तेज'—'तेज' जी का जन्म 30 जुलाई, सन् 1951 को ग्राम कोटरा, जिला-सीतापुर में हुआ था। इनके पिता श्री शिवशंकरलाल अवस्थी धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। इन्होंने लखनऊ वि. वि. से बी.एस्-सी. तथा डी.ए.बी. कालेज, कानपुर से एम.एस्-सी. (प्री.) परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं। सम्प्रति हिन्दुस्तान ऐरोनाटिक्स, लखनऊ में सेवारत हैं। खड़ीबोली के अतिरिक्त कभी-कभी ये अवधी में भी लिखते हैं। प्राचीनता और नवीनता का सामंजस्य इनकी रजनाओं की विशेषता है। प्रस्तुत है एक उदाहरण—

ककरी के ख्यातन माँ फूटति होहहैं चनवाँ,
छिटकि-छिटकि जाति है हैं धरती के दनवाँ।

डाँड़े की निबिया पे, कउवा करइ कावँ।
चलउ सजन लउटि चलउ, फिरि अपने गाँव।।
हरी भरी बगियन माँ चुवति है हैं महुआ
डारन पर लदे हहैं पियरि-पियरि अमवा।
तपती दुपहरी माँ यादि आवै छावँ। चलउ सजन.......।।

सनकी—विख्यात हास्य-कवि 'सनकी' कालीचरण इण्टर कालेज, लखनऊ में प्राध्यापक रह चुके हैं। कवि-सम्मेलनों में वे श्रोताओं का मनोरंजन करने में बेजोड़ गिने जाते हैं। खड़ीबोली के अतिरिक्त अवधी में भी मुक्तक, दोहा, कुंडलिया, सवैया, कवित्त आदि लिखते हैं। इनके कविता-पाठ का रंग-ढंग विशिष्ट और नाटकीय है।

श्री रामेश्वर द्विवेदी 'प्रलयंकर'—'प्रलयंकर' जी रामपाल त्रिवेदी इंटर कालेज, गोसाईगंज, लखनऊ में प्राध्यापक हैं, ये अवधी के अच्छे रचनाकार हैं। कविता का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

तुम परे अँधेरी कोठरी माँ, पइरा बिछाय मस्ती काटौ।
साँवा कोदौ बेझरा काकुन, है तुमरे लिए यहै डाटौ।
उइ छपरा फारि कमात हवैं, तुम भुइयाँ गोड़त मरे जाव।
उइ नोट हलावै बैठे हैं, तुम फरे आम अस झरे जाव।
कब ख्याल तुमार लीन॰ जाई, तुम ई धरती के स्वामी हौ।
बस कहै बदे आजाद भयौ, मुल काटत अबौ गुलामी हौ।

श्री योगेन्द्रप्रताप सिंह—लखनऊ विश्वविद्यालय के कार्यालय में सेवा-रत योगेन्द्रप्रताप जी अवधी के उदीयमान कवि हैं। इनकी कविता की कुछ पंक्तियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं—

ई जग माँ हम छुट भइयन की, क्वउ पूछ नहिन।
धन ते विहीन होई कृतनउ, ईमान-धरम माँ छूँछ नहिन।
का पता नहीं लंगूरन का, जी परक्वाटन पर कूदत हैं।
हमहे हन बुनियादी ़जमाव,
हमरेन चलते ई देस बिदेस मा फैली शाखा भूलत हैं।।

उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त उक्त श्रृंखला में श्री रमाकान्त श्रीवास्तव, हास्य-कवि श्री डण्डा लखनवी एवं बौड़म लखनवी का नामोल्लेख आवश्यक है, किन्तु अल्प अवधि में जिन अवधी कवियों का परिचय जिस रूप में प्राप्त हो सका, उसी के आधार पर यह आलेख प्रस्तुत है। अस्तु, स्पष्ट है कि आधुनिक अवधी-काव्य-धारा आज जिन अनेक रूपात्मक-भंगिमाओं को लेकर गतिमान है, उसमें लखनऊ का योगदान महत्वपूर्ण है।

सीतापुर जनपद के अवधी रचनाकार

डॉ. गणेशदत्त सारस्वत

अर्द्धमागधी अपभ्रंश से विकसित अवधी के पाँच रूपान्तरों-पूर्वी, पश्चिमी, बैसवारी, गाँजरी तथा बँगहरी—में से सीतापुर जनपद गाँजरी अवधी का क्षेत्र है। गाँजरी अवधी को पश्चिमोत्तरी अवधी भी कहते हैं। गाँजर, उपरहर तथा भूड़ की बोलियों को यह अपने में समाहित किये हुए है।

1. कवि सरयूराम : सीतापुर जनपद के प्रथम अवधी रचनाकार कविवर सरयूराम हैं। उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास के पद-चिह्नों पर चलकर 'जैमिनिपुराण' की रचना की है। इस ग्रन्थ में 'पद्यमपुराण' तथा 'वाल्मीकिरामायण' की अश्वमेधकथा का रोचक वर्णन है। यह वर्णन 8085 अनुष्टुप् छन्दों में पूर्ण हुआ है। इस हस्तलिखित ग्रन्थ में 615 पृष्ठ हैं। इसका रचनाकाल 'विसिख व्योम वसु बुद्धिवर' के आधार पर सं. 1805 वि. है। इस ग्रन्थ के लिपिकर्त्ता पं. ललितादीन पाण्डेय हैं। उन्होंने इसे भाद्रपद की कृष्णपक्षीय त्रयोदशी, सं. 1885 वि. में लिपिबद्ध किया था।

प्रस्तुत ग्रन्थ में 36 अध्याय हैं। इनमें से प्रथम चार अध्यायों में यज्ञ की तैयारी का वर्णन है। शेष अध्याय युद्ध से सम्बन्धित हैं। सीता-त्याग का यह प्रसंग अत्यन्त करुण है। लक्ष्मण ने भगवान् राम के इस आदेश—'आवहु तजि सिय सुरसरि तीरा'—का जनकसुता के सम्मुख जैसे ही संकेत किया, वैसे ही वे मूर्च्छित हो गयीं। काफी उपचार के बाद वे होश में आयीं और विलाप करने लगीं। उनका यह विलाप पाषाण-हृदय को भी द्रवित कर देने वाला है—

करत विलाप कहत वैदेही, रह्यो न कोउ अब मोर सनेही।
प्रथम जो मैं आइउँ बन माहीं, पाछे तुम प्रभु आगे जाहीं।
जोगवत जाहु मध्य मोहिं लाये, होउ दुखित मन मम श्रम पाये।
अब जस दोस आइ मम लागा, बिन अपराध नाथ म्वहिं त्यागा।
मन बच काय राम-पद नेहा, निज मन जान आन नहिं केहा।
प्रभु मृदु मूरति इन्दु उजागर, बसत सदा मन-मन्दिर अन्तर।
प्रभु पद रज निज नैननि लाई, प्रनत प्रेम तजि अनि न लषाई।
देषौं बहुरि कबै पद पावन, अब कब होव कि दिन दुष-दावन।
सील सनेह सुभाव गुन, बोलनि चलनि निहारि।
सुमिरि सबै रघुनाथ के, बिलपति जनककुमारि।। (पृष्ठ 279)

2. कवि उदयनाथ : श्री उदयनाथ नैमिषारण्य-निवासी थे। उन्होंने 'सबुनावली' अथवा 'सगुणविलास' नामक पुस्तक लिखी है, जो अप्रकाशित है। इस पुस्तक में तेरह पृष्ठ हैं। अन्तिम पृष्ठ पर अंकित संख्या से प्रतीत होता है कि इस पुस्तक में 270 छन्द है, जिनमें दोहा-चौपाई ही विशेष हैं। बिल्कुल अन्त

में सं0 1841 वि0 लिखा हुआ है, जिससे इस पुस्तक के सं0 1841 वि0 में रचे जाने का आभास होता है। कवि ने इस ग्रंथ में किसी कार्य के सिद्ध होने अथवा न होने के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किये हैं। ये विचार प्रश्नोत्तर रूप में हैं। वर्ण्य विषय के इसी स्वरूप को लिपिकर्ता पैंदापुर-निवासी बलदेव पण्डित ने निम्नलिखित कुण्डलिया छन्द में स्पष्ट किया है–

सगुन विलास पोथी लिखी, सब सगुनन को सार।
ताहि विचारिय परषिये, सगुन अगुन विस्तार।
सगुन अगुन विस्तार जानि पोथी मैं लीजै।
जैसा निकसै हाल जानि पुनि तैसो कीजै।
कह पंडित सुविचार, जानि मन मैं निज कोथी।
सगुनन को सब सार, नाम सगुनन को पोथी।

3. कवि गणेशबख्श सिंह 'गनपाल' : श्री 'गनपाल' का जन्म सं. 1840 वि. में रामपुर मथुरा में हुआ था। उनके पिता ठा. रत्न सिंह थे। इन ठाकुर साहब का काव्य-प्रेम 'गनपाल' जी को वंशानुक्रम से प्राप्त हुआ। 'गनपाल' संस्कृत के विद्वान् थे तथा शैवदर्शन में उनकी विशेष आस्था थी। इसी आस्था के दर्शन उनकी 'शिवचरितामृत' नामक पुस्तक में होते हैं।

इस ग्रन्थ में सूत-शौनकादिक ऋषियों द्वारा कथित भगवान् शंकर के विविध चरित्रों का सत्ताईस बिन्दुओं में विस्तार है। अनेक अन्तर्कथाओं के माध्यम से कवि ने इन चरित्रों को उद्घाटित करने का प्रयत्न किया है। ये अन्तर्कथाएँ विभिन्न पौराणिक, आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक स्रोतों से ग्रहण की गयी हैं। इनमें विदुर, बिन्दुला, भद्रसेन, द्विजवेदरथ, भद्रायु तथा चन्द्रसेन आदि से सम्बन्धित कथाएँ प्रमुख हैं। इन समस्त कथाओं का मूल उद्देश्य भगवान् शंकर का माहात्म्य निदर्शन करना है।

कवि ने अनेक विधि-विधानों के क्रम में नाम-स्मरण पर विशेष बल दिया है। उसकी दृष्टि में, दशो दिशाओं में स्थित भगवान् शंकर के विविध नामों का देश-कालानुरूप वर्णन सर्वथा कल्याणप्रद है। एतद्विषयक पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

आदि जाम दिन माहिं महेश्वर, मध्य जाम महँ बामदेव वर।
तीसर जाम त्रयम्बक जानौ, वृषभकेतु दिन अंत बखानौ।
रक्षक निशा आदि शशिशेषर, सुचि निसीथ सी गंगाधर वर।
निसा अन्त गौरीपति त्राता, मृत्यु जय सब थल अवगाता।
रक्षहु विश्वम्भर निसि बासर, दया दीठि दीजै करुनाकर।
अन्तर गृह शंकर सदा, रक्ष स्थाणु दुवार।
मद्धि देस पसुपति कृपा, कीजै परमोदार।। (शिव., पृ. 14)

4. कवि लखनसेन परिहार : श्री लखनसेन परिहार सं. 1880 वि. के लगभग बिसवाँ के किसी निकटवर्ती ग्राम के निवासी थे। उन्होंने दो पुस्तकें लिखी हैं– 'लक्ष्मीचरित' तथा 'महाभारत का हिन्दी अनुवाद'। इनमें से केवल प्रथम ग्रन्थ ही उपलब्ध है, जो रसिक यन्त्रालय, कानपुर से प्रकाशित है। इस ग्रन्थ का सम्पादन श्रीयुत दत्तद्विजेन्द्र ने किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में रमा के द्वारा दिये गये रमापति के निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर का विस्तार है–

वास करहु क्यहि के भवन, कहाँ रहहु पुनि नाहिं।
सत्य कहहु निज रूचि प्रिया, ज्यहि सुनि हम हुलसाहिं।। (पृ. 16)

5. कवि समरदास : मगरौड़ा-निवासी श्री समरदास 'रामायण' के रचयिता थे। उन्होंने सं. 1900

वि. में इस ग्रन्थ की रचना की। तुलसी के 'मानस' के अनुरूप सात काण्डों में भगवान् राम का पावन चरित्र इसमें वर्णित है। भजन, सोरठा, दोहा तथा चौपाई आदि 790 छन्दों में यह वर्णन पूर्ण हुआ है। इस ग्रन्थ में राग-रागनियों की सुन्दर योजना है। भैरवी राग इन पंक्तियों में दर्शनीय है—

ध्यावौं आदिशक्ति महरानी।
ब्रह्मा विष्नु रुद्र जेहि ध्यावैं, तुम्हरी गति अद्भुत जगरानी।
जगत तेज चौदहों भुवन में, वेद सेस नहिं सकत बखानी।
रक्तबीज सम कोटिन दानौ, निमिष म दुष्ट बध्यो है भवानी।
समर है चहत रामजस बरनन, करौ सहाय देवी बरदानी। (पृ. 2)

इस ग्रन्थ की उपयोगिता के सम्बन्ध में कवि का कथन है—

जे पढ़िहैं सुनिहैं समर, रामचरित मन लाय।
भवसागर तरिहैं सही, दिन दिन सुष सरसाय।। (पृ. 265)

ग्रन्थ के बिल्कुल अन्त में कवि ने अपने वंश पर भी प्रकाश डाला है। इसके अनुसार वे रघुवंशी थे। अवधपुरी से तीस कोस पश्चिम में उनका निवास-स्थान था—

वहि रघुकुल में जनम है, समर राम को दाम।
तीस कोस पश्चिम दिसा, अवधपुरी ते बास।।

इस ग्रन्थ में 265 पृष्ठ हैं। पण्डित विश्वनाथ पाण्डेय नामक हिन्हीं सज्जन ने ठा. दुर्गा सिंह 'आनन्द' के पठनार्थ सं. 1927 वि. में इसे लिपिबद्ध किया था।

6. कवि रघुनाथदास : 'विश्रामसागर' के रचयिता बाबा रघुनाथदास का जन्म सं. 1874 वि. की बैशाख, शुक्ल तृतीय को पैंतेपुर में हुआ थां आपके पौत्र पं. रामनारायण पाण्डेय ने 'श्रीरघुनाथहाट' नामक पुस्तक में, जिसका प्रकाशन पंडित रामशंकर शुक्ल के प्रजाप्रेस (बाराबंकी) से सं. 2014 वि. में हुआ है, इसी तिथि की पुष्टि की है। (रघुनाथहाट : पृ. 19) बाबा रघुनाथदास की छावनी के महन्त रामजीदास परमहंस ने भी 'श्री रघुनाथदास जी महाराज का अपूर्वज्ञान' प्रकरण के अन्तर्गत इसी तिथि को बाबा रघुनाथदास जी की जन्मतिथि बतलाया है।

बाबा रघुनाथदास ने तीन ग्रन्थ लिखे हैं—'हरिनाम-सुमिरनी,' 'दोहा-कवित्त-संग्रह' तथा 'विश्रामसागर'। 'हरिनाम-सुमिरनी' में भगवान् राम की महिमा का विशद वर्णन है। बीच-बीच में मर्यादा-पुरुषोत्तम के लोकोत्तर स्वरूप का आलंकारिक विवेचन भी है।

कवि ने राम से राम-नाम का स्मरण अधिक फलदायक बतलाया है। राम तो खाँड़ हैं, स्वभावतः मधुर। इस खाँड़ की माधुरी का साधक को तभी अनुभव हो सकता है, जब उसे मुख में रखा जाए। मुख में रखने की क्रिया ही 'स्मरण' है। इस क्रिया के अभाव में खाँड़ की माधुरी का अनुभव असम्भव है। अतएव स्मरण-रूप नित्य-क्रिया 'रसास्वादन' के लिए आवश्यक है—

सिफत करै कोउ खाँड़ की, धरै न मुख अभिराम।
लहैं स्वाद रघुनाथ किमि, तिमि सुमिरन बिन राम।। (पृ. 26)

7. मुंशी मंगलदास का जन्म सं. 1885 वि. में हुआ था। उनके पिता श्री बख्शीराम मूलतः सरही (शाहजहाँपुर) के निवासी थे। मुंशी मंगलदास मुख्याध्यापक होकर पैंतेपुर आये और यहीं अध्यापन-कार्य करते हुए छोटे-बड़े अड़तालिस ग्रन्थों की रचना की जिनमें से केवल 'कृष्णप्रिया' तथा 'मंगलकोष' ही उपलब्ध हैं। मुंशी जी का निधन सं. 1964 वि. में हुआ।

'कृष्णप्रिया' श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध का भाषानुवाद है। इस ग्रन्थ में भगवान् कृष्ण की विविध लीलाओं का पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध के अन्तर्गत 90 अध्यायों में वर्णन है। पूर्वार्द्ध में भगवान् कृष्ण का व्रजनिवास वर्णित है तथा उत्तरार्द्ध में उनके योगेश्वर-स्वरूप की व्याख्या की गयी है। छन्दों में दोहा, चौपाई तथा सोरठा ही प्रमुख हैं। प्रबन्ध काव्य होने के नाते इस ग्रन्थ में सभी रसों का समावेश है। सं. 1934 वि. में रचित यह ग्रन्थ मुंशी नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से 2 जून, 1877 ई. को प्रकाशित हुआ है।

रुक्मिणी-विवाह के प्रसंग की ये पंक्तियाँ देखिए। इनमें भगवान् कृष्ण तथा रुक्मिणी वर-वधू के रूप में सुशोभित हैं—

दिवस-विवाह आव जब राजा, सजे सबन बहु मंगल साजा।
जग श्रुति रीति प्रथम करवाई, धर्म प्रबन्ध रहै जेहि छाई।
प्रभु रुक्मिनिहि सँवारि सरीती, मंडपतल बैठारि सप्रीती।
लखि हरि रुक्मिनि रूप अनूपा, नमत अजादि देव कुरुभूपा।
यदुवंशी नृप नाना जाती, यथाउचित बैठे बहुपाँती।
गर्गाचार्य आदि मुनि आये, श्रुतिबल अखिल कर्म करवाये।
वेदरिचा बहु विप्र उचारैं, सुद्ध-सब्द सुनि विधि हिय हारैं।
भाँवरि फेरे बेद बिधि, बजैं तूर्य ढक ढोल।
देववधू नृत्तहिं गगन, डोलहिं बिबुध खगोल।। (पृ. 301)

8. **श्री ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी** पीरनगर-निवासी थे। उन्होंने सं. 1919 वि. में 'रामविलास-रामायण' की रचना की। इस ग्रन्थ में 'वाल्मीकिरामायण' का छन्दोबद्ध अनुवाद है। मौलिक न होने पर भी रचना मनोहारिणी है।

कवि की वृत्ति शान्तरस के विवेचन में अधिक रमी प्रतीत होती है। इसलिए, इस प्रकार के वर्णनों में तन्मयता की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक है। भक्तिकाव्य होने के नाते प्रस्तुत रस लक्ष्य-सिद्धि में विशेष सहायक भी है। बन्दना के प्रसंगों में शान्तरस की प्रचुरता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है—

रहत रजत नग नगर नगज तट, गजखल कलगर गरल तरलधर।
नगन तगन यश,· सघन अगन गन, अतन हनत तन लसत न कत कर।
ज़लज नयन कर चरण हरण अघ, सरण सकल चर अचर खचर तर।
चहत छनक जय लहत कहत यह, हर हर हर हर हर हर हर हर।। (पृ. 133)

सम्पूर्ण ग्रन्थ में 259 पृष्ठ हैं। चौपाई, दोहा, सोरठा, चन्द्रकला, मालिनी, भुजंगप्रयात, छप्पय, नाराच, चामर, गीतिका, बरवै, कुण्डलिया, रोला, बसन्ततिलका, सवैया, रूपमाला आदि सैंतीस प्रकार के छन्दों का, जिनकी कुल संख्या 1308 है, इस ग्रन्थ में प्रयुक्त हैं। मंशी नवलकिशोर, प्रेस, लखनऊ से इसका प्रकाशन हुआ है।

9. **श्री गजाधर शुक्ल 'द्विजशुक्ल'** का जन्म पाताबोझ में हुआ था। यह ग्राम सीतापुर से दो योजन पश्चिम में महोली के निकट है। 'द्विजशुक्ल' साहित्यविशारद थे। उन्होंने छोटे-बड़े बीस ग्रन्थों की रचना की है। इनमें आकार की दृष्टि से सबसे बड़ा ग्रन्थ है 'रघुवंशतिलक'। पिता महाराज बरबंड के आदेश से लिखे गये ग्रन्थ में महाकवि कालिदास के 'रघुवंश' महाकाव्य के आधार पर रघुकुल के उनतीस राजाओं के चरित्र का दोहा, चौपाई छन्दों में वर्णन है। यह वर्णन ललित है। एक प्रसंग देखिए। भगवान् राम के चरित्र की उदारत्तता निम्नलिखित पंक्तियों में दर्शनीय है। वन से अध्योध्या वापस आने पर भगवान् राम स्वजनों से सुग्रीव, जामवन्त, विभीषण आदि का परिचय करा रहे हैं। साथ ही उनका गुणगान भी

करते जा रहे हैं। सेवकों के इस गुणगान में ही राम की महत्ता है—

कह्यौ सबहि सन तब रघुराई, मैं सुग्रीव भालु कपिराई।
बिपतिकाल महँ इन सँग दीन्हा, रन उपका बहुत मों कीन्हा।
यह पौलस्त्य बली रनधीरा, करनहार संग्राम अधीरा।

10. **पं. जियालाल त्रिपाठी** रामकोट के निवासी थे। इनका रचनाकाल सं. 1920 से 1955 वि. तक है। त्रिपाठी जी संस्कृत के पण्डित थे। उनके सम्पूर्ण साहित्य में इस पाण्डित्य के दर्शन होते हैं।

त्रिपाठीजी के उपलब्ध ग्रन्थ हैं—नासिकेतोपाख्यान-भाषा, भक्ताम्बुनिधि, कर्तव्या-कर्तव्य-प्रकाशिनी, नन्दमहोत्सवार्णव तथा भजनावली। इनमें से प्रथम दो प्रकाशित हैं।

'नासिकेतोपाख्यान' की रचना 'पद्यमपुराण' के आधार पर हुई है। इस ग्रन्थ में महर्षि उद्दालक द्वारा ब्रह्म से वरदान प्राप्त करना, चन्द्रावतल-विवाह तथा नचिकेता का यमपुर-गमन वर्णित है। अन्त में जालन्धर की कथा भी संलग्न है। इन कथाओं के माध्यम से कवि ने मानव को सुमार्ग पर लाने का प्रयत्न किया है। इसी क्रम में उसने 'कुम्भीपाक-नरक' का भी विस्तृत वर्णन किया है। इस प्रसंग की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं। इनमें आचारहीना नारी को इस नरक में दिये जाने वाले दण्ड की विभीषिका का संकेत है—

त्यागि निजपति, पर-पुरुष सों करत रति तिय जौन।
अग्नि खम्भहिं बाँधि दृढ़करि, सुभट यम बल भौन।
तीय को नर रूप खम्भा पुरुष को तिय रूप।
खम्भ एकै होत है द्वैतीय नर सो भूप।

'भक्ताम्बुनिधि' में नाभादास जी, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, राजा बलि, भीष्म, सुधन्वा, हरिदास, रामानुज, रामानन्द, कृष्णदास, माधवाचार्य तथा सन्तदास आदि लगभग सौ भक्तों के चरित्र 'भक्तमाल' के आदर्श पर वर्णित हैं। साथ ही, 'रामविनय' प्रकरण में सत्संग तथा भगवद्भक्तों के माहात्म्य का भी निर्देश है। वैष्णव धर्म की दृष्टि से यह ग्रन्थ महत्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ में 534 पृष्ठ हैं। छन्दों की कुल संख्या 5199 है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सं. 1952 वि. में हुआ था।

'कर्तव्याकर्तव्य-प्रकाशिनी' में श्राद्ध, प्रायश्चित तथा व्रतविधान आदिक कर्तव्या-कर्तव्यों का विवेचन है, जो 'स्मृतियों' पर आधारित है। इसी क्रम में खाद्य-अखाद्य का भी वर्णन है। इस प्रसंग की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं। भगवान् शंकर जिज्ञासु नारद से कह रहे हैं—

हविष्यान्न भोजन सब नायक, ब्राह्मण गृही काँह सुखदायक।
अन्न जूठ नारायण केरा, बिन अर्पित वर्जित सब बेरा।
विष्टा अन्न मूत्र जल सोई, विष्नु काँह अर्पित नहिं होई। (पृ. 2-3)

इस ग्रन्थ में 106 पृष्ठ तथा 16 अध्याय हैं। इसका रचना-काल सं. 1956 वि. है।

11. **कवि देवीदास** : श्री देवीदास 'देवी' हरगाँव के प्रधान श्री रामस्वरूप अस्थाना के पितामह थे। उन्होंने फारसी में 'कृष्णखण्ड' नामक ग्रन्थ की रचना सं0 1944 वि0 में की थी। इस ग्रन्थ में चार खण्ड तथा 135 अध्याय हैं। शिल्प की दृष्टि से रचना '...ास' के अनुरूप है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा। वसुदेव तथा देवकी के विवाह का वर्णन इन पंक्तियों में दर्शनीय है—

सुभग मनोरथ लगन उछाहू, भर वसुदेव देवकी व्याहू।
सकल बरात विविध सनमाना, दियउ मुदित नहिं जाइ बखाना।
बहु भाँति दाइज दीन्ह हय, गज, सुभट, भूषन राजहीं।

सुरभी दुधार अपार जिन लखि, कामधेनु सो लाजहीं।
पकवान विविध बखान बहु, भूखन अमोल सुहावने।
बहु द्रव्य दीन्ह लदाइ छकड़न, जासु लेख न पावने।। (पृ. 47)

12. कवि महेश्वरबख्श सिंह : ठा. महेश्वरबख्श सिंह का जन्म सं. 1917 वि. में रामपुर मथुरा में हुआ था। उन्हें पिता ठा. गुमान सिंह का साहित्य-प्रेम उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ। भगवान् शंकर के प्रति उनकी अखण्ड आस्था थी। अधिकांश समय वे देवाधिदेव की आराधना में ही व्यतीत करते थे। मात्र इकतालिस वर्ष की आयु में ही (सं. 1958 वि. में) उनका निधन हो गया।

ठा. साहब ने कई पुस्तकें लिखी हैं। इनमें से कुछ तो मौलिक हैं और कुछ अनूदित। मौलिक ग्रन्थों में उल्लेखनीय हैं—'महेश्वरचन्द्रिका', 'महेश्वर-विनोद' तथा 'महेश्वर-प्रिय-ग्रन्थ'। अनूदित ग्रन्थ हैं—'महेश्वर-विचार', 'महेश्वर-परीक्षा', 'महेश्वर- स्वरोदय' तथा 'महेश्वर-गो-गज-चिकित्सा' ये सभी ग्रन्थ अवधी को समृद्ध करते हैं।

'महेश्वरचन्द्रिका' में श्री शुकदेव मुनि द्वारा वर्णित कृष्ण कथा का 47 उच्चारों में विस्तार है। 'महेश्वर-विनोद' में भगवान् कृष्ण का रुक्मिणी-वियोग वर्णित है। 'महेश्वर-प्रिय-ग्रन्थ' में नाना-विषयक सवैया तथा घनाक्षरी छन्द संकलित हैं।

13. श्री गणेशप्रसाद शुक्ल 'गणाधिप' पं. रामसेवक शुक्ल 'नवराम' के सुपुत्र थे। उनका जन्म सं. 1928 वि. में बलसिंहपुर भुइला में हुआ था। वे अपने युग के सफल समस्या-पूर्तिकार थे। सं. 1959 वि. में प्रकाशित 'गणाधिप-सर्वस्व' नामक उनके ग्रन्थ में विविध विषयों की रचनाएँ संकलित हैं।

'गणाधिप' जी मूलतः ब्रजभाषा के कवि थे। किन्तु, मातृभाषा होने के कारण उन्होंने कुछ छन्द अवधी में भी लिखे हैं।

14. कवि हरिनाम शर्मा : श्री हरिनाम शर्मा बधैया-निवासी थे। उनका जन्म सं. 1948 वि. में हुआ था। 'बनारस-विनोद' तथा 'काशीकल्पद्रुम' उनकी प्रकाशित पुस्तकें हैं।

हरिनाम जी खड़ी, ब्रजी तथा अवधी—तीनों ही बोलियों के सफल कवि थे। उनके इस अवधी छन्द में हास्य का अच्छा पुट है। 'घोंघाबसन्त' का स्वरूप इस छन्द में कैसा बन पड़ा है, देखिए—

भोर भवा तब जागि परे हरिनाम भजैं उठि बैठे तुरन्त।
लीवर लेसे उभै अँखियान, बड़े बड़े ओठ बड़े बड़े दन्त।
घूमन लागे अकारण भन्तु, सु आपने आगे किसी को न गन्त।
लोग लुगाई हसन्त लसन्त बताओं कहाँ चलेउ घोंघा बसन्त।।

इसी क्रम में हरिनाम जी के विद्यार्थी-जीवन का भी एक छन्द प्रस्तुत है। एक बार बैजू नामक किन्हीं महाशय ने हरिनाम जी को श्राद्ध में ऐसे पेड़े खिलाये जो उन्हें रुचे नहीं। अतः उन्होंने तुरन्त एक छन्द बनाकर श्राद्धकर्ता महोदय को सुनाया। वह छन्द इस प्रकार है—

देखत में रज के से लगैं रुपया के छ-सातक सेर मँगावत।
लाइकै जाइ धरेउ घर माँ, जिनके कहुँ चीटीं नगीच न आवत।
बास के मारे परोस माँ रोस द्विजेसन को तब न्यौति बुलावत।
माठा प्रचण्डहिं सेइ कै बण्ड, सु बैजू सराध माँ पेड़ा खवावत।।

हरिनाम जी के उपर्युक्त छन्दों में अवधी के विशुद्ध रूप का अभाव है।

15. कवि ब्रजभूषण त्रिपाठी 'ब्रजेश' : श्री ब्रजभूषण त्रिपाठी 'ब्रजेश' का जन्म दरियापुर में सं. 1952 वि. में हुआ। वे राष्ट्रीय विचारधारा के सुकवि थे। उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया।

ब्रजभाषा तथा अवधी—दोनों पर उनका समान अधिकार था। उनके काव्य ग्रन्थों में उल्लेखनीय हैं—'काव्य-कोकिल', 'अन्न-कथा', 'दुःख-गाथा' तथा 'विजय' आदि। उन्होंने अवधी में सुन्दर ग्राम गीतों की रचना की है। कुछ घनाक्षरियाँ भी लिखी हैं, एक प्रस्तुत है—

जब ते सुनानि कलकत्ता काँगरेस मैंहाँ, हियरा खरोंचिनी गँधेवा केरि बोलिया।
तब ते बहदुरन साहेब की छाती पर, चलै लाग मूसरु और तंग ह्वैगै होलिया।
भोरी-भोरी गोरी सब झोरी असबाबु बाँधि, भागै की जुगुति माँ निहारै लगीं कोलिया।
सुनौ हो 'ब्रजेश' मोरी जानि यहे कारन ते, भारत माँ उड़ै लगी उड़न खटोलिया।

'सती पियरिया' शीर्षक चक्कीगीत (जँतसार) की निम्नलिखित पंक्तियों में भारतीय सती की यह प्रतिज्ञा देखते ही बनती है—

ई दुनियाँ मैंहाँ जब लौं धरम अहै,
जब लौं अहइ चउबहियाँ हो राम।
तब लौं धरतिया क फोरि को निकरा,
जो छुवइ सतिया केरी छहियाँ हो राम। (माधुरी, वैशाख, सं. 1986)

'स्वान चिरई भारत' शीर्षक रचना की इन पंक्तियों मे करुणरस का सुन्दर परिपाक है—

भारतैसि स्वान चिरई का दुवौ टाँगन का, हाय रे बेदर्दी चिड़ी मारु एकु तोरे देति।
पखनन नोचि-नोचि ऐसी वैसी फेंक देति, लोहे क्यार किल्ला लिहे आँखी दुनौ फोरे देति।
चैंउ चैंउ करति चिरय्या च्वाँच बाय-बाय, मुदा ऊ कसाई बार-बार झकझोरे देति।
टाँग पूँछ तोरे देति, प्याटहू क फोरे देति, दौरो हो 'ब्रजेश' नहीं घींच हू मरोरे देति।

16. कवि केदारनाथ त्रिवेदी 'नवीन' : कौरैया-सरावाँ नामक ग्राम में अगहन, शुक्ल दशमी, सं. 1952 वि. को पं. सदानन्द त्रिवेदी के यहाँ जन्मे श्री केदारनाथ त्रिवेदी 'नवीन' काव्य-धुरीण थे। उन्हें यह उपाधि काशी से प्राप्त हुई थी। वे आजीवन परिषदीय विद्यालय में अध्यापक रहे। चार वर्ष उप-विद्यालय-निरीक्षक के रूप में भी उन्होंने काम किया। 'नवीन' जी प्राचीन शैली के प्रौढ़ कवि थे। उनका खड़ी बोली पर जितना अधिकार था, उतना अधिकार ब्रजी तथा अवधी पर भी था। 'कुलीन', 'नवीन-रामायण', 'नवीन-बौछार' आदि उनके प्रकाशित ग्रंथ हैं।

'नवीन' जी की रचनाओं में सामाजिक कुरीतियों पर करारा प्रहार है। प्रस्तुत छन्द में उस पुरुष का व्यंग्यात्मक वर्ण है, जो सात वर्ष की कन्या का बासठ वर्ष के पुरुष से विवाह कर देने में संकोच नहीं करता। बालविवाह समर्थक की पत्नी की ग्लानि इन पंक्तियों में मुखर है—

पाले हौं परी मैं कुलभुजना मरदवा के, जानि जो न पावै नीक नाग पूर खाँगा है।
सतई बरस बिटिया का लागी सावन के, बर बूढ़ बासठि बरस क्यार भ्वाँगा है।
दैजो देइ कैहाँ साढ़े स्वारा सै सकरि आयी, ऐसी दुनियाँ मा औरु कौन भला प्वाँगा है।
सात बाढ़ि साठि छिदनौं माँ दिहे बैठि हाय, साँचौ माँचु म्वार मनई तौ बड़ा च्वाँगा है।।

—सुकवि, अगस्त 30

'गाँव की महिमा' शीर्षक एक लम्बी कविता के कुछ अंश देखिए। कृषकों के निष्कलुष जीवन का बड़ा ही स्वाभाविक चित्र इन पंक्तियों में भावनीय है—

सकल प्रानिन के प्रान अधार, धरे काँधे पर जग का भार।
जहाँ के मनई बड़े उदार, करैं डगरोहिन का सतकार।

खेत का धन्धा आठौ जाम, करइँ ना छिनहू भर बिसराम।
जहाँ नित सहैं सीत और घाम, न तमिकौ तीन पाँच ते काम।
सराहति है जेहि का संसार, गाँव की महिमा अमित अपार।।
सुनैं सब मिलि भगवत पुरान, देइँ दसबरना गौसठु दान।
ध्याइ मनहें मन मा भगवान, करइँ सब तीरथ बरत महान।
जहाँ पर सतोगुनी व्योहार, गाँव की महिमा अमित अपार।।

रामवनवास से सम्बन्धित इस उद्धरण में मुहावरों का कितना सार्थक प्रयोग हुआ है, देखें। ये मुहावरे लोक-जीवन से गृहीत हैं, इसलिए एक विशेष सौन्दर्य की सृष्टि कर रहे हैं—

सब ऊँचे दिखराय दिहिसि, तिरिया चरित्र दरसाय दिहिसि,
रानी पर रंग चढ़ाय दिहिसि, पट्टे अस खूब पढ़ाय दिहिसि,
वरदान की याद दिवाय दिहिसि, सब रंगु म भंगु कराय दिहिसि।

'नवीन' जी ने सरिया-सोहर भी पर्याप्त मात्रा में लिखे हैं। इनसे उन्हें पर्याप्त प्रसिद्धि मिली है।

17. पं. बलभद्रपसाद दीक्षित 'पढ़ीस' : अवधी की नवीन मुक्तक कविता के विकास और विभास में भाद्रपद सं. 1955 वि. में अम्बरपुर में जन्में श्री 'पढ़ीस' का विशेष योगदान है। उनकी काव्यकृति 'चकल्लस ने' जो सं. 1990 वि. में गंगा फाइन आर्ट प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित हुई है, अवधी की मुक्तक कविता के लिए एक ऐसा मार्ग प्रशस्त किया जो आज भी गतिमान है। नवीन भाव-भंगिमा, नया छन्द-विधान तथा सहज जनभाषा की दृष्टि से 'पढ़ीस' जी का साहित्य निश्चय ही अवधी का श्रृंगार है।

'पढ़ीस' जी की रचनाएँ भारतीय ग्रामीण जीवन को मनोरम झाँकी प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। 'हमार राम' शीषर्क कविता में गाँव में आई बहिया का आँखों-देखा मार्मिक वर्णन है। निम्नलिखित उद्धरण में बाढ़ की विभीषिका के साथ ही कवि की विवशता का स्वर भी सर्वथा मुखर है—

तीखि धार ते कटयिं कगारा, धरती धँयसि पतालु।
ललि लखि.बिधना की लीला हम, रोयी हाल ब्यहाल। मड़इया0
आँधी का टिप्पा ह्वयि आवा, हाँक न पहुँचयि हाट।
मूसर धार साँझ ते बरसयिं, तिहि पर बज्जरु फाट। मड़इया0
सूसी घरिया रन की भीयिं, मगरमच्छ उतरायि।
काटयि दउरयिं लीलि लेयिं, मुँह बायि-बायि रहि जायिं।
मड़इया के रखवार हमार राम।।

18. कवि पं.उमाप्रसाद वाजपेयी 'सुजान' : कविवर 'सुजान' का जन्म सं. 1960 वि. में अरथाना में हुआ था। उनके पिता पं. तुलसीराम वाजपेयी साहित्य-मर्मज्ञ थे। 'सुजान' जी हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के 'साहित्यरत्न' थे तथा संगीत एवं अभिनय में विशेष रूचि रखते थे। उनके ग्रन्थों में उल्लेखनीय हैं—'चूकनाथ-चरित्र', 'कृष्णकीर्तन', 'नैमिषारण्य', 'दुर्गावती', 'कुसुमांजलि', 'परमार्थ-प्रवेश' तथा 'दहाड़'। इनमें से अन्तिम पुस्तक 'दहाड़' की अधिकांश रचनाएँ अवधी में हैं, जो विकास-गीतों के रूप में हैं। इन गीतों में पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा हुए नवनिर्माण का स्वर मुखर है। 'दहाड़' (पृ. 15) के निम्नलिखित गीत में विकसित गाँव की एक महिला के हृदयोद्गार के माध्यम से इसी स्वर की झंकृति है—

मोरि फुलबगिया महकि रही।
सन् सन् सन् सनकति पुरवैया, निबिया लहकि रही।।

रजनी गन्धा जुही नेवारी, फूलि रही गुलाब की क्यारी,
लहर लहर लहराति बेलि, बिरवर पर लहकि रही।।

19. पं. उमादत्त सारस्वत 'दत्त' : सं. 1962 वि. की ज्येष्ठ अमावस्या को बिसवाँ में पं. रामदास के यहाँ जन्मे श्री उमादत्त आत्मविज्ञापन से दूर एकान्त साहित्यसेवी हैं। उन्होंने अपनी मौलिक प्रतिभा से साहित्य की प्रायः सभी विधाओं को परिपुष्ट किया है। किरण, किसलय, कोयल, प्रवासीपति (बृहत्काव्य), मन्दोदरी (खण्डकाव्य) तथा मरतराम की कुंडलियाँ उनके काव्य-ग्रन्थ है। 'लेखलतिका' निबन्ध-संग्रह है। 'भाई-बहन' कहानी-संकलन है। 'मिलन' सामाजिक-नाटक है। मस्तराम का चिट्ठा, मस्तराम का सोंटा तथा भैया के चुलबदल व्यंग्य-पत्र हैं। इस प्रकार, 'दत्त' जी का कृतित्व बहु-आयामी है।

'दत्त' जी ने अवधी में पर्याप्त मात्रा में लिखा है। उनकी इस कोटि की रचनाएँ व्यंग्य-विनोद का सुन्दर उदाहरण हैं। कुंडलिया छन्द में व्यंग्य अच्छा जमता है। इसमें दोहे के अन्तिम चरण की पुनरुक्ति 'ऐटमबम' का काम करती है। इसलिए उनकी अधिकांश अवधी रचनाएँ कुंडलिया छन्द में ही हैं। इन कुंडलियों का वर्ण्य विषय समाज-सुधार, राजनीतिक विसंगतियों पर प्रहार, महँगाई तथा फैशन आदि हैं। अनमेल विवाह को लक्ष्यकर 'जुगुल जोड़ी' शीर्षक कविता की रचना हुई है। इसमें कल्पना का जो चमत्कार है, उक्ति का जो वैचित्र्य है, वह मन मुग्ध किये बिना नहीं रहता। वर तथा वधू के लिए दी गयी उपमाएँ हृदय को गुदगुदाने वाली हैं। साथ ही, दम्पति के विरोधाभासी व्यक्तितत्व को बिम्वित करने में सर्वथा सफल हैं। कुछ उदाहरण देखें—

तुम भुरजी के करछुला, उइ भुरकी रंगीन।
तुम हाथी उइ मेढ़की, कस सुन्दर यू नेह।
छुई मुई की उइ लता, तुम बबूर के बेंट।
तुम गाँजर के तोंदपति, उइ लखनौवा नारि।
उइ कालिज की ललमुही, तुम क्वैला अस स्याह।
उइ पूनो की राति, सनीचर अस तुम करिया।

'दत्त' जी काव्य की प्राचीन शैली के पक्षधर हैं। उसमें उन्हें जो रस की सिद्धि होती है, वह मुक्त छन्द वाली कविताओं में नहीं। ऐसी कविताओं को वे 'सरपट्टा' या 'रबड़-केचुआ' छन्द वाली रचना कहते हैं। इस कोटि के रचनाकारों को लक्ष्य कर उन्होंने कई कविताएँ लिखी हैं। इनमें 'जै ब्यालौ' तथा 'कतरब्यौंतिया' आदि उल्लेखनीय हैं।

20. कवि पं. रामनरायण त्रिपाठी 'मित्र' : स्वतंत्रता-संग्राम-सेनानी श्री 'मित्र' चतुरैया-भिलावाँ की विभूति थे। उनकी 'हरगंगा' तथा 'दादनि' अवधी की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इनका रचनाकाल 1940-45 ई. है। 'मित्र' जी का निधन 11 मई, 1974 ई. को लगभग सत्तर वर्ष की अवस्था में हुआ। 'मित्र' जी की 'पंच बनने के अनधिकारी' शीर्षक रचना के कुछ छन्द उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत हैं। इनमें उन्होंने उन दोषों की ओर संकेत किया है, जिनके होने पर व्यक्ति पंच बनने का अधिकार खो बैठता है। दोहा छन्द में लिखी यह रचना निश्चय ही सामाजिकों को दिशा-बोध कराने वाली है—

खोलि दिवाला और कै, लिहिन जौन ऋन मार।
पंचायत माँ घुसै का, तिन्हैं न है अधिकार।।
चोरी के अभियोग माँ, सजा चुके जी काट।
पंचन का पदु लेइ का, ती न बनावैं ठाट।।
सरकारी धन गुटुकि जी, लेति न अम्ब डकार।

ती बनि पैहैं पंच ना, रोवैं भरि डिड़कार।।
सरकारी चन्दा कबहुँ, जी न दिहिन निबटाइ।
ती जो मँगिहैं पंच पदु, रहि जैहैं मुँह बाइ।।
जी न अदा अब लहि किहिनि, सरकारी लागान।
ती न पंच पदु के लिए, कबहुँ डोलावैं कान।।

'मित्र' जी की रचनाएँ प्रसाद-गुण-सम्पन्न हैं। प्रस्तुत पंक्तियाँ इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैं–

सुधरी तुमरी दशा खोटी नहीं, तन माँ तुमरे रही बोटी नहीं।
लरिका फिरि पाइन रोटी नहीं, तुमका मिली साजि लंगोटी नहीं।

21. कवि श्री लक्ष्मणप्रसाद 'मित्र' एक साधारण कृषक थे। उनका जन्म सं0 1963 वि0 में हिंडौरा में हुआ था। उन्होंने बारहमासा, बहरतबील तथा चौबोलों से लिखना प्रारम्भ किया। फिर उर्दू-मिश्रित सवैया-घनाक्षरी की ओर उन्मुख हुए। अवधी की ओर उनका रुझान 'पढ़ीस' जी के सम्पर्क से हुआ। 'पढ़ीस' जी उनके पड़ोसी तथा अभिन्नहृदय मित्र थे।

'सतनजा' तथा 'बरसाती मेढक' 'मित्र' जी के अवधी ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों में संकलित रचनाएँ लोक-जीवन का सच्चा चित्र प्रस्तुत करती हैं। खलिहान की एक झाँकी देखिए। वर्ष भर के परिश्रम के परिणाम को सामने देखकर किसान का परिवार फूला नहीं समा रहा है–

परि गये पैर फिर झराझरूँ, टूटैं लागीं लौकैं सबकी।
नै आउ हियैं कजरा कबरा, सुनि परै तहाँ हाँकैं सबकी।
रघुवा, रमुवा, दुलिया, मुलिया, मड़नी दौनी माँ जुटे परे।
बिरहा लहचारी गाय करैं, परगट जो मन माँ भाव भरे।
दुलहिनी बड़ेनं की दाब गहे, टिकुवा लिलुवा का हाँकि रहीं।
घूँघट के जार परी मछरी, आँखी आकुल है झाँकि रहीं।
लरिकवा बोंझ की छाहीं माँ, रोवै तब दूध पियाइ लेंइ।
सुख की दुनियाँ माँ कुछ छिन का, रहिकै चुप्पै पौढ़ाइ देंइ।

—सतनजा, पृ. 47।

22. कवि श्री रामदत्त तिवारी 'कुलीन' रौसिंहपुर-निवासी हैं। सं. 1964 वि. में उनका जन्म हुआ। वे जन्मजात कवि हैं। उन्होंने अवधी में पर्याप्त मात्रा में लिखा है। 'कागभुशुण्डिगरुड़-संवाद', 'नारदमोह' तथा 'कुलीनता का नंगा नाच' आदि उनकी प्रकाशित रचनाएँ हैं। 'कुलीन' जी की अवधी की कविताओं में जहाँ क्षेत्रीयता का पुट है, वहीं व्रजी तथा खड़ी बोली का भी व्यापक प्रभाव है। कुछ उदाहरणों से कथन की पुष्टि हो जाएगी। वन्दना का यह छन्द इसी सन्दर्भ में प्रस्तुत है–

ग्वाड़न पै बीर बजरंगी के धरित मूड़, मनहे मनै माँ सीताराम सुमिरत हौं।
उमा सिवसंकर गनेस के नवाई माथ, झाँकी विश्नु राधाकृश्न ध्यान मैं धरत हौं।
जगदम्बा दूरगा रमा की सरनागति माँ, ललिता भवानी के पदारबिन्दुरत हौं।
सुरसति माइ का 'कुलीन' परसाद पाइ, भारत बसुन्धरा का बन्दन करत हौं।

23. कवि डॉ. विन्ध्येश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव बिसवाँ की विभूति थे। उनका जन्म सं. 1967 वि. में तम्बौर में हुआ था। उन्होंने बिसवाँ में ही स्वतंत्र रूप से 'प्रैक्टिस' करने लगे। होम्योपैथ डॉक्टर की उपाधि प्राप्त कर बिसवाँ में ही स्वतंत्र रूप से 'प्रैक्टिस' करने लगे। डॉक्टर साहब ने होम्योपैथ डॉक्टर

के रूप में पर्याप्त ख्याति अर्जित की। वे हिन्दी और उर्दू दोनों ही भाषाओं के समर्थ रचनाकार हैं।

डॉ. साहब जनकवि हैं। उनकी रचनाओं में जनजीवन का व्यापक चित्र्ण मिलता है। उनकी कविता का वर्ण्य विषय जनता की गरीबी, किसानों की दुर्दशा, समाज-सुधार तथ राष्ट्रप्रेम है। हास्य के पुट से उनमें और अधिक मोहकता आ गई है। डॉ. साहब ने जनजीवन में प्रवेश कर गाँव की प्रकृति के दर्शन किये हैं। यही कारण है कि उनमें इतनी सजीवता है। 'भिनसार', 'सँझवाती', 'बरखाबहार', 'सोनपरी' तथा 'सरद जुन्हैया' आदि रचनाएँ सचमुच बड़ी सुन्दर हैं। ग्रीष्म की प्रचण्डता का वर्णन 'ना जानी राम करैयाका' शीर्षक कविता की इन पंक्तियों में देखिए। सरस शब्द-योजना के बल पर प्रस्तुत वर्णन सजीव हो उठा है। यथार्थ तो यह है कि भाषा-प्रयोग की जैसी क्षमता डॉ. साहब में है, वैसी कम पायी जाती है—

जस दइउ तपा अबकी बेरिया, आगिउ बरसी जस बादर ते।
गरमी धरती अस फूँकि दिहिसि, सब जीव जन्त बिल्लाय गये।
नदी तालाब की बात कौनि, जब कुइयाँ सुखाय गये।
पछिहौवा झौंका राति दौस, ना पता लगा पुरवैया का।
सब घासफूस जरिकै रहिगा, आगे धौं राम करैया का।

24. **कवि पं. चतुर्भुज शर्मा** का जन्म पौष, अमावस्या, सं. 1969 वि. में राजापुर खर्ग में हुआ। वे अवधी के समर्थ रचनाकार हैं। उनकी 'कुत्तन भेड़हन-केरि लड़ाई' जो प्रतीकात्मक व्यंग्य-काव्य का सुन्दर उदाहरण है, काफी प्रसिद्ध रचना है।

शर्मा जी ने समाज के पिछड़े वर्ग को जगाने के लिए कई कविताएँ लिखी हैं। एक रचना की कुछ पंक्तियाँ इस सन्दर्भ में देखिए—

तुम कौने दिन अनिकनि पइहौ, दुनियाँ जागी अबहूँ साइहौ।
सुरजो रथु हाँकि अगारचले, सब दूरि करत अँधियार चले,
पंछी सब छाँड़ि बस्यार चले, भँवरा फूलन की वार चले।
इहु समौ चूकि फिरि पछितइहौ, दुनियाँ जागी अबहूँ सोइहौ।

पाकिस्तानी आक्रमण ने भारतीयों के पौरुष की एक बहुत बड़ी चुनौती दी। उनके बारूदी शौर्य में चिनगी लगा दी। फलतः वे गरज उठे। घर-घर में साहस का जो ज्वाला गिरि भड़का, वह शत्रु के प्राण लेकर ही शान्त हुआ। कवियों ने भारतीयों की इस अदम्य भावना का बड़ा ही सुन्दर अंकन किया। शर्मा जी इस अभियान में पीछे न रहे। उन्होंने भारतीय सैनिकों की वीरता का वर्णन करते हुए लिखा—

अस मार पड़ी सबं भूलि गै राह, न सूझि परै चकचौंधे परे।
दिसि पूरब पच्छिम के सब देस, जवानन पायँन रौंदे परे।
चकचूर मिराज जहाज परे, बिथरे जस धूर धिरौंदे परे।
भुट्टवा गवा भागि न जानी कहाँ, यहिकया खटिया तर औंधे परे।

25. **कवि पं. श्याम सुन्दर शर्मा 'कलानिधि'** (सं. 1975 वि., अलादादपुर) को काव्य प्रेम उत्तराधिकार में मिला। वे ब्रजी, खड़ी तथा अवधी तीनों ही बोलियों के समर्थ कवि थे। 'ब्रजबैहर' उनका ब्रजभाषा का काव्य-संग्रह है। 'समीर' तथा 'अनादि' में खड़ी बोली की रचनाएँ संकलित हैं। 'भीललिताचालीसा' अवधी का स्तुतिपरक काव्य है।

'कलानिधि' जी ने विभिन्न छन्दों में काव्य रचना की है। उनके बरवै छन्द विशेष महत्व के हैं। इनमें प्रकृति चित्र्ण, राष्ट्रीय भावना तथा अन्य सामयिक विषयों की सरस अभिव्यक्ति है। उदाहरणस्वरूप कुछ बरवै प्रस्तुत हैं। इनमें तुलसी के जीवन वृत्त का संक्षेप में निर्देष है—

आधी राति अँधेरिया तिरिया नेह।
पैरेउ नदी भदैयाँ, बरसति मेह।।
कामु अन्ध अस सनकति, गेउ ससुरारि।
भवा नारि ते रस बस जो संवादु।
रामचरित इहु जानहु तेहि का स्वादु।। 'रसराज', सित., 1955, पृ.23

26. कवि श्री बाबूराम शुक्ल 'मंजु' (सं. 1980 वि., मुसव्वरपुर) अनुवादक के रूप में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने महाकवि कालिदास के 'मेघदूत' तथा 'रघुवंश' का सरल अवधी में अनुवाद किया है। उनका यह अनुवाद परम्परागत दोहा-चौपाई में न होकर मात्रिक छन्द में है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा—

कामिनी सूघर भरी मनोज, मनोभव की मंजूषा खुली।
ललित छवि छहरति लोल कपोल, अभूषित काम कला मदघुली।
तरंगित लहरैं दोनों तटी, किंकिनी धारे राजमराल।
गामिनी मंथर धीम प्रवाह, भँवर नाभी जस सोहति बाल। -मेघदूत, पृ. 24

एक उदाहरण 'मंजु ग्रामीण गीता' से भी—

ब्रह्मा की जो लीन्हिसि पहिचान, ब्रह्ममय हुइगा ऊ बलवान।
सुख दुख दोनों वहिका एक, छोंड़ि आसक्ति भवा सुखवान।
भीतरी सुख का अनुभव करै, ब्रह्म माँ अन्तःकरण मिलाइ।
अछय सुखलाभ सदा बहु करै, मनै मन बहु पारथ हरषाइ।। पृ. 25

27. कवि डॉ. पुत्तू लाल शुक्ल 'चन्द्राकार' (सं. 1981 वि., पैंदापुर) ने 'अनंग' तथा 'मालूशाही' प्रबन्ध काव्यों की रचना कर पर्याप्त ख्याति अर्जित की है। 'राधाशतक' उनका ब्रजभाषा का काव्य है। 'अमर-वाटिका' में संस्कृत रचनाएँ संगृहीत हैं। 'बुद्ध चरित' अश्वघोष-कृत 'बुद्धचरित' के उत्तरार्द्ध का संस्कृत पद्यानुवाद है।

'मचानु' चन्द्राकर जी की अवधी रचनाओं का संग्रह है। ये रचनाएँ ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं। गाँव की शोभा का वर्णन इन पंक्तियों में प्रशंसनीय है—

प्रकृति के आँचर माँ लहराइ, हिया हरि लेइ गाँउ का हारु।
भीरहरे बरसैराज सुहागु, सँवारा जुग जुग ते सिंगारु।
कियरिया झाँकइ घूँघुट खोलि, ललरिया मुँह की चुइ चुइ जाई।
न जानी कौनु बड़ा असनेहु, पुरबिया बेंदी देइ सजाइ।
मोरला ब्वालै मिठुरस ब्वाल, बाग माँ कुहुकईं म्याओं-म्याउँ।
संग माँ नाचति चलै पुछाड़ि, छुपहुले पखनन पर बलि जाउँ।

कुछ रचनाओं में वर्तमान शासन व्यवस्था के प्रति कवि का आक्रोश भी व्यक्त है। यह आक्रोश इन पंक्तियों में संलक्ष्य है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद भी ग्राम जीवन विकसित न हो सका। एक ग्रामीण की दुःखानुभूति इस उद्धरण में है। वह अब भी पहले की तरह ही पिस रहा है—

हम वहे तना दुखरा गाँठी, पहिले कस अत्याचारु सही।
या बड़े बड़ेन की बात आइ तौ केहि के आगे कहा कही?
बस देखि देखि कै जू भरिगा, जेता सबका उत्थानु भवा।
है वहै रागु, आजाद भला यू कस-कस हिन्दुस्तान भवा।

28. कवि श्री त्रिभुवनदास नैमिषारण्य के स्वामी नारदानन्द के शिष्य हैं। उन्होंने सं. 1991 वि. में 'श्रीरामदर्शन' नामक प्रबन्ध काव्य दोहा-चौपाई शैली में लिखा। विस्तृत वन्दनाओं से कथासूत्र में जो व्याघात उत्पन्न हुआ है, उससे ग्रन्थ के प्रबन्धत्व के सम्मुख प्रश्नवाचक चिन्ह अवश्य लगा है। धनुषभंग के उपान्त का यह वर्णन हमारे इस अभिमत की सिद्धि में सहायक है—

जिमि धनु भंजि जनक दुख भारी, सीय ब्याहि प्रभु कीन्ह सुखारी।
तिमि मम दुक्ख मारि रघुराई, दर्शन देहु नाथ सुखदाई।
पुनि रहि अवध कछुक दिन स्वामी, देवकाज लगि अन्तरयामी।

29. कवि श्री युक्तिभद्र दीक्षित 'पुतान' 'पढ़ीस' जी के सुपुत्र हैं। उनका जन्म सं. 1992 वि. में अम्बरपुर में हुआ। वे प्रगतिवादी विचारधारा के समर्थ कवि हैं। उनकी रचनाओं में आर्थिक स्वतंत्रता का सशक्त आह्वान है। कवि की दृष्टि मे देश की आजादी धनी तथा निर्धन के मध्य की खाई न पाट सकी, इसीलिए उसे वर्तमान स्थिति से गहरा असंतोष है। इसी असन्तोष की अभिव्यक्ति इन पंक्तियों में हैं:

सब कहैं मुलुक आजाद भवा, भारत का मिलिगै आजादी।
मुल तोरी मुरझुल्ली ठठरी पर लदि गै और गरू लादी।
आजाद भये हैं संखपती, उयि तोरि करेजी काढ़ि सकैं।
आजाद भये सेठी साहू, त्याँदन के मेटुका बाढ़ि सकै।

इस खाई को और अधिक चौड़ी करने वाली शासन-व्यवस्था को फूंक देने के लिए कवि किसान को ललकार रहा है—

रे छोड़ भला अब तौ खटिया, दे फूँक फूस की यह टटिया।

अन्यत्र यह समाज के निर्माता किसान को शोषकों से सावधान करता हुआ प्रतीकात्मक शैली में कहता है—

चेतु रे माली फुलवरिया के।
बड़ी जुगुति ते साफ किहे तुयि, झंखर झार करीले।
दै दै रकतु पानरोपे रे, सुन्दर बिरिछ छबीले।
रहि न जायँ गुलाब के धांखे, काँटा झरबेरिया के। चेतु रे।
नासि गई है फसलि रुपहली ले निर्दन्द कुदार।
खोदि खोदि भुइँ समथरि करु औ बढ़िया ढूँढ़ बेसार।
नयी फसलि के नये फूल खिलि महकावै संसार।
टूटि डार ते गूँथि बनै जो देउतन के हिय हार।।

30. कवि डॉ. श्याम सुन्दर मिश्र 'मधुप' (सं. 1993 वि., सरैपा-मैनासी) लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रथम श्रेणी के परास्नातक हैं। वही से उन्होंने 'अवधी के आधुनिक प्रबन्ध काव्य' विषय पर पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की है। आर.एम.पी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीतापुर के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के रूप में वे बहुचर्चित रहे हैं। 30 जून, 1989 ई. को वे सेवा-निवृत्त हुए हैं।

'मधुप' जी की प्रकाशित कृतियाँ है 'गाव का सुरपुर देउ बनाय', 'जागि रहे बापू केर सपन', 'खेतवन क देखि देखि जिउ हुलसै मोर', 'हिन्दुस्तान की झाँकी', 'परम्परा के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक अवधी काव्य' तथा 'अवधी के आधुनिक काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ'। शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली रचनाएँ— 'नवभारत-निर्माता', गंगा का देश', 'विकास की बयारि'। प्रकाशित कृतियों में से प्रथम तीन सम्पादित हैं।

'मधुप' जी की अवधी रचनाओं में देश-प्रेम के मोहक स्वर हैं। उनकी दृष्टि में भारत सच्चे अर्थों

में भा-रत है। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' के सिद्धान्त को यहीं अर्थवत्ता प्राप्त हुई है। यहाँ मानव ही नहीं, पशुओं तक की पूजा होती है। नागों को दूध पिलाना इसी देश के लोग जानते हैं। गंगा का देश जो ठहरा! जिसके कण-कण में भगवान् बसते हों, उसकी यह रीति होनी ही चाहिए–

मानव की तौ बात निराली, हियाँ पसुन ते नात है।
गाय हियाँ मानव की माता, बैल धरम का रूप है।
पूजा होति हियाँ नागन की, कइसी रीति अनूप है।
जल माँ, थल माँ, जन कन-कन माँ, हियाँ बसत भगवान है।
यहु गंगा का देसु हियाँ की माटिव स्वर्न समान है। (गंगा का देसु, पृ. 1)

31. कवि श्री दिवाकर प्रकाश अग्निहोत्री 'दिवाकर' (2 फरवरी, 1927 ई., पकरिया) प्रगतिवादी रचनाकारों में अग्रगण्य हैं। आशा एवं विश्वास से स्पन्दित उनके गीतों से नयी पीढ़ी को काफी प्रेरणा मिली है। उनकी मृत्यु असमय हो गयी।

'दिवाकर' जी वैसे तो खड़ी बोली के कवि थे, किन्तु कभी-कभी अवधी में भी सुन्दर रचनाएँ लिखते थे। ये रचनाएँ अधिकांशतः राष्ट्रीय भावभूमि पर प्रतिष्ठित हैं। चीनी आक्रमण के सन्दर्भ में ये पंक्तियाँ देखें। इनमें वीर रमणी का पति से युद्धभूमि में जाने का आग्रह है–

देसवा पै विपति परी सजन तुम जाउ लाम पर।
बिरथा बातइँ जीति हार की, जस की डोली के कहार की,
मौतउ जहाँ जिन्दगी बनि कइ, हइ बेमौत मरी।। सजन तुम जाउ......

सैनिक पति पत्नी का आग्रह मानकर 'लाम' पर जाता है तथा यहाँ अपने शौर्य की धाक जमा देता है। किंचित् अवकाश मिलने पर वह अपनी पत्नी को पत्र लिखता है, जिसमें विजय का पूर्ण विश्वास अंकित है–

दियना कि जोति बाँचि रही पाती,
समरु जीति, घर अइहँउ सजनियाँ।
पाँउ खुदै बढ़ि रहे अगारी, भुएँ दुलराई खेलावइ कनियाँ।
भोला बाबा के डमरू बाजइ, वैरी भागि रहे मोरी धनियाँ।
खिंची हुअँइ पर बज्र लकीरइ, चीनी रहे बढ़ाइ दुकनियाँ।

कवि 'तिनुके' जैसे अपने जीवन से अत्यन्त सन्तुष्ट है। यह 'तिनुका' ही भगवान् वामन के सदृश विश्व की आँखें खोलने में समर्थ है। निम्नलिखित पंक्तियाँ देखिए। इनमें कवि की विनय-भावना अपनी चरम सीमा पर है–

हम तिनुका हन तउ का हुइगा, हमरौ तौ है संसारु अपन।
अँधरन की आँखी ख्वालै का, भगवान खुदै बनि गे बामन।

कवि की उपर्युक्त 'हम तिनका हन' शीर्षक रचना ने अपने समय में जिस लोकप्रियता का अर्जन किया था, वह बहुतों के लिए ईर्ष्या का विषय है।

32. कवि श्री गजराज सिंह यादव (2 फरवरी, 1930 ई.) जन्में तो खीरी जनपद के चन्दनपुर ग्राम में हुआ, किन्तु उनका कार्यक्षेत्र बिसवाँ रहा। वे श्री हनुमत् रामेश्वर दयाल इण्टर कालेज में अध्यापक रहे। लगभग पैंतीस वर्षों की सेवा के बाद वे वहाँ से 30 जून, 1988 ई. को सेवानिवृत्त हुए हैं।

श्री यादव जी खड़ी बोली तथा अवधी दोनों के ही समर्थ कवि हैं। उन्होंने गीत, छन्द तथा मुक्तक

आदि विभिन्न शैलियों को अपनी भावाभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। 'कल्पना के कुसुम' उनकी खड़ी बोली की काव्यकृति है। 'अमरकीरति' में अवधी की रचनाएँ ग्यारह भागों में विभक्त हैं। छन्दों की कुल संख्या 101 है। इनका वर्ण्य विषय जन्मभूमि का गौरवगान है।

कवि की यह कामना भारतमाता के प्रति उसके असीम अनुराग की व्यंजक हैं। प्रत्येक भारतीय के हृदय यह कामना उद्वेलित हो उठे, तो देश सोने की चिड़िया बने बिना न रहे—

नहिं सूझत अम्ब उपाय कछू, केहि भाँति कहौ रिनु तोर चुकावौं।
यहि ते मन सोधि समोधि भली विधि, छन्दन माँ तुमरौ जस गावौं।
जन-मानस माँ भरि भाव अनूप, स्वदेस सुभक्ति के बीज उगावौं।
तजि चन्दन भाल खरी सुघरी तुहरे पद की रज रोज लगावौं।

33. कवि श्री अवधेश अवस्थी 'सुमन' (सं. 1990 वि., दासापुर) अपने पितामह पं. बदलेव प्रसाद अवस्थी 'द्विजबलदेव' के समान ही प्रत्युत्पन्नमति-सम्पन्न हैं। उनमें आशुकवित्व के संस्कार जन्मजात हैं। खड़ी बोली के साथ ही उन्होंने अवधी में भी पर्याप्त मात्रा में लिखा है। उनकी अवधी रचनाएँ देश की सुन्दर झाँकी प्रस्तुत करती हैं। 'नियोजन' शीर्षक इस रचना में जहाँ देश के विकास की चर्चा है, वहीं पर बशता के खुमार को त्याग देने का भी आग्रह है। कुछ पंक्तियाँ देखिए—

भवा जनतांत्रिक आपन साज, गिरा लन्दन के सिर ते ताज,
सुई तक बनति रहै परदेस, सदा दोसरे लँग देखै देस।
वहौ मुस्किल होइगै आसान, बनति अब अपने हियाँ बिमान,
माल गाड़िन ते ढोइति मालु, रेल का रोजुइ फैलइ जालु।
मोड़ि नद्दिनि की भीषन धार, बाँ सब लँग होइ रहे तयार।
तलो परबसता क्यार खुमार, भरौ भारत माँ नव उजियार।

34. कवि श्री लवकुश दीक्षित (सं. 1990 वि., अम्बरपुर) अवधी के सुविख्यात कवि स्व. बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस' के सुपुत्र हैं। कविता उनकी पैतृक सम्पत्ति है। किसानी करते हुए भी लवकुशजी अवधी तथा खड़ी बोली के सफल गीतकार हैं। आज तक घर-आँगन में गाये जाने वाले उनके अनेक लोकगीत प्रकाश में आ चुके हैं। उनकी अनेक रचनाएँ आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारित हो चुकी है।

श्री लवकुश जी के गीतों में जनजीवन का सफल अंकन है। उन्होंने हृदय के सुख-दुःख, हास-रुदन, राग-द्वेष आदि विभिन्न मनोविकारों को बड़े स्वभाविक रूप में चित्रित किया है। उनके अधिकांश गीतों में किसान की आत्मा की पुकार है तथा कृषि एवं धरती माता की दुहाई है। सांस्कारिक भावनाओं को जागृत करने वाले तथा ऋतु विशेष पर गाये जाने वाले उनके गीतों की संख्या भी कम नहीं है। उनके ये लोकगीत उनके प्रतिभा-वैचित्र्य के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

लवकुश जी के श्रृंगारपरक गीत विशेष रूप से मधुर बन पड़े हैं। ये गीत कवि की 'रति'-भावना के व्यंजक हैं। इन गीतों में वे गीत, जो श्रृंगार के विप्रलम्भ-पक्ष को पुष्ट करते हैं, अपेक्षाकृत अधिक सरस हैं। एक विरह-गीत की कुछ पंक्तियाँ देखिए। इनमें प्रोषितपतिका के हृदय का दुःख सजीव हो उठा है। विरहिणी आँचल के कागज पर काजल की स्याही से परदेशी प्रियतम को पत्र लिखती है। यह पत्र उसकी विरह वेदना का मूर्त रूप है, जिसके साक्षी उसके अश्रु हैं। प्रस्तुत उद्धरण में प्रिय के प्रति नायिका की अनन्यता तथा समर्पण-भाव देखते ही बनता है। उसकी विवशता तो शब्द-शब्द में झंकृत है—

अँचरा क कगदु कजरवा कि स्याही, चिठिया के संग मोरे अँसुवा गवाही,
तोरा नाउँ लइकै कइसे निखउँ सजना? तोरा गाँउ लइकै कइसे/रहउँ सजना।
सब जन जानइँ तुम मोरे मन बसिया, मोरे सब तीरथ चरन तोरे रसिया,

अँखियाँ की पुतरी सपनवाँ सँज्वावइँ, हिय के मँदिर तोरी मूरति बसावइँ,
बसा ठाउँ लइकै कइसे रहउँ सजना, तोरा गाँउ लइकै कइसे रहउँ सजना?

35. **कवि श्री बाँकेलाल मिश्र 'लाल'** (सं. 1996 बव., पियरिया-कोंडर) प्राचीन शैली के समर्थ रचनाकार है। उनका 'साकेत-विरहिणी' नामक खण्डकाव्य बहुचर्चित है। 'आर्यावर्त की कहानी' उनकी प्रसिद्ध अवधी-रचना है। इसमें राष्ट्रीय भावनाओं को सहज स्वर प्रदान किया गया है। अतीत की गौरवशाली परम्परा का स्मरण इन पंक्तियों में है–

कबहूँ यह आर्यावर्त रहै, सब करति रहैं यहि का प्रनाम।
बिनु जेलि गये सुधरे 'डकइत', रिसि भये बड़े जपि राम-राम।
सगरे बेदन का कण्ठ भरे, पूजा पाठै ते कटइँ द्यौस।
ग्यारह-सत्रह की उमिरि होइ, तरवारि केरि बढ़ि जाइ हौंस।
यहि देसवा म चाँदी सोने की, सिक्कन की खुल बजार रहैं।
बनियाँ रतनन ते भरै नावु, लै निडरु करत व्योपारु रहैं।

36. **कवि श्री जगमोहन कपूर 'सरस'** (सं. 1996 वि., सीतापुर) वर्तमान गीतकारों में विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनके काव्यपाठ का ढंग, उनके व्यक्तित्व के सर्वथा अनुरूप होने के कारण, बड़ा मोहक तथा आकर्षक है। उन्होंने प्राचीन शैली में भी पर्याप्त मात्रा में लिखा है। वे जितनी सफलता से जीवन के वैषम्य को प्रस्तुत करते हैं, उतनी ही सफलता से हास्य-रचनाएँ भी लिखते हैं।

'सरस' जी यदा-कदा अवधी में भी लिखते हैं। उनकी ये रचनाएँ विविध-विषय-विभूषित हैं। 'कंचन राख हुइ रहा' शीर्षक गीत की इन पंक्तियों में विप्रलम्भ-श्रृंगार का सुन्दर परिपाक है। ननद का भाभी से यह आग्रह कि वह 'अपने उनके उनको' बुला दे, निश्चय ही अत्यन्त व्यञ्जना-गर्भित है। विरह के ताप का आवेग प्रस्तुत उद्धरण में स्वानुभवित है–

भाभी अपने उनके उनका बुलाय देउ री।
पूस माघ तौ जरै ज्याठु अस, तनु न बसनु कोउ भावै।
आँखिन तन जब लखै निंदरिया अपनु बदनु झुरसावै।
नारी चिठिया लिखिकै उनका पठाय देउ री।।

37. **कवि श्री महेन्द्रकुमार शास्त्री 'सरल'** (सं. 2003 वि., शंकरपुर) काव्य की प्रायः सभी विधाओं में सिद्धहस्त हैं। उन्होंने गीतों को रागात्मकता दी है, गजलों में विसंगतियों पर प्रहार किया है तथा छन्दों को युगीन सन्दर्भों से जोड़ा है। उनके भाव जितने प्रखर हैं, शिल्प उतना ही खरा। उन्होंने खड़ी, व्रजी तथा अवधी–तीनों ही बोलियों में सफल रचनाएँ की हैं। वे संस्कृत के भी सुख्यात सुकवि हैं। अभिनय में भी उनकी विशेष रूचि है। आकाशवाणी से प्रसारित होने वाले अनेक नाटकों में उन्होंने सफल अभिनय किया है। 'संकटा-स्तवन' उनकी प्रकाशित कृति है। यह उनकी किशोरावस्था की रचना है। 'भगवान् महावीर' (प्रबन्ध काव्य), 'गीत-सुधा' (गीत-संग्रह), छन्द-सुधा (छन्द-संग्रह), 'भीम-प्रतिज्ञा' तथा 'पाशुपत' (नाटक) आदि उनके अप्रकाशित ग्रन्थ हैं।

'सरल' जी की अधिकांश अवधी रचनाएँ राष्ट्रीय भावभूमि पर प्रतिष्ठित हैं। 'पाकिस्तान के प्रति' शीर्षक रचना में लोकोक्तियों का अत्यन्त सार्थक प्रयोग है। एक छन्द प्रस्तुत है–काहे करौ बकवास निरन्तर, काहे लगावहु सीमा पै घातैं।

वीरन ते यहि भारत घास के खाइ चुकेउ हर बार म मातैं।
मानति हैं मुलु बातन ते देउता कब वै जिनका प्रिय लातैं।
है मति भ्रस्ट, करौ तुम आजु जो 'नानी के आगे ननेउरे की बातैं।

38. कवि श्री रामकृष्ण श्रीवास्तव 'सन्तोष' (7 जून, 1948 ई.) बिसवाँ की साहित्यिक विभूतियों में उल्लेखनीय हैं। वे जन्मे तो लखीमपुर जनपद के औरंगाबाद में हैं, किन्तु अब बिसवाँ में स्थायीरूप से रह रहे हैं। वे जन्मना कवि हैं। 'दीपवर्तिका' उनकी खड़ी बोली की रचनाओं का संग्रह है। 'बाबू कै बिथा' उनकी अवधी कविताओं का संकलन है। ये दोनों ही पुस्तकें अप्रकाशित हैं। 'क्रान्तिकेतु' नामक काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है।

'सन्तोष' जी की रचनाओं में श्रृङ्गार तथा अध्यात्म का मोहक पुट है। श्रृङ्गारपरक गीत का यह चरण देखि; इसमें वियोग की पीड़ा को राहज स्वर प्राप्त है–

ओ परदेसी पिया परन कै अपने लाज बचावौ।
मुरझाने बिरवन बदि बनिकै सजल बदरिया आवौ।
ई बिछोह की पीरा मौतहु ते जादा दुखदाई।
लोग उड़ैहैं खिल्ली ई डर नामहु अधर न आवै।
कलपति प्रान अधीर द्यौस निसि राग रंगु ना भावै।
बिथरि न जाय जिन्दगी तुमहे कौनौ जतन लगावौ।।

39. कवि श्री कमलेश मौर्य 'मृदु' (सं. 2012 वि., रामाभारी) राष्ट्रीय-चेतना-सम्पन्न रचनाकार हैं। वे प्राचीन शैली के सुकवि हैं। उन्होंने अपनी अवधी-रचनाओं में हिन्दी-हिन्दू-हिन्दुस्तान के स्वर्णिम भविष्य को सजाने-सँवारने का सफल प्रयत्न किया है। 'राष्ट्रपति कै चुनाव' शीर्षक रचना का एक छन्द प्रस्तुत है। इसमें 'भारत गरीब देस केरे राष्ट्रपत्नी बदि, आसुतोस संकर दिगम्बर का लावा जाय' यह परामर्श दिया गया है। उनका तर्क यह है–

उनके तौ साथ नहीं तामझाम जादा कुछु, कपड़ौ न चाही कामु भस्म ते चलाइ लेइँ।
सीधी सादी बैल की सवारी त्रिपुरारी केरि, कम खरचीली बसि घास पातु खाइ लेहँ।
उनके रहै का नहीं महल अटारी चही, उइ तौ सम्मानौ महियाँ आसानु जमाइ लेइँ।
सुधा वसुधा पै बँटवाइ देइँ मुला खुद, लोक कल्यान बदि माहुर पचाइ लेइँ।

इन्हीं विशिष्टताओं के कारण भगवान् शंकर को राष्ट्पति बनाने का निर्णय देवसभा में लिया गया। अन्य देवताओं के सम्बन्ध में जो प्रतिक्रियाएँ सामने आईं, उनका विवरण इस छन्द में द्रष्टव्य है–

देवतन केरे दरबार माँ विचारु भवा, भारत का राष्ट्रपती केहिका बनावा जाय।
याकु ब्याला विनु, पै चाय ना नसीब जहाँ, उनके रहै का छीर सिन्धु कैसे लावा जाय।
ब्रह्मौ जी के नाउं पर आबजेकसनु लागि, बाहनु चुगति मोती कहाँ ते चुगावा जाय
भारत गरीब देस केरे राष्ट्रपति बदि, आसुतोस संकर दिगम्बर का लावा जाय।

'मृदु' जी ने अँगरेजी शब्दों के प्रयोग से अपनी रचनाओं को अधिकाधिक व्यंजक बनाने का का प्रयत्न किया है।

40. कवि श्री फारूख 'सरल' (जमौरा) को जन्म से ही काव्य-रचना के संस्कार प्राप्त हैं। वे लोक-जीवन से जुड़े हुए कवि हैं। इसलिए उनकी रचनाओं में गवँई-गाँव के जीवन्त चित्र हैं, होली के इस छन्द में पर्व का उल्लास किस प्रकार बोल रहा है, देखें–

झूमि झुकि, झुकि झूमि मनुवाँ मयूर नाचै, छाई छवि चहुँ दिसि होली की बहार है।
धरती निहारै बाट अपने किसनवाँ की, वहौ सब रंग कीन्हें सोरहौ सिंगार है।
बाजै ढफ, ढोल, झाँझ, तासे और मजीरा बाजै, बाजति सितार एक तार करतार है।
नान्हि-नान्हि लरिका जवान बूढ़ संग-संग, आई है धमार क्वौ अगार क्वौ पछार है।

श्री फारूख ने सामाजिक विसंगतियों को भी अपनी रचनाओं का वर्ण्य विषय बनाया है। उनकी 'बकरा बिकाऊ है' शीर्षक रचना पर्याप्त लोकप्रिय है। इसमें दहेज-प्रथा पर अत्यन्त तीखा प्रहार है।

उपर्युक्त रचनाकारों के अतिरिक्त उल्लेखनीय हैं श्री श्रीराम त्रिपाठी (संदना), श्री राजाराम वाजपेयी (रामकोट), श्री आदित्य प्रकाश अवस्थी 'दिनेश' (दौली), श्री ओम प्रकाश त्रिपाठी 'प्रकाश' (चन्दनपारा) तथा श्री सोम दीक्षित (रिखौना) आदि। श्री त्रिपाठी जी ने 'पंचायत का प्रपंच' सन् 1952 ई. में लिखा था। श्री वाजपेयी जी की चर्चित पुस्तकें हैं—'कलियुग का चक्कर' तथा 'नैमिष-परिक्रमा'। इनमे से प्रथम पुस्तक का रचनाकाल सन् 1960 ई. तथ द्वितीय का 1961 है। शेष रचनाकारों ने स्फुट काव्य ही लिखा है। प्रौढ़ता की दृष्टि से 'दिनेश दादा' विशेषोल्लेखनीय हैं। 'प्रकाश' जी की बगुला के ब्याह से सम्बन्धित रचना तथा सोम जी की 'सावन में शंकर' शीर्षक रचना काफी प्रसिद्ध है।

उपर्युक्त विवरण यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि सीतापुर जनपद में अवधी की जो काव्य-धारा श्रृंगारकाल से प्रवाहित हुई, वह अद्यावधि अक्षुण्ण है। गुण तथा परिमाण दोनों ही दृष्टियों से यहाँ का अवधी साहित्य पर्याप्त समृद्ध है।

परंपरा के परिप्रेक्ष्य में सीतापुर और अवधी भाषा

भूपेन्द्र दीक्षित

गोमती, सरयू और गंगा के बीच का यह जो शस्य-श्यामल मैदान है, वह बाहर से ही भव्य, समतल और विशाल नहीं है, भीतर से भी प्रशस्त और उदार है। विश्व में यह क्षेत्र अवध के नाम से जाना जाता है। यह भारत का हृदय है। भारतीय संस्कृति के प्रतीक मर्यादा पुरुषोत्तम राम इस अवध प्रदेश में हजारों वर्षों से प्राणवायु प्रदान करते रहे हैं। यहां बोली जाने वाली अवधी सामान्य क्षेत्रीय बोली मात्र नहीं है, उसे शताब्दियों से 'भाषा' का गरिमामय पद प्राप्त रहा है। उसमें संस्कृति के जनपदीय तत्व तो दृष्टिगोचर होते हैं; किन्तु क्षेत्रीयता से वह कोसों दूर है।

अवधी भाषा की तासीर अनूठी है। वह जितनी अनुरागी है, उससे ज्यादा विरागी है; जितनी करुणामयी है, उससे अधिक तेजस्विनी है। इस क्षेत्र के राजर्षि मनु, दधीचि, हरिश्चन्द्र, भगीरथ, रघु. राम आदि सिर्फ राजा नहीं थे, जनता की सेवा और अभ्युदय के लिए सब प्रकार से समर्पित थे। उनकी लोक-निष्ठा अद्‌भुत थी। जिस रामराज्य की प्रशंसा करते हुए महात्मा गांधी गद्‌गद हो जाते थे, उस रामराज्य की अवधारणा, संकल्पना और प्रतिष्ठापना ने इसी क्षेत्र में रूपाकार ग्रहण किया था। तात्विक आर्यावर्त तो यह अवध क्षेत्र ही रहा है। उसके किस-किस आयाम की प्रशंसा की जाय। यह हमारा गौरव है कि सीतापुर भी इसी अवध क्षेत्र का अति महत्वपूर्ण जनपद है।

विश्व का आदि-पुरुष इसी क्षेत्र का रहने वाला था। वह स्वयंभू मनु, प्रजापति, राजा, शास्ता, ऋषि नियंता, स्मृतिकार, क्या कुछ नहीं था। उसने इक्ष्वाकु के लिए अयोध्या का निर्माण कराया था, जिसकी सांस्कृतिक गरिमा आज भी बरकरार है। इसी कुल में हरिश्चन्द्र और दधीचि जैसे राजर्षि हुए, जिन्होंने सत्य और परोपकार के लिए सर्वस्व बलिदान कर दिया। इसी कुल में राजा भगीरथ जन्मे, जिन्होंने देवनदी गंगा को नीचे उतारा। यहीं सम्राट रघु हुए, जिनके प्रभाव में महान सूर्यवंश रघुवंश हो गया, जिनकी प्रशंसा करते हुए कालिदास जैसे कवि थकते ही नहीं। उसी रघुकुल में जो राम नाम का नरोत्तम उत्पन्न हुआ, उसके आगे तो सारी उपमायें बौनी हो जाती हैं जो शक्ति, शील और सौन्दर्य की कसौटी है, जिसको उदाहरण मानकर काव्य-शास्त्रियों ने धीरोदात्त नायक के लक्षण स्थापित किये। राम के रूप में मानों विश्व के सभी आदर्श रूप समा गये, उसी मर्यादा पुरुषोत्तम राम की शक्ति, शील और सौन्दर्य की त्रिवेणी जगत्वंदनीया भार्या भगवती सीता के नाम पर हमारा यह प्यारा नगर सीतापुर स्थापित हुआ, जो साहित्य, कला, संस्कृति और सौन्दर्य का अद्‌भुत प्रतिमान है।

उस विश्वात्मा राम को लेखनी से उतारने वाला आदिकवि बाल्मीकि इस अवध क्षेत्र का ही गौरव था। बाल्मीकि के बाद राम की अद्‌भुत गाथा को जन-जन तक पहुंचाने के उद्देश्य से ही संभवतः उत्तर भारत के सबसे बड़े लोकनायक गोस्वामी तुलसीदास ने लोकभाषा अवधी में जो महाकाव्य 'श्रीरामचरित मानस' रचा वह हिन्दी के ही नहीं, भारत की अन्य भाषाओं के ही नहीं, विश्व की यावत् भाषाओं के समस्त

महाकाव्यों में अनुपमेय जगमगाता हुआ ज्योतिष-पिण्ड है, जिसने सम्पूर्ण विश्व को अपने आकर्षण के अद्भुत बंधन में बांध रखा है। इसी प्रकार महाकवि जायसी एवं अध्यात्म की गंगा बहाने वाले सूफी संतों की प्रेमपीर इसी अवध क्षेत्र में, इसी अवधी जनभाषा ने फैलाई। भारत की जिस गंगा-जमुनी संस्कृति, सामाजिक संस्कृति-कम्पोजिट कल्चर 'का कल्चर्ड गौरव गायन करते हुए हम थकते नहीं, उसे व्यवहार में तो इन्हीं सूफी कवियों और रहीम जैसे रचनाकारों ने ही रूपाकार दिया। अवधी में रचित रहीम के बरवै और दोहों को किस भावना भरे हृदय ने सराहा नहीं।

एक और भावुक सत्य है कि राम एक क्लासिकल हीरो ही नहीं हैं, वे लोकचित्त में ऐसा धंसे हैं कि अवध प्रदेश के हर निवासी को अपने जीवन के हर मोड़ पर राम के साथ सांस्कृतिक तादात्म्य का अनुभव होता है। हर नवजात शिशु यहां राम के रूप में देखा जाता है। उसके जन्म पर सोहर गाये जाते हैं, उसके आलम्बन विभाव भुवन मोहन श्रीराम ही बनते हैं। इसी तरह मुण्डन, उपनयन, विवाह आदि के अवसर पर गाये जाने वाले लोकगीतों में राम जानकी ही छाये हैं। और तो और मरने वाले की अंतिम यात्रा में भी राम नाम छाया हुआ है।

भारतवर्ष की आन्तरिक आभा और ऊर्जा इस अवध क्षेत्र से कितनी फैली और गौरवान्वित हुई, इसका मूल्यांकन तो लंबे-चौड़े लेख में भी संभव नहीं है। मानवीय मनीषा का सबसे बड़ा अधिष्ठान नैमिषारण्य अवध क्षेत्र और सीतापुर जनपद का गौरव है। भारतवर्ष की चेतना का आलोक जैसे सोचता है वैसे ही 'एकदा नैमिषारण्ये' में फूट पड़ता है, इस सत्य का रेखांकन हम किसी क्षेत्रीय अहंकार, आंचलिक अलगाव, भाषा अथवा बोली के प्रति दुराग्रह के तहत नहीं कर रहे, वरन् बिना किसी राग और द्वेष के उस महाभाव की अभ्यर्थना मात्र कर रहे हैं। जहां तक मन, प्राण और आत्मा के जगाने वाले बैतालिकों की बात है तो जो ज्योति की धारा चार सौ साल पहले महात्मा तुलसी से चली थी, वह नवीन, सनेही, अमृतलाल नागर, अवधेश सुमन, पढ़ीस, बंशीधर शुक्ल, रमई काका, दिवाकर, रामकृष्ण सन्तोष आदि साहित्य साधकों के प्राणों में सतत जाग्रत होती रही है। क्या यह केवल संयोग है? नहीं, यह अवध क्षेत्र की महाप्राणता है जो आज भी नई पीढ़ी के ऊर्जस्वी एवं ओजस्वी स्वरों में अपनी धमक विश्व साहित्य में स्थापित किये है।

सीतापुर जनपद में पश्चिमी अवधी बोली जाती है। गांजर, उपरहर तथा भूड़ की बोलियों को यह अपने में समेटे हुए है। सीतापुर जनपद के प्रथम अवधी कवि सरयू राम हैं। उन्होंने जैमिनिपुराण की रचना की है। इस ग्रंथ में पद्म पुराण तथा बाल्मीकि रामायण की अश्वमेध कथा का रोचक वर्णन है। यह वर्णन अनुष्टुप छंदों में पूर्ण हुआ है। इस हस्तलिखित ग्रंथ में 615 पृष्ठ हैं। इसका रचनाकाल संवत् 1805 विक्रमी है।

श्री उदय राम नैमिषारण्य के कवि थे, उन्होंने सगुण विलास नामक पुस्तक लिखी है, जो अप्रकाशित है। इसमें 270 छंद हैं। ठाकुर गणेश सिंह गनपाल रामपुर मथुरा के कवि हैं। 'शिवचरितामृत' नामक उनका ग्रंथ संवत् 1950 में प्रकाशित हुआ। श्री लखनसेन परिहार बिसवां के निकटवर्ती ग्राम के निवासी थे। उनकी 'लक्ष्मी चरित' पुस्तक मिलती है जो कानपुर से प्रकाशित है। श्री समरदास मगरौड़ा के निवासी थे। उन्होंने राग-रागिनियों में बांध कर रामायण की रचना की।

'विश्राम सागर' के रचयिता बाबा रघुनाथ दास पैंतेपुर में उत्पन्न हुए थे। विश्रामसागर में 652 पृष्ठ हैं और यह वर्णनात्मक शैली का उत्कृष्ट काव्य है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसकी भाषा को शुद्ध अवधी बताया है। सन् 1908 में लखनऊ से प्रकाशित हुआ। इसके छः से अधिक संस्करण निकल चुके हैं। मुंशी मंगलदास पैंतेपुर में अध्यापक थे। इनके लिखे 48 ग्रंथों में मात्र 'कृष्णप्रिया' और 'मंगलकोश' ही उपलब्ध हैं। कृष्णप्रिया लखनऊ से 2 जून 1877 को प्रकाशित हुआ। मंगलकोश अप्रकाशित है।

श्री ईश्वरी प्रसाद त्रिपाठी पीरनगर के निवासी थे, इनके ग्रंथ 'राम विलास रामायण' जो लखनऊ से प्रकाशित हुआ, में वाल्मीकि रामायण का छंदबद्ध अनुवाद है। मौलिक न होने पर भी भाव और कला पक्ष सशक्त है। श्री गजाधर शुक्ल 'द्विज शुक्ल' ग्राम पाताबोझ के थे। इनके ग्रंथ है 'रघुवंश तिलक' जिसकी रचना संवत् 1961 विक्रमी में हुई। इन्होंने और भी अनेक ग्रंथ लिखे हैं। पं. जियालाल त्रिपाठी रामकोट के थे। उनके दो प्रकाशित ग्रंथ मिलते हैं- नासिकेतोपाख्यान-भाषा, भक्ताम्बुनिधि।

श्री देवीदास देवी हरगांव के थे। इन्होंने कृष्ण खण्ड नाम के ग्रंथ की रचना सवंत् 1944 वि. में की थी। इसका शिल्प मानस से मिलता-जुलता है। ठाकुर महेश्वर बख्श सिंह रामपुर-मथुरा के थे। इन्होंने कई पुस्तकें लिखीं। यथा- महेश्वर चन्द्रिका, महेश्वर विनोद आदि। इनके सभी ग्रंथ प्रकाशित हैं। श्री गणेश प्रसाद शुक्ल गणाधिप बल सिंहपुर भोइला के थे। वे अपने युग के सफल समस्यापूर्तिकार थे। श्री हरिनाम शर्मा बधइया के निवासी थे। 'बनारस विनोद' और काशीकल्पद्रुम इनकी रचनायें हैं। श्री ब्रजभूषण त्रिपाठी ब्रजेश दरियापुर के राष्ट्रीय विचारधारा के सुकवि थे। श्री केदारनाथ त्रिपाठी नवीन कोरइया सरावां के थे। कुलीन, नवीन रामायण, नवीन बौछार इनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं।

अवधी की नवीन मुक्तक कविता के विकास में अम्बरपुर के पं. बलभद्र प्रसाद दीक्षित पढ़ीस का विशेष योगदान है। उनकी काव्यकृति 'चकल्लस' अत्यंत श्रेष्ठ है। पढ़ीस जी अवधी के गौरव हैं। अरथाना के पं. उमाप्रसाद बाजपेई सुजान की 'दहाड़' प्रसिद्ध रचना है। इसके अतिरिक्त नैमिषारण्य, दुर्गावती, आदि उनकी श्रेष्ठ रचनायें हैं। बिसवां के पं. उमादत्त सारस्वत दत्त ने गद्य और पद्य दोनों विधाओं को पुष्ट किया है। किरण, किसलय, मंदोदरी, मस्तराम का सोटा उनकी प्रसिद्ध रचनायें हैं।

पं. रामनारायण त्रिपाठी मित्र चतुरइया भिलांवा की विभूति थे। 'हरगंगा' उनकी प्रसिद्ध रचना है। श्री लक्ष्मण प्रसाद मित्र हिंडौरा के थे। 'सतनजा' तथा 'बरसाती मेढक' उनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। डा. बिन्देश्वरी प्रसाद बिसवां के थे। 'भिनसार', 'संझवाती', 'सरद जोंधइया' आदि उनकी प्रसिद्ध रचनायें हैं। उन्होंने मुकरियां भी लिखी हैं। श्री रामदत्त तिवारी 'कुलीन' रौसिंहपुर निवासी थे। 'कागभुशुण्डि गरुड़-संवाद', 'नारद मोह' तथा 'कुलीनता का नंगा नाच' आदि इनकी प्रसिद्ध रचनायें हैं। श्री नन्द किशोर 'शाकिर' सीतापुर के भंड़ौवा लिखने में सिद्धहस्त थे।

पं. चतुर्भुज शर्मा राजापुर के थे। वे अवधी के समर्थ रचनाकार हैं। पं. श्यामसुन्दर शर्मा 'कलानिधि' (अलादादपुर) का 'श्री ललिता चालीसा' अवधी ग्रंथ है। श्री बाबूराम शुक्ला 'मंजु' पीन नगर के थे। इन्होंने मेघदूत और रघुवंश का अवधी में अनुवाद किया। डॉ. पुत्तूलाल शुक्ला चन्द्राकर पैंदापुर के थे। इन्होंने 'मचान' अवधी रचनाओं का संग्रह साहित्य को दिया है। श्री त्रिभुवन दास नैमिष के कवि हैं। इन्होंने 'श्रीराम दर्शन' नामक प्रबंध काव्य दोहा-चौपाई शैली में लिखा। श्री युक्तिभद्र दीक्षित 'पुतान' अम्बरपुर के हैं। वे श्रेष्ठ मुक्तककार रहे हैं।

डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप' मैनासी सरैंया के हैं। उनकी प्रकाशित अवधी कृतियां हैं- 'गांव का सुरपुर देउ बनाय', 'जागि रहे बापू केर सपन', 'खेतवन का देखि देखि जिउ हुलसै मोर', 'घास के घरौंदे', 'नवीन बरवै' आदि। इन्होंने अनेक विद्यार्थियों को अवधी पर शोध कराया है, जिनमें डॉ. ज्ञानवती दीक्षित ने 'अवधी के आधुनिक प्रमुख प्रबंध काव्य' विषय पर कानपुर विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। डा. दीक्षित ने अवध क्षेत्र की लोक संस्कृति एवं अवधी भाषा पर अनेकों लेख लिखे हैं, जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं तथा सीतापुर का प्रथम आधुनिक नयी कहानियों का अवधी कथा संकलन 'नदिया जरि कोइला भई' जो लोकवाणी संस्थान, नई दिल्ली से जनवरी 2008 में प्रकाशित हुआ है, उन्हीं की उपलब्धि है।

श्री गजराज सिंह यादव, बिसवां में अध्यापक थे, प्रकृति के अच्छे कवि हैं। श्री अवधेश 'सुमन'

पुरवादासापुर मानपुर के थे। वे अपने पितामह द्विज बलदेव के समान ही समर्थ कवि रहे हैं। पुरवादासापुर रचनाधर्मिता के लिए प्रसिद्ध गांव है। यहां के अनेक नई पीढ़ी के रचनाकार सम्पूर्ण भारत में अवधी का परचम लहरा रहे हैं। श्री लवकुश दीक्षित ग्राम अम्बरपुर के प्रसिद्ध लोकगीतकार हैं, जिन्होंने अवधी का अखिल भारतीय स्तर पर नाम रोशन किया है। श्री रामकृष्ण संतोष बिसवां के थे, वे अवधी के नवगीत प्रणेता के रूप में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने अवधी में कहानियां एवं कवितायें लिखीं। 'बसंदर' उनकी अप्रकाशित पुस्तक है। आधुनिक अवधी का उन्होंने प्रतिमान स्थापित किया।

श्री बांकेलाल मिश्र 'लाल' पियरिया कोढ़र के समर्थ रचनाकार हैं। आर्यावर्त की कहानी उनकी प्रसिद्ध रचना है। श्री महेन्द्रकुमार शास्त्री 'सरल' ग्राम शंकरपुर के थे। 'भगवान महावीर', 'भीम प्रतिज्ञा' आदि उनकी रचनायें हैं। श्री फारूक सरल (जमौंरा), श्री राम त्रिपाठी (संदना), श्री राजाराम बाजपेई (रामकोट), आदित्य प्रकाश अवस्थी (दौली), श्री ओमप्रकाश त्रिपाठी (चंदनपारा), श्री सोम दीक्षित (रिखौना), आलोक सीतापुरी (रिहार), कमलेश मौर्य 'मृदु' (रामाभारी), भगवती प्रसाद अग्निहोत्री (मरसड़ा), डा. सुशील सिद्धार्थ (भीरा) आदि। अवधी के सशक्त हस्ताक्षर हैं।

इस क्षेत्र में अवधी कहावतों, मुहावरों, गीतों और लोककथाओं के साथ ही साथ लोकनाट्य का प्रचुर साहित्य भी जिले के कोने-कोने में फैला है। किन्तु वह अधिकांश असंकलित, असंपादित और प्रकाशनाभाव के कारण निरावृत्त और अनुपलब्ध है। इस दिशा में और अधिक कार्य किये जाने की आवश्यकता है ताकि अवधी भाषा का यह अमूल्य धरोहर विश्व के सम्मुख आ सके।

लखीमपुर खीरी जनपद के प्रमुख अवधी रचनाकार

डॉ. रमेशचन्द्र त्रिपाठी

खीरी जनपद की बोलचाल की भाषा अवधी है। अवधी साहित्य की संवृद्धि में खीरी का योगदान सराहनीय रहा है। इस क्षेत्र में अवधी की कहावतों, मुहावरों, गीतों और लोक-कथाओं के साथ ही साथ लोक-नाट्य का प्रचुर साहित्य भी जिले के कोने-कोने में बिखरा है। पुराने जमाने से ही यहाँ अवधी साहित्य की रचना हो रही है। परन्तु अवधी का अधिकांश साहित्य संकलन, सम्पादन और प्रकाशनाभाव के कारण निरादृत और अनुपलब्ध है। इसलिए अप्रकाशित साहित्य की न तो समीक्षा ही संभव है और न परीक्षा ही। यहाँ खीरी जनपद के कतिपय प्रमुख अवधी कवियों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

आधुनिक अवधी काव्य के प्रमुख हस्ताक्षर **वंशीधर शुक्ल** का जन्म संवत् 1961 में बसंत-पंचमी की पावन तिथि पर हुआ था। वसंत-पंचमी के दिन जन्म होने के कारण उन्हें 'अवधी काव्य का निराला' भी कहा जाता है। पिता पं. छेदीलाल शुक्ल का निवास स्थान जिला-उन्नाव के ग्राम-बीघापुर में था; परन्तु बाद में वे खीरी जिले के मन्यौरा ग्राम के निवासी हुए। शुक्ल जी का जन्म-स्थल यही ग्राम है। वे सारस्वत ब्राह्मण थे। बाल्यावस्था में चेचक तथा गृहकलह से अत्यधिक पीड़ित होने के कारण उनकी शिक्षा-दीक्षा का उचित प्रबन्ध न हो सका। 15 वर्ष की अवस्था में ही पिता का स्वर्गवास हो गया। आरम्भ में कुछ उर्दू का अध्ययन करके बाद में संस्कृत-प्रथमा की परीक्षा उत्तीर्ण की। जीविकोपार्जन के लिए उन्होंने किताब की दुकान खोली जिसके परिणामस्वरूप उनमें साहित्यिक अभिरुचि उत्पन्न हुई। बाद में अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी के सम्पर्क में आये और उनसे प्रेरणा प्राप्त करके सन् 1921 में राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय भूमिका अदा करने लगे। नमक, जंगल तथा झंडा-सत्याग्रह में उन्होंने बड़ी तत्परता से भाग लिया। शुक्ल जी ने कांग्रेस के लखनऊ-अधिवेशन में 'किसान की अर्जी' नामक कविता पढ़ी थी। उसे सुनकर अधिवेशन के अध्यक्ष पं. जवाहरलाल नेहरू रो पड़े थे। शुक्ल जी अपनी कविताओं में जितने ग्रामीण थे उतने ही बाह्य व्यक्तित्व से भी ग्रामीण थे। उनमें 'यदन्तरे तद्बाह्य' की अध्युक्ति का अनूठा विभास था। अवधी किसान के वे मूर्तिमान् विग्रह थे।

जगदीश अवस्थी की अवधी में रचित कविताएँ भी अनूठी हैं। इनका जन्म सीतापुर जनपद की बिसवाँ तहसील में सन् 1936 में हुआ। इन्होंने स्नातक तक शिक्षा प्राप्त की है। सम्प्रति लेखाधिकारी के पद पर जिला विद्यालय निरीक्षक कार्यालय, लखीमपुर-खीरी में कार्यरत हैं। इनकी कोई भी रचना प्रकाशित नहीं हैं। अब ये खीरी जनपद के वासी हो गये हैं। इन्होंने अवधी में हास्य-व्यंग्य-प्रधान कविताओं की रचना की हैं। अवस्थी जी मंचीय कवि होने के साथ ही साथ आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के माध्म से भी अपनी कविताओं का रसास्वादन साहित्य-प्रेमियों को कराते रहते हैं। आज के युग में पाश्चात्य प्रभाव को समाज की समस्या बताते हुए उन्होंने लिखा है :

दुनिया की किहेन तैयारी हम, मनमाने कपड़उ बनवावा।
उबटन ते देही छोलि लीनि, संपू ते बारउ चमकावा।।
ज्यत्ते साबुन हम पढ़े रहन, बारी-बारी ते लेपु किहेन।
कबहूँ नाऊ के घर उदरेन, कबहूँ हाथे ते 'शेप' किहेन।।

आधुनिक अवधी-साहित्य के सम्राट पं. वंशीधर शुक्ल के सुपुत्र **सत्यधर शुक्ल** भी अवधी-काव्य की संरचना में निमग्न रहते हैं। इनकी कविताओं में ग्रामीण प्रकृति की प्रधानता के साथ ही रहस्य-भावना की भी प्रमुखता है। शुक्ल जी ने 'ध्रुव' नामक एक प्रबन्ध-काव्य लिखा है। देखिए—

दीठि बिरवन पर डारइँ कबौं, नजरि लहरिन पर फ्यारइँ कबौं।
कबौं तितुलिनि के घाखइँ पंख, कहैं मन कौन रचिसि अस पंख।
न जानै का मनहे मन सोचि, फूल की पंखुरी डारइँ नोचि।
कबौं पीपर का पात उठाइ, सतीरन सी पसुरी गनि जाइँ।
बिचारइँ रूप-रंग को दिहिसि, कौन हरिअर जीवनमय किहिसि।
कौन उपजावइ पालनु करइ, कौन इनमाँ चंचलता भरइ।
देइ सुख-दुख, को देइ भिंजारि, कौन इन सबका डारइ मारि?
भरइ को चिरयनि के सुर-गान, सिखावइ फूलन का मुस्कान!

उपर्युक्त कविता में जहाँ प्रकृति के गूढ़ रहस्य आश्चर्य-चकित करते है, वहीं भावनात्मक रहस्यवाद भी दर्शनीय है।

इनके अतिरिक्त, **फारुख सरल, नमकीन, 'ब्रजेश'** आदि की रचनाएँ भी अवधी साहित्य का संवर्द्धन करने में सहायक सिद्ध हो रही हैं, परन्तु जो मार्मिकता, प्रेषणीयता एवं चिन्तन की प्रबुद्धता वंशीधर शुक्ल में मिलती है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

खीरी जनपद के अवधी कवियों के इस परिचायात्मक विवरण से स्पष्ट है कि अवधी का काव्य-क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है।

गोण्डा जनपद के प्रमुख अवधी रचनाकार

डॉ. शिवनारायण शुक्ल

भारतीय संस्कृति एवं साहित्यिक चेतना के विकास में अवध-क्षेत्र का योगदान देशी विद्वानों, विचारकों, इतिहासकारों के ही समान विदेशी पण्डितों ने भी स्वीकार किया है। भारतीय धर्म-साधना के दो सगुण ज्योति-केन्द्र राम और कृष्ण के जीवन एवं उनकी लीला को लेकर अवध-क्षेत्र के कवियों ने ब्रज एवं अवधी भाषा में पुष्कल साहित्य की सर्जना की है। इस अवध-क्षेत्र की गोनर्द-भूमि पुराणकाल से ही चर्चा का विषय रही है। गोनर्द-क्षेत्र के अन्तर्गत वर्तमान समय का गोण्डा और बहराइच का लगभग सम्पूर्ण भू-भाग आ जाता है। प्रस्तुत लेख में गोण्डा जिले के अवधी-काव्य की एक संक्षिप्त परिचयात्मक झाँकी प्रस्तुत की जा रही है।

गोण्डा जनपद के अवधी-काव्य की विकास-परम्परा मानसकार तुलसी से लेकर आधुनिक युग में तुलसी का यशोगान करने वाले 'विकल गोण्डवी' तक में देखी जाती है। माना कि गोण्डा का सूकरखेत तुलसी की गुरु-भूमि के रूप में ही स्वीकृत है, फिर भी तमाम विद्वान तुलसी की जन्म एवं कर्मभूमि के रूप में भी गोण्डा की दक्षिणी सीमा पर स्थित सूकर-खेत को ही मान्यता देते आ रहे हैं। यदि तुलसीदास-विषयक इस विवाद से विरत होकर चर्चा की जाय, तो भी गोण्डा जनपद के अवधी कवियों का सूत्र हिन्दी के वीरगाथाकाल से पकड़ा जा सकता है।

1. कवि अनन्यदास—अनन्यदास गोण्डा जनपद में जन्मने वाले प्रथम अवधी कवि थे। इनका आविर्भाव भारतीय इतिहास के राजपूत-काल में हुआ था और यह चौहान-नरेश दिल्लीश्वर पृथ्वीराज के दरबारी कवि होने के साथ-साथ उनके धर्मगुरु, साधना-शिक्षक एवं उपदेशक भी थे। डॉ. भगवती प्रसाद सिंह ने 'सरोज'-कार शिव सिंह सेंगर का हवाला देते हुए लिखा है कि अनन्यदास गोण्डा जनपद के चकेदवा ग्राम के निवासी तथा दिल्ली पति पृथ्वीराज चौहान के राज-कवि थे। संवत् 1225 में पैदा होने वाले कवि अनन्यदास ने अपने आश्रयदाता को राजयोग की शिक्षा देने के लिए 'अनन्ययोग' नामक भक्ति सिंह एवं ज्ञान-विषयक काव्य-ग्रन्थ की रचना की थी, जिसकी कुछ पंक्तियां उदाहरणार्थ उद्धृत की जा रही हैं :

का होत मुड़ाये मूड़बार। का होता रखाये जटा-भार।।
का होत भामिनी तजे भोग। जौ लौं न चित्त थिर जुरै जोग।।
थिर चित्त करै सुमिरन सँभार। ऊपर साधै सब लोकचार।।
यह राजयोग सुख को विधान। कोउ ज्ञानवन्त जानत सुजान।।
सुख मारग यह पृथिचन्दराज। यहि सम न आनतम है इलाज।।

2. बाबा वेणीमाधवदास—मानसकार तुलसी की शिष्य-परम्परा में अग्रणी भक्त कवि बाबा वेणीमाधवदास गोण्डा के निवासी थे। सरोजकार सेंगर महोदय ने इनका परिचय देते हुए लिखा है—

'वेणीमाधवदास, पसका, जिला गोण्डा, संवत् 1655 में उपस्थित, यह महात्मा गोस्वामी तुलसीदास जी के शिष्य, उन्हीं के साथ रहे और गोसाई जी के जीवन-चरित की एक पुस्तक– 'गोसाई-चरित' बनायी है। इनका देहान्त संवत् 1699 में हुआ।

जार्ज ग्रियर्सन ने अपनी टिप्पणी में लिखा है– 'वेणीमाधवदास, पसका, जिला गोण्डा के, 1600 ई. में उपस्थित। यह गोसाई तुलसीदास के शिष्य थे और लगातार उनके साथ रहे। इन्होंने उनका जीवन-चरित 'गोसाई-चरित' नाम से लिखा है। यह 1642 ई. में मरे।

पं. गणेशदत्त जी ने 'हिन्दी-काव्य-संग्रह में लिखा है कि 'ये कवि जिला गोण्डा में धग्घर के निकट बसे पसका के रहने वाले थे और तुलसीदास के शिष्य थे। ये बड़े रामोपासक तथा गुरु-भक्त थे। गोसाई जी के संग में फिरते थे। इन्होंने तुलसीदास की जो सिद्धताएँ देखी थीं वे सब अपने ग्रन्थ-'गोसाई-चरित' में लिखी हैं। ये सं0 1699 में हरिपुरवासी हुए'।

'गोसाई-चरित' बाबा वेणी माधव दास की एकमात्र रचना है; जिसकी भाषा अवधी है और जिसमें दोहा, चौपाई छन्द का प्रयोग किया गया है। इस काव्य में तुलसीदास जी के आचार-विचार और जीवन की सिद्धता का आँखों-देखा हाल बखान किया गया है।

3. **दिल्लराय**—दिल्लराय दिल्ली के बादशाह अकबर के दरबारी कवि एवं वीर योद्धा थे। किसी जमाने में राजस्थान से इनके ब्रह्मभट्ट पूर्वजों ने आकर गोण्डा जनपद के वजीरगंज क्षेत्र में भटपुरवा नामक ग्राम बसाया था। इन्हें अकबर से एक लम्बी जागीर भी प्राप्त थी। डॉ. भगवती प्रसाद सिंह ने लिखा है कि इनके वंशज आज भी गोण्डा के दक्षिणी भाग में नवाबगंज के पास भटपुरवा नामक गांव में रहते हैं। यह स्थान अयोध्या से उत्तर पश्चिम के कोने पर लगभग 10 मील की दूरी पर स्थित है।

दिल्लराय एक प्रतिभावान् कवि थे। अपनी प्रतिभा के अनुकूल आश्रय खोजते हुए यह दिल्ली गये और अकबर बादशाह को अपने कुछ छन्द सुनाये जिससे प्रभावित होकर अकबर ने इन्हें अपने दरबार में रख लिया। एक बार दिल्लराय ने अकबर को एक पद्य सुनाया जिसमें एक पंक्ति थी—'दिल्ल वरंगन बरबरौ' इसे सुनकर पारखी बादशाह अकबर ने दिल्लराय के उक्त में 'मारक' दोष बताया। कविता का दोष फलित हुआ और थोड़े समय के बाद अकबर की सेना के साथ बहराइच स्थित इकौना के विद्रोही राजा महासिंह का दमन करने के लिए सेनापति के रूप में आये दिल्लराय पागल हाथी द्वारा दबोच कर मार डाले गये। यह सूचना पाकर नवाबगंज गोण्डा के पास भटपुरवा से उनकी पत्नी आयी और उनके साथ सती हो यगी। इनकी कविता के उदाहरण बहुत कम प्राप्त हैं।

4. **अनीराय भट्ट**—इनका काल संख्या 1657 से संख्या 1700 तक माना जाता है। अनीराय भट्ट दिल्लराय के छोटे भाई थे। बड़े भाई दिल्लराय की मृत्यु के बाद ये अकबर के दिल्ली दरबार में ससम्मान प्रतिष्ठित हुए। अकबर की मृत्यु के बाद जहाँगीर ने अनीराय को अपने दरबारी कवि का सम्मान प्रदान किया। थोड़े ही समय में अमीराय जहाँगीर के प्रिय एवं मुँह लगे कवि हो गये जिससे अन्य दरबरियों को इनसे बड़ी ईर्ष्या होने लगी और ये दरबार में बादशाह से दूर बैठने लगे। एक दिन बादशाह जहाँगीर उनके दूर बैठने का कारण पूछा तो अनीराय ने यह दोहा सुनाया—

'स्वान समीपै रहत है, गजै रहत अति दूरि।
अनी आदरो चाहिए, का नियरे का दूरि।।'

जहाँगीर ने उन्हें पूरे समादर के साथ दरबार में स्थान दिया। कुछ दिन के बाद बहराइच जिले में स्थित इकौना के राजा महासिंह ने पुनः विद्रोह किया जिसका दमन कने के लिए अनीराय के साथ बादशाह की सेना ने इकौना पर चढ़ाई कर दी। घमासान युद्ध हुआ, पर महासिंह के किले का फाटक नहीं तोड़ा जा सका। सेना का संचालन करने वाले फरीद खाँ ने कवि अनीराय से पूछा कि जीत कब

होगी। अनीराय ने कविता में उत्तर दिया– 'अनी अकासबानी सुनो भोर होत गढ़ टूटि है।' सचमुच प्रातः काल होते-होते इकौना दुर्ग का फाटक तोड़कर मुगल सेना ने महासिंह को पराजित कर दिया। इससे प्रसन्न होकर जहाँगीर ने अनीराय को भारी संपदा देकर सम्मानित किया। जीवन के अन्तिम समय में अनीराय ने अयोध्या के पास स्थित अपनी जन्मूभूमि की ओर वापस जाने की इच्छा प्रकट की और बादशाह से अर्ज किया कि–

'कहै अनीराय सुनो बादशाह जहाँगीर,
अवधनगरी के निकट थोरी भूमि दीजिए।'

जहाँगीर ने अनीराय को जागीर दी। पर उसमें सूरत सिंह नामक कारिंदा अड़ंगा डाल रहा था। इस पर प्रातःकाल ही उसके घर पहुँचकर अनीराय ने यह छन्द सुनाया–

मुनिन कइ गुन सुनि-सुनि कइ अनसुनी करइ, जग मा तेहि कीरति अकीरति कहार री।
आजु आओ, काल्हि आओ, सुबु अरु साम आओ, कहाँ लौ दिया करइँ भौंरों कैसी भाँवरी।
निपट कुचेत हो कि दाबे काहू प्रेत हौ, कि टोनन अचेत हो, भई है मति बावरी।
सेवा किहे मूरति पसीजति है पाथर की, येती बड़ी मूरति पसीजति न रावरी।।

यह सुनकर कारिन्दा सूरतसिंह बहुत लज्जित हुआ और उसने पूरी जमीन के कागज पर मोहर लगा दी। आज भी 'रूपीपुर' नामक गाँव में अनीराय के वंशज रह रहे हैं।

अनीराय भट्ट की एक पुस्तक 'भाषा-गीता' बतायी जाती है। यह प्रति खण्डित रूप में सुलभ है। इसकी भाषा अवधी है। इसमें दोहा, चौपाई छन्द का प्रयोग हुआ है। 'भाषागीता' अनीराय के जीवन के अंतिम समय की रचना है। भाषा की पहचान के लिए इस ग्रन्थ की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की जा रही हैं–

आपन धरम देखि कइ पारथ। मन महँ सोच न करहु अकारथ।।
आपन धरम छाँड़ि नहिं अउरे। छत्री कहँ सोभा नहिं ठौरे।।
जुद्ध धरम आपन जो तजहू। तजि कीरति पारथ जग लहहू।।
रणज्जूझ प्रापति सुर लोकू। जिते भोग प्रिथवी नहिं सोकू।।
हानि-लाभ, सुख-दुःख सम कीजै। तो जय अजय पाप नहिं लीजै।।

इस पुस्तक के अन्त में दी गयी पुष्पिका से पता चलता है कि यह गीता के ही समान कृष्ण-अर्जुन-संवाद के रूप में अवधी भाषा में लिखी गयी है।

5. लोक कवि घाघ–लोककवि घाघ का जन्म सं. 1696 विक्रमी के आस-पास माना जाता है। आचार्य पं. रामचन्द्र शुक्ल, बाबू श्यामसुन्दरदास आदि ने घाघ की जन्मभूमि गोण्डा जनपद में स्वीकारी है। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी-शब्द-कोश' में घाघ का परिचय देते हुए स्पष्ट लिखा गया है कि घाघ गोण्डा के निवासी थे। 'हिन्दी-शब्द-सागर' में यह उल्लेख मिलता है कि घाघ गोण्डा के रहने वाले एक बड़े चतुर और अनुभवी व्यक्ति थे जिनकी कही हुई बहुत-सी कहावतें उत्तर-भारत में प्रसिद्ध हैं। खेती-बारी, ऋतु-काल तथा लगन-मूहूर्त आदि के सम्बन्ध में इनकी विलक्षण बातें किसान तथा साधारण लोग बहुत कहा करते हैं। जैसे–'[illegible] चाम से चाम कटावैं [illegible]री भुइयाँ सोवैं, घाघ कहैं ये तीनों भकुआ उढरि जाँय और रोवैं।

कुछ विद्वान् इनकी जन्मभूमि रायबरेली तथा कुछ अन्य फतेहपुर जिला में मानते हैं। भारतीय वृष्टि-विज्ञान पर मेरे निर्देशन में श्रीमती नीता तिवारी द्वारा प्रस्तुत किये गये शोधप्रबन्ध में उन्होंने घाघ को अपना पूर्वज और फतेहपुरवासी माना है। नीता तिवारी अवध विश्वविद्यालय के पूर्व कुलसचिव डॉ. धुनीराम त्रिपाठी की पुत्रवधू हैं। जो भी हो, गोण्डा के लोक-कवि के रूप में घाघ की मान्यता के

प्रमाण काफी पुष्ट हैं, अतः उनकी यहाँ चर्चा अपेक्षित है। घाघ की कहावतों की भाषा गोण्डा-बहराइच में बोली जाने वाली ठेठ अवधी है। उदाहरणार्थ–

'दिन को बद्दर राति निबद्दर, बहै पुरवइया झब्बर झब्बर।
घाघ कहै कछु होनी होई, कुआँ खोदि कै धोबी धोई।।
सावन बहु पुरवइया, भादौं बहु पछियाउ।
कहै घाघ सुन घाघनी, वर्धा भीतर लाउ।।

घाघ ने किसी व्यवस्थित ग्रन्थ की रचना नहीं की थी। खेती-किसानी, घर-गृहस्थी, खगोल, ज्योतिष, नीति-रीति आदि पर प्रायः फुटकल कहावतें पद्य के रूप में कही और रची थीं। सन् 1913 ई. में पं. रामनरेश त्रिपाठी ने घाघ के लगभग चार सौ छन्दों का एक संकलन हिन्दुस्तानी एकेडेमी से प्रकाशित करवाया था।

सन्त तुलसीदास और उनका हनुमान-चालीसा

रामदूत बजरंगबली हनुमान् के परम भक्त सन्त तुलसीदास गोण्डा जनपद के मध्यकालीन प्रमुख अवधी कवि हैं। तुलसी नाम से हिन्दी साहित्य में तीन कवियों की चर्चा है–एक मानसकार तुलसी, दूसरे घट-रामायण के रचयिता हाथरस वाले तुलसी, तीसरे हनुमान-चालीसा के रचयिता गोण्डा वाले तुलसी। यहाँ हम हनुमान-चालीसा के रचनाकार तुलसी के विषय में चर्चा कर रहे हैं। हिन्दी विद्वानों में यह एक बड़ी भ्रान्ति है कि हनुमान-चालीसा भी मानसकार तुलसी की ही रचना है, जबकि सत्य यह है कि इसके रचयिता तुलसीदास गोण्डा जनपद के बलरामपुर और अब तुलसीपुर तहसील में स्थित भवनियापुर ग्राम के निवासी और जाति के कुर्मी तथा स्वभाव से परम सन्त थे।

मानस-चतुश्शती के अवसर पर नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित तुलसी-ग्रन्थावली में उपलब्ध टिप्पणी में कहा गया है कि–'गोस्वामी जी के नाम से प्रसिद्ध ग्रन्थों में हनुमान-चालीसा की बड़ी प्रतिष्ठा है, किन्तु लगभग 30 वर्ष पहले सन् 1940 ई. में कल्याण में श्री विनायक जी का 'गोस्वामी जी के नाम-राशि' शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ था जिसमें लिखा था कि गोण्डा जिले का तुलसीपुर गाँव बसाने वाले देवीपाटन-निवासी तुलसीदास ने हनुमान-चालीसा लिखा था। दो-तीन वर्ष पूर्व भोपाल के 'तुलसीदास' पत्र में भी एक लेख था कि 18वीं शताब्दी में भोजपुर के किसी तुलसीदास ने 'हनुमान-चालीसा' लिखा। हनुमान-चालीसा की भाषा और शैली में भी स्पष्ट है कि यह गोस्वामी जी की रचना नहीं है।

यह जनश्रुति प्रचलित है कि सन्त तुलसीदास नाम के एक कवि गोण्डा जनपद की बलरामपुर तहसील के अन्तर्गत स्थित देवीपाटन के दक्षिण-पूर्व निकट ही बसे भवनियापुर गाँव में 18वीं शताब्दी में पैदा हुए थे। इनके पूर्वज राप्ती नदी पर स्थित भोजपुर से आकर यहाँ बस गये थे। ये जाति के कुर्मी थे। युवावस्था में ही इनके हृदय में वैराग्य उत्पन्न हो गया था और ये घर छोड़ कर देवीपाटन से $1^1/_3$ मी. पूर्व कुटी बनाकर रहने लगे थे। उसी स्थान पर उन्हीं के नाम पर तुलसीपुर गाँव बसा जो बाद में चलकर एक अच्छा कस्बा हो गया। 'घट-रामायण' के रचयिता तुलसी साहब के ही समान ये सन्त भी अपने को गोस्वामी तुलसीदास का अवतार मानते थे और हनुमान जी को अपने इष्ट रूप में पूजते थे। यह भी बताया जाता है कि इन्हें हनुमान जी सिद्ध थे। कम पढ़े-लिखे होने पर भी इन्होंने जो कुछ लिखा है, वह हनुमान जी की कृपा से ही। हमने भवनियापुर जाकर देखा है। वहाँ आज भी हनुमान जी की एक भव्य मूर्ति विद्यमान है। यह भी बताया जाता है कि सन्त तुलसीदास ने 'हनुमान-चालीसा' के अतिरिक्त 'लवकुश-काण्ड' तथा 'हनुमान-साठिका' नाम से दो और पुस्तकें लिखी थीं।

6. **भानु कवि**–भानु कवि गोण्डा में विसेन वंशी राजा दत्तसिंह के समकालीन ही नहीं, उनके दरबारी

कवि भी थे। इनका पूरा नाम भानुदत्त था। राजा दत्तसिंह अपने पिता रामसिंह के मरने के बाद गोण्डा की गद्दी पर सवत् 1756 विक्रमी में बैठे थे। अतः भानु कवि का काल इसी के आस-पास माना जाता है। इनके जन्म-मृत्यु की कोई प्रामाणिक सूचना मुझे सुलभ नहीं हो पायी है।

भानु कवि की एक रचना 'दत्तदिग्विजय' मानी जाती है। इसकी भाषा अवधी है पर उस समय की परम्परानुसार इसमें ब्रजभाषा का भी मेल है। इस रचना में कवि ने अपने आश्रयदाता गोण्डा के राजा दत्तसिंह की वीरता, धीरता, साहस एवं राज्य-विस्तार-सम्बन्धी प्रयास का विस्तृत वर्णन किया है। 'दत्तदिग्विजय' की कुछ पंक्तियाँ नीचे दी जा रही हैं, जिनसे इस काव्य की भाषिक संरचना का ज्ञान होता है—

'यक बार दत्त उत्तर पयान। दोउ बन्धु चले सहवीर बान।।
गृह सौंपि बोध कहँ बोध कीन्ह। गोण्डाहि रच्छ निजबल प्रवीन।।
मैं जात उतर दिग्विजय हेत। अरु दुष्ट नृपति के दण्ड हेत।।
तब लागि रच्छ तुम अष्टजाम। जब लगि न सिद्ध हम होहिं काम।।'

दत्तसिंह ने एक बार बहराइच के बौड़ीराज के राजा के पास अपना दूत भेजा और उसे अपनी अधीनता स्वीकारने के लिए कहा। बौड़ीनरेश दत्तसिंह के बल और उनकी वीरता को जानते थे। उन्होंने अधीनता स्वीकार ली। इसका वर्णन करते हुए भानु कवि लिखते हैं—

'बौड़ी नरेश कीन्हे विचार। हम जंग किये पइहैं न पार।।
यहि ते मिलाप है परम मंत। यह सब मन्त्रन कइ सुगम जन्त्र।।
नृप मिलेउ जाइ कै नजरि दीन्ह। दुइ बन्धु भूप बैठाइ लीन्ह।।'

भानु कवि एक बार बस्ती जिले के बाँसी के राजा के यहाँ गये और उन्हें बायें हाथ से प्रणाम किया जिस पर बाँसी के राजा ने आपत्ति की। तब भानु कवि ने कहा कि हमारा दायाँ हाथ केवल गोण्डा नरेश दत्तसिंह के सलाम के लिए ही उठता है। इससे नाराज होकर बाँसी नरेश ने भानु कवि के दाहिने हाथ में चूडियाँ पहना दीं और दरबार से बाहर कर दिया। इस बात की सूचना पाकर दत्तसिंह ने बाँसी पर चढ़ाई कर दी और राजद्वार का फाटक तक निकलवा लाये। बाँसी के राजा के दरबार में भानु कवि ने जो छन्द पढ़े थे, उनकी कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं—

ग्वारिच के घर-घर में भारी पड़ी है भीर, हहर हराइ रामनगर बिचारे की।
खल बल परी बभनौटी, रामपुर माँहि, फिकिरि परी है मल्लापुर नदी पारे की।
परी है पुकार गंगवल व पयागपुर, चरदह अकौना कप परी हिय हारे की।
सोवत न रातिउ दिन रोवत पहाड़ी भूप, देश-देश फैली धाक गोण्डापति बारे की।।

अभी भानु कवि की कृति के रूप में हमने जिस 'दत्त-दिग्विजय' काव्य का उल्लेख किया है उसमें एक अन्य कवि गजराज की भी कुछ रचनाएँ संकलित है। कारण यह है कि गजराज और भानु दोनों ही कवि गोण्डा के राजा दत्तसिंह के आश्रय में समकालीन थे और दोनों कवियों की दत्तसिंह की वीरता से सम्बन्धित रचनाएँ इसी एक ग्रन्थ में रख दी गयी हैं जिससे कुछ लोग उसे गजराज की, तो कुछ लोग भानु कवि की रचना मानते हैं। जबकि मुझे ऐसा लगता है कि स्फुट छन्दों व इस 'दत्तदिग्विजय' नामक संकलन में दत्तसिंह के दोनों समकालीन दरबारी कवियों के छन्द रख दिये गये हैं।

8. गजराज कवि—कवि गजराज राजा दत्तहिसंह के विसेन कुल के ही थे। सगोत्री बन्धु होने के साथ ही गजराज कवि राजा दत्तसिंह के मित्र भी थे। डॉ. भगवतीप्रसाद सिंह ने 'दत्तदिग्विजय' को गजराज

कवि की ही रचना माना है। वे लिखते हैं कि उनके दरबार में अनेक कवियों को आश्रय मिला था जिनमें आज दो की ही रचनाएँ प्राप्त है—एक हैं गजराज कवि जिन्होंने 'दत्तदिग्विजय' नामक वीर काव्य में महाराज दत्तसिंह की अनेक राज्यों पर विजय प्राप्त करने का वृतान्त लिखा है।

गजराज कवि ने अपने कुल के श्रेष्ठ पुरुष के रूप में गोण्डा के विसेन राजा दत्तसिंह का यशोगान किया है—

'गोण्डापति महराज, दत्तराज कीरति विसद।
जस पायो गजराज, तस लिखित चित आनंद भरत।।
अपर भनित अरु निज भनिति, लिखि मन आनंद होत।
जहँ जस बूझेउँ तस लिखेउँ, जानि सुहृद निज गीत।।

महाराज दत्तसिंह एक वीर योद्धा होने के साथ एक उच्च कोटि के काव्यानुरागी भी थे। भानु एवं गजराज कवि इनके राज्याश्रय में रहते थे। डॉ. भगवतीप्रसाद सिंह ने 'दत्त-दिग्विजय' की गजराज की रचना माना है, जबकि गजराज ने स्वयं यहाँ लिखा है कि अपर या दूसरे की लिखी हुई या कही हुई तथा निज भनिति अर्थात् अपनी कही या लिखी कविताएँ इस काव्य—'दत्तदिग्विजय' में लिपिबद्ध है। अतः यह स्पष्ट है कि 'दत्तदिग्विजय' में उक्त दोनों कवियों की रचनाएँ मिश्र रूप में संकलित हैं।

9. सुखलाल द्विज—सुखलाल द्विज गोण्डा जनपद के मेंहदावल के पास अटेरा गाँव के निवासी थे, जिन्हें गोण्डा के विसेन राजा गुमान सिंह का आश्रय प्राप्त था। महाराज गुमान सिंह का शासनकाल सं. 1800 वि. के लगभग बताया जाता है। अतः सुखलाल की जीवन-अवधि इसी बीच ठहरायी जा सकती है। इनके जन्म एवं मृत्यु के समय की सूचनाएँ सुलभ नहीं हैं।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रस्तुत की गयी खोज-रिपोर्ट में इनकी एक रचना 'वैद्यकसार' का उल्लेख मिलता है। देशी कागज पर लिख गया यह ग्रन्थ 116 पन्नों में है जिसकी साइज $8\frac{1}{2}$ग$6\frac{1}{2}$ इंज की है। प्रत्येक पृष्ठ पर 11 पंक्तियाँ नागरी लिपि में पायी जाती हैं। मिश्रबन्धुओं को यह ग्रन्थ बलरामपुर के वैद्य पं. गौरीशङ्कर के यहाँ से प्राप्त होने का भी उल्लेख है। इनके 'वैद्यकसार' ग्रन्थ में भी अवधी भाषा की काव्य-सम्पदा के तत्कालीन रूप के दर्शन होते हैं। अपने ग्रन्थ का शुभारम्भ करते हुए सुखलाल द्विज लिखते हैं—

गणपति गिरा सुगुरु सँवरि, गिरिपति गोविंद गंग।
चाहि जाहि गुन-गन गनत, गुनमति होत अभंग।। 1।।
अवधपुरी सरजू नदी, तीन भुवन विख्यात।
गुरू वशिष्ठ दशरथ नृपति, सुमिरत सुष सरसाता।। 2।।
अवध गोनर्दा मध्य में, गउडापुर अभिराम।
चारि बरन चतरश्री, बसत जहाँ सुखधाम।। 3।।
तापुर बंस विसेन में, महिपति भये उदार।
सरस पूत सुसाहसी, भक्ति दीन-दातार।। 4।।
तेहि कुल प्रकट प्रसिद्ध में श्री गुमान नरनाह।
प्रजा अनंदित बसति है जेहि के जस की छाँह।। 5।।
x x x
देस मदावल में कहौ पुर अटेर कवि थान।
तिन कहँ गउडानाथ ने दिये विविध विधि दान।। 6।।

उक्त रचना के अन्त में दी गयी पुष्पिका से प्रकट है कि इनका रचना-काल संवत् 1902 शक संवत् 1767 हैं उक्त दोहों को देखने से यह स्पष्ट है कि सुखलाल द्विज अवधी-भाषी कवि थे। उनके समय गोण्डा का गोनर्द नाम प्रचलित था तथा उन्होंने अपनी अवधी भाषा में इसे 'गउडा' नाम से भी लिखा है। उक्त दोहा सं0 3 की प्रथम पंक्ति में गोनर्दा तथा दोहा सं0 6 की दूसरी पंक्ति में 'गउडा' शब्द का प्रयोग वर्तमान गोण्डा के विकल्प में किया गया है।

10. सन्त कृपाराम–सन्त कृपाराम रामानुजाचार्य की परम्परा के सन्त थे। ये गोण्डा जनपद के नायनापुर ग्राम के रहने वाले थे। नागरी प्रचारिणी सभा काशी की खोज-रिपोर्ट में इनका परिचय देते हुए लिखा गया है–'कृपाराम, रामानुज सम्प्रदाय के साधु, नरनियापुर या नरायनापुर (गोण्डा) निवासी। अनन्तर चित्रकूट में रहकर रचना की। सं. 1835 के लगभग वर्तमान। अष्टादस-रहस्य (पद्य) 23-226, चित्रकूट माहात्म्य (पद्य)-05-6, 09-155; सं. 04-40 भागवत दशम स्कन्ध (पद्य)-5-6, 09-155, भाष्य-प्रकाश (पद्य)-04-46।[11] डॉ. किशोरीलाल गुप्त ने भी इन्हें नरायनापुर गोण्डा का निवासी बताते हुए इनके नाम से भागवत दशम स्कन्ध के हिन्दी रूपांतर किये जाने का उल्लेख किया है। उनके अनुसार इस ग्रन्थ की चना भाषा (अवधी) और दोहा-चौपाई छंद में हुई है। पं. महेशदत्त शुक्ल ने 'भाषाकाव्य-संग्रह' में इन्हें गोण्डा के नरायनापुर का वासी मानते हुए इनके द्वारा रचित अष्टादशरहस्य (1806), भाष्य-प्रकाश (सं. 1808), श्रीमद्भागवत-भाषा (सं. 1815) का उल्लेख किया है।

इनकी कविता के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

(1) *'कृष्ण चरित्र विचित्र अति कहत सुनत अघनाम।*
राम कृपा जन जिय रचेउ........................सुरास।
जोग जुगुति जय दानव्रत, पूजा नियम विधान।
बनत न यहि कलि काल महँ, नाम करत मन ध्यान।।
नाम सरिस कलि काल महँ, अपर उपाय न कोइ।
राम कृपा एकहि पकरि पावन सब कोइ होइ।।

–(भागवत : भाषा)

(2) *'रामचरन रज आनि कइ मन मा भयउ हुलास।*
तेई उर में आनि हैं चित्रकूट कविलास।।
जनक नंदिनी जग जननि, करुनानिधि सुकुमारि।
बरनौ रघुवर विपिन को, जिनके चरन सँभारे।।
चित्रकूट अवनी बनी, शोभा बरनि न जाइ।
मानौं रवि ससि आनि के तारागन समुदाइ।
रतन जड़ित कंचन मई, तिमिर न आवत पास!
सदा भूमिका एक रस, भानु ते अधिक प्रकास।।
चित्रकूट छवि देखि के भये प्रफुल्लित नैन।
रवि ससि लाजइ छवि निरखि, वारौं कोटिक मैन।।
चित्रकूट दुति पत्र की उपमा को कदफ नाहिं।
सुरपुर, नरपुर, नागपुर, यहि सम कहे न जाहिं।।'

- 'चित्रकूट-माहात्म्य'

11. महात्मा पतितदास–बताया जाता है कि महात्मा पतितदास गोण्डा जिले के नवाबगंज कस्बे से 6-7 मील दूरी पर करनैलगंज मार्ग पर स्थित दुर्जनपुर ग्राम के निवासी थे। गृहस्थ-जीवन में कुछ दिन

रहने के बाद इन्होंने सन्यास ले लिया था। ये महात्मा 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम तक जीवित रहे। इनकी तीन रचनाओं की चर्चा की जाती है—'मुनिगीता', 'पतित-पदावली' तथा 'भजन-संग्रह'। 'मुनिगीता' का प्रकाशन मनकापुर के राजा रघुराज सिंह ने जून, सन् 1898 ई. में कराया था। इसका सम्पादन पं. गणेणदत्त मिश्र ने किया था। पतितदास ने लम्बी आयु बिताकर स्वर्गारोहण किया। इनके ग्रन्थों की भाषा अवधी है। इनमें दोहा, चौपाई तथा सोरठा छन्दों का प्रयोग किया गया है जो अवधी भाषा की व्यंजना के अनुकूल भी है। वर्तमान समय में उनकी कृतियाँ सुलभ नहीं हो पा रही हैं।

12. महात्मा गुंगदास—यह आपा पथ के सन्त थे। महात्मा ऊधवदास इनके गुरु थे, जिन्होंने आपा सम्प्रदाय का खूब प्रचार-प्रसार किया था। नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित खोज-विवरण में इनका परिचय इस प्रकार मिलता है— 'गुंगदास, शाकलद्वीपी ब्राह्मण, रामनगर के निवासी अवधूत फकीर, राप्ती नदी के तट पर कुटी। सं. 1858 के लगभग वर्तमान। ..... अनहद-विलास (पद्य) सं. 6-34।' डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि गुंगदास शाकलद्वीपीय ब्राह्मण थे। पहले पण्डिताई करते थे, जब जगत'मत फीका लगा तो सांसारिक धर्म-कर्म का त्याग कर अवधूत फकीर हो गये। राम का स्मरण करते हुए राम के पदों में मन को मग्न रखते हुए इन्हें अपना जन्म सफल करना श्रेयस्कर जान पड़ा। सतगुरु के प्रताप से इन्हें रामनगर सुखस्थान मिला। जहाँ राप्ती के तट पर भाभर में कुटी बनाकर बस गये। द्विवेदी जी ने अनहद विलास, चेतसार, जीव-उद्धार, तत्वसार और सुख-सदन नाम से इनके गन्थों की चर्चा की है। इनकी कविता की कुछ पंक्तियाँ निम्नवत् हैं—

बाभन जाति हमारी है, गुंगदास मम नाम।
श्री सतगुरु की मेहर से रामनर सुखधाम।।
भाभर बीच निवास है, नदी रापती तीर।
गुंगदास की कुटी तहँ, निर्गुन सन्त कबीर।।
बहति निकट रापत्ती, उत्र ताल गंभीर।
तेहि मध्य अमराइ एक कदली तरु गंभीर।।
साकल दीपी विप्र हम, बुद्धिगत पढ़ा अनेक।
औ सत संगति संत की, सांति नाम करु टेक।।
मातु पिता अरु बन्धुगन जाति-पाँति कुल खोइ।
भो अवधूत फकीर तब धर्म-कर्म को धोई।।
पंडिताइ बहु दिन कियो, लाग जगत मत फीक।
सुमिरि राम पद, मगन मन, सुफल जियन कर ठीक।

13. महात्मा बनादास—बनादास सगुण एव निगुर्ण भक्ति के समन्वयकारी कवि थे, पर ये महात्मा मूलतः राजभक्त थे। ना.प्र.स. काशी की खोज-रिपोर्ट में इनका तथा इनकी रचनाओं का ब्यौरा देते हुए लिखा गया है कि बनादास क्षत्रिय (जिला गोण्डा के निवासी) विरक्त होकर अयोध्या में रहने लगे थे। काव्य-काल संवत् 1900 से 1°47 तक। अनुरागविवर्द्धक, अर्ज-पत्रिका, आत्मबोध, उभय-प्रबोध-रामायण, खडनखंड, नामनिरूपण, ब्रह्मायण-तन्त्र-निरूपण, ब्रह्मायण-पराभक्ति, ब्रह्मायण-शान्ति-सुषुप्ति, भाव-मुक्तावली, शब्दावली, हनुमान-विजय।

महात्मा बनादास की जन्म सन् 1821 ई. में नवाबगंज के पास स्थित अशोकपुर ग्राम हुआ था। इनके पिता का नाम गुरुदत्त सिंह था तथा इनके बचपन का नाम बनासिंह था। बनासिंह ने सात वर्ष तक बहराइच स्थित भिनगा के राजा के यहाँ नौकरी भी की थी। कुछ समय बाद 12 वर्षीय पुत्र के मरने के शोक में यह पूर्णतया विरागी बनकर अयोध्या में रहने लगे और परमहंस सियावल्लभशरण से

भक्ति-ज्ञान और योग की दीक्षा ली। ये नाम-साधना में भरत को अपना आदर्श मानते थे। आगे चलकर ये अयोध्या के परम सिद्ध सन्त हुए। एक बार रीवाँ-नरेश ने इन्हें 10 हजार की थैली भेंट करनी चाही जिसे ठुकराते इन्होंने कहा—

'जाजब, जाब, जमाति, जर, जोरु जाति जमीन।
जतन आठ ये जई सम, बनादास तजि दीन।।

इनका ज्ञान साधना-प्रसूत था, क्योंकि महात्मा बनादास बहुत पढ़े-लिखे नहीं थे। इन्होंने स्वयं लिखा है—

'विद्या विधि नाहीं लिखी भूलि भालहूँ माहिं।
पढ़े ककहरा बालपन, मात्रा साबित नाहिं।।
काव्य ग्रन्थ नहिं कर छुए, नहिं विद्या अधिकार।
मति न ऊँच, गति अउर नहीं, उर प्रेरक सरकार।।

इनकी रचनाएँ प्रायः अवधी-भाषा में हैं, जिनमें तत्कालीन परम्परा के अनुसार ब्रज-भाषा का भी दर्शन होता है।

14. गंगादास और नउका सुमनधन—कवि गंगादास बलरामपुर के महाराजा दिग्विजयसिंह के पिता अर्जुनसिंह के दरबारी कवि थे। का.ना.प्र. प्रभा की खोज-रिपोर्ट में यह टिप्पणी दी गयी है—'गंगादास कायस्थ बलरामपुर (गोण्डा) के महाराज के आश्रित थे। सं. 1879 के लगभग वर्तमान। खो. सं.वि. 27 (110-64) सुमनधन (पद्य)-09-58।'

मिश्रबन्धुओं ने अपने खोज-विवरण में इनका हवाला देते हुए लिखा है कि कवि गंगादास द्वारा लिखित 'सुमन-धन' प्रसिद्ध फारसी कवि शेखसादी की रचना 'गुलिस्ताँ' का भाषा-अनुवाद है जो गंगादास ने संवत् 1879 में तैयार किया। यह ग्रन्थ $7^3/_4 \times 5^2/_4$ साइज में 1130 छन्दों के साथ बलरामपुर राज्य-पुस्तकालय में मिला हैं मिश्रबन्धुओं द्वारा उद्घृत इस रचना के प्रारम्भिक छन्द निम्नवत् हैं—

दोहा— *'श्री गजपति पद वन्दिये सुमिर जासु सुभ नाम।*
बिन प्रयास ही होत है सुमन-सिद्ध सब काम।।
वन्दिय उर गुरु पद कमल जो अति मृदुल सोहाइ।
जासु रेनु मकरन्द महँ, रह मन मधुप लोभाइ।।
सब देवन्ह सिर नाइ कै, वन्दिय पवन कुमार।
षल रज मारुत संतजन सालि जलद हितकार।।
बरस अठारह सै भए, उन्नासी अधिकाइ।
चैत असित दसमी सुखद, चन्द्रवार समुदाइ।।
आठै चौपाई धरी, प्रति दोहा सहुलास।
कियो गुलिस्ताँ सुमनधन भाषा गंगादास।।

चौपाई— *जबहीं नर छाड़्यो गृह नेहा।*
तब नहि डर सब तेहि जग गेहा।।
निसिपति धनी नये गृह जाई।
एक सदन सोइ जहँ निसि आई।।
जो गुनवन्त भाग्य हत होई
कहूँ जाइ नहिं जानत कोई।।

गोण्डा जनपद में अवधी काव्य-रचना की इस मध्यकालीन परम्परा के संक्षिप्त विवरण को पुरस्सर करने के पश्चात् हम आधुनिक युगीन जनपदीय अवधी-काव्य-धारा के बहुचर्चित कवियों एवं उनकी काव्य-कृतियों पर प्रकाश डालना चाहेंगे। मध्यकाल तक भक्ति, राजनीति, नीति एवं अन्यान्य विषयों को लेकर लिखी जाने वाली कविता आधुनिक युगबोध के प्रभाव में विषयगत दृष्टि से परिवर्तित परस्परा का अनुधावन करती है। आजादी की लड़ाई और उसके बाद स्वतन्त्र देश की समस्याओं के प्रति खड़ी बोली के कवियों के समान अवधी-भाषा के कवि भी युगबोध से प्रभावित हुए हैं, जिसका उनकी कृतियों में प्रतिबिम्ब दिखायी पड़ता है। इस दृष्टि से आधुनिक युगीन कवियों और उनकी कविता का विवरण आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

15. विश्वनाथ सिंह 'विकल गोण्डवी'—विकल गोण्डवी का जन्म गोण्डा जनपद में मनकापुर के पास स्थित ग्राम खजुरी, पोस्ट मवई में 8 फरवरी 1924 ई. को हुआ था। शिक्षार्जन के बाद वे रेलवे में नौकरी करते रहे। अब अवकाश प्राप्त कर लखनऊ में रह रहे हैं। इन्हें बचपन से ही काव्यानुराग एवं कविताई की रूचि रही। विगत 40 वर्षों से वे अपनी जनपदीय भाषा अवधी में अविराम रूप से काव्य-रचना में प्रवृत्त रहे हैं। आज भी उनकी काव्य-साधना यथावत् चल रही है। अपने सुरीले कण्ठ के साथ वे जहाँ जिस कवि-सम्मेलन में जाते हैं, छा जाते हैं। उन्होंने सामयिक समस्याओं के साथ स्थायी मूल्यवत्ता वाली कविताएँ भी लिखी हैं। विकल जी मुक्तक रचनाकार होने के साथ-ही-साथ अवधी भाषा के प्रबन्धकार कवि भी हैं। 'रत्ना-तुलसी' नामक आपका काव्य प्रकाशित हो चुका है। आजकल वे 'धरती कइ धिया' नाम में जनकनन्दिनी सीता के जीवनवृत्त पर एक खण्ड-काव्य की रचना में लगे हुए हैं।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, गोण्डा जनपद के आधुनिक युगीन कवियों ने सामयिकता से जुड़ने का भी प्रयास किया है। विकल जी ने जनसंख्या-वृद्धि की राष्ट्रीय समस्या पर अपनी बात कहते हुए लिखा है—

'जइसइ इन नद्दी नालन कइ पुलबन्दी बहुत जरूरी है,
जइसइ इन खेतन-पातन कर मेड़बन्दी बहुत जरूरी है,
जइसइ सब अउर जरूरी है, यहि देश जाति केरे खातिर,
बइसइ इन मेहरी-मरदन कर नसबन्दी बहुत जरूरी है।।

फैशनपरस्ती, सामाजिक रूढ़ि, अशिक्षा, दरिद्रता आदि पर भी विकल जी ने अच्छे शालीन छन्दों का विधान किया है। वे रेलवे के क्लर्क थे जिसकी पीड़ा से परेशान होकर उन्होंने लिखा है—

विधाता भई कवन अस भूल किलरकी हमरे माथे परी,
साथ कइ छोटे बाबू सभइ हमैं डाँटै वसरी-वसरी।।

उनके द्वारा लिखा गया 'रत्ना-तुलसी' काव्य सचमुच आधुनिक अवधी भाषा की एक उल्लेखनीय रचना है जिसमें तुलसी की बाल-कालीन दुर्दशा का बड़ा संवेदनशील चित्र खींचते हुए कवि ने रत्ना के साथ उनकी रूमानियत की भी कथा कही है। उनके अनुसार—

'तुलसी जब पूर अनाथ भये, रघुनाथ सुनाथ कइ बाँह मिली।'
'रघुनन्दन कइ पद बन्दन कइ, तुलसी उबरे भव-फन्दन से।'

'धरती कइ दिया' काव्य के कुछ छन्द इस प्रकार हैं—

नाउ सुने सुख कइ उपजा दुःख बोली सिया कुछ होइ कइ रोवासी।
मैं दुखिया धरती कइ धिया, सिगरौ दुःख झेलन केर अभयासी।

नइहर-सासुर कइ सुख कौन न सरगौ कै सुख कइ अभिलाषी।
रावरे पाँव के छाँवन मा सिय कइ सगरौ सुख है, सुखरासी।
प्रानहिं जौ रहि हैं वन मा तन कौने विधा घर मा रहि पइहैं
तेल और बाती रही अलगइ पिया कौने विधा दियना बरि पइहै।
मोहनी मूरति के निरखे बिनु नैनन का कहुँ चैन न अइहै।
रावरे नेह के नीर बिना दुःखिया मछरी सी सिया मरि जइहै।।

16. बेकल उत्साही—भारत की गंगा-जमुनी संस्कृति एवं काव्य के विभोर गायक बेकल उत्साही का पूरा नाम शफी खाँ लोदी है। सन् 1952 के आम चुनाव में कांग्रेस पार्टी का प्रचार-प्रसार करते हुए इनकी भेंट देश के नव निर्माता एवं प्रथम प्रधानमन्त्री पं. जवाहरलाल नेहरू से हुई। इनका उत्साह एवं इनकी विकलता देखकर पं. जी ने इनका नाम बेकल उत्साही रख दिया। बेकल साहब का जन्म गोण्डा जनपद की उतरौला तहसील में स्थित गौर रमवापुर ग्राम के एक लोदी-वंशीय पठान जाति में हुआ था। इनके पिता का नाम मो0 जफर खाँ लोदी और माता का नाम श्रीमती बिसमिल्ला था। बेकल साहब की प्रारम्भिक शिक्षा उनके गाँव गौर रमवापुर तथा कटिया-मधवा जोत में हुई। इसके पश्चात् उन्होंने बलरामपुर के एस.सी.कॉलेज (आज का ए.पी.पी.इं. कालेज) से हाई स्कूल की परीक्षा पास की। बेकल साहब ने शुरू से लोक-गीत लिखना आरम्भ कर दिया।

अब तक बेकल साहब की 'नगमो-तरन्नुम', 'विगुलविजय', 'लहके बगिया मँहके खेत', 'अपनी धरती चाँद का दर्पन', 'पुरवाइयाँ', 'कोमल मुखड़े बेकल गीत' आदि रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं—जिनमें राष्ट्रीयता, ग्राम्य-भावना, लोक-संस्कृति की सोंधी सुरभि समदिक् विकीर्ण हो रही है। बेकल साहब घुमक्कड़ भी कम नहीं हैं। वे अरब, कुवैत, ईरान, ईराक, लेबनान, इग्लैण्ड, वेस्ट जर्मनी, फ्रान्स, चेकास्लोवाकिया, रोम आदि की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक राष्ट्रीय यात्राओं का प्रतिनिधित्व कर चुके हैं। उन्होंने फिलिस्तीन के क्रान्तिकारी कवि महमूद दरवेश की रचनाओं के साथ नेपाल के शाह महेन्द्र के गीत-संग्रह—'बसई को लोग' का भी अनुवाद किया है। सब कुछ होने के बाद भी वे अपनी जन्मभूमि बलरामपुर की माटी से जुड़े हुए हैं।

बेकल साहब लोक-धुन पर अवधी लोक-गीत लिखने में इतने सिद्ध-हस्त, रस-सिद्ध कवि हैं कि सुरीले राग से ज्यों ही वे तराना छेड़ते हैं, श्रोता सुध-बुध खो बैठते हैं। उनका प्रसिद्ध एवं प्रिय लोक-गीत है—

''सइयाँ ह्वैगे गुलरिया कै फूल, विदेसवा माँ छाइ रहे।''

बेकल साहब ने असंख्य मात्रा में लोक-गीत लिखकर अवधी भाषा के गीत-साहित्य की सम्पदा बढ़ायी है, पर आज उनकी तमाम अवधी रचनाएँ सुलभ इसलिए नहीं हो पा रही हैं कि शायरी की बुलन्दी पर पहुँच जाने एवं राजनीति के क्षेत्र में पदार्पण कर जाने के कारण वे अपनी अवधी रचनाओं की हिफाजत के प्रति जागरूक नहीं रह गये। यह काम अब साहित्य-समीक्षकों एवं अवधी काव्य के इतिहास-लेखकों के जिम्मे आ गया है।

17. सतीश आर्य—सतीश आर्य का जन्म वर्तमान मनकापुर एवं पुरानी उतरौला तहसील जिला गोण्डा के ग्राम भिटौरा में एक हरिजन परिवार में 3 अक्टूबर, 1955 ई. को हुआ था, जो मनकापुर स्टेशन से दक्षिण-पश्चिम एक किलोमीटर पर स्थित है। इनके पिता श्री मंगलराम रेलवे की नौकरी कर रहे थे। इनकी माता सावित्रीदेवी एक भोली वैष्णव वृत्ति की महिला हैं। सतीश बाबू ने बी.ए., बी.एड. करके मनकापुर के पंचायती लघु माध्यमिक विद्यालय में अध्यापन-कार्य प्रारम्भ किया है। साथ-साथ पैतृक व्यवसाय भी चलता रहता है।

सतीश आर्य ने कक्षा 8 में पढ़ते समय ही कविता करना शुरू कर दिया था। उनके अवधी गीतों का प्रथम संकलन 'चलो भारत की दुलहनियाँ' नाम से प्रकाशित सतीश जी की कविताएँ सुकवि, सानुबन्ध, विशाखा साप्ताहिकी, स्वतन्त्र भारत आदि में प्रकाशित होती रही हैं। वे उत्तर-भारत के कवि-सम्मेलनों के लोकप्रिय अवधी एवं खड़ी बोली के गीत-गजलकार के रूप में सराहे जाते रहे हैं। वे लखनऊ आकाशवाणी के भी लोकप्रिय कवि हैं। उनकी रचनाओं में गाँव का दर्द, त्रस्तों एवं शोषितों की संवेदना ही प्रमुखतया मुखर है। गाँव की झाँकी दिखाते हुए वे लिखते हैं—

'चलौ चली गउवाँ जहाँ गोरी पाथै चिपरी।
रतियै मा उठि गोरी चकिया चलावै।
बड़े भिनसरवइ हँसिया उठावै।
चैत-कुवार भल ठौवे बोझ सुधरी।। चलौ0।।
कनई माँ बोवै जहाँ मरद नगीना।
हँसि-हँसि खेतवा मा गारै पसीना।
बइला दुलरावै संग घूमै लैके दँवरी।।चलौ0।।
सोहर बियाहु गारी गीत जहाँ गमकै।
देउरा, भउजइया केरे कनिया मा ठुनकै।
लूटैं सुख दूनउ जने जहाँ ओढ़े कथरी।।चलौ0।।
चरइँ सिवान गोरू नाचत मुरैला।
होली के बहाने छेड़ै सुघरी का छैला।
पावै फटकार मुला भेय देय चुनरी।।चलौ0।।
विधना बिगारेउ काहे गउवाँ कै रीती।
रचि दिहेव जाति पाँति छुआ-छूत भीती।
चूसत मजूरन कै खून बड़ी बखरी।
चलौ चली गउवाँ जहाँ गोरी पाथै चिपरी।

सावन का महीना आ गया है, गाँव की गोरी का पति परदेश में है। उसकी मनोदशा और कार्य-कलाप का चित्रण करते हुए सतीश जी लिखते हैं—

'कबौं-कबौं कजरा से नैना सवाँरै।
सुगना रटावै कबौं सगुना विचारै।
पुरुष सुनार बोवै सोने कइ किरनियाँ।
जैसइ कउनउ चिरई रे पखना पसारै।
सुगना रटावै कबौं सगुना विचारै।।
जोगवै कहाँ लइ देंह केकरी बरौनी,
टप-टप चुवै अब आँख कै वरौनी।
सावन कइ दिन पिया बहिरे सिधारै।
सुगना रटावै कबौं सगुना विचारै।।

18. मोहम्मद इस्माइल आजाद—मोहम्मद इस्माइल आजाद का जन्म गोण्डा जनपद में गोण्डा से बहराइच जाने वाली रेलवे के कौड़िया बाजार (वनगाई स्टेशन) में हुआ था। वह एक साधारण परिवार के थे। उनकी शिक्षा पयागपुर में हुई थी। जब मैं जनता हाईस्कूल का प्रिंसिपल था तब वे मेरे साथ सहायक अध्यापक के रूप में काम करते थे। उसी विद्यालय में पढ़ाते हुए अल्पायु में उनकी मृत्यु हो गयी। आजाद

जी एक नम्र कर्मठ व्यक्ति होने के साथ-साथ होनहार कवि थे। उनके मरने से इन जनपद की साहित्य-सम्पदा की बहुत भारी आकस्तिम क्षति हुई है। मुझे आज भी वे क्षण याद हैं जब मेरे वे पास बैठकर मुझे अपने लोकगीत सुनाया करते थे–

'महुआ चुवै सारी रतिया निदिया बैरिन भई।' आदि

आजाद जी के अवधी लोक-गीतों की धुन, शब्द-चयन, पढ़ने एवं सुनाने का तरीका सब कुछ ऐसा था कि जिससे ग्राम्य संस्कृति का चित्र ही साकार हो जाता रहा। विदाई की वेला में एक नवोढा की उद्‌भावना का चित्र देखें–

'आये सजना हमार, लाये डोलिया कहार,
जइबै अपने सजन के नगरिया रे।
सखिन जल्दी करौ सिंगार, हमरी डोली है तैयार,
नाहीं रूठि जइहैं हमरे सँवरिया रे।

इस प्रकार, गोण्डा जनपद का अवधी काव्य वीरगाथाकाल से आज तक समयानुसार भाव-भंगिमा, शैली-शिल्प के बीच से रेंगता हुआ इस समय भी ताजगी एवं नव्यता के साथ गतिमान है जिसकी एक संक्षिप्त झाँकी यहाँ प्रस्तुत की गयी है।

रायबरेली जनपद के प्रमुख अवधी रचनाकार

डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र

अवधी जो कभी सम्पूर्ण अवध प्रदेश की बोलचाल एवं साहित्य की भाषा थी, अब उसका क्षेत्र शहरीकरण के निरन्तर बढ़ते विराट् रूप के कारण संकुचित होता जा रहा है। फलतः वह घरों और अधिक-से-अधिक अविकसित गाँवों तक सीमित होती जा रही है। इस प्रकार, अब अधिकांशतः लोग अवधी में न सोचकर खड़ीबोली (अथवा अँगरेजी) में सोचने लगे हैं; फिर भी फैशन में आकर वे अवधी में रचना कर 'सात सवारों में एक सवार' अपने को भी लगाते हैं। चूँकि अवधी में सोचना-विचारना छोड़कर केवल अपनी पहचान बनाने के लिए लोग मात्र साहित्य में उसका प्रयोग कर रहे हैं, इसीलिए अवधी का साहित्यिक स्तर भी उत्तरोत्तर गिरता गया है। आज अवधी किन्हीं गम्भीर प्रौढ़ विचारों अथवा दार्शनिक चिन्तन का माध्यम नहीं रह गयी है, बल्कि वह हास्य और व्यंग्य के इर्द-गिर्द ही सिमट गयी है। खड़ीबोली में सोचकर उसे सायास अवधी में ढालने की प्रवृत्ति सहज एवं नैसर्गिक न होकर कृत्रिम एवं बनावटी है। इसीलिए उसकी अस्मिता का खतरा उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। बदली हुई परिस्थिति में अवधी रचनाकारों को इसीलिए गम्भीर रचनाकार नहीं माना जाता, जबकि अतीत साक्षी है कि समस्त हिन्दी-सूफी-काव्य और अधिकांश हिन्दी-राम-काव्य अवधी भाषा में है। हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ— 'रामचरितमानस' अवधी भाषा में ही प्रणीत है। यह स्थिति किसी एक जनपद की नहीं, अपितु अवधी बोलने वाले समस्त जनपदों की है। फिर भी अवधी को पठन-पाठन ओर साहित्य से जिस रूप में जोड़ रखा गया है, वह सराहनीय है।

अवधी-साहित्य की संवृद्धि में रायबरेली जनपद का विशिष्ट योगदान है। प्रेमाख्यानक काव्य-परम्परा के प्रथम अवधी महाकाव्य 'चंदायन' के प्रणेता मुल्ला दाऊद इसी जनपद की सांस्कृतिक नगरी डलमऊ के निवासी थे। सूफी काव्य-परम्परा के सर्वश्रेष्ठ कवि मलिक मोहम्मद जायसी का सम्पूर्ण काव्य अवधी भाषा में है। इस जनपद की बोलचाल की भाषा होने के कारण अवधी कहावतों, मुहावरों, लोक-कथाओं और गीतों के साथ-ही-साथ लोक-नाट्य का विपुल साहित्य जिले के विभिन्न अंचलों में बिखरा हुआ है। प्राचीन काल से प्रारम्भ अवधी काव्य की समृद्ध परंपरा आज भी अबाध रूप में इस जनपद में चली आ रही है। यह अवश्य है कि अवधी-साहित्य का अधिकांश अक्षय भांडार संकलन, संपादन और प्रकाशन के अभाव में उपेक्षित एवं निरादृत पड़ा है। इसीलिए उसकी न तो सम्यक् समीक्षा और परीक्षा संभव है और न ही उसकी सामर्थ्य एवं सीमाओं के सम्बन्ध में किसी निष्कर्ष पर पहुँच पाना संभव है। विवेचन की सीमाओं को ध्यान में रखकर इस निबंध में रायबेरली जनपद के अवधी काव्य का केवल सामान्य परिचय ही दिया जा रहा है। वैसे अवधी के प्रथम उपन्यासकार 18वीं सदी के सूबेदार सीताराम पाण्डेय भी इसी जनपद के तिलोई क्षेत्र के निवासी थे जिनकी अवधी में लिखी आत्मकथा को डॉ. मधुकर उपाध्याय ने अवधी उपन्यास के रूप में प्रस्तुत किया है।

1. सूफी संत मुल्ला दाउद : हिन्दी साहित्येतिहास-ग्रन्थों में रायबरेली जनपद के प्रथम अवधी कवि

के रूप में प्रेमाख्यानक काव्य-परम्परा के प्रवर्तक प्रसिद्ध सूफी संत मुल्ला दाऊद (डलमऊ) का उल्लेख मिलता है। उनका 'चांदायन' अथवा 'चन्दायन' महाकाव्य (रचनाकाल 781 हिजरी अर्थात् सन् 1379 ई.) उत्तर भारत और छत्तीसगढ़ में लोकप्रचलित प्रेमकथा ''लोरिक-चन्दा'' पर आधृत है। चांदायन ईश्वरीय सत्य और संकेतों से तो युक्त है ही, इसके अतिरिक्त वह चौदहवीं शताब्दी के लोकप्रचलित विश्वासों एवं हिन्दुओं के धर्माख्यानों से युक्त रहस्यवादी काव्य है। मुल्ला दाऊद की निम्नांकित काव्योक्ति डलमऊ में हर एक के मुँह से सुनी जा सकती है–

डलमऊ सहर नौरंगा। उपर कोट तरे बहै गंगा।।

2. कवि मलिक मोहम्मद जायसी : अवधी के दूसरे और सर्वश्रेष्ठ कवि श्री जायसी रायबरेली जनपद की एक अन्य सांस्कृतिक नगरी जायस के निवासी थे। जायसी (जन्म : अनुमानतः 1475; मृत्युः अनु. 1542 ई.) बाबर, हुमायूँ और शेरशाह सूरी के समकालीन थे। उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति ''पदमावत'' महाकाव्य चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहल की राजकुमारी पदमावली की प्रेमकथा पर आधारित है। अवधी भाषा और दोहा-चौपाई छंदों में रचित इस ग्रन्थ के अतिरिक्त 'चित्ररेखा', 'कहरानामा', 'मसलानामा', 'आखिरी कलाम', 'अखरावट', 'महरीबाईसी' एवं 'कन्हावत' जायसी की अन्य उपलब्ध अवधी रचनाएँ है।

3. कवि लालचदास : सगुण भक्तिधारा के कवि लालचदास हलवाई रायबेरली-निवासी थे। इन्होंने मिली-जुली अवधी भाषा और दोहा-चौपाई शैली में ''हरिचरित'' (1528 ई.) एवं 'भागवत दशम स्कंध भाषा' (सन् 1530 ई.) की रचना की थी। उनके दूसरे ग्रन्थ का फ्रेंच भाषा में अनुवाद भी हो चुका है एवं फ्रांसीसी विद्वान् गार्सां द तासी ने भी इसका उल्लेख किया है। डलमऊ-निवासी उदासी संप्रदाय के सिद्ध संत लालनदास (र.का. 1652 ई.) मुख्यतः शांतरस के अवधी कवि थे। इनका आत्मपरिचय निम्नांकित है–

दालभ रिसि की डलमऊ, सुरसरि तीर निवास।
तहाँ आय लालन बसे, करि अकास की आस।।

4. संत कवि दूलनदास : तदीपुर (बछरावाँ)-निवासी दूलनदास (1660-1778 ई.) ने 'दोहावली', 'शब्दावली' और 'झूलना' नामक अवधी काव्यों की सृष्टि की थी। महात्मा पहलवानदास (1719-1843: ग्राम भीखीपुर) कबीर की भाँति यह मस्तमौला सतनामी सिद्ध संत थे। 'उपखान-विवेक' उनकी उल्लेखनीय अवधी कृति है। उनकी ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

नर-तन पाय भजन नहिं भाये। पत्थर परा जो मूँड़ मुड़ाये।
पाँच पचीस राति-दिन खटका। सरग से गिरा खजूर मा अँटका।।

5. कवि बेनी बंदीजन : वंदीजन (1757-1835 : वेंती-डलमऊ) अपने समय के प्रसिद्ध भड़ौवाकार थे। उनका 'भड़ौवासंग्रह' भारत जीवन प्रेस, काशी से प्रकाशित उत्तम अवधी-काव्य है जिसमें उनका हास्य-व्यग्यंप्रधान रूप मुखरित हुआ है। 6. बबुरिहा (महाराजगंज) के प्रसिद्ध रामभक्त कवि बाबा हरीदास (1882-1917) ने 'समुझाई', 'भक्तिविनोद' और 'मसलविवेक'–जैसे अवधी काव्यों की सृष्टि की थी। 7. खेखरुवा के सिद्ध महंत बाबा घिसियानदास (1793-1875) ने मिली-जुली अवधी भाषा में 'राम-कृष्ण-कीरत', 'भक्तमाल' और 'रामरस' काव्यों की अवधी में रचना की थी, पर आज केवल 'राम-कृष्ण-कीरत' (प्रकाशित) ही उपलब्ध है। 8. सातनपुरवा-निवासी अयोध्याप्रसाद वाजपेयी 'औध' (1807-1869) ने 'रामशिकारगाह' और 'रामकवितावली' नामक अवधी काव्यों की रचना की थी। 9. बाबा नारायणदास (1813-1883 : रामपुर टेढ़ई- अहोरवाभवानी) और 10. वंशीधर वाजपेयी (जन्म 1817: चिंताखेरा) इस युग के अन्य उल्लेखनीय अवधी कवि थे। 11. पहाड़पुर-निवासी ठाकुर शिवगुलाम सिंह

(1833-1893) की कविता अवधी-लोकाक्तियों पर आधारित होती थी।

12. लोक गीतकार दुलारे : सन् 1857 के विप्लव में रायबरेली जनपद की ओर से सशस्त्र क्रांति द्वारा देश को स्वतंत्र कराने का संकल्प लेकर अँगरेजों से जूझने वाले राना बेनीमाधव सिंह की अक्षय कीर्ति को घर-घर और जन-जन तक पहुँचाने में लोकगीतकार दुलारे (अनुमानतः भीरागोबिन्दपुर-निवासी) का प्रमुख योगदान है। 'अवध मा राना भये मरदाना' उनका प्रसिद्ध लोकगीत है। इसके अतिरिक्त, जनकवि दुलारे के बहुत-से अवधी लोकगीत आज भी वैसवारा-क्षेत्र में सुने जा सकते हैं। 13. सुप्रसिद्ध संत स्वामी बदरीप्रपन्न त्रिदंडी (1847-1934 : बन्नावां-बछरावाँ) ने संस्कृतज्ञ होते हुए भी होली के अवसर पर प्रचलित होली-चहली में अवधी लोकगीतों की सृष्टि की थी। शंकर, राम और कृष्ण इत्यादि पर आधारित उनके भक्तिपरक 'फाग' जनजीवन के आज भी कंठहार बने हुए हैं। 14. देवपुरस्कार-विजेता पं. रामनाथ 'ज्योतिषी' (1874-1943 : भैरमपुर)—कृत 'रामतिलकोत्सव' की दसवीं कला (अध्याय) में बरवै छंद का अवधी भाषा में सुन्दर प्रयोग हुआ है। 15. ठाकुर चन्द्रभान सिंह (1874 : बरउवाँ) फाग में गायी जाने वाली होली-चहली के लिए सम्पूर्ण अवध में विख्यात थे। राम और कृष्ण-कथा पर आधारित उनके लोकगीत आज भी जनमानस में व्याप्त हैं। 'कृष्ण-सुदामा' उनका अप्रकाशित अवधी लोकगीत-काव्य है। सामाजिक विषयों पर भी अपने लोकगीतों में उन्होंने हास्यव्यंग्य की सुन्दर सृष्टि की है। 16. सेमरौता-निवासी कालकाप्रसाद 'लामा' (1876-1917) ने उर्दू-हिन्दी-मिश्रित अवधी भाषा में 'बारहमासा' नामक अवधी काव्य की रचना की थी। 17. अवधी रामकाव्य के बहुचर्चित कवि शिवरत्न शुक्ल 'सिरस' (1876-1970 : बछरावाँ) ने ब्रज और अवधी मिली भाषा में 'भारतभक्ति' (1932)—जैसे महाकाव्य (प्रकाशित) की रचना की थी। 18. सेमरौता निवासी ठाकुर भगवानबख्श सिंह ने भी इसी काल में अवधी भाषा में स्फुट काव्य लिखा था। 19. बाबू तेजभान सिंह (1888-? : टेकारी राज्य) भक्त कवि के रूप में प्रसिद्ध थे। उन्होंने अवधी भाषा में भक्ति-सम्बन्धी भजन लिखे थे। 20. सूट्ठा ग्राम के निवासी ठाकुर बद्रीनारायण सिंह (1890-1950) राधाभावप्रधान भक्तकवि थे। उनकी 'विरहविनयपचीसी', 'भजनसंग्रह' और 'संक्षिप्त रामायण' अप्रकाशित अवधी रचनाएँ हैं। 21. उतरावाँ के अवधबिहारी त्रिपाठी (1890-?) राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत कवि थे। उनके अवधी काव्य 'किसान-कटौझनि' और 'दिहातिदशा' में ग्रामीण किसान् की करुण कथा एवं देशदुर्दशा का मार्मिक चित्रण हुआ है। 22. ब्रजकिशोर पाण्डेय 'ब्रजनदन' (1892-1984 : लालगंज) ने 'दुखिया किसान' और अपने भक्तिपरक बरवै छंदों में साहित्यिक अवधी का सुन्दर प्रयोग किया है। 23. त्रिभुवनप्रसाद त्रिपाठी 'शान्त' (1900-1970 । परान पाँड़े का पुरवा, तिलोई) का भक्तिप्रधान काव्य अधिकांशतः अवधी भाषा में है। 'प्रश्नोत्तर' और 'विज्ञाननौका' उनकी उल्लेखनीय अवधी कृतियाँ हैं। 24. रस्तामऊ-निवासी वलीममोहम्मद 'माल' (1899-1975) के अवधी दोहों में सामयिकता का अच्छा पुट होता था। 25. मुसलमान कृष्णभक्त कवि अब्दुर्रशीद खाँ (1900-1980 : रायबरेली) के रामभक्तिपरक काव्य में पूर्वी अवधी का विशेष प्रयोग हुआ है। 26. वरउवाँ-निवासी ठाकुर चन्द्रभान सिंह ने होली के अवसर पर गाये जाने वाले लोकगीतों की जो परम्परा डाली थी, उसमें उनके समय के जिन लोकगीतकारों ने विशेष भूमिका निभायी, उनमें सतावँ के अयोध्या, कोरिहर के ठाकुरदीन माली एवं पहाड़पुर (अटौरा) के ठाकुर रामस्वरूप सिंह का नाम उल्लेखनीय है।

27. रामस्वरूप मिश्र विशारद (1902-1982 : सेमरौता)—कृत 'कृष्णायन' महाकाव्य हिन्दी कृष्णकाव्य-परम्परा का प्रमुख ग्रन्थ है। दोहा-चौपाई शैली में लिखित इस महाकाव्य की भाषा अवधी है। 28. हास्यव्यंग्य के प्रमुख कवि पं. शिवराम मिश्र 'मस्तराम' (1943-1909 : नकफुलहा) ने सामयिक विषयों तथा भक्तिप्रधान कविताओं में अवधी का अच्छा प्रयोग किया था। 29. 'हास्य-रसावतार' के नाम

से विख्यात चंदिकाप्रसाद वाजपेयी 'कौतुक' (1907-1984 : बाजपेयीखेड़ा, बेहटा) ने अवधी में 'पक्का किसान' नामक हास्यरसप्रधान काव्य (अप्रकाशित) की रचना की थी। 30. जनकवि चंद्रशेखर पाण्डेय 'चंद्रमणि (1908-1982 : बन्नावाँ) ने होली के अवसर पर बैसवारा क्षेत्र में प्रचलित अश्लील गीतों के विरोध में राम-कृष्ण तथा अन्य देवी-देवताओं की अलौकिक कथाओं पर आधारित अवधी लोकगीतों की सृष्टि की थी, जिन्हें सन् 1932 में 'होली का हुलम्बा' नाम से प्रकाशित किया था। उनके अनेक भजन और कीर्तन भी अवधी भाषा में हैं। 33. देवीरत्न अवस्थी 'करील' (1909-1976 : लालगंज) के अवधी लोकगीतों में देश के दुःख-दैन्य और राष्ट्रीय भावना का प्रखर स्वर विद्यमान था। 34. राष्ट्रीय भावना से अनुप्राणित होकर ही रामेश्वर श्रीवास्तव 'बाबूलाल' (1910-1988: रायबरेली) ने 'रायबरेली का इतिहास' (1949)–जैसे अवधी-काव्य की आल्हा-शैली में रचना की थी।

देश को स्वतंत्र कराने की दिशा में रायबरेली के कवियों की भूमिका किसी से कम नहीं रही है। जिले के प्रमुख स्वतंत्रता-सेनानी रामेश्वर श्रीवास्वत उर्फ बाबूलाल (डलमऊ : 1910) ने रायबरेली जनपद में स्वतंत्रता हेतु हो रहे संघर्ष को सन् 1939 ईसवी में आल्हा-शौली में काव्य का रूप दिया था। उनका 'वीरगाथा' शीर्षक अवधी काव्य उनकी राष्ट्रीय भावना का प्रामाणिक दस्तावेज है। 'मुंशीगंज गोलीकाण्ड' से सम्बन्धित उनकी कविता उल्लेखनीय है।

35. रमाकांत श्रीवास्तव (1921 : पूरे मोहनलाल-लालगंज) ने 'रमईकाका' के साथ अवधी भाषा में कविता करनी प्रारम्भ की थी। 'खलिहान' उनका अप्रकाशित अवधी काव्य है। 36. भँवरसिंह 'भँवरेश' (1922-1980 : चिलोला-लालगंज) ने भारतीय किसान की व्यथा को 'किसान कै गोहारि' जैसे अवधी काव्य में वाणी दी थी। 37. ज्ञानप्रकाश 'ज्ञान' (1923 : रायबरेली)-कृत 'विनयशतक' में अवधी भाषा औरदोहा छन्द का प्रयोग हुआ है। 38. लालगंज निवासी पं. प्रतापनारायण मिश्र (फरवरी 1925) महावरी हनुमान के चरित्र पर अवधी भाषा में शत छप्पय छंदों की रचना की जिन्हें उन्होंने 'महावरी-चरित्र' के नाम से प्रकाशित (1972) कराया। मिश्र जी के इस मुक्तक काव्य पर तुलसीकृत मानस की अमिट छाप अंकित है। 39. शोरा-गंगागंज के निवासी जगदीश प्रसाद मिश्र (1926) ने अपनी काव्य यात्रा अवधी लोकगीतों से प्रारम्भ की थी।

40. हिन्दी के सुपरिचित विचारक एवं समालोचक डॉ. **देवकीनन्दन श्रीवास्तव** (फरवरी 1928: लोहानीपुर-रायबरेली) अवधी के प्रतिनिधि स्तरीय रचनाकार हैं। 'नन्दन' उपनाम से हिन्दी काव्य क्षेत्र में विख्यात डॉ. श्रीवास्तव ने 'बरवै-सतसई'-जैसी सशक्त काव्य-कृति की सृष्टि कर तुलसी ओर रहीम की परम्परा में स्थान पा लिया है। उन्होंने अनेक लोकगीतों और अवधी वार्ताओं की भी रचना की है जो अब तक अप्रकाशित हैं। 'रसवंती' (मासिक पत्रिका, लखनऊ) में प्रकाशित उनके बरवों को पढ़कर माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा' ने जो सराहना और आशीर्वाद भेजा था, वही 'बरवै-सतसई' प्रकाशित (1981) की प्रेरणाभूमि बना। इस कृति द्वारा कवि ने यह सिद्ध कर दिया है कि अवधी भाषा का यह लाड़ला छंद केवल प्रेम सौन्दर्य और श्रृंगार जैसी सुकुमार भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए ही उपयुक्त नहीं है, अपितु दर्शन, अध्यात्म ओर विज्ञान की सूझ-बूझ की भी बड़ी सुबोध और चुटीली व्यंजना करने की विलक्षण सामर्थ्य रखता है। परम्परागत विषयों के अलावा 'बरवै-सतसई' में युग की चेतना एवं लोकजीवन की वेदना के साथ-साथ भक्ति, नीति एवं रहस्य की विविध भंगिमाएँ, वैविध्य तथा वैचित्र्यपूर्ण व्यावहारिक भावभमियों की प्रभावपूर्ण प्रस्तुति भी हुई है। डॉ. नन्दन के बरवों के कुछ उदाहरण प्रमाणस्वरूप निम्नाँकित हैं–

बरवा पहिल कीन्ह कोउ नवला नारि।
'नन्दन' मन अनुमानि कहत सुविचारि।। 1।।

बरवा रचि कवित केते अब रस लीन।
जस रहीम तुलसी 'नन्दन' ये तीन।। 2।।
बरवा बरवा रस कै बिरवा बाँक।
वरन वरन पियवा कै मूरति आँक।। 3।।
मुसकानि भौंहनि कै जेहि सपनेहुँ लाग।
छूटे सिगरे रसवा सिगरे राग।। 4।।
पाँव पखार सगरवा लेत हिलोर।
करत सिंगार सुरजवा नित उठि भोर।। 5।।
जाकर ईसा पूत मुहम्मद दूत।
जगत बसत सोइ राम बसन ज्यों सूत।। 6।।

41. प्रसिद्ध साहित्यकार **अमर बहादुर सिंह 'अमरेश'** (929-1978 : पूरेरूपसिंह- बछरावाँ) ने स्फुट में अवधी लोकगीतों की रचना कर ग्रामीण मानसिकता और रसिकता का परिचय कराया था। 42. मंचितपुर-रायबरेली-निवासी द्वारका प्रसाद त्रिपाठी 'प्रेमी' (1930) ने ज्वलंत समस्याओं को लेकर स्फुट रूप में अवधी कविताएँ लिखी हैं। 43. हनुमान प्रसाद साहू 'मान' (1930 : भोजपुर) की कविता में उनके सरल-सहज एवं राष्ट्रीयता-प्रधान व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। जन्मभूमि, स्वतंत्रता, भेदभाव रहित एकता के वे सच्चे आराधका हैं। इसी कारण आज के तथाकथित नेताओं के व्यवहार से वे अत्यन्त क्षुब्ध हैं। तभी उन पर व्यंग्य करते हुए कवि 'मान' ने कहा है–

बीछी और साँपु के है जहरु पूछि फन माँ होत,
नेता के जहरु भरा भइया हर कन माँ है।
भासन का रासन इ जनता माँ लुटाय रहे,
गाँधी के साँचे भगत खादी मढ़े तन माँ हैं।
पइसा लै नियाउ ब्याचैं, निरधन कै सुनी न जाति,
माया निराकार जइसी व्यापी जन-जन माँ है।
कबहूँ समरथनु देत, कबहूँ विरोधी 'मान',
गिरगिट का जइसु रंगु बदलति ई छिन माँ हैं।

44. **गिरिजा शंकर मिश्र 'गिरिजेश'** (1932 : बन्नावाँ-बछरावाँ) जनपद वर्तमान के प्रमुख अवधी कवि हैं। कवि 'गिरिजेश' ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त अव्यवस्था अथवा कुरूपता का अपने काव्य के माध्यम से डटकर विरोध किया है। इसीलिए उनके काव्य तरकश में व्यंग्य के असंख्य वाण सुरक्षित हैं। वे स्वभाव से हँसमुख होते हुए भी चिंतक हैं, साथ ही सरस भी। 'मुसराधार' उनका हास्य-रस-प्रधान अप्रकाशित किन्तु चर्चित अवधी-काव्य है। इसके अतिरिक्त 'अवधी-गीत', 'गीता-ज्ञान', 'वेदान्त-ज्ञान-दर्शन' तथा 'व्याधि-विज्ञान' जैसी अन्य उनकी अप्रकाशित रचनाएँ हैं।

जनपद में अवधी भाषा और साहित्य को समृद्ध करने वालों में 45. डॉ. महेश प्रताप नारायण अवस्थी (5 जनवरी, 1923 : चिलौली-इन्हौना) शीर्षस्थ हैं। 46. पं. रामनरेश त्रिपाठी के वे सच्चे अर्थों में उत्तराधिकारी है। अवधी लोकगीतों के संग्रह एवं सपादन में डॉ. अवस्थी सभी के लिए आदर्श हैं। सन् 1975 में आगरा विश्वविद्यालय से आपने 'अवधी लोकगीतों का सांस्कृति अध्ययन' विषय पर पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। यह शोध-प्रबन्ध अब (1990 में) प्रकाशित हो गया है। 'अवधी-साहित्य-मंडल' की स्थापना द्वारा महेश जी ने समस्त अवधी-प्रेमी-समाज को एक मंच पर लाने का स्तत्य कार्य किया

है। एक ही वर्ष (1985) में अवधी-लोकगीतों के तीन संग्रह क्रमशः 'अवधी-लोकगीत : भाग एक', 'अवधी-लोकगीत : भाग दो' एवं 'अवधी-लोकगीत- हजारा' का सम्पादन एवं प्रकाशन कर डॉ. अवस्थी ने अवधी के प्रति अपनी अनन्य आस्था और उसके उत्कर्ष की उत्कट अभिलाषा का प्रमाण दिया है। 'महेश-सतसई' (1987) के रूप में कवि ने विविध विषयों पर आधारित सौ दोहों एवं सोरठों की रचना की है। 'जन-रामायन' (1989) उनका प्रकाशित अवधी महाकाव्य है। आदि कवि की 'रामायण' के आधार पर कवि ने महाकाव्य का कथा-विन्यास किया है। वैसे तुलसी के 'मानस' के आधार पर कवि ने महकाव्य का कथा-विन्यास किया है। वैसे तुलसी के 'मानस' का अमिट प्रभाव भी सर्वत्र विद्यमान है। 'अमराई' (1989) डॉ. अवस्थी की विविध विषयों पर आधारित अवधी कविताओं का स्तरीय संग्रह है। अवधी समाज में फैले, राम कथा पर आधारित, लोगीतों का संग्रह और सम्पादन कर अवस्थी जी ने 'लोकगीत-रामायन' (1990) के रूप में एक अन्य श्लाघनीय कार्य किया है। 'जन-रामायन' महाकाव्य की भाषा सरल, साहित्यिक एवं यथास्थान ठेठ अवधी के शब्दों से युक्त है। 'आल्हा' बैसवारे के गाँवों में अत्यन्त लोकप्रिय है। तभी कवि ने आल्हा जैसे वीर छन्द का इस प्रबन्ध-काव्य में विशेष प्रयोग किया है। वैसे कवि ने दोहा, सोरठा, सवैया, हरिगीतिका जैसे शास्त्रीय छन्दों के अतिरिक्त सरिया, कजली, मंगल एवं गारी इत्यादि लोक छन्दों का भी सुन्दर सामंजस्य किया है। सम्पूर्ण प्रबन्ध काव्य आठ काण्डों एवं अट्ठारह सर्गों (अध्यायों) में विभक्त है। 'जनरामायन' का आरम्भिक अंश द्रष्टव्य है–

बन्दउँ परब्रह्म परमेसर, जेहि ते सकल सृष्टि रचि जाइ।
पुनि गुरु चरनन सीमा नवावउँ, ज्ञानरासि मिलि सहज सुहाइ।।
बन्दउँ बालमीकि द्वैपायन, कालिदास भवभूति महान।
कम्बन कृतिवास कवि तुलसी, सिरस मैथिलीसरन सुजान।।।
सन्तन्ह पद पदुमन्ह पुनि लागउँ, जेहि ते पाप पुंज विनसाइ।
मानस निर्मल रहइ निरन्तर, मन-मराल पैरइ पुलकाइ।।
दोहा– *खलगन संगति बारुनी, कबहुँ न कीजिअ संग।*
कह बुध जन ब्यापइ तनहिं, वृश्चिक विष जिमि अंग।।

राना बेनी माधव, भीरा-गोविन्दपुर, अवधी कविता और डॉ. चक्रपाणि पाण्डेय, इन चारों का घनिष्ट सम्बन्ध है। 47. 1 नवम्बर, 1933 को रायबरेली जनपदान्तर्गत 'भीरा-गोविन्दपुर' ग्राम में जन्मे **चक्रपाणि पाण्डेय** मूलतः राष्ट्रप्रेम और लोक भाषा के कवि हैं। जन्मभूमि और वहाँ की भाषा (अवधी) तथा लोक कविता के प्रति अटूट प्रेम उनके काव्य का मूल उत्स है। इसीलिए इन सबके विकास एवं प्रचार-प्रसार के लिए वे सदैव समर्पित रहे हैं। बैसवारे के इतिहास के मर्मज्ञ कथाकार अमृतलाल नागर ने अपने ऐतिहासिक शोधग्रन्थ 'गदर के फूल' मे पाण्डेय जी के इस रूप की सराहना की है। लोक संस्कृति, सामयिक विषयों तथा विसंगतियों पर आधारित स्फुट अवधी-रचनाओं के अतिरिक्त उन्होंने एक दर्जन अवधी खण्डकाव्यों की रचना की है। जिनमें से 'वैस-वंश-भूषण' 1978, 'बनौधा-बीर-बीरा' (1979) और 'अमर ज्योति अमर तन' (1989) अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। 'वेसवंश-भूषण' बैसवारे के सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी राना बेनीमाधव के वीरत्व-व्यंजक चरित्र पर आधारित है। 'बनौधा-बीर-बीरा' में राना के विश्वासपात्र काव्य में राना के एक अन्य विशिष्ट सहयोगी राजा शिवरतन सिंह उर्फ 'अमरतन' एवं उनकी अर्धांगिनी वीरांगना रानी ज्योति के त्याग, सेवा, जन्म-भूमि-प्रेम और शौर्य को आलम्बन बनाया गया है। इस प्रकार, वीररस डॉ. पाण्डेय की कविता का मुख्य रस है।

चक्रपाणि जी ने सन् 1975 में आगरा विश्वविद्यालय से 'पूर्वी अवधी लोगीतों का सांस्कृतिक विवेचन' विषय पर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। 'लोकशिखा' उनके प्रमुख लोगीतों का अप्रकाशित

संग्रह है। अवधी के विभिन्न जनपदों में अध्यापन कार्य करते हुए डॉ. पाण्डेय ने वहाँ के लोकगीतों का वृहद् संग्रह किया है। माटी के रतन नाम से उन्हें तीन भागों में प्रकाशित करने का पाण्डेय जी का विचार है। डॉ. चक्रपाणि की अवधी कविता की बानगी उनके चर्चित खण्डकाव्य 'वैसवंशभूषण' से उद्धृत है–

'चक्रपाणि' चक्र है, कराल त्रिभुवन यह,
भक्ति लै भवानी की हिमालय चढ़ि जाइहै।
धन्य भाग्य! राना का, दुधारा-शस्त्र पूजि आजु,
माटी का करेजा दस, हाथ बढ़ि जाइहै।।
जन्मभूमि भीरा, बैसवार की विजय ध्वनि,
कन-कन राग माँ, सोहाग राग गाइहै।
सुनि कै बडैला ताल, उछरत बाँस भरि,
ऊसर हँसत दूब, मानौ अँगड़ाइहै।।   –बैसवंशभूषण, वंदना।

ग्रामीण परिवेश में जन्में और उसी के बीच सदैव साँस लेने वाले 48. **सूर्यवत्स सिंह राठौर** (जनवरी 1933 : ताला खजुरी) ने गाँव के साधनहीन किसानों की जो दयनीय दशा देखी है, उसी का यथातथ्य चित्रण उन्होंन अपने 'किसानन कै दुर्दशा' (1953) नामक काव्य में की है। सिंह साहब के अवधी-काव्य में कण और वीर दोनों ही प्रकार के रसों का अच्छा निर्वाह हुआ है। उनकी इन रचनाओं में परोक्षरूप में कवि का जन्मभूमि के प्रति प्रेम व्यक्त हुआ है।

49. **शारदाप्रसाद शुक्ल 'शारदेश'** (1934 : चहोतर-भोजपुर) की अवधी-रचनाओं में ग्रामीणों की अबोधता, अवधी-शब्दों की सहजता के साथ ही साथ जीवन की वास्तविकता की अच्छी झलक मिलती है। इसीलिए कवि की ऐसी रचनाओं में हास्य-व्यंग्य का मोहक पुट होता है। 'हटिया कै जलेबी', 'चउथी सादी', 'भतीजे कै गप्प', 'काका कै तोंदु; एवं 'महनामथु' 'शारदेश' के अप्रकाशित अवधी-काव्य-संग्रह हैं। 50. चारुचन्द्र द्विवेदी (1934 : रायबरेली) ने अवधी में लचारियों की रचना की है, इसके अतिरिक्त अवधी भाषा में दोहा-चौपाई शैली में उनके द्वारा की गयी कविता में हास्य-व्यंग्य का अच्छा निर्वाह हुआ है। 51. रामकृष्ण दीक्षित 'फक्कड़' (1936-1983: दोस्तपुर अमावाँ) के अवधी-गीत लोकजीवन की समस्याओं और विद्रूपताओं को आलम्बन बनाकर लिखे गये थे। 52. काशी प्रसाद द्विवेदी (1936 : बन्नावाँ) अवधी-लोकगीतों तथा व्यंग्यप्रधान रचनाओं के लिए उल्लेखनीय हैं। 53. शिवमोहन सिंह (1937 : रामपुरकुकहा-अहोरवा भवानी) ने स्फुट रूप में हास्य-व्यंग्य-प्रधान अवधी-गीतों की सृष्टि कर 'भोला-बैसवारी' के नाम से ख्याति प्राप्त की है।

54. **कौशलेन्द्र पाण्डेय** (28 दिसम्बर, 1937 : बन्नावाँ-बछरावाँ) ने मूलतः खड़ी बोली के साहित्यकार होते हुए भी ग्रामीण परिवेश में जन्म लेने के कारण वहाँ की विसंगतियों और परिवर्तित होती मानसिकता को अवधी-जनभाषा में प्रस्तुत किया है। तुलसी बाबा की उक्ति–'स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती' की भाँति ही कौशलेन्द्र जी ने आजुकान्हि के मित्र में इसी वास्तविकता का पर्दाफाश किया है। यथा–

मुँह पै बड़ाई करैं, पाछे ते बिराय लेंय।
पाइनि ना पियै का तौ जाय ढरकाय दिहिनि।
मतलबु गाँठै माँ करत रहे हाँ जी हाँ जी,
परा जब कामु, तब ठेंगरा देखाय दिहिन।
फाँय-फाँय बहुत करत रहे बातन माँ मुलु,

अवसरु परे पर घोंघा जस मुँह बाय दिहिनि।
टटिया की ओटते किहिनि घटियायी नितै,
गाँव देसु बंसु केरि लोटिया छुबाय दिहिन।

55. **गुरचरनलाल 'गुदड़ी के लाल'** (1938 : मलिकमऊ-चौबारा) का अवधी-काव्य हास्य-व्यंग्य-प्रधान और सामयिक समस्याओं तथा विद्रूपताओं पर आधारित है। 'झलबदरा' (1978) उनका प्रकाशित अवधी-काव्य है। 56. फूलचंद मिश्र 'चन्द्र' (1938 : दौलतपुर) ने 'कृष्णरस-सागर' नामक अपूर्ण अवधी-काव्य की रचना की है। सन् 1939 'नन्हें भैया' के नाम से जाने-पुकारे जाते हैं। अवधी-कविताओं में यही उनका उपनाम भी है। अवस्थी जी की रचनाओं में ग्राम्य परिवेश, वहाँ की धार्मिक व राष्ट्रीय भावना का भी सुन्दर सामंजस्य है। भोले-भाले ग्रामीणों की हृदयगत होती है। 'नन्हे भैया' शक्ति (दुर्गा) के विशेष आराधक हैं। 'देवी अहरवा चालीसा' तथा उनकी सद्यःप्रकाशित 'देव-पंचाष्टक' रचनाएँ इसका प्रमाण हैं। 'नींद अउतै नहीं', 'हियरा हँसै हमार' एवं 'पैकरमा' उनकी अन्य उल्लेखनीय अवधी काव्य कृतियाँ हैं। 'देवी-पंचाष्टक' (1990) में दोहा, सवैया, कुंडलिया एवं पद जैसे शास्त्रीय छंदों के अतिरिक्त लोकगीत को भी स्थान देने से रचनाकार का 'जनकवि' होना सिद्ध होता है। प्रत्येक प्रकार के छन्द में आठ-आठ रचनाएँ संग्रहीत हैं। इस कृति से कवि के हृदय की पावनता, तन्मयता एवं उसकी भाव-विहवलता का सहज परिचय मिलता है।

यथा—मैया के पद कमल पखारौं।
नैनन कलस पलक जल पूर्यो, सुसुकि-सुसुकि अँसुअन जल ढारौं।
करमन-पुहुप अधम जीवन के भरि-भरि अँजुरी चरनन मँह पारौं।।
काम-कोह, मद-मोह भरे उर, चौमुख दियना जगमग वारौं।
मन-अँधियारमिटै नहिं मेटे, जोति लखौं, आरती उतारौ।
'नन्हें' अम्ब कृपा करि चितवहु, चरन कमल परतन-मन वारौं।

57. कुकुहारामपुर के जगऊ यादव (1940) भगवद्-भक्तिपरक बिरहों, भजनों और सामयिक विषयों के लिए अपने क्षेत्र में चर्चित हैं। 58. रामपुर-नीमटीकर के शालिग्राम चतुर्वेदी 'चंचलेश' (1940) की अवधी-कविता अन्य अवधी-कवियों की भाँति हास्य और व्यंग्यपरक होती है। 59. हलोर-निवासी सत्यनारायण मिश्र (1942) कृत 'सायकिल चालीसा' और 'पटवारीनामा' कृतियाँ हास्यरस-प्रधान हैं। 60. शम्भुदयाल सिंह 'सुधाकर' (1943 : दसवंतपुर मऊगर्वी) ने कृष्णभक्ति-प्रधान अवधी छन्दों की सृष्टि की है। 61. गंगासागर शुक्ल (1943 : बिसुनपुर-बछरावाँ) ने अवधी लोकगीतों के माध्यम से काव्य क्षेत्र में प्रवेश किया था। 62. डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र (1942 : बन्नावाँ) ने भक्तिपरक बरवै और दोहों के अतिरिक्त सामयिक विषयों पर अवधी गीतों की रचना की है। 63. रामकृष्ण यादव 'निर्झर' (1948 : पूरे कालिका-सेमरपहा) की अवधी कविता में ग्राम्य प्रकृति और राष्ट्रीयता का सामंजस्य है। 64. रामदुलारे 'विद्याकर' (1951 : सुलतानपुर झालाऐहार) का अवधी-काव्य ग्रामीण परिवेश-प्रधान है। 65. हरिबख्श सिंह 'हृदयेश (1952 : पूरे धानु मुराई काबाग) लोक धुनों परनवजागरण-प्रधान अवधी गीतों के रचयिता हैं। 66. राजकिशोर मिश्र (1953 : सुल्तानपुर खेड़ा-अटौरा) युवा लोकगीतकार के रूप में चर्चित हैं। 67. कमलकिशोर शुक्ल (1953 : बन्नवाँ) की अवधी कविता में हास्यरस प्रधान है। 68. रमणेश मुंशीगंज-क्षेत्र के अवधी कीर्तनकार के रूप में जाने जाते हैं।

आकाशवाणी-दूरदर्शन और काव्य-मंचों द्वारा अवधी कविता के व्यापक प्रचार-प्रसार में युवा कवि 69. रमेश रंजन (जनवरी, 1954 : पड़री-गनेशपुर) का नाम सर्वोपरि है। इनकी अवधीरचनाओं मे ग्राम्य

संस्कृति, वहाँ की सुकुमारता, हृदय की निर्मलता और उदारता की मोहक झलक मिलती है। रमेश ने लोक रुचि को दृष्टि में रखकर ही अवधी-काव्य-सृजन द्वारा जन-मन-रंजन करने में अच्छी सफलता प्राप्त की है। उनके मार्मिक 'विदाई-गीत' का एक अंश ध्यातव्य है—

दुरुकि परी अँखियाँ चलत ससुरारि।
रोवैं लपटानी परी संग की सहेलियाँ,
ननद संग दीन्ह्यो न सुरतिया बिसारि।
अत तौ छुटति सखी गुड़िया और गुड़वा,
छूटै प्यारी चिरिया और प्यारा पनघटवा,
झुलन वारी छुटि जइहै निबिया कै डारि।

रायबरेली जनपद की अवधी-कविता से सम्बन्धित इस परिचायात्मक प्रस्तुति से स्पष्ट है कि ब्रजभाषा-काव्य की अपेक्षा अवधी कविता राजाश्रय से परे रहकर विकसित हुई। यह अवश्य है कि 'चन्दायन', 'पद्मावत' और 'कृष्णायन'—जैसी प्रौढ़ कृतियों के स्थान पर प्राकृतिक चित्रणों, ग्राम्य-संस्कृति, उसकी समस्याओं और विद्रूपताओं के अलावा सामयिक विषयों पर काव्यसृष्टि हुई जिसमें हास्यरस तथा व्यंग्य की प्रधानता रही। जनपद का अधिकांश अवधी-काव्य स्फुट रूप में है जिसका स्तर भी गिरा है। इन सारी कमियों का कारण दिन-प्रतिदिन अवधी-भाषी-क्षेत्र का संकुचित होते जाना आज गाँव में शहर का प्रवेश बिलकुल आक्रमण जैसा है जिसने हमारे जीवन की सहजता और सरलता को झकझोर दिया है। इसके अतिरिक्त इससे ग्राम्य-संस्कृति, उसकी आस्थाएँ और विश्वास भी छिन्न-भिन्न हो गये हैं। इन सबकी रक्षा अवध क्षेत्र में बढ़ रहे शहरीकरण और औद्योगीकरण के बीच कैसे हो सकेगी यह अत्यन्त महत्वपूर्ण विचारणीय विषय है। बिना इस ओर ध्यान दिये अवधी साहित्य का अस्तित्व संकटग्रस्त है।

बाराबंकी जनपद और अवधी-परम्परा

डॉ. श्याम सुन्दर दीक्षित

ममता, समता एवं स्नेह से जिसके अणु-परमाणु आप्लावित है। राम की मर्यादा और शक्ति-शील तथा सौन्दर्य जहाँ की थाती है। शिव का शिवत्व जिसकी व्याप्ति है तथा एकादश रुद्र हनुमान का अपराजेय पौरुष और निश्छल वीरता जहाँ की वानि है, जिसने आदि पुरुष (मनु) को जन्मा। जहाँ प्रथम बार नागर सभ्यता का जन्म हुआ। जहाँ सबसे पहले गीता का ज्ञान-भक्ति और कर्म योग मुखरित हुआ। जहाँ श्रम सादगी और बन्धुत्व के प्रतिमान पहली बार स्थापित हुए। जिसने विश्व को शान्ति अहिंसा और त्याग का प्रथम पाठ पढ़ाया। उस क्षेत्र को हम अवध के नाम से जानते है।

इस अवध क्षेत्र को गंगा, सरयू और गोमती के अमृत जल ने अभिसिंचित कर भौगोलिक स्थिति में समतल भूमि, जलोढ मिट्टी, मानसूनी जलवायु द्वारा सबके लिए उपयुक्त और सुलभ बनाया है। इसकी घनी अमराइयाँ, उर्वर शस्यश्यामला भूमि, षट्ऋतुएं प्रत्येक मनुष्य, पशु एवं पक्षियों अर्थात् प्राणिमात्र के लिए आकर्षण का सदैव केन्द्र रही है और यहाँ की भाषा अवधी लोक के इसी वाह्य आकर्षण और अध्यात्मिक मन के अनुरूप अवधी सम्प्रक्ता में राग-विराग की अप्रतिम अभिव्यक्ति। यह अवधी ही एकमेव ऐसी भाषा है जो लोक सम्भवा होते हुए भी अपने से सुदूरवर्ती क्षेत्रों को भी संस्कृतिक और संवर्धित करने में अपना योगदान देती रही है। अवधी के अनेक शब्द आज से लगभग 900 वर्ष पूर्व सृजित **''उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण''** नामक व्याकरण ग्रन्थ और लगभग 700 वर्ष पूर्व ज्योतिरीश्वर ठाकुर के ग्रन्थ- **''वर्ण-रत्नाकर''** में देखे जा सकते हैं।

इसी अवध-अवधी का नाभिक है, जनपद बाराबंकी। जिसकी भौगोलिक अवस्थिति सात जनपदों को स्पर्श करती है। बाराबंकी के उत्तर में सीतापुर पूर्व में फैजाबाद पूर्वोत्तर में बहराइच, गोण्डा, दक्षिण में रायबरेली, दक्षिण पूर्व में सुल्तानपुर और पश्चिम में लखनऊ। भू-विस्तार में जनपद का कलेवर भले लघुगात हो किन्तु इसकी केन्द्रीयता भौतिक और आध्यात्मिक उर्वरशीलता अनादि काल से निर्विवाद है। अवध के इस हृदय जनपद बाराबंकी की पग-पग भूमि तीर्थ है। इसकी धूल का कण-कण चन्दन की सी गमक से अभिपूरित है। जिसके बाम पार्श्व में सरयू और घाघरा तथा दायें गोमती और मध्य में कल्याणी नदियों का पुण्य-पवित्र जल प्रवाहित है। यह वह भूमि है जहाँ वशिष्ठ ने राम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप को गढ़ा। यह वह भूमि है जिसने धर्मराज युधिष्ठिर को शरण दिया तथा पाण्डवों के आध्यात्मिक उत्कर्ष और शक्ति संचय में सहायक बनी। जहाँ विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि की उपाधि दिलाई। जहाँ पर देवल स्मृति लिखी गई। यही पर सूफियों की प्रेम-पीर गूँजी। अनेक तपःपूत ऋषियों की तपस्थली यह भूमि प्रवृत्ति निवृत्ति की एक साथ संवाहिका बनी। परम विदुषी और याज्ञवल्क्य की भार्या मैत्रेयी की जन्मभूमि यहीं थी। विश्वविख्यात 'सतनामी-सम्पद्राय' इसी मिट्टी से पैदा हुआ। जिसने ऊँच-नीच, छुआ-छूत को मिटाकर एक बार पुनः सामाजिक समरसता, मनुष्यता की प्रतिष्ठापना की। महामहोपाध्याय बाबा बैजनाथ

कुर्मी जिन्हें तुलसी का दूसरा अवतार कहा गया, इसी माटी की देन हैं। तात्पर्य यह कि जनपद का हर ग्राम-नगर, वन-उपवन अर्थात् प्रत्येक स्थान ऐतिहासिक और पौराणिक महत्व से अभिपूरित है। विश्वबन्धुत्व, समता, शक्ति-शील-सौन्दर्य, शिवत्व, वचनबद्धता, पर दुःख कातरता, ममता और प्रेम तथा मधुरता बाराबंकी की मिट्टी के अपने गुण है।

यदि पौराणिक कथनों को कोरी गप्प और वर्णित व्यक्तियों को मिथिकीय कल्पना और फन्तासी कह कर खारिज न किया जाय। विचार सरणि को अति यथार्थ एवं प्रामाणिकता की माँग के बोझ से न दबाया जाय। इतिहास के नाम पर एक निश्चित काल खण्ड को ही मान्यता प्रदान कर दुराग्रह का धरातल त्याग कर तथा निरपेक्षता के कवच से बाहर आकर केवल विदेशी और राज्याश्रित इतिहासकारों के कथनों को ही प्रमाणिक मानने की जिद् से इतर तटस्थ विचार किया जाया तो अतीत के इतिहास से कुछ और ही ध्वनित होता है। सिजके प्रमाण में स्थानों के नाम प्राचीन ध्वंस-अवशेष, किवदन्तियाँ, जनश्रुतियाँ और परम्परा से प्राप्त कथन, लोकोक्तियों की भाषा भी कुछ कहती हैं। परम्परा और विश्वासों की एक अटूट श्रृंखला बनाती हैं। मेरी तो निश्चित मान्यता है कि जिसका आभाष भी न हो उसे कल्पना में गढ़ा नहीं जा सकता।

इसी आधार पर पुराणों को पुरावृत्त (इतिहास) मानते हुए परम्परा और जनश्रुतियों से प्राप्त जानकारी के आधार पर तथा स्थानों के आज बदले नामों की संगति प्राचीन नामों से बिठाते हुए जनपद की सांस्कृतिक आध्यात्मिक स्थिति को देखने का प्रयास शायद उतना अक्षम्य न होगा जितना अपने और अपनी परम्परा को ही अस्वीकार कर देना। जब आज प्रजातान्त्रिक युग में प्रसिद्ध राजनेताओं, शासकों के नाम से ग्राम, नगर, पार्क, पथ, संस्थाओं की पट्टिकाएं सुशोभित हो रही हैं तो यह कैसे कहा जा सकता है कि प्राचीन राजतन्त्री व्यवस्था में या उससे पहले जब नागर सभ्यता विकसित नहीं हुई थी उस समय ऐसा न हुआ होगा। क्योंकि मानवीय स्वभाव में यदि परिवर्तन हुआ भी है तो वह देश-काल और परिस्थितियों के कारण ही है, मूलवृत्ति नहीं बदलती।

बाराबंकी में रामायण एवं महाभारत कालीन अनेक अवशेष आज भी बिखरे हैं। जैसे जनपद मुख्यालय से मात्र तीन किलोमीटर दूर आज का गदिया प्राचीन गादि आश्रम है। उसी के पार्श्व में ऋखावन प्राचीन ऋषि वन है। जो इन दोनों को अपने किनारे बसाए हुए है एक लघुकलेवर नदी रेठ है जिसे ऋषि वन से संबंधित होने के नाते ऋषि प्रश्रयणी और गादि आश्रम के सन्निकट होने से कौशिकी भी कहा जाता रहा है। इसके अतिरिक्त सप्तऋषि क्षेत्र वशिष्ठ का आश्रम था और राम का गुरु कुल जिसे आज सतरखि के नाम से जाना जाता है। इसी की बगल में वहमरौली है जनश्रुति एवं लोक विश्वास के अनुरूप कभी यही विश्वामित्र को वशिष्ठ द्वारा ब्रह्मर्षि की उपाधि स्वीकृत हुई थी।

महाभारत कालीन परम्परा में चौका घाट, कुरुक्षेत्र जिसके बारे में कहा जाता है कि लाक्षागृह से निकल भागने के बाद माँ कुंती के साथ पाण्डव वन-वन भटकते यहीं आये थे। इसी असहाय स्थिति में उनके शुभ चिन्तक विदुर द्वारा बार-बार आने और ठहरने तथा धर्मराज से गोपनवार्ता हेतु सम्पर्क में रहने के लिए जिस स्थान का चयन किया था वह विदुर स्थान, विदुर सराय और अब बदोसराय के नाम से जाना जाता है, इसी तरह धर्मराज युधिष्ठिर का वन निवास स्थान धर्ममण्डपम् आज धमेड़ी के रूप में रामनगर के पास अवस्थिति है। अर्जुन द्वारा नन्दन कानन से लाया गया देव वृक्ष **पारिजात** जिससे रेणुकवन में आज के वरवलियाँ में रोपित किया गया था। इसके पुष्पों से शिर्वाचन हेतु वन में जिस स्थान का परिष्कार कुन्ती ने कराया था आज किन्तूर के नाम से जाना जाता है सम्भवतः यह प्राचीन कुन्तीपुर है क्योंकि यही भगवान शिव का एक विशाल बलुए पत्थर का लिंग स्थापित है जिसे कुन्तेश्वर महादेव के नाम से आज भी जाना जाता है। इस शिवलिंग की यह विशेषता है कि यह सदैव जलाभिषिक्त दिखता

है। इस तथ्य का मनोहारी चित्रण कवि गुरु प्रसाद सिंह 'मृगेश' ने अपने प्रबन्ध काव्य पारिजात में किया है जो अवधी का अकेला ऐसा महाकाव्य है जिसका आधार एक वृक्ष है। किन्तूर के बगल में आज का गाँव सिपहिया प्राचीन भीमू सिपाह है। किंवदन्ति और लोकविश्वास के अनुसार पाण्डव भीम ने यहीं एक मायावी राक्षस गजभूत को मार कर जहाँ क्षेत्र को अभय दिया था वहीं यहाँ से ही वे मात्र ग्राम किन्तूर एवं कुन्तेश्वर मन्दिर की रक्षा में भी सनृद्ध रहते थे। यही राम नगर के समीप बोहनिया एक छोटी नदी है जो अर्जुन द्वारा बाण से बेध कर निकाली गयी जल-धार 'बाण हन्या' है।

जनपद बाराबंकी शैवों का भी स्थान रहा है। इस मत के अनुयायी शासक रुद्रसिंह की कभी राजधानी ही 'रुद्रावलि' थी जिसे आज रुदौली के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त लोधेश्वर, कुन्तेश्वर, सिद्धेश्वर (जिसके आधार पर सिद्धौर आज भी बसा है) नागेश्वर आदि मन्दिर आज भी जनपद की शोभा है। हैदरगढ़ के पास ग्राम पोखरा का गुर्जर प्रतिहार शैली का शिवमन्दिर एवं राज पुष्करणी तथा बाराबंकी के पास ग्राम असेनी के दो प्राचीन शिव-मन्दिरों के ध्वंस शेष रूप इसे शैवों की भी भूमि होने की पुष्टि करते हैं।

एकमेव बौद्ध क्षेत्र 'मजिष्ठ' जिसे मजीठा कहा जाता है आज भी एक विशिष्ट स्थान के रूप में जाना जाता है। किवदन्ति के अनुसार यहाँ से एक बार जा रहे भगवान बुद्ध की करूणा का स्पर्श पाकर एक नितान्त आततायी एवं जिघिंसु नाग नाम का व्यक्ति अर्हत्व्य को प्राप्त हुआ था, तथा देवत्व प्राप्त किया था इसीलिए उसकी स्मृति में आज भी आषाढ़ में वहाँ मेला लगता है।

[illegible] कवि तुलसी जिन्होंने अवधी और अवध को वैश्विक परिदृश्य में स्थापित किया। इसकी अध्यात्मिकता और संस्कृति को समूचे संसार में समप्रसारित किया, का गुरूकुल वराह क्षेत्र का शूकर क्षेत्र घाघरा और सरयू के संगम पर इसी जनपद में विद्यमान है।

ग्यारहवीं शताब्दी में इस क्षेत्र पर मुस्लिम आक्रमणों एवं लूट-पाट तथा सत्ता स्थापना के प्रयास प्रारम्भ हुए। इस शान्त क्षेत्र को प्रथम बार कोलाहल एवं द्वन्द्व से दो चार होना पड़ा। सैयूयद सालार मसूद गाजी के पिता सालार साहू ने जनपद बाराबंकी के सतरिख में अपना सैनिक शिविर स्थापित किया। कहते हैं कि सतरिख उस समय तक अवध के सभी नगरों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं वैभवशाली था। यही से पिता-पुत्र ने अवध पर कब्जे की योजना बनायी थी। किन्तु सालर साहू सतरिख में ही एक युद्ध में लड़ते-लड़ते मारे गये। उनकी समाधि आज तक गाजी साधु के रूप में सतरिख में विद्यमान है। वहाँ प्रतिवर्ष मेला भी लगता है। पिता की मृत्यु के पश्चात् लूट पाट के ही इरादे से 'मसूद' सतरिख से बाराबंकी, महादेवा से होता हुआ रूदौली, गुलचापा, आतियाबाद, कटरा कोपेपुर, दरियाबाद, इचौली, किन्तूर, बदोसराँय से घाघरा पार कर बहराइच पहुँचा। जहाँ सुहेलदेव द्वारा युद्ध में मारा गया। इस बीच इन सैनिक लुटेरों ने अनेकानेक क्षतियाँ की, मठ मन्दिर तोड़े, और अनेक मजारों तथा मकबरों का निर्माण किया।

बारहवीं सदी के अन्त तक यद्यपि मुस्लिम आधिपत्य कायम होने लगा था। फिर भी अवध के शासक जागीरदार प्रायः उसकी छाया से मुक्त ही थे। बलवन के समय से सूबेदारों का नियंत्रण अवध में प्रारम्भ हुआ। मुस्लिम सैनिक छावनियों की देख रेख में बाराबंकी में भी अवध के अन्य जनपदों की तरह मुस्लिम बस्तियाँ बनीं, और जमींदारी का विकास हुआ। तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी में बाराबंकी में सैयूयद वंश के उपनिवेश कायम हुए। इसी बीच कुछ मुस्लिम सन्तों के वंशज भी यहाँ आये और विभिन्न स्थानों में रहकर अपने मत-पंथ द्वारा जनता में प्रविष्टि एवं प्रसिद्धि के उपनिवेश बनाने में सफल हुए। इसी बीच जौनपुर के शर्क़ी शासकों ने रुदौली, देवा, कुर्सी में स्थानीय शासकों को हराकर कब्जे हेतु मुसलमानों को जागीरें दी गयी। सुहेलपुर का नाम बदलकर जैदपुर किया गया। विदुर सराय कब का

बदोसरांय में बदल चुका था। धीरे-धीरे समूचा अवधक्षेत्र मुगलों के समय तक मुसलमानों के कब्जे में आ गया था। मुगलों के उत्कर्ष और अपकर्ष के साथ हिचकोले खाता अवध का यह क्षेत्र नवाबों फिर ब्रिटिश सत्ता के अधीन रहा। इन अधीनताओं से मुक्ति हेतु यद्यपि अनवरत प्रयास हुए, स्वतंत्रता परतंत्रता की आँख मिचौली चली। किन्तु दुर्भाग्य से अवध को वह स्वतंत्रता न मिली जो अपेक्षित थी। सन् 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में जनपद बाराबंकी ने बेगम हजरतमहल के नेतृत्व वाली सेना की थी। सन् 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में जनपद बाराबंकी ने बेगम हजरतमहल के नेत्रत्व वाली सेना के सेनानायक बलभद्र सिंह चहलारी के नायकत्व में दुर्धर्ष युद्ध किया। जमुरिया के तट पर जनपद के अनेक वीर अपने सेनानायक के साथ रणक्षेत्र में ही वीरगति को प्राप्त हुए। स्वतंत्रता की रेखा का स्पर्श करते-करते दैववशात् इन वीरों की आत्माहुति भी काम न आ सकी और हम 90 वर्ष बाद ही स्वतंत्रता प्राप्त कर सके। उत्तरोत्तर शोषण, ताड़न, बेकारी, बेगार, भूखमरी, महामारी, अकाल, भौतिक दैविक आपदायें बज्र बनकर टूटती रहीं। जागीरदार-जमींदार बढ़ते गये। कृषक वर्ग निर्बल और असमर्थ होता चला गया। भूमि का कर निर्धारण भी जातीय आधार एवं रसूख पर आधारित होकर वर्ग-विभेद का कारण बना। नगरीय उद्योग और कुटीर उद्योग धन्धे जो परम्परा से होते आये थे तथा जीविका के संसाधन थे इन्हीं अधोगतियों में वे भी काल कवलित होने लगे।

इन राजनैतिक उथल-पुथलों के बाद भी अवध ने अपनी परम्परा और आध्यात्मिक गौरव तथा भाव समृद्धि को कभी न जाने दिया। यहाँ की ग्राम और नागर संस्कृतियाँ लोक के भीतर समाविष्ट रही। अवध की लोक संस्कृति अबाध अक्षुण्ण बनी रही। इस क्षेत्र का हास-परिहास, उल्लास-आनन्द, पर्व-त्यौहर, रूढ़ि-विश्वास, कला-अभिरूचि, आदर्श-आध्यात्मिकता, तीर्थ-व्रत, आदि अपने यथावत रूप में आदि से आज तक यथातथ्य विद्यमान हैं। इस सबका संबल हैं राम। जो अवध की माटी के अणु-परमाणु में समायें हैं। राम के स्वभाव के अनुरूप ही अवधवासी दुःख-सुख को समभाव से देखता है। और दुख में भी हास तथा सुख में भी करूणा से सराबोर रहने की सामर्थ्य से ओत-प्रोत रहता है।

यह अवध की माटी की ही तासीर है कि अपने तो अपने हैं ही, दूसरे जो बाहर से आये यही के होके रह गये। इतना ही नहीं यहाँ की सभ्यता-संस्कृति एवं आध्यात्मिकता में इतना रच-बस गये कि उन्हें अब पृथक तो नहीं ही कहा जा सकता है। यह प्रभाव अवध की जलवायु का तो है ही बहुत कुछ इसकी लोक सम्भवा भाषा अवधी का भी है कि लोग अपनी जुबान भूलकर इसकी मिठास में इतना पगे कि इसी के होकर रह गये। सूफी कवियों का समूचा सृजन इसकी प्रशस्त गवाही देता है। उनकी इश्क मजाजी से इश्क हकीकी की अन्तर्यात्रा तथा प्रेम की पीर की अभिव्यक्ति इसी अवधी की भाव सम्पदा एवं अभिव्यक्ति के स्तर पर हुई है।

सहस्त्राधिक वर्ष पुरानी अवधी का काव्यिक इतिहास जनपद बाराबंकी में प्रथम बार चतुर्भुजदास की भक्ति रचना में प्राप्त होता है। महात्मा चतुर्भुजदास रामपुर जहाँगीराबाद में रहते थे। सोलहवीं शताब्दी में इस वैष्णव कवि को जनमानस विष्णु का अवतारांश ही मानते थे। जनश्रुति के आधार पर एक बार साधुओं को भोजन परोसते समय उनकी लाँग खुल गयी। लगभग सभी मुस्करा पड़े और धोती को बाँधने का संकेत किया। महात्मा चतुर्भुजदास ने कहा इसे जिसने खोल दिया है वही बाँधेगा। कहते हैं उसी समय उनके दो हाथ और निकले, वे परोसते रहे और धोती भी बँध गयी। तब से लोगों में वे भगवान का अवतार माने गये। किन्तु यह जनपद का दुर्भाग्य ही कहेंगे कि आज उस मठ पर अशिक्षित महात्माओं के कब्जे तथा भू सम्पदा के लोभियों द्वारा प्राचीन कुछ भी सुरक्षित नहीं है। जनपद के प्रथम कवि की कोई भी रचना इस समय लगभग अलभ्य ही है।

इसके बाद अकबर का राजाश्रय प्राप्त कवि होलराय का नाम लिया जाता है जिन्हें वृत्ति के तौर

पर हैदरगढ़ के समीप चौबीसी परगना की जागीर दी गयी थी। इन्होंने अकबर की प्रशंसा में कुछ छन्द अवधी में लिखे थे जो आज भी प्राप्य है। ये जाति से ब्रहम् भट्ट थे और इन की रचनाएं प्रायः राजा या सामन्तों की प्रशंसा भरी ही अधिक हुआ करती थीं। एक बार इनकी भेंट विश्व कवि तुलसी से हुई थी, कवि द्वय की वार्ता का एक दोहा इस प्रकार है -

लोटा तुलसीदास का, लाख टका को मोल।
मोल तोल का करिए, लेऊ राय कवि होल।।

सत्रहवीं शताब्दी में इसी माटी से एक सम्प्रदाय जन्मा जिसके प्रवर्तक के रूप में 'जगजीवन साहब' जो सरदहा में पैदा हुए थे तथा कोटवाधाम जिनकी कर्मस्थली बना। इस सम्प्रदाय को हम 'सतनामी सम्प्रदाय' के नाम से जानते हैं। जगजीवन साहब के चार प्रमुख पहले शिष्य चार पावा के नाम से विख्यात हुए। इसके अतिरिक्त इस सम्प्रदाय की चौदह गद्दियाँ भी हैं। सन्त जगजीवन साहेब की सोंच यद्यपि वेदान्त दर्शन के अधिक निकट हैं किन्तु वे कभी कबीर की तरह निरगुण के उपासक एवं ज्ञानी दिखते हैं तो कभी भक्त तुलसी की तरह सगुण के प्रति आस्थावान तथा ज्ञान और भक्ति के समन्वयकारी के रूप में परिलक्षित होते हैं।

सतनामी सम्प्रदाय और उसके प्रवर्तक तथा समस्त अनुयायी प्रवृत्ति में ही निवृत्ति के अन्वेषक रहे हैं तथा जाति-पाँति, ऊँच-नीच, छुआ-छूत से दूर ऐसे समन्वयकारी पक्ष के पक्षधर जहाँ केवल मनुष्य और मनुष्यता को ही प्रतिष्ठा दी गयी है। इतना ही नहीं उन्होंने ईश्वर और अल्लाह में भी कोई भेद नहीं माना। स्वयं अभेद का संदेश हेते हुए साहब जगजीवन दास ने लिखा -

अलह अलख एकै अहै, दूजा नाही कोउ
जगजीवन दास दूजा जौ जानहुँ, दोजख परिहै सोउ।।

वे सबसे बड़ा शत्रु अहंकार को मानते हैं और शान्ति सतगुरु की आराधना में भी तो कबीर की तरह कहते हैं -

"मैं का मारि त्वै तूरि दे, मन लै बहै न बांधु।
जगजीवन चढि गगन गिरि, सतगुरु छबि औराधु।।

वे सबको सम मानते हैं कोई न छोटा न बड़ा। इतना ही नहीं सभी राम के प्रिय हैं। जगजीवन साहब का निश्चित मत है- 'सबै पियारे राम के कोऊ बड़ा न छोट'।

सत्यनाम सम्प्रदाय के ढाँचागत रचना में जगजीवन साहेब ने सर्वप्रथम चार वजीर बनाये, वही चार पावा के नाम से विख्यात हुए। इसके अतिरिक्त चौदह अन्य शिष्यों को चौदह गद्दी धर माना गया इन वजीर और गद्दीधरों के अतिरिक्त उन्हत्तर शिष्य समर्थ साहेब जगजीवन दास ने बनाये। इस प्रकार अनकी शिष्य परस्पर में कुल सत्तासी शिष्य थे। जो शिक्षित और अशिक्षित दोनों प्रकार के थे। किन्तु आध्यात्मिक ऊर्जा से सम्पन्न इन शिष्यों ने प्रभूत साहित्य की रचना की जो युग सापेक्ष तथा सम्प्रदाय के अनुरूप होते हुए भी सर्वहित कारणी, लोकरंजनी, तथा लोक साधिका सिद्ध हुई। सम्भवतः इसीलिए सतनामी सम्प्रदाय का समूचा साहित्य लोक भाषा अवधी में ही सृजित हुआ। इन चार पावों में तीन पावा बाराबंकी में थे तथा एक पावा धर्मे रायबरेली में है। क्रमशः पावों का विवरण निम्नवत् है।

जगजीवन साहेब के पहले शिष्य थे साहेब गोंसाई दास जो कमोली, बाराबंकी के निवासी थे। उन्होंने 'शब्दवाणी' और "दोहावली" की रचना की। जिसमें सतनाम का दार्शनिक पक्ष, भक्ति भावना और सामाजिक सरोकार, मानवीय आचरण तथा समाज की स्थिति का भी संगोपांग व्रिवरण उपलब्ध है। सन्त

कवि गोसाई दास जीवन की शुचिता, कर्मण्यता और पवित्रता के पक्षधर हैं तभी तो वह कहते हैं-

उद्यम अध्यवसाय है, शरण जासु सुख सार।
गोसाई दास जो न करै, तेहिका है धिक्कार।।

साहेबे, गोसाई दास (योगःकर्मषु कौशलम् जो गीता का सार है) इस तरह अभिव्यक्त हुआ है-

जाही कारन कार सब तेहि का सदा मनाव।
गोसाई दास ले सामरस, सकल सो कर्म बहाव।।
कर्म मर्म अध अंग के, पीतम डारहु जारि।
गोसाईं दास के सतगुरु सांचे, वसिये तेज हमारि।।

दूसरे पावा के पट्टशिष्य साहेब दूलनदास बाराबंकी से सटे ग्राम धर्मे रायबरेली के है। आपने अपने "निर्गुण ब्याह विधान" में मन की चंचलता को व्याख्यायित करते हुए उसे सत्त, शिव और गुरु की शरण में जाने की उत्तमोत्तम सीख दी है-

सतपिव सेज न भावै, चित, तोहि इत उत बहुत सुहात।
पाँचहु के रंग राती चित, सनमुख होत लजात।।
सकल सवै बिसराबहु चित सखि एकते लावहु नात।
चलहु महल सिर संगम, चित जंह कमल सुवास बसात।।

तीसरा पावा देवीदास पुरवा, हैदरगढ़, बाराबंकी में है जो जगजीवन साहेब के तीसरे शिष्य साहेब देवीदास का स्थान है। साहब देवी दास ने संसार और इसकी माया को चौगान खेल सा देखा है। इसकी छलना को बखूबी पहचाना है तभी तो वह इन सबको छोड़ सतगुरु की शरण की अपेक्षा करते हैं क्योंकि जीव का वास्तविक निस्तार वहीं है। वे माया, संसार और तद्जनित दोषों की अभिव्यक्ति इस प्रकार देते हैं-

बड़ी भिहावनि रैनि जस, तस मोहि भयो मसान।
यहिका विसरि सबै सुधि भै, यहि है माया चौगान।।
जेहि देखौं मुख हेरि, बात कोई पूछै नाहीं।
सब अपने सुख सुखी, दुखी एक मैं मन माही।।

और चौथा पावा मधनापुर जनपद बाराबंकी के साहेब ख्याम दास हैं। वे अपनी कृति 'काशीकाण्ड' में रामरसायन को पीने की बात कहते हैं। और मात्र दो अक्षर 'राम' को सभी वेद पुराणों से भारी पाते हैं।

भेदन पावै वेद का, पढ़ते पढत बुढानि।
दास ख्याम दुइ अक्षरा, सन्तन लीन्हेऊ छानि।।
सन्तन लीन्हेऊ छानि, लेतसो राम नाम भजु।
कृतम धर्म विलगानि, राम रसायन जिन्ह पियो।।

इन चार पावों के प्रमुख सन्त कवियों के अतिरिक्त सतनामी सम्प्रदाय के साहेब नेवलदास-तिवारी पुरवा साहेब, नारायण दास हेतमापुर, दुलारे दास- बाराबंकी, महन्त माधव दास हथौंधा आदि प्रमुख सन्त कवि हैं। जिन्होंने सतनामी सम्प्रदाय में दीक्षित होकर लोकोपासना एवं लोक परिष्कार किया

अन्ततः सतनामी सम्प्रदाय के बारे में निःसंकोच कहा जा सकता है कि अवध का यह सम्प्रदाय सच्चे अर्थों में लोक समरसता, समन्वयन तथा एक्य का वह सेतु है जिसे प्रेम की प्रगाढ़ता से प्राँजल कर आध्यात्मिकता की भाव भूमि पर लोकशिक्षण, लोकरंजन तथा अनुभवन के लिए तैयार किया गया था। और लोक भाषा अवधी में सम्प्रसारित हुआ। यदि यह कहे कि समर्थ साहेब जगजीवन दास की

लोक मंगलाशा एवं समन्वय की साधना किसी मामले में तुलसी से कमतर न थी तो अतियुक्ति न होगी। और यही कारण है कि यह सम्प्रदाय आज लगभग सवा तीन सौ साल बाद भी अपने भाव, विचारों के साथ प्रासंगिक बना हुआ है। क्योंकि जटिल पूजा पाठ की जगह सुमिरन, कर्मकाण्ड, तीर्थ, यज्ञ, पुरश्चरण की जगह शुद्ध, सरल जीवन, निश्छल मन, माया-स्वार्थ रहित-निस्वार्थ सोच और लोकोपकार इस सम्प्रदाय के मूल मंत्र हैं।

इसके अतिरिक्त जनपद बाराबंकी में साँई दाता सम्प्रदाय का अपना एक स्थान है। यद्यपि इसके प्रवर्तक सन्त मोहनशाह मजनाई फैजाबाद के हैं। किन्तु ऐसी मान्यता है और अन्तर साक्ष्य भी कि ये साहेब जगजीवन दास के शिष्य थे। किन्तु बाद में इन्होंने गृह त्याग कर अवधूत सन्तत्व ग्रहण किया था। सतनामी प्रायः यह कहते सुने जा सकते हैं-

सतनाम के पंथ में मोहन रहे गुलाब।
सचना के सतसंग ते, मोहन भये खराब।।

इन्हीं मोहन शाह के पंचम शिष्य 'अनमोल शाह' हुए जो सुजानगंज बाराबंकी के निवासी थे। जनपद बाराबंकी में साई दादा मत का प्रणयन और विस्तार किया था। साई दाता का अर्थ है सर्वस्व देने वाला स्वामी। और यह साईं गुरु है जो सर्वस्व दिला देने में सक्षम है। इस सम्प्रदाय का एक मात्र पर्व 'हंस बिहार' वर्ष में दो बार चैत्र एवं कार्तिक अमावस्या को आज भी धूम-धाम से मनाया जाता है।

अट्ठारहवीं एवं उन्नीसवीं शताब्दी में यहाँ सूफी मत के अनुयायी सन्तों एवं कवियों की प्रेम-पीर भी गुंजायमान हुई जिसमें दरियाबाद के कासिम शाह और उनकी कृति "हंस जवाहिर" आज भी इतिहास की धरोहर हैं। इसके अतिरिक्त रुदौली तहसील के पूरे कामगार सैयुयद शाह हादी तथा सैयुयद शाह खादिम भी सूफी संतों की श्रेष्ठ परम्परा में आते हैं। इन्हीं के शिष्य मौलवी मोहम्मद गौस का नाम भी आदर के साथ लिया जाता है। ये मवई के निवासी थे और बुनकर (जुलाहा) जाति से संबंधित थे। आपकी 'अलिफ नामा' एवं "गौना नामा" अत्यन्त समृद्ध अवधी की कृतियाँ हैं। इनमें गौस साहब अहंकार छोड़कर प्रेम रस चखने एवं उस ईश्वर से निरन्तर तादात्म्य बनाने एवं डरने की बात सहज किन्तु रोचक ढंग से अभिव्यक्त की है। गौना नामा में वे कहते हैं-

खुदी मारो, है अवगुन सबका सरदार।
करो पहले इसे तुमकत्ले मार।

वहीं अफि नामा में फरमाते है-

जान परी वहि दिन जो, मालिक पुछिहैं बात।
कौन उतर तुम देहो, नअइहै एको घात।।

इसके अतिरिक्त देवा के सूफी सन्त हाजी वारिस अली शाह का तो स्पष्ट अभिमत ही था- 'जो रब है वही राम है'।

जनपद के इन सूफी संतों के स्थान आज भी पूजित एवं प्रतिष्ठित हैं। तथा धार्मिक विद्वेष से कोसों दूर हिन्दू-मुसलमान की सम आस्था के प्रतीक हैं क्योंकि इन की वाणी और कृत्य दोनों का अक्षोर-अप्रतिहत प्रेम किसी एक के लिए नहीं समूचे जनमानस के लिए था। इसीलिए सभी उससे आप्लावित तो हुए ही अभिभूत भी हुए। सैकड़ों वर्षों बाद भी इन संतों एवं कवियों के प्रति सबकी आस्था प्रेम की अटूट संबंधों का ही परिणाम है।

उन्नीसवीं शताब्दी ने जनपद को एक और सहज गृहस्थ किन्तु सन्त, अप्रतिम मेधा सम्पन्न और प्रतिहत गति-मति व्यक्ति प्रदान किया। जिन्हें हम महामहोपाधयाय बाबा बैजनाथ कुर्मी के नाम से

जानते हैं। सन्त कवि बैजनाथ एक मात्र ऐसे राम-भक्त हैं, साहित्यकार हैं जिन्हें राम काव्य का विलक्षण प्रस्तोता कहा जाय तो अतियुक्ति न होगी। ऐसा जन विश्वास है कि तुलसी का दूसरा अवतार ही थे बाबा बैजनाथ कुर्मी। आपका जन्म सन् अट्ठारह सौ तैंतीस में मानपुर-डेहवा में हुआ था। आप राम भक्ति की रसिक परम्परा के सिद्ध साधक थे। यद्यपि आपकी रचनाओं से भक्ति का दास्य भी भाषित होता है। यथा-

तजि सियाराम भजौं नहिं आनहि।
ताके सब मत सिद्धान्त शोधि करि, आदि मध्य औसन प्रमानहि।
बैजनाथ विश्वास हृदय दृढ़, कहै कोउ कोटि तनक नहि मानहि।।

सन्त कवि बैजनाथ के गुरु सन्त फकीरे राम जिन्होंने अयोध्या के रामकोट में सियपिय केलिकुंज की स्थापना की थी, वे भी जनपद बाराबंकी के ग्राम पाटमऊ के निवासी थी। सन्त बैजनाथ इस महन्त परम्परा में गुरू द्वारा प्रदत्त नाम सियवल्लभ शरण के नाम से जाने जाते थे। स्वयं संत कवि ने इसका उल्लेख किया है- गुरु सिय वल्लभ शरण कहि, बैजनाथ पितु पास'। बाबा बैजनाथ जी उच्च कोटि के टीकाकार, रस सिद्धकवि एवं कुशल नाटककार तथा प्रामाणिक लक्षण ग्रन्थकार तो थे ही साथ ही ज्योतिष, वास्तु आदि शास्त्रों के भी निष्णात थे। आपने लगभग 24 ग्रंथों का प्रणयन किया जिसमें टीका ग्रन्थों के अतिरिक्त श्री सीताराम पावस विलास, षट्ऋतु वर्णन, नख शिख वर्णन, काव्य कल्पद्रुम, लीला प्रबन्ध आदि मौलिक कृतियाँ है।। सिय राम संयोग पदावली का एक सवैयूया छन्द उदाहरणार्थ दृष्टव्य है-

कर कंज सरासन वान लिये, कटि पीत दुकूल सों फेट तनी।
धन कौन सशीर की लावनता, मुख देखि लजात पीयूष धनी।।
यह सुन्दररूप विलोकत ही, मनकंज उदय जनु प्रात मनी।
अब बैजनाथ नहि शीरी लगै, ऋतु शीत निशाकर की रजनी।।

जनपद बाराबंकी केवल कवि, रचनाकारों का ही नहीं अपितु हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा में भी अग्रणी रहा है। पण्डित महेश दत्त शुक्ल का 'भाषा काव्य संग्रह' इसका प्रशस्त प्रमाण है। जिनकी ऐतिहासिक भागीदारी का जिक्र आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी किया है। भाषा-काव्य संग्रह इक्यावन कवियों का संक्षिप्त परिचय एवं उनकी कविताओं का सार संक्षेप हैं।

इसी क्रम में पं. शिव प्रसाद, गिरिजादत्त, शिव प्रसन्न आदि कवियों में जहाँ राम और कृष्ण की प्राचीन परम्परा का निर्वाह है तो उल्लास राम और क्षेम करने में श्रृंगारी रीति-वृत्ति के दर्शन होते हैं। और पं. महेशदत्त शुक्ल और हिमाचल राम में भारतेन्दु कालीन नव जागरण के स्वर प्रमुख हैं। ओज और वीर काव्य परम्परा में सरजूदास का जगनामा तथा पं. स्वामी दयाल प्रभाकर का बलभद्र सिंह चहलारी का जगनामा का नाम लिया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त पण्डित श्यामनाथ द्विजश्याम, पण्डित द्विजनाथ तथा कृष्ण काव्य परम्परा के धनी एवं नाटककार राय राजेश्वरवली के नाम उल्लेखनीय हैं। जिनका भाषा शिल्प, रचना कौशल स्वयं उन्हें उत्कृष्ट रचनाकारों की पंक्ति में खड़ा करते है। विद्वान कवि कुँवर राजेन्द्र सिंह और प्रभु लाडले, पंण्डित रामेश्वर मिश्र तथा पुरुषोत्तम मिश्र पुरुशेष के नाम भी आदरणीय है।

शिव सिंह सरोज यद्यपि हिन्दी के परिनिष्ठित रूप के प्रयोक्ता हैं उनका लक्षमण महाकाव्य इसका साक्षी है किन्तु कवि सरोज ने अपनी सर्जना में अवधी के ठेठ शब्दों को भाषिक उत्कर्ष देकर अवधी कोष की निरन्तर अभिवृद्धि की है।

अवधी के लोक महाकाव्यकार मृगेश के समसामयिक कवियों में बृजलाल भट्ट 'बृजेश' एवं पंडित

दर्शनलाल शशि का नाम भी अत्यन्त आदरणीय है। जहाँ बृजेश जी का "समाजवाद" महाकाव्य जो नैतिक विकास का आग्रह है तथा समरसता और मनुजता की बराबरी का पक्षधर भी वहीं पण्डित दर्शनलाल शशि की अवधी रचनाएं सामाजिक विद्रूपताओं, विवशताओं की सहज अभिव्यक्ति के साथ व्यंग्य विनोद की रस वर्षा सी करती दिखाई पड़ती हैं। उनकी-'कंगरेसी बाबू', 'थानेदारी' चकबन्दी, मुरघण्ट की होली, हिन्दी और हवै गयो कवि सहजेन मइयहँ, उनके उत्कृष्ट सृजन की प्रतीक है। यहाँ यह कहना कदाचित अनुचित न होगा कि श्री शशि हिन्दी के भी अप्रतिम कवि एवं रचनाकार थे। और उनकी ओजस्वी वाणी बड़ों-बड़ों को दहला देने में सक्षम थी। 'आजादी' का दीवाना' खण्ड काव्य जो बाबू सुभाष चन्द पर लिखा गया था, को अंग्रेजी सरकार द्वारा इसीलिए जब्त कर लिया गया था।

पण्डित त्रिभुवननाथ शर्मा 'मधु' भी यद्यपि खड़ी बोली हिन्दी के कवि, रचनाकार एवं गद्यकार है। परन्तु अवधी पर भी उनका समान अधिकार है। आपने अवधी के आधुनिक शीर्ष कवि 'मृगेश' के समूचे सहित्य को प्रकाशित कर जो श्रम साध्य कार्य किया है अकेले वहीं उनकी अवधी के प्रति लगाव और सर्जना का साक्ष्य है। उनके 'परिवार-नियोजन', 'महिलाओं के गीत', और 'समस्या पूर्तियाँ' उनके कुशल अवधी कवि होने की प्रशस्त गवाही हैं।

आधुनिक अवधी कवियों में वरेण्य एवं लोक महाकाव्य 'पारिजात' के प्रणेता कवि गुरु प्रसाद सिंह 'मृगेश' जनपद का एक ऐसा स्तुत्य नाम है जो अवधी कविता के संसार में नितान्त आलोकमयी एवं आदरणीय है। वैसे तो मृगेश जी का रचना संसार अत्यन्त विशाल है। खड़ी बोली, अवधी, बृजी में उनकी लगभग सत्रह काव्य कृतियाँ, तीन नाटक, निबन्ध एवं आत्म कथा आदि हैं। किन्तु उनकी अवधी रचनाओं में समूचा लोक प्रतिबिम्बित होता है। अवध की संस्कृति, आचार-व्यवहार, विश्व मैत्री, परम्परा प्रगति एवं प्रकृति अपने जीवन्त रूप में चित्रित हुई है। उनकी भाव-संकल्पना और शिल्प की अभिव्यंजना बेजोड़ एवं कथ्यफलक इतना विशाल है कि युग की दिशा-दशा स्वयं बोलती है। उन्होंने अपने महाकाव्य पारिजात में ही नहीं अन्यत्र कवि-कर्म में भी लोक छन्द, रसिया, कहरवा, विदेसिया, आल्हा, आदि के साथ सवैय्या, धनाक्षरी, रूबाई, गजल, चौपाई और बरवै छन्दों का मार्मिक प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त उनकी लहचारी तो अपनी एक अलग सुषमा की धनी दिखाई पड़ती हैं सोहर भी कवि का प्रिय छन्द है। राष्ट्रीय भावों से ओत प्रोत उनका सोहर कितना सहज किन्तु मार्मिक भावों से ओत-प्रोत है-

न रोओ निधनी के धनिया/न कनिया से मचलौ हो।
ललना रसे-रसे पलना झुलौबै, समय के गीत गउबै हौ।
सुगना तुम न नयन नीर ढारौ, न लोटनी पसारौ हो।
तुम उइ बपइया के भयुया हौ कुंवर कन्हैया हो।
जिनका सरग मा गूँजै जै-जै कार, सुमन सुर बरसै हौ।।

अपने बरवै के माध्यम से कवि प्रकृति के मन-भावन रूप का चित्रण देशज शब्दों में आलंकारिक प्रयोग के साथ इतना प्राणवन्त करता है कि बस देखते ही बनता है-

चैत चाँदनी चौगुन भा परगास।
आवा मधु भावा लै मधुमास।।
धमवा रूचै न अमवा झूमैं बौरि,
फिर मधुकर लोभी आये दौरि।।

कवि मृगेशजी सदैव लोक को द्वन्द्व रहित, सुविधा सम्पन्न देखने के पक्षधर कवि है। उनकी इसी लोक मंगलाशा से स्वर मिलाते हुए उनके 'पारिजात' महाकाव्य में अर्जुन कह उठते हैं-

मृत्युलोक के निवासी फूल पइहै ई कहाँ।
बन्धन तूरि देवनन्दन, ढूढै जइहै ई कहाँ।।
उनकी सुविधा सोंचि डारौ तूरि लायन साथ माँ।
परम्परा सुसाध्य रहै, सबके साथ माँ।।

कवि मृगेश को मानवीय-मनोविज्ञान की गहरी परख है। जग की रीति-नीति और सामाजिक संबंधों को भी स्वार्थ की शतरंजी मुहरों की तरह इस्तेमाल करने की मनोवृत्ति पर उनकी यह काव्य टिप्पणी देखते ही बनती है-

जब बिछुलि परे तौ हर गंगा।
मतई महतो का मत न्यारा, उनका न कहूँ भाई चारा।
अचकचै एकदिन गल्ली माँ, समधी से हवैगा भटभ्यारा।।
तब लाज सरम त्यागत न बना, अधबिच्चा से भागत न बना।।
तब झूरि हंसी हंसि कै बोले, जय राम-राम भाई छंगा।।

मृगेश जी सुसाध्य परम्परा लोक विश्वास और आस्था के कवि हैं। वे कविता को लोकाशा और आह्लादिनी शक्ति मानते थे। परम्परा व्यवहार एवं विश्व मैत्री तथा सांस्कृतिक सोंच और करूणा उनकी कविता के अपने गुण हैं। अब अवध भारती समिति हैदरगढ़ बाराबंकी द्वारा अवध और अवधी के कवियों की श्रृंखला जो नखत-1 (प्रकाशित सन् 1992 ई.) और नखत दो (प्रकाशित सन् 2003) क्रमशः प्रो. गौरी शंकर पाण्डेय 'अरविन्द' और डॉ. राम बहादुर मिश्र 'अवधेन्दु' तथा नखत-2 डा. राम बहादुर मिश्र द्वारा सम्पादित है अनायास अज्ञेय के तारसप्तकों की स्मृति ताजा कर देती है। डॉ. पाण्डेय और डॉ. मिश्र ने श्रम साध्य कार्य किया है। नखत 1 में अवधी के ग्यारह और नखत 2 में नौ कवियों की सपरिचय कविताएं छापी है, जिनमें सात कवि जनपद बाराबंकी के हैं। दोनों नखतों में प्रकाशित क्रमानुसार पहला नाम बृजेन्द्र कुमार मिश्र ''बृजेन्द्र'' का है। बृजेन्द्र जी बाराबंकी के रामनगर की माटी के हैं। लोक गीतकार श्री मिश्र सामाजिक विसंगतियों के जहाँ कुशल चितेरे हैं वहीं आज के प्रजातंत्र के विद्रूप और नेताओं की करनी पर खुल के कलम चलाई है। देसु लागै जस डूबय नइयूया' में इन्हीं विसंगतियों और विद्रूपताओं का जिक्र कवि इस प्रकार करता है-

भुई के पूत अमन की खारित, चूम लिहिन 'फन्दा कै खातिर'।
जीवन दै आजाद कइ गए, खद्दर ओढ़ि लिहिन सब सातिर।
दुहैं दोड हाथ मरासू है गइयया।

श्याम नारायण 'विटप' हैदरगढ़ के प्रतिष्ठित अग्रवाल परिवार से है। आप पेशे से व्यवसायी किन्तु आपकी रुचि पूर्णतः साहित्यिक है आप का अवधी प्रेम एवं अवधी की कविताएँ अवध प्रदेश में सराही जाती हैं। आपका कथ्य फलक विशाल है और हृदय मानवीय संवेदना से लवरेज। नखत में संग्रहीत आप की कविताओं से जहाँ देश पेम, भाक्षा के प्रति स्नेह, छलकता है वहीं विद्रूपताओं पर व्यंग्य भी आपकी काव्य विधा की विशेषता है। 'हमका कौन गरम ठण्डी में कवि देश के आजाद हो जाने के बाद भी सामान्य जन के लिए झंडी दिखाने अर्थात् ढगे जाने की बात करता है'-

हमहूँ सोचा हमरौ अपनौ अपने देसे मा राज भवा
मुल रहिन देखावत हम झण्डी, अब हम का कौन गरम ठण्डी

इसी तरह 'ई जहान का हवाल' कविता में भी विटप जी बड़ी साफगोई से आज के सत्य को स्वीकारते हैं-

बड़ी मछरिया छोटिन का भक्षै का हैं मुँह ताके
बड़के देसवा छोटकन के रोजै देवार है डाके
धन उनकै डकार लौ दिन चलै दुरंगी चाल।।

नखत-2 के डा. मिश्र के साथ यशस्वी सम्पादक प्रो. गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द' अवधी के एक प्रशस्त हस्ताक्षर तो है ही साथ ही वह संस्कृत, हिन्दी भाषा विज्ञान और शिक्षा शास्त्र के पारंगत विद्वान हैं। कविताओं के अतिरिक्त अनेक निवन्ध एवं समीक्षाएं आपकी विद्वता की साक्ष्य हैं। दर्जनों शोध प्रबन्धों का निर्देशन और अनेकों पुस्तकों की सम्पादन की गुरुता श्री अरविन्द की निजी विशेषता है वही उनकी साधारण कद काठी और उससे भी सहज स्नेहिल रहनि उन्हें और भी विशिष्ट बना देती है। इसीलिए कवि अरविन्द को वही साहित्य पसन्द है जो ठाकुर सुहाती से दूर हो-

साहित्त हमैं तौ ऊ सोहाय, सच्ची समाज-र्‌याखा खीचैं।
जउन ठकुर सुहाती से बचिकै, देसवा का दिल दिमाग सीचै।।

प्रो. पाण्डेय सामन्ती व्यवस्था एवं ऊँच नीच के प्रबल विरोधी है जिसका जिक्र उनकी कविता 'ई बतिया सालै बेर-बेर' में मार्मिक ढंग से किया गया। कवि अपनी कविता में कामना करता है कि आज प्रत्येक कवि व्यास भाव से सामाजिक सरोकार एवं हित साधक कविता करे-

तुम अपनी कला लेखनी से, गीता विरचौ मुनि व्यास भाव।
कवि राजा बगिया अस सुहाव

जहाँ बात अवधी की हो और उसके सशक्त हस्ताक्षर जगदीश सिंह 'नीरद' का नाम न लिया जाय यह असम्भव है। श्री नीरद जनपद की यशस्वी थाती हैं। आपने 'छठा पाण्डव, बदलता परिवेश, तिरंगा नहीं झुकेगा, खून के छींटे, सती की शक्ति' जैसी काव्य कृतियों से अवधी का भण्डार भरा है। श्री नीरद की वाणी का अभय बस देखते ही बनता है। लोक कल्याणकारी शासन की असमर्थता, विद्रूपता एवं घिनौनी चालें तथा सामाजिक जाति पाँति के दम्भ अलगाववाद, देश की विगड़ती स्थिति नेताओं की धीगामुस्ती आप की कविताओं के वर्ण्य हैं। यहाँ यह कहना भी अपेक्षित लगता है कि कवि नीरद की वास्तविक चिन्ता भारत और भारति के उसी विश्वबन्ध्य तथा अ[illegible] छवि देखने की पक्षधर है जहाँ मानवीयता और विश्व बन्धुत्व मुस्कराता हो। इसीलिए कवि अनायास कह उठता है -

स्वारथ रत जन-जन के मन कै, ईष्या भाव हरौ तुम।
आंगन-आंगन माँ स्नेह के दियना बारि धरौ तुम।
एक बनै सब फूल देस कै, गूंथव अइसेन माला,
विश्व होय परिवार यहै सपना साकार करौ तुम।
नेह सलिल से उठो, प्रीति के पावन पांव पखारौ।।

नखत-1 में अन्तिम अर्थात् एकादशा नक्षत्र के रूप मे डॉ. राम बहादुर मिश्र जो नखत 2 के सम्पादक भी हैं का नाम एक कवि के रूप में उद्धृत है। किन्तु इस विद्वान कवि, समीक्षक, गद्यकार, और जनपद के अवधी भाषा-संस्कृति तथा सरोकारों के ध्वज वाहक की चर्चा मैं अपने निबन्ध में सबसे बाद में करना चाहता हूँ। यहाँ यह कह देना अतियुक्ति न होगी कि डॉ. राम बहादुर मिश्र की लोक और लोक भाषा के प्रति समर्पित आस्था ही है जो उन्हें आज अवधी 'मिथक' के रूप में लोगों को देखने को बाध्य करती है।

नखत 2 में संग्रहीत जनपद के दो कवि हैं डा. राघव बिहारी सिंह 'काव्य केहरी' और सच्चिदानन्द तिवारी 'शलभ'। जहाँ तक डॉ. राघव बिहारी सिंह 'काव्य केहरी' का प्रश्न है, आप एक अध्ययन और

लेखनशील व्यक्तित्व के धनी है। श्री सिंह इस समय सार्वजनिक इण्टर कालेज हैदरगढ़ में प्राचार्य के पद कार्य कर रहे हैं। आपकी चारु प्रकृति, संवेदनशील मन स्वभावतः आपकी गतिविधियों को साहित्यिकता प्रदान करता रहता है। काव्य केहरी केवल अवधी के कवि ही नहीं अपितु अवधी गद्यकार के रूप में भी प्रतिष्ठित है। 'विचार सम्पदा 'विचार आर्णव' आपकी गद्य कृतियां हैं। आप की कविताओं में अवध का सहज मन परोपकार, राष्ट्रप्रेम, सामाजिक सरोकार बहुलता से प्राप्त है। तो वही सामाजिक वैषम्य, विद्रूपता एवं प्रजातंत्र के दल से आहत भी दिखाई देता है। डां. सिंह वस्तुतः प्रेम के समर्थक कवि है। इसीलिए तो वे आज भी बुद्धिवाद को कमतर मानते हैं। जबकि यह युग की मांग है और प्रेमवाद के पोषण में आपकी बेबाक टिप्पणी देते है-

'बुद्धिवाद के पोषक सिगरे, हमरी बात बिचारौ'
फिर आवै बहुत प्रेम भावना ऐसी जतनि निकारौ।
प्रेमवाद के बिना सृष्टि यहु चली न ढंग से स्वाचौ।
काव्य केहरी कहै बुद्धि की बेजा टंगरी न्वाचौ।

और सच्चिदानन्द तिवारी शलभ भी हैदरगढ़ बाराबंकी से संबंधित कवि है जो पेशे से वकील भी हैं। अस्तु, सहज ही इस पेशे की आवश्यक बुराई बड़बोलापन, छल एवं धनार्जन के प्रति लगाव यदि कविता में भी यशःपूर्ति के साधन बन गये हो तो यह उनका दोष नहीं प्रत्युत कार्य प्रकृति के हिस्सा भर है। यद्यपि वे पुरस्कृत कवि की कोटि में आते हैं फिर भी आपकी कविता में कहीं न कहीं कृत्रिमता का भाव देते हुए सयास लगती है। जहां व्यंग्य नहीं हास, वर्ण्य नहीं बतकही का भास होता है। फिर भी श्री तिवारी साधनाशील कवि हैं इससे कोई इंकार नहीं कर सकता। अनेक स्तरीय पत्रिकाओं में आप प्रकाशित है तथा आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से प्रसारित भी। उनकी हास प्रधान 'लट्ठा पांडे' कविता काफी चर्चित है उसका एक अंश देखिए। लट्ठा पांडे का हुलिया प्रस्तुत करते हुए श्री तिवारी कहते हैं-

तनिकउ तौ पढ़िनि-लिखिनि न कबौ, व्यवहारू ककहरा ते उनका,
अस रहै कि जस संबधु होय, चीकट कपड़ा ते साबुन का।
मुल माथे क तिरपुंडुं और पांड़े के सिर के जटा-जूट
उपरहित बनाय दिहिन उनका ग्यानी ध्यानी पण्डित अनूप।।

इन दोनों नखतों के अतिरिक्त जनपद में अवधी के कवियों की एक लम्बी श्रृंखला है और इस स्नेहिल अर्गला की प्रत्येक कड़ी अपनी न्यूनाधिक सामर्थ्य के अनुरूप गतिशील है। जैसे सर्वश्री ओम प्रकाश 'जयन्त, रामेश्वर प्रसाद द्विवेदी 'प्रलयंकर', आनन्द प्रकाश अवस्थी 'धीर', रामकुमार मिश्र 'घोंघा', संतोष मिश्र 'अण्ट शण्ट', अनिल बौझड़, रामकिशोर तिवारी 'किशोर', अम्बरीश 'अम्बर', गजेन्द्र सिंह 'प्रियांशु', शिव कुमार 'व्यास', आलोक शुक्ल आदि। इनमें से अनेक ऐसे कवि भी हैं जो काफी सम्भावनाशील हैं। इसमें सन्देह नहीं किन्तु मंचीय आसक्ति और अर्थाभाव की विवशता उन्हें केवल रिझाऊ कोटि में ही रहने को बाध्य करती है। जबकी कविता का मूल भाव सामाजिक सरोकारों को क्षिप्रता के साथ पाठक या श्रोता में संप्रेषण एवं तद्जनित आह्लादन से है। गलेबाजी या दैहिक संकेतों से निष्पन्न कविता तात्कालिक वाह-वाही तो लूट सकती है किन्तु सामाजिक सरोकारों से जोड़ने में अक्षम ही रहेगी।

इसी क्रम में जनपद के उन कवियों का नामोल्लेख न करना बेमानी होगी जो अल्प ज्ञात या आत्मोन्मुखी है, सर्जना ही जिनका लक्ष्य है अपना प्रचार प्रसार नहीं। और उस कोटि के भी कवि हैं जो अवधी के स्तरीय रचनाकार हैं किन्तु परिदृश्य में उनकी अभी कम आभाषित है, यह उनका संकोच भी

हो सकता है, अर्थाभाव भी और प्रदर्शन से दूर रहने की प्रवृत्ति भी, या निजी व्यस्तताएं या विवशताएं। किन्तु उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ देना मैं अप्रासंगिक नहीं मानता। क्योंकि अवध की भांति एवं अवधी की सतरंगी सादगी, उसका सन्तमन तथा परोपकारी वृत्ति मर्यादा और मंगल विधायन और सकरुण आत्मीयता इन कवियों के काव्य में दृष्टिगत होती है। ये नाम हैं रजनी श्रीवास्तव निशा, विक्रम प्रसाद मधुप, करुणाशंकर बदनाम, अयोध्याप्रसाद दीक्षित 'शिष्य', बृजबाबू सिंह 'बृजेश' और अजय सिंह वर्मा 'अजय'।

रजनी श्रीवास्तव 'निशा' बाराबंकी जनपद की एकमात्र ऐसी कवियत्री हैं जिन्होंने गीतों को उनके नितान्त मनोगत वैयक्तिक परिवेश से निकाल कर उसे एक नयी जमीन देने की सार्थक पहल की है। उनके गीत प्रायः मानवीय अस्मिता के संकट के क्षणों में जन्में हैं जिसमें विषमता, विवशता का दर्द और आहत मानवता की पीड़ा अपनी पूरी क्षिप्रता में प्राप्त होता है। निशा जी का खड़ी बोली हिन्दी में प्रकाशित 'प्रेरणा पथ' काव्य संग्रह मेरे इस कथन का साक्ष्य है। निशा जी ने खड़ी बोली हिन्दी के साथ ही साथ अपनी जुबान अवधी में भी प्रचुर साहित्य सिरजा है। और यहाँ भी उनका वही स्नेहिल रूप दृष्टिगत होता है। क्योंकि स्नेह 'निशा' का मूल स्वर है। मातृत्व से भरपूर वात्सल्य का आवेग देखिए-

काँधे से लगावै कबौ अचरा छिपावै
फिर धुनि धरि गावै वाके मन मा जो आवै री।
मारै किलकारी मुँह चूमैं महतारी,
फिर बहियाँ मां भरि सारी ममता लुटावै री।।

और यही माँ, जब बिटिया सयानी हो जाय तो आज की सामाजिक वितृष्णाओं के मध्य अकुलाती है। क्योंकि पुत्री के लिए संजोए सुखों की कल्पना वाला मन सामाजिक विषमता से मर्माहत जो होने लगता है-

'मैय्या फिरै अकुलानी, धिया अब हवै गयी सयानी
बाढ़ै दिनों दिन ए मोरी दय्या, सुकुल पाख की जैसे जोंधय्या
ऊपर से बैरिन गरानी...... ....

निशाजी के अतिरिक्त जनपद के दूसरे अल्पज्ञात कवि विक्रम प्रसाद 'मधुप' का भी अवधी रचना संसार सम्भावनाशील एवं भाव प्रवण है। वैसे तो आज अवधी में भी गीत, गजल और नयी कविता की बानि पैठारी बन चुकी है किन्तु छांन्दिकता अवधी की आह्लादन एवं प्रियता का दृष्टिकोण रहा है। श्री मधुप भी छन्दों के हामीदार हैं ऐसा नहीं है कि उनकी कविता केवल इसका बयान भर है, और सामाजिक विद्रूपताओं के साथ-साथ नेतृत्व का छल और छद्म ऐन्द्रजालिकता के प्रति गहरी दृष्टि रखते हैं। वे प्रकृति चित्रण के भी धनी हैं। और मानवीय मनोभावों के कुशल शिल्पी भी। आधुनिकता के नाम पर आज का मनुष्य-मनुष्यता से कितना गिर गया है।

मधुप के शब्दों में देखिए -

1. *'एक-एक ग्यारह ५, सीख जे सिखात रहे,*
हरे भरे बांसन के कोठ सब कटिगे।'
** * * * * * * **
इरिषा द्वेषु नफरत तौ बढ़े दिन दूने मुला,
मेल जोल प्रेम वाले भाव सब घटिगे।
2. *बन्ना बियाहु सोहर राग कोई गावै नहीं*

फिल्मन के गाना कैसे-कैसे गाये जात हैं।

* * * * * * * *

नींबी औ पकरिया केरि छाया नसीब नहीं,
द्वारे मदार के बिरवा लगये जात हैं।।

करुणा शंकर 'बदनाम' जनपद बाराबंकी के ही नहीं अपितु अन्तर्प्रदेशीय व्यक्तित्व के धनी हैं। आप की कविता की मूल प्रकृति प्रायः व्यंग्य है कुछ हास भी। इसीलिए वे पीड़ा से भी परिहास कर सकते हैं। उनकी कृति का नाम ही है "पीड़ा से परिहास"। बदनाम जी खड़ी बोली हिन्दी और अवधी दोनों में समभ्यास लिखते हैं। आपके व्यंग्यों की धार इतनी क्षिप्र एवं मार्मिक है कि बिना उद्रेकण किए नहीं रहती। बदनाम जी विभिन्न मंचों से कविता पाठ करते रहे हैं। किन्तु यह उनकी विशेषता है कि उन्होंने कभी कविता से समझौता नहीं किया। अपने व्यंग्य एवं हास को फूहड़ धरातल पर कभी न आने दिया। अवधी रचनाओं में उनकी, 'लाऊ कुछुबारी-सुलगाई' कूकुर कला और होली आदि काफी सम्पन्न रचनाएं हैं। कवि 'बदनाम प्रतीकों को माध्यम बनाकर अपनी बात कहने में सिद्धहस्त है। उनकी होली शीर्षक कविता में इसकी ऐक बानगी देखिए-

रितु होली आई निकट, चढ़ी बहुत बौरास।
कूड़ा कचरा भा जमा, चौराहे के पास।।

श्री अयोध्या प्रसाद दीक्षित 'शिष्य' जनपद बाराबंकी के बर्दरी मरकामऊ गांव में जन्में जरूर है। किन्तु उनके साहित्य सृजन जनपद बाराबंकी मुख्यालय पर ही हुआ। पेशे से अध्यापक श्री 'शिष्य' स्वनाम धन्य दर्शन लाल 'शशि' के सुपुत्र हैं। श्री 'शशि' जिनका जिक्र निबन्ध में मृगेश जी के समवर्ती कवियों में किया गया है। श्री शिष्य को यदि सशरीर साहित्य कहा जाय तो अतियुक्ति न होगी। वर्तमान में दीक्षित जी 'साहित्यकार समिति बाराबंकी' के अध्यक्ष है। वे इन्दु के सम्पादक रह चुके हैं। और अब 'इन्दु-प्रभा' के प्रधान सम्पादक हैं। कवि तो शिष्य जी मूलतः हैं ही। यह तो उन्हें विरासत में प्राप्त है। जनपद के बृजभाषा काव्य के गौरव बृजनन्दन जी, 'शिष्य जी' के काव्य गुरु थे। यहाँ यह भी बताना प्रासंगिक ही होगा- कि श्री शिष्य के रचना अवदान पर 'शिष्य समग्र-प्रथम' भी शीघ्र प्रकाशित होने वाला है और उनकी यह साहित्यिक कर्मण्यता तब इतनी है जब वे गैग्रीन जैसे रोग से ग्रसित होने के बाद अपना एक पैर भी गंवा बैठे हैं। श्री शिष्य की कविता के पक्ष में दृढ़ मान्यता है- 'कविता वही जो हिय को हरषावैं'। वे छंदों के पक्षधर कवि हैं अवधी कविता भी उनकी इन्हीं भावों से आप्लावित है। यद्यपि 'शिष्य जी' ने खड़ी बोली हिन्दी में भी बेजोड़ छान्दिक कविताएं लिखी हैं। उनकी एक लम्बी कविता अपने पिता के समवर्ती जनपद के आधुनिक अवधी के शीर्षस्थ कवि मृगेश जी पर हैं। जो मृगेश नाम की सार्थकता को अपनी आमुख पंक्तियों में ही अभिव्यक्त कर देती है। देखिए-

कवि का नामै न जानेऊ यू मृगेश,
निवामउ काव्य काननै भवा।।

छल-प्रपंच से दूर साहित्यिक संसार में रहने वाले कवि शिष्य ऐसे प्रपंची व्यक्तित्वों पर तल्ख टिप्पणी करते हुए कहते हैं-

भले-भले सब थके भ्रष्टाचार करिकै।
चले हमका मनावै सिंगार करिकै।।

वे मानते हैं कि व्यक्ति का स्वभाव आसानी से नहीं बदलता चाहे कितना ही प्रयास कर लिया

जाय। अनेक उपमानों से सजी उनकी एक कविता की पंक्ति दृष्टव्य है 'करै कोउ कतनेउ उपाय, सुभाव भैयूया टारे न टरी'। और शिष्य जी का वैष्णव मन जब प्रभु शरणगत होता है तो सहज ही गा उठता है-

अब पलक उघारी दीनानाथ,
तुम्हारे शिवा कौन मेरा।।

आधुनिक अवधी कवियों में जनपद बाराबंकी के कवियों की जब भी चर्चा होगी और उनमें बृजबाबू सिंह 'बृजेश' का नाम न होगा तो वह चर्चा प्रायः अधूरी ही रहेगी। बृज बाबू सिंह 'बृजेश' आधुनिक अवधी के स्तम्भ गुरु प्रसाद सिंह 'मृगेश' के शिष्य हैं। यह भी अजब संयोग ही कहेंगे कि बृजेश जी ने अपनी अल्पवय में ही मृगेश जी को अपना गुरु काव्यादर्श मान लिया था और गुरु मृगेश का परिचय अपने इस अजाने शिष्य से बाद में हुआ। बात महादेवा मेले के एक कवि सम्मेलन की है। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह "दिनकर" की अध्यक्षता में काव्य पाठ हो रहा था। और मृगेश जी अपना काव्य पाठ कर रहे थे वहीं बृज बाबू सिंह उनसे इतना प्रभावित हुए कि उन्हें अपना काव्य गुरु मन ही मन स्वीकार लिया। फिर बाद में तो गुरु और शिष्य प्रायः एक साथ भी कविता पाठ करने लगे। बृजेश जी की स्कूली शिक्षा न के बराबर है। किन्तु बचपन से ही गायों को चराते हुए बभ्नाय जंगल ने इनकी कविताओं का प्रथम श्रोता होने का गौरव प्राप्त किया है। बृजेश जी का गांव बभ्नाय मजरे एन्दौरा सूरतगंज रामनगर का है। अपनी माटी से लगाव एवं अपनी मातृ बोली में कुछ कहना ही बृजबाबू को भाता है। वास्तविकता के विरूद्ध परस्पर प्रशंसा के खिलाफ कवि ने इसीलिए निर्भीक अभिव्यक्ति अपनी कविता में देने में तनिक भी कभी न हिचकिचाता है। वे प्रशंसा से दूर केवल सृजन में विश्वास करते हैं। और सृजन भी उनकी आत्मतोष का साधन है। यश या अर्थ के लिए बृजेश को लिखना पसन्द नहीं। इसीलिए सम्भवतः वे कम चर्चित हैं। किन्तु उनकी कविता की सुवास किसी को अपनी ओर आकृष्ट न करे यह सम्भव ही नहीं है। वृजेश का अवधी संसार विशाल है। प्रकृति चित्रण, और विद्रूपता पर व्यंग्य तथा कथनी-करनी के भेदों को भी अपना वर्ण्य विषय बनाया है। अवधी और अवध की मूल प्रवृत्ति व्यंग्य विनोद तथा छाती ठोंक कर सत्य की पक्षधरता बृजेश के काव्य की अपनी विशेषता है। अपनी एक कविता 'रतना उपदेश' में बृजेश जी अवधी के चूड़ामणि सन्त कवि तुलसी पर जो अभिव्यक्ति दी है। ऐसा लगता है कि चार पंक्तियों में ही कवि ने तुलसी का यथार्थ किन्तु मार्मिक चित्रण कर डाला है-

'कड़ी साधना घोर चुनउतिन मा जेहि की परी लेखनी मन्द न है।
ज्यहिं के महात्याग तपोबल से, लगा भारत भाल पै चन्दन है।।
रघुनन्दन हूँ जिनके रिनिया, पसरा यश मानस छन्दन है।
रतनापति सन्त सिरोमणि का सत् वन्दन है, सत् वन्दन है।।

बृज बाबू सिंह 'बृजेश' का अपने ढ़ंग का बेढब वर्णन बस देखते ही बनता है। बसन्त कहाँ-कहाँ क्या-क्या करतूते करता है 'बृजेश' के शब्दों में-

बल बल कै बलकै लगे ऊँट, से जोगी नकेल तुरावन लागे।
अश्व सदाँन सँदे हिंहियात हैं, बेबशता बस दांव न लागे।।
गाँधी कै उठी बकरी मिंमियाय, उसे भी बसन्त सुहावन लागे।
खाँय दुलत्ती समोद सधे, गधे जोरों से संख बजावन लागे।।

लहचारी अवधी की प्रिय विधा है अपने गुरु मृगेश की तरह कवि बृजेश भी लहचारी विधा में लिखने में पारंगत हैं। एक लहचारी लोक गीत में साजन को पाती भेजती एक प्रोषित-नायिका का भाव बस देखते ही बनता है-

सुगना! सोने से मढउबै सुन्दरि ट्वाँट, सजन का पाती जाय कै दियव
कहयो जाय कस नींद परति है, उनका करिकै बाट।
बाँह गहे की लाज न राख्यो, जियरौ भवा न तनिकौ छूवाट।।
दिन का चैन रात की निंदिया, बिकी तुम्हारेन हाट।
सुन्दरि गोल कपोल फूल से, यहि पै परे ना कब से वांठ।।
.... सजन का पाती जाय कै दियव

बृजेश जी समाज के बगुला भक्तों की खबर अपनी कविता 'बगुलऊ धीरे-धीरे' में बखूबी लेते हैं।

ठहिकै पाँव, बगुलऊ धीरे-धीरे
न छूवाड़ौ आपनि परिपाटी, कहाँ जल उथलु है दलदलि मांटी
बड़ी छोटिन कै बारीके से खुब ताके रहौ न काटी।
चूकौ न आवे जब दाँव।।

इसी तरह अन्यत्र बृजेश जी के कव्य में छिपा व्यंग्य भी सुदर्शन लगता है-

विरोध्यो जिनका निर अपराध, भुनावौ उनकी सक्ती साध।
जियत न मान्यौ पित्तर गुरु, मरे पर हवैगै नीकि सराध
बसन्दर अन्दर से सल्फास।

ऋतु वर्णन परम्परा में भी बृजेश का सानी नहीं। जाड़े का वर्णन करते हुए सवैया छन्द और टकसाली अवधी शब्दों का प्रयोग बरबस मन को आकृष्ट किये बिना नहीं रहता-

'डाहत जो अपने कुप्रभाव से, चाहै गरीब हो या रजवाड़ा।
बारहिबार पनांह है माँगति, भागति धीरज छाँडि अखाड़ा।।
गद्दा रजाई के बीच लुकाय कै, पउढ़ै भले करिबन्द केवाड़ा।
हाँड़न घूसतिं मूसति पौरूष चूसति खून जबून यू जाड़ा।।'

जनपद बाराबंकी के वर्तमान रचना कर्मरत कवियों में अजय सिंह वर्मा 'अजय' का नाम आज अपने जैसा स्वयं है। वे बिना किसी पद प्रतिष्ठा एवं पुरस्कार के व्यामोह में फँसे अपने सारस्वत कर्म में लगे हैं। सन् 1961 में जन्में अजय सिंह 'अजय' का पैत्रक गाँव भेटौरा लखन-जैदपुर और सिद्धौर के मध्य अवस्थित है।

कवि अजय का अवधी रचना संसार विशाल है और वे अपने परिवेश की विसंगतियों को ही अपनी रचना के माध्यम से उकेरते है। जिसमें परम्परा के पूरे लगाव के साथ ही आधुनिकता का भी विश्लेषण हो जाता है। वे कविता में प्रतीकों के माध्यम से अवध क्षेत्र की सामाजिक-ग्रामीण व्यवस्था का विराट बिम्ब ऐसे खींचते हैं गोया यह कहा नहीं जा रहा है प्रत्युत ऐसा तो है ही; उस पर उनकी कविता की ताजगी पाठक या श्रोता को एक अलग तरह की शक्ति और तृप्ति एक साथ प्रदान करती है। यद्यपि 'अजय' की गति खड़ी बोली हिन्दी कविता में भी विलक्षण है। उनकी अपनी तरह की मुक्त छन्दी रचना 'कविता का क्लोन' प्रकाशित एवं विद्वत समाज द्वारा प्रशंसित है। राम कथा की उपेक्षित 'सूर्पणखां' पर आधारित एक खण्ड काव्य 'सूर्पणखा' शीघ्र प्रकाश्य है जिसमें अतीत की कथा के साथ वार्तमानिक स्त्री विमर्श को स्वर दिया गया है। इतना ही नहीं अवधी कविताओं का एक संकलन 'कोइली विरथा न चिल्लाव' शीघ्र ही मनीषी विद्वानों के हाथ में होगा।

अजय की अवधी रचनाओं में ग्रामीण सभ्यता-संस्कृति अपनी समग्रता में परिव्याप्त है। रीति-रिवाज,

मेला-ठेला, खेल-मनोरंजन, पर्व-उत्सव तथा ग्रामीण ईर्ष्या-द्वेष और सबलों के निर्बलों पर अत्याचार एवं अमानवीय व्यवहार तथा स्वार्थ एवं लोभ एवं अपना-पराया आदि। किन्तु इसी के साथ इनसे टकराने और इन्हें समूल नाश कर एक नव्य सामाजिक संरचना का उद्‌बोधन उन्हें वास्तविक कवि का गौरव प्रदान करता है। वे केवल विद्रूपताओं का विलाप ही नहीं करते अपितु उनके समाधान के प्रति भी सचेष्ट है जो उनकी लोक आस्था एवं लोकमंगलाश का प्रमाण भी है।

अपनी अवधी रचनाओं में अजय सिंह छन्दबद्ध एवं मुक्त छन्द दोनों प्रविधियों का प्रयोग करते हैं। प्राचीन पद परम्परा में भी उनकी रचनाएं प्रायः अवधी के सशक्त हस्ताक्षर सुशील सिद्धार्थ की शैली का अनुकरण करती दिखाई पड़ती है। अजय के गीत प्रतीक के माध्यम से अपने मन्तव्य कहने में तथा विद्रूपताओं को उजागर करने का महारत रखते हैं। प्राचीन मिथकों के माध्यम से कथ्य को मनोरमता देना एवं उनके उल्टे प्रयोग और कहावतों एवं लोकोक्तियों का अद्‌भुत मिश्रण उनकी सिद्धहस्तता के स्वयं प्रमाण है। कोइली 'बिरथा न चिल्लाव' कविता का एक बन्द दृष्टव्य है-

उल्लू जागे मंगल गावैं, सूरज लियै उबासी।
फगुवा और धंवारिन कइहां हवैगै देश निकासी।।
असविष भरी चली पुरवाई आम खाय गै लासी
घर-घर साड़ी बाँटि रहा, दुःशासन बदलि गवा
कोइली बिरथा न चिल्लाव हिंया का सासन बदलि गवा।।

आज समाज और सत्ता के रंगे सियारों, नकली अलम्बरदारों एवं चापलूसों की करतूते तथा सामान्य जन के भय-भूख और संत्रास की विवशता को उकेरता हुआ एक गीत का बन्द आज की स्थितियों पर सटीक टिप्पणी है-

सबिहौ मछरी मरी परी हैं तब्बौ तलवा महकै।
पितरी पर है अइस मुलम्मा, सोनु से ज्यादा दहकै।
बगुला ट्वाटै रंगे घेरे मानसरोवत ताल।।
भला कोई कैसे बची हिंया..............।।

सांस्कृतिक ह्रास एवं शहरी सभ्यता का गाँवों तक विस्तार बाग-बगीचों की जगह उगते कंकरीट के कैक्टस ऐसा लगता है मानों गाँवों की हरीतिमा पर किसी ऐन्द्रजालिक ने टोना-टोटका कर दिया है। 'अजय' इसे इस तरह अभिव्यक्ति दे रहे हैं-

जबड़ा मइहां गांव इबाइसि, शहरू बनाय दिहिसि
जंगल, झीलै कंकरीट का महन बनाय दिहिसि
कपड़ा सब अधियाय गे अइसा तंतरू कइ गवा।।

कवि अजय अतीत का स्मरण पूरी तल्लीनता से करते है और एक आस-विश्वास संजोए रखते हैं कि कभी तो यहां उन भावों की पुनरावृत्ति होगी। जो हमारी थाती थे, हमारी पहचान थे, और आज अपसंस्कृति की झंझा में स्वार्थी हो गये लगते हैं-

ककुआ बीति गवा ऊ दौरू !
घर माँ कोठरी भले नहीं, मुलु मन मां आहै ठौरू।
लोनु तेलु औ सींच लगानौ सबिहौं भरम सकेली।
यही भरोसे साइत फिर ई बगिया म आवैं बौरू।।

कवि अजय सामाजिक विद्रूपताओं से सीधे टकराने के लिए संबोधित करते हुए आह्वान करते हैं कि अधिकार मांगने से नहीं मिलते, प्राप्त किये जाते हैं। और इस प्राप्ति की प्रथम शर्त है एकता-

ककुआ कब तक पूंछि दबइहौ!
जीभि निकारे द्वारे-द्वारे पीठी प डंडा खइहै।
टैम निकरि जाई तो पाछेक हुक्का हस मुंह बइहौ।।
हिलि मिलि कै जब एका करिकै सत्थै पांव बढ़इहौ।।
तब तक मिली न बारू उखारा, जब तक खउख्यइहौ।

सारतः कहा जा सकता है कि अजय सिंह 'अजय' एक सम्भावनाशील ऐसे कवि है। जिनमें अवधी का भण्डार भरने की सामर्थ्य परिलक्षित होती है। यदि उनका सारस्वत रचना कर्म इसी तरह आगे बढ़ता रहा तो एक न एक दिन वे अवश्य ही अच्छा मुकान स्वयमेव हासिल करने में सक्षम होंगे।

कहते हैं माला का सुमेरु समूची सम्प्रक्तता का नाभिक होता है। और उसके ही इर्द-गिर्द गुरिया स्मरण में घूमती हैं। यदि हम डा. रामबहादुर मिश्र को जनपद बाराबंकी के वार्तमानिक माला का सुमेरु कहे तो अतियुक्ति न होगी। यही कारण है कि इस समूचे निबन्ध में मैं उनका सबसे बाद में जिक्र कर रहा हूँ। यह मेरी धृष्टता भी है और विवशता भी। क्योंकि सुमेरू तो सुमेरू है आदि में भी और अन्त में भी। मेरी दृष्टि में डॉ. मिश्र अवधी के आन्दोलन है। जनपद बाराबंकी में अवधी के ध्वज वाहक हैं। उनकी समूची कर्मण्य तल्लीनता सिर्फ और सिर्फ अवधी को समर्पित है। यद्यपि वे हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान हैं।

प्रकृत्या चारू एवं उदार श्री मिश्र नितान्त स्वाभिमानी एवं ठान लेने के बाद लक्ष्य प्राप्ति तक निरन्तरता बनाए रखने वाले व्यक्तित्व के धनी हैं। और यह विशेषता उन्हें अवध की माटी एवं अवधी के अनुशीलन से ही प्राप्त है। क्योंकि यही विशेषता तो अवध और अवधी की भी है।

डा. राम बहादुर मिश्र का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा का धनी है, वे अवधी के कवि है, शोधार्थी है, 'नखत' जोंध्इया और 'अवध ज्योति' के सम्पादक हैं या रह चुके हैं। उनकी अनेक कृतियां अवधी-लोकोक्तियाँ, अवधी लोक धारा, कुछ अनुभूतियां कुछ विचार, अवध मां होली खेलैं रघुवीरा, लागे मसवा असाढ़, एक रहे राजा आज प्रकाशित हैं जो उनकी विद्वता की साक्ष्य हैं। इसके अतिरिक्त "ये माटी अवध रानी है" जैसे शोध ग्रन्थ और त्रिधारा जैसे अवधी के आधुनिक तीन कवियों का गवेष्णापरक परिचय एवं काव्य सम्पादन उनकी कर्म तत्परता को स्वतः व्याख्यायित करता है। इससे भी अधिक जो है वह है उनकी साँगठनिक क्षमता और अवधी के प्रति समपर्ण तथा नये-नये रचनाकारों को अन्वेषित कर उनका उत्साहवर्धन। यदि कहें कि डॉ. राम बहादुर मिश्र वास्तविक अर्थों में जनपद बाराबंकी के वह अपराजेय पौरुष हैं जो अवधी के लिए निःश्च्छल मन एवं पवित्र उद्देश्य के साथ ऐसे महाव्रती हैं जो निरन्तर चरैवेति-चरैवेति में निमग्न और रत्नान्वेषी है तो अतिशयोक्ति न होगी।

अब तक उनकी तीन दर्जन से अधिक अवधी सम्पादकीय तथा अनेक समीक्षाएं और विभिन्न स्तरीय पत्र पत्रिकाओं में लेख एवं विश्लेषण तथा कृतियाँ उनको आयु के लगभग बावन वर्षों की पूँजी है तो सहसा विश्वास न होगा। क्योंकि डॉ. मिश्र कवि, कथाकार, सम्पादक, समीक्षक लेखक के अतिरिक्त एक परिवार की जिम्मेदारी भी वहन करते हैं। तुलसी ने तो 'गृह कारज नाना जंजाला' कहा है। श्री मिश्र भी तो इन जंजालों से नित्य प्रति गुजरते हैं। फिर भी साहित्यिक नैरन्तर्य बनाए रखना उनकी ही अद्‌भुत जिजीविषा का कार्य है प्रायः दूसरे ऐसा सोच भी नहीं पाते करना तो दूर की कौड़ी है।

डॉ. राम बहादुर मिश्र अवधी गद्य और पद्य समभ्यस्त है। जबकि अवधी में पद्य ही अधिक सृजित हुआ है किन्तु गद्य लेखन प्रायः न्यून ही रहा। किन्तु आज के युग में जब कविता हाशिए की चीज कह

कर हिन्दी जगत में लगभग खारिज करने की मुहिम से त्रस्त है। उसी समय अवधी के इस चिन्तक को लगा होगा कि अवधी गद्य को भी इतना समृद्ध होना चाहिए कि लोग उसे टीका, पट्टा, परवाना की ही स्थिति में न मानकर समतुल्य गद्य की कोटि में रखने योग्य भी स्वीकारें। श्री मिश्र की अवधी निबन्ध कृति 'एक रहै राजा' और अनेकशः, सम्पादकीय टिप्पणियां और उनका साफ-सुथरा अवधी गद्य इसी का परिणाम है। जहाँ रंचमात्र कृत्रिमता नहीं प्रत्युत अभिव्यक्ति की रवनागी है।

बोली-बानी के सम्पादक और अवधी के शीर्षस्थ व्यक्तित्व जगदीश 'पीयूष' ने डॉ. मिश्र की निबन्ध कृति के लिए 'पहली लकीर' कहा है साथ ही इसे अन्य रचनाधर्मी यहां तक अन्य विभाषायी विद्वानों के लिए प्रेरणा और बल' बताया है। डॉ. मिश्र के अवधी गद्य की एक बानगी -

''सवाल उठत है अवधी गद्य मा लिखय कइ जोखिम को उठावै? लिखि डारय, छपाय डारय, मुला पढ़ै को? अवधी गद्य तै वहै लिखि सकत है जेहिका अवध से नेह नाता हुवै। जेहिका आपनि भाषा बचावै कइ मोह होये, वह जरूर लिखे, भले! वह सनकी कहा जाय।''

श्री मिश्र के पास एक भाव प्रवण हृदय भी है जो उन्हें कविता से भी जोड़ता है। श्री मिश्र का वर्षागीत जनमानस के हर्ष और उल्लास तथा निश्चिन्तता का जहां गायन है (क्योंकि अवध क्षेत्र कृषि प्रधान होने के कारण वर्षा को उल्लास से ही लेता आया है, उसकी शस्य श्यामला फसलों के लिए वरदान जो है यह ऋतु) वहीं जीवन जन्तुओं के स्वरों से संगीत सुनना उनकी निजी विशेषता है-

खँझड़ी वोलै खलझरियन माँ
सत्ताइसा बगियन-बगियन माँ
ताल तलइयन के कोखा मा दादुर ताल लगावत है।

श्री मिश्र का यह वर्षा गीत भाव सम्पदा की दृष्टि से हिन्दी के प्रकृति प्रेमी कवि 'पन्त' के वर्षा गायन से किसी भी दृष्टि में कमतर नहीं है। उनकी एक अन्य कविता 'बप्पा का आज देवाली है' में श्री मिश्र सामाजिक आर्थिक वैषम्य को जहाँ भली भाँति देख रहे हैं वही उनका अन्तस प्रकारान्तर से मानो नीरज के स्वर में कह रहा हो-जलाओ दिये पर रहे ध्यान इतना, अंधेरा धरा पर कहीं रह न जायें तभी हम वास्तव में अन्धकार से प्रकाश की ओर यात्रा कर सकेंगे। तात्पर्य यह की श्री मिश्र की कविताएं चाहे जिस विषय वस्तु को लेकर सृजित हुई हैं उनकी सहज संवेदना की चिंता बस मनुष्य एवं मनुष्यता की संरक्षा तथा और अधिक उत्कर्ष की अभिलाषा से युक्त हैं।

डॉ. राम बहादुर मिश्र को जायसी पंचशती सम्मान एवं अवधी रत्न आदि से सम्मानित किया गया है किन्तु यदि हम कहें कि यह सम्मान को ही उपयुक्त सिद्ध करने के लिए हुआ है तो गलत न होगा। क्योंकि श्री मिश्र का व्यक्तित्व और कृतित्व इन सम्मानों की स्पृहा नहीं रखता। श्री मिश्र की साहित्य साधना एवं अवधी साधना पर क्रमशः लखनऊ और कानपुर विश्वविद्यालयों से शोध प्रबन्ध भी प्रस्तुत और स्वीकारते हो चुके हैं।

समग्रता में डॉ. राम बहादुर मिश्र जनपद बाराबंकी में जहाँ अवधी के वर्तमान ध्वजवाहक हैं वही कुशल सर्जक भी है तथा एक समन्वयकारी ऐसा व्यक्तित्व भी जो सबको आकर्षित करता है और अनुबन्धित भी। अवधी के समूचे स्नेह-शील-मर्यादा और कर्मण्यता से ही यह व्यक्तित्व बना है जो सबको आप्यायित करता है और स्नेह अभिसिंचित भी।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि जनपद बाराबंकी का अवधी साहित्य अपनी परम्परा में आदि से उर्वर, भाव-प्रवण, निष्काम और सत्य-शील-शौर्य से युक्त है। विश्व मैत्री, करूणा एवं साहिष्णुता जिसके गुण हैं। जिसने अपनी समूची शक्ति के साथ मनुष्य को मनुष्य से प्रेम करना सिखाया। जहाँ संतों, ने

प्रवृत्ति खोजी। जहाँ प्रेम के दीवाने फकीरों की वाणी गूंजी। जिसने अवध की संस्कृति को और गरिमावान बनाया। पर दुःख कातरता में अपना सब कुछ न्यौछावर कर देने को भी कमतर समझने की विनम्रता प्रदर्शित की। जहां की माटी में अनेक ऋषि-मनीषी पले बढ़े। जिसने मर्यादाभियान के नये आयाम सृजित किये। जहां पारिजात की सुगन्ध दिक्-दिगन्त को मर्मरित करती रहती है। जहां आज भी अवध की परम्परा के अनुरूप आचरण करना व्यक्ति अपना गौरव समझते हैं। जहां की माटी आज भी सर्जनात्मक स्वरों से अभिषिक्त है। जहाँ के साहित्य का अक्षर-अक्षर अर्थवान है और व्यक्ति-व्यक्ति समरसता का पोषक जहाँ आज भी, जब विश्व कलह ग्रस्त है सब प्रेम से रहने की कला जानते हैं। जिस माटी का पग-पग तीर्थ है। हम भी अपने जनपद की माटी को उस संस्कृति को शत-शत नमन करते हैं।

अम्बेडकरनगर के अवधी कवियों का साहित्यिक अवदान

सुमनलता वर्मा

नाना प्राणिमय इस जगत् में मानव ही ऐसा प्राणी है, जिसे उस अव्यक्त ब्रह्म से चेतना का वरदान प्राप्त है। इसी कारण वह इस जगत् में अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ समझा जाता है। मानव की चेतना का सर्वाधिक आलोकमय एवं मनोज्ञ स्वरूप उसके द्वारा रूपायित ललित कलाओं में अभिव्यक्त होता है। समस्त ललित कलाओं में काव्य-कला ही सबसे अधिक प्रशस्त एवं सर्वाश्लेषी है। क्योंकि काव्य या साहित्य ही किसी देश व समाज के उत्थान-पतन का कारण बनता है। जनपद अम्बेडकरनगर के अवधी कवियों का काव्य भी इस दृष्टि से अपने आप में परिपूर्ण है। इनकी रचनाएँ देशकाल एवं परिस्थितियों की उपज हैं। अपनी रचनाओं के माध्यम से इन कवियों ने देश व समाज के विविध क्षेत्रों पर दृष्टिपात किया है तथा उनमें निहित विसंगतियों को उजागर कर उनके समाधान का मार्ग भी सुझाया है।

जनपद अम्बेडकरनगर के अवधी-कवियों ने हिन्दी साहित्य को महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य आदि प्रदान किये हैं। आचार्य विश्वनाथ पाठक कृत 'सर्वमंगला' महाकाव्य के क्षेत्र में मील का पत्थर प्रतीत होता है। दुर्गा-सप्तशती की कथा का आधार लेकर कविवर ने अवधी भाषा में उत्कृष्ट रचना की है। 'सर्वमंगला' महाकाव्य की विशिष्टताओं से परिपूर्ण है। जैसाकि अरस्तू ने महाकाव्य की गरिमा को उद्घाटित करते हुए लिखा है- 'महाकाव्य ऐसे व्यापार का कथामय अनुकरण है, जो स्वतः गम्भीर एवं पूर्ण हो, वर्णनात्मक हो, सुन्दर शैली में रचा गया हो, जिसमें आद्यन्त एक छन्द हो, जिसमें एक ही कार्य हो, जो पूर्ण हो, जिसमें प्रारंभ, मध्य एवं अन्त हो, जिसके आदि और अन्त तक दृष्टि में समा सकें, जिसके चरित्र श्रेष्ठ हों, कथा सम्भावनीय हो, और जीवन के किसी एक सार्वभौम सत्य का प्रतिपादन करती हो।' 'सर्वमंगला' में महाकाव्य के उक्त गुणों में से अधिकांश मिल जाते हैं। ऐसे महाकाव्य 'सर्वमंगला' का सर्जक जनपद अम्बेडकरनगर ही है। आचार्य विश्वनाथ पाठक ने इस महाकाव्य के माध्यम से असत्य पर सत्य की, अधर्म पर धर्म की, अनैतिकता पर नैतिकता की विजय दिखलायी है। इनकी रचना-शैली के उदाहरण निम्नवत् हैं :

केकर आँचर कै गहउँ छोर। के जिउ कै हरै कलेस मोर।।
चढ़ि केकरे कोरा माँ लुकाउँ। केहि माई के परसे अघाउँ।।

डॉ. शिवप्रसाद मिश्र कृत 'शान्तिवन' भी एक महाकाव्य है। महाकाव्य के सभी लक्षण उसमें मिल जाते हैं। इस महाकाव्य में द्वादश सर्ग हैं। कविवर ने बड़ी कुशलता से इस संसार में तप्त हो रहे जीव को अन्ततः निर्वाण का मार्ग बतलाया है। इस महाकाव्य का आरंभ एवं समापन कवि ने 'ॐ' शब्द से किया है। इस कृति की भाषा अवधी है, जिसमें आंचलिकता का भी पुट है।

श्री भानुदत्त त्रिपाठी कृत 'भारत-व्यथा' एक प्रबन्ध-काव्य है। 'भारत-व्यथा' भारतवर्ष के उत्थान-

पतन किंवा जय-पराजय की गरिम्ण-लघिम्न गाथा का भाव-प्रभाव-पूर्ण गान है। इस प्रबन्धकाव्य में चतुर्दश सर्ग हैं। कवि ने प्रथम सर्ग से लेकर एकादश सर्ग तक भारतवर्ष के सहस्रों वर्षों के प्रदीर्घ इतिहास का संक्षिप्त धूप-छाँही इतिवृत बड़े ही तदग्र भाव से प्रस्तुत किया है और शेष तीन सर्गों में स्वातन्त्र्योत्तर उद्यम-पराक्रम की पीठिका पर आज की घोर विषमता को रेखांकित किया है। भानुदत्त त्रिपाठी 'मधुरेश' प्रयोग के नहीं योग के कवि हैं। उनका 'योग' 'चित्तवृत्ति निरोधः' के अर्थ में नहीं, 'योगक्षेम' के अर्थ में है। इसीलिए वे अपने काव्य का प्रयोजन निर्भ्रान्त रूप में प्रस्तुत करते हुए कहते हैं :

सत्काव्य जगत् माँ दिव्य सृष्टि, उमड़े रस, जस कै होय वृष्टि।
दरसै शुभ पथ अउ बढ़ै ग्यान, जेहिते न रहै नर निरा व्यष्टि।।

इस तरह जनपद अम्बेडकरनगर के अवधी कवियों ने हिन्दी साहित्य को तीन महाकाव्य-- 'सर्वमंगला', 'शान्तिवन' एवं 'भारत-व्यथा' दिये। ये तीनों महाकाव्य की कसौटी पर पूर्णरूपेण खरे उतरते हैं। इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है, कि जहाँ वर्तमान समय में कविगण मुक्त छन्द का आधार ग्रहण कर कविताओं का अम्बार खड़ा कर रहे हैं, जिसे शुद्धतः कविता नहीं, अकविता की संज्ञा दी जा सकती है, वहाँ इन अवधी कवियों ने अपनी पारम्परिकता का निर्वाह करते हुए हिन्दी साहित्य को महाकाव्य भेंट किये हैं, जो अपने आप में स्तुत्य है। इन कवियों ने महाकाव्य के अतिरिक्त खण्ड-काव्य भी लिखे हैं।

खण्ड-काव्य के रूप में आचार्य विश्वनाथ पाठक कृत 'घर कै कथा', केदारनाथ प्रजापति कृत 'सोने क हंस', सतीप्रसाद पाण्डेय 'वागीश' कृत 'माण्डवी', हरिप्रसाद मिश्र कृत 'प्राणबेलि' एवं 'मदालसा' आदि को लिया जा सकता है। 'घर कै कथा' में कवि ने अपने जीवन से संदर्भित बातों को संकलित किया है। 'सोने क हंस' में नल-दमयन्ती की कथा है, तथा 'माण्डवी' में चक्रवर्ती राजा दशरथ के पुत्र भरत की पत्नी माण्डवी को वर्ण्य विषय के रूप में चयनित कर उसका चरित्रांकन किया गया है। इन कवियों की रचनाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इन्होंने अपना काव्य कौशल प्रदर्शित करने के लिए रचनाएँ नहीं की हैं, बल्कि स्वान्तः सुखाय जो भी सृजन किया है, उसमें उनकी काव्य-कुशलता स्वतः झलक उठती है, वह परान्तः-सुखाय स्वयं बन गया है। केदारनाथ प्रजापति 'वियोगी' ने लिखा है कि :

इहै इतिहास कलि कलुष नसाई जग, जे हो नर उठि प्रात पाठ नित करिहैं।
मनसा सुफल होई रोग न बिरोध कौनो, अपने करमवाँ से सुधा-मनि पइहैं।
मास भर पाठ अरु धरम निबाह करि, गझिनि कै नाव जग सुधा छुटि जइहैं।
कथा दमयन्ती-नल कहीं जे विमल मन, दूध-पूत जग माँ वियोगी सब पइहैं।
चरित महान इहै सुनी और सुनाई जे तौ, धरती पे जनम सुफल कइ लेइहैं।
भरे भण्डार सदा लच्छिमी कै बास होई, दुख और दरिद नाहीं ओना सतइहैं।
दिन-दिन बाढ़ी जग कीरति वियोगी तब, मान-सम्मान धन दुनिया मा पइहैं।
पइहैं परम गति होइहैं पूरन काम, जब ब्रजराज सुधा दहिने पै रहिहैं।

रामदरश पाण्डेय 'विश्वासी' कृत 'माटी की गन्ध', डॉ. राभजवाहिर द्विवेदी कृत 'पंचामृत', श्यामलाल वर्मा कृत 'पी-कहाँ' आदि मुक्तक काव्य हैं। ये सारे कवि जनपद अम्बेडकरनगर के ही रहने वाले हैं, जो अवध की माटी की सोंधी गन्ध को विस्मृत नहीं कर पाये और उसे अपनी रचना में साकार कर दिया है। 'पी-कहाँ' में एक वियोगिनी नारी का चित्रण है। 'पंचामृत' में कवि के अपने जीवन की तथा वर्तमान परिवेश की विसंगतियों का यथार्थ चित्रण है। 'माटी की गन्ध' में देश व समाज का यथार्थांकन है।

जनपद अम्बेडकरनगर के अन्य कवियों की फुटकल रचनाएँ मिलती हैं, जिनमें देशकाल-परिस्थितियों

की झलक मिलती है। इन कवियों ने मुक्तक शैली के जितने भी रूप प्रचलित हैं, प्रायः सभी पर अपनी लेखनी आजमायी है। कवित्त, सवैया, कुण्डलिया, दोहा, बरवै, चौपाई आदि विविध छन्दों के प्रयोग इनकी रचनाओं में हुए हैं। रस-निरूपण की दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि इनकी रचनाओं में प्रायः सभी रसों के उदाहरण स्वाभाविक रूप से मिल जाते हैं। पं. जियाराम शुक्ल 'विकल साकेती' अकबरपुर (अम्बेदकर नगर) के अत्यन्त चर्चित और लोकप्रिय कवि हैं, जिन्होंने कवि-सम्मेलनों में अवधी कविता को काफी प्रतिष्ठित किया है।

प्रमुखी अवधी कवि और कविताएँ

पं. प्रताप नारायण मिश्र

कानपुर का इतिहास

दूरि कानपुर ते नाहीं है यारौ कुछ बिठूर को गाँव।
सन सत्तावन माँ बलबा भये........................ ।

जितनी तिरियाँ कम्पू कटि गई सो तौ जानत है संसार।
लड़े लड़ैयन बालक काटें जिन मुँह बहै दूध कौ धार।।

नाग कम्पिनी कायम रहि है चलिहै जुगन जुगन लगि नाव।
अनरथ न होय सो थोरो यह सब धरती को परभाव।।

कहाँ लौं बरणौं मैं कम्पू को मोरे बूते कहो ना जाय।
धनि धनि भुम्यां कानपुर की सतकर्मन की विषम बलाय।।

सतजुग त्रेता ते चलि आये, जहं सब कलिजुग के ब्यौहार।
ऐसी धरती पर बसियत है, बेड़ा राम लगावै पार।।

बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस'

कँगला किसान की बिटिया

फूले काँसन ते ख्यालयि घुँघवार बार मुँहुँ चूमयिं,
बछिया-बछरा दुलरावयि सब खिलि-खिलि खुलि-खुलि ख्यालयिं।
बारू के दूहा ऊपर परभातु-अयिसि कसि फूली,
पसु-पंछी मोहे-मोहे जंगल मा मंगलु गावयि।
बरसायि सतउ-गुनु चितवयि, कँगला किसान की बिटिया।

तितुली के पाछे दउरयि थकि छकि कयि ल्वाटयि-प्वाटयि,
लुकि-छिपि कयि ब्यरझरियन मा तित्तुर के बच्चा पकरयि।
रोटी का कउरु चलावयि कबरा कुतवा ललचावयि,
पीठी पर बिल्लो रानी न्यउरा ते खीसयि काढ़यि।

लरिकईं क पूर खजाना, कँगला किसान की बिटिया।

भ्वरहरे जागि है आवयि टिल्लन पर बेनि बजावयि,
सब गोरू पाछे दउरयिं फिर चाटयिं चुकरयिं हुँकरयि।
घाखतयि पुँछारीं नाचयिं दयि ताल मुरइला उछरयिं,
साधे सनेहु की जउरी जर-चेतन बाँधे घूमयिं।

बन-कन्या असि किलकारयिं, कँगला किसान की बिटिया।

जब आगि भरी आँखिन ते सबिता दुनिया का घाखयिं,
दस दिसि ते बादर दउरयिं भरि करियारी के फीहयिं;
मुहु झाँपि लेयिं देउता का कुम्हिलायि न कहूँ कुँआरी,
जब रिमिकि झिमिकि झरि लागयिं बिरवा तकि छतुरी तानयिं।

कुस डाभन ऊपर पनपयि, कँगला किसान की बिटिया।

दुइ घरी राति बीतै पर वह नदी-तराई घूमयि,
म्यढ़की-मछरी, तकि-जकि कयि गुन गनि-गनि गीतु सुनावयिं।
मँझरा के बीच मड़य्या वहं ऊँचा खाली दउरयि,
जुगुनू पियार के मारे ग्वाड़न तर दिया जरावयिं।

वह चली जायि निःकंटक, कँगला किसान की बिटिया।

पयिरा पर पउढ़ी-पउढ़ी वह चितवयि चाकु चँदरमा,
मुसक्यायिं रूपु छबि छकि-छकि प्रेम की अरघ अँजुरी भरि।
भ्याँटयिं अकास ते तारा दुगुनायि, दिपिति देहीं की,
बप्पा ते तप की बेदी अम्मा की दिया-चिरय्या।

धनवान की द्वासरि दुनिया, कँगला किसान की बिटिया।

वंशीधर शुक्ल

देश का को है जिम्मेदार

चौराहे पर ढाढ़ किसनऊ, ताकैं चारिउ वार।
देश का को है जिम्मेदार।

कहूँ न जोति न दिया न बाती, कोई हितू न ;ाखा संघाती,
चलै बिकट बौझरा पछहियाँ, उड़ैं रथी जस तिनका पाती।
उड़ि लै अंधकार चौगिर्दा, सूझि न परै अंगार। देश... ।।

नौकर कहैं कि हम चाकर हैं, अफसर कहैं कि हम नौकरहैं,
मेम्बर कहैं न हम रहबर हैं, मंत्री कहैं कि खिमदगर हैं।
कहैं गवरनर पद जरूर है, मुला न कुछ अधिकार। देश... ।।

जिलाधीश-परगनाधीश, कोई न्यायधीश कोई प्रांतपती हैं,
नगरपाल कोई लेखपाल कोई, राज्यपाल कोई राष्ट्रपती हैं।
तबहूँ बिना नाथ बिन पगहा, भारत की सरकार। देश... ।।

लंका गोवा ब्रह्मा छिनिगा, असम भोट नैपालौ हटिगा,
पेशावर लाहौर करांची, बंग सिंध कश्मीरौ बँटिगा।
मैकमोहन लद्दाखौ लुटिगा, कोई न रोवनहार। देश... ।।

खेतिहर का न काम से फुरसति, मंत्रिन का न डिनर से फुरसति,
अफसर का न ऐस से फुरसति, डाकुन का न लूटि से फुरसति।
को देखै को सुनै कोहू की, केहिका है दरकार। देश... ।।

चीन दबावै रूस चिढ़ावै, अमरीका दै कर्ज फँसावै,
पाकिस्तान लुकेठा लै-लै, दुनौ वार ते ऊँच नगावै।
झरसि रही है भारत माता, कोई न सींचनहार। देश... ।।

भ्रष्टाचार दमन के तन पर, चढ़ी सड़ी सरकार पतन पर,
लुढ़कति जाय देश का दाबै, महानाश की महा निधन पर।
लेक्चर दै-दै मंत्री मेम्बर, फूँकि रहे कप्पार। देश... ।।

सत्य सिमिटगा एक्टवाद माँ, न्याय सिमिटगा पार्टिवाद माँ,
दया-धरम उपकार समुन्नति, सिमिटी फैशन-स्वार्थवाद माँ।
चोरी डाका कतल भुखमरी, गर्जि रहा संहार। देश... ।

आगे का धौं होने वाला, धौं शासन का भवा देवाला,
निकरि गवा को घर से, कोई रहा न धूनी देने वाला।
चौकस आधा देश बँटा, जो रहा न रहनेहार। देश... ।।

नाप बदलिगै तौल बदलिगै, सिक्का लेखा नीति बदलिगै,
मिलनि चलनि बतुवानि सभ्यता, भाषा भूषा रीति बदलिगै।
रोय रही वीरता न कोई आँसू पोंछनहार। देश... ।।

बरस सैकरन चली लड़ाई, तब गण गौंड़रि शाही आई,
जो मिटिगे सो पनपि न पाये, तबलौं मौत फेरि घिरि आई।
फिरि धौं भारत बिकी चीन, अमरीका के बाजार। देश... ।।

जो चाहै सो अकड़ दिखावै, जो चाहै सो लुटै-लुटावै,
चारिउ चूरा ढील बोल्टू, जो चाहै सो धुरा दबावै।
हाय बीर भारत का डाटैं, कायर क्रूर लबार। देश... ।।

अरे हुकूमति के मक्कारों, ओट-नोट के लूटन हारौ,
उत्तर देउ दीन भारत का, ओ पार्टिन के ठेकेदारौ।
काहे बरगलाय के बेंड़ा, बोरि दिहेउ मंझधार। देश... ।।

रमई काका

गाँव है हमका बहुत पिया

गाँव है हमका बहुत पियार।।

महरि जहँ किलकिल कइकै सबद, अवाती पाहुन कै कहि जाय।
बैठि कै मुड़वारी पर काग, सँदेसा बिरहिन का दइ जाय।

कांकरा के सुनि करकर बोल, गगन के बादर जायँ बिलाय।
नयन असि खंजन फुदकि दुआर, बयरिया जड़ही जायँ उड़ाय।

बोलिकै पंचक्की अस घुग्घु, अगाहू असगुन देय जताय।
तड़के कुकुरूंकूँ कहि मुरग, सोय खेतिहर का रहे जगाय।

डार पर पेढुकी रोजुइ बैठि, कहति है फूफू के कस गयो।
जतावै बरै बरोटे जाय, ख्यात बइबे का अवसर भयो।

चिरइया कुलकि धुरैहरी खेलि, टिटिहिरी कइ जल कै असनान।
दृयाल के ऊपर ब्वालै चील्ह, जतावति है बरखा नगच्यानि।

दुआरे पंजन ते पतबेलि,
खंड़चिदें, चिरई चिंगुन गलार।
गाँव है हमका बहुत पियार।।

रहनि जहँ सोहर सरिया केरि, लरिकई पुरिखन का दइ देय।
सोउनिधी लोरी बरबस जहाँ, नींद बस लरिकन का ल्इ लेय।

भवानी गंगा के रथ बैठि, कुवाँरिन का पानी पी जायँ।
बिदा माँ गीतन का उपदेसु, ससुर घर लिहे सोहगिलै जायँ।

सुनत मन बिरहा क्यार बिरोगु, ख्याल कै दृयाल चूर होइ जायँ।
अगिनि असि आल्हा कै ललकार. कायरौ सुनै सूर होइ जायँ।

बसे घर-घर माँ तुलसीदास, सिखावैं धरम करम आचार।
घुसे हरिजन के घरन कबीर, अँधेरे माँ कइ रहे उज्यार।

भड्डरी के कन-कन माँ ब्यापि, चिकारन के सुर पल्टूदास।
कन्हैया नैनू ढूँढ़त फिरै, सूर कै हिरदय हरस हुलास।

सरसुती के आँचर तर अबहुँ,
घाघ हैं ख्यातन के रखवार।
गाँव है हमका बहुत पियार।।

भोरहरे चकिया घुरघुर घुरुर, पूत का बेड़े रही सोवाय।
उबहनी की रगरन ते हियाँ, कुवाँ के पेटहरि रही खियाय।

चलत है छपकि-छपकि कै सूप, हिये माँ सार-सार गहि लेय।
धरा पर मूसर धम-धम धमकि, अनमना अन्नु निमन कइ देय।

मथानी घहर-घहर घहराय, जतन ते काढ़े लेत है रतन।
ख्यात माँ हलधर का अउजारु, उगावै खेतिहर के सुख सपन।

खुरपिया हरबर खेतु निराय, फसल के बैरिन देति निकारि।
पसीना मनई का अनमोल, देत दृयालन माँ जीवनु डारि।

करमठी भे लोहे के हाथ, तड़क्के छक-छक चलैं गँड़ास।
तपस्यै मइहाँ बीती जाति, हियाँ कै यक-यक साँस-उसाँस।

नाँध पर बेड़ी छप्पाछप्प,
अपनहे हाथ अपनि पतवार।
गाँव है हमका बहुत पियार।।

भोर पंथिन के मंगल हेत, उषा अमरित घट लीन्हे खड़ी।
राति हन्नी-हन्ना सतरिखी, घरन माँ लीन्हे घूमें घड़ी।

चँदरमा मामा लरिकन क्यार, बतासा दूधु रोजु दइ जाय।
गगन माँ सुकुवा उइके भोर, ख्यात माँ गज्जरु रहा बजाय।

गगन सब जानि परत हैं अपन, धरा कै धूरि अंग लपिट्याय।
भ्वरहरे पयधरि खेतिहर केरि, न जाने कौनि परी धौ जाय।

उजेरिया पछलहरे माँ फइलि, कहति है धरा गाँव कै मोरि।
पिछउरी अन्नपूरना केरि, किरन दे केसरि मइहाँ घोरि।

चिरइया सँग-सँग ख्याते जायँ, घरै लउटतै बसेरा करैं।
प्रात परभाती चुटपुट चुपुट, साँझ सँझवाती टेरा करैं।

भिनउखा होतै ख्यातन लखी, होत है प्रकृति पुरुष का मेलु।
रचै किरनै हिरना के संग, दुपहरी मृगतिस्ना का खेलु।

चिरइया लुरखुरिया कइ रहीं, छाँह माँ पसू रहे अउँघाय।
जूड़ि महुआ कै भदइँ बयारि, तपनि सब तन कै देय दुराय।

साँझ का बछरन् कै कइ यादि, घरन का गउवैं चलैं बँबाय।
देवता गउधुरी पर हरसि, स्वान के फूल देय बिथराय।

बछा कुलकै माता का देखि,
दुहू लंग प्रेम भरी बुँबकार।
गाँव है हमका बहुत पियार।।

देवालन माँ हैं मंगल चित्र, खिंची है रेखन माँ कामना।
मनोरथ पुरवैं तुलसा माय, बँधी है पुन्य तिथिन साधना।

नेमु संजम माँगै कुलदेव, पुरखिनिनि पर पूजा का भार।
करैं गिरिजा निरजला उपासु, मिलैं संकर जी बारम्बार।

सपूतिन कातिक कै बछवाँछि, करति है गोधन का सम्मान।
चढ़ावै पहिले देवतन सीस, किसनवाँ अपने हाथ नवान्न।

सँघाती सँग हरु खेतिहर क्यार, घरैतिन तहिकै छठिया घरै।
ख्यात कै माटी पूजी जाति, कोंछु खेतिहारिनि का जो भरै।

मिलति गउवन का अगरासिनी, खाति हैं कुतवा पाछिल ग्रास।
खाय ना जब तक खेतिहर कौरु, बहुरिया तब तक करै उपासु।

हियाँ आजौ सतवन्ती होयँ,
कहति है चउरा सत्तिन क्यार।
गाँव है हमका बहुत पियार।।

बदरियन कै साम्याना तरे, पुछारी नाचैं पंख पसारि।
मुरइला नयन बिछाये ठाढ़ि, बदरवा जीवनु दीन्हेनि वारि।
लहरि लइ डम-डम डभहा भरैं, मेंझकवा बजा रहे कुड़मुड़ी।
बदरवा दीन्हेनि हरियर चीर, धरा के माँग बधूटिन भरी।

मगन होइ गई राम की गऊ, देखि लहलहे ख्यात के धान।
गगन तन आपनि च्वाँच उठाय, करैं अनदाता के गुनगान।
मकाइन मइहाँ माचा गड़े, राग खेतिहर के हिरदै जाग।
फइलि गै मुँह ककरिन कै बेलि, गगन माँ बिरहा छइलै लाग।

फरैं जब सनइन माँ पहुँटिया, बिटेवा पायन बाँध फिरैं।
घास के सुआ बुआ औ बहिनि, लरिकवन के हाथन माँ धरैं।
हरेरी रेंड़ी गउझन फरैं, ललछरे पउधन हरियर पात।
ठाढ़ि है भरे मिठवासु, कोल्हौरिन मइहाँ रसु चुचुहात।

गेंगटियन फरैं सलोने चना, रंगीली ढुरुहा मटर फुलाय।
हँसी मानौ खेतिहर कै भूख, पसीना क्यार सुजसु लहक्याय।
चवासू सरसौ गह-गह फूलि, धरा जनु साजै पेरी भली।
ढकुलियन माँ मन भँवर लुभाय, लागि जब लाल फूल मखमली।

रँगीली तितुली लहरी लेयँ, उड़ैं जनु फुलवा पंख पसारि।
ममाखी घूटैं रस के घूँट, धरैं अमरित पर हेत सँभारि।
महर मह महकनि माँ बउरही, मिलावै कुहू-कुहू मिठवासु।
धरा का देखि सलोनु सरूपु, पढ़ैं जनु वसीकरनु आकासु।

कुचकुचे महुअन ते मधु झरै, करँउदम माँ गमकी अरधान।
पूरना छम-छम नाचैं ख्यात, धरा कै माटी होइगै स्वान।
हँसा खरिहनवाँ अँबवा तरे,
किसनवाँ के घर माँ उजियार।
गाँव है हमका बहुत पियार।

गुरुप्रसाद सिंह 'मृगेश'

कब तक निबही

पालू भैंसा बिन डोरि, लट्ठ बिन झगड़ालू
औ भालू बिना नकेल, भला कब तक निबही
बे जर, बे घर का छैल, बेलि बिन बिरवा के
बिन नाथ मरकहा बैल, भला कब तक निबही?

खूँटा-गेराँव बिन गाय-भैंसि घूमी कब तक
बिन छाँदा गदहा भला कहाँ तक खेत चरी
बिन चले फिरे जिन्दगी भला कै दिन जागी
बे हाँथ पाँव झिटके कतने दिन चूल्हु बरी
पैरी नद्दी माँ नाव कहाँ तक कागज कै

औ बिन इंजन कै रेल भला कब तक निबही
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

दफ्तर से बाबू सकपकाति घर का आये
झट कहिनि घरैतिन, सुन्या? 'आजु बरसाइत है-
बरगदहा बाबा की मजार पर म्याला है
तुम चौका चूल्हा किह्यो, हुवाँ हमं जाइत है'
बाबू बेबस उइ बस पर बैठी चली गईं

मेहरी का मर्द दबैल भला कब तक निबही
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

ऊपर से बने सुतारि अपनपौ दरसावैं
मुलु भरे प्याट के भीतर हैं कसकनि पूरी
जर काटैं, सींचैं पात, घात पर घात करैं
मुँह रहै राम का नाव बगल बिस कै छूरी
यूँ अँखमुंदी का खेलु चली कतने दिन तक

भैंसा, घ्वाड़ा का मेलु भला कब तक निबही
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

बैरी परोस माँ लाग, नाग बिसधर घर माँ
धधकै मड़हा तर आग, चटोरी बानि परी
तन लटा बौरहा भाय, बतकटा चाकर औ-
अगुवारे घर के काँट कटैली बेलि चढ़ी
ससुरारि गाँव कै, भुँइपट कुआँ दुवारे का

कंकरहिया सांकरि गैल भला कब तक निबही
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

है मीत बना तो लाखु जुगाधिन का बैरी
बदला पुरान कब दाँय पाय कै पाटी ना
जल माँ बसि कै कब मगरमच्छ से बैरु चली
औ आसतीन का साँप कहाँ तक काटी ना
ह्वैगा सवार जब भूत वार कब तक न करी

मूड़े पर चढ़ी चुरैल भला कब तक निबही
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

जमपुर माँ म्याला भवा गुरू औ च्याला का
दूनौ दूनौ का डाटि रहे, हम भरि पायन
ई भरनी माँ तुमरेन करमन कै करनी है
तुमरिन चलतन ई महापुरी तक हम आयन
जमराजौ उनकै दसा देखि अँसुवाय उठे

नरकौ माँ ठेलम ठेल भला कब तक निबही
बिन नाथ मरकहा बैल भला कब तक निबही?

होली

लरिका मरैं अन्न बिना घर माँ, हमहूँ हियाँ घास बेगारि माँ छोली।
माँदी परी घरवाली कुँवार से, लाई कहाँ से दवाई की गोली।।
गौनु बिटेवा का देबै न तौ, बोलिहैं सब टोला परोस के बोली।
सोच यहै दिन-राति अहै, अब नीकि न लागै दिवारी औ होली।।

त्रिलोचन शास्त्री

पाँचू

क हो पाँचू
कब ले तूँ पेटहा भऽ
एनके ओनके खटव्याऽ
रुक्ख सुक्ख जेस जुरे
भखि लेब्याऽ परि रहिव्याऽ

मन तोरा कहऽ थीं
तोहरे दादव एइसे
कइ धइ दुनियाँ छोड़ेन
पुर बजि से एइसइ
चलि आवऽता

तूँ हूँ कहऽथयऽ
कि हम नवाई नाँई कर्थई
सम्मंइ गउँ पेटहा भऽ चलऽत आ
सब अपनइ पएँड़ा तउ हेरऽथइ

भएवा अब ओस सोचे
आपन नकसान बा
एस करा कि लड़िके सुतारे रहइँ
अवर जउँ बिचार करइँ
तउ कहइँ कि अगिले हमरे सबकाँ
खाले से ऊँचे पहुँचाइ दिहेन

पारस 'भ्रमर'

कहां गयी निबिया जवान

हमरे अंगनवा न बोलै सुगनवा,
अंखिया मा सिसुकै परान,
कहां गयी निबिया जवान?

निबिया कै बिरवा कटाय दिहौ बाबा
घर की चिरैया उड़ाय दिहौ बाबा
उड़िगै नयनवा सयान, कहां गयी0।।

निबिया कै चिफुरी चइलिया कै अगिया
जरि जरि होइ गै कोइलवा से रखिया
लागै जहनवा मसान, कहां गयी0।।

सूनी है पुरई सूने हैं पुरवा
सूनी देहरिया है सूने दुवरवा
सूने ओसरवा सिवान, कहा गयी0।।

दुधवा कै खिरिया लै ओखै मंतरिया
भूले से कगवा न बोलै अंटरिया
जइसे परनवा हेरान, कहां गयी0।।

आद्या प्रसाद उन्मत्त

पाती

श्री पत्री लिखा इहां से जेठू रामलाल ननघुट्टू कै,
अब्दुल बेहना गंगा पासी चनिका कहार झिरकुट्टू कै।

सब जन कै पहुँचै राम राम, तोहरी माई कै असिरबाद,
छोटकउना दादा कहइ लाग, बड़कवा करइ दिन भै इयाद।

सब इहां कुसल मंगल बाटै हम तोहरइ कुसल मनाई थै,
तुलसी मैया के चउरा पर संझबाती रोज जलाई थै।

आगे कै मालुम होइ हाल,. सब जने गांव घर सुखी अहैं,
घेर्राऊ छुट्टी आइ अहैं तोहरिन खातिर सब दुखी अहैं।

गइया धनाइ गइ जगतू कै, बड़कई भैंसि तलियानि अहै,
बछिया मरि गइ खुरपका रहा, ओसर भुवरई बियानि अहै।

कइसे पठई नाहीं तौ नैनू से दुइ मेटी भरी अहैं,
तू कहे रह्या तोहरिन खातिर रॉबिउ एक गगरी धरी अहै।

घिउ दूध खूब उतिरान अहै तोहरिन इयाद कै रोई थै,
गंजी से दुपहरिया काटी, एक जूनी रोटी पोई थै।

दस दिना भवा अइया के रमबरना का कूकुर काटि लिहेस,
जब ओरहन देइ गए ओसी ओकर महतारी डाटि लिहेस।

लौगहवा के मेड़े परसौं छोटकवा गिरा कांकर गड़िगा,
मकरी कै जाला भरे मुला, निकुरा मा जनम दाग परिगा।

मरि गएन रतन औ सुम्मारी मंगर का सरग सिधाइ गएन,
दुइनौ बुढ़वन कै तउ बनिगइ, दुइनौ अच्छी गति पाइ गएन।

जौने बुढ़वा कै जोइ मरइ ओका तौ जना नरक परिगा,
खटिया पर खोंखत परा रहेन, घर वालेन का झंझट टरिगा।

पिछवारे नरदा के तीरे, बड़कवा पपीता फरइ लाग,
घूरे कै कोहड़ा फूलि रहा, का कही करेजा बरइ लाग।

चारिउ कइती तोहरिन सूरत डोलइ जौनी मू जाई थै,
आपन मन कइसउ मारि मारि लरिकन मा जिउ बिसराई थै।

अस भया बेदरदी तोहरे चरनन की माटी का तरसि गए,
दरसन का के पूंछै तोहरी चिट्टी पाती का तरसि गए।

झूठइ एतना सब कहत रह्या जीतइ जिउ अस बिसराइ दिह्या,
लरिकन कइ मया न बा तोहरे आपन खबरिउ तक नाइँ दिह्या।

मुल हड़बड़ाइ के भाग्या जिन नाहीं तौ तोहका दोख अहै,
देसवा की खातिर लड़त अहा एतनइ हमका संतोख अहै।

बा छिड़ी लड़ाई दुसमन से कुल गली गाँव मा चरचा बा,
देसवा पर अपने बिपति परी कुल ठाँव ठाँव मा चरचा बा।

एक दिन देल्हूपुर की बजार मा बड़ी करारी सभा लागि,
अइया गै रहिन बताइन है बड़मनइन पैसा रहे मांगि।

केउ कहेन खून आपन दैद्या, केउ कहेन कि द्या गहना पाती,
केउ कहेन कि दुसमन चढ़ा आजु रौंदत बा देसवा कै छाती।

हम अही भले मेहरारू मुल हमरौ देहियाँ गै फरफराइ,
हम दांत पीसि कै बोले तौ छोटकवा बेटउना गा डेराइ।

गरमी चढ़ि गै सगरी देहियां मा अउर पसीन छूटि गवा,
आधिन मंगिया हम भरे रहे भुंइयां गिरि सीसा फूटि गवा।

हमरी आंखी कै माछु आज तोहका लरिकन कै कसम अहै,
अपनी माई कै दूध अउर अपने पुरखन कै कसम अहै।

आगे जौ गोड़ बढ़ाया तौ पीछे जिन आपन आँख किह्या,
हम रांड़ होब तौ होइ दिह्या एकर कौनउ जिन माख किह्या।

हम तोहरइ नउना रटत रटत तोहरे लरिकन का सेइ लेब,
कौनौ सूरत बूड़त बाड़त हम आपन नइया खेइ लेब।

मुल जउने दिन ताना पउबै हम कुआँ इनारा थाहि लेब,
तोहरे नउना कइ गारी सुनि हम गड़ही तारा थाहि लेब।

चैतू कोंहार का बड़का बेटवा जौन फउज मा गवा रहा,
छुट्टी आवा ओढ़र कइके ओकरे कुच्छउ ना भवा रहा।

जब तलक रहा कुल डेबरा भै बस ओकरे पीछे लागि गवा,
उबियायेन ताना मारि सबइ एक दिन चुप्पे से भागि गवा।

सब कहेन कि सरऊ अब तक तौ बस बइठे बइठे खात रह्या,
कुलतिउ अकड़िन के चलत रह्या गदहा अस लदा देखात रह्या।

जब काम परा तौ कायर अस छुट्टी लै घरे सिधाइ दिह्या,
महतारी की कोखिया औ कुल गउना मा दाग लगाइ दिह्या।

जल्दी भागा नाहीं तौ खुरपा लाल करब अउ दागि देब,
औ जौन सजा होई हम अपुनै गउरमिंट से मांगि लेब।

संझा भइ तपता के बैठा सब तोहरइ चरचा खोला थीं,
कुछ बड़ा बहादुर कहइँ मुला कुछ तबउ फोकाही बोला थीं।

चाहइ तू हमरी मंगिया कै गीलइ सेंधुर पोंछवाइ दिह्या,
मुल बैरी आँखी से देख्या ओका जिन बचि के जाइ दिह्या।

जीतइ जिउ अपने पुरखन के माथे मा दाग लगाया जिन,
जब तक दुसमन ना भागि जाइ तू घरे लउटि के आया जिन।

अब अइयउ का सनेस सुनि ल्या ओनहू कै कोखिया बरति अहै,
ओनहू कै रोवत रात दिना तोहरे बिन अंखिया झरति अहै।

मुल कहति अहैं बेटवा हमार जौ रन जीतै तौ धन्नि होब,
धरती माता की खातिर जौ जूझत बीते तउ धन्नि होब।

तू जीत जात के घर अउब्या हमरे मन का बिसुवास अहै,
देसवा अपनै जीते आखिर ई कन कन का बिसुवास अहै।

छोटकवा जागि के रोवत बा बोकरी बांधी मिमियाति अहै,
हम चिट्ठी लिखति अही औ ओहमुर कुकुरि रसोइया खाति अहै।

अब चली उहउ देखी ताकी तू रन से आसिरबाद दिह्या,
हम पांव छुई यहिं चिट्ठी से तू रन से आसिरबाद दिह्या।

वेणी माधव व्यास

वन्दना

सढ़िया से चिकने अंगनवा ठुमुक पग धावै हो।
लाला तेहि बीच परा बिछलाय दउरि के उठावै हो।

अंग अंग अंचरन धारै तौ मथवा संवारै हो,
मइया कोरवा मां लइके बलकवा चकित चुमकारै हो·
धवल कमल कै सेजरिया पहुंच भट टारै हो।

[illegible] वेगि हन्सा बुलावै पीठि बइठावै हो,
मुला तबहूं न मानै पुतवा न दुधवा निहारै हो।

तबहूं न मानै बलकवा तौ वीणा उठावै हो,
मइया तार तार झनकारै ललन मन भावै हो।

पहिले तार स्वर बोलै तौ दुसरे मा नवरस हो,
तहां तिसरे तार और छन्द तौ चउथे मा सरबस हो।

यहि विधि माधव दास व्यास कहवावै हो,
सब सिद्ध करै सेवकाई रिद्ध घर आवै हो।

हरिश्चन्द्र पाण्डेय 'सरल'

मरुथल

मरुथल बीच बसा जब गांव,
फिर कस बगिया फिर कस छांव?

हारी जिनगी मौत न हारी,
जनम तौ यहि जग यक लाचारी,

कस कुटिया कस रंग महलिया
मउति न देखै ठांव कुठांव।।
मरुथल बीच बसा जब गांव।

तट सब ठाढ़े कोउ नहि साथी,
लागय तब से हारी बादी।
खेवनहार धार संग भै जब,
फिर कस पुरवा कस पछियांव।।
मरुथल बीच बसा जब गांव।

सोनेउ कइ पिंजरा है पिंजरा,
परबस सरबस पस जस ठिकरा।
गति पै बंधन होंठ सिये जब,
फिर कस कीरत फिर कस नांव।।
मरुथल बीच बसा जब गांव।

महाकवि पं. रूपनरायन त्रिपाठी

सुनि लऽ अरजिया हमार

हथवा मां फूल, नयनवा मा विनती,
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

देहियां कै दियना, परनवां कै बाती
झिलमिल-झिलमिल बरै सारी राती।
तबहूं न कहै अन्हियार हो गंगाजी,
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

नगर पराया डगर अनजानी
मनवां मा अगिनि, नयनवा मां पानी।
कब मिली अचरा तोहार, हो गंगा जी
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

केहू नाही, केहुके विपतिया कै साथी
दिनवां कै साथी न, रतिया कै साथी।
सुनै केहु न केहु क गुहार, हो गंगा जी
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

काउ कही गुलरी क फूल भये सुखवा
मनई न बूझै, मनई क दुखवा।
छन-छन धोखवा कै मार, हो गंगा जी
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

सीत-घाम बरखा में बरहो महिनवां
राति-दिन एक करै, खुनवां पसिनवां।
तबौ रहै देहियां उघार, हो गंगाजी
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

पिठिया पै बोझ लिहे, पेटवा मां भुखिया
दिन राति रोटी बदे, जूझा करै दुखिया।
तबहूं न मिलत अहार, हो गंगा जी
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

पियरी चढ़ावै तोहइ, गउवां कै गोरिया
छीछिल पनियां मा खेलै छपकोरिया।
धरती कऽ राज कुमार हो गंगा जी
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

जाने कब आखि खोलि अन्हरे निहरिहै
जाने कब गउवां क दिनवां बहुरि हैं।
कब मिली एनका अहार हो गंगा जी
सुनि लऽ अरजिया हमार हो गंगा जी।

डॉ. श्याम तिवारी

पँचरँग बरवै

धारि सहज बिसवसवा मन धरि धीर
जिय करु हिय भरु सिय-पिय सिरि ुबीर

कम्मर चहै पितम्मर पहिरउ थान
किहें बयम्मर केऊ त अम्मर भा न

मनबसिया कै बँसिया असि रगिआय
सखिया, बसि निरबसिया सँसिया जाय

देख्यों नैना जबसे मैना, मोर
देखी ऐना देखि परै मुँह तोर

भउजी-भइया भल अस मान समान
जस पुनवाँसी परिवा तस परधान

लागी पहिल लगनिया लहरा लेय
हँसि कै लागै रोवै फिर हँसि देय

परी नजरि मुँहु दुलहिनि परछत जाय
छबि की चोन्हीं ससुई गै चउन्हाय

चोटहिल-घइहल होइ कै पीर सिरात
कलबलात फाटे पर चित दिन-रात

बौर-मौर दै सतदल आसन कीन
बर-बसंत बनसपतीं सेन्हुर दीन

राम बरें तजि दीन्हें घर सुख जोय
लछिमन जइसन भइया भागन होय

जेहि दियरी न नेह कै निरमल धारि
तेकाँ कस अन्हिअरिया क़स उजियारि

राहि अगोरइ भर दिन दुबुकि दुवार
रोवइ साँझ छोहरिया छाड़ि भोंकार

पर दुखं-सुख आपन जे कइकै जान
होय सुजन-सग तौ जग सरग समान

गोइँया, रँग जस धोइया छैल-छबील
सैंया मोछारोइँया सील-लजील

हलुक-उमिरिया-देहिंया नरम उठानि
छोहरि कै गै अबौ न भोहर-बानि

नैहर छूँछे सासुर भ़जा छोर
रोजै दाल्हइ दुलहा दाइजखोर

हिरकि-थिरकि लरिकउना लग लुरिआय
लहचिचिरा अस चबदि अँचरवा जाय

ननदि छुलाछन सोरहौ करा कुँवारि
टोला भर का आवैं टोना मारि

बड़ी बतूनी बाटइ बहु बतुआय
बड़े बाप कै बिटिया बहँकति बाय

परचि लहकि बरि जारै तन-धन प्रान
अगन-लगन कै लागब एक समान

खन खिरकीं खन दुइदर देखन झाँकि
जाइ कटइबिउ ननदी ससुरें नाकि

गोतिन, बनै लिहि पिय कस लइ चेर
तुरतुराव का हमसें साँझ-सबेर

परत सेन्हुरवा माथें छबि-हिल कोर
देहिंया का, परछहिंया होय अँजोर

बोलत तउलि बुलुकिया डोलत बात
सोन मछरिया मुलुकइ रूप परात

चन[illegible]न [illegible]या मन भा तन पतझार
बनै बेलल्ली बरिया बहें बयार

धना, न चढु सहजनवा आररि डारि
नाहित टूटें हसिहैं घर-घर नारि

पापिउ पिउ बिन तरसै तैसै रहि नहि जाय
जइसै अगिया जेसें घर दहि जाय

जात न छेंकेसि बाति न कीन्हेसि कान
पइयौं परे न छाड़ेसि अस कस मान

डारि डकैती कीन्हें सब धन पार
रपटें सक कस करी कि थानेदार

गड़ही पायन लठइत लिहिस छेकाय
दुइ दिन भुँइधर रहिकै गयन अघाय

हिन्नू-तुरुक देस कै बाटिन नींव
राम-भरत होइहैं न बालि-सुगरीव

उसकायू ना बतिया कपटी खेल
धना, दियरिया कै जरि-बरि गै तेल

कहै सुगनवा राखिउ मोंहि डँउकाय
देय कहिउ फर लीन्हिउ फिर लुकुवाय

सरगौ कै सुख लेवै नाहीं जाब
सजना, तोहरे अँगना रहब जुड़ाब

बलम बदलि जे चाहै ते लइ लेय
बदलौनी बदलें मोहिं बलुक न देय

सेज खेल महँ मुरुकी चुरिया लाख
टूटन लइ पिय बूझै जूस कि ताख

कोरवर कागदु जइसन चटक लिलार
चुटकि सेनुरवा लिखिगै करम हमार

खीस काढ़ि अरदासै चुप लजिआय
रँडुवा कै दुखा मोंसे देखि न जाय

चलति चकरिया जइसन सासुक चालि
एक चना हम कीनेसि दरि दुइ दालि

— डॉ. त्रिभुवन नाथ शर्मा 'मधु'

कुटुम हरियान रही

जो ग्राहौ वहिनि! यू ध्यान, कुटुम हरियान रही।

डोलिया से जब जायो उतारी, नैहर से पहुंच्या ससुरारी,
तौ घर बार रसोई चूल्हा, चौका बरतन लिह्यो निहारी।
है कौन कहाँ सामान, कुटुम हरियान रही। जो0।।

सासु-ससुर, देवर-देवरानी, ननद-परोसिन, जेठ-जेठानी,
नौकर-चाकर, लरिका-बिटिया, दइकै ध्यान लिह्यो पहिचानी।
तब किह्यो उचित सनमान, कुटुम हरियान रही। जो0।।

पति देवता का तुम पतियायो, अतनी बात न मुलु बिसरायो,
उनकै गुन-औगुन का डटि कै, धीरे-धीरे पता लगायो।
वहकै ना मुला कुछ ज्ञान, कुटुम हरियान रही। जो0।।

जब भगवान दया दरसावैं, कुल कुटुम्ब कै बेलि बढ़ावैं,
बाल गोपाल सलोने लोने, जब किलकति कनिया मा आवैं।
तब जान्यो कि आवा विहान, कुटुम हरियान रही। जो0।।

जब या बेलि बढ़ै सुखदाई, तब इहका सिरज्यो मन लाई,
कतन्यो केन्द्र खुले सरकारी, उइ सुविधा द्याहैं मन भाई।
करिहैं अनुकूल निदान, कुटुम हरियान रही। जो0।।

है नियोजिका योग्य सुनारीं, इनका हुकुम मिला सरकारी,
उइ तुमका सब जुगुति बतइहैं, तब होई परिवार सुखारी।
इनसे होई कल्यान, कुटुम हरियान रही। जो0।।

ई नियोजिका घर-घर अइहैं, पालन पोसन रीति सिखइहैं,
विद्या-बुद्धि बचत पइसन कै, सहजै मां दम्पति कइ पइहैं।
होई आदर्स महान, कुटुम हरियान रही। जो0।।

असविन्द द्विवेदी

गाँधी बाबा

गाँधी कै का करी बड़ाई गाँधी तौ अवतारी भैया।
करै वन्दना राष्ट्रपिता कहि आज सबै नर-नारी भैया।।

जानी केतना सौ सालन से भारत भूमि गुलाम रही।
तानाशाही रही विदेशी इज्जति तक नीलाम रही।।
वही समय मा गाँधी बाबा प्रकट पोरबन्दर मा होइके।
अन्धकार सब दूर भगाये बन के जस ऊँजियारी भैया।
गाँधी कै का करी बड़ाई गाँधी तौ अवतारी भैया।।

जेहकी त्याग-तपस्या के संग बढ़ी कीर्ति कै आँधी।
कैसे मानी मजबूरी कै नाव महात्मा गाँधी।।
उनके पीछे देश चल परा ऐसा जादूगर वे,
चर्खा चला तौ बन्द नहीं भा सब भे खद्दरधारी भैया।
गाँधी कै का करी बड़ाई गाँधी तौ अवतारी भैया।।

पढ़े लिखै मा ढील रहे मुल प्रतिभा बड़ी अनोखी।
गीता ग्याता अनुयायी संग बहुत बड़ा सन्तोषी।।
संयम और सादगी कै तौ रहे फुरैमा मूरति,
उनका पैदा कइकें गर्वित भै धरती महतारी भैया।
गाँधी कै का करी बड़ाई गाँधी तौ अवतारी भैया।।

बड़ा हिम्मती रहें शुरू से सच्ची राह बतायें।
मुक्त केहें भारत माता का शान्ति मार्ग अपनायें।।
सत्यवादिता हरिश्चन्द्र-नाटक के देखे आयी,
श्रवण कुमार कथा का पढ़के भें पितुमात पुजारी भैया।।

जब तक धरती आसमान बा नभ मा बाटें तारा।
तब तक अमर अहैं गाँधी जी जस गंगा कै धारा।।
आदर औ सम्मान समर्पित करत रहे ई देश,
अमर भवा अक्टूबर द्विय कै महिमा भारी भैया।
गाँधी कै का करी बड़ाई गाँधी तौ अवतारी भैया।।
करै वन्दना राष्ट्रपिता कहि आज सबै नर-नारी भैया।।

डॉ. ब्रजेन्द्र अवस्थी

अवधी बानी

ठुमकि-ठुमुकि राम नाचैं जौनि भाषा बोलि
प्यारी रही औध की औ रानी-पटरानी की,
सारदा की कोखि सेने ज्यहिका जलमु भवा
ज्यहिमाँ मिठास गंगा-सरजू के पानी की;
जी माँ राम का चरित्रु गाइनि गोसाई बाबा
साखी मिली जी का बिस्वनाथ वरदानी की,
मनु का दिया जराइ, श्रद्धा का सनेहु भरि
आरती उतारौं वहे अवधी की बानी की।

वैसे तो समूची धरती ते है पियारु हमैं
सब ही ते ढेर मुला प्यारी जन्मभूमि है,

न्यारा प्रेमु, न्यारा अपनामनु मिला है जहाँ
लोक-परलोकन ते न्यारी जन्मभूमि है;
जन्मभूमि का दुलारु भूलि कबहूँ ना मिली
प्रानन ते बढ़िके दुलारी जन्मभूमि है,
उपमा माँ, सुषमा माँ, गरिमा माँ, महिमा माँ,
सरगौ ते उत्तम हमारी जन्मभूमि है।

बानी बरदानी ऐसि लेखनी माँ सक्ति भरौ
ध्यानु जहाँ जाइ कोहू के न अनुमान का,
कविता माँ सिद्धि औ प्रसिद्ध की समृद्धि देउ
तप-फलु जैस पसरा है अंसुमान का;
मोरे स्वर लोक की मनुजता की रच्छा करैं
मन माँ जगै न भाउ तनिकौ गुमान का,
आसा-सियाराम जी ते पारसु परोसा मिलै.
पूरा है भरोसा महावीर हनुमान का।

अवधी माँ भये हैं हजारन सुकवि
जौन बानी पाइ अवध-धरा की पहिचान हैं,
कुछ करुना माँ, कुछ हास्य-व्यंग्य माँ प्रवीन
कुछ ओज, कुछ लोकगीत के सुजान है;
कुछ कवि अवध के आगे पूरे देस मैहाँ
प्रतिभा ते भाषा का बढ़ाइ रहे मान हैं,
मुल बिस्वकवि तुलसी-परम्परा माँ श्रेष्ठ
राष्ट्रकवि बंसीधर सुकुल महान हैं।

विकल साकेती

ब्राह्मण पुराण

माई पूत कुम्भ माँ त्रिवेनी नहाय चले
आइ गयी भीर बूढ़ा चली गई तरका
रोवत मूड़ पीटत लरिकऊ कैसो घरे आये
बहुत पछताने जौन माने नाय हरका
माई कै काम ठाने दाग दिहे घंट बान्हें

सुधे के दिने वे खियाये गाँव भरका
राम जी कै माया तकदीर फूटी बभनन कै
तेरही के दिन बूढ़ा लौटि आयी घर का।

सास बोली बहुअर से खटिया बिछाय देउ
तुरतै वलरि जैहें अइहैं जब खाइकै
सास कै जब बात सुनी बहुअर अफसोस किहीं
हरे भगवान कैसन घरे परे आइकै
सांस से वो बोली की कवन रवाज इहाँ
कौन बखान नैहरे करब जाइकै
हमरे घर वाले जहाँ जाये न्योता खाय
वही से वै आवत रहे खटिया पै उठाइके।

बाभन यदि धरती कै देवता बताये जाये
इनके महत्व वेद शास्त्र में बखाना है,
सबके दुखन कै हाल लिखी इनके पत्रा मां
सरग नरक सब इनकै पहिचाना है
मेवा पकवान पूड़ी मिठाई खीर,
जेका जौन पुरखन के पास पहुचाना है
बाभन खिलाओ सब पुरखन को मिलि जाई
बभनन कै पेट सुरपुर कै डाकखाना हैं।

डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप'

मंत्री शिक्षा क्यार

पूरा घरु खुक्ख कइ आयेउ,
तब बी.ए. की डिगरी लायेउ,
मिली न चाकरी,
कहति हौ का करी?

तुम ते नीक नँगलू हरवाहे का लरिका,
घरु न फरिका,

पढ़ा भागवति न गीता,
जलमु बरधन मा बीता।

मुला होइगा-
शिक्षा के दफ्तर मा संतरी।
आवा चुनाव
देखिसि आउ न ताउ
वहि मा कूदि परा,
वाट पाइस ढ्यार,
होइगा मंत्री सिच्छा क्यार।

डॉ. श्रीपाल सिंह क्षेम

मदमाता पपिहरा

मदमाता पपिहरा बोलइ रे, मदमाता पपिहरा।
बागे-बगीचा बहइ पुरवाई,
बँसवा के बाहीं उठइ अँगराई।
निमियां के बेनिया डोलइ रे, मदमाता पपि..

पूरबू के राहे बदरिया आवइ,
साँझ-सकारे दुअरिया गावइ।
गाँठि हिया के खोलइ रे, मदमाता पपि0

बदरा के छाही उड़इ लागे कजरा,
बेला के बाहीं फुलइ लागे गजरा।
तिरुन-तिरुन तन तोलइ रे, मदमाता पपि...

बुनियाँ के घूघुर बजइ जागे अंगना,
बीजुरि कलइयाँ चमकि रहे कँगना।
अँगुर-अँगुर मोती डोलइ रे, मदमाता पपि...

रतिया के भावइ सघन अन्हिअरिया,
दिनवा अकासे उड़ई हरियरिया।
कोइलरि के 'कुहू' अनमोलइ रे, मदमाता पपि..

सपनन के पांती बहइ मोरे पंखिया,
अंसुअन के ओरी चुवइ मोरे अँखियां।
बिरही परनवां हौलइ रे, मदमाता पपि0

दूधनाथ शर्मा 'श्रीश'

अँजोरिया म गाँव

बड़ा नीक लागै अँजोरिया म गाँव।

धीरे धीरे उतरि के चली है अंजोरिया, अस नीक लागै जैसे सजल सुगोरिया।
चली आवै धीरे धीरे धइ धइ पांव।।

नखत की नाही रात खिली रातरानी, डंड़वा कै मेंहदी जहिउ अरधानी।
गमं गम गमकै चलै पछियांव।।

निरमल जलवा से भरलि पोखरिया, बइठ अंजोरिया खेलै छपकोरिया।
बिहंसि कुमुदिया निहारइ ठांव-ठांव।।

दिनवां कै तपन बुझावा ला अंजोरिया, ननदी खिझावै बैठी भउजी के दुवरिया।
लेइ लेइ भइया के सारै कै नांव।।

ऐसी अंजोरिया में रधिया कै मनई, संगे-संगे बइठ के निकारे रहै सनई।
सहज सनेहिया में नाहीं पेंच दांव।।

निकरी अंजोरिया कै देखिकै किसनवां, नाहीं जानै रतिया औ जानै न बिहनवां।
हरवा बयल लेइके करै दाहिन बांव।।

अइसी अंजोरिया से भरलि खेतरिया, मौज उड़ावै बैठे शम्भु कै सवरिया।
भैंरो कै सवारी 'श्रीश' करइ हांव-हांव।।

डॉ. विद्या विन्दु सिंह

गउवाँ गिरउवाँ

गउवां गिरउवां सहर भये बाबा।
सहर भये बाबा जहर भये बाबा।।

कागा न बोलै न बाचैं सगुनवां,
बइठै मुड़ेरिया न उतरैं अंगनवां।
दूध भात खोरवा नोहर भये बाबा। गउवां......

उड़ि गयीं कोइलरि, उजरि गयी बरिया,
अंखिया म नाचै सब खेतवा कियरिया।
नये नये देवता ऊपर भये बाबा। गउवां......

नाहीं आये हरदी नेवत लिहे बभना,
टूटि गयीं निनियां न पूर भये सपना।
मन जइसे खुंटिया कै हर भये बाबा। गउवां......

छूटि गयीं बाबा तुहार चौपरिया,
निबिया, जमुनिया औ सखी सहेलरिया।
फुलवा करेजवा बजर भये बाबा। गउवां......

महुवा के फूल चुवै डहके परसवा,
रोज रोज गोरिया निहारै अकसवा।
चढ़तै चइतवा दुसर भये बाबा। गउवां......

सोन्ह सोन्ह महकै असढ़वा कै माटी,
बजर करेजवा अकेल दिन काटी।
कहहीं के गोंइड़ा ऊसर भये बाबा। गउवां......

मनवै म महकै, कुवरवा कै रतिया,
अंगना कै चुटकी, ओसरवा कै बतिया।
सब सुख यहर वहर भये बाबा। गउवां......

कइसे केहू रहिया बचाइ चले बाबा,
नेहिया के दियना लेसाइ चले बाबा।
नये नये चोरवा जबर भये बाबा। गउवां......

जुमई खाँ आजाद

कथरी

कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।
लोटइ लरिका सयान सारा, परिवार बेचारा कथरी मा।।

एतनी अनमोल अहा कथरी, ना मोल बिकानू हटिया मा।
मुल तोहका देखा घरे घरे, सब जने बिछाये खटिया मा।।

तोहरी गोदिया मा लोटि पोटि, हम खेलि कूदि बलवान भये।
हमरे पुरखे तोहरे बल पर, गाँधी गौतम भगवान भये।।

तुलसी, कबीर, जायसी, सूर, सब रहे दबाये कखरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

जेस फुलवइ कुरबानी दइकै, आपन देहियाँ नथवाइ देई।
दूसरे की गटई की खातिर, आपन गटई लटकाइ देई।।

वइसे तू हमरे बरे फुरइ, सुइया डोरवा से प्यार किहू।
मन मरा नहीं तन छेदि उठा, खुब दीनन कै उपकार किहू।।

बस यही से महिमा बढ़ति अहै, कथरी तोहारि यहि नगरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

तू विपति के साथे अहा पूर, आराम तुहीं पहुंचावाथू।
भूखे नंगे लरिकिन का, अपनी गोदिया तुहीं सोआवाथू।।

साहस तोहरे अन्दर यतना, बदमास चोर केउ पूछै ना।
लुटि जाइ खजाना माल भलै, मुल तोहका केहुउइ लूटै ना।।

राना के सथवा गजब रहिउ, तू जंगल वाली कोठरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

भिलनी की कुटिया कै शोभा, बन बीचे कबउ बढ़ाइउ तू।
अपनी गोदिया भगवान राम का, जूठे बेर खिलाइउ तू।।

दिन रात सुदामा के सथवा, मड़ई मा किहिउ तपस्या तू।
सथवा मा गइउ द्वारिकापुर, सारी हल किहिउ समस्या तू।।

भगवान कृष्न का परसाइउ, तू साग विदुर घर पतरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

मक्के से गइउ मदीना तू, उपदेश सुनइ पैगम्बर कै।
दुनिया मा एक अहइ ईश्वर, जरि खोदिउ तू आडम्बर कै।।

ईसा, मूसा दर दर भटके, मुल सथवा सथवा लगी रहिउ।
उन कर उपदेश सुनावइ का, तू अगवा अगवा भगी रहिउ।।

अम्बिया, औलिया अपनायेन, मन रमा रहा खुब गुदरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

तू लाल बहादुर की सेवा, कइके दिल्ली पहुँचाइ दिहिउ।
गुदरिव मा लाल छिपे कितने, ई दुनिया का दिखलाइ दिहिउ।।

अब्दुल हमीद का सबक तुहीं कुर्बानी वाला देहे रहिउ।
का तोहरे सुधि नाहीं बाटै, जब अपनी गोदिया लेहे रहिउ।।

ओनकर माई जब दरति रही, दलिया घर वाली चकरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

एतना गुन तोहरे भरा अहै, तब काहे ना दुनिया पूंछइ।
काहे ना घर कै बउहरियौ, दिन राति तुहैं झारइ पोछैं।।

पोरखातन से हमरे घर मा, खुब किरपा तोहरी बनी अहै।
संझवा की तोहरे बरे रोज, खुब छीना झपटी ठनी रहइ।।

कुछ दिनइ रहे से दुलहनियें, लइकैं भागैं अन्धन्कोपरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

समता समाज की सेवा मा, आपन जीवन तू दान दिहिउ।
बैठाइउ बगल गरीबन का, तिनकउ ·. न अपमान किहिउ।।

दुखिया मजूर की नइया के, बस असिल खेवइया तुहीं अहिउ।
"आजाद" कहइँ भव सागर से, वहि पार लगइया तुहीं अहिउ।।

जब छोड़ि चला संसार दीन, तब साथ बधिव तू ठठरी मा।
कथरी तोहार गुन ऊ जानइ, जे करइ गुजारा कथरी मा।।

आचार्य विश्वनाथ पाठक

घर कै कथा

जइसे नानी घर से निकरीं लइके संझा बाती।
तइसे लोटै लाग पहुंचि के दुनौ गोड़ पै नाती।।
मुंह चीन्हें पै पलक ताल भे नयना होइगा कुइयाँ।
दियना छूटि परा हाथे से आँचर गिरिगा भुइयाँ।।

बइठि गई जुरतै धरती पै बन्ही टूटिगै मेड़ी।
ऊपर भीजै कबि कै मुड़वा तर नानी कै एड़ी।।
जइसे आन्हर आंखि लहै अउ रंक परा धन पावै।
वइसे मरि कै पूत रांड़ कै लउटि सरग से आवै।।

उही खानि नानी के जिउ मां उपजा हर्ष अनोखा।
ब्रम्हा लिहे तराजू तउलैं तबहूं जाय न जोखा।।
धरै करेजा मां अपने की जुतरी मां लुकवावै।
की घुलि कै मिलि जायं एक मां हाली सोचि न पावै।।
बरबस बहियां पकरि खींचि कै बइठाई भरि कोरा।
एक एक आखर पै मुंह से रस कै गिरै कटोरा।।

हाड़े-हाड़े वन कै रिन बा मांसु प्रीति मां सानी।
वन कै अंस मिला खूने मां जस दूधे मां पानी।।
बिना बयरिया पालि भरति ना नाव रहित पौडाई।
नानी देतीं जौ न छांह तौ कबि न करत कबिताई।।

लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक'

आवा चुनाव

है गली-गली माँ काँव-काँव
आवा चुनाव, आवा चुनाव।

जी पाँच साल तक उड़ति रहे, उइ लिहे सहाबा घूमति हैं,
जिनके दरसन का तरसि गयेन, उइ घर-घर देहरी चूमति हैं।
जी आसमान पर चढ़े रहैं, उइ सब धरती पर आये हैं,
हमरी खातिन उइ कागद माँ फिरि 'रामराज' लिखि लाये हैं।।
ई मँहगाई के सागर माँ कैसन कागद की चली नाव।

धरि खात रहैं जी कूकुर अस, उनकी बोली माँ फूल झरैं,
कौंसिल माँ जी जूता फेंकिनि, उइ टोपी अपन उतारि धरैं।
जहँ जुलुम बढ़ा, अन्याव चलै, जहँ फैली चोर बजारी है,
जहँ डाका-कतल धरम होइगा, खुलि घूमत भ्रष्टाचारी हैं।
नेतन कै चरनन की रजतें अब सरगु बनी ऊ अपन गाँव।।

सब आपन मुँह आपन करनी करि रहे न तनिकौ लाज सरम,
कुर्सी-गद्दी-पद के खातिन सबके सब दीन्हेनि बोंच धरम,
कहुँ हिन्दी का गुनगान करैं, कहुँ उर्दू की जयकार करैं,
जैसन जमाति समुहे दुयाखैं, वैसन वहिका सतकार करैं,
गुर्रायँ कबौं म्याऊँ ब्वालैं, तड़पैं, झड़पैं बनिकै बिलाव।।

मन्दिर-मसजिद-गुरद्वारा माँ कबहूँ सब मिलि अरदास करैं,
कबहूँ बिरोध माँ खड़े होयँ, कबहूँ लै पच्छु उपास करैं,
है सबै धरम निरपेच्छ, तबौ ई धरम-धरम चिल्लाय रहे,
सब धरम सिखावैं सान्तिमन्त्र, ई क्रान्ति दूत बनि आय रहे,
ई रोजु मुखौटा बदलति हैं, इनकै रंग-बदलू हाव भाव।।

कुछु दल बदलू, कुछु दल-निकलू, कुछु गिरि-सँभलू अवसरवादी,
कुछु मेवा खाय भये चीकन, कुछु परहै वादन कै बादी,
सब पर चुनाव का चढ़ा भूतु, सब सेवा-व्रत के हैं आदी,
सब आपन दाँव चलाइ रहे, होइ रही देस कै बरबादी,
जब चोरु साहु का रूपु धरै, तब कस धरती पर रही न्याव।।

लवकुश दीक्षित

सुनु मोरे सजना

उपजै फसिलि भरै घरु भरै अँगना।
सुनु मोरे सजना तुमहें मोरा गहना।।

बनी रहै पुरिखन की देहरी बनी रहैं धरती मइया,
बनी रहै बैलन की जोड़ी बनी रहै भँइसी गइया।
बने रहैं ई हाथ रतन और बनी रहै बड़की तलिया,
बनी रहैं सन्तानै अपनी किरपा राखैं पलवइया।।

जुग जुग जियौ हो नँनदिया के बिरना।
तुम मोरे झुमका तुमहिं मोरे कँगना। सुनु मोरे सजना....

बने रहैं ई ख्यात रतन ख्यातन की माटी बनी रहै,
बनी रहै यह राम मड़इया औ परिपाटी बनी रहै।
सकुन्तला की कथा सुनउँ उइ मुनि वह घाटी बनी रहै,

धरती की रानी सँग सँग फुलवा के गहना।
तोरे घर जलमै भरत जइसे ललना। सुनु मोरे सजना....

गहना कस ब्यालैं जस ब्यालैं हरम लाल की किलकारी,
ई गहनन पर बलि बलि जइहै दुयास भरे की महतारी।
फूलइ फलइ मोरि बगिया फूलन ते महकै फुलवारी,
ठैंगरे पर इँदरासनु झूलै ई गहनन ते बिधि हारी।

मइया केरी अँखियां झुलावै सुखु झुलना।
दासी बनी लछिमी बहारैं हियाँ अँगना। सुनु मोरे सजना....

बैजनाथ प्रसाद शुक्ल 'भव्य'

सुधि गाँव के

दबा दबान रहे जे पिछरा, तेहु घर अब पतलून।
बढ़ि गै सान सौक लोगन माँ, खावैं दुइनौं जून।।

मिला सुराज बढ़ी उजरौटी, केतनी मिली सुतारि।
मिटिगै जमीदार रजवाड़ै, मिटिगै हरी बेग्गरि।।

एतना तौ सब नीकै बाटै, मुला इमान बिकान।
नोचैं गाँसैं गाँव मँ अब्बौ, लेखपाल परधान।।

केकै धन लेइ लेई चाल से, इहै बढ़ा अब रोग।
कउनिउ भाँति भरैं घर आपन, मिलै भोग पै भोग।।

रहा बड़ा परिवार पहिल तौ, बिखरि क भा टुक-टूक।
लै लै मेहरि टरि गै पुतवै, घर छोड़ेन निस्तूक।।

बूढ़ा बूढ़ी परे अकेले, झंखैं केउ न बोलार।
देहियाँ जर्जर खाँसी खुर्रा, अहै न कोउ देखवार।।

एक चाकरी रहिगै उद्दिम, पढ़ि पढ़ि भये सयान।
डिगरी पायेन, दफ्तर झाँकैं, लगै न ठाँव ठेकान।।

बुझा रहै मन भरी जवानी, करिहैं कौन य काम।
मुलुक धँसत बा बिगरत बाटै, मेहनत इन्हैं हराम।।

गउवाँ वाले सौ माँ अस्सी, का जानैं ई देस।
दबा जात बा रिन के बोझन, अहै बड़ै अन्देस।।

हाथ पसारब लंगी मारब, छक्का पंजा घूस।
किहे जात बा दिन दिन दूबर, बढ़िगै हिंसक हूस।।

बचे केसस मरजाद जहाँ पै, हाकिम ना निरलोभ।
जहाँ नियाव बड़ै खर्चीला, नित नंगन से छोभ।।

बाँटि बाँटि रिन रिनिहा बनयेन, सबकै माँझा ढील।
के येस बा जे रिन ना चाहै, तजि कै लाज औ सील।।

कर के ऊपर कर राखै कै, रही पुरानी लीकि।
अब कर तर कर सबै बढ़ावै, जिनगी होइगै फीकि।।

जब ले जिनगी चलै देत नित, देब परै ना धीम।
बिना दिहे छन एक न भावै, कहिगै इहै 'रहीम'।।

काउ कही पुरखन कै बानी, केउ न देय अब कान।
जौन बड़ा सबसे यहि जग माँ, जोगवा उहै इमान।।

राम अकबाल त्रिपाठी 'अनजान'

भारत हमार

भारत हमार यहि जगती महँ सिरताज अहइ।
दुनियाँ सिहाइ, मुल हमका यहि पर नाज अहइ।

केउ हमइँ बतावइ, अइसन प्रकृति कहाँ बाटइ?
धन-धान, अनाज, रतन, खनिजन से घर पाटइ।
बहु रंग बिरँगी फूल खिलइँ महकइ धरती,
तितली नाचइ मधुबन महँ मधुकर राज अहइ।

सभ्यता-संस्कीरति जग महँ संरनाम बहुत,
'सर्वे भवन्तु सुखिनः' छवि ललित ललाम बहुत।
सिद्धान्त अहिंसा-सन्त, सनेह जगत जाहिर,
मनई कै सेवा करइ 'गरीब नेवाज' अहइ।

फल देस-देस महँ मिलइँ मिठास कहाँ अइसन?
रस भरा मधुर फल आम देस महँ बा जइसन।
भारत गै माटी गंध भरी अस गुनागरी
यहि के कन-कन माधुरी छटा-छवि छाज अहइ।

एस नरम-गरम, मनमाफिक मउसम अउर कहाँ?
एस गरमी, बरखा, सरदी, अनुपम अउर कहाँ?
सावन महँ कजरी, मधुर मल्हार, झरइ झलुआ
फागुन महँ रँगा अबीर-गुलाल समाज अहइ।

गंगा-जमुना, सुरसती, सिन्धु रसधार बहइ,
अमरित पिआइ के सरजू पाप-पहार दहइ।
श्रद्धा, अटूट बिसवास कि संकर पाथर महँ
भारत कै मुकुट हिमालै पर्वतराज अहइ।

बन-पर्वत, निर्झर, नार-नदी, घाटी गमकइ,
भुइँ परइ दौंगरा, पहिल-पहिल माटी महँकइ।
दूधिया जुन्हइया आँखि मिचउँनी खेल करइ
भारत भुइँ उतरा ब्रह्म प्रकृति के ब्याज अहइ।

कन-कन 'अनजान' परान रूप भगवान लगइ,
ईमान-धरम, उपकार, दया, कल्यान पगइ।
जुग-जुग से हम सब यहि पर गरब-गुमान करी
एकरे आगे न सरग कइ कवनो काज अहइ।

डॉ. गणेशदत्त सारस्वत

भीरुता भगावौ आय

बीर हनुमान आवौ, देर न लगावौ, सोई-
आर्य जाति कैहाँ पाठ पौरुष पढ़ावौ आय।
ख्वावा स्वाभिमान, आन-बान-सान का न लेस,
सेस रहा क्लेस, दुःख दीनता नसावौ आय।

क्रूर कुबिचारन के गढ़ का ढहाय देउ,
सूरबीर प्रनबीर साहसी बनावौ आय।
देसभक्ति, अनुरक्ति आय कै जगावौ बेगि,
राम क्यार संबल दै भीरुता भगावौ आय।।

स्वारथ मा साने मनमाने करैं काम जौनु,
जिनका न कौल फेल दाम के बने गुलाम।
घोर भ्रष्टाचार अनाचार के प्रनेता बनि,
कुरसी की मेनका रिझाय रहे आठौ जाम।

बैरिन के हाथन बिकाने सकुचाने नाहिं,
जायँ जहाँ-जहाँ करैं भारत का बदनाम।
ऐसे देसद्रोहिन का सबक सिखावौ आय,
झपटि-दपटि काम उनका करौ तमाम।।

रावरी दया ते छल-छन्द होयँ छार-छार,
भूलि जाय राग-द्वेष आवै ऐस बदलाव।
दूरि अलगाव होय, कौनौ न दुख होय,
हिलिमिलि रहैं सब, सबनि का होय चाव।

बानी कटुता की कबौं कोऊ न उचारै कहूं
सुद्ध आचरन दिखरावै निज परभाव।
लोप होय दुरभाव, ऐस न रहै अभाव,
धरती निहाल होय, फूलै-फरै सद्भाव।।

काका बैसवारी

धरती

धरती के साज-सिंगार देख,
शरमाये बिजुरिया बादर से।
धीर-धीरे चले पुरवा बयार देख,
शरमाये बिजुरिया बादर से।

माथे पर चन्द्र सुघर चमके,
आँखिन मा इन्द्रधनुष दमके।
कश्मीरी छटा लिलार देख,
शरमाये बिजुरिया बादर से।।

गरे पहिरे हार सुघर सुतिया,
जस गिरी के हाथन मा नदिया।
जहँ चलै मचलती धार देख,
शरमाये बिजुरिया बादर से।।

माटी पर हरियारी छहरी
है पहिरे सारी हरी-हरी।
चमकीली सुघर किनार देख
शरमाये बिजुरिया बादर से।।

मन राम श्याम का वृन्दावन
जहँ मोर-मोरइलन का नर्तन।
परवना सतरंगी सँवार देख,
शरमाये बिजुरिया बादर से।।

बिछुवा-सा कटि में विन्ध्यांचल,
रामेश्वर मा बाजै पायल।
रहा सागर चरन पखार देख,
शरमाये बिजुरिया बादर से।।

ओंकार नाथ उपाध्याय

कजली

धूरि धोवइ सरगवा से घन आये,
हमरे सजन आये ना।

मेड़ डाण तोरि तोरि, खोरि नरवा बहारि,
झूरि नदी नाव बइठन उठन आये।। हमरे....

छोड़ि महल अटारी, पिया पपिहा पुकारी,
गोदइ गोदना छपरवा कइ तन आये।। हमरे....

गाँठि गाँठि अलसियान, पोर-पोर गुदगुदान।
भीज अँचरा म जेठऊ तपन आये।। हमरे....

मोर बगिया नचाइ, बोल मेघा सुनाइ।
गाँठि सनई अउ भेवइ क सन आये।। हमरे....

घेरि घटा घनघोर, मोरी अंखिया कइ कोर।
जरन जियरा के झरियाइ मन आये।। हमरे....

तरे तरवा अंगार, फिरे समया ओंकार।
बहुरि चित कइ दरारा मिलन आये।। हमरे....

सतीश आर्य

जनमैं से भगिया मा लिखि अँधेरिया

बीतै पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

मटिया मा लथपथ उघारे बदनवा, दब-दब जाय बोझवा से बचपनवा,
नान्हें-नान्हें हथवा से ढोवैं ईट गारा, उपरा से मुड़वा पे बरसै अंगारा,

नन्हवें मा इनके तो धंसिगै पुतरिया कमरिया होऽना,
बीते पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

कट-कट दतवा करै हो जब कापै, सारी-सारी रतिया बैठि केर तापैं,
बरखा में डस लेय नदिया नगिनिया, लेनदार तोलें रोज बिटिया-बहिनिया,

मथवा पे इनके लिखा है बस गरिया बेगरिया होऽना,
बीतै पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

हथवा मा हल और मुंडवा पे फफरी, अपनी जिनिगिया बितावे जस बकरी,
बड़-बड़े लोगवै ती दुहैं औ निचोरे, इनके पसिनवा से सोनवा बटोरैं,

देहियां मा इनके कटी है हर ओरिया-बेवरिया होऽना।
बीतैं पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

बड़की बखरिया कचहरी पठावै, सिर कै पगड़िया झार चली आवै,
कुरकी मा उठि जाय टुटही पलंगरी, दिन दुपहरिया मा लुटि जाय देहरी,

गिरवी धरी है देखो इनकी पंजरिया-पसुरिया होऽना,
बीतैं पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

रोज-रोज रिनकै मरोर कै सपनवा, जहां-तहां दिन कटै आन के अंगनवा,
कबहूं मिलै जो अनुदान सरकारी, बिचवैं मा गुटक लेंय अधिकारी,

आंखिया से टप-टप चुवै हर बेरिया बदरिया होऽना।
बीतैं पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

इनकी गरिबिया कै विकट कहानी, सूद औ बियाज से लदी है जिनगानी,
न्याय औ नियम केर फूटि गई पुतरी, इनकै तो गति जैसे रेतवा कै मछरी,

हाय मजबुरिया पे बिहंसै अटरिया-बखरिया होऽना।
बीतैं पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

कबौं रिरियाय कै कहै जो दुख झोपड़ी, मुंह से न निकरे कि खुल जाय खोपड़ी,
कबहूं सिवनवा क जाय जब धेरिया, अंचरा मा भरि-भरि लौटे अंधेरिया,

जब तब लुटि जाय सुधरी कै लोरिया-निंदरिया होऽना,
बितैं पथरै के बिचवा उमरिया होऽना।

डॉ. राधा पाण्डेय

गीत

बड़ा नीक लागै पिया तोरा गाँव रे।

खेतवन खेतवन झूमै फसिलिया
अमवा की डरिया पै बोलै कोयलिया
महुआ महकै अमवा गमकै सुख
देय निमिया कै छाँव रे।

उठि भिनुसारे केउ अँगना बहारै
पनिया क जाँय केउ घुँघटा निहारै
बजे न पयलिया केउ जानै न पावै
छोटकी धरै रहि रहि आपन पाँव रे।

होत संझैया गोरी दियना जरावै
अचरा ओढ़ाय कै संझौती मनावै
होत आधी रतिया ओसरवा निहारे
कब अइहैं पिया मोरे ठाँव रे।

तुलसी के बिरवा मा दियना जराइ
अँचरा पसारि हम सुरुजू मनाइ
हमरी उमरिया पिया तुहका लागै
बाढ़ै तोरे पुरखन कै नाँव रे।

निर्झर प्रतापगढ़ी

भाग बचउवा आँधी आय

भाग बचउवा आँधी आय।
गोरू हांकै चले नगेसर, खूँटा लाग परें भहराय।। भाग...

राजनीति कै अइसी आँधी, जेहमा उड़िगे राजिव गाँधी।
लंगड़-लूला जनम कै गादर, डँगरौ बर्धा गयेन तुराय।।
भाग बचउवा आँधी आय।

भा समाज कै बंटाधार, छुटुवै बनयें अलग जेंवार।
कहि द्या पंडित तेल लगावैं, भल बउरानें पूड़ी खाय।।
भाग बचउवा आँधी आय।

सुनिके बड़ी खुशीं भै भाय, चिंउटी चली प्रयाग नहाय।।
एक्कौ बिगहा चलै न पाई, एक छछूंदर दिहेस दबाय।
भाग बचउवा आँधी आय।

टुटहा एक्का, लंगड़ घोड़ी, अच्छी राम लगायेन जोड़ी।
बहुत सम्हरि के बइठा पंचौ, कौनी घरी कहां गिरि जाय।
भाग बचउवा आँधी आय।

वइसे भउजी वइसे भाय, आँधर मारै बहिर ओनाय।
रोजै रोज करै पंचायत, जेका बदा अहै ते खाय।।
भाग बचउवा आँधी आय।

केकर कइसे बाटै रोल, ढाँका-मूदा खुलिया पोल।
बजा नगाड़ा भै नौटंकी, ताऊ मुगरा लिहें उठाय।।
भाग बचउवा आँधी आय।

तीतिर बोलै तब बोफोर्स, कूकुर भूँकै तब बोफोर्स।
राजू बंद करा ई कोर्स, सुनत सुनत हम गये अघाय।।
भाग बचउवा आँधी आय!

आन के लोखड़ी सगुन बतावै, अपुवा कुकुरे से चिथवावै।
जब देखा तब खौ-खौ-खौ, धइके दाबें छिछिनी आय।।
भाग बचउवा आँधी आय।

कृष्णकान्त एकलव्य

इन्दिरा गांधी के प्रति

एक दिया जरतइ अन्हियारे में,
कोटि प्रकास कै रंजन होइ गये।
ज्योति से ज्योति जरी तरुनायी,
जग जग बन्दन-बन्दन होइ गये।।
पै न कटी हतभगिन रात,
मल्हारन के स्वर क्रन्दन होइ गये।
देस कै भालबनी, महतारी त,
लाल सुभाल कै चन्दन होइ गये।।

बाबा दिहे एकठे डेबरी, न त
तेल रहा, न रही इहाँ बाती।
साध रही मन में उजियारे क,
लेह जराइ जरी सँझवाती।।
लेकिन धन्य कहौ कुल जेकर,
कोख बनी इतिहास क पाती।
जेकर पुन्य फरइ पुतए,
बदरा चढ़ि रोज उड़इ दिन-राती।।

सक्ति पुरातन भक्ति बनी,
अभिव्यक्ति बनी जनमानस भोरे।
कर्म भगीरथ क पुरुषारथ,
बांटि के कीरति के न बटोरे।
छोरि लिहू उजियार अकासे क,
आखर-आखर अमृत बोरे।
तोरि लिहू तरई अंचरा भरि,
सत्य कही लिखि कागज कोरे।।

रोकि कहइं रथ सूरज क,
उजियार धरऽ कुलि गाउं की खोरी।
जागेनि वीर कहइं देखबइ,
अब के पगरी गिरिराज क छोरी।
खेत जगे खरिहान जगे, अब
जागत बीच सिवान में होरी।
देस क भाल किसान बने,
त जवान सुभाल क चन्दन-रोरी।।

गीता श्रीवास्तव

गोरिया पाती जोहै ना

ओनई कारी हो बदरिया, छलकइ अँखियाँ कअ् गगरिया
गोरिया पाती जोहै ना।
रचि के मेंहदी भरि गदोरिया, गोरिया पाती जोहै ना।।

बैरी बदरा बन. बटोहिया
बाचइ कजरा क सनेहिया
गोरिया पाती जो-है ना।।

फरकइ बायीं हो पुतरिया, गोरिया पाती जोहै ना।।

खनकइ बुनियाँ कअ मँजीरा
तरवाँ-मनवाँ भइले मीरा
गोरिया पाती जोहै ना।

जइसे चन्द्रा आ चकोरिया, गोरिया पाती जोहै ना।।

भइली बरखा गुन सवतिया
बिजुरी चमकइ दिवा रतिया
गोरिया पाती जोहै ना।

डोलइ बिहरी मन बदरिया, गोरिया पाती जोहै ना।।

रिमझिम मौसमी फुहारी
झूँमंइ भीगी महुवारी
गोरिया पाती जोहै ना।

फुदकइ फुनगी पर अँजोरिया, गोरिया पाती जोहै ना।।

चढ़िके मेड़े धइ कलइया
लहरइ तलवा में तलइया
गोरिया पाती जोहै ना।

ओढ़े धानी रंग चुनरिया गोरिया पाती जोहै ना।।

विपति कै मार

राजेन्द्रप्रसाद शुक्ल 'अमरेश'

अब का होई अब का होई।
अपनिव किस्मति पै हम रोई।।

चैत चना जौ काटि न पायेन, तौ पट्टू पाछे पछितायेन।
भै बैसाष जेठ अस गरमी, भयेन बिमार धना शिव कुरमी।
लाग असाढ़ गवा मरि बैला, टूट जुआठ निर्सारि गा सैला।
सावन बहै लागि पुरवाई, भादवं मां झोरै पछुवाई।
मुंह का मूंदि मंगरुआ रोई।। अब का।।

लाग कुआर कमर गय टूटी, कातिक मां किस्मत गय फूटी।
अगहन पूस झेलि नहिं पायेन, जाड़व से लरिकै अकुलायेन।
घर कै नष्ट गिरस्ती होइ गय, छतिया पै पथरा का धइ गय।
खेती भय अबकी सब अधिया, अकिल हेरान बइठ गय बधिया।
लगतै माघ गाय गय खोई।। अब का।।

फागुन तौ होलइन मां जरिगा, झलका फूट नोन जस परिगा।
यक्कौ दिन ना गवा सुखे मां, केहु अब साथ न भवा दुखे मां।
बिगड़ै बैल न रोपैं कंधा, असमय भा सब चौपट धंधा।
होत जवान मरै जौ भाई, दहिना हाथ टूट तब जाई।
भला भार अब कइसेन ढोई।। अब का।।

अबै घाव पुरइव नहिं पावा, पोत लगान अउर चढ़ि आवा।
कुरुक अमीन दुआरे आवै, काटि रसीद धौंस देखरावै।
पइसा भला कहां टेंटे मां, मुसरी डंड करैं पेटे मा।
अस जिव होय करी का दइया, डूब मरी कहुं ताल तलइया।
गाढ़ कटइया अहै न कोई।। अब का।।

भा भिनसार हाथ लय लोटा, पंडित जी खुटकावत सोंटा।
दोहरी मार कसक हम आंड़ी, गगरी छूंछ फूटि बा हांडी।
झउआ भय जौ रुपिया होतै, तौ कतहूं दिन पूरा होतै।
बरहौ माह बढ़ै मंहगाई, कवि 'अमरेश' विपति अस गाई।
राम करैं जौ होइहैं सोई।। अब का।।

द्वारिकाप्रसाद त्रिपाठी 'ब्रजनाथ'

जराये चल दियना

जराये चल दियना रात अंधियरिया,

कारी घटा अंधियारी डगरिया
रात चलत पग लागै कंकरिया
उठाये चला दियना रात अंधियरिया। जराये।।

घायल की गति घायल जानै
पीर कहे कोउ पीर न मानै
कतिक दिन जियना, रात अंधियरिया। जराये।।

बारे बलम तोरे पइयां परूं मैं
अबहीं उमर लरिकइयां डरूं मैं
लगाये चल हियना रात अंधियरिया। जराये।।

देहिया क दियना प्रनवा क बाती
सुधिया क जोति जरै सारी राती
चुवाये चल घियना रात अंधियरिया। जराये।।

के ब्रजनाथ विथा पहिचानै
आदि-मध्य-अन्ताई के जानै
मना धरु धियना रात अंधियरिया। जराये।।

रामलखन यादव 'अनपढ़'

हम माटी क, माटी हमार

अपने-अपने मन क डगरा, अपने-अपने मन क विचार।
हमरे भीतर बाहर माटी, हम माटी क माटी हमार।

माटी डोलइ माटी बोलइ, माटी रोवइ माटी गावइ।
माटी मोहं मांगा रतन देइ, तनिका मेहनत ममता पावइ।
माटी भरि देइ अनाजन से, खरिहांन खेत बखरी बखार।।

माटी के रोवे रोवा हम, माटी के गाये गावा हम।
माटी के हम सरबस देइके, माटी से सब कुछ पावा हम।
माटी में दुइ दाना बोवा, माटी दाना देइ गइ हजार।।

माटी रस भरइ अनाजन में, फल में अमरित रस घोरि-घोरि।
माटी महकावइ फूलन के, अनमोल अंतर में बोरि-बोरि।
रूप रंग रस अलग-अलग, अमरूद आम अमिली अनार।।

मटी के जे भूला बिसरा, ओकर माटी बनि गइ दुश्मन।
माटी क जे पहिचान किहेस, ओकरे खेते में बनी रतन।
हम से, तोहं से, वेनसे, ओनसे, सब से, इ माटी समझदार।।

सब के पालइ पोखइ वाला, धरती माई क परिपाटी।
कायर कपूत के बदे बनइ, इ कुरुक्षेत्र चम्बल घाटी।
माटी ओन के माटी बनवइ, माटी ऊपर जे बना भार।।

माटी हमार हीरा मोती, माटी हमार सोना चानी।
इ मटिया केशरि कस्तूरी, इ मटिया में अमरित पानी।
अमरित दुनिया में कतौ नाइ, अमरित बा माटी के मझार।।

माटी हमार गंगासागर, माटी हमार मथुरा कासी।
इ माटी आपन तीर्थराज, इ माटी देवता अविनासी।
हम का जानी मन्दिर महजिद, केइसन गिरजाघर गुरुदुवार।।

इ माटी जे छोरे हमार, हम ओकर हंथवा छाटि लेब।
जबरी जे गोड़ धरे येपर, ओकर गोड़वा हम काटि लेब।
मटिया के बेटये शेर बबर, मटिया नाहीं जनमी सियार।।
हम माटी क माटी हमार।।

'बाबा' उमाशंकर

कुर्सी

कब्बउ कोरा में बइठावइ, कब्बउ पटकि उड़ावइ खिल्ली।
जइसन नेतए हयेनि चिबिल्ला, ओइसइ बा कुर्सियउ चिबिल्ली।।

ई दुइ भुज वाली चौपाई, तिकड़म सुता घमण्ड कऽ माई।
रूठइ तऽ सतुआ फंकवावइ, जउ खुश होइ तउ कटइ मलाई।

बवनउ से भी ई नपवावइ, परगइ परग लखनऊ दिल्ली।।

एक दम्मइ हरजाई बाटइ, एक जने संग उमिर न काटइ।
जब तक चौचक रहइ बेशर्मी, जने जने कऽ पत्ता काटइ।

दस दिन पान-फूल चढ़वावइ, फिर मूंड़े पर पटकइ सिल्ली।।

जे के मिली उतान फिरत बा, जेकर गइ बौरान फिरत बा।
चारि दिना बइठइ खातिर, केउ रात दिना हैरान फिरत बा।

कइसे मिलइ, मिलइ नहिं छूटइ, रोज लगत बा कांटा किल्ली।।

जे तिकड़म से जियत खात बा, गुड़ चिउंटा अस चफनि जात बा।
सच्चा मनइ तऽ दुसरे दिन, कुर्सी के नीचे लखात बा।

उहइ टिकइ जे नजरबंद कइ पिल्ला के बतलावइ पिल्ली।।

धनि धनि यहि कुर्सी कऽ माया, फुलवइ गाल बढ़ावइ काया।
एकर गति कछु कहत न आवइ, खाइ शरम उगिलइ सरमाया।

चोर तस्करन से नेवतन कऽ इहइ करावइ मिल्ला मिल्ली।।

कल तक रहेनि फटीचर नेता, चंदा खोर दलिद्दर नेता।
चारण धरम निकृष्ट करम से, अब होइ गयेनि मिनिस्टर नेता।

हिजड़ा के घर बजी बधाई, तनिका कृपा किहेसि जब दिल्ली।।

का कुछ करउं कवन गुन लागइ, तोहि बिनु गुनवउ ऐगुन लागइ।
हम झंखतइ हयी अब तक जा, चंडालिन तोके घुन लागइ।

शामिल होउ कवनउ रैली में, बिना टिकस देखबऽ अब दिल्ली।।

शिवलोचन तिवारी

अवधी बरवै

आग पराई पानी लिखी न धीर
कविता उपजी अपने मन के पीर

सबद जुहावत बांजी मति अनुकूल
सुरभि बिखेरत कविता आखर फूल

सब्द निपट निरमोहिया छली लखाय
सरनागत् कवि सुधिया निकरि पराय

ई कबीर कै धरती तुलसीदास
लिखा राम के आगे बा बनबास

अरथ-उजास न मिलिहैं मिलिहैं नांव
सुरभि-सान्ति मंह कइहै कविता गांव

उजटट त्याग पियसिया उजहर भाग
जिनगी जन अभिलाषा सघन विराग

पूरन भाग सपन कै सुभ सनजोग
कविता मन की पीरा गहन वियोग

आतुर लागि पियसिया बेचैं तास
रचना भाव-साधना जीवन भाष

गिरीश कुमार श्रीवास्तव 'गिरीश'

प्रदूषण

अइसेइ बढ़त रहे परदूषण, सांसत में पड़ि जाए जान।
गन्हाए नदिया क पानी, नदिया होइ जाए नबदान।।

सुनत रहे योजना बनत बा, परदूषन के दूर करइ के।
बनी योजना, आइ रुपइया, बाकी बचा न जेब भरइ से।।

पाट दिहा हमके कचरा से, ई उपकार क फल हम पाए।
हमरे जल से सबइ नहाना, हम जाई अब कहां नहाए।।

अबउ समय बा चेता भइया, नाहीं गुड़ गोबर होइ जाए।
अमृत से गंगा जल भइली, गंगा जल से जहर कहाए।।

प्रेमशंकर द्विवेदी 'भास्कर'

कुर्सी

कुरसी प आज सबहीं का बाटई आंखि गड़ी,
कुरसी बेचारी आज खुद घबड़ात बा।
अइरू गैरू नत्थू और खैरू उछलि रहे,
छलि रहेन सबहीं का कुरसियियि लखात बा।।

आज दल बदलन के बीच बझी राजनीति,
राष्ट्रनीति दुस्टन के बीच अकुलात बा।
देश का विकास होइ चाहे मिलइ धूरि धाम,
बाटई जे जहां उ उही खात बा कमात बा।।



फसली गीत

देखि के फसल मन लहरे किसनवां।
इहिं साल गोरिया गढ़उबइ गहनवां।।

सरसों के फुलवन से, सजि गई सेवरिया।
फरिगा चना, मटर, गदरी मसुरिया।
खेतवा में अरहरि बजावयि बजनवां।। देखि0

मटरा अउ गुरवा से भरि गइ कोठिलिया।
बेंचि के बलम बनवयि दा महलिया।
चइता में बेटवा का आइय गवनवां।। देखि0

आम बौराई गयेन अरुसा फुलाई।
रंग अउ अबीर लिहे फगुनवा आई।
फिरि से जवान मन तड़पइ सुगनवां।। देखि0

भउजी से रंग खेलबइ नइहर पठाई दा।
छोटकी बहिनियां का इहां मंगवाइला।
खूब खेले ऊ तोहसे रंगनवां।। देखि0

लताश्री

लोकगीत

गोइयां री गोइयां ओ मोरी गोइयां।
गांव मोरा सरग समान ओ मोरी गोइयां।

फूली-फूली बगिया मा फूली फुलवारी,
गोबरा से लीपी घर बखरी हमारी।
अंगना मा बबुआ भरत किलकारी,
जा लखि जिअरा अघान ओ मोरी गोइयां।
गांव मोरा सरग..................

सास-बहुरिया-ननदिया-जिठानी,
हिल-मिल बोलै सब मीठी-मीठी बानी।
कोऊ धना देवी लागै कोऊ महरानी,
देउता से लागत किसान ओ मोरी गोइयां।
गांव मोरा सरग..................

ट्यूबेल धरती का रोज नहआवै,
धरती हमार सोना चांदी उपजावै।
हाली-हाली-हाली-हाली ट्रैक्टर धावै,
जा बैठि चुनरी उड़ान ओ मोरी गोइयां।
गांव मोरा सरग..................

जगदीश सिंह 'नीरद'

एक किरन

जेहिकी डेउढ़ी रही सदा रबि ससि कइ पहरेदारी।
एक किरन की खातिर वह खुद बनिगा आज भिखारी।।

चार वेद छ सास्त्र ग्यान कइ जेहिके लिखिन किहानी,
नौ व्याकरण पुराण अठारह पढ़ि-पढ़ि जग भा ज्ञानी,
जउनी धरती पर गीता कै कान्हा ज्योति जलाइन
वही देस मा ज्ञान नदी कै सूखि गवा है पानी।

जेहिकी खींची रेख न अब तक कोऊ सका मिटारी, एक किरन0।।

अन्धरी दुनिया के हाथे कै काल्हि तलक जे लाठी,
खोलिस जग मा सबके मन कै अंधियारे कइ गांठी,
जे अपने प्रकास ते सबका राह सुराह देखाइस,
नाम सुने ते थर थर कांपै अंधियारे कै छाती।

आज वही के घर मा होइगै तम कै अस पैठारी, एक किरन0।।

जेहि की कीरति के पन्ना गे दुनिया भर मां बांचे,
ज्ञान गिरा अबहीं तक जेहिकै सारा जगत संवाचै,

रातति अमावस के पूनम बनि बिहंसी जेहि के अंगना,
सुर्ज जोन्हइया जेहिके एक इसारे पर है नाचै।

संज्ञा जेहिकै जगत गुरू है आजौ जाय बखानी, एक किरन0।।

चलौ राति की चूनर मा फिर टांकी चांद सितारा,
पी जाई बनि दिन के मालिक देसवा कै अंधियारा,
करी उजारे के दसखत फिर तम के हर पन्ना पर,
जेहि से पहिले वाला भारत फिर से बनै दुबारा।

नीरद मिलि के सबै देस कै गौरव फिर लौटारी, एक किरन0।।

राम कृष्ण 'संतोष'

औसर पाय बिया अंखुवइहैं

औसर पाय बिया अंखुवइहैं
धरती के अंचरा तर कब लौं ई मन मारे सोइहैं।

कतनिउ लम्बी घनी अंधेरी रात होइ का करिहै,
जैसे समउ आई वह तिल-तिल आपुइ आप बिधुरिहै,
खिलिहैं कमल चंहकिहैं चिरई चक-चकई मिलि जइहैं।
औसर पाय बिया अंखुवइहैं।

झेलि पवन सिसियात सीत कै सबै पात पियराने,
ठाढ़ रहे चुप रूख लै गवा पतझर बसन पुराने,
सोचति फेरि बसंत बहुरिहैं यहै ठूंठ हरियइहैं।
औसर पाय बिया अंखुवइहैं।

तपति तपन्ता तब है बरसत घिरि झुकि झूमि बदरिया,
रगदावति इक दूजे कहिया रहति अंधेर उजरिया,
अंसुवन के जल सिंचे अधर पे कमल काल्हि मुसकइहैं।
औसर पाय बिया अंखुवइहैं।

टूटै सांस आस नहिं टूटत तब है चलति किहानी,
आइस के बल पग-पग छिन-छिन जूझति जियति परानी,
जे हरिहैं हरिहैं, जे चलिहैं वहै जनम फल पइहैं।
औसर पाय बिया अंखुवइहैं।

सच्चिदानन्द तिवारी 'शलभ'

गीत

गढ़वायौ नहीं, काहे लायौ नहीं
सुक नक्छत्र कै चमकुइ बिन्दिया !
ओ पिया ! ओ पिया ! ओ पिया !

यादि है वह जोन्हइया कि भूलेउ सजन
नेह मा बूड़ि के जौन दीन्हेउ बचन,
चाहे जौने बखत तुम कहौ तौ नखत,
तूरि के देब अंगिया वही से सिया !
ओ पिया ! ओ पिया ! ओ पिया !

राति कै बात मानेव कि डारेव मुला
दिन भुलाये ककस पावसी बहु मुला,
इन्द्र धनुहा निरखि तुम कहेउ यह कि सखि
देब उपहार मा सतरंगी चुनरिया
ओ पिया ! ओ पिया ! ओ पिया !

काउ उवादा वहौ झूंठ फरजी रहै,
बीजुरी मेघ मा जबकी लरजी रहै,
तुम कहेउ चंचला चंचला देब ला
जगमगी गोट चुनरी बदे गोरिया।
ओ पिया ! ओ पिया ! ओ पिया !

दूर है चन्द्रमा सुर्ज सविता नखत,
इंद्रधनु बीजुरी तूरि को है सकत,
नेह नाता रहै, धरती माता रहै

तौ नभौ त्वार हम तौ हैं टुट पूंजिया
गोरिया ! गोरिया !! गोरिया !!!
ओ पिया ! ओ पिया ! ओ पिया !

बृजेन्द्र मिश्र

भदईंया दिन बीतैं जस

अपने हिरदय कै लिखित बयान,
भदइयां दिन बीतैं जस।।

देहरी सेनी अभिरि पसरि के टोला कै परपंच
चितिर गुपुत कै लेखा खोलैं बांचैं जतनी टंच
देखौ मिलि जाई परमान, भदइयां0।

पहिले सूखा बादि मा बरिखा या लीला भगवान
बिया बेसार डांड़ सब होइगा अढ़री उरुद रिसान
आंसौ ठगिगा चतुर किसान, भदइयां0।

टपका लाग कहूं घर गिरिगें मड़हा कै कउन बि[illegible]न
पीपर बरगद उलटिगें सहुवै नीबी कै कतरी औकात
लागै नखत जोंधइया रिसान, भदइयां0।

गांवन मइहां गांव हेराने छोट बड़े सब बटिगे
सबके सुख-दुख अलग होइ गये राजनीति अस रटिगे
अब तौ जाति कै रोग जोरान, भदइयां0।

शोभनाथ अनाड़ी

गीत

मोती अस मथवा पै चमकै पसिनवा।
ठीक दुपहरिया मा गरमी कै दिनवा।।
देखि कै सुरुज जरि जाय,
गोरी जब खेतवा का जाय।

हँसि हँसि के गोहुंआ कै लेहना लगावै।
बाँधि कै रसरिया मा बोझवा बनावै।।
मुड़वा पै धइके चलै जब डगरिया।
लचर-लचर लचकै हो पतरी कमरिया।।
जियरा खुशी से भरि जाय। गोरी जब.........

मारे झकोरा हो पछुआ पवनवा।
लू कै तपनिया जरावै बदनवा।।
मटिया से मोतियन का 'चुनि-चुनि उठावै।
धूरि भरी देहियां कै सुधिया न लावै।।
सौ-सौ जनम तरि जाय। गोरी जब.............

सगरी जिनिगिया विपतिया मा काटै।
आपन खुशी सारी दुनिया का बाँटै।।
घर मा रहै तौ कुसल बनै घरनी।
खेतवा रहै तौ कहावै मजुरनी।।
कबहूँ न मन कुम्हिलाय। गोरी जब...........

दिनेश सिंह

नवगीत

दुख मेरे मइके से आया
सासू का बड़बोला जाया
दुख की खेती जोते-बोये
बासंती आठ पहर रोये।

भुखिया ना अंगरेजी जाने
चूल्हे की रोटी पहचाने
सेन्हुर के रंग सनी बड़की
तानों की पिचकारी ताने।

रँगे-धुले छिन-छिन पर काया
जूठी थाली जैसी माया
भाई की सुधि हिया करोये
बासंती आठ पहर रोये।

मैना के बोल वहाँ होंगे
पिया के किलोल जहाँ होंगे
पूजा के फूल हँसें-पूछें,
सेजा के फूल कहाँ होंगे।

दूध झरे आंचल की छाया
कथरी-सी ठठराई काया
टांक-टांक बैठ दे टटोये
बासंती आठ पहर रोये।

रघुवीर सिंह 'पवन'

तरैया सरग कै

इनकै हजुरिया उनकै हजुरिया,
बीती जिनिगिया करतै हजुरिया।

खेतिया करै का भुंइया बटति बा।
घरवा बनै का भुंइया बटति बा।
मिलिहै तो छुटिहै सारी बेगरिया।।

बंधुवा मंजूरी और माफी करज कै।
मानो मिली बा तरैया सरग कै।
दिनवा जौ फिरिहै तो देखबै अंजोरिया।।

कटनी पिसौनी औ भितरै बहरवा।
दिन भै टहलिया मा कुल परिवरवा।
कबहूं न पावा इ पूरी मजूरिया।।

पेटवा मा दनवा न तन बहतरवा।
भुंइये बिछौना अकसवै चदरवा।
नंगी उघारी बिटियै बहुरिया।।

फूंसे पयारी कै झोपड़ी बनावा।
ओहका गिरावै कहै हम बसावा।
एहकी जिं निकरा इ हमरी सेंवरिया।।

भुतवा परेतवा औ देवी देवतवा।
अपनी गरजिया सगर टेका मथवा।
केहू कहूं दौरे ना हमरी गोहरिया।।

जितना सहा उतनै बढ़ि गा जुलुमवां।
अब तौ लड़े बिन न बचिहै परनवा।
सेंतहिन न होई हजुरिया मजुरिया।।

सागर सत्यार्थी

कइसे राम गुजारा होइहैं

अबकी अषाढ़ बदराइ गवा, धरती कै तपन बुझाइ गवा।
खेतन मा टेक्टर चलइ लाग, मुठियन बिसार जब परइ लाग।।
सोवत खेतिहर अब गवा जाग, 'दुखनी' के हियरा बरइ लाग।
जबसे सोलगउना करज भवा, खसरा, खजुली कै मरज भवा।।

जब कटी आरसी जेहल गवा, मनसेधू का चारा होइहैं।
कइसे राम गुजारा होइहैं।।

ओटवन कै आन्ही-पानी मा, छोटकू जीतेन परधानी मा।
बड़के खरिहाने सभा लागि, 'बुधनी' कै अँखिया झरइ लागि।।
ओकरे साथे अनियाउ भवा, 'ठाकुर' कै बेटवा भाग गवा।
'ठाकुर' पंचन कै डाटि दिहेन, सब पंचन तरुआ चाटि लिहेन।।

'बुधनी' बिनु ब्याही महतारी, मरै के गड़ही तारा होइहैं।
कइसे राम गुजारा होइहैं।।

छोटकी कलकत्ता भवा गाँउ, चहुँओर निखट्टू ठाँउ-ठाँउ।
बहिनिन-बिटियन का ताकि रहे, अपनेन परोस मा झाँकि रहे।।
अब भैंस बियाने पे भोली, घिउ-दूध न पावें दरसन का।
अमृत दइके साबुन-शेम्पू, अब क्रीम लियावइ लन्दन का।।

अब कहाँ तीज-त्यौहार भला, पनघट-घाट दुआरा होइहैं।
कइसे राम गुजारा होइहैं।।

अनीस देहाती

खसकें आँड़े-आँड़े

मेल-मोहब्बत राम-रमौझा अस गायब भा पाँड़े।
वह देखा अब्दुल्लौ चच्चा खसकें आँड़े आँड़े।।

करू तेल कै ठोंकी ठोंका चूल्हा कटै चँदौरी पै।
राम लखन तपता की बइठा डामर रगरैं दौरी पै।।
पौअन घिउ कै दिया बरै तुलसी मैया की चौरी पै।
सात खून तक माफ रहा रधवा की एक चरौरी पै।।

यहि जुग माँ मुँह भवा पिपिहिरी जुल्फी लेकिन हीरोकाट।
पुक-पुक-पुक पनचक्की बोलै बिसरा पुरवाही कै घाट।।
नेमी धरमी जती सती कै बिस्तर गुम्म उदासी खाट।
भूँजी भाँग रहै ना लेकिन हरदम लम्मरदारी ठाट।।

के सपूत जनमे जे ई कलजुगहा दम्भ उखाड़े।
वह देखा अब्दुल्लौ चच्चा खसकें आँड़े आँड़े।।

ऊ लरिकन कै धमाचौकड़ी, चील्ह चिलाँघौ सुर्रा।
कबहूँ चोर सिपाही खेलैं, कबहूँ ओद्दा झुर्रा।।
भीजि-भीजि के छप्पक छैया ऊ दमरी कै तावा।
कहाँ अहा! कहि कोर्रा लइके अँधरा काटै कावा।।

अरे बाप! ई चाका-चोन्ही होइ गै रसम बेकैयाँ।
यै किरकिट खेलवइयै आखिर का जानै मझगोइयाँ।।
कतौ कटीलौ तीतिर बोलै टँगा ढेलहरा टुइया।
कीरा कै मन्तर का जानैं झूठै छू करवइया।।

चकाचौंध की सुरपटरी मा के भन्नी अस भाँड़े?
वह देखा अब्दुल्लौ चच्चा खसकें आँड़े आँड़े।।

ऊ पहिले कै मधुरी बानी बाबा, दादा, काका कै।
भौरा औ नीमी कै पाती रही दवाई पाका कै।।
जिउ भरि जाय देख सुघराई माखनवाले थाका कै।
सुधई बुधई से ना मतलब अबके तूम-तड़ाका कै।।

जामवन्त, घेर्राऊ औ धौताली नाव पुरान होइ गवा।
चिंकी, पिंकी, रिंकी औ डबलू पै सबकै ध्यान होइ गवा।।
पृथीराज भुँइहीन बेचारे, सुनतै जिउ अगरान होइ गवा।
नाव नयनसुख सूरदास कै, आपन देस महान होइ गवा।।
बनी बात ना खोवै पावै, रहे ननकवा ताड़े।
वह देखा अब्दुल्लौ चच्चा खसकें आँड़े आँड़े।।

विजय बहादुर सिंह 'अक्खड़'

परधानी

कब तक बुद्धू बनिके रहबै, अब हमहू चतुर सयान होब।
हमहू अबकी परधान होब।

का रहे हमेशा परधानी बस बड़ मनइन के झोला मा,
परिसीमन जिन्दाबाद! रहे तौ आये हमरे टोला मा।
बड़ मनइन कै चिन्ता नाहीं छोट भैयय हमरे साथ अहाँ,
कुर्मी, कोहार, धोबी, लोहार सब जाना दहिना हाथ अहाँ।
तेलियानौ लगभग ठीक अहै कुछ शंका बा अहिरान से,
एनकर झूठै झाँसा-बुत्ता सब सुनत अही हम काने से।
ये अपने स्वारथ मा हमका, बाटेन बाँटइ के चक्कर मा,
उम्मीदवार बाटेन हेरत के बाटै हमरे टक्कर मा।
अब हमहूँ पहिले बिरादरी भै मिलि के एक सभा करबै,
बा जेकरे मन मा मैल-गाँठ, समझाइ-बुझाइ सफा करबै।
फिर निरबिरोध परधान होब टी.वी. रंगीन जरूर मिले,
गँवना-देसवा खुश होइ जाये तौ फिर हमरिउ तकदीर खुले

निरहू, घुरहू ठोकिहैं सलाम हम मोछिया ऐंठि उतान होब।
हमहू अबकी परधान होब।

जेतना जे लूटि सकेन लूटेन अब हमरिउ आई बा पारी,
उत्थान करै का दलितन कै सरकारी हुकुम अहै जारी।
हम हुकुम उदूली ना करबै सरकारी धन जौ पाइ जाब,

एक पैसा कतौ ना खर्च करब पूरा कै पूरा खाइ जाब।
आखिर हमहू तौ दलित अही तौ एहिमा कौन बेजा करबै,
आपन पेटवा जौ भरा रहे हम अउरेव कै सेवा करबै।
दरखास परे जौ जाँच बरे तौ केव नेता का हेरि लेब,
ओनके पाछे हल्ला बोलब डी.एम. कै बंगला घेरि लेब।
अधिकारी कौनौ हरिस्चंद बनिके जौ जाँच करै अइहैं,
हमरे खद्दरधारी विश्वामित्रन से कहाँ पार पइहैं।

सब उखड़ा कूल बैठि जाये जौ हम कोदौ से धान होब।
हमहू अबकी परधान होब।

जवाहर रोजगार योजना कै जौ पहिल किश्त हम पाइ जाब,
लाटरी काउन्टर पै पूरी कै पूरी रकम लगाइ जाब।
आये तौ सभ्भै आपनि आ, जाये तौ जाय का बाप कै आ,
सब चलत अहाँ जौनी रहिया का हमरिन ताई पाप कै आ।
मौके पै सड़क न कतौ मिलै कागज मा माटी फेंकवाउब,
बरसा अषाढ़ बहिगै माटी, केव जाँच करे तौ लिखवाउब।
ओनहू आपन हिस्सा लेइहैं, हम बेईमानी ना करबै,
मुल यह कलजुग मा हरिस्चंद होइके परधानी ना करबै।
नेतन की चम्चागीरी मा लखनऊ तलुक धावा बोलब,
अब तक तौ देशी छनति रही, अब अँग्रेजी बोतल खोलब।

का सब दिन कटे गरीबिन मा, हमहू हाजी मस्तान होब।
हमहू अबकी परधान होब।

गउवाँ के उत्तर कै बंजर हम देबै धनी, रमेसर का,
दुइ-चार जने का नार-खोर निकुई भुँइ पूत जगेसर का।
कालोनी हम अपनी मौसी के बेटवा कल्लू का देबै,
आपस मा कुछ कहि पाउब ना, जौनै कुछ देइहैं धइ लेबै।
सरकारी रासन कै दुकान हम निकऊ बनिया का देबै,
ओनहू से सिर्फ महीना मा चालीस किलो चीनी लेबै।
सब कारैहैं माँग खरंजा कै प्रस्ताव उहौ करवाइ देब,
लगवउबै कुल पीला ईंटा, अउवल कै दाम देखाइ देब।
विधवा-पेंशिन, वृद्धा-पेंशिन से केतनेन का पलटाइ देब,
इण्डिया-मार्का नल कै लालच दै के दास बनाइ लेब।
कुछ मोटी रकम जरूर मिले मछली-पालन के पट्टा मा,
कुछ पाइ जाब कोंहरौटी से बरतन की माटी गड्ढा मा।

गउवाँ भर का ऊँटे, एक्का, भैंसी कै लोन देवाइ देब,
तेरह मा तीन मिले ओनका बाकी सब मिल-जुल खाइ लेब।

जौ खाब कमीशन, काला धन. अइसेन ना रहब, मोटान होब।
हमहू अबकी परधान होब।

नागेन्द्र 'अनुज'

देसवा तौ आपन बिलाय गवा काका

टेमवा कै तोहका बतायी काव हलिया
हमका तौ केहू कै सुहात नाहीं चलिया
हँड़वा झुराय गा लटकि आय खलिया
हम तौ बहुत दुख पाये एहि सलिया।
गीतवा, कुरनवा से काव पहिचानिबा
जौ सबकै इमनवा नसाय गवा काका।
देसवा तौ आपन बिलाय गवा काका।।

गाँधी जी कै चूर-चूर होइगा सपनवा
झगड़ा-लड़ाई आज सबके अँगनवा
हर अखबरवा मा खून कै रँगनवा
बाँटि लेंइ धरती तौ बटिहैं गगनवा
देया कमिसनवा ई कहिके किसनवा के
धरा कै पिसनवा बेंचाय गवा काका।
देसवा तौ आपन बिलाय गवा काका।।

घटवा पे घतिया लगाये घरियरवा
स्वारथ कै मीत सब भये परिवरवा
अपनेन पेटवा मा भरै सरियरवा
निमरा का काल सब भये बरियरवा
घरवा-दुअरवा लिहिस रखवरवा
जेका पिछवरवा बसाय गवा काका।
देसवा तौ आपन बिलाय गवा काका।।

गाँव-गाँव, ठाँव-ठाँव इहै बा कहनियाँ
केहू के सहूर बा केहू निरगुनियाँ

केहू चार टेम खाइ, केहू एकजुनियाँ
सब जाति-पाँति बा कमात-खात दुनियाँ

भूख से ललात-बिललात बा गरीब
केहू खात दाल-भात अँड़ियाय गवा काका।
देसवा तौ आपन बिकाय गवा काका।।

गाँव-गाँव गली-गली टोलवा-मोहलवा
सँझवै कि मचि जाय चारिउमू हो-हलवा
चोर नहीं लूटै अब लूटै कोतवलवा
चारिउ मू सिकरिया बिछाये अहै जलवा

एतना बवलवा मचाव था दललवा
कि धरा कै जँजलवा भुलाय गवा काका।
देसवा तौ आपन बिलाय गवा काका।।

सुनील 'प्रभाकर'

चैता

केहू ना सुनै मोरी बतिया हो रामा,
जरै मोरी छतिया।

डारि के पसीना करी मटिया का सोनवाँ।
मटियव के भाव केहू पूँछै नाहीं दनवाँ।।

लाज राखी कवनी सुरतिया हो रामा,
जरै मोरी छतिया।

खदिया के दमवाँ लागि ग अकसवा।
जरि गवा धनवाँ से टूटि गई असवा।

रुपिया बिना गइ तरकिया हो रामा,
जरै मोरी छतिया।

गिरि ग ओसरवा टूटि गय मड़इया।
अबकी से पुतवा कै छूटि गय पढ़इया।

बिसरइ ना लाल की सुरतिया हो रामा,
जरै मोरी छतिया।

रोटियइ मोहाल कहाँ पाई रे दहेजवा।
बिटिया सयान होइ गै हुलकै करेजवा।

जागत बीतै सारी रतिया हो रामा,
जरै मोरी छतिया।

हमरेन बरे कुलि नियम कनूनवाँ।
बेटवा कै बाप भये एतना जुनूनवाँ।

कल्हरि के मरी रजमतिया हो रामा,
जरै मोरी छतिया।

होइ गवा नरक ई गाँव भाय

सतीश चन्द्र 'प्रेमी'

होइ गवा नरक ई गाँव भाय, अब चला शहर की छाँव भाय।
सज्जन, दुर्जन सब जने हियाँ पे, खेलि रहे है, दाँव भाय।।

मुँह से लावत हैं, राम राज, औ करनी से रावन क राज।
पूजा, नमाज़ बढ़ि रहा खूब, उपजाय रहे, पाथर पा दूब।
डूबी ईमान कै नाव भाय, अब चला शहर की छाँव भाय।।

जे जिम्मेदार जगह पायेन, वे लूटि पाटि सब घर लायेन।
मड़ही उजाड़ि के बुद्धू कइ, आपन कोठी बंगला छायेन।
अइसन आइल बदलाव भाय, अब चला शहर की छांव भाय।।

सरकारी पइसा जौन आय, ऊ चतुर सुजान के नाम आय।
सब लइ भागेन आपन हिस्सा, कर्जा गरीब के नाम आय।
ओकर बा जेल मा पांव भाय, अब चला शहर की छांव भाय।।

ईर्ष्या, द्वेष, झगड़ा, फसाद, ई ऊंच जाति, ऊ नीच जाति।
ऐकर बेटवा, वोकर बिटिया, बस यही मा, टैम है बीत जात।
गिद्धन का उड़त, पुलाव भाय, अब चला शहर की छांव भाय।।

कट्टा, बन्दूक बा घरे-घरे, हल्का का सिपाही जानत हैं।
तू तू, मैं में पे सोवत हैं, गोली चलि गये पे धावत हैं।
'प्रेमी' का हियां ना ठांव भाय, अब चला शहर की छांव भाय।।

राजनारायण शुक्ल 'राजन'

लोकगीत

बड़ी नीक लागै अपने देशवा कै माटी।
मिलि-जुलि रहबै तौ के हमका बाँटी।।

गांधी, सुभाष, नेहरू भगत कै बगिया।
एहमा लगावा जिनि केहू जने अगिया।।
नाहीं तौ झुराय जाये फुलवा कै घाटी।
बड़ी नीक लागै अपने देशवा कै माटी।।

एकता-सनेहिया कै डोरि जिनि तोरा।
प्रेम के सगरवा मां विष जिनि घोरा।।
भइया मोरे भूला जिनि आपै परिपाटी।
बड़ी नीक लागै अपने देशवा कै माटी।।

होली, दिवाली, ईद मिलि के मनावा।
एक-दूसरे के साथ कदम बढ़ावा।।
एक साथे आवा खाई चोखा औ बाटी।
बड़ी नीक लागै अपने देशवा कै माटी।।

मिलि-जुलि रहबै तो के हमका बाँटी।
बड़ी नीक लागै अपने देशवा कै माटी।।

शीतलाप्रसाद अग्रहरि

ऊसर सुधार पर लोकगीत

मोरे किसनवा भइया ना, मोरे किसनवा भइया ना।
ऊसर भूमि कै करा सुधार, मोरे किसनवा भइया ना।।

खूब करा तू मेहनत जमके, उपजे एहमा सोना,
अन्न औ धन से भर जाई घर महके कोना-कोना।
जीवन कै होई उद्धार, मोरे किसनवा भइया ना।।

बेरोजगारी बढ़ी ई कदर, नाहीं मिलत नोकरिया,
छोड़ा एहकै आशा आपै चाहे जउन सरकरिया।
अब तौ चलै धकाधक फार, मोरे किसनवा भइया ना।।

रमई काका बुधई भैया सुना ध्यान से बतिया,
भूमि निगम बा देत सबै कुछ करा तू केवल खेतिया।
ना नौ नगद न तेरह उधार, मोरे किसनवा भइया ना।।

एक जवान लड़ै सीमा पर दूजा खेत सेंवारी,
तोहरेन मेहनत पे भैया ई देश अहै बलिहारी।
ऊसर अहै धरा कै भार, मोरे किसनवा भइया ना।।

हरा-भरा चहूं ओर दिखाई पड़ै खेत कै क्यारी,
रेह मिलै न हेरे धोबी, भले देय दुई गारी।
कइ ल्या मन मा इहै करार, मोरे किसनवा भइया ना।।

अवधनारायण शुक्ल 'वियोगी'

लोकगीत

काहे देशवा न अपने गुमान होई।
कौनो देशवा न एतना महान होई।।

ई हो मोरे देशवा मा गंगा जमुनवां,
झर-झर बहे कहूं दूध सा झरनवां।
कहां मुकुट हिमालय समान होई।।
कौनो देशवा न एतना महान होई।।

कतहूं तौ पूजा होत कतहूं अजनवां,
कहूं बाजे बांसुरी तौ कतहूं कंगनवां।
सबके मनवा मा इहै अरमान होई।।
कौनो देशवा न एतना महान होई।।

लह-लह लहके लँ खेत खलिहनवां,
पाकि-पाकि बजरा चना औ गोहूं धनवा।
कहां धरती कै अस परिधान होई।।
कौनो देशवा न एतना महान होई।।

जंतवा चलावै भिनसार होत गोरिया,
ललना सोवावै माई गाइ-गाइ लोरिया।
कहां घुंघटा के तरे मुसकान होई।।
कौनो देशवा न एतना महान होई।।

कहावत कविता

डॉ. राजेन्द्र राज

कहैं तेवारी सुनिल्या पांड़े,
ढील पदाई धोती म झाड़े।

कइके गुस्सा थरथर कांपै,
मूसर कूटइ कखरी ढांपै।
ऊंट चरावै आड़े आड़े।।

माई धोबइन पूत बजाज,
दुसरै कै खजुवावै खाज।
मंगनी कै मसराइल पहिरै
एक रुपैया नाहीं फाड़े।।

धोबी का दुलहा एस सजा
मुंह पर हरदम बारह बजा।
तेल चमेली मूड़ छछूंदर
घूमै मांग बीच मा काढ़े।।

सबके फटे म टांग अड़ावै
डगरा मा हगि आंख देखावै।
काढ़ि लेइ आंखी का काजर
पलक झपकतै ठाढ़े ठाढ़े।।

टुटही खटिया बासी भात
इश्क न जानै जात कुजात।
भागे भूत क धरइ लंगोटी
गरमी स्वेटर मलमल जाड़े।।

अपनी आवा अपनी जा
'राज' कहै अब जिन बउरा।
करा गुजारा रूखी सूखी
केउ के भाते न केउ के माड़े।।

परशुराम उपाध्याय 'सुमन'

लोकगीत

हमरे देसवा के जवनवां, चलावैं गोलिया।
साधैं सीमा पै निसनवां, बनाइ टोलिया।।

अंग्रेजन कै सरल हुकूमत रही मुसीबत भारी,
बइठै, उठै, चलै मा दिक्कत सबै रही लाचारी।
बजिगा गांधी कै बजनवां उठाइ झोलिया।।
हमरे देसवा के जवनवां........

हाहाकार मचा चहुं ओरी, जुटिगे नेता न्यारे,
भगत सिंह, आजाद सरीखे जूझे बोस बेचारे।
मिटिगे केतने सजनवां, सजाइ डोलिया।।
हमरे देसवा के जवनवां........

"भारत छोड़ो आन्दोलन" कै सब मिलि बिगुल बजायें,
अबुल कलाम, शास्त्री, इन्दिरा सेमीनार बनायें।
मोतीलाल के ललनवां, बजाइ ढोलिया।।
हमरे देसवा के जवनवां........

खून बहाये देसवा खातिर व्यापारी मजदूर,
जलिया वाले बाग कै घटना देख भये मजबूर।
भागे छोड़ि के सासनवां मिली न कोलिया।।
हमरे देसवा के जवनवां........

जेल गये अभियान चलाये, तब आई आजादी,
अब नाहीं तनिकौ डर बाटै, ठाट से पहिरा खादी।
सुनिके मगन किसनवां, 'सुमन' बोलिया।।
हमरे देसवा के जवनवां........

आय जाव

हे ! राष्ट्रपिता बापू जी तुम,
फिरि जादू अपन देखाय जाव।
बैकुंठ छोड़ि कै गांधी जी,
भारत मा फिरि ते आय जाव।।

है खूनाखच्चरु चउगिरदा मुलु कोइ नहिन पूंछै वाला।
मुंह सिये अहिंसा विलखत है हिंसा का हवै बोल बाला।।

वहु सत्य, अहिंसा वाला फिरि,
तुम पावन पाठु पढ़ाय जाव।
बैकुंठ छोड़ि कै गांधी जी,
भारत मा फिरि ते आय जाव।।

ई अपसै मा खउख्याय रहे बोली है जानी पहिचानी।
सब आँखि, कान, मुंहु खोलि-खोलि कइ रहे बंदरवा मनमानी।।

जेहिके बांदर वहि ते नाचैं,
तुम लकुटी अपनि घुमाय जाव।
बैकुठ छोड़ि कै गांधी जी,
भारत मा फिरि ते आय जाव।।

अब नोट-वोट के तिकड़म ते सब रहे सिंघासन पर बिराजि।
असि कपट, झपट, अइँचातानी मइहाँ है कसिके रामराजि।।

'गुदड़ी के लाल' बाज आवैं,
कुछु अइसी जतनि बताय जाव।
बैकुंठ छोड़ि कै गांधी जी,
भारत मा फिरि ते आय जाव।।

महेन्द्रकुमार वर्मा 'नयन'

दहेज

घर ते बप्पा जस चलिन दिहिन, बर की तलास मा निकरि परे।
बरदेखी केरि भै धुनि सवार, बाकी सब कामै बिसरि परे।।

सब कहौं देखि अइसी-वइसी उनके मन मा अस आवत है।
लरिकवा सार कइसनौ हुवै मुल देब दहेज न भावत है।।

बस यहै बिचर मनै आवा, एक के दरवाजे पहुँचि गये।
लरिका हम देखा चाहित है, वहिके बाबा से कहत भये।।

अतने मा होहिन खड़े रहैं, लरिका के बप्पा बोलि परे।
यहिके बियाह मां ल्याबै हम, एक लाख रुपइया खरे-खरे।।

सुनि बप्पा जी घबराय गये; चट्टै चरनन मा धरिन माथ।
सम्बन्ध करै बदि बार-बार, मजबूर करै उइ जोरि हाथ।।

लरिका के बप्पा समझि गये, अइसनै ब्याहु यहु कीन चहै।
बिटिया के ब्याहे मा अपनी यहु टका न याकौ दीन चहै।।

अब उल्टा होइगा राग रंग सब खेलै जइसे उजरि गवा।
लरिका कै बाप रिसान और वहु बड़े जोर ते बिगरि गवा।।

ना तुम्हरे घर मा ब्याह करब, चुपचाप हियाँ ते उठौ भाय।
कोउ सूधे साधे मनई का चालाक हुवौ तुम छलौ जाय।।

मजबूरी भै बप्पा जी कै बिटिया का कुढ़तै कटी राह।
हैं लाख रुपैया टेट नहीं तौ ब्यालौ कइसे हुवै ब्याह।।

घर बाग सबै कुछ बेंचेउ तौ एक लाख न पूरे होइ पइहैं।
बिन ब्याही बिटिया रहि जायी तौ प्रान पखेरू उड़ि जइहैं।।

बस यही भयानक चिन्ता मा बप्पा निबरातै चले जात।
बर मिला न अब तक बिटिया का उइ दिन-दिन जैसे गले जात।।

सत्यब्रत सिंह

हाथ मा अब का रहिगा भाय

हाथ मा अब का रहिगा, भाय?
ठाढ़ हैं देखत आगि लगाय।

प्रगति कै बड़ी धूम है आज,
गिरत है फिर-फिर हम पर गाज।
यहै है अपने घरे सुराज,
देखि मनई मन मा पछिताय।

धरे हैं जे झउवा भर नोट,
पाय जइहैं उइ सबके वोट।
देखिकै लागत जिउ मा चोट,
दुहत हैं उनहीं सबकै गाय।

देत हैं भासन औ, तकरीर,
सुनै तौ फूटि जाय तकदीर।
बचै कै बची न अब तदबीर,
चरै का उइ हैं गये तुराय।

बड़ा जंजाल, भयन कंगाल,
कहौ अब किस्से आपन हाल।
देस दुनिया के सब बेहाल,
रूस का रूसै दिहिस मिटाय!

डॉ. देवीसहाय पाण्डेय 'दीप'

पतिया

भौजी न लिखाओ भैया लगे अस पतिया।
जेका पढ़े उनकै दरकि जाइ छतिया।।

एका न लिखाओ, बाबू चलत बेमार हैं,
करजा वसूलै बदे घेरे साहूकार हैं।
पट्टा परधान लिखि दिहिन दुवारे कै,
बनि आई दुसमन भाई पट्टीदारे कै।।

न लिखाओ चकबन्दी केरि दुरगतिया, जुलुमी पुलिसवन केरि हरकतिया।
भौजी न लिखाओ......

न लिखाओ फसल का मारि गवा पलवा,
एका न लिखाओ घरे टूटि गवा तलवा।
मूसि लै गये हैं चोर लोटा और थरिया,
न लिखाओ मरि गयी गाभिन ओसरिया।।

ससुरे मा फूँकि दीन गई फुलमतिया,भाँति-भाँति भई जौन ओकै दुरगतिया।
भौजी न लिखाओ......

न लिखाओ घरवा मा नाहीं है अनजवा,
रोजै घर घेरे रहै आइके बजजवा।
न लिखाओ मुनियाँ कै फाट सलवार है,
छोट होत जात ई फिराक बार-बार है।।

चौधरी कै लरिका लगावै रोज घतिया, बीति जाति जागत पहाड़ जैसी रतिया।
भौजी न लिखाओ......

लल्लू का मिला न यहि साल एडमीशन,
कालेज मा माँगा जात है बड़ा डोनेशन।
फेल करि दीने गये छोटे चुन्नू भैया,
दै न मिला टीचर का ट्यूशन कै रुपैया।।

अच्छा है न भैया जानि पावैं एकौ बतिया, घरवा कै दुखदाई बिगड़ी हलतिया।
भौजी न लिखाओ......

सद्धर्म सृजन निगम

महावट

बदली जब बरस गई - बदली जब बरस गई।

बुंदियन की रिमझिम से धरती जुड़ाय गई,
पातिन के कोरा माँ पाती लुकाय गई।
झूमे सिवान पुरवैया जब सरसि गई।
बदली जब बरस गई।।

पियर पियर फुनगी मां सरसों सरमाय गई,
गोहूँ के मखमली घँघरिया पहिराय गई।
अँगरानी ऊँख मेड़ माटी सब हरषि गई।।

गोरून का ग्वाल-बाल मनते चराय रहे,
घामे माँ ठाढ़ पूस पाहुना मनाय रहे।
हाँड़-हाँड़ काँप उठे पछुआ जब परसि गई।।

राई के सुघराई जीवन के साथ है,
धरती बहुरिया के पियर भा हाथ है।
लहकि उठी लाही जुआर अब झरसि गई।।

नेरे अलाव के बैठे हैं बंशी,
रामदीन, पलटू, परसादी, रघुवंशी।
रजपतिया गौने माँ ससुरे यहि बरस गई।।

मेंहदी महावर औ माथे की माँग भली,
लाल-लाल चुन्दरि माँ दुलहिन परदेस चली।
बिटिया का महतारी द्याखय ॅ तरस गई।
बदली जब बरस गई-बदली जब बरस गई।।

बरखा रानी

कबहुँ कबहुँ रतिया

कबहुँ कबहुँ रतियाँ पहाड़ जैसी लागै,
मंगिया केर सिंदुरवा अंगार जइसे लागै।

सगुन सोहाग रचावै सासू मइया,
बिना तोरे सजना सिंगार डसै लागै,
कबहुँ कबहुँ रतियाँ पहाड़ जैसी लागै।

बारे की ब्याही मोरे संइयाँ बिदेसिया,
सोने की जवनियाँ उधार जइसे लागै,
कबहुँ कबहुँ रतियाँ पहाड़ जैसी लागै।

माथे की टिकुरी जरावै मोर जियरा,
अँखियन केर कजरा कटार जइसे लागै,
कबहुँ कबहुँ रतियाँ पहाड़ जैसी लागै।

आवैं बहारैं औंर फूलै फलै बगिया,
तोरे बिन बहारे पतझर जइसे लागै,
कबहुँ कबहुँ रतियाँ पहाड़ जैसी लागै।

बरसे नयन जइसे बरखा बदरिया,
तोरे बिन कजरिया मल्हार जइसे लागै,
कबहुँ कबहुँ रतियाँ पहाड़ जैसी लागै।

डॉ. सियाराम

दहेज गीत

माई सेहियउ का तरसइ तोहार बिटिया,
लिखै अँगुरी कै खुनवा निकारि चिठिया।

कौनी विधि जियरा कै अगिया बुझाई।
बैठि कौनेउ कोनवा माँ रोवइव न पाई।
रोवत जौ मिली तौ परति लठिया।। माई...

काहि कुल गोड़नी पुकारथइ ननदिया।
ऐसी दरिदिरिन से भई काहे शदिया।
कहइ रोज यहिकै उठति खटिया।। माई.. .

दुबियउ कै छड़ी ना छुवाइव मोरी दहियाँ।
अब तौ परति बाटै उपरा बढ़निया।
खाइ सोइ जाई कवन टिकिया।। माई....

तुम तौ कहति रहिव सुना मोरी धेरिया।
तुँहका मँगाई लेबै लगतै अँजोरिया।
चिठियउ ना दिहौ बीत गई तिथिया।। माई....

हमरने करमवा माँ नाहीं सुख निंदिया।
मँगिया कै सेंदुरा और मथवा कै बिंदिया।
गिन-गिन तरवा कटति रतिया।। माई.....

बेंचि डारौ अबकी कै सगरिउ फसलिया।
दै डारौ पवन मोटर सइकिलिया।
नाहीं फिरि पौबा हमार लसिया।। माई.....

सियाराम मिश्र

फुलमतिया का दिन भरि काम

धूरि जमी पाँयन पर मोट
पँहिदे एक जाँघिया छोट।
लीखइ चमकँइ बिनठे बार
जूरा फटी किनारी क्यार।
बनियानी मा छेद तमाम
मइली जइसे धुरहा चाम।
चट्टी कबहुँ न पाइनि गोड़
पंड़रोहे अस चुये करोड़।
जह गरीब की बिटिया जाति
माछी पाँयेन धरि धरि खाति।

नींद भरे आँखिन मा गाढ़ि
डारिसि जानउ कौनउ डाँढ़ि।
यहिके बदि न बने स्कूल
अदिन गिनइ दुनियाँ करि भूल।
बेरि बेरि सुड़कइ अस नाक
घर मा गँजी रहइ जस लाँक।
झुके झुके लगवावइ धान
जमुहाई अउ सूख परान।
जाड़ेन सिकुड़इ गोबर बीनइ
जबरदत्त यहिका श्रम छीनइ।

नाक बहति पाथर भइ सूखि
भई हेंउतहरि पसुरी दूखि।
कोइला रगरे मुसकुर लाल
रहि रहि खजुरी करइ बेहाल।

थकइ खोड़हिला झौंरी लाइ
उप्पर ते घर, भरि अनखाइ।

भेदु अजब राखइ लुकवाइ
देखइ कबहुँ न पलक उठाइ।
दस पइसा का नाम म फूल
जेहिकी लाली कवि कै सूल।
सूधो लेइ न कौनउ नाम
फुलमतिया का दिनु भरि काम।
अइहै कबहुँ न प्रगति धँधाइ
मनु स्वतंत्रता केर खटाइ।

अनखा कबहुँ न पाइसि माथ
समता ममता दुअउ अनाथ।
जह उन्नति की खोलइ लाज
यहि बदि कौनउ साज न बाज।
विश्व बालिका वर्ष मनाइ
मानुष खुद का रहा हँसाइ।
दुखी जगत का यहु अंधियार
जानइ कब पइहै भिनसार।।

पाण्डेय रामेन्द्र

अयोध्या हमका लागि पियारि

चहूं दिसि सरजू जी छहरायँ,
राम कै पैढ़िउ नित हरसाय।
बिराजैं कनक भवन मा राम,
जउनु दुनिया के सोभा धाम।

गढ़ी मा हनुमत केरि हुँकार।
अयोध्या हमका लागि पियारि।

इहाँ के सन्त हैं नृत्य गोपाल,
फलाहारी हैं बड़े कृपाल।
रामचन्द करैं सदा प्रतिवाद,
देखि सब राम विरोधी हाल।

चलावैं नेतन पर तलवारि।
अयोध्या हमका लागि पियारि।

हियाँ तौ हरदम उत्सव होत,
देखि कै मनुवा पुलकित होत।
चहूँ दिसि राम नाम कै धूम,
मंदिर सब रहे अकासै चूम।

राम भवसागर देउ उबारि।
अयोध्या हमका लागि पियारि।

रज्जन

गर्मी

ताल, तलैय्या, 'नदिया सूखी, उतरि गवा है पानी।
लरिकउना पानी ही खेलैं, सूखी जाय जवानी।।
चलै लूक तौ देंही झुलसै, बूढ़ेन कै हैरानी।
बिलबिलायं सब हरहा मनई, बूढ़ा तक बौरानी।।

अरे बाप रे बाप सुर्ज से, बरसि रहे अंगारे।
हवा मारिगै चुप्पी जड़ से, चलति रहैं हउहारे।।
बड़े-बड़ेन के कपड़ा उतरे, घूमति फिरैं उघारे।
रहीं अबै तक घूंघट काढ़े, अब उइ मूड़ फिकारे।।

उल्टी-दस्त जोरु मारे है, आंखे लाल छुहारे।
फुड़िया-फुन्सी, पाका-फूटन, गर्मी लू के मारे।।
जकड़न, उलझन, ऐंठन, सूजन, हैं बुखार से हारे।
काटे नहीं कटै दिनु लम्बा, दिन में दिखते तारे।।

जहां न बिजली हाल हुवां के, कैसे तुम्हें बतावैं।
बेना लिए डुलावत घूमैं, मुंह और मूड़ बचावैं।।
पेट, पीठ से चुवै पसीना, रगड़-रगड़ खजुवावैं।
बिरवा तरे जुड़ाय बदी वइ, रातिउ सोय न पावैं।।

पानी पियैं तरी कुछु आवै, फिर पानी का धावैं।
मुसकिल होइगै चूल्हा फूंकब, फुसुर-फुसुर सब रवावैं।।
देंही लाल अधोरियन होइगै, नंगी द्‌यांह दिखावैं।
कबौ परी ना ऐसी गर्मी, 'रज्जन' तुम्हें बतावैं।।

त्रिलोकी नाथ त्रिपाठी 'निर्मोही'

फागुनी गीत

फगुनवा हो नेह मन मा जगावै!

गेहुवन कै बाली घुंघुटवा उठावै।
अलसाई अलसी नजरिया लगावै।
सरसों सिवनवां मां पियरी रंगावै
मटरिया हो मान सबकै बढ़ावै। फगुनवा....

अमराई सिर पै मउरवा सजाई।
पछुवां बयरिया महकिया उड़ाई।
झूमि-झूमि डरिया सोहरि मन भाई
कोइलिया हो हूक मन मा उठावै। फगुनवा.....

केतने जवानन कै लगन धराइल।
गवने कै दिनवां अहै नियराइल।
पपिहा पिहूं बोलि बगियन सोहाइल
गोरिया हो जोहै बटिया [illegible]नवा कै। फगुनवा.....

अरियन बगलियन कै होलिया मनावै।
रंग अबिरिया गुललवा लगावै।
मेउवन मिठइयन कै भोगवा लगावै
बुढ़वा जवान हमजोलिया बनावै। फगुनवा.....

अबकी बसंत कंत घरवां जौ आवै।
रखिहौं पलकियन मां निसरै न पावै।
'निर्मोही' घर कै सिंगरवा सजावै
सजनियां हो नेह मन मा जगावै। फगुनवा.....

डॉ. वीरेश प्रताप सिंह

राजीव गाँधी के प्रति

हे हिमाले कै चोटी
तिरबेनी कै धार
तोहे कैसे बिसारे अमेठी तोहार!

यै सड़कियै
सड़कियन के नारे के पेड़,
न मनिहैं कबहूँ
अबहूँ जोहिहैं तोहरै बाट।

तुहीं आये तौ
ठूँठे से हरियाये यै,
तुहीं से इनके दिन
इनकै यै शेखी-ठाट।।
आज दुनिया निहारै अमेठी तोहार!

यै लड़किवै
लड़िकवन केरे माइव बाप,
न मनिहैं तुँहका देखिहैं,
अबहूँ यै यक बार।

दौरिहैं
कौनौ हेलीकाप्टर जौ गुजरे,
निहरिहैं यक-यक जीप
झँकिहैं यक-यक कार।
तोहे जीतै न मारे अमेठी तोहार!

व्यंजना शुक्ला

पीर अधीर भई

घोर घटा उमड़ै-घुमड़ै
मन प्यासो फिरै चहुं ओर सखी री।
झींगुर की झनकारि झनै
अब नाचन लागे हैं मोर सखी री।।

पीर अधीर भई अबहूं तक
आये नहीं चितचोर सखी री।
बैरी भई पिय की सुधि नागिन
हवे भई प्रीति की डोर सखी री।।

नीर भरी रस की गगरी
झलकै लगी झूमि के सावन आयो।
बीथिन बीथिन घूमति हो
मन नाहीं कोऊ समझावन आयो।

दाह दहै दिन राति हिये
अबहूं तक ना मनभावन आयो।
मोरि सखी अबलों मोहि लागत
प्रानहि लेन को सावन आयो।।

ब्रह्मदेव यादव 'मधुकर'

तीन छन्द

मानव सुकर्म कइके धारन करइ न धर्म,
ज्ञान कइ लदाई गयी लादी कौने काम की।
नेता भक्त चन्द्र के समान जौ जवान नाहीं,
मेंदनी पै छाई ई आबादी कौने काम की।।
गाँधी अउर नेहरू समान जौ विचार नाहीं,
तन पै चढ़ाई गयी खादी कौने काम की।
सबही जौ जाबउ बरबादी वाली राह पै तौ,
भारत मा आयी ई आजादी कौने काम की।।

धर्म मा जौ राजनीति लावत मनीषि गन,
मानौ अमराई मा बबूल का लगावथैं।
जाति पाँति वर्ग भेद भावना उमंग भीर,
तमस तरंग के भुजंग का जगावथैं।।
एकता अखण्डता की प्रीति रीति भूलि हाय,
मानवीयता के विपरीत गीत गावथैं।
सदियन से प्यार मा गुँथाये पुहुपन हार,
धर्म कै नवीन ठेकेदार अलगावथैं।।

जातिवाद वर्गवाद भाषा और धर्मबाद,
देश औ विदेश कै विवाद न पटान बा।
राम रहिमान वाला वेद औ कुरान वाला,
अबही पुरान झगरा न निपटान बा।।
साँच अनुराग रूपी चंदन की डार पर,
फन पैं खराऊँ वाला नाग लपटान बा।
गाँधी के सुराज वाली और रामराज वाली,
सोने वाली चिरई पै बाज झपटान बा।।

डॉ. गौरीशंकर पाण्डेय 'अरविन्द'

रस कै धार उड़ेलिसि बदरा

उथल-पुथल मचिगा हिरदय मा, करिया बादर आवा,
गरजिसि-तरजिसि, उमड़ा-घुमड़ा, कल-कल करतै धावा;
चमकी बिजुरी सोर मचाइसि, भुंइ अकास बिच दउरा,
झूमि-झूमि के बरसा हरसा, आंगन खेतन चउरा।।

झरनै झरि-झरि नाचिन गिरि पै, ताल-तलैया भरिगे,
घर-बन मरुथल सबै हरखि गे, मानौ अब उइ तरिगे;
विजन खोह कानन मा पइठा, सब कै मन बहलाइसि,
राग अमर अम्बर मा कीन्हिसि, आपन गीत सुनाइसि।।

रस कै धार उड़ेलिसि बदरा, धक्कड़-धूरि मिटाइसि,
सोंधी-सोंधी गन्ध बहाइसि, केतकी हिय हरसाइसि;
ओले-पाथर अस छिटकाइसि, अंगना छिन भै चमका,
भंवरैं सब मंडराय लागि अब, रमणिन कै मुंह दमका।।

आंखिन की पुतरी हरसानी, दिल जुड़ान मन हरखा,
झुमुकै मीठि-मीठि धुनि जाइनि, झुकि-झुकि परा[illegible] बरखा;
पीतम मिलै भाव उर उमंगा, अंगै-अंग संजोइनि,
हरखि उमंगि सुधा रस पीबै, पिय मा चित्त डुबोइनि।।

मृगनैनी रमणिनि के केसै, लहरे लट हुलसानी,
हरखि उठीं बूंदै तन-आनन, तिरियन की अलसानी;
हरखीं-सरखीं देखि-देखि कै, मेघन की माला का,
अंग-बस्त्र का किहिन सुवासित, अलग किहिन लालन का।।

प्रनय-कोप से विमुख दुलहिनी, गरजत मेघ डेरानी,
कोप बिसारि प्रियन उर छपटीं, जद्दपि रही लजानी;
मादक वायु बहै तन उमँगा, लागी कलियै नाचैं,
लिहिनि बहाना बिजुरि कड़क कै, रमणी सजन उवाचैं।।

मेघ देवता तुम ना जायौ, हमका ना तड़पायौ,
तुमहिन ते धन धान घरन मा, पसु-पच्छिन हरसायौ;
जउन मयूर-मयूरी जोड़ै, उनका ना अलगायौ,
उत्कण्ठा का कबौ न जारेव, पावस भै उमगायौ।

अशोक टाटम्बरी

बसंत

महकै लगै दिगन्त तौ समझौ बसन्त है।
बहकै लगै जौ संत तौ समझौ बसन्त है।।
वइसै तौ चाहे जौन महीना हुवै मुला।
घर आइ जाय कंत तौ समझौ बसंत है।।

जागै लगै अनुराग तौ समझौ बसंत है।
भागै लगै बिराग तौ समझौ बसंत है।।
तन मा जौ लागि जाय तौ पतझार है मुला।
मन मा लगै जौ आंग तौ समझौ बसंत है।।

कोकिल करै पुकार तौ समझौ बसंत है।
भंवरा करैं गुंजार तौ समझौ बसंत है।।
पियरी पहिरि कै सरसई गोहूं का देखिकै
घुँघुटा दियौ उघार तौ समझौ बसंत है।।

बगिया लगै गुलजार तौ समझौ बसंत है।
झूमै जौ डार-डार तौ समझौ बसंत है।।
कोकिल कै कूक सुनिकै हिये हूक उठै औ
मीठा चढ़ै बुखार तौ समझौ बसंत है।।

पड़ि जाय गले फाँस तौ समझौ बसंत है।
मन मा बसै क्यों खास तौ समझौ बसंत है।।
जब काली कलूटी भी लगै चाँद सी गोरी
जब सिंह चरै घास तौ समझौ बसंत है।।

खुलि जाय जौ नकेल तौ समझौ बसंत है।
घर जानि परै जेल तौ समझौ बसंत है।।
'टाटम्बरी' कहैं जौ कभौ तेल के बिना
चलि जाय रुकी रेल तौ समझौ बसंत है।।

सब पाप जौ जलि जाय तौ समझौ बसंत है।
औ पुन्नि जौ फलि जाय तौ समझौ बसंत है।।
जे आंखि कै अंधा रहै औ गांठ कै पूरा
चेला उहै मिलि जाय तौ समझौ बसंत है।।

अंजनी कुमार 'शेष'

सिडनी ओलंपिक

एक बिटिहनी ट्रेन के जौ, डेब्बा मा बइठी आय।
मेंहदरवै जेतना रहे, वही म गये ओलियाय।।

ना किहिन बाप औ महतारी, घरे बर्थ कन्ट्रोल।
डब्लू टी लरिकै ससुरै सब, किहिन बर्थ कन्ट्रोल।।

देख जलेबी कै दोना जेस कुकुरै पूंछ हिलावैं।
सब अदरांय वही के आगे आपन अदा देखावैं।।

रंजीत हुवैं की रंजीता, अब तुंहसे काव कही।
एनहू के भये भवा सोहर औ थरिया बाज रही।।

बनत रहैं सबही अपुना का बड़का तीरंदाज।
देख लिहिस दुनिया सिडनी मा वीरन कै अंदाज।।

दहिउ दूध ना भावै इनका पेप्सी पियैं पखंडी।
एकि एक ठउरे कै मुंह देखौ जइसे भाय सिखंडी।।

इन्हैं अजायब घर मा राखौ या तू पिंजड़ा मा।
खड़ा कै दियौ तौ सबही खपि जइहें हिंजड़ा मा।।

छक्कै मारिन नाक कटाइन सारै हिन्दुस्तान कै।
उहै बिटिहनी लइकै लउटी झंडा हिन्दुस्तान कै।।

तारा चन्द तन्हा

हास्य-व्यंग्य

ऐसी बानी बोलिए, रोजै झगड़ा होय।
वोसे कब्भौ ना भिड़ेव, जे कुछ तगड़ा होय।।

साबुन लाग शरीर मा, चला गवा जौ नल।
दिल हमार यस टूट गै, जइसे जनता दल।।

हमका वैं दिखलाय रहीं, माया जैसी ताव।
हमतौ चुप्पै बइठ हन, जेस नरसिम्हा राव।।

डाका

एक सेठ के घर मा डालिन डाकू लोगै डाका।
लूटै के बाद मा यतना पीटिन काव बताई काका।।
डकुवा बोला थाने मा तू जाय रपट लिखवाय दिहौ।
हमका कौनौ डर नाहीं चांही इ नाम बताय दिहौ।।
कहिन सेंठ कि अरे हुजूर रपट औ हम लिखवाई।
का इहै चाहत हौ थाने जाई हुवौं पै लूटा जाई।।

दोहा

रोटी की चिन्ता उसे, मिल जाये दो जून।
कांप रहा था ठण्ड से, बेंच रहा था ऊन।।

छज्जे के ऊपर खड़ी, बांट रही मुस्कान।
जैसे कागज पर बंटे, सरकारी अनुदान।।

मैं मन में था जिसके लिए श्रद्धा लिए हुये।
एक दिन मिला वो राह में, अद्धा लिए हुये।।
करते रहे चोरी से वे जंगल का सफाया।
मन्त्री बने फोटो छपी पौधा लिए हुये।।

श्यामजी पाण्डेय 'करुणेश'

बसन्त

पीत परिधान से सजा बा सगरौ सेवान,
चहुँवार धरा पै अनोखी छबि छाई बा।
गावै कलकंठ मृदुरागन मा बागन मा,
पीर पोर-पोर मा बियोग कै समाई बा।।
उर मा लगावै आगि काम, बौरि गये आम,
बहति समीर महकति अमराई बा।
परदेसी प्रीतम कै आवै सुधि बार-बार
'करुणेश' लागत बसंत कै अवाई बा।।

मानौ मधु माँ सनी बा सारी राति आजु-काल्हि,
अलसान लागै भिनसार मधुमास माँ।
त्रिबिध समीर के बहे से मह-मह-मह,
महकत अंगना दुआर मधुमास माँ।
लागाथै दिहीसै झनकारि जादूगर मार,
सबके हृदै कै तार-तार मधुमास माँ।
देखि ल्या मुदित वै प्रकृति सुन्दरी किहिस,
'करुणेश' सोरहौ सिंगार मधुमास माँ।।

पछुवा पवन के चले से निज पीत पट,
फहर-फहर फहरावत बसंत बा।
गमकि उठी बा दसौ दिसा 'करुणेश' अस,
गली-गली सौरभ लुटावत बसंत बा।
देखा मधु ऋतु माँ रसालन की डारन से,
मधु रस बूँद टपकावत बसंत बा।
बानी सुररानी कै जनाति यहि मेर मनौ,
स्याम बनि बाँसुरी बजावत बसंत बा।।

आचार्य सूर्यप्रसाद शर्मा 'निशिहर'

अवधी हाइकु गीत

चलौ बइठी / बाहेर मैदान मा / घामु है जहाँ।
लेइ गरमी / देत रबि दान मा / घामु है जहाँ।

सरदी कड़ी / भीतर मकान के / गलनि बड़ी
जगा जगा मा / जइसे बरफ कै / परठ जड़ी
खिलै चेहरा / आवै जानु जानु मा / घामु है जहाँ।

मुसका रही / रबी हरि ख्यात मा / रूपु सँवारे
महकि रहे / सुमन बाटिका मा / सुन्दरि न्यारे
मगन भौंरा / फूल रस पान मा / घामु है जहाँ।

बिरवा सबै / मउनि ठाढ़ि सीधे / गरमा रहे
हरहा सबै / सांत बइठि ठाढ़े / पगुरा रहे
मानौ खुस हैं / मीठि बीन तान मा / घामु है जहाँ।

कुछु चुनती / दाना धरनि पर / ढूँढ़ि ढूँढ़ि कै
कुछु उड़ती / फुर्र फुर्र करिकै / घूमि घूमि कै
मत्त बहुती / चिरइया गान मा / घामु है जहाँ।

ऊनी कपड़ा / 'निसिहर' हैं धारे / लिहने संगी
हैं सउखी जो / उड़ावति पतंगै / रंग बिरंगी
देखा परती / ऊँचे आसमान मा / घामु है जहाँ।

डॉ. जयसिंह व्यथित

अवधी दोहे

चुहिया घर-खरिहान मा, सकतहुँ देखी जाय।
ई दुसमन इन्सान कै, घुसि-घुसि दाना खाय।।

चूहा मारै के बदे, छेड़ा अब अभियान।
बस्ती भूखन ही मरै, खाये सगरौ धान।।

चूहा घर से खेत ले, फइलाये बा जाल।
खाय अउर खोदै सदा, टेढ़ी ओकै चाल।।

चूहा चंचल चाल मा, बहुत बड़ा सैतान।
मुला बिलारी से डरै, उहै मिटावै सान।।

करै कुतर नुकसान खुब, जाना ओका मूस।
बसि जावै घर खेत मा, रहै न पावै फूस।।

बिल्ली घर मा पालिकै, सोवा टांग पसारि।
चुहिया दुसमन देखि कै, कहां मचावै रारि।।

चूहा मारै कै दवा, घर मा राखा भाय।
यहि दुसमन के दांव कै, दूसर नायं उपाय।।

चूहा बिलि मा जाइकै, कुतुर-कुतुर कुतुराय।
दुसमन से निसचिन्त होय, मन्द-मन्द मुसुकाय।।

अनुज प्रताप सिंह

गांधी बाबा

गांधी बाबा आयेन
फेरि आज़ादी कै लड़ाई मां
आपु जुटेन औ सभइ कै जोड़ेनि
सब बहुत रहा ठीक
हम पञ्चेउ चलेन साथ
भरेन जेल
तोड़ेन हुकूमत गोरी
सब भयेन गांधी कै भगत
मुला अबै सब गड़बड़;
जेकरे खातिर किहेन
सब त्याग-तपस्या
अब उहइ कहत बा ढोंगी बाबा
जे बना रहा लंगोटिया यार
औ करत रहा सेवकाई
बना रहा पुजारी - समता-ममता कै
अब लूटै बिना मुरौवत जग
जउनइ तूं बरकावत रह्या
उहइ अब होत अहै
अब मटमइला अंगरेज भारतिन कौ
फेरि से पाठ पढ़ाव तूँ
बाबा गांधी
जग उद्धार करऽ
अब फेरि से आव तूँ
रावण कै राज सबै छापे बा,
तोहरे रामराज कै चारिउ आरी,
तोड़त अहै फुलवारी
माली।

रामेश्वर सिंह 'निराश'

करेमुआ कै साग हो

कजरी, कहँरवा कै कहाँ गवा राग हो,
मकरा कै रोटिया करेमुआ कै साग हो।

हमरे इनरवा कै कहाँ गै धुरहिया,
दिन रात चला करै जहाँ पुरवहिया,
कुंवना झुरान सबकै फूटि गई भाग हो,
मकरा कै रोटिया करेमुआ कै साग हो।

गुल्ली-डंडा खेले जहाँ सब केहू मिलिके,
गोरुवै चराये जहाँ अपसै मा जुटिकै,
कहँवा हेरान बचपनवा कै बाग हो,
मकरा कै रोटिया करेमुआ कै साग हो।

आजी हमरे कंडा पाथैं रोज पिछवरवा,
बाबा जगावैं हमका होत भिनसरवा,
माई के कोरवा कै कहाँ अनुराग हो,
मकरा कै रोटिया करेमुआ कै साग हो।

भाईचारा, एकता कै बिजवा तू बोवा,
नेहिया की निरिया से कटुता तू धोवा,
इरषा कै केहु न जरावा अब आग हो,
मकरा कै रोटिया करेमुआ कै साग हो।

चन्द्रप्रकाश पाण्डेय 'मञ्जुल'

झोला छाप डाक्टर

मरीजन बदे अभिसाप अही,
हम डाक्टर झोलाछाप अही।

सुनि के सबकै खरी-खोंटी, अही चलावत रोजी-रोटी
चाही जेकेव हमका डाटै, हम तो पढ़े लिखे न बाटे
गली-गली म यहरी-वहरी, दिन भै सइकिल लै के टहरी
सब से कहित थै टाप अही। हम डाक्टर झोलाछाप अही।।

पुरवा पाहिन म हम जाई, दिन भै लूटम लूट मचाई
बैठ रही थै घण्टा-घण्टा, सुई लगायी अन्टा-बन्टा
पेट पिरान जौ केव कै होई, दवा बोखारे कै हम देई।
इयर आई ड्राप अही। हम डाक्टर झोलाछाप अही।।

भरी थै रुपिया से हम झोली, दी अनाप-सनाप कै गोली
होंय अचेत तुरन्तै खातै, घूंसा पाइत थै हम लातै
हारे न मुंह से मुंह भइया, मरी रियक्सन म रमदेइया
खुल्लम-खुल्ला छूट हमै बा, जौन कही सब तौन कमै बा
तू का जनब्या हमरे बारे म
सी.एम.ओ. कै बाप अही। हम डाक्टर झोलाछाप अही।।

टीन टन-टनऊआ टंगवाये, बड़ा के बोड बनवाये
रात चौगुना औ दिन दूना, मोट हरफ न एम.एस. पूना
लिखवाये लगाई चूना, कवि मंजुल खुब गूना धूना
नाक कान औ गला विशेषज्ञ
सर्जन अपने आप अही। हम डाक्टर झोलाछाप अही।।

बृजेश कुमार पाण्डेय 'इन्दु'

तरइया मोरे देस कै

दूरदृस्टि ठीक करा कुछ ना बेठीक लागे,
सबसे चटकि बा तरइया मोरे देस कइ।
रहा अनुसासित सुबासित किहे रहा तउ
महलउ से नीकि बा मड़इया मोरे देस कइ।
छोटि-मोटि जड़ी बूड़ी टाँगी रहइ खूँटी-खूँटी
जहरउ उतारा थइ बिरइया मोरे देस कइ।
असगन होये कइसे सब गुन भरा बाटइ
सगुनउ बिचारा थइ चिरइया मोरे देस कइ।।

दास की दसा को देखि प्रभु अकुलता इहाँ,
प्रभु की दसा को देखि दासउ अकुलात है।
म्हारी एकता का भला 'इन्दु' कौन तोरि सकइ,
बकइ जेकरे जौन मुँह मा अमात है।
इहाँ भाईचारा दया-सिन्धु मा नहात सदा,
ध्वज समरसता का नभ फहरात है।
इहाँ बिस्फोट से जो लागत है चोट कहूँ
एक के दुखात पूरे देस के पिरात है।।

कउनो दिन अस आये सेस छूटि भ्रम जाये,
रोज-रोज वाली हूँसा-हूँसी छूटि जाये ई।
सेंधि मा हलाइ के दरोगउ का बोलाइ लिह्या
अब रात-दिन वाली मूसा-मूसी छूटि जाये ई।
एक ओरी नेवला अउ दूजी ओर साँप पालि,
खाल खींचि उठे लाई-लूसी छूटि जाये ई।
मुद्दा कासमीर नाइं मुद्दा हइ आतंकवाद,
पाला अब परा बा लाला भूसी छूटि जाये ई।

बड़े-बड़े दानी महादानी सब जुटि आये,
सब तउ लुटाइ रहे भरि-भरि अँजुरी।
अँजुरी मा रोपि-रोपि गगरी का भरि लेउ,
आपन सँवारि लेउ टूटि-फूटि नगरी।
गगरी मा दाना देखि फेरि जउ उतान भया,
झिंगुँरी कहत रहे बूकि उठे पजरी।
बिछुआ क मन्त्र नाइं जानूया परवेज तबउ,
साँप के मुँहे मा तू घुसेरि दिह्या अँगुरी।।

ओम प्रकाश तिवारी

अबकी चुनाव हम लड़ि जाबै

तुम्हरै सपोर्ट चाही ददुआ
अबकी चुनाव हम लड़ि जाबै।

कीन्हेंन बहुतेरे कै प्रचार,
जय बोलेन सबकी धुआंधार,
दुइ पूड़ी के अहसान तले
सगरौ दिन कीन्हेंन हम बेगार।
जब तलक नांहिं परि गवा वोट
नेकुना से घिसि डारिन दुआर,
अब जीति गए तौ ई ससुरै
चीन्हत नाहीं चेहरा हमार।

अबकी इनहिन सबके खिलाफ
हम टिकस की खातिर अड़ि जाबै।

छपुवाउब बड़े-बड़े पर्चा,
करबै पुरहर खर्चा-वर्चा,
ददुआ तनिकौ कमजोर परब
तौ मांगब तुमहूं से कर्जा।
चहुं दिसि होई हमरी चर्चा,
पउबै हम नेता कै दर्जा,

लोगै हमका द्याखै खातिर
करिहैं दस कामौ कै हर्जा।

अबकी दिल्ली दरबार मा हम
अपनिउ एक चौकी धरि द्याबै।

मूंठा राखब आपन निशान,
पटकब विपक्ष कै पकरि कान,
करवाय लेब कप्चरिंग बूथ
बंटवाय देब सतुआ-पिसान।
अबहीं तक छोलेन घास बहुत,
अब राजनीति मा भै रुझान,
तौ जीति के ददुआ दम लेबै,
मनहीं मन मां हम लिहेन ठान।

धोबी कै वोट मिलै खातिर,
गदहौ के पांयन परि जाबै।

जब पहिर के निकरब संसद मां
हम उज्जर कुर्ता खादी कै,
चेहरा जाए झुराय ददुआ,
नेतन की कुल आबादी कै।
अबकिन चुनाव मा नापि लियब
जलवा इन सबकी आंधी कै,
एक दिन मा लै लेबै हिसाब
हम भारत की बर्बादी कै।

संसद मा प्रश्न उठावै कै
हम एक्कौ पैसा न ल्याबै।

है याक अर्ज तुम सब जन से
अबकी बिजयी करिहौ मूठा,
जैसन जीतब ददुआ तुमका
दिलवैबे शक्कर कै कोटा।
आलू-पियाज अफरात रहे
न परै देब तनिकौ टोटा,
तुम सबका सैंक्सन करवैबे
जस्ता कै थरिया औ लोटा।

विश्वास करौ हम संसद मां
एक टका दलाली न खाबै।

भगवती प्रसाद अग्निहोत्री

तुमहे गांसे हौ

तुमरी बदि कै हम प्रान दिहेन
तुमहे प्रानन के प्यासे हौ।
तुमका हम समझेन फूलु मगर
तुम कांटन के गुच्छा से हौ।।

दिनु राति कै दिहेन एकु मुला
तुम करा धरा सब भूलि गयेउ
हम वैसइ दूबर पातर हन
ब्वालौ तुम कइसे फूलि गयेउ
भइ गलती हम बिसवास किहेन
मुलु दगाबाज तुम खासे हौ।।

तुमरी सतरंगी चालन का
हमहे का सब जन जानि गये
तुमरे दिमाग की तेजी का
हैं सब जन लोहा मानि गये
रैफल अद्धी कट्टा ग्वाला
पिस्तौल दुनाल गड़ासे हौ।।

जब तक मौका है दांइ लेउ
इउ ब्यार ब्यार फिरि ना आई
तुम रकत केर आंसू रोइहौ
देहीं की चरबी छंटि जाई
नेता जी जनता कहां जाइ
चारिउ लंग तुमहे गांसे हौ।।

आनंदप्रकाश अवस्थी 'नन्हें भैया'

चैती

बहै लागी चैती बयरिया हो रामा
हमरे सिवनवां।

सोन बरन भइ गोहुंवा कै बाली
मन महकावै लागी मसुरी कै लाली
करै लागी अल्हरी गोहरिया हो रामा।।

मोटरी मोटानी बेझरवा बुढ़ाने
राई झुरानी रहिलवा दढ़ाने
झरै लागी उजरी मोटरिया हो रामा।।

महुआ चुवन लागे रस भरी बुंदिया
पसरी उजेरिया सी धरती की गोदिया
भरै लागी मौनी डेलरिया हो रामा।।

बौरन फरिगे टिकोरे ललनवा
अमवा की डरिया झुलावै ललनवा
हरै लागी बगिया नजरिया हो रामा।।

कोइलरि कूकै पपीहा पुकारै
भउजी की अंखिया ननदिया निहारै
मुरै लागी खिरकी मुहरिया हो रामा।।

आदित्य वर्मा

चाहै नगद या उधार

पहिरे किरनियक हार
निबिया ठुमकै दुवार
हम्मै पिया हंसुली गढ़ाय देव।

बड़े भिन्नही उठि भोरहरिया, खोलै ढेरन रंग पेटरिया।
धरा गगन सोना छितरावै, चमकै बेंदिया लिलार।

हम्मै ऐसै टिकुली मंगाय देव
चाहै नगद या उधार।।

बिरिछ पुरानी पाती झारैं, नवा नवा परिधान निकारैं,
बूटन बूटन फुनगी सजिगै, किसलय किसलय डार।

हम्मै ऐसै सारी मंगाय देव
चाहै नगद या उधार।।

अरसी मसुढ़ी रंग रंगीली, घास सुरमई लाही पीली।
नीले तिल बैजनी चना के, फुलवन कै भरमार।

हम्मै ऐसै चुनरी रंगाय देव
चाहै नगद या उधार।।

सनन सनन पुरवा सनकारै, पछुवा निहुरि घर अंगना बहारै।
मह मह महकै बगिया सेवनवा, गम गम गमकै जंवार।

हम्मै आज पौडर मंगाय देव
चाहै नगद या उधार।।

ताल तलइया रूप संवारैं, झुकि झुकि अमऊ कलंगी निहारैं।
मेढ़े मेढ़े नाटक खेलैं, लोखड़ी मुसऊ सियार।

हम्मै चलौ पिक्चर देखाय दियौ।
चाहै नगद या उधार।।

डॉ. मुहम्मद अख़लाक़

बदरा

झूमि झूमि झमकि झमकि बदरा तौ बरसैं
मुलु याक बूंद हम तक ना आवै।।

बदरी तौ उमड़ै मुलु उमड़नि का देखि देखि
अब ना हुलसै मन का मोर।
यहै लगै आजु गवा कामु तौ मुसीबति है
महंगी भै केतनी बरजोर।।
एकु चित्तु कहै चलौ भीजी जीवन रस मा
एकु चित्तु कामे का धावै।।

कजरी के बोलु गयेन भूलि टूटि गे झुलुवा
बिरवा सब गिरिगे भहराय।
सांस लेक फुरसति तौ मिलति नांय दिन भरि मा
अइसे मा घुघुरी को खाय।।
कइस कइस संघी सब जहां तहां छूटि गये
लरिकइयां यादि बहुतु आवै।।

स्वारथ का मौसम रगदाय लेति है हनका
भूलि गवा रितुन केर मोलु।
जाड़ा सरदी गरमी याक तना लागति है
जियरा मा परिगा है झोलु।।
आपुलि के दलदल मा जिन्दगी समाय रही
याक साथ र्‌वावै औ गावै।।

सत्यधर शुक्ल

आवा बसंतु

आवा बसंतु, आवा बसंतु।

टेसुन मां आगी बरै लागि
लखि भीर भौंर की जुरै लागि
हंसि परी प्रकृति पाटम्बर सजि
क्वैली कू कू सुर भरै लागि
जाड़ा पाला का भवा अंतु।

छिति पर छवि छहरी हरी भरी
चिरई सब मिलि गावति निकरी
चातक की कौनु कहै भइया
रट पी पी की जनु बाट परी
बनिके आवा सबका महंतु।

फुलवा फूलैं बन ऊलि ऊलि
कोमल डारन पर झूलि झूलि
दिनु छिनु छिनु बाढ़ै हड़ै घामु
बरग्यलिया ल्वाटै धूलि धूलि
पियराइ उठा सब दिग-दिगंतु।

फारूख़ सरल

मड़इया

ई ऊँचे महलवन से भइय्या नीकि लागइ
हमारि घास-फूस की मड़य्या नीकि लागइ

भीती देवालय हइं अरहरी की टटिया
टुटला खटोलवा हइ फुटरी है लोटिया
खुलिकइ अंगनवा मा लागइ बयरिया
छपरन से छनि-छनि आवइ उजेरिया

गरभो मा कइसन पुरवय्या नीकि लागइ
हमारि घास-फूस की मड़य्या नीकि लागइ

उनके महलवन मा लागी बिजुरिया
छिनही पइ चली जाइ कइ कइ अन्धेरिया
हमरी मड़य्या मा माटी का दियना
कपड़ा की बाती बरति सारी रैना

अंगना मा नखत जोंधइया नीकि लागइ
हमारि घास-फूस की मड़य्या नीकि लागइ

ललना महलवन के ख्यालइं खेलउना
हमरे ललनवा खेलावइं पिलौना
उनके पिलास्टिक के बाघ बघउना
हमरे लला द्याखइं असली बिलउना

छपरा पइ बैठि चिरइया नीकि लागइ
हमारि घास-फूस की मड़य्या नीकि लागइ

आधी पिग्लिया से मुहिका उइ जाइं
हमरे तौ गगरा भरि सरबतु डकारइं
हलुआ पर्याउन से पेटु रहइ बिगरा
ग्वाड़इं कुदरिया हजम दुइ ठिकरा

भूखे मा अकरी क्वदइया नीकि लागइ
हमारि घास-फूस की मड़य्या नीकि लागइ

जिनके सजन गये पइसा कमावइ
गद्दा मसेहरिन पइ निंदियां न आवइ
संग होइं सजनवा तौ फटही चटइय्या
नुचला बिछउना औ गुदरी रजइया
रतिया का दसनी प्वेंदहिया नीकि लागइ।
हमारि घास-फूस की मड़य्या नीकि लागइ

अनुराग आग्नेय

हापा दैया

को ले जीवन केरि बलैया।
चारिउ वर है हापा दैया।।
सूखे नद्दी ताल तलैया।
चारिउ वर है हापा दैया।।

धरा पियासी तड़पैं बिरवा
कहां चली गै सब हरियाली।
बिनु पानी दुनहू तड़पति हैं
मछरी रानी औ गौरैया।।

जल मा आगि लागि है मानौ
मनई मुलु अपने मा गाफिल।
यादि करै का बसि रहि जइहैं
बड़ि बड़ि बूंदैं छप्पक छैया।।

यू पानी जीवनु है जानौ
बचा रही तौ तुमहू बचिहौ।
तबहेन अपन दुलारु बहइहैं
ई धरती पर बछरा गैया।।

ब्रह्मासिंह चौहान 'ब्रह्म'

आस्था के फूल

पर सेवा का ढोंग रचाये हुए,
कर वंचन जाल बिछाते फिरैं।
विधवाश्रम आज बगीचे हुए,
भँवरों से सभी मँडराते फिरैं।
वही राष्ट्र हितैषी कहाय यहाँ
धन पी पी के पेट फुलाते फिरैं।
कुरसी धन है कुरसी मन है
कुरसी से सदा लिपटाते फिरैं।।

जस बीज बये तस वृक्ष उगी,
बबुरेठा में आम कहाँ फरिहै।
अस अन्न चखौ मन भी बनि है,
जस हो मन सो करमौ करिहै।
जोइ कर्म किये असदौ सदतौ
फिरि वैसी ही नींव इहाँ परिहै।
फिर जैसे समाज की नींच बनी,
अगुवा उनके तस ही बनिहै।।

पुरुषत्व चढ़ा लक्ष्मी पद पै,
जो पै नारि कमाई की आस जिया।
निज गौरव वंश लुटाय सबै,
पुरुषत्व की नाक कटाय दिया।
घिव दूध मलाई के भोग लगा,
बिड़ला बनने मन चाह लिया।
सुत नारि का भार जो ढो न सका,
मन अंतर ग्लानि कभी न किया।।

मोहन चन्द्र त्रिपाठी

अंखिया बरसाय चली

निज नेह निचोयि पियावा जिन्हैं,
अरु नेह की रीति सिखावा जिन्हैं!
सब साथ पलैं सब साथ बढ़ैं,
लरिका अरु भांति जियावा जिन्हैं।
कुछु भेद हिये हमरे न रहा,
संग आँचर दूध पियावा जिन्हैं।
रसरी से बंधी बछरी दुलरी,
अब हांथन और थमावा जिन्हैं।।

कछु प्रीति पराग नहाय चली,
रस के गगरी ढरकाय चली।
अंगना हमरे मा सोन कनी,
पथ औरनहूँ महकाय चली।
अब लौं मृग छौनी रही दुलरी,
जननी हियरा दरकाय चली।
बदरी बरसैं कित जाय भले,
सगरी अंखिया बरसाय चली।।

न्यायमूर्ति शिवनाथ मिश्र

मानस रघुवंश

दो०- *गिरा अर्थ सम एकरस गिरा अर्थ सिधि काज।*
बंदउं जग जननी जनक उमा सहित गिरिराज।।

कहँ उदार दिनकर कर बंसा। कहाँ छुद्र मम मति कर अंसा।।
लघु तरनी पर होइ सवारा। कीन्ह चहउं ज‌ु सागर पारा।।
मंद बुद्धि कवि-जस अभिलासी। होइहि मोरि जगत महँ हांसी।।
बामन सरिस उठेउ कर मोरा। चहत उतंग फलित फल तोरा।।
तदपि पूर्ब के सुकबि सयाने। इहि कुल के सुचि चरित बखाने।।
करिहउं मैं प्रवेस तिहि द्वारा। तिन सूरिन्ह जौ प्रथम उघारा।।
वज्र रतन भेदइ इक बारा। सूत्हु जाइ सहज तिहि पारा।।
ताहि सूत समान गति मोरी। काज कठिन उत इत मति भोरी।।
जिहि कुल जनमि मनुज इक बारा। करइं जियत लगि सुचि व्यवहारा।।
तब लगि सदा करम रत रहहीं। जब लगि नहिं अभिमत फल लहहीं।।
सिंधु तीर लगि राज बिताना। तिनके चलहिं [illegible] रथयाना।।
बिधि अनुरूप करहिं जे यागा। देहिं जाचकन्हि ध[illegible] मुहमांगा।।
जाकर जस अपराध प्रमाना। करहिं तासु त[illegible] दंड बिधाना।।
देखि कालगति जुग ब्यवहारा। रहहिं सजग तिहि के अनुसारा।।
त्याग हेतु धन संचय करहीं। सत्य लागि मित बचन उचरहीं।।

दो०- *करहिं विजय इहि कारन, फहरहिं जग जयकेतु।*
ग़ृही धरम जे स्वीकरहिं, केवल संतनि हेतु।।

अब्बास अली 'वास'

सीता स्वयंवर

विकलांगता से ऊबकर शून्यता से उगी,
रचना प्रबन्ध काब्य-रुचि जरठाई में।
मानस-मनन मेरा कविता-स्फुरण रहा,
प्रबल विश्वास बाल-पन विरचाई में।
है, सीता स्वयंबर ही मानस कथा का मूल,
कारण औ कार्य परिणाम-विविधाई में।
'वास' की विवशता ढिठाई पै उतर आई,
त्रुटियां बरायें अपनायें कविताई में।।

आंचलिक अवधी के शब्द अपभ्रंश भरे,
रचना विशुद्ध खड़ी बोली की खरी नहीं।
अज्ञता, अयोग्यता, अक्षमता हमारी कहीं,
छिपी न छिपाये, सुधराये सुधरी नहीं।
मानस कथा की परिकल्पना न तोड़ी, भले
कहीं थोड़ा जोड़ा कुछ छोड़ा बिगरी नहीं।
चरित-पुनीत है प्रतीति कि पढ़ैंगे लोग,
बांस-फांस से अस्वादु होती मिसरी नहीं।।

सुभाष ऋतुज

अचलेसुर का मेला

फगुनहटे शिवराति परी भा अचलेसुर का मेला।
लिहे डोलची, लोटिया, शीशी चला जंवारी मेला।।
निकरीं घर से बुआ, घरइतिन, भउजी, आजी, नानी।
कोऊ भरे चला गंगाजल, कोऊ नल का पानी।
गावत चलीं झुण्ड मा तड़केनि भजन बहिन जगरानी।
झटपट पहुंचि चढ़ावैं लागीं भांग धतूरा केला।।
मंदिर से पहिले मिलिगें कुछ फूल पात लै माली।
कउनो दियै बेलपत, बइरी कउनो जौ कै बाली।
कउनो कहै कंदेल लियौ तुम भरी गुलाबन डाली।
हम बोलेन सब साथे लायेन गेंदा केला बे.ाा।।
पिण्ड छोड़ावत सुरजै खुलिगै तव हम नीर चढ़ावा।
मंदिर के बाहेर-भीतर अनगिनतिन धक्का खावा।
जब वहिसे बाहरे निकरेन तबहीं जिउ मा जिउ आवा।
बाहेर बाटैं भस्म गो[illegible] मांगै शिव [illegible]ेला।।
घुनुवा, मुनुवा, कलुवा, ललुवा लागि पइसवा मांगै।
कीचर प्वांछैं कहै सबै हम म्याला द्याखै जाबे।
घड़ी, बांसुरी, लाल-लाल हम बप्पा चश्मौ ल्यावै।
लढ़ियन मा लदिगें कुछ चढ़िगें सैकिल, टेक्टर ठेला।।
मेला द्याखै का फिर तो प्रोग्राम बनाइन काका।
भांग छानि के निकरेन घर से लागै लागि ठहाका।
बिन पइसा का पौडर पोते आगे मिलीं बुलाका।
मेला पहुंचेन सुरू भवा फिर भइया ठेलम-ठेल[illegible]।।
फोटू कहूँ खेलउना, जादू बइठि लरिकवा द्याखैं।
पोथी अउर पत्तरा पंडित, बासन सेठवा ब्यांचैं।
बीच-बीच हम लड़खड़ाइ तो ककुवा भासन बांचैं।
डपटि कहैं ससुरअनू आई का जूतन कै बेला।।

गरमा गरम जलेबी शितली खड़ी मजे मा चापै।
पहुंची चाट चटपटी देखिनि धन्नो अपने आपै।
बढ़की चलु बेलना लइ लेई, छोटकी रागु अलापै।
बढ़की कहै ल्याब हम पहिले गगरी अउर पतेला।।

रमिया, छमिया, टिकुली, बुन्दी, पिस्टिक नथ मोलुवावै।
बड़े चाव के साथ बिसाती हंसि-हंसि रैट बतावैं।
पाहुन खड़े निहारैं पाछे मुलु कुछु कहि ना पावैं।
आजु सबै कै चांदी भइया सबका हेला-मेला।।

देसी सुलतानपुरी

चांद निकसा है

छाप के डिप्टी का अइसन ठाढ़ भा हमरा वकील।
जैसे डांगर पै गिरत हैं राम धे कउवा औ चील।।

यहि तिना बंहसत रहे बाबू चिरागुद्दी वकील।
जैसे लूगा की मसीनी मा चलै तागा कै रील।।

बउरहा कूकुर की नाईं ऊ गजब डहपट रहा।
बहसतै बहसत मा ऊ मेजी पे चढ़ बइठत रहा।।

बूक के कुल धै दिहिस जेतना रहा कइदा कनून।
यस कतौ चरफर न देखा घूमा हम बरमा रंगून।।

चांद निकसा है अकासे पै तौ तारा लइके।
शायर आए हैं मुसहरा मा तौ आरा लइके।।

ई है दस्तूर बुजुरगन कै कि मोछा अंइठौ।
कउनौ महफिल मा जौ बइठौ तो अकड़ के बइठौ।।

दिन

सब-सब के सोझ लागे, जब दिन सोझाइ जाये।
सब-सब के टेढ लागे, जब दिन टेढ़ाइ जाये।।

जेबा में रहइ पइसा, पेटे में रहइ रोटी।
बरसत रहइ कमाइ, चमकत की रहइ कोठी।
दरसन के देश तरसे, धनि-धनि जे पाइ जाये।।

केतनौ रहइ छोटाई, केतनौ रहइ निचाई।
ऊ सबसे बड़ा लागइ, सबही करइ बड़ाई।
लक्षिमी के तरे अवगुन, अनपढ़ हेराइ जाये।।

सच्चे के कहे झूठा, झूठे के कहे सच्चा।
साधक के कहे कुबही, डाकू के कहे अच्छा।
काटइ जे बात आये, अपुनइ कटाइ जाये।।

पातर दिने के मनई, जेइसे झुरानि पाती।
बरखा बतास मारइ, केउ मीत न संघाती।
अबरे के आखि रहते, आन्हर बताइ जाये।।

मनई के दिन घटावइ, मनई के दिन बढ़ावइ।
मनई त सब बरोबर, कुलि दिन करइ करावइ।
दुनिया हौ दास दिन क, दिन सब के खाइ जाये।।

दिन से लड़इ लड़ाई, जोगी जती गियानी।
कर्मठ कठोर छन-छन, शुभ साधना के सानी।
सब दिन से हार बाटइ, दिन ओन से हारि जाये।।
सब-सब के सोझ लागे, जब दिन सोझाइ जाये।।

भोलानाथ 'अधीर'

अवधी-गीत

सब गदहन का बाप बतइहौ, का बइठे खोपड़ी खजुअइहौ।
छप्पर पर उल्लू बइठइहौ, का बइठे खोपड़ी खजुअइहौ।

नेतन का, अधिकारिन का, अपराधिन का गरियावत हौ,
लेकिन परइँ सामने तउ, सब आपन मूड़ नवावत हौ।
का अब इहै चाल अपनइहौ, का बइठे खोपड़ी खजुअइहौ।।

बड़े बड़ेन की बातें छोड़उ, ई छुटभइये का कम हैं,
इनसे खतरा सबसे ज्यादा, ई राखत कट्टा बम हैं।
कइसे आपनि जान बचइहौ, का बइठे खोपड़ी खजुअइहौ।।

बिना दिहे मनचाहा चन्दा, रहिहौ भला मोहल्ला मा,
व्योपारी नहिंकारइ समझौ, चौपट अगले हल्ला मा।
कब तक.आपन माल खवइहौ, का बइठे खोपड़ी खजुअइहौ।।

अगवा, पकड़, अपहरण सुनि सुनि सब के सब सन्नाटे मा,
यहि मा लाभइ लाभ, अउर बाकी सब धन्धा घाटे मा।
लरिकन का का इहइ सिखइहौ, का बइठे खोपड़ी खजुअइहौ।।

अर्चना शुक्ला 'सपना'

बापू अँखिया मा अँसुआ....

बापू अँखियाँ मा अँसुवा न लावा करा,
चाहे मंगिया भरे, न बजे बजवा।

पढ़ि-लिखि बापू मोरे बनिबै सहेबवा,
करिहैं गुलमिया हमरी बड़े-बड़े लोगवा।
तनी माया क मोरे समझावा करा,
बापू अँखियाँ मा अँसुवा न लावा करा।

मटिया अंगनवा कै मथवा लगउबै,
चुड़िया कंगनवा क अगिया जरउबै।
मोरी भगिया से नाहीं घबरावा करा,
बापू अँखियाँ मा अँसुवा न लावा करा।

यतनी गरिबिया की आयी न बरतिया,
लाली चुनरिया से सजी न सुरतिया।
इहै सोचि-सोचि जियरा न जरावा करा,
बापू अँखियाँ मा अँसुवा न लावा करा।

केहू नाहीं इहाँ तोहरी बिटिया के जोगवा,
सबका दहेजवा क लागल बा रोगवा।
अइसे रोगियन का नाहीं मोलवावा करा,
बापू अँखियाँ मा अँसुवा न लावा करा।

शशि पाण्डेय

हरिना हेरान

बाबा पहिरे पगिया।
अमउ बौरैं बगिया।।

बोलैं पपिहा तउ जरथै परान ननदी।
बोला कउने बन हरिना हेरना ननदी।।

बहै फगुनी बयार।
गोरी अँचरा सँभार।।

अरहरिया कय छिमिया झुरान ननदी।
बोला कउने बन हरिना हेरना ननदी।।

गये अँगना असाढ़।
दिन बीत गये गाढ़।।

सावन लागा तउ सगुनवा फुरान ननदी।
बोला कउने बन हरिना हेरना ननदी।।

फूली सरसों

पं. भवानीभीख त्रिपाठी 'दिव्य'

फूलि रहा सरसों कै समूह, कै-
मानस माँ बिसमय उपजावा।
या उफनाय कै चीन कै पीयर
सागर भारत माँ चला आवा।

या कि गुपाल के 'दिव्य' पितम्बर
धूप माँ जात बा आजु सुखावा।
या पहिरे वर वस्त्र बसन्ती
बसा स्वयमेव बसन्त सुहावा।

अवधी

प. सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश'

रस-रासि भरी है, मिठास खरी, उबरी जो मिली उहै औरन काँ,
सुपराग भरी, मृदु राग भरी, चिटकी जो मिली उहै भौंरन काँ।
कुछ जाइ बसी है रसालन माँ, मँहकायसि है उहै बौरन काँ,
'तुलसी' से उँचास मिली 'अवधी' काँ, जो लाँघि गई गिरि-मौरन काँ।

बसुधा पै सुधा इहै लावति है, तबै भावति है हमरे मन काँ,
महतारी इहै मृदु माया भरी, दुलरावति है हमरे मन काँ।
मुरझा कबहूँ जब देखति है, सरसावति है हमरे मन काँ,
'अवधी' माँ कवित्त बनावन काँ, उकसावति है हमरे मन काँ।

बर मुक्ति कै मुक्ता लुटावति है इहै, सुक्ति कै हीरक-हार बनावै,
सबही सुत काँ सम जानति है, सबहीं का सुधा पय-पान करावै।
अवधी भरिता सरिता सरजू, मन मानस माँ रस रासि भरावै,
जदि गूढ़ी कहै तौ प्रसाद भरा, सुत पण्डित मूरख हू रस पावै।

'हरद्वार' माँ 'पैंड़ी' बनी हर कै, नहिं औध माँ राम कै 'पैंड़ी' रही,
पर भागि जगे अब औधी कै, यहि के अनुकूल है बाउ बही।
सुचि साधि भरे देखवैयन काँ, अस बाति न जाति रही है सही,
इहाँ हालिनि राम कै 'पैंड़ी' बने, यह बानी अकास कै आइ कही।

हरिभक्त सिंह 'पवाँर'

जिन्रिगी

रे मन! हरि बिन अउर न कोई।

खौलत है ममता कै अदहन,
माया की बटलोई।

ईहा अगिन जरावै हर छिन,
खुदुर-बुदुर तन होई।

स्वारथ कै सब पात्र पुराने,
करछुल की मति खोई।

बाहर-भीतर ऊपर-नीचे,
कारिख गयी समोई।

जूठन भयी 'पवाँर' जिन्रिगी,
गयी न माँजी धोयी।।

लाल गुलाल गुपाल के गाल

दयानन्द सिंह 'मृदुल'

लाल गुलाल गुपाल के गाल लगाइके राधिका कान्ह से बोली,
गोकुल की सब गोपिन सी समझौ न लला मोहि बावरि भोली।
कुंज-निकुंज कदम्ब तरे नियरे जमुना जो कियो है ठिठोली,
वाहि के दाँव लियो है सखे अब जाव घरे बस होइ गई होली।

होइहैं पूरे सपनवाँ

रतिया सजन अइहैं मोरे अँगनवाँ,
धड़कै रे जिया अउर खनकै कँगनवाँ।

घिरि-घिरि आयी कारी-कारी बदरिया,
रहि-रहि चमकै रे बदरा बिजुरिया।
फरकै अलँग बायीं बावाँ नयनवाँ।।

चम्पा-चमेली गमकावै बयरिया,
झूम-झूम पुरवइया गावै कजरिया।
बन मा पपीहा गावै सरस सवनवाँ।।

कजरा नयन सोहै माथे टिकुलिया,
कटि करधनिया औ पइयाँ पयलिया।
सेइबै दुल्हन बन पिया के चरनवाँ।।

प्यासे अधरवा कै बुझिहैं पियसिया,
नयना निहारैं मग उठति उसँसिया।
आज सबै होइहैं पूरे सपनवाँ।।

जगदीश श्रीवास्तव

एकै विपति होय तब तौ बताई

एकै विपति होय तब तौ बताई।
कहाँ-कहाँ रोई, कहाँ अँसुआ बहाई।।

झूर भये पोखरा औ रेत भई नदिया।
जरै तन मोरा औ जरै दुपहरिया।।
भुखिया न मानै करावै कमाई।

रोवे जिनिगिया का सगरी उमिरिया।
छूटी न संग मोरे लपटी कथरिया।।
कर्जा बिसरवा कै बाढ़ै सवाई।

झिलगै मा बीति गई सगरौ उमिरिया।
किस्मति मा लिखी मोरे निपट अंधेरिया।।
अंखिया कै ढेबरी कहाँ ले जराई।

उड़ि गय पिंजरवा से रोय के सुगनवाँ।
अँखियाँ न देखि पाईं सुखकै सपनवाँ।।
ओढ़ी अकासवा कि धरती बिछाई।

श्यामलाल वर्मा

पी कहाँ

मनमोहक वायु बहे दखिनी, मधुमास सजाइ रहै बनवाँ।
डगरी-डगरी चहकै नगरी, गमकै बगिया महकै बनवाँ।
पछतात बियोगन एक रहै, घबरात रहै अपने मनवाँ।
बिलखात रहै अकुलात रहै, अरु पीयर पात भये तनवाँ।।

पिया परदेसवा में जाइ भुलवाय देहैं,
नाहीं जानिउ डरिहैं विपति यस घोरा।
जनती जो यस पिया करिहैं हमार सखी,
ताके नहिं देतिउ परदेसवा की ओरा।
दिनवां बिताइ देंतौ नाव भरि सतुआ पे,
फटिही लुगरिये पे करतिउं अँजोरा।
गरमी बिताइ दें तौ निबिया के छैयां तरे,
सरदी बिताइ देंतिउ वारि के धँधोरा।।

टुटही मड़य्यै में बरखा बिताइ लेतिउ,
सीत घाम बान्हि लेतिउ अँचरा कै छोरा।
भिनही बिताइ देतिउ सझवां के आस सखि,
सझवां बिताइ देतिउं पियवा के कोरा।
दुखवा के मुँहवा चिढ़ाइ देतिउं सजनी,
सहि लेतिउं कुलि आन्हीं आग कै झकोरा।
सगरा विपतिया कै हँसि कै उड़ाय देतिउं,
संगवा जो रहतै सजन सखि मोरा।।

केहि पे सिंगार करी सिन्हुरा लिलार धरी,
मथवाँ पे टिकुली लगाइ करिबे कहा।
कारी-कारी केसिया कै बान्हि कै गोहनवाँ से,
मोतिया से मगियाँ भराइ करिबे कहा।
कान कनफूल शूल हूल मारे हियरा में,
होंठवा पे झुलनी झुलाय करिबे कहा।
देखे खाती चाही केउ, लखे खाती चाही केउ
कहे खाती चाही कि सिंगार मोर कस हा।।

नरेन्द्रनाथ श्रीवास्तव

मुक्तक

जगह बढ़ती जा रही है अब उदर में,
और रिश्ते अँट गये हैं स्वार्थ भर में।
है डराने के लिए भगवान केवल,
पूजते शैतान को हर एक घर में।।

ऊष्मा ही नहीं है मिलने में,
दर्द कोई नहीं बिछड़ने में।
खोल में बन्द हो गया मानव,
देर अब और नहीं मरने में।

इस प्रगति का जहर पीना हो गया है,
कंटकों के बीच जीना हो गया है।
सर छिपायेगी कहाँ संस्कृति भला,
आज आँचल बहुत झीना हो गया है।

घर को सरायों का आधुनिक रूपक बनाया,
सहभागिता, समता, मुक्ति का बीड़ा उठाया।
लघुता अबलता की कालिख मिटाने के लिए,
घर से बहक कर स्वर्ग सड़कों पर निकल आया।।

कमलेश मौर्य 'मृदु'

सुधिया के बदरवा

सुधिया के बदरवा मोरे अंचरवा का भिग्वावैं हो।

दौसु काटा कउनिउ बिधि बैरिन भई रतिया।
जियरा जरावै दूयाखौ चांदनी सवतिया।।
सगरी रयनिया हमका निंदिया नाहीं आवै हो।
सुधिया के बदरवा.......

कोइली के कूक हिये हूक अति लागे।
पपिहा की बोली मानौ गोली अस दागै।।
मोरवा दहिजरवा जानी केहि का गोहरावै हो।
सुधिया के बदरवा.....

दियना की बाती पर जरें हो जैसे पांखी।
पियवा की पाती त्यों अग्वारैं नित आंखी।।
अंगिया होइगै भारु दिन दूने गरुवावइ हो।
सुधिया के बदरवा.....

रामशंकर उपाध्याय 'रवि

मधुमास

आयेउ मधुमास काहे कंत न पधारे।
सनेहिया सयान है रहिया निहारे।।

टेसुआ कयि फुलवा, सिवनवां मां लहकयि,
सेनुरी ललरिया नयनवां मां दहकयि।

सुधिया सनकि कयि, पवन संग भागयि,
अंखिया निहारै लागयि, उठि भिनसारे।।

आयिकै अंगनवां, कागा गोहरावयि,
छेदत करेजवा मां अगिया लगावयि।
अनखि अंगुरिया, सगुनवां उठावयि,
हियरा हिलोर मारयि, पंख पसारे।।

कूकयि कोयलरिया, अवलि अमरैय्या,
डारि-डारि पात-पात ढूंढ़यि गौरैय्या।
पिउ कहि पपिहरा, जियरा जरावयि,
मना बउरान भागयि दउरै दुवारे।।

निठुरी निदरिया नयनवां न आवयि,
झपकी पलकिया, सपनवां सतावयि।
धधकि करेजवा, नयन नांहि मूदै,
खुलि-खुलि अंखिया, बहावै रतनारे।।

डॉ. सुरेश प्रकाश शुक्ल

पिया पैंजनिया

अन्नु भरि भरिगे धानन की बाली में,
पिया पैंजनिया लैदे दिवाली में।
खैहैं मोहनभोग सोने की थाली में,
मोरी लछिमिनिया चमकै दिवाली में।।

तुमतौ सुखी कुदारिनि मां ढूंढ़ौ खुसी,
रोजु हमका चिढ़उती हैं हमरी सखी।
चाव रहिगा ना तनिकौ घरवाली में।
पिया पैंजनिया लैदे दिवाली में।।

हाय जियरा दुखावौ न मोरी धनी,
जड़वाय लियौ मुंदरी मां हीरा कनी।
जगमगाय उठौ बखरी मां गाली में।
पिया पैंजनिया लैदे दिवाली में।।

झूमि-झूमि उठै धरती मगन असिमा,
खुब फूलै फलै देस आपन जहां।
नेह के फल उगैं डाली-डाली में।
पिया पैंजनियां लैदे दिवाली में।।

शिवभजन 'कमलेश'

हम कमाई का

हम बचाई कइसे अपनी सिधाई का।
बचाई तौ गँवाई हम कमाई का।।

जब द्याखौ तब चन्दा वाले रोज टड़े दुआरे।
बीस रुपइया लिहे बिना उइ घर ते टरैं न टारे।।
मन मा सोची काम भवा भलाई का।

बाहरे निकसी ठाढ़ पड़ोसी धीरे मा गोहरावै।
नियरे जाई तौ यो कहिकै कांधेन का सोहरावै।।
करौ मदद कुछ भइया कै दवाई का।

नई-नई चीजैं जब लेई, लोग उड़ावैं हाँसी।
देंय बधाई, चाय-पान मा चपत लगावैं खासी।।
यहै फायदा उन सब से मिताई का।

नाहीं करै न जानी, एहिते सबै हाथ फइलाए।
नुकुर-सुकुर के बाद जो लइगे, नहीं लौटि के आए।।
नहीं डेराने आपस कै बुराई का।

मेला-ठेला सभा बजारै, जहां गयेन भरि पावा।
सीधे का मुँह कूकुर चाटै, अइस जमाना आवा।।
कहूं देखि न पावा भलमंसाई का।

हमरेव मन मा यहु लालचु है जीवन नीक बिताई।
जइस जमाना दौरि रहा है, उइसन दौरि लगाई।।
तौ फिर सीखी हमहूं चतुराई का।।

युक्तिभद्र दीक्षित 'पुतान'

चेतउनी

चेतु रे माली फुलवरिया के।

बड़े जतन ते दूरि किहे तुयि, झांखर-झार-कंटीले।
दयि दयि हिये रकतु सींचे रे, सुंन्दर बिरिछ छबीले।।
रहि ना जायिं गुलाब के धोखे, काँटा झरबेरिया के।
चेतु रे माली फुलवरिया के।

सोचु मन मा क्यतने खोये, फूल-फरे फल-घउदा।
क्यतने तोद पुहुप लयि डारिन, परुवा पाथर कउँधा?
अनगिनती मुरझान डार-क्वाँभा गुल-दुपहरिया के।
चेतु रे माली फुलवरिया के।

दूरि छितिज के पार, देखु घिरतयि आवयि हरियारी।
बउखा आवयि के पहिले, तुयि पोढ़ि बाँधि ले क्यारी।।
फूटि बहयिं न कंगार, टुटहिले, थरुहन की नरिया के।
चेतु रे माली फुलवरिया के।

नई फसिलि के नये फूल, खिलि महकावयिं संसारु।
टूटि डार ते गूँथि बनयिं जो, देउतन के हिय-हारु।।
सूखि परागु सँजीवनि लयि, बिहरैं सँग पुरवइया के।
चेतु रे माली फुलवरिया के।

भूपेन्द्र दीक्षित

हेमन्त

फुलियाए बिरवा हरियाए उपवन
आय गई सीत करइ पहुनाई।
सुर्ज केरी किरनैं फइली घर अंगना मां,
देसवा मा सरद सोहाई।।
धरती केरे अंचरा मां भरी हय
उजेरिया
हिमकन छिटकावै बयारि
मुसकांय बिरवा
गावइं पखेरू
दिन होइगा छोट
रतिया बरियाई।
आय गई सीत करइ पहुनाई।।

डॉ. रामबहादुर मिश्र 'अवधेन्दु'

किसान

किसनऊ कइसन करम तुम्हार?

कहैं सब तुमका धरती लाल,
मुला तुम तौ पूरे कंगाल।
गांव के देवता माने जाव,

अन्नदाता है तुम्हरै नाव।
भूख सबकै तुमहिन तौ हरौ,
उपासे लरिका मरैं तुम्हार। किसनऊ0

योजना तुम्हरे बदे हजार,
बनाइस कतनिउ है सरकार।
मुला तुमका न लागि बयार,
मिहरिया लरिका सब भिखियार।
तुम्हैं तौ मूसिस लम्बरदार। किसनऊ0

पढ़ेउ पिरथी पुरान दिन रात,
सहेउ तुम सबकै जूता लात।
समइया सबकै बदली भाय,
घूर तुम होइ गेउ हमै जनाय।
मुला दिन बहुरैं घूरेउ क्यार,
बारहें बरस सुना हम यार। किसनऊ0

होइ गवा आज किसान पिसान,
अहै वहिकै बस यह पहिचान।
गोड़ बिनु पनहीं देंह उघार,
फाटि कपड़ा लत्ता सिंगार।
कोठरिया मा वहिकी अंधियार
रहे भगवानौ डंडा मार। किसनऊ0

जगदीश पीयूष

कुर्ता खादी का

कुर्ता खादी का चौचक।
ताकैं गाँधी जी भौचक।।

होइगे घरे-घरे नेतवे दलाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।।

चाटैं राजनीति कै चाट।
रोजै बदलैं धोबी घाट।।

धक्का-मुक्की होइगा देसवा धमाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।।

चारिव ओरी मारामारी।
जेका देखा ठेकेदारी।।

होइगे मन्त्री जी कै पूत मालामाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।।

अफसर होइगे बेइमान।
नौकर-चाकर भरे गुमान।।

वोटवा होइगा हमरी जान क ववाल माई जी।
करैं धीरे-धीरे हमका हलाल माई जी।।

सुशील सिद्धार्थ

गीत

बागन बागन कहै चिरइया
होइ जायो हुसियार
जमाना जालिम है।

नदी पियासी ख्यात भुखाने
बिरवा सुलगैं तर ते
डग्ग-डग्ग पर भारत
माफी मांग रहा डालर ते।

दिन पर दिन गरमाय रहा है
लासन क्यार बजार
जमाना जालिम है।।

पूंजी के पंजन मा फंसिगै
बया जइस या धरती।

कट्टाधारी रोजु होति हैं
राजनीति मा भरती

होरी धनिया की नट्टी पर
टेइ रहे तलवार
जमाना जालिम है।।

कउनौ अजगरु लीलि रहा है
हरियाली खुसहाली।
गंगा बनिगै जइसे
मैला ढ्वावै वाली नाली

अमरीकी बादर ते छूटै
तेजाबी बौछार
जमाना जालिम है।।

समय जुझारू बाजा जइसन
आजु बजि रहा भइया।
नई लड़ाई बल्दी फिरि
मैदान सजि रहा भइया

याक जंग फिरि लड़िबै
चाहे गुजरैं बरस हजार
जमाना जालिम है।।

भारतेन्दु मिश्र

गीत

रीति रिवाज पच्छिमी हुइगे
लगै लाग पछियाहु।

बीति गवै फागुन की बेला
आय गवा बैसाख
सबियों धरती आँवाँ लागै
धूरि भई अब राख

सहरन की लंग भाजि रहे हैं
लरिका अउरु जवान
हम जइसे बुढ़वन के जिउमा
अब ना वचा उछाहु।

अपनि-अपनि सब रीति बनाये
अपनै-अपन सुनावैं
ख्यात-पात सब झूर परे
घर बैठि मल्हारै गावैं

हुक्का-चिलम-तमाखू लौ का
सूझति नहिन ठेकान
है जवान बिटिया तीका अब
होई कसक बियाहु।

अवधी ग़ज़लें

गफ्फार मछलीशहरी

तुहीं बोला केहर जइहैं

तुहीं बोला कि तोहरे ठिन से दीवनवन केहर जइहैं।
एहर जब बर्त बा दीपक तौ परवनवन केहर जइहैं।।

तुहीं साकी चला जाबी तौ मसतनवन केहर जइहैं।
जौ मटका फोरि के भगबी तौ पयमनवन केहर जइहैं।।

छटाकै भर तौ गल्ला मनई पाछे देत तू बाट्या।
जौ ससुरारी से आयन कतहूँ मेहमनवन केहर जइहैं।।

पहिर के छींट कै बूसट जनाना बन गया सबहीं।
वहौ पतलून जौ डाटेस तौ परदनवन केहर जइहैं।।

तुहूँ मुल्ला जी टेनी मारथ्या मसला बतावै का।
तुहीं करब्या जौ बैमानी तौ बैमनवन केहर जइहैं।।

तुहूँ गफ्फार दारू से किह्या तोबा गजब होइगा।
तुहीं बैकुण्ठ जौ जाब्या तौ मौकनवन केहर जइहैं।।

आद्याप्रसाद उन्मत्त

का करी

पोल खोली, कुछ न बोली डोलि जाई का करी,
ओनकी जफड़ी मा कसत इज्जत बचाई का करी?

बूँद भै जानै न हमरी जात कै औकात जे,
वहि समुन्दर की लहर कै गीत गाई का करी?

फूस की मड़ई म बनि बारूद हम पैदा भए,
आग देखी तौ भभकि के बरि न जाई का करी?

छाँव की खातिर पसीना खून से सींचा किहे,
झोंझ से माटा झरैं तो मुँह नोचाई का करी?

पूत जौ पूछै बमकि के बाप से तू का किह्या,
ऊ बेचारा हाथ मलि के रहि न जाई का करी?

रफीक सादानी

ज़िन्दगी

कबहूँ ठंडी तौ कबहूँ गरम जिन्दगी।
एक गंजेड़ी कै जइसे चिंलम जिन्दगी।।

का कही ऐसी पावा है हम जिन्दगी।
बिन सियाही के जइसे कलम जिन्दगी।।

दिल के चक्कर मा अस छीछालेदर भई।
हाय सत्यम शिवम सुन्दरम जिन्दगी।।

हम ई जानेन की अब दुख से फुरसत मिली।
दुइ घड़ी हँसि के भै बेधरम जिन्दगी।।

डॉ. विद्याविन्दु सिंह

कोसिस करै लागेन

दुख नदिया पै बनाय लिहेन पुल हम।
पार उतरै क कोसिस करै लागेन।

सुख कै आपन सपना जौन बीतिगे,
आस भूलै क कोसिस करै लागेन।

सुख हँसावै चाहे इ दुख रोवावै,
तुला तौलै क कोसिस करै लागेन।

नीड़ म चिरई-चिरौंटा क खेल देखि,
मन मनावै क कोसिस करै लागेन।

कुछ दुधमुहे भुखान सोवत होइहैं,
चिंता करै क कोसिस करै लागेन।

खाली चिंता से काम न चलै कुछू,
कुछ तौ करै क कोसिस करै लागेन।

सबके आँखिन म इ सपना जगाय के,
पूरा करै क कोसिस करै लागेन।

सतीश आर्य

सदा सूल हम तौ दुलारा करित है

सदा दाँव पै दाँव हारा करित है।
तबौं नेह पै नेह वारा करित है।

सजै सीस तोहरे गुलाबन कै गजरा,
सदा सूल हम तौ दुलारा करित है।

कहूँ कउनो मूरत मिलै तोहरे जइसन,
वहीं ठाढ़ि वहिका निहारा करित है।

जरी तोहरे खातिर, रहौ तू उजेरे,
औ अपना अन्हेरे गुज़ारा करित है।

ओतनै तू चित पै चढ़ति हौ दुबारा,
कि जेतनै तुहैं हम बिसारा करित है।

इहै जान पायेन कि उपहास करिहौ,
तबौं हाथ हरदम पसारा करित है।

गड़ौ बनिकै तिनुका भले लोचनन मा,
मुला पंथ पलकन बुहारा करित है।

लगै हमरे छंदन पै हर मेर बंधन,
मधुर छंद तबहूँ निखारा करित है।

असि भै निगोड़ी मर्उतियो न पूछै,
औ जिनगिउ कै कुछ न सहारा करित है।

अनीस दिहाती

आपन-आपन करम-कमाई

सबर करा ई आपन-आपन करम-कमाई बाबू जी।
के देखिस कब चोर-पुलिस मा हाथापाई बाबू जी।।

जवन उठा लुंगाड़ा छिन मा टोला जरि के राख भवा।
एकादसी का लरिकैं खेलेन हड़ाहड़ाई बाबू जी।।

चिन्ता के भेंड़हा के आगे खावा-पिया हेराइ गवा।
अब अइसे मा तुँही बतावा कती मोटाई बाबू जी।।

कक्कू की सादी कै जूता बहुत चला मुल फाटि गवा।
अब गोड़े मा काँकर अस भेहलान बेवाई बाबू जी।।

यहि तंगिउ मा हमसे बढ़िके चौब्वा कै उपकारी के।
नीलगाह से गोंइड़े कै खेती चरवाई बाबू जी।।

यहि जोआ मा अरे बाप ई सौक-सिंगार घरइतिन कै
यऊ रहीं बस हमरिन ताईं धरी-धराई बाबू जी।।

जिउ के आँते ज़हर कै गोली काल्ह 'दिहाती' खाव गवा।
का जानिस की नकली निकरे इहौ दवाई बाबू जी।।

जाहिल सुलतानपुरी

बगिया म रहा जाई

फुर बात जउन होइहै बस वहै कहा जाई।
अब घर दुवार छूटे बगिया मा रहा जाई।

ठेंगे से जौ गर्मी है रस्ता मा कयामत के।
जुल्फी के तले उनकी समथाय लिहा जाई।

एक रोज गएन हमहूँ सरकार की महफिल मा।
जौ रंग हुंवा देखा हमसे न कहा जाई।

आवै दे जौ आवत है मयखाने मा ओ साकी।
एक जाम मा जाहिद का समझाय दिहा जाई।

सोना के वजन गल्ला, चाँदी के वजन सब्जी।
सुरमा के वजन सिरमिट हमसे न लिहा जाई।

कब ताईं जुलुमं सहबै इन अत्याचरीवन कै।
अन्याय कै हद होइगै अब चुप न रहा जाई।

नेगे मा नउनिया का नेता के बियाहे मा।
खद्दर कै बस एक जोड़ा बनवाय दिहा जाई।

उठते ही नजर उनकै दिल खाय कला बाजी।
अब उनके दिवानन मा नाम हमरौ लिखा जाई।

हम तिस्ना बलब कब ले हउली मा पड़ा रहबै।
नाहीं न जो पयमाना चुल्लू से पिया जाई।

अबकी जौ कभौ देखिस ऊ घुइर के बुलबुल का।
सइयाद का पेड़े मा लटकाय दिहा जाई।

तुम शेर औ गजल आपन रक्खे रहौ थैली मा।
जल्दी बा हमैं जाहिल फुर्सत मा सुना जाई।

बाबा उमाशंकर

इहउ पाजी उहउ पाजी

न हमरे पास गोली बा न हमरे पास गोला बा,
कि बस चंदा कऽ कापी अउर सर्वोदय कऽ झोला बा।

न ई देइके कुछऽ बोलइ, न ऊ लेइके कुछउ बोलइ,
ई जनता जेतनी भोली बा, दरोगउ ओतनइ भोला बा।

हजम कइके ढेकरि दऽ जेतना ओतना खा हरज नाहीं,
कि कवनउ बड़कवा नेता इहइ दिल्ली से बोला बा।

मरइ वाले हयेनि कंजूस ई सड़कइ पे मरि जाथेनि,
मउत कऽ अस्पताले में रुपइया रेट खोला बा।

कहां जाव्यऽ कहां जाव्यऽ इहीं आवऽ एहर आवऽ,
शहर के हर सड़क पर भाइ बेइमानन कऽ टोला बा।

इहउ पाजी उहउ पाजी, भला तब का करइं काजी,
इहू कऽ तंग चोली बा, उहू कऽ तंग चोला बा।

कमलनयन पाण्डेय

दिल बिना आँख का देखात नहीं

नीच है करम नीच जात नहीं।
नीच रावन कभौ पुजात नहीं।।

जेकरे दिल मां दया धरम नाहीं।
अइस मनई हमैं सुहात नहीं।।

शायरी कै सहूर का होइहैं।
आन कै दर्द जौ पिरात नहीं।।

बुद्धू कहता है अक्लमन्दों से।
दिल बिना आँख का देखात नहीं।।

और के सुख में जे सुखी होवैं।
ओकरे भीतर खुशी अमात नहीं।।

घिरा अन्हिआर मुलुक मां ऐसा।
हाथ से हाथ का सुझात नहीं।।

वक्त की आँख का किहा बंजर।
अब तौ कौनौ सपन उगात नहीं।।

धूप कै धौल पीठ पै भारी।
गीत सावन कै अब गवात नहीं।।

खून कै होली खेलाया हमसे।
हंसि के बोल्या हमार हाथ नहीं।।

दिल्ली गान्हीं कै तीन बांदर हैं।
गूंग है, सूर है, सुनात नहीं।।

गाफिल सुलतानपुरी

अवधी ग़ज़ल

जे लूटै घर रखवार उहै, जब हियाँ इहै दस्तूर अहै।
तब तौ देशवा कै बरबादी, भगवानौ का मन्जूर अहै।।

तस्करी दलाली गोल माल, ऐंड़ी से चोटी तक होइगा।
कानून बेचारा काव करै, दुइनौ आँखी के सूर अहै।

जस ऊँच नीच ओहदा बाटै, वस घूंसौ कै बन्धान बना,
जस मुंह तस थबरौ तौ चाही, ई मसल बड़ी मसहूर अहै।

जब कइव जगह से लड़त अहैं, तौ कतहूं से जितबै करिहैं।
यहि लोकतन्त्र का लोकै कइ, ताकत उन मा भरपूर अहै।।

माटी का रकत पियाइस जे, वहकै जिनगी माटी होइगै।
माटिऊ वहका सोना होइगै, जे फोसन वहसे दूर अहै।।

फोड़ा फुन्सी कै बात होत, तो चीर फारि के ठीक करित।
भारत माता की देहियां मा, अब जगह-जगह नासूर अहै।।

नागेन्द्र 'अनुज'

हम तौ निपट अनारी

चारिउ कइत शिकारी भाय।
हम तौ निपट अनारी भाय।
नेता, पुलिस चोर हम सबका।
लूटैं पारी-पारी भाय।

दिन मा तौ रपटी कै रपटा।
मुला साँझ की यारी भाय।
तौ काहे ना लुटै खजाना।
चोरेन कै रखवारी भाय।

एक टूक रोटी की खातिर।
बिकि गै लोटा-थारी भाय।
अब नियाव औ दया धरम कै।
बुति गै बा चिंगारी भाय।
कै दिन तक के केहकै ढोये।
अपनै कमरी भारी भाय।

हर ढर्रा पै बइठ सँपोला।
कहाँ-कहाँ हुसकारी भाय।
बारह बरिस भार झोंकेन मुल।
गय ना लम्बरदारी भाय।

कटे न काटे रेख हथेली।
केतनौ पहिन कटारी भाय।

नोने रोटी साल बीतिगा।
नहीं मिली तरकारी भाय।

बनियौ मुँह ओरमाय लिहिस है।
कै दिन देय उधारी भाय।

अब तौ घर-घर इहै झमेला।
सबकै मिटी लिहारी भाय।

छोटी रात किहानी लम्बी।
ल्यावा कटै सुपारी भाय।

मनोज

अवधी गजलें

जब से बीनापानि मइया से प्रीति होइ गई।
तब से जिनुगी भरे कै पीर गीति होइ गई।।

हार मानिसि अदब कइके भाई से जे।
समझौ हारा नहीं ओकै जीत होइ गई।।

जब तलक जाना ना माना है तब तलक।
जाना है जबसे तबसे प्रतीति होइ गई।।

मित्र कम सत्रु जेकरे अनेकन भये।
जिनगी कब ले रहे एकै भीति होइ गई।।

काहू की जिन्दगी कै भरोसा नहीं।
अब तो धर्म से विहीन राजनीति होइ गई।।

●●●

नस्वर प्रकिर्ति जेकै संसार बदलि द्या।
मिले प्यार सार ना तौ परिवार बदलि द्या।।

जननी औ जनम भूमि कै बचि जाय अस्मिता।
हे मनुज! दनुजता कै तू व्यवहार बदलि द्या।।

निक प्रजातंत्र मां तोहैं एक्कै मिला अधिकार।
हुरमुहठी करैं नेतै तौ सरकार बदलि द्या।।

चले ना हराई खाये ताबे जिन्दगी।
गदरा ई बर्द होतै भिनुसार बदलि द्या।।

अनगिनत सिव उमा कां हेरैं गली-गली।
अपुवैं 'मनोज' रूप ई साकार बदलि द्या।।

भारत देसवा कै दुनिया में नाम चमके

रामसूरत 'अनाम'

भारत देसवा कै दुनिया में नाम चमके।
जैसे धरती पे सुरजू कै घाम चमके।

डा. भाभा दिहेन हमका परमाणु बम,
देइ मिसाइल श्री अब्दुल कलाम चमके।

बात ओशो कै माना थे दुनिया सबै,
बाबा हरदेव, बापू आशाराम चमके।

लिख अमर्त्य सेन चमके गरीबन कै दुख,
मदर टेरेसा औ आम्टे कै धाम चमके।

राजीव गाँधी अमर होइगै विज्ञान दइ,
गाँव-गलियन में उनकै मोकाम चमके।

कल्पना औ सुनीता उड़ी आकाश में,
किरन बेदी औ सोनिया कै काम चमके।

लता मंगेशकर छायी संसार में,
ध्यानचन्द औ सुनील अभिराम चमके।

सच-अहिंसा औ सांति कै कइके पहल,
देस दुनिया में सब दिन 'अनाम' चमके।

भारतेन्दु मिश्र

दो गजलें

याक चिरिया कहूँ ते आई।
जीके हाथे म दियासलाई है।

पैनि छुरिया कसे कमर मा है,
हाथ मा नोट हैं मिठाई है।

फाटिगा आसमान सुर्जु बुझा,
फिरि छिड़ी गाँव मा लड़ाई है।

जिनके मुँह पर रहै खुसी नाचति,
आजु तौ उड़ि रही हवाई है।

जलि रही महजिदैं, कहूँ मंदिर,
मुरदनी गाँव भरेम छाई है।

●●●

नइया जउनु खेवइया होई।
सबकी चढ़ा घोड़इया होई।

देउता वहै गाँव ट्वाला का,
सविता वहै, जोन्हइया होई।

मरैं जियैं सब राम सहारे,
हम पर कउनु रोवइया होई।

वानटन की बेरिया सब कइती,
भइयनि हापा-दइया होई।

हम अँधरन के करम फूटिगे,
को चसमा बनवइया होई।

विजय रंजन

कब तक रहियो रामभरोसे

कब तक रहियो रामभरोसे।
कुछ तौ कर ल्यौ, रामभरोसे।

पंडित कहिन तू बहुत सुनेव,
अब तौ चेतौ, रामभरोसे।

अ[illegible] बरस कै गौरी ब्याहियो,
जेलवै म जइहौ, रामभरोसे।

चारि अक्षर बहिनिउ पढ़ि लेतिन
तुम हूं पढ़त्यौ, रामभरोसे।

मेहनत ते ई सोना देइहै,
खेत न बेच्यौ, रामभरोसे।

रंजन कै कहनी मनि लेतेव,
सुख से रहत्यौ, रामभरोसे।

●

हाल न पूछौ अरे बड़कऊ।
कुछ तौ बूझौ, अरे बड़कऊ।

पछुआ बढ़ि कै लू बन जइहै,
कैसे बचिहौ, अरे बड़कऊ।

सहर मा जगमग बहुत मुला,
गाँव न छोड़्यौ अरे बड़कऊ।

मन्दिर-मस्जिद के झगड़न मा,
तुम पिसि जइहौ, अरे बड़कऊ।

रिस उतरै तू पहिले ओहि का,
आपन मानौ, अरे बड़कऊ।

भउजिउ जाग रही हैं देखौ,
उन्हु क सुन ल्यौ, अरे बड़कऊ।

अब उतना नादान न हय,
रंजन छोटकौ, अरे बड़कऊ।

आचार्य सूर्यप्रसाद शर्मा 'निशिहर'

फूल अस नित झरौ

भागि डहरी न खाली रहै, निकाई करि भरौ।
अपनि हालति न माली रहै, कमाई खुब करौ।

सच धरमु है बड़ा मानिकै, जीवन मा उतारि,
कामु याकौ न जाली रहै, हाँथु जहिमा धरौ।

देस मा जब घढ़ै कउनो दुसमनु दुराचारी,
हाँथ रैफल दुनाली रहै वार वहि पर करौ।

बात ढंग ते करौ सबते, बानी मधुरि बहुतै,
उनू वारी न गाली रहै फूल अस नित झरौ।

रोजु कबिता लिखौ जहिते नीकि प्रेरना मिलै,
छंद साँचा म ढाली रहै सबद चुनि चुनि भरौ।

पाँय जमिकै धरौ हमेसा जिंदगी-राह मा,
होय गड़वा य नाली बहै पार हँसिकै करौ।

पोढ़ि गठरी एकउटनि केरि रहौ बाँधत बड़ी,
भेदुवाली न गाली रहै जुगुति 'निसिहर' करौ।

भगवती प्रसाद अग्निहोत्री

मनहे मन आंसू पिये जांइ

आंखिन ते लड़की पिये जांइ।
बसि देखि-देखि कइ जिये जांइ।।

कानी खोदरी, लेंगड़ी-बहिरी।
उइ सबके दरसन किये जांइ।।

कौनिउ घास न डारति हइ।
ज़ेग़रै हिरदइ दिये जांइ।।

देखतइ कन्या हिरदै फाटइ।
दिलु र्वावति-र्वावति सिये जांइ।।

इनके बियाधि पइदा होइ गइ।
मन मन आंसू पिये जांइ।।

अरविन्द 'असर'

राम भजन हम गाइत

रुवतन केर हँसाइत है।
जब हम गजल सुनाइत है।।

उइ तौ आग लगावत हैं।
पर हम आग बुझाइत है।।

बैर भाव मा कुछु नहिं रक्खा।
सबका ग़हि समझाइत है।।

रूखी-सूखी खाय के भैया।
राम भजन हम गाइत है।।

जानित है के तेज हवा है।
फिर भी दीप जलाइत है।।

जौन भरित है बचन 'असर'।
वहिका खूब निभाइत है।।

डॉ. ज्ञानवती दीक्षित

हम उजाले की किरन ढूंढ़ित है

हँसै हँसावै का हुनर ढूंढ़ित है।
हम अपने इरादेन का असर ढूंढ़ित है।।

कहां मिली अबहूं सिर छुपावै की जगह।
घर मां हन अपना घर ढूंढ़ित है।।

का जानै कौन अमावस मां छुपी है।
उजालेन की तरह हमहूं सहर ढूंढ़ित है।।

पांव रहैं तौ आरामै करत रहिगेन।
पांव ना रहैं तौ अब सफर ढूंढ़ित है।।

हालात यो है कि नासाज हन इतने।
मीरा की तरह हमहूं जहर ढूंढ़ित है।।

कुछ लोग हैं रोवत खड़े अंधेरे मां।
हम उजाले की किरन ढूंढ़ित है।।

ओंकारनाथ श्रीवास्तव

येका सोचा तो

कौनी ओरी देस जात बा, येका सोचा तो।
आगा अब कइसन लखात बा, येका सोचा तो।।

जे माई के बचन दिहेव रखवारी के,
ओकर केतना सर पिरात बा, येका सोचा तो।

हन्सन के अगियर होइ तो ठीक अहइ,
कउवा अब काहें पुजात बा, येका सोचा तो।

खून पसीना तू बोआ थ्या खेते मा,
दूसर केउ कइसे कमात बा, येका सोचा तो।

पहिले तो अपने पे सबका गरब रहा,
आखिर अब काहें तिलात बा, येका सोचा तो।

डारि पात के कइसे हरियर रखि पाये,
जरियइ जब दिन रात रोगात बा, येका सोचा तो।

तू कवि तोहंका कसम हंसब अब बन्द करा,
का लिक्खइ के, का लिखात बा, येका सोचा तो।

डॉ. विन्ध्येश्वरी प्रसाद श्रीवास्तव

जादू भरा होई

नजरि का तीर उनकी जब कबौं जी के परा होई।
न ऊ जिन्दै बचा होई, न घैहल ऊ मरा होई।

कही कैसे लगावा आगि को हमरे करेजे माँ,
निकरि जाई जो उनका नाउँ तौ अति कै बुरा होई।

चितै जी का लिह्यो तौ चित्त वहिका चित्त कइ डार्‌यो,
कोई औरौ की आँखिन माँ, न अस जादू भरा होई।

परखि देखौ तौ जनिहौ, कौनु असली, कौनु नकली है,
निकसिहैं खोटि अन्नेगिन, कोई एकुइ खरा होई।

सत्यधर शुक्ल

हिया हनुमान-सा बनावउ तउ

आइके सर्गु कोंछ मा बैठी,
तनी हमरे करीब आवउ तउ।

सैमुन्दरु दौरिके खुदै भेंटी,
धार भागीरथी बहावउ तउ।

तुम्हें नन्दन मिली भुएँ परिहाँ,
मूडु हिमराज-सा उठावउ तउ।

घरै पर उरबसी-रम्भा अइहैं,
हिये का पुरुरवा बनावउ तउ।

कन्हैया दौरिके आपुइ आई,
द्रौपदी-सी ग्वहार लावउ तउ।

दौरि परमातमा हिंयै आई,
हिया हनुमान-सा बनावउ तउ।

सबुइ दुनिया तुम्हें गुरू मानी,
सेतु श्रीराम-सा रचावउ तउ।

टूटि अग्गास ते तारे गिरिहैं,
अपनि तागति तनी बढ़ावउ तउ।

जगदीश पीयूष

ना परावा करौ

कइसे धीरज धरी ना बतावा करौ,
दइ के गाई क चारा न गावा करौ।

केतना जोगी अहौ केतने बैरागी हौ,
का कही मोर जिव ना जरावा करौ।

जौ मिल्या तौ बड़ी बात हमसे किह्या,
यहि तना ना केहू का चरावा करौ।

तोहरे बिन ना जियब जान दै देब हम,
अपने हिरदय से अस ना परावा करौ।

हम चली जाब मुल ख्याल आपन किह्या,
कुछ तो मेवा मखाना चबावा करौ।

यहि गली वहि गली, यह सहर वह सहर,
चौगड़ा की तना अब ना धावा करौ।

राम जानै मुहब्बत कहाँ गै चली,
सहि ना जाये हमैं ना बिरावा करौ।

जिन्दगी ई जरत औ बरत बीति गै,
जौन बाटै बची ना पजावा करौ।

❑❑❑